K.K. Sharma
28.7.81

श्रीमत्कल्याणवर्म-विरचिता

सारावली

"कान्तिमती" हिन्दी व्याख्या सहिता

व्याख्याकार :

डॉ० मुरलीधर चतुर्वेदी

ज्योतिषाचार्य : (सिद्धान्त, फलित),
विद्यावारिधि : (पी-एच० डी०)

मोतीलाल बनारसीदास
दिल्ली :: वाराणसी :: पटना

© मोतीलाल बनारसीदास

प्रधान कार्यालय : बंगलो रोड, जवाहरनगर, दिल्ली–७
शाखाएँ (१) चौक, वाराणसी (उ० प्र०)
(२) अशोक राजपथ, पटना–४ (बिहार)

प्रथम संस्करण : वाराणसी, १९७७

मूल्य : रु० ३०·०० अजिल्द
रु० ४५·०० सजिल्द

श्री सुन्दरलाल जैन, मोतीलाल बनारसीदास, चौक, वाराणसी द्वारा प्रकाशित
तथा केशव मुद्रणालय, सुधाकर रोड खजुरी, वाराणसी द्वारा मुद्रित ।

॥श्रीहनुमते नमः॥

'ज्योतिः शास्त्रफलं पुराणगणकैरादेश इत्युच्यते'

यह तो सर्वं विदित ही है कि वेदाङ्गों में ज्योतिषशास्त्र सर्वश्रेष्ठ शास्त्र है। इस शास्त्र के बल पर ही जगत का शुभाशुभ ज्ञात हो सकता है। इस शास्त्र के मुख्य तीन भाग [१. सिद्धान्त, २. संहिता, ३. होरा] हैं। ये तीनों भाग महर्षियों द्वारा प्रणीत होने के कारण ही जीवन में होने वाली घटनाओं का सत्य परिचय देने में पूर्ण समर्थं होते हैं। इसमें लेश मात्र भी सन्देह नहीं है। सिद्धान्त, संहिता इन दोनों के लक्षण तत्तद् ग्रन्थों में उपलब्ध हैं।

प्रस्तुत ग्रंथ होरा स्कन्ध के अन्तर्गत है। अतः जिज्ञासा होती है कि होरा किसे कहते हैं उत्तर—'होरार्थं शास्त्रं होरा तामहोरात्रविकल्पमेके वाञ्छन्ति। अहश्च रात्रिश्च अहोरात्रो होरा शब्देनोच्यते' अहोरात्र शब्द के पूर्व वर्ण (अ) तथा पर वर्ण (त्र) का लोप करने से होरा शब्द निष्पन्न होता है। पुनः यह जिज्ञासा होती है कि अहोरात्र शब्द से ही होरा शब्द क्यों निष्पन्न होता है। उत्तर—प्रवह वेग से १ दिन में ही १२ मेषादि राशियां उदित होकर अस्त होती हैं अर्थात् दिन रात्रि में काल के वश से १२ राशियों का भ्रमण होता है काल अहोरात्र के अन्तर्गत होता है। इन्हीं को लग्न भी कहा जाता है। लग्न के आधार पर ही शुभाशुभ फल का ज्ञान जिस शास्त्र से होता है अर्थात् जीव की जन्मकालीन ग्रहस्थिति अथवा तिथि नक्षत्रादिकों द्वारा उसके जीवन के सुख दुःखादि का निर्णय जिस शास्त्र से होता है उसे होरा शास्त्र या जातक या जातक शास्त्र कहते हैं। इसलिये अहोरात्र शब्द से होरा शब्द निष्पन्न होता है।

बृ० जा० में कहा है—होरेत्यहोरात्रविकल्प०।

तथा च प्रस्तुत ग्रन्थ में भी आद्यन्तवर्णलोपाद्धोरास्माकं भवत्यहोरात्रात्। तत्प्रतिबद्धश्चायं ग्रहभगण-श्चिन्त्यते यस्मात्॥

एवं बृहत्संहिता में भी-होराऽन्योऽङ्गविनिश्चयश्च कथितःस्कन्धस्तृतीयोऽपरः (१ अ० ९ श्लो०)॥

इस होराशास्त्र का क्या प्रयोजन है। उत्तर—लघुजातक में कहा है—'यदुपचित मन्यजन्मनि शुभाशुभं तस्य कर्मणः पक्तिम्। व्यञ्जयति शास्त्रमेतत्तमसि द्रव्याणि दीप इव' (१ अ० ३ श्लो०) प्राणियों के पूर्व जन्मार्जित शुभाशुभ कर्म का ज्ञान इस होरा शास्त्र से होता है जैसे अन्धकार में इष्ट पदार्थ का ज्ञान दीपक की सहायता से होता है उसी प्रकार जीवन में आने वाले शुभ वा अशुभ समय का ज्ञान होरा शास्त्र से होता है। इस शास्त्र के फलादेश कथन में दैवज्ञ ही समर्थ होता है।

ग्रन्थकार ने कहा है—विधात्रा लिखिता याऽसौ ललाटेऽक्षरमालिका । दैवज्ञस्तां पठेत्………

तथा शम्भु होरा प्रकाश में भी–'वर्णावली तु लिखिता भुवि मानवानां धात्रा ललाटपटले किल दैववित्ताम्' इत्यादि प्राणियों के मस्तकों पर ब्रह्माजी द्वारा लिखित शुभाशुभ फल को होराशास्त्र ज्ञान रूपी चक्षु से दैवज्ञ ही देख कर सुख व दुःख का ज्ञान कराने में समर्थ होता है न कि नक्षत्रसूची फलादेश में समर्थ होता है । दैवज्ञ कौन होता है । उत्तर

होरापारसमुद्रपारगमने नूनं समर्थो महान्
पाटयाख्ये गणिते च बीजगणिते यो दर्भगर्भाग्रधीः ।
सिद्धान्ते स्फुटवासना प्रकथने भेदैरनेकैर्युते,
गोले स्यात्कुशलः स एव गणको योग्यः फलादेशके ।।
त्रिस्कन्धज्ञो दर्शनीयः प्रशान्तः श्रौतस्मार्तोपासने निष्टचित्तः ।
निर्दंभो यः सत्यवादी प्रसन्नो दैवज्ञो वै स स्मृतो नेतरश्च ।।

इसलिये त्रिस्कन्ध का ज्ञाता ही दैवज्ञ होता है । यह होराशास्त्र अन्य स्कन्धों से महान् है ।

ज्योतिषशास्त्र के इतिहास का अवलोक करने से पता चलता है कि फलित के मनुष्य प्रणीत ग्रन्थों में वराह मिहिर के बाद अर्थात् बृहज्जातक के अनन्तर ही कल्याण वर्मा विरचित सारावली का ही नाम आता है ग्रन्थ में कहा है—

विस्तरकृतानि मुनिभिः परिहृत्य पुरातनानि शास्त्राणि ।
होरातन्त्रं रचितं वराहमिहिरेण संक्षेपात् ।। (१ अ० २ श्लो०)

इससे सिद्ध होता है कि आचार्य वराह मिहिर ने संक्षेप में होराशास्त्र का वर्णन किया है । इस संक्षेप वर्णन से विषयों का विभाग स्पष्ट न देखकर कल्याण वर्मा ने यवनाचार्यादि द्वारा बनाये गये विस्तृत ग्रन्थों से सार हीन वस्तुओं का त्याग करके सार मात्र पदार्थों का ज्ञान इस प्रस्तुत ग्रन्थ में ग्रन्थकार ने किया है ।

कहा है 'सकलमसारं त्यक्त्वा तेभ्यः सारं समुद्ध्रियते' ।।

ग्रन्थकार का परिचय

ग्रन्थकार ने अपने जन्म स्थान के विषय में व ग्रन्थ रचना काल के विषम में स्पष्ट कुछ भी नहीं लिखा है केवल ग्रन्थारम्भ में लिखा है कि

'देवग्रामपुरप्रपोषणबलाद्ब्रह्माण्डसत्पञ्जरे' इत्यादि श्लोक से ज्ञात होता है कि देवग्राम नगर निवासी श्रीमद् व्याघ्रपदीश्वर कल्याण वर्मा इस प्रस्तुत ग्रंथ का ग्रन्थकार है ।

इसलिये व्याघ्र पदीश्वर शब्द से ग्रन्थकार बघेल वंशीय सिद्ध होते हैं ।

बघेल शब्द की उत्पत्ति

१—बघेल खण्ड जनपद की अनुश्रुतियों के आधार पर रीवाँ के बघेल वंशीय क्षत्रियों का मूल पुरुष व्याघ्रदेव था। उसका मुख बाघ के मुख के समान था और इसी कारण उसकी सन्तान 'बाघेल' या 'बघेल' कहलाई। आज भी रीवाँ महाराज की ओर से प्रकाशित कैलेन्डरों में बघेलवंश चित्रावली छापी जाती है, जिसके मध्य में स्थित व्याघ्रदेव का मुख बाघ के समान रखा जाता है।

२—स्थानीय लेखों के आधार पर रीवाँ-जनपद के बघेल क्षत्रिय गुजरात से आये हुए सोलंकी हैं।

गुजरात के पाँचवें सोलंकी राजा भीमदेव के चार पुत्र थे। जिनमें चौथे पुत्र सारङ्गदेव हुए, जिनके पुत्र वीर सिंह हुए। जिस समय गुजरात के शासक सिद्धराज जयसिंह (वि० सं० ११५२–११६६) थे, उन्होंने वीर सिंह के पुत्र बाघ राव को जागीर में बघेला गाँव दिया था, जिसके आधार पर बाघराव की सन्तान बघेल नाम से विख्यात हुई।

३—'रीवाँ राज्य का प्राचीन इतिहास' देखने से पता चलता है कि गुजरात से असन्तुष्ट होकर बाघराव 'व्याघ्रदेव' वि० सं० १२३४ में रीवाँ की ओर आये और कालिञ्जर से १६ मील उत्तर पूर्व की ओर पहाड़ी पर एक मरफा नाम का किला था। व्याघ्रदेव ने अपना प्रभुत्व इसी किले में स्थापित किया था। कुछ दिनों के बाद व्याघ्रदेव ने भर राजा से कालिञ्जर छीन लिया। तथा पार्श्ववर्ती राज्यों पर भी अधिकार जमा लिया। व्याघ्रदेव की परिहारिन ठकुराइन से दो पुत्र हुए ज्येष्ठ कर्णदेव व कनिष्ठ कन्धरदेव थे। व्याघ्रदेव का स्वर्गवास वि० स० १२४५ के आस पास हुआ था।

४—व्याघ्रदेव के बाद कर्णदेव राजा हुए। इनकी राजधानी गहोरा में थी। करणदेव संस्कृत के धुरन्धर विद्वान् थे। इन्होंने 'सारावली' नामक ज्योतिषशास्त्र का एक अच्छा ग्रन्थ लिखा है। इनके आश्रित अनेक संस्कृत के धुरन्धर विद्वान् रहा करते थे। जिनमें ब्रह्मगुप्त प्रसिद्ध संस्कृत का विद्वान् था।

इनका स्वर्गवास वि० सं० १२६० के आस पास हुआ। इनके मरने पर उनके उत्तराधिकारी उनके पुत्र सौहागदेव हुए।

रीवाँ के बघेलों का वंशवृक्ष

वीरसिंह (बघेला गाँव गुजरात)
|
बाघवराव = व्याघ्रदेव
|
कर्णदेव   कंधरदेव

१—वर्तमान मध्य प्रदेश के चार उत्तरी जिलों—१. रीवाँ, २. सतना, २. सीधी और शहडौल से सीमित बघेलों की बोली का जनपद।

२—क्षत्रिओं की शाखा विशेष देखिये रीवाँ स्टेट गजेटियर पृ० १२१ विस्तृत चर्चा के लिये देखिये 'ओरिजिन आफ दी चालुक्याज'। ३–पृ० २८–२९। ४–री० इ० पृ० ३१।

यही कर्णदेव कल्याण वर्मा नाम से प्रसिद्ध हुए। 'रीवाँ राज्य का इतिहास' व 'बघेलखण्ड के संस्कृत काव्य' नामक ग्रन्थों से सिद्ध होता है कि गुजरात के पाटन जिले के अन्तर्गत व्याघ्रपल्ली नामक ग्राम से आये हुए बघेल वंशी ही आज तक राज्य करते चले आये थे। इसलिए रीवाँ जिला जन्मस्थान ग्रन्थकार का सिद्ध होता है। किन्तु देवग्राम नगर सिद्धि में 'गहोरा' व 'बान्धवगढ़' नामक राजधानी बाधक सिद्ध होती है। ग्रन्थ में देवग्रामपुरप्रपोषणबलात्' से देवग्राम नामक नगर की स्पष्ट प्रतीति होती है। मैंने पता लगाया है कि करबी से उत्तर की ओर एक देवल नामक ग्राम है। उसमें बघेलवंशी लोग रहते हैं। रीवाँ जिले में ही करबी तहसील है।

काल

ग्रन्थकार व ग्रन्थ रचना-काल के विषय में ग्रन्थ में किसी भी प्रकार का संकेत प्राप्त नहीं होता है। इस विषय में म० म० सुधाकर द्विवेदीजी ने 'श्री चापवंशतिलके श्री व्याघ्रमुखे नृपे शकनृपालात्' इस ब्रह्मगुप्त के पद्य से 'व्याघ्रपदीश्वरो' के स्थान पर 'व्याघ्र-भटेश्वरो' यह पाठान्तर ज्ञात करके 'व्याघ्रमुख' व 'व्याघ्रभट' में समानता मानकर ब्रह्मगुप्त के काल से पूर्व ही इनका काल अर्थात् ५०० शक माना है।

१--शङ्कर बालकृष्ण दीक्षित ने अपने इतिहास में लिखा है कि भट्टोत्पल ने बृहज्जातक की टीका में सारावली ग्रन्थ के अधिक वचन उद्धृत किये हैं तथा उनमें एक स्थान पर (७ अ० १३ श्लोक की टीका) वराह मिहिर का नाम आया है अतः सारावली ग्रंथ वराह के बाद का और ८८८ शक से पहले का है। सारावली नामक एक ग्रन्थ मैंने देखा है, उसमें उत्पलोद्धृत वचन नहीं है। उसके कर्ता का नाम कल्याण वर्मा है। उन्होंने अपने को बटेश्वर कहा है। बटेश्वर नाम के ज्योतिषी शक ८२१ के लगभग थे अतः उत्पलोद्धृत सारावली ही बटेश्वर या कल्याण वर्मा कृत सारावली है और इसका रचनाकाल लगभग ८२१ शक है।

आचार्य सुधाकर ने ५०० शक, शंकर बालकृष्ण दीक्षित ने ८२१ शक के आस-पास होना स्वीकार किया है किन्तु 'रीवाँ के इतिहास' से वि० सं० १२४५ के बाद ये कल्याण वर्मा गद्दी पर आसीन हुए और उसी समय में ग्रन्थ रचना इन्होंने की ऐसा प्रतीत होता है। ब्रह्मगुप्त इनकी सभा में थे इस लेख का कोई पुष्ट प्रमाण नहीं है तथा ब्रह्मगुप्त का जन्म काल ५२० शक है। इस लिये वि० सं० १२४५ से सामञ्जस्य होने में पूर्ण कठिनाई है। हाँ इनके काल के विषय में इतना तो स्पष्ट ही है कि भट्टोत्पल व बलभद्र मिश्र के पूर्व ही इनका जन्म हुआ है क्योंकि बृहज्जातक की भट्टोत्पली टीका में व बलभद्र द्वारा संगृहीत होरा रत्न ग्रन्थ में सारावली के वचन अधिक प्राप्त होते हैं। किन्तु बृहज्जातक की प्रथम श्लोक की टीका में 'तरणि किरण सङ्गादेष पीयूष पिण्डो' इस सिद्धान्त शिरोमणि के पद्य को देखने से प्रतीत होता है कि १०३६ शक के बाद ही उत्पलाचार्य का जन्म हुआ है। परन्तु उत्पल ने अपनी भट्टोत्पली टीका के अन्त में 'वस्वष्टाष्टमिते' कहकर ८८८ शक ही सिद्ध किया है। यदि यहाँ पर वस्वष्टाष्टिमिते' यह पाठान्तर मान लिया जाय तो बलभद्र के १५१४ शक के बाद उत्पलाचार्य का जन्म

---

१. 'भारतीय ज्योतिष पृष्ठ ६३८–६३८।

सिद्ध होता है। यह भी होरा रत्न ग्रन्थ देखने से सिद्ध इस लिये नहीं होता कि भट्टोत्पली के ग्रन्थान्तरों के वाक्य इस होरा रत्न में अविकल उपलब्ध होते हैं। यदि वि० सं० १२४५ के वाद इनका ग्रन्थ माना जाय तो उत्पलाचार्य का जन्म कर्ण देव (कल्याण वर्मा) से पूर्व सिद्ध होगा। यह भी असंभव है क्योंकि भट्टोत्पल ने सारावली के वचन अपनी बृहज्जातक की टीका में उद्धृत किये हैं। शिशुपाल वध की मल्लिनाथी टीका में तथा दिवाकर की जातक पद्धति में भी कल्याण वर्मा का नाम आया है। ऐसा आफ्रेच सूची में है।

हमारा अपना अनुमान है कि ये कल्याण वर्मा (सारावली के प्रेणता) उपर्युक्त "रीवाँ का इतिहास" में दिये हुए कल्याण वर्मा से भिन्न हैं। जैसाकि उन्होंने अपना स्थान देवग्राम वताया है और अपने को व्यघ्रपदीश्वर कहा है इससे यह सिद्ध होता है कि गुजरात के चौलुक्य वंशो (सौलंकी) राजा कल्याण वर्मा गुजरात के व्याघ्रपल्ली स्थान के निवासी थे जिसके समीप देव ग्राम (देवग्राम पुर ?) आज भी विद्यमान है। रीवाँ का वघेल वंश इसी परम्परा में सं १२३४ के बाद यहाँ आया। प्रकृत कल्याण वर्मा इससे बहुत पहले गुजरात के शासक थे और व्याघ्रदेव इनके मूल पुरुष थे। इनका काल शक ५०० से ८२१ के मध्य था। उत्पलदेव, जिन्होंने अपना काल ८८८ शक लिखा है, इनके बाद हुए और ब्रह्मगुप्त इन्हीं सारावली कार कल्याण वर्मा के सभा पण्डित हो सकते हैं, रीवाँ के इतिहास में दिये हुए कन्धरदेव या कल्याण वर्मा की सभा के नहीं।

इस कल्याण वर्मा के अतिरिक्त राजानक कल्याण वर्मा कश्मीर शैव दर्शन के विद्वान् हुए हैं। जिनका उद्धरण जयरथ ने वाम केश्वरी मत विवरण में दिया है, और विवाह वृन्दावन, के टीकाकार तथा व्यवहार प्रदीप के रचयिता भी कल्याण वर्मा नामक विद्वान् हैं।

मैंने निर्णय सागर से प्रकाशित मूल ग्रन्थ का व संस्कृत विश्वविद्यालय के सरस्वती भवनस्थ ३६४७७ ग्रन्थाङ्क का आश्रय लेकर इसकी हिन्दी व्याख्या करके पाठकों के समक्ष प्रस्तुत की है। और साथ में यह भी चेष्टा की है कि इस ग्रन्थकार ने कहाँ से ग्रहण किया है तथा इस ग्रन्थकार के बाद जिन ग्रन्थकारों ने इसका आशय लेकर ग्रन्थ रचना की है उन सबों के उद्धरण यथा स्थान दिये हैं। वैसे वैद्यनाथ ने इसको मुख्यतन्त्र मानकर जातकपारिजात की रचना की है ऐसा स्वयं उन्होंने लिखा है। मेरे इस महान् कार्य में श्रद्धेय पं० जनार्दन शास्त्री पाण्डेय जी ने जो सहायता की है उससे मैं परम उपकृत हूँ।

अन्त में मैं विद्वद्जनों से क्षमा माँगता हूँ कि मेरे दृष्टिदोष से अल्पज्ञतावश कोई त्रुटि रह गयी हो तो उसे क्षमा कर सूचना देने का कष्ट करें।

विदुषामनुचरः
मथुरावास्तव्य श्रीमद्भागवताभिनवशुक
पं० केशवदेव चतुर्वेदात्मज—
मुरलीधर चतुर्वेदः
सं० वि० वि०, सरस्वती भवन वाराणसी

भौमवार सं० २०३४ भा० शु० राधाष्टमी

विषय सूची

प्रथम अध्याय—मङ्गलाचरण १

द्वितीय अध्याय—मस्तक पर विधाता द्वारा लिखी गई अक्षर पंक्ति को पढ़ने की सामर्थ्य, होरा शब्द की व्युत्पत्ति, होरा शब्दार्थ, जातक व होरा में अभेद, होरा शास्त्र की आवश्यकता। २–३

तृतीय अध्याय—१२ राशियों के नाम. राशियों के स्वरूप, काल पुरुष के अवयव, अवयवों का प्रयोजन, १२ राशियों के नामान्तर, राशि के पर्याय, मण्डल व चक्रार्ध स्वामी, चक्रार्ध स्वामी के आधार पर फल, १२ राशियों के स्वामी एवं नवांशाधिपति, स्पष्टार्थ स्वामी चक्र, स्पष्टार्थ नवांश चक्र. भवनाधिप के बिना फलादेश नहीं होता, वर्गोत्तम नवांश तथा द्वादशांश का वर्णन, द्रेष्काण एवं होरा स्वामी, स्पष्टार्थ द्रेष्काण चक्र, स्पष्टार्थ होरा चक्र, त्रिंशांश के स्वामी, स्पष्टार्थ त्रिंशांश चक्र, सप्तमांश के स्वामी, स्पष्टार्थ सप्तमांश चक्र, राशियों में वर्गभेद संख्या का ज्ञान. वर्ग भेद का आनयन, राशियों की क्रूराक्रूर, पुरुष-स्त्री, चर, स्थिर, द्विस्वभाव तथा गण्डान्त संज्ञा, गण्डान्त में जायमान का फल, राशियों की दिशा व फल, कौन-कौन राशि किस दिशा व समय में बली, राशियों की दिन रात्रि पृष्ठोदयादि संज्ञा, राशियों का बल, १२ भावों के नाम, १२ भावों के नामान्तर, चतुरस्र, केन्द्रादि संज्ञा, चतुर्थ व दशम के नामान्तर, नवम, पञ्चम, सप्तम के नामान्तर, ६, ३, १२, २ भावों के नामान्तर, फणफर, आपोक्लिम संज्ञा, उपचय, अनुपचय संज्ञा, ग्रहों की मूल त्रिकोण राशि, उच्च नीचादि ज्ञान, राशियों की ह्रस्व, मध्य, दीर्घोदय संज्ञा, ह्रस्वोदयादि का फल, राशियों का प्लव व प्रयोजन, राशियों के वर्ण तथा प्रयोजन। ४–६

चतुर्थ अध्याय—कालपुरुष के आत्मादि विभाग, आत्मादि का प्रयोजन, द्रेष्काणवश कालावयवों की उत्पत्ति, लग्न के आधार पर वाम दक्षिण अंग तथा निर्बल-सबल संज्ञा, लग्न द्रेष्काणवश कालावयव ज्ञान, अंग ज्ञान का प्रयोजन, ग्रहों के राजत्वादि अधिकार व प्रयोजन, कौन ग्रह किस दिशा का स्वामी, ग्रहों की शुभ पाप संज्ञा, सूर्य चन्द्रमा, मंगल और बुध के नामान्तर, गुरु, शुक्र, शनि के नामान्तर, सूर्यादि ग्रहों के वर्ण और अधिदेवता, अधिदेवताओं का प्रयोजन, ग्रहों की पुरुष, स्त्री नपुंसक तथा विप्रादि संज्ञा एवं तत्त्वों के अधिपति, ग्रहों के रस तथा स्थान, ग्रहों के वस्त्र तथा धातु, काल एवं ऋतुओं के स्वामी ग्रह, कालाधिपति प्रयोजन, वेदों के अधिप, लोक स्वामी ग्रह, सूर्य का स्वरूप और गुण, चन्द्रमा, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि का स्वरूप और गुण, नैसर्गिक मित्र, सम, शत्रु, ज्ञान, ग्रहों के तात्कालिक मित्र व शत्रु, पञ्चधा मैत्री विचार, ग्रहों की साधारण दृष्टि, विशेष पूर्ण दृष्टि, ग्रहों के ४ प्रकार के बल, दिग्बल

व स्थान वल, काल वल व चेष्टा बल, आयन बल, द्रेष्काण बल, दिन, रात्रि विभाग बल, नैसर्गिक बल, सात प्रकार के बल का कथन, ग्रहों की अफलता। १६–५१

पञ्चम अध्याय—ग्रहों की दीप्तादि ९ प्रकार की अवस्था कथन, दीप्तादि का ज्ञान, दीप्त अवस्थागत ग्रह का फल, स्वस्थ, मुदित, शान्त, शक्त, पीड़ित, भीत विकल, खल ग्रह का फल, उच्च राशि में ग्रह वक्री होने पर विशेष, उच्चादि बल में श्रेष्ठादि कथन, पूर्ण चन्द्र होने पर राजा, आयु मध्य में सुख योग, राशि भेद फल कथन, फल भेद का निर्णय, राशियों में उच्च, मूल त्रिकोण व स्वगृह के अंश, उच्च नीचादि राशि स्थित शुभ ग्रहों के शुभ फल में न्यूनाधिक्य, नीचादि राशि स्थित पाप ग्रहों के अशुभ फल में न्यूनाधिकता, शुभ फल का अभाव और अशुभ फल पूर्ण, उच्च व मूल त्रिकोण बल से युक्त ग्रह फल, स्वराशि, मित्र राशि व स्वहोरा बल से युक्त ग्रह फल, स्वद्रेष्काण व स्वनवांश बल से युक्त ग्रह फल, सप्तमांश व द्वादशांश बल से युत ग्रह फल, स्थान बल, दिग् बल, अयन बल, चेष्टा वल से युत ग्रह फल, शुभ पाप, वक्र, ग्रह फल, निष्कण्टक राज्यप्रद ग्रह फल, दिन रात्रि बल से युत ग्रह फल, वर्षेशादि ग्रह फल, पक्ष बल से युत ग्रह का फल, बलवान् शुभ ग्रहों का फल बलवान् पाप ग्रहों का फल, स्वमित्रादि राशिगत ग्रहों की दशा के नाम, बालादि दशा का फल, विषम राशिगत ग्रह फल, सम राशिगत ग्रह फल। ३१–४०

षष्ठ अध्याय—परस्पर कारक ग्रह कथन, कारक ग्रह का उदाहरण, अन्य कारक ग्रह कथन, कारक ग्रह का फल, समस्त योगों में कारक की प्रधानता। ४०–४२

सप्तम अध्याय—वारेशादि कथन, प्रथम वर्षेश व होरेश से द्वितीयादि तथा अभीष्ट दिन में वारेश कथन, सौर-चन्द्रमास कथन, भावोक्त कर्म करने का समय, सूर्य के विषय, चन्द्रमा के विषय, मङ्गल के विषय, वुध के विषय, गुरू के विषय, शुक्र के विषय, शनि के विषय, ग्रहों के देश। ४२–४५

अष्टम अध्याय—आधानाध्याय का कथन, गर्भाधान योग्य रजोदर्शन कथन, रजोदर्शन का कारण, गर्भाधान में अक्षम रजोदर्शन, स्त्री-पुरुष संयोग कथन, सम्भोग ज्ञान प्रकार, गर्भ सम्भव योग, प्रकारान्तर, गर्भस्थित का स्वरूप, गर्भ में पुत्र व कन्या का ज्ञान, अन्य प्रकार, गर्भ में यमल योग, पुत्रयोग ज्ञान, नपुंसक योग ज्ञान, प्रकारान्तर से यमल योग ज्ञान, गर्भ में तीन बालकों के जन्म का योग, माता-पिता-मौसी-चाचा ग्रह, मातादि संज्ञा का प्रयोजन, गर्भाधान के बाद प्रत्येक मास में गर्भ का स्वरूप, गर्भ के १० मासों के स्वामी, गर्भपात योग, गर्भपुष्टि ज्ञान, गर्भ के साथ गर्भवती मरण योग ज्ञान, अन्य प्रकारान्तर, गर्भ वृद्धि योग ज्ञान; गर्भ समय से प्रसव मास ज्ञान, अन्य प्रकार से प्रसव ज्ञान, जन्मराशि ज्ञान, तीन व बारह वर्ष के बाद प्रसव योग ज्ञान, प्रसव के दिन, रात्रि काल का ज्ञान, प्रसव के लग्नादि का विचार, नेत्रहीन योग ज्ञान, पुनः नेत्र हीन योग ज्ञान, मूक योग ज्ञान, जड, सदन्त योग ज्ञान, अधिकाङ्ग योग ज्ञान, वामन वा कुब्ज योग ज्ञान, पङ्गु योग ज्ञान।

नवम अध्याय—मस्तकादि से जन्मयोग ज्ञान, प्रसवस्थान का ज्ञान, प्रकारान्तर से प्रसव स्थान ज्ञान, प्रकारान्तर से प्रसवदेश ज्ञान, पुनः अन्य प्रकार से जन्म स्थान का ज्ञान, सूतिका के गृह का ज्ञान, सूतिका गृह में शयन स्थान ज्ञान, प्रसव गृह में बरामदे का ज्ञान, सूतिका गृह स्वरूप ज्ञान, सूतिका गृह के द्वार व समीप के घर का ज्ञान, सूतिका की शय्या का ज्ञान, सूतिका का भूमिशयन व उपसूतिका ज्ञान, सूतिका घर में दीपक का स्थान व स्वरूप, दीपक की बत्ती व तेल का ज्ञान, अधिक दीपक ज्ञान, प्रसव समय में अन्धकार का ज्ञान, पिता को अनुपस्थिति में जन्म योग ज्ञान, कष्ट में प्रसव व माता सुख ज्ञान, परजात जन्म योग ज्ञान, प्रसव समय में मातृकष्ट का ज्ञान, माता से त्यक्त योग ज्ञान, प्रकारान्तर से ज्ञान, नालवेष्टित जन्म योग ज्ञान, सर्पवेष्टित जन्म योग ज्ञान, यमल जन्म योग ज्ञान, जातक के शरीर व वर्ण का ज्ञान, जातक की प्रकृति का ज्ञान, जातक के पिता व माता के मरण योग ज्ञान, माता पिता के सुख योग का ज्ञान।

दशम अध्याय—पुरुष वनिता ग्रहों के बल का ज्ञान, तीन प्रकार के अरिष्टों का कथन, तृतीय व द्वितीय वर्ष में अरिष्ट ज्ञान, नवम वर्ष के बाद अरिष्ट ज्ञान, १ मास में अरिष्ट ज्ञान, एक, छै, चार वर्ष में अरिष्ट ज्ञान, दो मास में अरिष्ट ज्ञान, शीघ्र अरिष्ट ज्ञान, जन्माधिपति के द्वारा शरीर पीड़ा ज्ञान, सात वर्ष में अरिष्ट ज्ञान, शरीर पीड़ा ज्ञान, १० या १६ वर्ष में अरिष्ट ज्ञान, शीघ्र मरण ज्ञान, स्वल्पकाल में मरण ज्ञान, अन्य अरिष्ट ज्ञान, १, ४, ८ वर्ष में, १, ६, ८, मास में, अन्य, नवम वर्ष में, चतुर्थ मास में, पुनः अन्य, प्रकारान्तर से, अन्य, पुनः अन्य, माता के सहित, शीघ्र, नवम वर्ष में अरिष्ट ज्ञान, मातृ पितृ, पिता के, माता के साथ मरण योग ज्ञान, जन्म के समय पिता का ज्ञान, पिता के मरण योग का ज्ञान, पुनः माता के साथ मरण योग का ज्ञान, माता व जातक में १ के मरण का ज्ञान, नेत्र हानि योग ज्ञान, प्रकारान्तर से नेत्र हानि योग ज्ञान, कर्ण रोग योग ज्ञान, चन्द्रराशि से कर्ण रोग ज्ञान, तीन दिन जीवन योग ज्ञान, १ दिन व सात दिन जीवन योग ज्ञान, रोगारम्भ से अरिष्ट ज्ञान, पुनः रोगारम्भ से, जन्माऽङ्ग से अरिष्ट ज्ञान, एक मास व सात दिन आयु योग ज्ञान, मृतजातक योग ज्ञान, त्रिकोणगत पापग्रह से अरिष्ट योग ज्ञान, पुनः अरिष्ट योग ज्ञान, शीघ्रमरण योग ज्ञान, १०८ वर्ष की आयु योग ज्ञान, १२० वर्ष की आयु योग ज्ञान, अरिष्ट ज्ञान, देवतुल्य आयु योग ज्ञान, गतायु योग ज्ञान, अनुक्तकाल योगों में मरण समय ज्ञान, पुनः पाँचवें वर्ष में अरिष्ट ज्ञान, ११, ७, ४, ३, ९ वर्ष में अरिष्ट ज्ञान, ५, १२, ७ वर्ष में दुर्मूहूर्त में, अल्प समय में, प्रत्येक राशि में चन्द्रकृत अरिष्ट ज्ञान, कथित अंशों में मरण समय ज्ञान। ७२–९२

एकादश अध्याय—पूर्णचन्द्र होने पर अरिष्ट नाश योग ज्ञान, प्रकारान्तर से रिष्टभङ्ग योग ज्ञान, पुनः प्रकारान्तर से रिष्टभङ्ग योग ज्ञान। ९३–९६

द्वादश अध्याय—गुरू की स्थितिवश अरिष्टभङ्गयोग ज्ञान, प्रकारान्तर से, राहु से, प्रकारान्तर से अरिष्टभङ्गयोग ज्ञान, केन्द्रस्थ गुरू व शुक्र से अरिष्टभङ्गयोग ज्ञान, अमितायु योग ज्ञान। ९७–१००

त्रयोदश अध्याय—सुनफा-अनफा-दुरुधरा योगलक्षण, केमद्रुम योग ज्ञान, प्रस्तार विधि से सुनफादिभेद संख्या ज्ञान, दुरुधरा योग के १०८ भेदों की सारिणी, सुनफा योगफल, अनफा, दुरुधरा योगफल, केमद्रुम योग फल, सुनफादि योगों का केन्द्र में प्रधानत्व कथन, सुनफा योग कारक भौम का फल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि का फल, अनफा योग कारक भौम का फल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि का फल, दुरुधरायोग कारक भौम बुध का फल, भौम गुरू, भौम शुक्र, भौम शनि, बुध गुरू, बुध शुक्र, बुध शनि, गुरू शुक्र, गुरू शनि, शुक्र शनि का फल, स्वल्प-मध्यम-उत्तम धनादि योग ज्ञान का फल, चन्द्रमा से उत्तमादि धन योग ज्ञान, प्रकारान्तर से उत्तमादि धन योग ज्ञान। १००—११२

चतुर्दश अध्याय—वेशि, वाशि उभयचरी योग लक्षण, वेशि योग फल, वेशि योग कारक गुरु, शुक्र बुध भौम, शनि, का फल ज्ञान, वाशियोग फल, वाशि योग कारक गुरू शुक्र बुध भौम शनि का फल, फलादेश में विशेष कथन, उभयचरी योग का फल ११३—११५

पञ्चदश अध्याय—सूर्यं चन्द्र युति का फल, सूर्यं भौम, सूर्यं बुध, सूर्यं गुरू, सूर्यं शुक्र, सूर्यं शनि, चन्द्र भौम, चन्द्र बुध, चन्द्र गुरू, चन्द्र शुक्र, चन्द्र शनि, भौम बुध, भौम गुरू, भौम शुक्र, भौम शनि, बुध गुरू, बुध शुक्र, बुध शनि, गुरू शुक्र, गुरू शनि, शुक्र शनि युति का फल। ११५—१२१

षोडश अध्याय—सूर्यं चन्द्रमा भौम, सूर्यं चन्द्रमा बुध, सूर्यं चन्द्रमा गुरू, सूर्यं चन्द्रमा शुक्र, सूर्यं चन्द्रमा शनि, सूर्यं भौम बुध, सूर्यं भौम गुरू, सूर्यं भौम शुक्र, सूर्यं भौम शनि, सूर्यं बुध गुरू, सूर्यं बुध शुक्र, सूर्यं बुध शनि, सूर्यं गुरू शुक्र, सूर्यं शुक्र शनि, चन्द्रमा भौम बुध, चन्द्रमा भौम गुरू, चन्द्रमा भौम शुक्र, चन्द्रमा भौम शनि, चन्द्रमा बुध गुरू, चन्द्रमा बुध शुक्र, चन्द्रमा बुध शनि, चन्द्रमा गुरू शुक्र, चन्द्रमा गुरू शनि, चन्द्रमा शुक्र शनि, चन्द्रमा बुध गुरू, चन्द्रमा बुध शुक्र, चन्द्रमा बुध शनि, चन्द्रमा गुरू शुक्र, चन्द्रमा शुक्र शनि, चन्द्रमा शुक्र शनि, भौम बुध गुरू, भौम बुध शुक्र, भौम बुध शनि, भौम गुरू शुक्र, भौम शुक्र शनि, भौम शुक्र शनि, बुध गुरू शुक्र, बुध गुरू शनि, बुध शुक्र शनि, गुरू शुक्र शनि, युति का फल, माता व पिता के सुख का ज्ञान, शुभग्रहों की युति का फल, पापग्रहों की युति का फल। १२१—१२७

सप्तदश अध्याय—सू० चं० मं० बुध, सू० चं० मं० गुरू, सू० चं० मं० शुक्र, सू० चं० मं० शनि, सू० चं० बुध गुरू, सू० चं० बुध शुक्र, सूर्यं चं० बुध शनि, सूर्यं चं० गुरू शुक्र, सूर्यं चं० गुरू शनि, सूर्यं चं० शुक्र शनि, सूर्यं भौम बुध गुरू, सूर्यं भौम बुध शनि, सूर्यं भौम गुरू शुक्र, सूर्यं भौम गुरू शनि, सूर्यं भौम शुक्र शनि, सूर्यं बुध गुरू शुक्र, सूर्यं बुध गुरू शनि, सूर्यं बुध शुक्र शनि, सूर्यं गुरू शुक्र शनि, चन्द्र भौम बुध गुरू, चन्द्र भौम बुध शुक्र, चन्द्र भौम बुध शनि, चन्द्र भौम गुरू शुक्र, चन्द्र भौम गुरू शनि, चन्द्र भौम शुक्र शनि, चन्द्र बुध गुरू शुक्र, चन्द्र

बुध गुरू शनि, चन्द्र बुध शुक्र शनि, चन्द्र गुरू शुक्र शनि, भौम बुध गुरू शुक्र, भौम बुध गुरू शनि, भौम बुध शुक्र शनि, भौम गुरू शुक्र शनि, बुध गुरू शुक्र शनि युति का फल। १२८—१३३

अष्टादश अध्याय—सूर्य चन्द्र भौम बुध गुरू, सूर्य चन्द्र भौम बुध शुक्र, सूर्य चन्द्र भौम बुध शनि, सूर्य चन्द्र भौम गुरू शुक्र, सूर्य चन्द्र भौम गुरू शनि, सूर्य चन्द्र भौम शुक्र शनि, सूर्य चन्द्र बुध गुरू शुक्र, सूर्य चन्द्र बुध गुरू शनि, सूर्य चन्द्र बुध शुक्र शनि, सूर्य चन्द्र गुरू शुक्र शनि, सूर्य भौम बुध गुरू शुक्र, सूर्य भौम बुध गुरू शनि, चन्द्र भौम बुध शुक्र शनि, सूर्य भौम बुध शुक्र शनि, चन्द्र भौम गुरू शुक्र शनि, सूर्य भौम गुरू शुक्र शनि, सूर्य बुध गुरू शुक्र शनि, चन्द्र भौम बुध गुरू शुक्र, चन्द्र भौम बुध गुरू शनि, चन्द्र भौम बुध शुक्र शनि, चन्द्र बुध गुरू शुक्र शनि, भौम बुध गुरू शुक्र शनि युति का फल। १३४—१३७

एकोनविंश अध्याय—सू० चं० मं० बु० गु० शु०, सू० चं० मं० बु० गु० शनि, सू० चं० मं० बु० गुरु शुक्र शनि, सूर्य चं० मं० गुरू शुक्र शनि, सू० चं० बुध गुरू शुक्र शनि, सूर्य भौम बुध गुरू शुक्र शनि० चं० मं० बु० गु० शु० शनि युति का फल, एकत्रित ५ या ६ ग्रहों का फल। १३८—१३९

विंश अध्याय—संन्यास योगों का वर्णन, तपस्वी योग ज्ञान, प्रव्राजक योग ज्ञान, तपस्वी, व्रती, योग ज्ञान, वनपर्वतस्थ तपस्वी, अन्नत्यागी मुनि, व्रती योग ज्ञान, यशस्वी मुनि योग ज्ञान, तपस्वी योग ज्ञान, फल-मूलभक्षक तपस्वी योग ज्ञान, वल्कल, चीरधारी व्रती योग ज्ञान, शान्त तपस्वी योग ज्ञान, फलभक्षक यती योग ज्ञान, पर्वत वनवासी तपस्वी योग ज्ञान, दुःखी मुनियोग ज्ञान, जटाधारी वल्कल वस्त्रधारी मुनि योग ज्ञान, तपस्वी योग ज्ञान, प्रव्रज्या भङ्गयोग ज्ञान, चार आदि ग्रहों के विना प्रव्रज्या योग ज्ञान, प्रकारान्तर से प्रव्रज्या योग ज्ञान, भाग्यहीन प्रव्रज्या योग ज्ञान, दुःखी संन्यासी योग ज्ञान, नृप संन्यासी योग, दुःखित संन्यासी योग ज्ञान, प्रकारान्तर से संन्यास योग, ज्ञान प्रव्रज्या कारक सूर्य, चन्द्र, भौम, बुध, गुरू, शुक्र, शनि का फल। १३९—१४७

एकविंश अध्याय—३२ नाभस योगों के नाम, ७ की संख्या संज्ञा का कथन, दल व आकृति संज्ञक योग ज्ञान, आश्रय, आकृति, संख्या, दल योग का फल, नौ, कूट, छत्र, चाप, यूप, शर शक्ति दण्ड, अर्द्ध चन्द्र व गदा, वज्र व यव योगों का लक्षण, शकट, विहग, हल व श्रृङ्गाटक चक्र व समुद्र, नल, मुसल, रज्जु, माला व सर्प योग ज्ञान, संख्या योगों का ज्ञान, नाभस योगफल प्राप्ति ज्ञान, नौका, कूट, छत्र, चाप, अर्द्धचन्द्र, वज्र, यव, कमल, वापी, शकट, विहग, गदा, श्रृङ्गाटक, हल, चक्र, समुद्र, यूप, शर, शक्ति, दण्ड, माला, सर्प, रज्जु, मुसल, नल, गोल, युग, शूल, केदार, पाश, दामिनी, वीणा योगों का फल। १४७—१६४

द्वाविंश अध्याय—मेषस्थ सूर्य का फल, भौम राशिस्थ सूर्य पर ग्रहों की दृष्टि के फल, वृष राशिस्थ सूर्य का फल, शुक्र राशिस्थ सूर्य पर ग्रहों की दृष्टि के फल,

मिथुन राशिस्थ सूर्य का फल, बुध राशिस्थ सूर्य पर ग्रहों की दृष्टि के फल, कर्क राशिस्थ सूर्य का फल, कर्क राशिस्थ सूर्य पर ग्रहों की दृष्टि के फल, सिंह राशिस्थ सूर्य का फल, सिंह राशिस्थ सूर्य पर ग्रहों की दृष्टि के फल, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, राशिस्थ सूर्य का फल, गुरु राशिस्थ सूर्य पर ग्रहों की दृष्टि के फल, मकर राशिस्थ सूर्य का फल, शनि राशिस्थ सूर्य पर ग्रहों की दृष्टि के फल, कुम्भ राशिस्थ, मीन राशिस्थ सूर्य का फल। १६५–१७६

त्रयोविंश अध्याय—मेष राशिस्थ चन्द्रमा का फल, मेष राशिस्थ चन्द्र पर ग्रहों की दृष्टि के फल, वृष राशिस्थ चन्द्र का फल, वृष राशिस्थ चन्द्रमा पर ग्रहों की दृष्टि के फल, वृषस्थ चन्द्रमा के पूर्वार्ध व परार्ध का फल, मिथुन राशिस्थ चन्द्र का फल, मिथुन राशिस्थ चन्द्र पर ग्रहों की दृष्टि के फल, कर्क राशिस्थ चन्द्रमा का फल, कर्क राशिस्थ चन्द्र पर ग्रहों की दृष्टि के फल, सिंह राशिस्थ चन्द्रमा का फल, सिंह राशिस्थ चन्द्र पर ग्रहों की दृष्टि के फल, कन्या राशिस्थ चन्द्रमा का फल, कन्या राशिस्थ चन्द्रमा पर ग्रहों की दृष्टि के फल, तुला राशिस्थ चन्द्रमा का फल, तुला राशिस्थ चन्द्र पर ग्रहों की दृष्टि के फल, वृश्चिक राशिस्थ चन्द्र का फल, वृश्चिक राशिस्थ चन्द्रमा पर ग्रहों की दृष्टि के फल, धनु राशिस्थ चन्द्र का फल, धनु राशिस्थ चन्द्र पर ग्रहों की दृष्टि के फल, मकर राशिस्थ चन्द्रमा का फल, मकर राशिस्थ चन्द्रमा पर ग्रहों की दृष्टि के फल, कुम्भ राशिस्थ चन्द्र का फल, कुम्भ राशिस्थ चन्द्र पर ग्रहों की दृष्टि के फल, मीन राशिस्थ चन्द्रमा का फल, मीन राशिस्थ चन्द्र पर ग्रहों की दृष्टि के फल, कथित फलों का निर्णय। १७६–१९२

चतुर्विंश अध्याय—भौम राशि नवांशस्थ चन्द्र पर ग्रहों की दृष्टि के फल, शुक्र राशि नवांशस्थ चन्द्र पर ग्रहों की दृष्टि के फल, बुध राशि नवांशस्थ चन्द्र पर ग्रहों की दृष्टि के फल, कर्क राशि नवांशस्थ चन्द्र पर ग्रहों की दृष्टि के फल, सिंह राशि नवांशस्थ चन्द्र पर ग्रहों की दृष्टि के फल, गुरू राशि नवांशस्थ चन्द्र पर ग्रहों की दृष्टि के फल, फल कथन में विशेषता। १९२–१९६

पञ्चविंश अध्याय—मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ, मीन राशिस्थ भौम का फल, स्वराशिस्थ भौम पर ग्रहों की दृष्टि के फल, शुक्र राशिस्थ भौम पर ग्रहों की दृष्टि के फल, बुध, कर्क, सिंह, गुरू, शनि राशिस्थ भौम पर ग्रहों की दृष्टि के फल। १९६–२०६

षड्विंश अध्याय—मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ, मीन राशिस्थ बुध का फल, भौम, शुक्र, बुध, कर्क, सिंह, गुरू, शनि राशिस्थ बुध पर ग्रहों की दृष्टि के फल। २०७–२१६

सप्तविंश अध्याय—मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ, मीन राशिस्थ गुरू का फल, भौम, शुक्र, बुध, कर्क, सिंह, स्वराशिस्थ, शनि राशिस्थ गुरू पर ग्रहों की दृष्टि के फल। २१६–२२५

अष्टाविंश अध्याय—मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ, मीन राशिस्थ शुक्र का फल, भौम, स्व, बुध, कर्क, सिंह, गुरू, शनि राशिस्थ शुक्र पर ग्रहों की दृष्टि के फल । २२६–२३४

एकोनत्रिंश अध्याय--मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ, मीन राशिस्थ शनि का फल, भौम, शुक्र, बुध, कर्क, सिंह, गुरू, स्वराशिस्थ शनि पर ग्रहों की दृष्टि के फल । २३५-२४४

त्रिंश अध्याय--ग्रह भाव फलाध्याय का कथन, लग्न, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, पञ्चम, षष्ठ, सप्तम, अष्टम, नवम, दशम, एकादश, द्वादश भाव में सूर्य का फल, लग्नस्थ चन्द्रमा का फल, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, पञ्चम, षष्ठ, सप्तम, अष्टम, नवम, दशम, एकादश, द्वादश भावस्थ चन्द्र का फल, लग्नस्थ भौम का फल, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, पञ्चम, षष्ठ, सप्तम, अष्टम, नवम, दशम, एकादश, द्वादश भावस्थ भौम का फल, लग्नस्थ बुध का फल, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, पञ्चम, शत्रु, सप्तम, अष्टम, नवम, दशम, एकादश, द्वादश भावस्थ बुध का फल, लग्नस्थ गुरू का फल, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, पञ्चम, षष्ठ, सप्तम, अष्टम, नवम, दशम, एकादश, द्वादश भावस्थ गुरू का फल, लग्नस्थ शुक्र का फल, द्वितीयस्थ, ३–८ भावस्थ, ९–१२ भावस्थ शुक्र का फल, लग्न व धनस्थ, ३–८ भावस्थ, ९–१२ भावस्थ शनि का फल, भावों का शुभाशुभत्व ज्ञान । २४४–२६१

एकत्रिंश अध्याय—केन्द्रस्थ सूर्य चन्द्र युति का फल, सूर्य भौम, सूर्य बुध, सूर्य गुरु, सूर्य शुक्र, सूर्य शनि, चन्द्र भौम, चन्द्र बुध, चन्द्र गुरु, चन्द्र शुक्र, चन्द्र शनि, भौम बुध, भौम गुरु, भौम शुक्र, भौम शनि, बुध गुरु, बुध शुक्र, बुध शनि, गुरु शुक्र, गुरु शनि, शुक्र शनि युति का फल । २५७–२७२

द्वात्रिंश अध्याय—भाग्यभाव विचार, भाग्यस्थ गुरू पर ग्रहों की दृष्टि के फल, भाग्यस्थ गुरू पर सूर्य भौम की दृष्टि का फल, सूर्य चन्द्र, सूर्य बुध, सूर्य शुक्र, सूर्य शनि, चन्द्र भौम, चन्द्र बुध, चन्द्र शुक्र, चन्द्र शनि, भौम बुध, भौम शुक्र, भौम शनि की दृष्टि का फल, बुध शुक्र, बुध शनि, शुक्र शनि, भाग्येश की व समस्त ग्रहों की दृष्टि का फल, शुभ राशि में बली ग्रहों का फल, नीचादि राशि में पाप ग्रहों का फल, भाग्य भाव में स्वराशिस्थ पाप ग्रहों का फल, भाग्यस्थ प्रधान राजयोग का ज्ञान, समस्त ग्रहों से दृष्ट युत भाग्यभाव का फल, नवमस्थ सूर्य चन्द्र योग का फल, सूर्य भौम, सूर्य बुध, सूर्य गुरू, सूर्य शुक्र, सूर्य शनि युति का फल, नवमस्थ चन्द्र भौम युति का फल, चन्द्र बुध, चन्द्र गुरू, चन्द्र शुक्र, चन्द्र शनि, भौम बुध, भौम गुरू, भौम शुक्र, भौम शनि, बुध गुरू, बुध शुक्र, बुध शनि, गुरू शुक्र, गुरू शनि, शुक्र शनि युति का फल, सू० चं० भौ०; सू० चं० बुध, सू० चं० गुरू, सू० चं० शुक्र, सू० चं० शनि, सूर्य भौम बुध, सू० भौ० गुरू, सू० भौ० शुक्र, सू० भौ० शनि, सूर्य बुध गुरू, सू० बुध शुक्र, सू० बुध शनि, सू० गुरू शुक्र, सू० गुरू शनि, सू० शुक्र शनि, चं० मं० बुध युति का फल, भाग्यस्थ

चं० मं० गु०, चं० मं० शुक्र, चं० मं० शनि, चं० बु० गुरू, चं० बु० शुक्र, चं० बु० शनि, चं० गु० शुक्र, चं० गु० शनि०, चं० शुक्र शनि, मं० बु० गुरू, मं० बु० शुक्र, मं बु० शनि, बु० गु० शुक्र, बु० गु० शनि, गु० शु० शनि युति का फल, सू० चं० मं० बुध, सू० चं० मं० गुरू, सू० चं० मं० शुक्र, सू० चं० मं शनि, सू० चं० बु० गुरू, सू० चं० बु० शुक्र, सू० चं० बु० शनि, सू० मं० बु० गुरू, सू० मं० बु० शुक्र, सू० मं० बु० शनि, सू० मं० गु० शुक्र, सू० मं० गु० शनि, सू० बु० गु० शुक्र, सू० बु० गु० शनि, सू० बु० शु० शनि, सू० गु० शु० शनि, चं० मं० बु० गुरू, चं० मं० बु० गुरू, चं० मं० बु० शुक्र, चं० मं० बु० शनि, चं० मं० गु० शुक्र, चं० मं० गु० शनि, चं० मं० गु० शनि, चं० मं० शु० शनि, चं० बु० गु० शुक्र, चं० बु० गु० शनि, चं० बु० शुक्र शनि, चं० गु० शु० शनि, भौ० बु० गु० शनि, भौ० बु० शुक्र शनि, भौ० गु० शु० शनि, बु० गु० शु० शनि युति का फल नवमस्थ बुध के साथ तीन चारादि ग्रहों का फल, नवमस्थ बुध गुरू के अतिरिक्त ग्रहों का फल। २७३–२९१

त्रयस्त्रिंश अध्याय—फल कथन में विशेषता का ज्ञान, चन्द्रमा से दशमस्थ सूर्य का फल, भौम का, बुध का, गुरू का, शनि का, सूर्य भौम युति का फल, सूर्य बुध, सूर्य गुरू, सूर्य शुक्र का फल, चन्द्रमा से दशमस्थ सूर्य शनि युति का फल, भौम बुध, भौम गुरू, भौम शुक्र, भौम शनि, बुध गुरू, बुध शुक्र, बुध शनि, गु० शुक्र, गुरू शनि, शुक्र शनि, सू० मं० बुध, सू० मं गुरू, सू० मं शुक्र, सू० मं० शनि, सू० बुध गुरू, सू० बुध शुक्र, सू० बुध शनि, सू० गु० शुक्र, सू० गु० शनि, सू० शु० शनि, मं० बु० गुरू, मं० बु० शुक्र, मं० बु० शनि, मं० गु० शुक्र, मं० गु० शनि, मं० शुक्र शनि, बु० गु० शुक्र, बु० गु० शनि, बु० शुक्र शनि, गु० शु० शनि, सू० मं० बु० गुरू, सू० मं० बु० शुक्र, सू० मं० बु० शनि, सू० बु० गु० शुक्र, सू० बु० गु० शनि, सू० बु० शुक्र शनि, सू० गु० शु० शनि, मं० बु० गु० शुक्र, मं० बु० गु० शनि, मं० बु० शुक्र शनि, मं० गु० शु० शनि, बु० गु० शु० शनि युति का फल, लग्न वा चन्द्रमा से शुभाशुभप्रद पाप ग्रहों का फल, लग्न व चन्द्र में बली से दशमभाव का फल, दशमस्थ मेष राशि के वर्ग का फल, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ, मीन राशि के वर्ग का फल, लग्न वा चन्द्रमा से दशमस्थ सूर्यादि ग्रहों का फल। २९१–३०४

चतुस्त्रिंश अध्याय—सूर्य से दृष्ट लग्न का फल, चन्द्र से, भौम से, बुध से, गुरू से, शुक्र से, शनि से दृष्ट लग्न का फल, लग्नस्थ अपनी राशि को देखने का व शुभ पाप ग्रह से दृष्ट लग्न का फल, किसी भी ग्रह से अदृष्ट लग्न का फल, दो आदि ग्रह से व एक शुभ ग्रह से दृष्ट लग्न का फल, समस्त ग्रहों से दृष्ट लग्न का फल, लग्नस्थ तीन शुभ ग्रह व पाप ग्रहों का फल, लग्न से ६, ७, ८ में पाप ग्रहों से अदृष्ट व अयुक्त शुभ ग्रहों का फल, लग्नस्थ ग्रह के फल में न्यूनाधिक कथन, धनभाव में सू० श० भौम का फल, गुरू बुध का फल, शुक्र का फल, तृतीयभाव में पाप ग्रह राशि व पाप ग्रहों का फल, भ्रातृसंख्या का ज्ञान, तृतीय भाव में शनि व शुक्र का फल, बुध का फल सन्तान प्राप्ति वा अप्राप्ति का ज्ञान, पंचमस्थ शुभराशि में गुरू के षड्वर्ग का फल,

सन्तान संख्याज्ञान, क्षेत्रज पुत्र योग ज्ञान, दत्तक व क्रीत पुत्र योग ज्ञान, कृत्रिम पुत्र प्राप्ति योग ज्ञान, अधम, गूढपुत्र, अपविद्ध, पुनर्भू, कानीन, सहोढ पुत्रज्ञान, पुत्र अप्राप्ति योग ज्ञान, दासी पुत्रप्राप्ति योग ज्ञान, कन्या सन्तति योग ज्ञान, सन्तान हीन योग ज्ञान, पञ्चमस्थ शुभ पाप ग्रह का फल, शत्रु भाव विचार, स्त्रीलाभ योग ज्ञान, स्त्रीनाश व पुनर्भू स्त्री प्राप्ति योग ज्ञान, स्त्री संख्या योग ज्ञान, प्रकारान्तर से, स्त्री वर्ण योग ज्ञान स्त्री विनाश योग ज्ञान, विकलदार योग ज्ञान, कानी स्त्री प्राप्ति योग ज्ञान, बन्ध्यापति योग ज्ञान, स्त्री पुत्र हीन योग ज्ञान, स्त्री के साथ व्यभिचार योग ज्ञान, पुत्र स्त्री हीन व अधिक अवस्था में स्त्रीलाभ योग ज्ञान, अधिक धनाढ्य योग ज्ञान, सूर्य से दृष्ट या युत लाभ भाव का फल, चन्द्र से, भौम से दृष्ट या युत लाभ भाव का फल, बुध से दृष्ट युत व आयस्थ, बुध वर्ग का फल, गुरू के वर्ग में गुरू से दृष्ट युत लाभ का फल, शुक्र के वर्ग में शुक्र से दृष्ट युत लाभ का फल, शनि के वर्ग में शनि से दृष्ट युत लाभ का फल, आयस्थ शुभ-पाप-मिश्र ग्रह का फल, समस्त ग्रहों से दृष्ट युत लाभ का फल, मित्र स्वगृहादिस्थ ग्रहों का फल, व्ययस्थ सूर्य चन्द्र भौम का फल, द्वादशस्थ गुरू-चन्द्र-शुक्र का फल, विशेष फल कथन, प्रकारान्तर से द्वादश भाव का फल, नेत्र विनाश योग ज्ञान, कान व दाँत विनाश योग ज्ञान, उन्माद योग ज्ञान । ३०४–३२४

पञ्चत्रिंश अध्याय—राजकुलोत्पन्न व निम्नकुलोत्पन्न राजयोग तथा धनी योग क्रूर कर्मा व सत्कृत राजयोग, नीचकुलोत्पन्न राजयोगों के ३२ भेदों का कथन, स्पष्ट भेद ज्ञानार्थं सारिणी, अधमवंशोत्पन्न राजयोग, अधिक भूमण्डल पालक योग, अन्य राजयोग, विज्ञान कुशल, सद्भूपाल, अधिक लक्ष्मी से युत, इन्द्र तुल्य, सकल कलाढ्य, शत्रु से अजेय, शत्रु पराजित कर्त्ता, अन्य, स्वभुजबल से, अन्य, अधि राजयोग, अन्य राजयोग; अपार कीर्तियुत, अन्य, प्रसन्न, अन्य, इन्द्रतुल्य बली, अन्य, अखण्ड भूपति योग, अन्य, प्रकारान्तर से, यशस्वी व समस्त शत्रु हन्ता, अन्य, सार्वभौम, देवदानवों से बन्दित, शत्रु रहित, अन्य, सार्वभौम, प्रकारान्तर से, सगरादि तुल्य, तपस्वी, गुरु बुद्धि तुल्य, दुर्वारशत्रुमारक, अन्य राजयोग, अन्य, यशस्वी, अधिक हाथी युक्त, स्वकीर्ति से दिशाओं का शुभ कर्ता राजयोग, शत्रुजेता, सार्वभौम, अधिक हाथी युक्त, अपूर्व यशस्वी, निषाद कुलोत्पन्न, महाराज योग, अन्य, ग्रामीण, अन्य राजयोग, अधिक यशस्वी, नीचकुलोत्पन्न, देवतुल्य, अन्य राजयोग नीचकुलोत्पन्न, लक्ष्मी युत, प्रसिद्ध, ब्राह्मण कुलोत्पन्न, गाय-पालक, सकल नृपपालक, अन्य, यशस्वी, अन्यजात, कुत्सित, नीचकुलोत्पन्न, शत्रुजेता, निराकुल, चक्र व समुद्र, अन्य, अधिक सम्पत्तिवान्, नगर नामक, प्रशान्त, कलशसंज्ञित, पूर्ण कुम्भनामक, सब संसार से वन्दित, स्थिर लक्ष्मीवान्, अधिक लक्ष्मीवान्, चन्द्रांशु तुल्य यशस्वी, अपने गुणों से विख्यात, अन्य, अधिक यशस्वी, अन्य, पराक्रम धन वाहन से युक्त, सर्पराज के तुल्य प्रतापी, राजेश्वर; शत्रुजीत, अन्य, लक्ष्मीपति, अन्य, ब्राह्मण कुल में, अंग देशाधिप, मगधाधिप, शत्रुदमन, गोप कुलोत्पन्न, समस्त भूमण्डल का स्वामी अन्य, काश्मीराधिप, अन्य, प्रसिद्ध कीर्तिमान्, शत्रुजित, अन्य, द्वीपाधिप, अन्य, त्रिभुवनाधिप, अन्य, शत्रुजित, विमल कीर्तिमान्, प्रसिद्ध यशस्वी, स्वभुज विजयी,

प्रसिद्ध, अस्थिर स्वभावी, अजेय, द्विजदेव भक्त, सर्वबन्दित; शत्रुजेता, अन्य, कीर्तिमान्, सफल पुष्कल नामक, अन्य, शतयोजन भूस्वामी, अन्य, सार्वभौम, वर्धित श्री, शत्रुजेता, अन्य, संसार का कल्याणकारी, अन्य, प्रसिद्ध, वीर, अन्य, अजेय, सार्वभौम, अन्य, अतुल्य बलवान्, अहङ्कारी, कुबेर के समान धनी, त्रिसमुद्रपारग, अन्य, सिंहासनाधिशायी अन्य, स्वबाहुबल से भूमि का जेता, समस्तनृपवन्दित, अन्य, सुनफादि योग में, अतुल कीर्तिमान्, सार्वभौम, अन्य, स्फीत महीपति, अन्य, अन्य राजयोग। ३२४–३६८

षट्त्रिंश अध्याय—ग्रहों की रश्मि संख्या का ज्ञान, प्रकारान्तर से, अभिमुख पराङ्मुख रश्मि कथन, स्पष्ट रश्मि का आनयन, आनीत रश्मि संख्या में संस्कार विशेष, पुनः संस्कार विशेष का कथन, १–५ रश्मि योग का फल, ६–१० तक, ११–१५ तक, १६–२० तक, २१–२५ तक, २६–३० तक, ३१ से ३६ तक, ३७ से ४३ तक, ४४ से ४९ तक, फल में विशेषता का कथन। ३६९–३७४

सप्तत्रिंश अध्याय—पञ्चममहापुरुष लक्षण, शुक्रादि से फल ज्ञान, सतोगुणी के प्रधान लक्षण, रजोगुणी के, तमो गुणी के, समस्त पृथ्वी पालक का ज्ञान, शत्रुजेता राजयोग, विशेष, राजयोग, राजा का वर्ण ज्ञान, तत्व ज्ञान, आकाश-जल, वायु-अग्नि तत्त्व का फल, भूमि तत्व का फल, आकाश-जल-वायु, वह्नि छाया का, भूमि छाया का, वात-पित्त-प्रकृति का, कफ प्रकृति का, राजयोग में विशेष कथन, मालव्य-रुचक, शश-हंस, भद्र योग फल, अन्य फल। ३७५–३८५

अष्टत्रिंश अध्याय—राजयोग भंग, अपशकुन से राजयोग, अन्य राजयोग, प्रकारान्तर से राजयोग, फल में विशेष कथन, राजयोग भंग ज्ञान। ३८५–३८८

एकोनचत्वारिंश अध्याय—आयुर्दायाध्याय का कथन, तीन प्रकार की आयु में कब किसका ग्रहण, अंशायु साधन, लग्नायुर्दाय में विशेष संस्कार, पुनः विशेष संस्कार, चूडामणि के मत में विशेष संस्कार, पुनः विशेष संस्कार, आयु में हानि, चक्रार्ध हानि ज्ञान, ग्रहों की पिण्डायु का कथन, पिण्डायु का साधन, पिण्डायु साधन में विशेष, लग्न पिण्डायु साधन में विशेष, लग्नस्थ पापग्रह होने पर हानि, ग्रहों की निसर्गायु का कथन, परमायु योग ज्ञान, अमितायु योग ज्ञान, मनुष्यादि के परमायु प्रमाण का ज्ञान, परमायु प्राप्त करने के अधिकारी। ३८९–३९६

चत्वारिंश अध्याय—दशाध्याय का कथन, दशाविषय में मणित्थ का कथन, दशा विषय में सत्याचार्य का मत, स्वकीय मत का कथन, शुभफल, अशुभ फल देनेवाली दशा, अवरोहिणी व आरोहिणी दशा का ज्ञान, दशा कथन में विशेष, चन्द्र की महादशा में चन्द्र राशिवशफल, समस्त ग्रहों की दशारम्भ काल में चन्द्रराशिवश फल, दशारम्भ में चन्द्र पर ग्रहों की दृष्टि का फल, दशा स्वामी का लग्नस्थ व उपचयस्थ होने पर फल, दशास्वामी से चन्द्र स्थिति वश फल, शत्रु-नीचांशस्थित ग्रह दशा फल, लग्न दशा का शुभाशुभ फल ज्ञान, ग्रहों की नैसर्गिक दशा का क्रम, नैसर्गिक दशा का फल, सूर्य की शुभ दशा का फल, सूर्य की अशुभ दशा का फल, चन्द्रमा की शुभाशुभ दशा का

फल, भौम की शुभाशुभ दशा का फल, बुध की शुभ दशा का फल, बुध की अशुभ दशा का फल, गुरू की शुभाशुभ दशा का फल, शुक्र की शुभाशुभ दशा का फल, शनि की शुभ दशा का फल, शनि की अशुभ दशा का फल, दशा कथन में विशेष, पाँच प्रकार की सूर्य दशा का कथन, लग्नस्थ केन्द्रस्थ सूर्य दशा का फल, नीचस्थ सूर्य दशा का फल नीचस्थ सूर्य दशा का फल, उच्च-मूलत्रिकोण व शत्रुगृह व अष्टमस्थ सूर्य दशा का फल, विशेषता से चन्द्रदशा का फल, उच्च-नीच-मित्र-शत्रुस्थ व क्षीण चन्द्र दशा का फल, पूर्ण व बली एवं अष्टम तथा शत्रुराशिस्थ चन्द्र दशा का फल, लग्नस्थ व उच्चस्थ एवं केन्द्रस्थ ग्रहों की दशा का फल, षष्ठस्थ व अष्टमस्थ व अस्त ग्रह की दशा का फल, वक्री ग्रह की दशा का फल, ग्रहों की स्थिति से दशा का फल, शत्रु राशिस्थ ग्रहों की दशा का फल, निर्बल ग्रह की दशा का फल, षष्ठ-कोण-द्यून-निधनस्थ व शत्रुगृहगत ग्रह दशा का फल, नीचस्थ ग्रह दशा का फल, शून्य बली ग्रहों की दशा का फल, दशाफल प्राप्ति कथन। ३९७–४११

एकचत्वारिंश अध्याय—अन्तर्दशा पाक ज्ञान, अन्तर्दशा साधन में विशेष, सत्याचार्य का मत, अन्तर्दशा साधन, दशाधीश के साथ रहने वाले ग्रह की अन्तर्दशा का फल, दशाधीश से सप्तमस्थ व अष्टमस्थ ग्रह की अन्तर्दशा का फल, केन्द्र त्रिकोण के विना एकस्थ २, ३, ४ पाप ग्रहों की अन्तर्दशा का फल, दशाधीश से चतुर्थस्थ ग्रह की अन्तर्दशा का फल, सूर्य की महादशा में चन्द्र भौम बुध गुरू की अन्तर्दशा का फल, सूर्य की महादशा में शुक्र शनि की अन्तर्ददशा का फल, चन्द्रमा की महादशा में सूर्य भौम बुध गुरू की अन्तर्दशा का फल, चन्द्रमा की महादशा में शुक्र व शनि की अन्तर्दशा का फल, भौम की महादशा में सूर्य चन्द्र बुध गुरू की अन्तर्दशा का फल, भौम की महादशा में शुक्र शनि की अन्तर्दशा का फल, बुध की महादशा में सूर्य चन्द्र भौम गुरू शुक्र की अन्र्तदशा का फल, बुध की महादशा में शनि की अन्तर्दशा का फल, गुरू की महादशा में सूर्य चन्द्र भौम बुध की अन्तर्दशा का फल, गुरू की महादशा में शुक्र शनि की अन्तर्दशा का फल, शुक्र की महादशा में सूर्य चन्द्र भौम बुध की अन्तर्दशा का फल, शुक्र की महादशा में गुरू व शनि की अन्तर्दशा का फल, शनि की महादशा में सूर्य चन्द्र, भौम बुध की अन्तर्दशा का फल, शनि की महादशा में गुरू व शुक्र की अन्तर्दशा का फल, दशा फलादेश में विशेष, अस्तग्रह की दशा का फल, लग्नेश व राशीश के शत्रुग्रह की दशा का फल, राज्यप्रद दशा का कथन, भोगी व शबराधिप योग ज्ञान। ४११–४२१

द्विचत्वारिंश अध्याय—पापग्रह की महादशा में पापग्रह की अन्तर्दशा का फल, भौम की महादशा में शनि की अन्तर्दशा का फल, क्रूर राशिस्थ पापग्रह षष्ठ में वा अष्टमस्थ होने पर दशा का फल, लग्नाधीश के शत्रु की दशा में लग्नेश की अन्तर्दशा का फल। ४२१–४२२

त्रिचत्वारिंश अध्याय—दशारिष्टभङ्ग ज्ञान। ४२२

चतुश्चत्वारिंश अध्याय—उच्चस्थ सूर्यं चन्द्र भौम बुध गुरू शुक्र शनि का फल, मूल त्रिकोणस्थ सूर्यं चन्द्र का फल, मूल त्रिकोणस्थ भौम बुध गुरू शुक्र शनि का फल, स्वराशिस्थ सूर्यं चन्द्र का फल, स्वराशिस्थ बुध गुरू शनि का फल, मित्रगृहस्थ सूर्यं चन्द्र भौम बुध गुरू शुक्र का फल, मित्रगृहस्थ शनि का फल, नीचस्थ सूर्यं चन्द्र भौम बुध गुरू शुक्र शनि का फल, शत्रु राशिस्थ सूर्यं चन्द्र का फल, शत्रु राशिस्थ भौम बुध गुरू शुक्र शनि का फल, उच्च नीचादि नवांश में फल का न्यूनाधिक्य, उच्चस्थ दो तीन ग्रहों का फल, उच्चस्थ ३, ४, ५, ६ व समस्त ग्रहों का फल, मूलत्रिकोणस्थ दो ग्रहों फल, मूलत्रिकोणस्थ ३, ४, ५, ६ व समस्त ग्रहों का फल, स्वराशिस्थ दो तीन चार पाँच ग्रहों का फल, स्वराशिस्थ ६ ग्रहों का फल, मित्र राशिस्थ २-३-४-५-६ व ७ ग्रहों का फल, नीचस्थ २-३-४-५-६-७ ग्रहों का फल, शत्रुराशिस्थ दो तीन चार ग्रहों का फल, शत्रुराशिस्थ ५-६-७ ग्रहों का फल। ४२३–४३२

पञ्चचत्वारिंश अध्याय—स्त्रीजातकाध्याय का कथन, भाव विशेषों से विशेष फल ज्ञान, पतिव्रता सुशीला रूपवती व पुरुषाकृति योग ज्ञान, बली त्रिशांशवश फल कथन भौमराशिस्थ त्रिशांशों का फल, बुध शुक्र व चन्द्र राशिस्थ त्रिशांशों का फल, गुरू व शनि राशिस्थ त्रिशांशों का फल, स्त्री स्त्री संभोग ज्ञान, सप्तमभाव का फल, परपुरुषासक्त योग ज्ञान, माता के साथ कुलटा योग ज्ञान, सरोग नीरोग भग ज्ञान, सप्तमभावस्थ शनि, भौम शुक्र बुध राशि व नवांश का फल, सप्तमभावस्थ चन्द्र गुरू सूर्यं राशि व नवांश का फल, लग्नस्थ ग्रहों का फल, अष्टमस्थ ग्रहों का फल, अल्प पुत्र योग ज्ञान, पुरुषाकृति योग ज्ञान, संन्यासिनी योग ज्ञान, ब्रह्मवादिनी योग ज्ञान। ४३२–४४०

षट्चत्वारिंश अध्याय—अष्टमभावस्थितिवश मृत्यु, पर्वत वा पत्थर वा कूपादि पतन से मृत्यु, जलोदर रोग व शस्त्र व अग्नि से मृत्यु, रक्त जन्य रोग व सूखा रोग से मृत्यु, फाँसी लगाकर वा अग्नि या कूदने से, प्रकारान्तर से मृत्यु, स्त्री हेतु मरण, शूल रोग से, काष्ठ के अघात से, लाठी वा धूम, अग्नि, बन्धनादि से, शस्त्र अग्नि राजा के प्रकोप से, कीड़ा रोग वा आघात, मदिरा पान से मरण ज्ञान, यन्त्र पीड़ा से, विष्ठा में, गुल्मादि रोग व पक्षियों के अघात से, पर्वतादि पतन से, मृत्यु स्थान का ज्ञान, मरण कारण योग, मेषस्थ प्रथम, द्वितीय, तृतीय द्रेष्काण का फल, वृषस्थ तीनों द्रेष्काणों का फल, मिथुन व कर्क राशिस्थ तीनों, द्रेष्काणों का फल, सिंह व कन्या राशिस्थ तीनों द्रेष्काणों का फल, तुला वृश्चिक, धनु राशिस्थ, द्रेष्काणों का फल, मकर, कुम्भ, मीन राशिस्थ द्रेष्काणों का फल। ४४०–४५२

सप्तचत्वारिंश अध्याय—नष्ट जातकाध्याय का कथन, मेष लग्न में उत्पन्न के स्वभावादि का ज्ञान, वृष व मिथुन लग्न में, कर्क सिंह लग्न में, कन्या लग्न में, तुला व वृश्चिक लग्न में, धनु व मकर लग्न में, कुम्भ व मीन लग्न में स्वभावादि का ज्ञान। ४५३–४६०

अष्टचत्वारिंश अध्याय—मेष व वृषराशिस्थ प्रथम व द्वितीय होरा फल, मिथुन व कर्क, सिंह राशिस्थ, कन्या, तुला, वृश्चिक राशिस्थ, धनु व मकर राशिस्थ, कुम्भ व मीन राशिस्थ प्रथम व द्वितीय होरा फल, होराफल प्राप्ति ज्ञान । ४६०–४६४

एकोन पञ्चाश अध्याय—मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ, मीन राशि लग्नस्थ तीनों द्रेष्काणों का फल । ४६५–४७०

पञ्चाश अध्याय–मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या राशि लग्नस्थ ९ नवांशों का फल । तुलाराशिस्थ १–६ तक नवांशों का फल, ७–९ तक, वृश्चिक राशिस्थ १–३ तक, ४–९ तक, धनु राशिस्थ १–६ तक, ७–९ तक, मकर राशिस्थ १–३ तक, ४–९ तक, कुम्भ राशिस्थ १–६ तक, ७–९ तक, मीन राशिस्थ १–३ तक ४–६ तक, ७–९ नवांशों का फल । ४७१–४८०

एक पञ्चाश अध्याय—प्रश्न लग्न से जन्म के अयन का ज्ञान ऋतु व मास, तिथी व जन्म काल, जन्म संवत्, प्रकारान्त से जन्मेष्ट, मतान्तर से जन्म राशि, जन्म लग्न, प्रकारान्तर से जन्म लग्न, नक्षत्र, समस्त नष्ट जातक ज्ञान प्रकार, उपसंहार, चन्द्रराशि से कालादि का ज्ञान । ४८०–४९५

द्विपञ्चाश अध्याय—सूर्य व चन्द्र अष्टकवर्ग ज्ञान, भौम व बुध, गुरू व शुक्र, शनि अष्टकवर्ग ज्ञान । ४९६–५००

त्रिपञ्चाश अध्याय—वियोनि जन्माध्याय का कथन, सृष्टि के समय योग ज्ञान, स्थावर जङ्गम की अभिव्यक्ति, मनुष्येतर जन्म, वर्णाकृति भेद, पशुशरीर में राशि विभाग, वियोनि का वर्ण व चिह्न, ग्रहों के वर्णो, प्रकारान्तर से वर्ण, पक्षी जन्म, वृक्ष जन्म योग, लग्नांशपति से वृक्षों के भेद, वृक्ष के शुभाशुभ फल, वृक्षों की संख्या, प्रकारान्तर से वियोनि जन्भ, वियोनि ज्ञान में विशेष, विशेष रीति से वियोनि जन्म, जन्तुओं की आकृति व यमलादि, एक से अधिक वियोनि जन्म, लोक विपरीत प्रसव, वृश्चिक लग्नस्थ द्विपद वा नवम नवांश का फल, धनु लग्न व नवांश व द्वादशांश का फल मकर लग्नस्थ मकर नवांश वा मकर द्वादशांश का, मीन लग्नस्थ मीन नवांश वा, मीन द्वादशांश का फल, मेष वा वृष लग्नस्थ मेष वा वृष नवांश का फल । ५००–५०९

चतुः पञ्चाश अध्याय—प्रस्तार चक्र का ज्ञान, प्रस्तार से फल, सूर्याष्टकवर्ग, चन्द्रमा व भौम व बुध के अष्टकवर्ग का फल, गुरू, शुक्र, शनि के अष्टकवर्ग का फल । ५०९–५१२

❀ श्रीगणेशाय नमः ❀

सारावली

प्रथमोऽध्यायः ।

मङ्गलाचरणम् ।

अजञ्च मथुराजातं निर्गुणं गुणमन्दिरम् ।
साक्षाद् ब्रह्मात्मकं नौमि नन्दानन्दननन्दनम् ॥ १ ॥

गोपालं गणनायकं दिनपतिं साम्बं शिवं मारुतिं
श्रीमत्केशवदेवनामपितरं पौराणिकाग्रेसरम् ।
वन्द्यान् वैष्णवपीठपान् कुलगुरून् श्रीविष्णुदत्ताभिधान्
वन्देऽहं सुप्रसादकान् निजगुरून् श्रीसंकटानामकान् ॥ २ ॥

मीठालालपदाभिधान् गुरूवरान् सल्लेखशिक्षाप्रदान्,
नुत्वा श्रीमथुराजनि द्विजवरः काशीप्रवासी ह्यहम् ।
श्रीकल्याणकवर्मणा विरचिते सारावलीग्रन्थके,
व्याख्यां कान्तिमतीं करोमि सरलां विद्यार्थिविद्वत्प्रियाम् ॥ ३ ॥

मुरलीधरप्रेमाढ्यो मुरलीधरनामकः ।
मुरलीधरपादाब्जे व्याख्यामेतां समर्पये ॥ ४ ॥

यस्योदये जगदिदं प्रतिबोधमेति
मध्यस्थिते प्रसरति प्रकृतिक्रियासु ।
अस्तं गते स्वपिति चोच्छ्वसितैकमात्रं[1]
[2]भावत्रये स जयति प्रकटप्रभावः ॥ १ ॥

जिसके उदय होने पर समस्त संसार जागृत होता है तथा मध्याकाश में पहुँचने पर अपने स्वाभाविक कर्मों में लग जाता है और अस्त हो जाने पर केवल स्वाश प्रस्वाश मात्र जिसमें रह जाय ऐसे सो जाता है। इस प्रकार जिसका प्रभाव प्रकट है ऐसे भगवान् सूर्य की जय हो ॥ १ ॥

विस्तरकृतानि मुनिभिः परिहृत्य[3] पुरातनानि शास्त्राणि ।
होरातन्त्रं रचितं वराहमिहिरेण संक्षेपात् ॥ २ ॥

---

१. मात्रं, २. भानुःस एष जयति, ३. परिगृह्य ।

मुनियों द्वारा विस्तार पूर्वक लिखे गये प्राचीन ग्रन्थों को छोड़ कर वराह मिहिर ने संक्षेप में होरातन्त्र की रचना की है ।। २ ।।

राशिदशवर्गभूपतियोगायुर्दायतो दशादीनाम्[१] ।
विषयविभागं स्पष्टं कर्तुं न तु शक्यते यतस्तेन ।। ३ ।।
अत एव विस्तरेभ्यो यवननरेन्द्रादिरचितशास्त्रेभ्यः ।
सकलमसारं त्यक्त्वा तेभ्यः[२] सारं समुद्ध्रियते ।। ४ ।।

क्योंकि उस होरातन्त्र से राशि, दशवर्ग, राजयोग और आयुर्दाय से दशादिकों का विषय विभाग स्पष्ट नहीं किया जा सकता अतः यवनाचार्यादि द्वारा बनाये गये विस्तृत ग्रन्थों से सारहीन वस्तुओं का त्याग करके सारमात्र ले रहा हूँ ।। ३–४ ।।

देवग्रामपुरप्रपोषणबलाद्ब्रह्माण्डसत्पञ्जरे
कीर्तिर्हंस[३]विलासिनीव सहसा यस्येह भात्यातता[४] ।
श्रीमद्व्याघ्रपदीश्वरो रचयति स्पष्टां स सारावलीं
होराशास्त्रविनिर्मलीकृतमनाः कल्याणवर्मा कृती ।। ५ ।।

देवग्राम नामक नगर में पालन पोषण होने से इस ब्रह्माण्डरूपी सुन्दर पिंजरे में हंसिनी की तरह फैली हुई जिसकी कीर्ति शोभित हो रही है, होराशास्त्र के द्वारा जिसका चित्त निर्मल हो गया है ऐसा श्रीमद्व्याघ्रपदीश्वर विद्वान् कल्याणवर्मा इस सारावली की स्पष्टरूप से रचना कर रहा है ।। ५ ।।

होरातृष्णार्तानां शिष्याणां स्फुटतरार्थशिशिरजला ।
कल्याणवर्मशैलान्नदीव सारावली प्रसृता ।। ६ ।।

होरा रूप प्यास से सताये हुए शिष्यों के लिये स्पष्टार्थ रूप ठण्डे जलवाली सारावलीरूप नदी कल्याणवर्मरूप पर्वत से निकल रही है ।। ६ ।।

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां शास्त्रावतारो
नाम प्रथमोऽध्यायः ।।

द्वितीयोऽध्यायः ।

मस्तक पर विधाता द्वारा लिखी गई अक्षर पंक्ति को पढ़ने की सामर्थ्य—

विधात्रा लिखिता याऽसौ ललाटेऽक्षरमालिका ।
दैवज्ञस्तां पठेद्व्यक्तं होरानिर्मलचक्षुषा ।। १ ।।

जीवमात्र के ललाट अर्थात् मस्तक पर ब्रह्माजी जो अक्षर पङ्क्ति (जीवन में आने वाले सुख-दुःख) अङ्कित कर देते हैं उसको होराशास्त्र ज्ञान से निर्मल दृष्टिवाले दैवज्ञ (न कि नक्षत्र सूची) स्पष्ट रूप से पढ़ लेते हैं ।। १ ।।

---

१. गोचरदशानाम्, २. वक्ष्ये सारं समुद्धृत्य ३. सिंहविलासिनीव, ४. मंक्त्वा. ।

होरा शब्द की व्युत्पत्ति —

आद्यन्तवर्णलोपाद्धोराशास्त्रं भवत्यहो[1]रात्रम् ।
तत्प्रतिबद्धश्चायं ग्रहभगणश्चिन्त्यते यस्मात् ॥ २ ॥

अहोरात्र शब्द के आदि के अ व अन्त के त्र अक्षर का लोप करने से होरा शब्द बचता है। दिन व रात्रि इनको अहोरात्र कहते हैं। इस अहोरात्र में बारह लग्न व्यतीत होते हैं। समस्त शुभाशुभ फल लग्न के अधीन है। लग्न, समय व ग्रह (सूर्य) के वशीभूत है। समय (काल) दिन रात्रि में रहता है। इसलिये अहोरात्र शब्द से होरा शब्द निष्पन्न होता है। उसी में बँधे हुए ग्रह व राशियों की शुभाशुभता का विचार करते हैं ॥२॥ वृहत्पाराशर में भी कहा है—

'अहोरात्रस्य पूर्वान्त्यलोपाद् होराऽवशिष्यते' (४ अ. १ श्लो)। तथा वृहज्ज़ातक में भी—'होरेत्यहोरात्रविकल्पमेके वांछन्ति पूर्वापरवर्णलोपात्' (१ अ. ३ श्लो०) ॥२॥

होरा शब्दार्थ—

कर्मफललाभहेतुं चतुराः संवर्णयन्त्यन्ये ।
होरेति शास्त्रसंज्ञा लग्नस्य तथार्धराशेश्च ॥ ३ ॥

अन्य चतुरगण शुभाशुभ कर्मफल प्राप्ति सूचक शास्त्र को 'होरार्थं शास्त्रं' होरा शास्त्र कहते हैं। एवं लग्न व राशि के आधे भाग (१५ अं०) को होरा संज्ञा होती है। ॥३॥ वृहज्जातक में कहा है—'होरेति लग्नं भवनस्य चार्द्धम्' (२ अ० ९ श्लो०)

जातक व होरा में अभेद—

जातकमिति प्रसिद्धं यल्लोके तदिह कीर्त्यते होरा ।
अथवा दैवविमर्शनपर्यायः खल्वयं शब्दः ॥ ४ ॥

जो कि संसार में प्रसिद्ध जातक शास्त्र है वही होरा शास्त्र है। अथवा होरा यह शब्द भाग्य विचार का पर्यायवाची है ॥ ४ ॥

होरा शास्त्र की आवश्यकता—

अर्थार्जने सहायः पुरुषाणामापदर्णवे पोतः ।
यात्रासमये मन्त्री जातकमपहाय नास्त्यपरः ॥ ५ ॥

मनुष्यों को धन अर्जित करने में यह (होरा शास्त्र) सहायता करता है (शुभ दशा में लाभ अशुभ में हानि)। विपत्ति रूप समुद्र में नौका वा जहाज का कार्य करता है। एवं यात्रा के समय में मन्त्री अर्थात् उत्तम सलाहकार होराशास्त्र को छोड़कर अन्य कोई नहीं हो सकता है ॥ ५ ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां होराशब्दार्थ-
चिन्ता नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥

---

[1] त्यहोरात्रात् ।

तृतीयोऽध्यायः ।

तमसावृते समन्ताज्जलभूते भूतले ततोऽकस्मात् ।
उदितो भगवान् भानुः प्रकाशयन् स्वप्रकाशेन ॥ १ ॥

प्रलय काल में जब सम्पूर्ण संसार अन्धकार से व्याप्त होकर जल ही जल इस पृथ्वी पर था उस समय अचानक अपने प्रकाश से समस्त संसार को प्रकाशित करते हुए भगवान् सूर्य का उदय हुआ ॥ १ ॥

व्यसृजज्जगत्समस्तं ग्रहर्क्षसंघातकल्पितावगतम्[१] ।
[२]द्वादशभेदैश्चित्रः कालः संप्रस्तुतस्तस्मात् ॥ २ ॥

सूर्य के उदय से संसार की रचना हुई, और ग्रहों का राशिचक्र पर भ्रमण देखने से उस राशि चक्र के १२ भेद विचित्र (भिन्न-भिन्न) समय के आधार पर प्रस्तुत हुए अर्थात् नक्षत्रों के आधार पर राशियों के १२ भेद दृष्टिपथ पर आये ॥ २ ॥

बारह राशियों के नाम (भेद)—

मेषवृषमिथुनकर्कटसिंहाः कन्या तुलाथ[३] वृश्चिककः ।
धन्वी मकरः कुम्भो मीनस्त्विति राशिनामानि ॥ ३ ॥

मेष^{१}, वृष^{२}, मिथुन^{३}, कर्क^{४}, सिंह^{५}. कन्या^{६}, तुला^{७}, वृश्चिक^{८}, धनु^{९}, मकर^{१०} कुम्भ^{११}, मीन^{१२} ये क्रम से नाम (भेद) हैं ॥ ३ ॥

विशेष—अश्विनी भरणी तथा कृत्तिका का प्रथम चरण, इन नक्षत्रों से मेष की सी आकृति देखने पर इसकी मेष संज्ञा कल्पित की, इसी प्रकार अन्य राशियों की भी कल्पना हुई ॥३॥

राशियों के स्वरूप—

कुम्भः कुम्भधरो नरोऽथ मिथुनं वीणागदाभृन्नरो
मीनौ मीनयुगं धनुश्च सधनुः पश्चाच्छरीरो हयः ।
एणास्यो मकरः प्रदीपसहिता कन्या च नौसंस्थिता
शेषो राशिगणः स्वनामसदृशो धत्ते तुलाभृत्तुलाम् ॥ ४ ॥

कुंभराशि - घट को धारण किये हुए पुरुष है । मिथुन—स्त्री पुरुष का जोड़ा है जो कि वीणा और गदा धारण किये हुए है । मीन—२ मछली मिली हुई हैं । धनु—धनुषधारी कमर के ऊपर मनुष्य और कमर के नीचे घोड़े के सदृश है । मकर—हिरन के समान मुख वाला है । कन्या—हाथ में दीपक लिये हुए नौका पर बैठी हुई कन्या है । तुला—हाथ में तराजू लिये हुए पुरुष है । शेष राशियों के स्वरूप नाम सदृश हैं । बृ० जा० में कहा है—'मत्स्यौ घटी नृमिथुनं सगदं सवीणं चापी नरोऽश्वजघनो मकरो हयास्यः । तौली ससस्यदहना प्लवगा च कन्या शेषाः स्वनाम सदृशाः खचराश्च सर्वे' (१ अ० ५ श्लो०) ॥४॥

---

[१] वयवम्, [२] ग्रहभवनाद्यैः; ग्रहदशभेदैः, [३] तुलाऽलयश्चैव ।

काल पुरुष के अवयव—

शीर्षास्यबाहुहृदयं जठरं कटिबस्तिमेहनोरुयुगम् ।
जानू[1] जङ्घे चरणौ कालस्याङ्गानि राशयोऽजाद्याः ॥ ५ ॥

१२ राशियां, काल पुरुष के शरीर के अवयव इस प्रकार हैं । मेष=मस्तक, वृष=मुख । मिथुन=हाथ=भुजा । कर्क=हृदय । सिंह=पेट । कन्या=कमर । तुला=नाभि से उपस्थपर्यन्त । वृश्चिक=उपस्थ । धनु=जांघ । मकर=ठेहुना=घेंट्टूं । कुम्भ=पींड़री=ठेहुना से नीचे मोटा भाग । मीन=पैर । वृ० जा० में कहा है—'कालाङ्गानि वराङ्गमाननमुरो हृत्क्रोडवासो भृतो' इत्या (१ अ० ४ श्लो०) ॥ ५ ॥

विशेष—जन्म काल में जो लग्न को उसे मेषादि कल्पना करके उस पुरुष के अङ्गों का वर्णन अर्थात् तत्तदङ्गों का शुभाशुभ फल कहना चाहिए ।

अवयवों का प्रयोजन—

कालनरस्यावयवान्पुरुषाणां कल्पयेत्प्रसवकाले ।
सदसद्ग्रहसंयोगात्पुष्टान्सोपद्रवांश्चापि ॥ ६ ॥

जीवों के जन्म काल में पूर्वोक्त अवयवों का विचार इस प्रकार करना चाहिए जो अवयव शुभ राशि से वा शुभ ग्रह से युत या दृष्ट हो तो वह अङ्ग जातक का पुष्ट होगा । पापग्रह से पीडित या दृष्ट हो तो उस अङ्ग को दुर्बल, कमजोर, पीड़ा युक्त समझना चाहिए ॥ ६ ॥

विशेष—यह श्लो० लघुजा० १ अ० ५वाँ है ।

१२ राशियों के नामान्तर

मेषादीनां क्रियतावुरुजुतुमकुलीरलेयपाथोनाः[2] ।
संज्ञास्तु जूककौर्पिकतौक्षाकोकेरहृदयरोगान्त्याः ॥ ७ ॥

मेष=क्रिय । वृष=तावुरु । मिथुन=जुतुम । कर्क=कुलीर । सिंह=लेय । कन्या=पाथोन । तुला=जूक । वृश्चिक=कौर्पिक । धनु=तौक्ष । मकर=आकोकेर । कुम्भ=हृदयरोग । मीन=अन्त्य । ये नामान्तर हैं ।। ७ ।।

विशेष—आचार्य वराह मिहिर ने वृहज्जातक में भी कहा है—(१ अ० ८ श्लोक)

जातक पारिजात में राशियों के पर्यायवाची शब्द इस प्रकार हैं—

मेष=अज=विश्व=क्रिय=तुंबुर=आद्य । वृष=उक्ष=गो=तावुरु=गोकुल । मिथुन=द्वन्द्व=नृयुग्म=जुतुम=यम=युग=तृतीय । कर्क=कुलीर=कर्काटक=कर्कट । सिंह=कण्ठीरव=मृगेन्द्र=लेय । कन्या=पाथोन=रमणी=तरुणी । तुला=तौली=वणिक=जूक=धट । वृश्चिक=अलि=अष्टम=कौर्पि=कीट । धनु=चाप=शरासन । मकर=मृगास्य=नक्र । कुम्भ=घट=तोयधर । मीन=अन्त्य=मत्स्य=पृथुरोम=झष । (१ अ० ४–६॥ श्लोक)

---

[1] जानुक । । [2] पाथेयाः

राशि के पर्याय

ऋक्षं भवननामानि राशिः क्षेत्रं भमेव वा।
उक्तानि पूर्वमुनिभिस्तुल्यार्थप्रतिपत्तये ॥ ८॥

राशि=ऋक्ष=क्षेत्र=भ=भवन ये समानार्थ बोधक पूर्वमुनियों ने कहे हैं। यथा बृहज्जातक में—

'राशिक्षेत्रगृहर्क्षभानि भवनं चैकार्थसंप्रत्ययाः' (१ अ० ४ श्लोक)॥ ८॥

मण्डल व चक्रार्ध स्वामी

द्वादशमण्डल[1]भगणं तस्यार्धे सिंहतो रविर्नाथः।
कर्कटकात्प्रतिलोमं शशी तथान्येऽपि तत्स्थानात्॥ ९॥

द्वादश राशियों के १ मण्डल (भ्रमण) को भगण कहते हैं अर्थात् जो ग्रह १२ राशियों पर भ्रमण कर लेता है उस ग्रह का वह भगण होता है। उस चक्र के आधे सिंह से क्रमबार ६ राशियों (सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर) का स्वामी सूर्य तथा कर्क से विलोम ६ राशियों (कर्क, मिथुन, वृष, मेष, मीन, कुम्भ) का अधिप चन्द्रमा होता है। एवं तारादि ग्रह कर्क सिंह को छोड़ कर अन्य राशियों के स्वामी होते हैं॥ ६॥

चक्रार्ध स्वामी के आधार पर फल

भानोरर्धे विहगैः शूरास्तेजस्विनश्च साहसिकाः।
शशिनो मृदवः सौम्याः सौभाग्ययुताः प्रजायन्ते॥ १०॥

जन्माङ्ग में सूर्य के चक्रार्ध में सब ग्रह होने से जातक शौर्य गुण से युक्त तेजस्वी (कान्तिमान्) व अत्यन्त साहसी होता है। चन्द्र के चक्रार्ध में ग्रह होने पर मृदु, सरल स्वभाव और सुन्दर भाग्यवान् होता है॥ १०॥

१२ राशियों के स्वामी एवं नवांशाधिपति

कुजभृगुबुधेन्दुरविशशिसुतसितरुधिरार्यमन्दशनिजीवाः।
गृहपा नवभागानामजमृग[2]धटकर्कटाद्याश्च ॥ ११॥

मङ्गल, शुक्र, बुध, चन्द्रमा, सूर्य, बुध, शुक्र, मंगल, गुरु, शनि, शनि, गुरु, ये मेषादि क्रम से राशियों के स्वामी हैं।

नवांश—मेष, सिंह धनु, राशियों में प्रथम नवांश मेष का द्वितीय वृष का इसी क्रम से आगे भी। एक नवांश ३ अंश २० कला का होता है।

वृष, कन्या, मकर में मकर से प्रारम्भ होता है। मिथुन, तुला, कुम्भ में तुला से। कर्क, वृश्चिक, मीन में कर्क से आरम्भ होता है॥ ११॥

---

[1] भगणः। [2] तुलककंटाश्चाद्याः।

स्पष्टार्थ स्वामी चक्र

मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
मं.	शु.	बु.	चं.	सू.	बु.	शु.	मं.	गु.	श.	श.	गु.

स्पष्टार्थ नवांश चक्र

राशि	मे.	वृ	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मो.
अं० ३।२०	मे.	म.	तु.	क.	मे.	म.	तु.	क.	मे.	म.	तु.	क.
६।४०	वृ.	कुं	वृ	सिं	वृ.	कुं.	वृ.	सि	वृ.	कुं.	वृ.	सिं
१०।०	मि	मी.	ध.	क.	मि	मो	ध.	क.	मि.	मी.	ध.	क.
१३।२०	क.	मे	म.	तु.	क.	मे.	म.	तु.	क.	मे.	म.	तु.
१६।४०	सिं.	वृ.	कुं.	वृ.	सिं	वृ.	कुं	वृ.	सिं.	वृ.	कुं.	वृ.
२०।०	क.	मि	मो.	ध.	क.	मि.	मी.	ध.	क.	मि.	मो	ध.
२३।२०	तु.	क.	मे.	म.	तु.	क.	मे.	म.	तु.	क.	मे.	म.
२६।४०	वृ.	सि	वृ.	कुं.	वृ.	सिं	वृ.	कुं.	वृ	सिं.	वृ.	कुं.
३०।०	ध.	क.	मि.	मी.	ध.	क	मि.	मी.	ध.	क.	मि	मो.

भवनाधिप के विना फलादेश नहीं होता

भवनाधिपैः समस्तं जातकविहितं विचिन्तयेन्मतिमान् ।
एभिर्विना न शक्यं पदमपि गन्तुं महाशास्त्रे ॥ १२ ॥

बुद्धिमान् ज्योतिषी को होराशास्त्र में वर्णित फलादेश को भावाधिपति के आधार पर ही आदेश का विचार करना चाहिये । क्योंकि भावेशों के विना इस जातक शास्त्र में १ पद भी चलना अशक्य है ॥ १२ ॥

वर्गोत्तम नवांश तथा द्वादशांश का वर्णन

वर्गोत्तमा नवांशास्तथादिमध्यान्तगाश्चराद्येषु ।
सूतौ कुलमुख्यकरा द्वादश भागाः स्वराश्याद्याः ॥ १३ ॥

चर राशियों में (मेष, कर्क, तुला, मकर) प्रथम नवांश वर्गोत्तम नवांश होता है । स्थिर राशियों में (वृष, सिंह, वृश्चिक, कुम्भ) मध्य अर्थात् ५ वां नवांश वर्गोत्तम,

एवं द्विस्वभाव राशियों में (मिथुन, कन्या, धनु, मीन) अन्तिम नवांश वर्गोत्तम होता है। सारांश-स्वराशि नवांश ही वर्गोत्तम नवमांश कहलाता है। यथा—मेष में मेष का, वृष में वृष का, मिथुन में मिथुन का, इसी प्रकार अग्रिम भी। आचार्य वराह मिहिर ने भी कहा है—

वर्गोत्तमाश्चरगृहादिषु पूर्वमध्यपर्यन्तगाः, इति (बृह० १ अ० १४ श्लोक)

तथा च यवनेश्वरः—'स्वे स्वे गृहेषु स्वगृहांशका ये वर्गोत्तमास्ते यवनैर्निरुक्ताः'।

अन्यच्च-सत्यः—'चरभवनेष्वाद्यंशाः स्थिरेषु मध्याद्विमूर्तिषु तथान्त्याः।
वर्गोत्तमा प्रदिष्टा…'

यदि जन्मलग्न में वर्गोत्तम नवांश हो तो जातक कुल में मुखिया होता है अर्थात् परिवार में प्रधान होता है।

द्वादशांश—प्रत्येक राशि में अपनी राशि से प्रारम्भ होता है। १ द्वादशांश= २ अं० ३० क० ॥ १३ ॥

द्रेष्काण एवं होरा स्वामी

स्वर्क्षसुतनवमभेशा द्रेक्काणानां क्रमाच्च होराणाम्।
रविचन्द्राविन्दुरवी विषमसमेष्वर्धराशीनाम् ॥ १४ ॥

जिस राशि का द्रेष्काण विचार करना हो तो प्रथम द्रेष्काण उसी राशि का, द्वितीय द्रेष्काण उससे पञ्चम राशि का, तृतीय नवम राशि का, उक्त तीनों राशियों के स्वामी ही द्रेष्काण स्वामी होते हैं। राशि तृतीय भाग को द्रेष्काण कहते हैं। यथा–मेष राशि में प्रथम तृतीयांश अर्थात् १० अंश तक मेष का, द्वितीय ११–२० तक सिंह का, तृतीय–२१–३० तक धनु राशि का द्रेष्काण होता है। इसी प्रकार अन्य राशियों में भी समझना चाहिए।

होरा—विषम राशियों (१, ३, ५, ७, ९; ११) में प्रथम होरा सूर्य की, द्वितीय चन्द्रमा की। सम राशियों (२, ४, ६, ८, १०, १२) में प्रथम होरा चन्द्रमा की द्वितीय होरा सूर्य की होतीं है। होरा १५, १५ अंश की होती है ॥ १४ ॥

स्पष्टार्थ द्रेष्काण चक्र—

राशि	मे.	वृ	मि.	क.	सिं.	ऋ.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
अं० १-१०	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
११-२०	सिं.	क	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	मे.	वृ.	मि.	क.
२१-३०	ध.	म.	कुं.	मी.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.

स्पष्टार्थ होरा चक्र—

राशि	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
अ०१-१५	सू.	चं.	सू.	चं.	सू.	चं.	सू	चं.	पू.	चं.	सू.	चं.
१६-२०	चं.	सू.	चं.	सू.	चं.	सू.	चं.	सू.	चं	म	चं.	सू.

त्रिशांश के स्वामी

शरपञ्चाष्टमुनीन्द्रियभागास्त्रिंशांशकास्तु विषमेषु।
युग्मेषूत्क्रमगण्याः कुजार्किजीवज्ञशुक्राणाम् ॥ १५ ॥

विषम राशियों (१, ३, ५, ७, ९, ११) में ५, ५, ८, ७, ५, अंश क्रम से अर्थात् १ अंश से ५ अंश तक मंगल, ६–१० तक शनि, ११–१८ तक गुरु, १९–२५ अंश तक बुध, २६–३० तक शुक्र त्रिशांश स्वामी, एवं सम राशियों में ५ अंश तक शुक्र, ६–१२ तक बुध १३–२० तक गुरु, २१–२५ तक शनि, २६–३० तक मंगल, त्रिशांश-पति होते हैं ॥१५॥

स्पष्टार्थ त्रिशांश चक्र—

ओजत्रिशांश

ओज	५	५	८	७	५
अंश	५	१०	१८	१५	३०
ग्रह	मं.	श.	गु.	बु.	शु.
राशि	१	११	९	३	७

युग्म त्रिशांश

युग्म	५	७	८	५	५
अंश	५	१२	२०	२५	३०
ग्रह	शु.	बु.	गु.	श.	मं.
राशि	२	६	१२	१०	८

सप्तमांश के स्वामी

मेषालिमिथुनमृगहरिमीनतुलावृषभचापधरकर्की।
घटधरकन्यापूर्वाः सप्तांशानां भवन्तीशाः ॥ १६ ॥

मेष राशि में प्रथम सप्तमांश मेष का, द्वितीय वृष का, तृतीय मिथुन का इसी क्रम से आगे। वृष में अलि=वृश्चिकादि से, मिथुन में मिथुन से, कर्क में मकर से, सिंह में सिंह से, कन्या में मीन से, तुला में तुला से, वृश्चिक में वृष से, धनु में धनु से, मकर में कर्क से, कुम्भ में कुम्भ से, मीन में कन्या से, प्रारम्भ होकर सप्तम राशि तक सप्तमांश होते हैं उक्त राशियों के स्वामी ही सप्तमांश स्वामी भी होते हैं।

निष्कर्ष–विषम राशियों में अपनी राशि से ही सप्तमांस प्रारम्भ होता है तथा समराशियों में अपनी राशि से जो सप्तम राशि हो उससे प्रारम्भ होता है।

जातक पारिजात में कहा है—

………ओजे राशौ यथा क्रमम्

युग्मे लग्ने स्वरांशानामधिपाः सप्तमाद्यः ॥ (अ० १, श्लो० ३१) । सर्वार्थचिन्तामणि में भी—

सप्तांशपास्त्वोजगृहे तदीशाद्युग्मे गृहे सप्तमराशिपात्तु । (१ अ० १३ श्लो) ॥ १६ ॥

स्पष्टार्थ सप्तमांश चक्र

राशि	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
अंशादि ४।१७।८	१मं.	८ मं.	३ बु.	१० श.	५सू.	१२ गु.	७शु.	२शु	९गु	४चं.	११ श.	६बु.
८।३४।१७	२शु.	९ गु.	४ चं	११श.	६बु.	१ मं.	८मं.	३बु.	१० श.	५सू.	१२ गु.	७शु.
१२।५१।२५	३बु.	१०श.	५ सू.	१२ गु	७शु.	२ शु.	९गु.	४ चं	११ श.	६बु.	१म.	८मं.
१७।८।३४	४चं.	११श.	६ बु.	१. मं	८मं.	३ बु.	१० श.	५सू.	१२ गु.	७शु.	२शु.	९गु.
२१।२५।४२	५सू.	१२गु.	७ शु	२ शु	९गु.	४ चं	११ श.	६बु.	१मं.	८मं.	३बु.	१० श.
२५।४२।५१	६बु.	१ मं.	८ मं.	३ बु.	१० श	५ सू.	१२ गु.	७शु.	२शु.	९गु.	४चं.	११ श.
३०।०	७शु.	२ शु.	९ गु	४ चं	११श	६ बु	१मं.	८मं.	३बु.	१० श.	५सू.	१२ गु

राशियों में वर्ग भेद संख्या का ज्ञान

षष्टिर्होरात्रिंशच्चूडपदानां द्विसप्ततिसमेताः ।
लिप्तानामष्टादशशतानि परिवर्तनैः स्वगृहात् ॥ १७ ॥

एक होरा अर्थात् राशि में तीस अंश, एक अंश में साठ कला होती हैं। इस प्रकार एक राशि में १८०० कला होती हैं। अपनी-अपनी राशि से इन्हीं १८०० कलाओं के परिवर्तन से १ राशि में षड्वर्ग बनाने हों तो ६ भेद होते हैं इसलिये १२ राशियों में ७२ भेद होते हैं। यदि सप्तवर्ग अभीष्ट हों तो १२ राशियों में बारह भेद अधिक होते हैं। कुल सप्तवर्ग संख्या १२ राशियों में ८४ होती है। यहां चूडपद से १२ अङ्क ७२ में जोड़ने से ८४ ही होता है। चूड=अन्तिम। पद=स्थान, इसलिये राशियों की अन्तिम संख्या १२ ही है ॥ १७ ॥

वर्गभेद का आनयन

लग्नादीनां लिप्ता ज्ञेयाः स्वगृहादिवर्गसंगुणिताः ।
अष्टादशशतभक्ताल्लब्धः स्यादीप्सितो वर्गः ॥ १८ ॥
एतेषां गुणदोषान् विस्तरतो नष्टजातके वक्ष्ये ।
एभिः स्पष्टतरं तत्प्रत्यक्षपरीक्षणं यस्मात् ॥ १९ ॥

अभीष्ट भाव या अभीष्ट ग्रह में इच्छित वर्ग जानना हो तो स्पष्ट भाव वा स्पष्ट राश्यादि ग्रह की कला बनाकर उसको अभीष्ट जो वर्ग है उसकी संख्या से गुनाकरके गुणनफल में १८०० का भाग देने से लब्धि अभीष्ट वर्ग राशि होती है। इनके गुण व दोषों का वर्णन नष्टजातक अध्याय में कहूँगा। जिस ग्रन्थ से साधित ग्रह प्रत्यक्ष परीक्षा करने में सिद्ध हों उसी के द्वारा ग्रह स्पष्ट कर के वर्गों का आनयन करना चाहिए ॥१८-१९॥

विशेष—इस प्रक्रिया से सातों वर्गों की सिद्धि नहीं होती है। पाठक गण क्रिया करके देख लें।

राशियों की क्रूराक्रूर, पुरुष स्त्री, चर स्थिर द्विस्वभाव, तथा गण्डान्त संज्ञा—

अजादितः क्रूरशुभौ पुमांस्त्री चरः स्थिरो मिश्रतनुश्च दृष्टाः।
कुलीरमीनालिगृहान्तसन्धि वदन्ति गण्डान्तमिति प्रसिद्धम् ॥ २० ॥

मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धनु, कुम्भ राशियों की क्रूर संज्ञा। वृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर, मीन राशियों की शुभ (अक्रूर) संज्ञा, इसी प्रकारसे मेष मिथुनादि की पुरुष संज्ञा तथा वृष कर्कादि की स्त्री संज्ञा अर्थात् विषम राशियों की क्रूर व पुरुष संज्ञा एवं समराशियों की शुभ (अक्रूर) व स्त्री संज्ञा होती है। मेष, कर्क, तुला, मकर राशियों की चर, वृष, सिंह, वृश्चिक, कुम्भ राशियों को स्थिर, मिथुन, कन्या, धनु मीन राशियों की द्विस्वभाव संज्ञा होती है। बृहज्जातक में कहा है—

'क्रूरः सौम्यः पुरुषवनिते ते चरागद्विदेहाः' (१ अ० ११ श्लो०)

विशेष—इन संज्ञाओं का प्रयोजन क्या है। उत्तर—क्रूर राशियों में जायमान क्रूर स्वभाव वाला, अक्रूर में मृदु स्वभाव का होता है। पुरुष राशियों में पैदा हुआ जीव तेजस्वी व स्त्री राशि में सौम्य अर्थात् मृदु स्वभाव का होता है। चर राशियों में चञ्चल प्रकृति, स्थिर में स्थिर प्रकृति, द्विस्वभाव में मिश्रित प्रकृति होती है।

गण्डान्त—कर्क, मीन, वृश्चिक राशियों के अन्त भाग की गण्डान्त संज्ञा होती है ॥ २० ॥

गण्डान्त में जायमान का फल—

जातो न जीवति नरो मातुरपथ्यो भवेत्स्वकुलहन्ता।
यदि जीवति गण्डान्ते बहुगजतुरगो भवेद्भूपः ॥ २१ ॥

गण्डान्त में जन्म लेने वाला प्रायः जीवन नहीं पाता है यदि जीवित रहे तो माता को कष्ट कारक या कुल का नाशक होता है तथा बहुत हाथी घोड़े से युत राजा वा राजतुल्य सुख पाता है ॥ २१ ॥

राशियों की दिशा व फल—

ऐन्द्राद्यं परिवर्तैस्त्रितयं त्रितयं त्रिभिस्तु मेषाद्यैः ।
एभिर्दिक्षु निबद्धैर्यात्रादि विकल्पयेत्कार्ये[1] ।। २२ ।।

पूर्वादि चारों दिशा में मेषादि से, ३ आवृत्ति करने पर १ दिशा में ३ राशि होती हैं। यथा—मेष, सिंह, धनु पूर्व में, वृष, कन्या, मकर दक्षिण में, मिथुन, तुला, कुम्भ, पश्चिम में, कर्क वृश्चिक, मीन उत्तर में आती हैं। चारों दिशाओं में जो जो राशि पड़ती है उन्हीं राशियों के चन्द्रमा व लग्न में यात्रादि कार्य करना चाहिए। कहा भी हैं—

'सम्मुखे ह्यर्थलाभाय. और भी 'हरति सकलदोषं चन्द्रमा सम्मुखस्थः

विशेष—दिशाओं में राशि स्थापन का प्रयोजन क्या है। उत्तर-चुराई हुई वस्तु-खोई हुई वस्तु, चोर दिशा, सूतिका गृहद्वार का ज्ञान होता है ।। २२ ।।

कौन-कौन राशि किस दिशा में व समय में बली—

नरपशुवृश्चिकजलजा यथाक्रमं प्राग्दिगादिगा बलिनः ।
निशि दिवसे सन्ध्यायां पशवः पुरुषो मृगालिकर्किझषाः ।। २३ ।।

पूर्वादि दिशाओं में अर्थात् पूर्व दिशा में द्विपद=नर (कन्या, मिथुन, कुम्भ, तुला, धनु का पूर्वार्द्ध) राशियाँ, दक्षिण दिशा में पशु=चतुष्पद (धनु का परार्ध, सिंह, वृष मकर का पूर्वार्द्ध, मेष) राशियाँ, पश्चिम में वृश्चिक, उत्तर में जलचर (मकर का परार्ध, मीन, कर्क) राशियां बली होती हैं।

समय बल—रात्रि में चतुष्पद, दिन में द्विपद, सन्ध्या में मकर, वृश्चिक, कर्क, मीन राशियाँ बली होती हैं ।। २३ ।।

राशियों की दिन, रात्रि, पृष्ठोदय, शीर्षोदय, उभयोदय संज्ञा—

नक्तंबला मिथुनकर्किमृगाजगोश्वा
द्युःश्रेष्ठका हरितुलालिघटान्त्यकन्याः ।
पृष्ठोदयाः समिथुना मिथुनं विहाय
शेषाः शिरोभिदरुयन्त्युभयेन मीनः ।। २४ ।।

मिथुन, कर्क, मकर, मेष, वृष, धनु इनकी रात्रि संज्ञा, तथा सिंह, तुला, वृश्चिक, कुम्भ, मीन, कन्या इनकी दिन संज्ञा, मिथुन के सहित जो ६ राशियाँ हैं उनमें मिथुन को छोड़कर (कर्क, मकर, मेष, वृष, धनु) ५ राशियाँ पृष्ठोदय, तथा मीन को छोड़कर ५ राशियां (सिंह, तुला, वृश्चिक, कुम्भ) शीर्षोदय संज्ञक हैं। मीन राशि उभयोदय संज्ञक है।

---

[1] त्कार्यम् ।

वृहज्जातक में कहा है—'गोजाश्विकर्किमिथुनाः समृगा निशाख्याः पृष्ठोदयाः विमिथुनाः कथितास्त एव········' (१ अ० १० श्लो०)

विशेष—जिन राशियों का उदय पृष्ठ से होता है वे पृष्ठोदय, जिनका सिर से उदय होता है वे शीर्षोदय, मीन का मुख और पूँछ से उदय होता है इसलिये उभयोदय संज्ञा कही है। जातक पारिजात में इसका प्रयोजन—

शीर्षोदयगतः खेटः पाकादौ फलदो भवेत्।
पृष्ठोदयस्थः पाकान्ते सदा चोभयराशिगः (२ अ० ८६ श्लो०) ॥ २४ ॥

राशियों का बल—

आत्मीयनाथदृष्टः सहितस्तेनैव तत्प्रियैर्वापि।
शशिसुतजीवाभ्यामपि राशिर्बलवान्न चेच्छेषैः ॥ २५ ॥

जो राशि, राशीश या राशीश के प्रिय अर्थात् मित्र से दृष्ट युत हो एवं बुध और वृहस्पति से युतदृष्ट हो अन्य ग्रहों से युत दृष्ट न हो तो वह राशि बलवान् होती है ॥२५॥ वृहज्जातक में भी कहा है—'होरास्वामिगुरुज्ञवीक्षितयुता नान्यैश्च वीर्योत्कटा' (२ अ० १९ श्लो०) ॥२५॥

लग्नादि १२ भावों के नाम—

तन्वर्थसहजबान्धवपुत्रारिस्त्रीविनाशपुण्यानि।
कर्मायव्ययभावा लग्नाद्या भावतश्चिन्त्याः ॥ २६ ॥

१ तनु, २ अर्थ, ३ सहज, ४ बान्धव, ५ पुत्र, ६ अरि, ७ स्त्री, ८ विनाश, ९ पुण्य, १० कर्म, ११ आय, १२ व्यय ये, लग्नादि १२ भावों के नाम हैं ॥ २६ ॥

नामान्तर—

श[1]क्तिधनपौरुषगृहप्रतिभाव्रणकामदेहविवराणि ।
गुरुमानभवव्ययमिति कथितान्यपराणि नामानि ॥ २७ ॥

१ शक्ति = कल्प, २ धन = स्व, ३ पौरुष = विक्रम, ४ गृह, ५ प्रतिभा, ६ व्रण, ७ काम, ८ देह विवर = छिद्र, ९ गुरु, १० मान, ११ भव, १२ व्यय ये द्वादश भावों के नामान्तर हैं ॥ २७ ॥

पुनः संज्ञान्तर—

संज्ञा वेश्माष्टमयोश्चतुरस्रं वै तपश्च नवमस्य।
होरास्तदशजलानां चतुष्टयं कण्टकं केंद्रम् ॥ २८ ॥

चतुर्थ, अष्टमभाव की चतुरस्र, नवम की तप, १, ७, १०, ४ की चतुष्टय, कण्टक, केन्द्र संज्ञा होती है ॥ २८ ॥

---

१. कल्पस्वविक्रम.।

पुनः चतुर्थ दशम के नामान्तर—

नामानि चतुर्थस्य तु सुखजलपातालबंधुहिबुकानि ।
कर्माज्ञामेषूरणगगनाख्यं कीर्त्यते दशमम् ॥ २९ ॥

चतुर्थभाव के सुख, जल, पाताल, बन्धु, हिबुक नाम हैं। दशम के कर्म, आज्ञा, मेषूरण गगन नाम हैं ॥ २९ ॥

पुनः नवम पञ्च, सप्तम के नामान्तर—

धर्मसुतयोस्त्रिकोणं सुतस्य धीस्त्रित्रिकोणमिति[1] तपसः ।
द्यूनं जायास्तमयं जामित्रं सप्तमस्याख्याः ॥ ३० ॥

९, ५ को त्रिकोण कहते हैं। पञ्चमभाव को धी (बुद्धि), नवम को त्रित्रिकोण, और सप्तमभाव को द्यून, जाया, अस्तमय, जामित्र कहते हैं ॥ ३० ॥

६, ३, १२, २ के नामान्तर—

षट्कोणं रिपुभवनं तृतीयमथ कीर्तयन्ति दुश्चिक्यम् ।
रिःफं द्वादशभवनं [2]द्वितीयसंज्ञं कुटुम्बं च ॥ ३१ ॥

षष्ठभाव को षट्कोण, तृतीय को दुश्चिक्य, द्वादश को रिष्फ, द्वितीय को कुटुम्ब कहते हैं ॥ ३१ ॥

पुनः पणफर, आपोक्लिम संज्ञा—

केन्द्रात्परं पणफरमापोक्लिमसंज्ञितं तयोः परतः ।
बाल्युवस्थविरत्वे क्रमेण फलदा ग्रहास्तेषु ॥ ३२ ॥

केन्द्र से आगे द्वितीय, पञ्चम, अष्टम, एकादशभावों की पणफर संज्ञा है। तृतीय, षष्ठ, नवम, द्वादश इन भावों की आपोक्लिम संज्ञा है। केन्द्र (१।४।७।१०) में बैठे हुए ग्रह बाल्यावस्था में, पणफर (२, ५, ८, ११) में स्थित ग्रह यौवनावस्था में, और आपोक्लिम (३, ६, ९, १२) में स्थित ग्रह वृद्धावस्था में जातक को फल देते हैं ॥ ३२ ॥

भावों की उपचय, और अनुपचय संज्ञा—

षट्दशभवदुश्चिक्यान्युपचयसंज्ञानि कीर्त्यन्ते ।
स्वतनुसुखसुतास्ततपश्छिद्रव्ययसंज्ञि[3]तानि चान्यानि ॥ ३३ ॥

६, १०, ११, २ भावों की उपचय, २, १, ४, ५, ७, ९, ८, १२ इन भावों की अनुपचय संज्ञा है ॥ ३३ ॥

ग्रहों की मूलत्रिकोण राशि—

सिंहवृषमेषकन्या कार्मुकभृत्तौलिकुम्भधराः ।
सूर्यादीनामेते त्रिकोणभवनानि कथ्यन्ते ॥ ३४ ॥

---

१. मथ । २. कुटुम्बसंज्ञं द्वितीयमथ परतः । ३. भवनानि ।

सूर्य की सिंह, चन्द्रमा की वृष, मङ्गल की मेष, बुध की कन्या, गुरू की धन, शुक्र की तुला, शनि की कुम्भ राशि, मूल त्रिकोण कहलाती है ॥ ३४ ॥

विशेष—यहाँ यह जिज्ञासा होती है कि सूर्य की सिंह राशि तो स्वगृह भी है। सूर्य मूलत्रिकोण का फल देगा या स्वगृह का, इसी प्रकार चन्द्रमा की वृष राशि उच्च है एवं अन्य ग्रहों की भी। समाधान–५वीं अध्याय के २१ श्लोक से २४ तक है।

ग्रहों के उच्च, परमोच्च, नीच, परमनीच—

सूर्यादीनामुच्चाः क्रियवृषमृगयुवतिकर्किमीनतुलाः।
स्वोच्चगृहकथितभागा यथाक्रमेणैव परमोच्चाः ॥ ३५ ॥
दिग्वह्न्यष्टाविंशतितिथिबाणत्रिघनविंशतयः।
स्वोच्चात्सप्तमराशिर्नीचः स्यादंशकात्परमम् ॥ ३६ ॥

सूर्यादि ग्रहों की क्रम से मेष, वृष, मकर, कन्या, कर्क, मीन, तुला उच्च राशि हैं। एवं उक्त राशियों में क्रम से १०, ३, २८, १५, ५, २७, २० अंशों में सूर्यादि ग्रह परमोच्च होते हैं। उच्च राशि से सप्तम राशि नीच स्थान व परमोच्च कथित अंशों में परमनीच स्थान ग्रहों का होता है। यथा-सूर्य की उच्च राशि मेष १० वें अंश में परमोच्च मेष से सप्तम तुला राशि के १०वें अंश में परमनीच। चन्द्रमा की वृष राशि उच्च, में ३ अंश परमोच्च, वृषसे सप्तम वृश्चिक राशि नीच, ३ अं० में परम नीचस्थान इसी प्रकार अन्य ग्रहों को समझना ॥ ३५-३६ ॥

राशियों की ह्रस्व, मध्य, दीर्घोदय संज्ञा—

ह्रस्वास्तिमिगोजघटा मिथुनधनुःकर्किमृगमुखाश्च समाः।
वृश्चिककन्यामृगपतिवणिजो दीर्घाः समाख्याताः ॥ ३७ ॥

मीन, वृष, मेष, कुम्भ राशियां ह्रस्वोदय, मिथुन, धनु, कर्क, मकर, समोदय, वृश्चिक, कन्या, सिंह, तुला राशियों की दीर्घोदय संज्ञा होती है ॥ ३७ ॥

विशेष—जातक पारिजात में–मीन राशि को समोदय में वर्णन किया है—ह्रस्वा गोऽजघटाः समा मृगनृयुक् चापान्त्यकर्काटकाः (१ अ० १६ श्लो०) मनीषी गण इसका विचार करें ॥ ३७ ॥

ह्रस्वोदयादि का फल—

एभिर्लग्नाधिगतैः शीर्षप्रभृतीनि वै शरीराणि।
सदृशानि विजायन्ते युतगगनचरैश्च तुल्यानि ॥ ३८ ॥

इन ह्रस्वोदयादि राशियों में जो राशि लग्नगत हो उससे जातक के मस्तकादि अङ्ग का विचार करना, तथा लग्नगत ग्रह के आधार पर भी शरीर के अवयवों का विचार करना चाहिए ॥ ३८ ॥

विशेष—यहाँ लग्न तो उपलक्षण मात्र है कालचक्र न्यास पद्धति से ग्रह व राशियों को स्थिति वश शरीर के प्रत्येक अवयव की परिस्थिति का ज्ञान करना चाहिए ॥ ३८ ॥

राशियों का प्लव (निम्नभूतल) तथा प्रयोजन—

भवनाधिपदिङ्नाम प्लव इति यवनैः प्रयत्नतः कथितः ।
तत्प्लवगो विनिहन्यादचिरेण महीपतिः शत्रून् ॥ ३९ ॥

राशि स्वामी की जो दिशा है वह उस राशि की प्लव दिशा मानी है ऐसा यवनों का कथन है । इसलिये जिस लग्न में यात्रा हो उस राशि स्वामी की दिशा में यात्रा करने से राजा शत्रु को शीघ्र पराजित करता है ॥ ३६ ॥

राशियों के वर्ण तथा प्रयोजन--

लोहितसितशुकहरिताः पाटलपरिधूम्रपाण्डुचित्राश्च ।
कृष्णकनकाभपिङ्गाः कर्बुरबभ्रुत्वजादिवर्णाः स्युः ॥ ४० ॥

जन्मोदयगृहवर्णा तदधिपतेः पूजिता प्रतिमा ।
हन्ति हरेरिह शत्रूनिन्द्रध्वजिनीव देवरिपून् ॥ ४१ ॥

१ लाल, २ सफेद, ३ तोता के समान हरा, ४ लाल उजाला मिला हुआ, ५ धूम्र, ६ पाण्डु, ७ अनेकवर्ण, ८ काला, ९ सुवर्ण समान, १० पिङ्गल, ११ चित्र, १२ भूरा वर्ण क्रम से ये मेषादि १२ राशियों के वर्ण है । जन्म काल में जो लग्न (राशि) वा ग्रह हो उसके समान शरीर का रङ्ग होता है । अर्थात् जिस भाव में हानि प्रतीत होती हो तो उस राशि सदृश वर्ण की प्रतिमा बनाकर पूजन करने से रोगादि समस्त शत्रुओं का नाश होता है, जैसे इन्द्र की सेना द्वारा देव रिपुओं (राक्षसों) का नाश होता है ॥४०–४१॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां होराराशिभेदो
नाम तृतीयोऽध्याय ॥

चतुर्थोऽध्यायः

कालपुरुष के आत्मादि विभाग—

आत्मा रविः शीतकरस्तु चेतः सत्वं धराजः शशिजोऽथ वाणी ।
ज्ञानं सुखं[1] शुक्रगुरू मदश्च राहुः शनिः कालनरस्य दुःखम् ॥१॥

काल रूप पुरुष की आत्मा सूर्य (सूर्य आत्मा जगतस्त स्थुषश्व) है । चन्द्रमा चित्त (मन), भौम बल (सत्य), बुध वाणी (वचन), बृहस्पति ज्ञान सुख, शुक्र मद (कन्दर्प), और शनि दुःख है ॥ १ ॥

---

[1] १–वेवगुरुर्मंदश्च शुक्रः ।

बृहज्जातक में भी कहा है—'कालात्मा दिनकृन्मनस्तुहिनगुः सत्वं कुजो ज्ञो वचो'
जीवो ज्ञानसुखे सितश्च मदनो दुःखं दिनेशात्मजः।'
(२ अ० १ श्लो०)

तथा जातक पारिजात में—'कालस्यात्मा भास्करश्चित्तमिन्दुः सत्वं भौम……'
(२ अ० १ श्लो०)

एवं बृहत्पाराशरहोरा में—सर्वात्मा च दिवानाथो मनः कुमुदबान्धवः।
सत्वं कुजो बुधैः प्रोक्तो बुधः वाणीप्रदायकः॥
(३ अ० १२–१३ श्लो) ॥ १ ॥

आत्मादि का प्रयोजन

आत्मादयो गगनगैर्बलिभिर्बलवत्तराः।
दुर्बलैर्दुर्बलास्ते तु विपरीतं शनेः फलम्[1] ॥ २ ॥

जन्म काल में आत्मादि (सूर्यादि) ग्रह बली हों तो जातक के आत्मादि भी बलवान् होते हैं। यथा—जिसकी कुण्डली में सूर्य पूर्ण बली हो तो उसकी आत्मा बलवान् (कठोर) होती है। इसी प्रकार अन्य भी। यदि आत्मादि ग्रह निर्बल हों तो आत्मादि भी दुर्बल होते हैं। एवं शनि का फल विपरीत होता है। अर्थात् ऊपर के श्लोक में शनि को दुःख बताया गया है। इसलिये यदि शनि निर्बल है तो दुःख भी अल्प ही होगा ॥२॥

विशेष—उपर्युक्त दोनों पद्य लघुजातक (२अ० १-२ श्लो०) में मिलते हैं ॥२॥

द्रेष्काणवश कालावयवों की उत्पत्ति—

यथा यथा लग्नगृहाश्रयाणां समुद्गमोऽभूत्त्रिविकल्पकानाम्[2]।
तथा तथा शैलनगाष्टसंख्याः[3] क्रमेण कालावयवाः प्रसूतौ[4] ॥ ३ ॥

जन्म समय में लग्न राशि के आश्रित जैसे-जैसे तीन द्रेष्काणों का उदय होता है वैसे वैसे ही क्रम से कालपुरुष के ७, ७, ८, अवयव होते हैं। अर्थात् प्रथम द्रेष्काण में जन्म होने से ५ वें श्लो० के आधार पर मूर्धादि ७ अवयव, २ य द्रेष्काण में ग्रीवादि ७, ३ य में वस्ति आदि ८ अवयव होते हैं ॥ ३ ॥

विशेष—उक्त पद्य में 'भूरि विकल्पनानाम्' के स्थान पर जो अंश दिया गया है वह संस्कृत वि० वि० सरस्वती भवन के ग्रन्थाङ्क ३६४७७ में मिलता है तथा प्रसङ्गानुसार सङ्गति भी मिलती है। तृतीय चरण में 'शैलनवाष्ट' के स्थान पर 'शैलनगाष्ट' जो दिया है इसकी सङ्गति ५ वें श्लोक से मिलती है अर्थात् ग्रीवादि भी अवयव ७ ही हैं ॥ ३ ॥

लग्न के आधार पर वाम दक्षिण अङ्ग तथा निर्बल-सबल संज्ञा

लग्नात्तक्षणमुदितं [5]वामाङ्गमथाबलम्।
सव्यार्धादितरत्तस्य[6] नोद्गतं सबलं[7] च तत् ॥ ४ ॥

सामयिक लग्न से पीछे की ६ राशियाँ जो उदित (क्षितिज से ऊपर) रहती हैं वे

---

[1]. स्मृतम्। [2]. भूरिविकल्पनानाम्। [3]. शैलनवाष्ट। [4]. प्रसूताः। [5]. ममङ्गम्, [6]. रंतस्य। [7]. सकलं।

जातक के वाम अङ्ग, तथा अनुदित (क्षितिज से नीचे) ६ राशियाँ दक्षिण अङ्ग समझना चाहिये । वाम अङ्ग निर्बल, दक्षिण अङ्ग सबल होता है ।। ४ ।।

लग्नद्रेष्काणवश कालावयव (जातकावयव) ज्ञान

मूर्धालोचनकर्णगन्धवहनं गण्डौ[1] हनुश्चाननं
ग्रीवास्कन्धभुजं तु पार्श्वहृदयक्रोडाश्च नाभिः पुनः ।
बस्तिर्लिङ्गगुदे च मुष्कयुगलं चोरुद्वयं जानुनी
जङ्घे पादयुगं विलग्नभवनात्पार्श्वद्वये कल्पिताः ।। ५ ।।

जन्मकाल के समय यदि लग्न में प्रथम द्रेष्काण हो तो लग्न (१) मस्तक (२) भाव दक्षिण नेत्र, १२ वां भाव वाम नेत्र, ३ द० कान, ११ वाँ भा० वाम कान, ४, १० नाक, ५, ९ गण्ड (गाल), ६, ८ ठुड्ढी (ठोड़ी) और सप्तम भाव उस जातक का मुख होता है । उक्त अवयवों का विचार तत्तद् भाव से करना चाहिए । यदि द्वितीय द्रेष्काण हो तो लग्न (१) ग्रीवा (कण्ठ), २, १२ कंधा, ३, ११ दोनों हाथ, ४, १० बगल, ५, ६ छाती, ६, ८ पेट, ७ सप्तम भाव नाभि समझना चाहिए । यदि तीसरा द्रेष्काण हो तो लग्न (१) वस्ति (उपस्थ और नाभि का मध्यभाग), २ य लिंग, १२ गुदा, ३, ११ अण्डकोश, ४, १० जांघ, ५, ९, घुटना, ६, ८ पींड़री, सप्तम भाव पैर, इस प्रकार लग्न के आधार पर दोनों तरफ कल्पना करके उक्त अवयवों की शुभाशुभता समझना चाहिए ।। ५ ।।

वाराहमिहिर ने बृहज्जातक में कहा है—

'कंदृक्छ्रोत्रनसाकपोलहनवो वक्त्रञ्च होरादयः' (५ अ० २४ श्लोक) ।। ५ ।।

अङ्गज्ञान का प्रयोजन

पापा व्रणं लाञ्छनमेषु[2] सौम्याः स्वांशे स्वराशावथवा स्थितेषु ।
कुर्वन्ति जन्मोत्थितमेषु चिह्नमेषु[3] ग्रहास्तद्विपरीतसंस्थाः ।। ६ ।।

जिस अवयवस्थित भाव में पाप ग्रह हों उस अङ्ग में घाव वा चोट, जिसमें शुभ ग्रह हों तो उसमें तिल मसा आदि चिह्न समझना । यदि ग्रह (शुभ वा पाप) अपनी राशि वा अपने नवांश में हो तो उक्त चिह्न जन्म के समय से ही समझना । यदि स्वराशि वा स्वनांश में ग्रह न हों तो अपनी २ दशा आने पर घाव आदि चिह्न करते हैं ।। ६ ।।

बृहज्जातक में भी कहा है—'तस्मिन्पापयुते व्रणं शुभयुते दृष्टे च लक्ष्मादिशेत्' ।।
(५ अ० २५ श्लोक) ।। ६ ।।

ग्रहों के राजत्वादि अधिकार और प्रयोजन

राजा रविः शशधरश्च[4] बुधः कुमारः
सेनापतिः क्षितिसुतः सचिवौ सितेज्यौ ।
भृत्यस्तयोश्च रविजः सबला नराणां
कुर्वन्ति जन्मसमये निजमेव सत्वम्[5] ।। ७ ।।

---

१. गण्ड । २. मेव । ३. मेष्य । ४. रस्तु । ५. रूपम् ।

ग्रह समिति में सूर्य, चन्द्रमा राजा, बुध राजकुमार, भौम सेनानायक, शुक्र गुरु मन्त्री, और शनि भृत्य (सेवक) है। जन्म काल में जो ग्रह बलवान् हो वह जातक को अपने समान बनाता है। २–३ ग्रह बली हों तो जातक में उतने गुण होते हैं ॥ ७ ॥

वृहत्पाराशर में कहा है—'रविचन्द्रौ तु राजानौ नेता ज्ञेयो धरात्मजः'
(३ अ० १४ श्लोक)

एवं वृहज्जातक में—'दिनेशचन्द्रौ राजानौ सचित्रौ जीवभार्गवौ' (२ अ० १ श्लो)
जातक परिजात में भी—'दिनेशचन्द्रौ राजानौ सचिवौ जीवभार्गवौ' (२ अ. २श्लो.)
सर्वार्थचिन्तामणि में—'दिनेशचन्द्रौ नरपालमुख्यौ नेता कुंजः सोमसुतः कुमारः'
विशेष—यह पद्य लघुजातक (२ अ० ३ श्लो०) में प्राप्त होता है ॥ ७ ॥

कौन ग्रह किस दिशा का स्वामी—

भानुः शुक्रः क्षमापुत्रः सैंहिकेयः शनिः शशी।
सौम्यस्त्रिदशमन्त्री च प्राच्यादिदिगधीश्वराः ॥ ८ ॥

पूर्व का सूर्य, अग्नि कोण का शुक्र, दक्षिण का मंगल, नैऋत्य का राहु, पश्चिम का शनि, वायव्य का चन्द्रमा, उत्तर का बुध और ईशान का स्वामी गुरु होता है ॥ ८ ॥
जातक पारिजात में कहा है—

'प्रागादिका भानुसितारराहुमन्देन्दुविद्देवपुरोहिताः स्युः (२ अ० २३ श्लो०)।
तथा बृहज्जातक में—'प्रागाद्या रविशुक्रलोहिततमः सौरेन्दुवित्सूरयः'
(२ अ० ५ श्लो०)।
एवं लघु जातक में भी—'प्राच्यादीशा रविसितकुजराहुयमेन्दुसौम्यवाक्पतयः'
(२ अ० ४ श्लो०) ॥ ८ ॥

ग्रहों की शुभ, पाप संज्ञा—

गुरुबुधशुक्राः सौम्याः सौरिकुजार्कास्तु निगदिताः[1] पापाः।
शशिजोऽशुभसंयुक्तः क्षीणश्च निशाकरः पापः ॥ ९ ॥

गुरु, बुध, शुक्र ये शुभग्रह हैं। शनि मंगल और सूर्य पाप ग्रह हैं। यदि बुध पाप ग्रह के साथ हो तो वह भी पाप ग्रह होता है। क्षीण चन्द्रमा भी पाप ग्रह होता है। यदि पूर्ण चन्द्रमा हो तो शुभ ग्रह होता है ॥ ९ ॥

बृहत्पाराशरहोरा में कहा है—'तत्रार्कशनिभूपुत्राः क्षीणेन्दु-राहुकेतवः। क्रूराः शेषग्रहाः सौम्याः क्रूरः क्रूरयुतोबुधः' (३ अ० ११ श्लो०)

बृहज्जातक में भी 'क्षीणेंद्वर्कमहीसुतार्कतनयाः पापा बुधस्तैर्युतः' (२ अ० ५ श्लो)
लघुजातक में भी 'क्षीणेन्द्वर्कयमाराः पापास्तैः संयुतः सौम्यः' (२ अ० ४ श्लो०)।

---

[1] निसर्गतः।

तथा जातक पारिजात में भी—'क्षीणेन्दुमन्दरविराहुशिखिक्षमाजाः पापास्तु……' (२ अ० ९ श्लो०) ।

विशेष—इस पद्य से प्रतीत होता है कि विशुद्ध शुभग्रह गुरु व शुक्र हैं। बुध उदासीन है, पाप के साथ पाप, और शुभग्रह के सन्निध्य से शुभ, शुभ पाप दोनों के साथ रहने पर मध्य होता है।

चन्द्रमा शुक्लपक्ष प्रतिपदा से १० (दशमी) तक मध्यवली, शुक्लपक्ष की एकादशी से कृष्णपक्ष की ५ पंचमी तक पूर्ण बली, और षष्ठी से अमावस्या तक बलहीन होता है।

कृष्ण पक्ष की अष्टमी के अर्द्ध भाग से शुक्ल पक्ष की अष्टमी के अर्द्ध भाग तक क्षीण चन्द्रमा होता है ॥ ९ ॥

सूर्य, चन्द्रमा, मंगल और बुध के नामान्तर—

हेलिर्भानुः शशी चन्द्रः [१]क्रूराक्षः क्षितिनन्दनः।
आरो रक्तस्तथा वक्रो हेम्नो विद् ज्ञोऽथ बोधनः ॥ १० ॥

सूर्य के नाम—१ हेलि, २ भानु। चन्द्रमा के—१ चन्द्र, २ शशि। मंगल के—१ क्रूरदृक् २ क्षितिनन्दन, ३ आर, ४ रक्त, ५ वक्र। बुध के—१ हेम्न, २ विद्, ३ ज्ञ, ४ बोधन नाम हैं ॥ १० ॥

तथा बृहज्जातक में 'हेलिः सूर्यश्चन्द्रमा शीतरश्मिर्हेम्ना विज्ज्ञो बोधनश्चेन्दुपुत्रः। आरो वक्रः क्रूरदृक् चावनेयः' (३ अ० २ श्लो०)। और भी सर्वार्थ चिन्तामणि में—

'सूर्यो हेलिर्भानुमान् दीप्तरश्मिश्चण्डांशुः स्याद् भास्करोऽहस्करश्च।
अब्जः सोमश्चन्द्रमा शीतरश्मिः शीतांशुः स्यात् ग्लौर्मृगाङ्कः कलेशः।
आरो वक्रश्चावनेयः कुजः स्याद् भौमः क्रूरो लोहिताङ्गोऽथ पापी।
विज्ज्ञः सौम्यो बोधनश्चन्द्र पुत्रश्चान्द्रिः' (१ अ० ५२-५३)।

अन्य भी जातक पारिजात में 'हेलिः सूर्यस्तपनदिनकृद्भानुपूषारुणार्कः, सोमः शीतद्युतिरुडपतिग्लौंमृगाङ्केन्दुचन्द्राः। आरो वक्रक्षितिजरुधिराङ्गारकक्रूरनेत्राः, सौम्यस्तारातनयबुधविद्बोधनश्चेन्दुपुत्रः। (२ अ० ३ श्लो०) ॥

विशेष—ग्रन्थान्तर के आधार पर सूर्य के नाम—१ हेलि, २ भानुमान्, ३ दीप्तरश्मिः, ४ चण्डांशुः, ५ भास्कर, ६ अहस्कर, ७ तपन, ८ दिनकृत्, ९ भानु, १० पूषा, ११ अरुण, १२ अर्क हैं। चन्द्रमा के—१ शीतरश्मि, २ अब्ज, ३ सोम, ४ शीतांशु, ५ ग्लौ, ६ मृगाङ्क, ७ कलेश, ८ शीतद्युति, ९ उडुपति, १० इन्दु, ११ चन्द्र ये नाम हैं।

मंगल के—१ आर, २ वक्र, ३ क्रूरदृक्, ४ आवनेय, ५ कुज, ६ भौम, ७ क्रूर, ८ लोहिताङ्ग, ९ पापी, १० क्षितिज, ११ रुधिर, १२ अङ्गारक, १३ क्रूरनेत्र, ये नाम हैं। बुध के–१ हेम्न, २ विद्, ३ ज्ञ, ४ बोधन ५ इन्दुपुत्र, ६ सौम्य, ७ चन्द्रपुत्र, ८ चान्द्रि, ९ तारातनय ये नाम हैं ॥ १० ॥

---

[१] क्रूरदृक्।

गुरू-शुक्र-शनि के नामान्तर—

ईडयेज्यावङ्गिरा जीवो ह्यास्फुजिच्च सितो भृगुः ।
मन्दः कोणो यमः कृष्णो विद्यादन्यानि लोकतः ॥ ११ ॥

गुरू के नाम—१ ईड्य, २ इज्य, ३ अङ्गिरा, ४ जीव ये हैं। शुक्र के—१ आस्फुजित्, २ सित, ३ भृगु, । शनि के—१ मन्द, २ कोण, ३ यम, ४ कृष्ण ये नाम हैं। अन्य इनके नाम ग्रन्थान्तर से जानना चाहिये ॥ ११ '। यथा वृहज्जातक में—

'कोणो मंदः सूर्यपुत्रोऽसितश्च। जीवोऽङ्गिरा सुरगुरुर्वचसां पतीज्यः शुक्रो भृगुर्भृगुसुतः सितआस्फुजिच्च' (‌ अ० २-३ श्लो०)।

और भी सर्वार्थचिन्तामणि में—'जीवोंगिरा देवगुरुः प्रशांतो वाचां पतीज्यत्रिदशेशवंद्याः। भृगूशनो भार्गवसूनवोच्छः काणः कविर्दैत्यगुरुः सितश्च। छायात्मजः पङ्गुयमार्कसूनुः कोणोऽसितः सौरिशनी तु नीलः' (१ अ० ५४-५५½ श्लो०)।

अन्य भी जातक पारिजात में—'मन्त्री वाचस्पतिगुरुपुराचार्यदेवेज्यजीवाः, शुक्रः काव्यः सितभृगुसुताच्छास्फुजिद्दानवेज्याः। छायासूनुस्तरणितनयः कोणशन्यार्कि मन्दाः'। (२ अ० ४ श्लो)॥ ११ ॥

सूर्यादि ७ ग्रहों के वर्ण और अधिदेवता—

ताम्रसितारुणहरितकपीतविचित्रासिता इनादीनाम् ।
पावकजलगुहकेशवशक्रशचीवेधसः पतयः ॥ १२ ॥

सूर्य का तामे के समान, चन्द्र का सफेद, मङ्गल का लाल, बुध का हरा, गुरू का पीला, शुक्र का अनेक रङ्ग, शनि का काला वर्ण है। सूर्य का अग्नि, चन्द्रमा का जल, भौम का कार्तिकेय, बुध का विष्णु, गुरूका इन्द्र, शुक्र का इन्द्राणी ओर शनि का ब्रह्मा अधिदेवता होता है ॥ १२ ॥ वृहत्पाराशर में कहा है—'रक्तश्यामो दिवाधीशो' (३ अ० १६-१८ श्लो०)।

वृहज्जातक में भी—'वर्णास्ताम्रसितातिरक्त हरि......' (२ अ० ५ श्लो०)

एवं जातक पारिजात में—'वर्णास्ताम्रसितारक्तहरितापीतकर्बुराः। कृष्णकान्तिरिनादीनां नष्टादौ च प्रकीर्तिताः' (अ० १९ श्लो०)। अधिदेवता—'वन्ह्यम्बुषण्मुख हरीन्द्रशचीविरञ्चि...' (२ अ० २० श्लो०) ॥ १२ ॥

विशेष—ग्रहवर्ण के आधार पर हृत नष्ट वस्तु का ज्ञान होता है ॥ १२ ॥

अधिदेवताओं का प्रयोजन—

अर्कादिग्रहदैवतमन्त्रैः संपूज्य तामाशाम् ।
कनकगजवाहनादीन्प्राप्नोति गतोऽरितः शीघ्रम् ॥ १३ ॥

सूर्यादि ग्रह का जो देवता होता है उसी देव की पूजा उसके मन्त्र से करके उसी दिशा में (जिस दिशा का वह स्वामी है) यात्रा करने से शत्रु को जल्दी पराजित कर सुवर्ण, रत्न, हाथी आदि का लाभ होता है ॥ १३ ॥

ग्रहों के पुं-स्त्री-नपुंसक तथा विप्रादि एवं तत्त्वों के अधिपति—

स्त्रीणां चन्द्रसितौ नपुंसकपती सोमात्मजार्कात्मजौ
पुंसां जीवदिवाकरक्षितिसुता विप्रस्य शुक्रोऽङ्गिरा ।
राज्ञां सूर्यकुजौ विशां शशधरो मिश्रस्य मन्दो बुधः
शूद्राणां शिखिभूखतोयमरुतां भौमादयः कीर्तिताः ॥ १४ ॥

चन्द्रमा, शुक्र स्त्रियों के, बुध, शनि नपुंसकों के, गुरु, सूर्य, भौम पुरुषों के अधिपति हैं। शुक्र, गुरु बाह्मणों के, सूर्य, मंगल क्षत्रियों के, चन्द्रमा वैश्यों के, शनि संकर जाति के, बुध शूद्रों के स्वामी हैं। अग्नितत्त्व का मंगल, भूमि का बुध, आकाश का गुरु, जल का शुक्र, वायु तत्त्व का शनि मालिक है ॥ १४ ॥

बृहत्पाराशर में कहा है—'क्लीबौ द्वौ सौम्यसौरी च युवतीन्दुभृगू द्विज ?। नराः शेषाश्च विज्ञेया भानुभौमो गुरुस्तथा' (३ अ० १९—२१, श्लोक)। बृहज्जातक में भी—'बुधसूर्यसुतौ नपुंसकाख्यौ शशिशुक्रौ युवती नराश्च शेषाः....' (२ अ० ६॥ श्लो०) ॥ १४ ॥

ग्रहों के रस तथा स्थान—

कटुलवणतिक्तमिश्रितमधुराम्लकषायरसविशेषाणाम् ।
[1]सुरतोयाग्निविहारार्थशयनपांसूत्कराणां च ॥ १५ ॥

सूर्य का कड़वा, चन्द्र का क्षार, भौम का तीता, बुध का मिश्रित, गुरु का मधुर, शुक्र का खट्टा और शनि का कसैला रस है। देवालय, जलाशय, अग्निस्थान, क्रीडास्थल, कोश, शयन, कतवारखाना ये सूर्यादि ७ ग्रहों के क्रम से स्थान हैं अर्थात् इन स्थानों के स्वामी हैं ॥ १५ ॥ बृहत्पाराशर में कहा है—

'देवालयजलं वह्निक्रीडादीनां तथैव च । कोशशय्योत्कराणान्तु नाथाः सूर्यादयः क्रमात्' (३ अ० ३२ श्लोक)। 'कटु-क्षार-तिक्तमिश्रमधुराम्ल-कषायाः' (३ अ० ३४ श्लोक) तथा बृहज्जातक में—'कटुकलवणतिक्तमिश्रितमधुराम्लौ च कषायाः' (२ अ० १४ श्लोक)। 'देवांब्वग्निविहारकोशशयनक्षित्युत्करेशाः क्रमात्' (२ अ० १२ श्लोक) ॥१५॥

ग्रहों के वस्त्र तथा धातु—

वस्त्राणां स्थूलाहतशिखिजलहतमध्यदृढसुजीर्णानाम् ।
ताम्रमणिहेममिश्रितरूप्यकमुक्तायसां वाऽपि ॥ १६ ॥

सूर्य का स्थूल=मोटा, चन्द्र का अहत=नवीन (बिना फटा हुआ) भौम का शिखिहत=जला हुआ, बुध का जलहत=भींगा हुआ (गीला, ओदा), गुरु का मध्य=मध्यम (न पुराना न नया), शुक्र का दृढ़=मजबूत, शनि का सुजीर्ण=अत्यन्त फटा-पुराना वस्त्र है। धातु=द्रव्य, सूर्य का ताम्र=तामा, चन्द्रमा का मणि, भौम का सुवर्ण=हेम, बुध का मिश्रित (मिला हुआ), गुरु का-रूप्यक=चाँदी, शुक्र का मुक्ता=मोती, शनि का आयस=लोहा द्रव्य (धातु) है ॥ १६ ॥

---

१. सुरग्रहकांग्नि ।

बृहत्पाराशर में इसके विपरीत है। यथा–'गुरोः पीताम्बरं विप्र ? भृगोः क्षौमं तथैव च..' (३ अ०४३–४४ श्लोक)।

बृहज्जातक में अनुरूप है। यथा–'वस्त्रं स्थूलमभुक्तमग्निकहतं मध्यं दृढं स्फाटितम्। ताम्रं स्यान्मणिहेमयुक्तिरजतान्यर्काच्च मुक्तायसी (२ अ० १२ श्लोक)

तथा जातक पारिजात में भी––'स्थूलाम्बरं नूतनचारुचेलं कृशानुतोयाहतमध्यमानि। दृढांशुकं जीर्णमिनादिकानां .....' (२ अ० २२ श्लोक)। द्रव्य—द्रव्याणि ताम्रमणिकाञ्चनशुक्तिरौप्यमुक्तान्ययश्च दिननाथमुखग्रहाणाम्' (२ अ० २० श्लोक ॥ १६ ॥

विशेष—वस्त्र एवं द्रव्य का प्रसव काल में व प्रश्न काल में विचार किया जाता है। जो ग्रह उभय काल में बली हो उसके आधार पर आदेश करना चाहिए ॥ १६ ॥

काल एवं ऋतुओं के स्वामी ग्रह—

अयनक्षणदिवसर्तुकमासतदर्धशरदां दिनेशाद्याः।
शिशिरादीनामीशाः शनिसितभौमेन्दुबुधजीवाः[1] ॥ १७ ॥

अयन का स्वामी सूर्य. क्षण=मुहूर्त का चन्द्र, दिवस=दिन-रात्रि का भौम, ऋतु का बुध, मास का गुरु, पक्ष का शुक्र, वर्ष का शनि स्वामी होता है। शिशिर ऋतु का स्वामी शनि, वसन्त का शुक्र, ग्रीष्म का भौम, वर्षा का चन्द्रमा, शरद् का बुध, और हेमन्त का अधिपति गुरु होता है ॥ १७ ॥ बृहत्पाराशर में कहा है—

'अयनक्षणवारर्तुमासपक्षसमा द्विज। सूर्यादीनां:' (३ अ० ३३ श्लो०)।

'भृगोर्ऋतुवसन्तश्च कुजभान्वोश्च ग्रीष्मकः। चन्द्रस्य वर्षा......'
(३ अ० ४५-४६)।

बृहज्जातक में भी—'अयनक्षणवासरर्तवो मासोर्द्धं च समाश्च भास्करात्'
(२ अ० १४ श्लो०)। १७।

कालाधिपति प्रयोजन—

लग्नाधिपतेस्तुल्यः कालो लग्नोदितांशकसमाख्यः।
वक्तव्यो रिपुविजयो गर्भेषु च कार्यसंयोगे ॥ १८ ॥

शत्रुओं से विजय, गर्भ अथवा कार्यों के प्रश्न में प्रश्न लग्न के स्वामी का जो काल १७ वें श्लोक में वर्णित है उस समय में कार्य सिद्धि होगी ऐसा ज्योतिषी को कहना चाहिए। समय कहने के समय लग्न के भुक्तांश से अनुपात द्वारा (३० अंश में यदि उक्त काल तो भुक्ताँश में क्या) ठीक समय का ज्ञान करके ही आदेश करना चाहिये ॥१८॥

वेदों के अधिप—

ऋग्वेदाधिपतिर्जीवो यजुर्वेदपतिः सितः।
सामवेदाधिपो वक्रः शशिजोऽथर्ववेदराट् ॥ १९ ॥

ऋग्वेद का बृहस्पति, यजुर्वेद का शुक्र, सामवेद का भौम, अथर्ववेद का अधिपति बुध है ॥ १९ ॥

---

[1] चन्द्रसुतः।

लघुजातक में कहा है—'ऋगथर्वसामयजुषामधिपा गुरुसौम्यभौम-सिताः' (२ अ० ५ श्लो०)। तथा जातक पारिजात में भी—'शाखाधिपा जीवसितार-बोधनाः' (२ अ० १५ श्लो०)॥ १९ ॥

लोकस्वामी ग्रह—

सुरपूज्यः शशिशुक्रौ दिनकरभौमौ बुधार्कजौ नाथाः ।
विबुधमनुष्यपितॄणां तिर्यङ्नरकाधिवासानाम् ॥ २० ॥

देव लोक का गुरु, मनुष्य लोक के चन्द्र व शुक्र, पितृलोक के सूर्य व भौम; एवं पशु पक्षी व नरकलोक निवासियों के स्वामी बुध शनि हैं ॥ २० ॥

सूर्य का स्वरूप और गुण—

स्वल्पाकुञ्चितमूर्धजः पटुमतिर्मुख्यस्वरूपस्वनो,
नात्युच्चो मधुपिङ्गचारुनयनः शूरः प्रचण्डः स्थिरः ।
रक्तश्यामतनुर्निगूढचरणः पित्तास्थिसारो महान्
गम्भीरश्चतुरस्रकः पृथुकरः कौसुम्भवासा रविः ॥ २१ ॥

थोड़े घुंघराले केश (वाल), सुन्दरवुद्धि व रूप, गम्भीर वाणी, अत्यन्त ऊँचा नहीं, सहत के समान लाल नेत्र, शूर, प्रतापी, स्थिर, (चञ्चल नहीं), लाल और कृष्ण वर्ण शरीर, छिपे हुए पैर, पित्त स्वभाव, हड्डियों में तागत (वल), वड़ा, गम्भीर चौखूंटा (लम्बाई चौड़ाई सम), विशाल किरण, केसर के रङ्गसदृश वस्त्र वाला सूर्य है ॥२१॥

चन्द्रमा का स्वरूप और गुण—

सौम्यः कान्तविलोचनो मधुरवाग्गौरः कृशाङ्गो युवा
प्रांशुः सूक्ष्मनिकुञ्चितासितकचः प्राज्ञो मृदुः सात्विकः ।
चारुर्वातकफात्मकः प्रियसखो रक्तैकसारो घृणी
वृद्धस्त्रीषु रतश्चलोऽतिसुभगः शुभ्राम्बरश्चन्द्रमाः ॥ २२ ॥

शान्त, शोभायमान नेत्र, मीठा बोलने वाला, सफेद वर्ण, कृश शरीर, जवान, उन्नत, छोटे काले घुंघराले बाल, विद्वान्, मृदु स्वभाव, सत्वगुण से युक्त, सुन्दर, वात और कफ प्रकृति, मित्रों से प्रेम करने वाला, खून में बल, घृणा करने वाला, वुढ्ढी (बूढ़ी) स्त्रियों में आसक्त, चञ्चल, अत्यन्त सुन्दर, सफेद वस्त्र वाला चन्द्र है ॥२२॥

मङ्गल का स्वरूप व गुण—

ह्रस्वः पिङ्गललोचनो दृढवपुर्दीप्ताग्निकान्तिश्चलो
मज्जावानरुणाम्बरः पटुतरः शूरश्च निष्पन्नवाक् ।
[1]ह्रस्वाकुञ्चितदीप्तकेशतरुणः पित्तात्मकस्तामस-
श्चण्डः साहसिकोऽपि घातकुशलः संरक्तगौरः कुजः ॥२३॥

---

१. हिंस्रः ।

लघु कद, पिङ्गल आँख, मजबूत शरीर, जली हुई अग्नि के समान कान्ति, चञ्चल, चर्वी में वल, लाल वस्त्र, चतुर, शूर, सिद्ध वचन, छोटे घुंघराले चमकदार बाल, जवान, पित्त प्रकृति, तमो गुणी, पराक्रमी, साहसी, मारने में निपुण, लालिमा से युक्त सफेद वर्ण वाला भौम है ॥ २३ ॥

बुध का स्वरूप और गुण—

रक्तान्तायतलोचनो मधुरवाग्दूर्वादलश्यामल-
स्त्वक्सारोऽतिरजोधिकः स्फुटवचाः स्फीतस्त्रिदोषात्मकः ।
हृष्टो मध्यमरूपवान्सुनिपुणो वृत्तः शिराभिस्ततः
सर्वस्यानुकरोति वेषवचनैः पालाशवासा बुधः ॥ २४ ॥

लाल विशाल नेत्र, मीठी वाणी, घास (दूब) के समान कृष्ण, त्वचा (खाल) में बल, अत्यन्त रजोगुणी, स्पष्ट वचन, स्वच्छ, त्रिदोषात्मक (कफ, पित्त, वात) प्रकृति, प्रसन्नात्मा, मध्यम स्वरूप, चतुर, गोलाकृति, नसों से व्याप्त, अपने वेष व वाणी से सबका अनुकरण करने वाला एवं हरे वस्त्र वाला बुध है ॥ २४ ॥

गुरू का स्वरूप तथा गुण—

ईषत्पिङ्गललोचनश्रुतिधरः सिंहाच्छनादः स्थिरः
सत्वाढ्यः सुविशुद्धकाञ्चनवपुः पीनोन्नतोरस्थलः ।
ह्रस्वो धर्मरतो विनीतनिपुणो बद्धोत्कटाक्षः क्षमी
स्यात्पीताम्बरधृक्क[1]फात्मकतनुर्मेदःप्रधानो गुरुः ॥ २५ ॥

थोड़े पीत नेत्र व कर्ण, सिंह के समान गम्भीर शब्द, स्थिर, सतोगुणी (सत्वगुण से युक्त), तपे हुए सोने के समान शरीर वर्ण, मोटी व ऊँची छाती, लघु, धर्म में तत्पर, नम्रता में चतुर, स्थिर उत्कृष्ट दृष्टि, क्षमावान्, पीला वस्त्र, कफ प्रकृति, चर्वी में बलवाला गुरू है ॥ २५ ॥

शुक्र का स्वरूप एवं गुण—

चारुर्दीर्घभुजः पृथूरुवदनः शुक्राधिकः कान्तिमान्
कृष्णाकुञ्चितसूक्ष्मल[2]म्बिचिकुरो दूर्वादलश्यामलः[3] ।
कामी वातकफात्मकोऽतिसुभगश्चित्राम्बरो[4] राजसो
लीलावान्मतिमान्विशालनयनः स्थू[5]लांसदेशः सितः ॥ २६ ॥

मनोहर स्वरूप, लम्बे हाथ, विशाल वक्षस्थल व मुख, वीर्य की अधिकता, चेष्टावान्, काले घुंघराले पतले लम्बे बाल, दूब के समान श्यामल वर्ण, कामी, वात व कफ प्रकृति, अत्यन्त सौभाग्य से युक्त, अनेक रङ्ग का वस्त्र, रजोगुणी, केलिकुशल, बुद्धिमान्, विशाल नेत्र, मोटे कन्धा वाला शुक्र है ॥ २६ ॥

शनि का स्वरूप और गुण

पिङ्गो निम्नविलोचनः कृशतनुर्दीर्घः सिरालोऽलसः
कृष्णाङ्गः पवनात्मकोऽतिपिशुनः स्नाय्वाततो निर्घृणः ।

---

[1] भृत्क । [2] लम्बितकचो । [3] दूर्वाङ्कुरश्यामलः । [4] धिको । [5] लामदेहः ।

मूर्खः स्थूलनखद्विजोऽतिमलिनो रूक्षोऽशुचिस्तामसो
रौद्रः क्रोधपरो जरापरिणतः कृष्णाम्बरो भास्करिः ॥ २७ ॥

कपिल गहरे नेत्र, पतला लम्बा शरीर, नसों से युक्त, आलसी, काला वर्ण, वात प्रकृति, अत्यन्त चुगल खोर, स्नायु (खाल) में बल, निर्दयी, मूर्ख, मोटे नाखून और दाँत, अत्यन्त मलिन वेश, चेष्टा हीन, अपवित्र, तामस प्रकृति, भयावह, क्रोधी, वृद्ध (बूढ़ा) काले वस्त्र वाला शनि है ॥ २७ ॥

नोट—ग्रहों के स्वरूप ग्रन्थान्तर में अनुरूप न होने के कारण यहाँ प्रमाण रूप में नहीं दिये गये हैं ॥ २७ ॥

ग्रहों के नैर्गिक मित्र, शत्रु, सम ग्रह

मित्राणि सूर्याद्गुरुभौमचन्द्राः सूर्येन्दुपुत्रौ रविचन्द्रजीवाः ।
भानुः सशुक्रः शशिसूर्यभौमा मन्देन्दुजौ शुक्रवुधौ क्रमेण ॥ २८ ॥
शुक्रार्कजौ चन्द्रमसो न कश्चित्सौम्यः शशी शुक्रवुधौ रवीन्दू !
सोमार्कवक्रा रवितस्त्वमित्रा मित्रारिशेषो न सुहृन्न शत्रुः ॥ २९ ॥

सूर्यादि क्रम से मित्र ग्रह, यथा सूर्य के मित्र ग्रह—गुरु, भौम, चन्द्र । चन्द्रमा के सूर्य, बुध । भौम के–सूर्य, चन्द्र, गुरु । बुध के–सूर्य, शुक्र । गुरु के–चन्द्रमा, सूर्य, मङ्गल । शुक्र के–शनि बुध । शनि के–शुक्र बुध मित्र हैं । सूर्यादि क्रम से शत्रु ग्रह—सूर्य के—शुक्र, शनि । चन्द्रमा का कोई भी ग्रह शत्रु नहीं है । भौम का—बुध । बुध का–चन्द्रमा । गुरु के–शुक्र, बुध । शुक्र के–सूर्य, चन्द्रमा । शनि के–सूर्य, चन्द्रमा, मंगल शत्रु ग्रह हैं । मित्र शत्रु से बचे हुए ग्रह, उस ग्रह के सम ग्रह होते हैं ॥ २८–२९ ॥

वृहज्जातक मे कहा है–'शत्रू मंदसितौ समश्चशशिजो मित्राणि…'(२ अ० १६-१७) ।

सर्वार्थचितामणि में भी—'भानोस्तु मित्राणि कुजेंदुजीवाः समो बुधः शुक्रशनी विपक्षौ'…
(१ अ० ८३½–८७ श्लो०) ।

विशेष—प्रायः जातक ग्रन्थों में इसी के अनुरूप मित्र सम शत्रु का वर्णन है । बृहज्जातक में 'जीवो जीवबुधौ सितेन्दुतनयौ……' (२ अ० १५ श्लो०) यह किसी-किसी का मत है सर्व सम्मत नहीं है । तथा अपनी-अपनी मूलत्रिकोण राशि से भी मित्रादि का ज्ञान होता है । ॥ २८–२९ ॥

नैसर्गिक मित्र, शत्रु, सम बोधक चक्र—

ग्रहाः	सू.	चं.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.
मित्राणि	चं. मं.गु.	सू. बु.	सू. चं गु	सू. शु.	सू. चं. मं.	श. बु.	शु. बु.
समाः	बु.	मं.गु. शु श	शु. श.	मं. गु. श.	श.	मं. गु.	गु.
शत्रवः	शु. श.	×	बु.	चं.	शु. बु.	सू. चं.	सू. चं. मं

ग्रहों के तात्कालिक मित्र व शत्रु

व्ययाम्बुधनखायेषु तृतीये सुहृदः स्थिताः ।
तत्कालरिपवः षष्ठसप्ताष्टैकत्रिकोणगाः ॥ ३० ॥

अभीष्ट काल में जो ग्रह जिस राशि में विद्यमान हो उस स्थान (राशि) से (व्यय) १२, (अम्बु) ४, (धन) २, १०, ११, ३ स्थानों में ग्रह रहने पर उसका तात्कालिक मित्र होता है तथा ६, ७, ८, १, ५, ९ इन स्थानों में स्थित ग्रह शत्रु होता है ॥ ३० ॥

वृहत्पाराशर में कहा है—'दशबन्ध्वायसहजस्वान्त्यस्थास्ते परस्परम्……..'
(३ अ० ५६ श्लोक) ।

तथा वृहज्जातक में भी—'अन्योन्यस्य धनव्ययायसहजव्यापारबन्धुस्थिताः………'
(२ अ० १८ श्लोक) ॥ ३० ॥

नैसर्गिक और तात्कालिक मित्रादि से पञ्चधा मैत्री विचार

हितसमरिपुसंज्ञा ये निसर्गान्निरुक्ता
हिततमहितमध्यास्तेऽपि तत्कालमित्रैः ।
रिपुसमसुहृदाख्याः सूतिकाले ग्रहेन्द्रा
अधिरिपुरिपुमध्याः शत्रुभिश्चिन्तनीयाः ॥ ३१ ॥

जिस ग्रह का जो ग्रह नैसर्गिक मित्र हो तथा तात्कालिक भी मित्र हो तो अधिमित्र होता है । यदि नैसर्गिक सम एवं तात्कालिक मित्र हो तो मित्र होता है । यदि नैसर्गिक रिपु और तात्कालिक मित्र हो तो सम होता है । यदि नैसर्गिक रिपु व तात्कालिक भी रिपु हो तो अधिशत्रु होता है । यदि नैसर्गिक सम और तात्कालिक रिपु हो तो शत्रु होता है । यदि नैसर्गिक मित्र व तात्कालिक शत्रु हो तो सम होता है । इन दोनों (नैसर्गिक-तात्कालिक) प्रकार के विवेचन से जन्मकाल में शत्रुता व मित्रता समझनी चाहिए ॥ ३१ ॥

वृहत्पाराशर में कहा है—'तत्काले च निगर्गे च मित्रं चेदधिमित्रकम् ।
मित्रं मित्रसमत्वे तु शत्रुः शत्रुसमत्वके ॥
समो मित्ररिपुत्वे तु….' (३ अ० ५७-५८ श्लोक) ।

तथा वृहज्जातक में भी (२ अ० १८ श्लोक) ।

एवं सर्वार्थचिन्तामणि में भी–'तत्कालमित्रं तु निसर्गमित्रं द्वयं भवेच्चेदधिमित्रसंज्ञम्…..'
(१ अ० ८९॥-९० श्लोक) ॥ ३१ ॥

ग्रहों की साधारण दृष्टि

संपश्यन्ति[1] स्थानात्सदा ग्रहाश्चरणवृद्धितः सर्वे ।
त्रिदशत्रिकोणचतुरस्रसप्तमानां फलं क्रमेणैव ॥ ३२ ॥

समस्त ग्रह जिन स्थानों में रहते हैं उन-उन स्थानों से ३, १० स्थानों को एक पाद दृष्टि से तथा ५-९ को द्विपाद दृष्टि से, ४-८ को त्रिपाद दृष्टि से और ७वें स्थान को पूर्ण दृष्टि से देखते हैं एवं चरणानुसार फल भी देते हैं ॥ ३२ ॥

---

[1] सव्यं सपश्यन्ति ।

बृहज्जातक में भी कहा है–'त्रिदशत्रिकोणचतुरस्रसप्तमान्यवलोकयन्ति चरणाभिवृद्धितः' (२ अ० १३ श्लोक)।

विशेष पूर्ण दृष्टि

पूर्णं पश्यति रविजस्तृतीयदशमं त्रिकोणमपि जीवः।
चतुरस्रं भूमिसुतो द्यूनं च सितार्कशशिबुधाः क्रमशः॥ ३३॥

शनि ३-१० को, गुरु ५-९ को, भौम ४-८ को तथा शु. सू. चं. बु. ७ वें स्थान को पूर्ण दृष्टि से देखते हैं॥ ३३॥ लघुजातक में कहा है–'पूर्णं पश्यति रविजस्तृतीयदशमे त्रिकोणमपि जीवः चतुरस्रं भूमिसुतः सितार्कबुधहिमकराः कलत्रं हि' (२ अ० १३ श्लोक)॥ ३३॥

विशेष—३, १० स्थान को शनि पूर्ण दृष्टि से क्यों देखता है? उत्तर—इसी अध्याय के ७वें श्लोक में शनि को भृत्य (सेवक) कहा है। भृत्य का कर्तव्य है कि पराक्रम से राज्य की रक्षा करना। ३ स्थान पराक्रम का और १० वाँ राज्य व कर्म स्थान है, इसलिए पराक्रम करना व राज्य की रक्षा कर्म से करने के लिए ही शनि की दृष्टि ३, १० स्थान पर रहती है। सच्चा सेवक अपने कर्तव्य पर सदा आरूढ़ रहता है। एवं गुरु ५-९ को मन्त्री होने के नाते अच्छी शिक्षा व धर्म के रक्षार्थ पूर्ण दृष्टि बनाये रहता है तथा 'सेनापतिः क्षितिसुतः' मंगल को सेनानायक की संज्ञा मिलने के कारण सुख-भूमि, यानादि एवं आयु की रक्षा के लिए ४, ८ को पूर्ण दृष्टि से देखता है। सप्तम स्थान स्त्री का है इसलिए अर्द्धांगिनी की रक्षा करना परम कर्त्तव्य है। इसलिए सब ग्रह सप्तम को पूर्ण दृष्टि से देखते हैं॥ ३३॥

ग्रहों के ४ प्रकार के बल

दिक्स्थानकालचेष्टाकृतं बलं सर्वनिर्णयविधाने।
वक्ष्ये चतुःप्रकारं ग्रहस्तु रिक्तो भवेदबलः॥ ३४॥

समस्त शुभाशुभ फल निर्णय हेतु ग्रहों के दिक्, स्थान, काल, चेष्टा इन ४ बल को मैं ग्रंथकार कहता हूँ। इन चारों बलों से हीन ग्रह निर्बल होता है॥ ३४॥

दिग्बल और स्थानबल

लग्ने जीवबुधौ दिवाकरकुजौ व्योम्नि स्मरे भास्करि-
र्बन्धाविन्दुसितौ दिशाकृतमिदं स्वोच्चे स्वकोणे स्वभे।
मित्रस्वांशकसंस्थितः शुभफलैर्दृष्टो बलीयान्ग्रहः
स्त्रीक्षेत्रे शशिभार्गवौ नरगृहे शेषा बले स्थानजे॥ ३५॥

जन्मलग्न में गुरु और बुध, दशम में सूर्य, व भौम, सप्तम में शनि एवं चतुर्थ भाव में चन्द्र व शुक्र बली होते हैं। इसे दिग्बल कहते हैं। जो ग्रह अपनी उच्च राशि में स्थित हो वा मूलत्रिकोण में, वा अपनी राशि में वा मित्रगृह राशि में वा अपनी नवांश राशि में स्थित हो और शुभ ग्रह से दृष्ट हो तो बलवान् होता है। सम राशि में चन्द्रमा व

शुक्र एवं शेष ग्रह विषम (नर राशि) राशि में बली होते हैं। इसे स्थान बल कहते हैं ॥ ३५ ॥

विशेष—दिग्बल में लग्न को पूर्व, दशम को दक्षिण, सप्तम को पश्चिम और चतुर्थ को उत्तर दिशा समझना चाहिए क्योंकि ग्रंथान्तरों में ऐसा ही विवेचन प्राप्त होता है।

यथा—वृहत्पाराशर में कहा है—'बुधेज्यौ बलिनौ पूर्वे रविभौमौ च दक्षिणे।
पश्चिमे सूर्यपुत्रश्च सितचन्द्रौ तथोत्तरे ॥'
(३ अ० ३५ श्लोक)।

तथा वृहज्जातक में भी—'दिक्षु बुधाङ्गिरसौ रविभौमौ सूर्यसुतः सितशीतकरौ च।'
(२ अ० १९ श्लोक)।

अन्य भी सर्वार्थ चिन्तामणि में—'लग्ने बुधेज्यौ बलिनौ तु पूर्वे....'
(१ अ० १०॥–९१॥ श्लोक)

एवं स्थान बल का भी वर्णन है वृहज्जातक में (२ अ० १९ श्लोक)।
सर्वार्थ चिन्तामणि में भी (१ अ० ९० श्लोक) ॥ ३५ ॥

ग्रहों का काल बल व चेष्टाबल—

जीवार्कास्फुजितोऽह्नि विच्च सततं मन्देन्दुभौमा निशि
होरामासदिनाब्दपाश्च बलिनः सौम्याः सितेऽन्येऽसिते।
संग्रामे जयिनो विलोमगतयः संपूर्णगावो ग्रहाः
सूर्येन्दू पुनरुत्तरेण बलिनौ सत्योक्तचेष्टाबले ॥ ३६ ॥

गुरु, सूर्य, शुक्र दिन में, बुध दिन व रात्रि में अर्थात् सर्वदा, शनि, चन्द्रमा, भौम रात्रि में बली होते हैं। होरा में होरेश, मास में मासेश, दिन में दिनपति, वर्ष में वर्षेश बली होता है। शुल्कपक्ष में शुभ ग्रह, कृष्णपक्ष में पापग्रह बली होते हैं। इसे काल बल कहते हैं।

वृहत्पाराशर में कहा है—'निशायां बलिनश्चन्द्र-कुज-सौरा भवन्ति हि। सर्वदा ज्ञो बली ज्ञेयो दिने शेषा द्विजोत्तम। कृष्णे च बलिनः क्रूराः सौम्या वीर्ययुताः सिते'
(३अ० ३६-३७½ श्लो०)

वृहज्जातक में भी—'निशि शशिकुजसौराः सर्वदा ज्ञो हि चान्ये' (२अ० २१ श्लो०)।

चेष्टाबल—जो ग्रह युद्ध में विजयी हो, जो वक्रगति हो, जिन ग्रहों की किरण सम्पूर्ण हों वे ग्रह बली होते हैं। रवि और चन्द्रमा उत्तरायण में बली होते हैं। यह सत्याचार्य जी के मत से चेष्टाबल है ॥ ३६ ॥

वृहज्जातक में कहा है—'उदगयनेरविशीतमयूखौ....' (२ अ० २० श्लो०) ॥३६॥

ग्रहों का आयन बल—

उत्तरमयनं प्राप्ताः शुक्रकुजार्केन्द्रमन्त्रिणो बलिनः।
याम्यं शशिरविपुत्रौ द्वयेऽपि शशिजः स्ववर्गस्थः ॥ ३७ ॥

उत्तर अयन में शुक्र, मंगल, गुरु, रवि प्राप्त हों तो, चन्द्र, शनि दक्षिणायन में प्राप्त हों तो बली होते हैं। बुध अपने वर्ग में हो तो दोनों अयन में बली होता है ॥३७॥

द्रेष्काण बल

पुं[1]स्त्रीनपुंसकाख्याः क्षेत्रेष्वाद्यन्तमध्यसंप्राप्ताः ।
सूर्यान्निर्गत्य सदा नवोदिता यवनराजमतम् ॥ ३८ ॥

पुरुष ग्रह (मं० गु० सू०) किसी भी राशि के प्रथम द्रेष्काण (१०अं० तक) में, स्त्री ग्रह (चं० शु०) तृतीय द्रेष्काण में, नपुंसक ग्रह (श० बु०) द्वितीय द्रेष्काण में बली होते हैं। सूर्य के सान्निध्य से निकलकर ही ग्रह बली होते हैं ऐसा यवन राज का मत है ॥ ३८ ॥ बृहत्पाराशर में कहा है—आदिमध्यावसानेषु द्रेष्काणेषु स्थिताः क्रमात् । पुंनपुंसकयोषाख्या....(२७अं० ६श्लो०) ॥ ३८ ॥

अथ दिन रात्रि त्रिभाग बल—

प्राग्रात्रिभागेऽतिवलः शशाङ्कः शुक्रो निशार्धेऽवनिजो निशान्ते ।
प्रातर्बुधो मध्यदिने च सूर्यः सर्वत्र जीवोऽर्कसुतो दिनान्ते ॥ ३९ ॥

रात्रि के प्रथम त्रिभाग में चन्द्र, मध्य रात्रि (निशार्धं) में शुक्र, अन्तिम त्रिभाग में मङ्गल बली होता है। एवं दिन के प्रथम त्रिभाग में बुध, द्वितीय में सूर्य, तृतीय भाग में शनि, और गुरु सर्वदा बली होता है ॥ ३९ ॥ बृहत्पाराशर में कहा है। दिनत्र्यंशे तु सौम्यार्कशनीनां....(२१ अं० १२ श्लो०) ॥ ३९ ॥

अथ नैसर्गिक बल—

कृष्णारबुधगुरुसिताः शशिसूर्यावुत्तरोत्तरं बलिनः ।
स्वाभा[2]विकबलमेतद्बलसाम्ये चिन्तयेत्प्राज्ञः ॥ ४० ॥

शनि (कृष्ण) भौम, बुध, गुरु, शुक्र, चन्द्र, सूर्य ये क्रम से उत्तरोत्तर बली होते हैं। अर्थात् शनि से भौम, भौम से बुध इत्यादि। यह स्वाभाविक बल है। यदि अन्य बलों में समता हो तो जिसका स्वाभाविल बल अधिक हो वह बलवान् होता है ॥ ४० ॥ लघुजातक में कहा है—('मन्दारसौम्यवाक्पति-सितचन्द्रार्का यथोत्तरं बलिनः। नैसर्गिकबलमेतद्....' (३अं० १०श्लो०) ॥ ४० ॥

ग्रहों के सात प्रकार के बल—

दिक्[3] स्थान-चेष्टा-क्षण-वक्र दृष्टि स्वाभाविकं सप्तविधं बलं स्यात् ।
तत्स्वप्रकारेण बलं ददाति रिक्तो हि शून्योऽल्यबलोऽल्पवीर्यः ॥ ४१ ॥

दिक्-स्थान-चेष्टादि सात प्रकार के ग्रहों के बल होते हैं। अपने कथित प्रकार से यदि बल प्राप्त हो तो ग्रह बली, होता है। यदि कुछ भी बल प्राप्त न हो तो ग्रह शून्य होता है। अल्प बल में अल्प बली समझना चाहिये ॥ ४१ ॥

ग्रहों की अफलता—

क्रूराहतः शत्रुजितो गतश्च नीचेऽरिभांशेष्वपि दुष्टचेष्टः ।
षष्ठाष्टमे रिष्फगतेऽणुरूक्षो विनाऽधिकारोप्यफलो ग्रहेन्द्र ॥ ४२ ॥

---

[1] पुंस्त्री। [2] साधारण। [3] ४१, ४२ सङ्ख्यक श्लो० संस्कृत वि० वि० सरस्वती भवन की मातृका सं० ३६४७७ में अधिक विद्यमान हैं।

पाप ग्रह से पीड़ित, शत्रु से पराजित, नीच राशिस्थ व नीचांशस्थ, दुष्ट चेष्टा वाला, ६, ८, १२ में, अल्प स्वरूप व रूक्ष ग्रह, विना बल वाला ग्रह, शुभाशुभ फल से रहित होता है ॥ ४२ ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां ग्रहयोनिभेदो
नाम चतुर्थोऽध्यायः ।

पञ्चमोऽध्यायः ।

मिश्रक अध्याय कथन

राशिप्रभेदसंज्ञः कथितो ग्रहयोनिभित्तिरध्यायः ।
सर्वव्यापकमधुना कथयिष्ये मिश्रकं नाम ॥ १ ॥

राशिप्रभेद एवं ग्रहयोंनिभित्ति (भेद) अध्यायों को कहा अब सब जगह व्यापक रूप से विद्यमान मिश्रक नाम के अध्याय को कहता हूँ ॥ १ ॥

ग्रहों की दीप्तादि ९ प्रकार की अवस्था

दीप्तः स्वस्थो मुदितः शान्तः शक्तो निपीडितो[1] भीतः ।
विकलः खलश्च कथितो नवप्रकारो ग्रहो हरिणा ॥ २ ॥

१ दीप्त, २ स्वस्थ, ३ मुदित, ४ शान्त, ५ शक्त, ६ निपीडित, ७ भीत, ८ विकल ९ खल ये ग्रहों की अवस्था हरि ने कही हैं ॥ २ ॥

दीप्तादि का ज्ञान

स्वोच्चे भवति च दीप्तः स्वस्थः स्वगृहे सुहृद्गृहे मुदितः ।
शान्तः शुभवर्गस्थः शक्तः स्फुटकिरणजालश्च ॥ ३ ॥
विकलो रविलुप्तकरो ग्रहाभिभूतो[2] निपीडितश्चैवम् ।
पापगणस्थश्च खलो नीचे भीतः समाख्यातः ॥ ४ ॥

ग्रह अपनी उच्च राशि में दीप्त, अपनी राशि में स्वस्थ, मित्र की राशि में मुदित, शुभग्रह के वर्ग में शान्त, अनस्तङ्गत शक्त, सूर्य की किरणों से अस्त ग्रह विकल, युद्ध में पराजित निपीडित, पापग्रह के वर्ग में खल, और अपनी नीच राशि में ग्रह भीत अवस्था प्राप्त करता है ॥ ३–४ ॥

बृहत्पाराशर में कहा है—'स्वोच्चस्थः खेचरो दीप्तः स्वर्क्षे स्वस्थोऽधिमित्रभे । मुदितो मित्रभे शान्तः समभे दीन उच्यते ॥ ८ ॥ शत्रुभे दुःखित प्रोक्तो विकलः पापसंयुतः । खलः खलगृहे ज्ञेयः कोपी स्यादर्कसंयुतः (४५ अ० ८–९ श्लोक) ॥ ३–४ ॥

विशेष--'बृहत्पाराशर में अधिमित्र के घर में मुदित' मित्र के घर में शान्त इत्यादि विरोध प्रतीत होता है ॥ ३–४ ॥

---

[1] तिपीडितो । [2] तऽ प्रपीडितः ।

दीप्त ग्रह का फल—

दीप्ते विचरति पुरुषः प्रतापविषमाग्निदग्धरिपुवर्गः[1] ।
लक्ष्म्यालिङ्गितदेहो गजमदसंसिक्तभूपृष्ठः ॥ ५ ॥

यदि जन्माङ्ग स्थित ग्रह (जो कोई) दीप्त अवस्था में हो तो वह मनुष्य अपनी प्रताप रूप असह्य अग्नि से शत्रु वर्ग को भस्म कर विचरण करता है, तथा लक्ष्मी से देह आलिङ्गित होता है, अर्थात् समस्त सम्पत्ति सुख प्राप्त होता है। एवं उसके हाथियों के मद से पृथ्वी का ऊपरी भाग भींग जाता है ॥ ५ ॥

स्वस्थ अवस्था में ग्रह का फल—

स्वस्थः करोति जन्मनि रत्नानि सुखानि कनकपरिवारान् ।
नृपतेर्दण्डपतित्वं गृहधान्यकुटुम्बपरिवृद्धिम् ॥ ६ ॥

जन्मकाल में स्वस्थ अवस्था में स्थित ग्रह अनेक सुवर्ण के आभूषण, रत्नादि विविध प्रकार के सुख करता है, और राज्य में न्यायाधीशादि अधिकार व घर में धान्य एवं कुटुम्ब वृद्धि करता है ॥ ६ ॥

मुदित अवस्थागत ग्रह का फल——

मुदिते विलसति मुदितो विलासिनीकनकरत्नपरिपूर्णः ।
विजितसकलारिपक्षः समस्तसुखभाङ् नरो[2] भवति ॥ ७ ॥

यदि मुदित अवस्था में ग्रह हो तो प्रसन्न चित्त होकर विलास करता है। तथा स्त्री सुवर्ण रत्न से पूर्ण, समस्त शत्रु पक्ष को जीतने वाला, समस्त सुखों का भोगकर्त्ता मनुष्य होता है ॥ ७ ॥

शान्त अवस्थागत ग्रह का फल——

शान्ते प्रशान्तचित्तः सुखधनभागी महीपतेः सचिवः ।
विद्वान्परोपकारी धर्मपरो जायते पुरुषः[3] ॥ ८ ॥

यदि शान्त अवस्था में ग्रह हो तो चित्त में अधिक शान्ति, सुख व धन का प्राप्त कर्त्ता, राजा का मन्त्री, मनीषी, दूसरे का उपकार करने वाला धर्मपरायण एवं भाग्यवान् होता है ॥ ८ ॥

शक्त अवस्थागत ग्रह का फल —

स्त्रीवस्त्रमाल्यगन्धैर्विलसति पुरुषः सदा विततकीर्तिः ।
दयितः सर्वजनस्य च शक्ताख्ये भवति विख्यातः ॥ ९ ॥

यदि शक्त अवस्था में ग्रह हो तो जातक स्त्री, वस्त्र, माला, सुगन्धित द्रव्यों से आनन्दित होता है, उस की कीर्ति सदा विस्तृत होती है, और समस्त जनों का प्रिय (प्यारा) व संसार में ख्याति प्राप्त होती है ॥ ९ ॥

पीड़ित अवस्थागत ग्रह का फल——

दुःखैर्व्याधिभिररिभिः प्रपीड्यते[4] पीडिताख्ये तु ।
देशाद्देशं विचरति बन्धुवियोगाभिसंतप्तः ॥ १० ॥

---

[1] निचयः । [2] जनः ख्यातः । [3] सुभगाः । [4] पीडिते सदा पुरुष ।

यदि पीड़ित अवस्था में ग्रह हो तो जातक नाना प्रकार के दुःखों से रोगों से शत्रुओं से पीड़ित होता है, और बन्धुओं के वियोग से दुःखी (संतप्त) होकर देश देशान्तर में विचरण करता है ।। १० ।।

भीत अवस्थागत ग्रह का फल

वहुसाधनोऽपि राजा प्रध्वस्तवलः प्रपीडितो रिपुणा ।
नाशमुपयाति विजितो भीते दैन्यं परं प्राप्तः ।। ११ ।।

यदि भीत अवस्था में ग्रह हो तो बहुत साधनों से युक्त राजा भी शत्रुओं से पीड़ा प्राप्त कर निर्बल और पराजित होकर नाश को प्राप्त होता है या परम दीनता को प्राप्त करता है ।। ११ ।।

विकल अवस्थागत ग्रह का फल

स्वस्थानपरिभ्रष्टः क्लिष्टो मलिनः प्रयाति परदेशम् ।
विध्वस्तवलो[1] विकले रिपुबलसंचकितचित्तश्च ।। १२ ।।

यदि विकल अवस्था में ग्रह हो तो शत्रुबल से चकित चित्त होकर अपने स्थान से पृथक् होता है, और क्लेश होने से मलिन चित्त करके दूसरे देश में जाता है, तथा उसका बल, अथवा धन नष्ट हो जाता है ।। १२ ।।

खल अवस्थागत ग्रह का फल

स्त्रीभरण[2]दुःखतप्तः समस्तधननाशकलुषितमनस्कः ।
न जहाति शोकभारं कथमपि खलसंज्ञिते पुरुषः ।। १३ ।।

यदि खल अवस्था में ग्रह हो तो जातक—स्त्री पुत्रादि पालन में समर्थ न होकर उनके दुःख से दुःखी, सम्पूर्ण धन नाश से कलुषित मनवाला कभी भी अन्तकरण में शोक रूपी भार का त्याग नहीं करता है ।। १३ ।।

उच्च राशि में ग्रह वक्री होने पर विशेष

उच्चराशौ विलोमे च फलं[3] नान्यैरिहेष्यते[4] ।
कालस्यातिबहुत्वाच्च तस्मात्स्वोच्चेऽतिवक्रिते ।। १४ ।।

यदि उच्च राशि में वक्री ग्रह हो तो अन्य आचार्यों के मत में फल नहीं होता, तथा उच्चराशि में अतिवक्र होने प्रर भी काल की अधिकता से फल का अभाव होता है ।। १४ ।।

उच्चादि बल में श्रेष्ठ, मध्य, अल्पबल का कथन

स्वोच्चाश्रिताः श्रेष्ठबला भवन्ति मूलत्रिकोणे स्वगृहे च मध्याः ।
इष्टेक्षिता मित्रगृहाश्रिता वा वीर्यं कनीयः समुपोद्वहन्ति ।। १५ ।।

ग्रह अपनी उच्चराशि में श्रेष्ठ बली, मूलत्रिकोणराशि व अपनी राशि में स्थित हो तो मध्यबली, मित्र ग्रह से दृष्ट वा मित्र की राशि में स्थित हो तो अल्पबली होता है ।। १५ ।।

---

१ धनो। २ हरण। ३ बलं। ३ हंरिष्यते।

चन्द्र बल में श्रेष्ठादि कथन

शुक्लप्रतिपद्दशके मध्यबलः कीर्त्यते यवनवृद्धैः ।
श्रेष्ठो द्वितीयदशके स्वल्पबलश्चन्द्रमास्तृतीये च ॥ १६ ॥

यवनाचार्यों का कथन है कि शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से शुक्ल दशमी तक चन्द्रमा मध्यबली, शुक्ल एकादशी से कृष्णपक्ष की पञ्चमी तक उत्तम बली, और कृष्णपक्ष को षष्ठी से अमावास्या तक अल्पबली होता है ॥ १६ ॥

पूर्णचन्द्र होने पर राजा

आहितकलासमूहः प्रसन्ननिजमण्डलः सुपरिपूर्णः ।
अप्रतिहतमिह कुरुते भूपतिबलमुडुगणाधिपतिः ॥ १७ ॥

यदि जन्माऽङ्ग में चन्द्रमा समस्त किरणों से युत प्रसन्नमण्डल परिपूर्ण हो तो जातक को सामर्थ्यंवान् राजा बना देता है ॥ १७ ॥

आयु मध्य में सुख योग

चन्द्राध्यासितराशेर्नाथो लग्नाधिपोऽपि[1] वा यस्य ।
केन्द्रे सुरगुरुमन्त्री[2] वयसो मध्ये सुखं तस्य ॥ १८ ॥

जिसके जन्मकाल में चन्द्रमा जिस राशि में हो उस राशि का स्वामी लग्नेश भी हो वा गुरु केन्द्र में हो तो उसे आयु के मध्य में पूर्ण सुख होता है ॥ १८ ॥

राशिभेद फल कथन

राशेस्तदीश्वरस्य च बलेन परिकल्प्यमृक्षभेदफलम् ।
युगपत्फलोपलब्धेरवधृतिरेकस्य कर्तव्या ॥ १९ ॥

राशि व राशीश के बल से राशि भेद फल (बल भेद) का ज्ञान कर यदि एकसा दोनों का फल हो तो एक को ग्रहण करना चाहिए ॥ १९ ॥

फल भेद का निर्णय

होराग्रहबलसाम्ये निसर्गजं चिन्तनीयमाचार्यैः ।
[3]लग्नाधिपतेस्तुल्यं बलमिह चूडामणिर्वदति ॥ २० ॥

लग्न (राशि) व ग्रह के बल में समता हो तो नैसर्गिक बल के द्वारा जो बली हो उसके आधार पर फल कहना चाहिये ऐसा मत बहुत आचार्यों का है, किन्तु चूडामणि नामक आचार्य का लग्नेश के बल के समान बली होता है अर्थात् लग्नेश ही बली होता है यह कथन है ॥ २० ॥

कन्यादि राशियों में उच्च मूलत्रिकोण, व स्वगृह के अंश

उच्चबलं कन्यायां बुधस्य तुङ्गांशकैः सदा चिन्त्यम् ।
परतस्त्रिकोणजातं पञ्चभिरंशैः स्वराशिजं परतः ॥ २१ ॥
उच्चं भागत्रितयं वृष इन्दोश्च त्रिकोणमपरेंऽशाः ।
द्वादशभागा मेषे त्रिकोणमपरे स्वभं तु भौमस्य ॥ २२ ॥

---

१. थवा । २. सुरमन्त्री वा । ३. पेन तु ।

दशभागा ईज्यस्य च त्रिकोणमपरे स्वभं चापे।
शुक्रस्य तु त्रिकोणं पञ्चभिरपरे स्वभं जूके॥ २३ ॥
विंशतिरंशाः सिंहे त्रिकोणमपरे स्वभवनमर्कस्य।
कुम्भे त्रिकोणनिजभे रविजस्य यथा रवेः सिंहे॥ २४ ॥

सूर्य की सिंह राशि मूल त्रिकोण व स्वगृह भी है तो सूर्य सिंह में मूल त्रिकोण का फल देगा व अपने घर का (उत्तर) सिंह राशि में १ अंश से २० अंश तक मूलत्रिकोण फल, २१ से ३० अंश तक स्वगृह फल देता है। चन्द्रमा ३ अंश तक उच्च का, ४ से ३० अंश तक मूल त्रिकोण का। भौम मेष में १२ अंश तक मूलत्रिकोण, और १३ से ३० तक अपने घर का। कन्या राशि में बुध १–१५ अंश तक उच्च का १६ अंश से २० तक मूलत्रिकोण का २१ से ३० तक अपने घर का। धनुराशि में गुरु १–१० अंश तक मूलत्रिकोण, ११ से ३० तक स्वभवन का, शुक्र तुला में १–५ अंश तक मूलत्रिकोण का ६ से ३० तक स्वभवन का। शनि कुम्भराशि में उसी प्रकार फल देता है जिस प्रकार सिंह में सूर्य फल देता हैं अर्थात् १–२० अंश तक मूलत्रिकोण और २१ से ३० तक अपने घर का फल देता है॥ २१–२४॥

बृहत्पाराशर में कहा है 'रवेः सिंहे नखांशाश्च त्रिकोणमपरे स्वभम्। उच्चमिन्दोर्वृषे त्र्यंशास्त्रिकोणमपरेऽशकाः•••' (३ अ० ५१–५४ श्लोक) तथा जातकपारिजात में (१ अ० २६ २८ श्लोक) है॥ २१–२४॥

उच्च नीचादि राशिस्थित शुभ ग्रहों के शुभ फल में न्यूनाधिक्य

स्वोच्चस्थितः शुभफलं प्रकरोति पूर्णं
नीचर्क्षगस्तु विफलं रिपुमन्दिरेऽल्पम्।
पादं शुभस्य हितभे स्वगृहे तदर्धं
पादत्रयं गगनगः स्थितवांस्त्रिकोणे॥ २५ ॥

यदि उच्चराशि में ग्रह हो तो शुभ फल पूर्ण, नीच राशि में शुभ फल का अभाव शत्रुराशि में अल्प शुभ फल, मित्र की राशि में चतुर्थांश, अपने घर में आधा, और मूलत्रिकोण राशि में ३ चरण अर्थात् $\frac{3}{4}$ शुभ फल होता है॥ २५॥

बृहत्पाराशर में कहा है—'स्वोच्चे शुभं फलं पूर्णं त्रिकोणे पादवर्जितम्'
(३ अ० ५९–६० श्लोक)

और भी लघुजातक में—'इष्टं पादविवृद्धया मित्रस्वगृहत्रिकोणतुङ्गेषु•••'
(१२ अ० ७ श्लोक)॥ २५॥

नीचादि राशिस्थित पाप ग्रहों के अशुभ फल में न्यूनाधिकता

नीचर्क्षगः सकलमेव करोति पापं
न्यूनं च किंचिदरिभे विफलं स्वतुङ्गे।
पादत्रयं हितगृहे विहगोऽशुभस्य
स्वर्क्षे दलं च चरणं स्थितवांस्त्रिकोणे॥ २६ ॥

नीच राशि में ग्रह होने पर अशुभ फल पूर्ण, शत्रु राशि में पूर्ण अशुभ फल से कुछ कम, उच्च में शून्य, मित्र राशि में ३ चरण ३/४, अपनी राशि में आधा और मूलत्रिकोण में एक चरण १/४ अशुभ फल होता है।। २६ ।।

बृहत्पाराशर में कहा है—'तद्वद्दष्टफलं ब्रूयाद् व्यत्ययेन विचक्षणः' (३ अ० ६० श्लो०)

शुभ फल का अभाव, और अशुभ फल पूर्ण

औत्पातिकाः सवितृलुप्तकरा विरूक्षा
नीचं गता रिपुगृहं च नभश्चरेन्द्राः ।
युद्धे जिताः शुभफलानि विनाशयन्ति
पापानि यानि सुतरां परिवर्धयन्ति ।। २७ ।।

जिन ग्रहों के योग से उत्पात हो, जो सूर्य के साथ अस्त हो, कान्ति हीन हो, नीच राशि वा शत्रु के घर में हो, जो युद्ध में पराजित हो, इन परिस्थितियों में ग्रह का शुभ फल नष्ट होता है तथा पाप (अशुभ) फल निरन्तर बढ़ता है ।। २७ ।।

उच्च, व मूलत्रिकोण बल से युक्त ग्रह फल

उचबलेन समेतः परां विभूतिं ग्रहः प्रसाधयति ।
पुंसामथ साचिव्यं त्रिकोणवलवान् वलपतित्वम् ।। २८ ।।

ग्रह उच्च बल से युक्त हो तो अत्यधिक सम्पत्ति जातक को प्राप्त कराता है। मूलत्रिकोण बल से युक्त ग्रह राजा वा तत्सम व्यक्ति का मन्त्री अथवा सेना-नायक बनाता है ।। २८ ।। बृहज्जातक में कहा है—'जनयति नृपमेकोऽप्युच्चगो·····' (२१ अ० २ श्लो०).

स्वराशि, मित्रराशि और स्वहोरा बल से युक्त ग्रह फल

स्वर्क्षे बलेन सहितः प्रमुदितधनधान्यसंपदाक्रान्तम् ।
मित्रबलेन[1] च युक्तो जनयति कीर्त्यान्वितं पुरुषम् ।। २९ ।।
तेजस्विनमतिसुभगं[2] सुस्थिरविभवं नृपाच्च लब्धधनम् ।
निजहोरावलयुक्तो जनयति विक्रान्तमिति चिन्त्यम् ।। ३० ।।

अपनी राशि के बल से युत ग्रह हो तो प्रसन्नचित्त, धन-धान्य और लक्ष्मी से पूर्ण जातक होता है। मित्र राशि बल से युत ग्रह, हो तो, कीर्तिमान्, तेजस्वी, अत्यन्त सुखी, स्थिरलक्ष्मी और राजा से धनागम करने वाला होता है। स्वहोरा बल से युत ग्रह पराक्रमी बनाता है ।। २९–३० ।।

स्वद्रेष्काण और स्वनवांशबल से युत ग्रह फल

स्वद्रेकाणबलेनाहीनो गुणभाजनं ग्रहः कुरुते ।
स्वनवांशकवलयुक्तः करोति पुरुषं प्रसिद्धं च ।। ३१ ।।

अपने द्रेष्काण बल से युत-ग्रह-गुणवान् अपने नवांशगत बल से युत ग्रह हो तो प्रसिद्ध पुरुष होता है ।। ३१ ।।

---

[1] १—मित्रभबलसंयुक्तो. [2] २—सुखिनं.

सप्तमांश व द्वादशांश बल से युत ग्रह फल

सप्तांशकबलसहितः साहसिकं वित्तकीर्त्याढ्यम् ।
द्विरसांशबलसमेतः कर्मरतपरोपकारकं चैव ॥ ३२ ॥

सप्तमांश बल से युत ग्रह साहसी धनी, कीर्तिमान् बनाता है। द्वादशांश बल से युत ग्रह कर्मठ, परोपकारी बनाता है ॥ ३२ ॥

त्रिशांश बल से युत और शुभग्रह से दृष्ट ग्रह फल

त्रिंशांशबलेन तथा विकसत्सौख्यं गुणान्वितं कुर्यात् ।
शुभदर्शनफल[1]सहितः पुरुषं कुर्याद्धनान्वितं ख्यातम् ।
सुभगं प्रधानमखिलं[2] सुरूपदेहं सुसौख्यं च ॥ ३३ ॥

त्रिंशांश बल से युत ग्रह जातक को विकसित पूर्ण सुखी एवं गुणवान् कर देता है। शुभ ग्रह से दृष्ट ग्रह पुरुष को धनी, प्रख्यात, सुन्दर भाग्यवान्, लोकमान्य, सुन्दर देहधारी, अच्छे सुख से युत करता है ॥ ३३ ॥

पुरुष स्त्री राशि बल से युत ग्रह फल

पुंस्त्रीभवनबलेन च करोति जनपूजितं कलाकुशलम् ।
पुरुषं प्रसन्नचित्तं कल्यं परलोकभीरुं च ॥ ३४ ॥

पुरुष वा स्त्री राशिबल से युत ग्रह संसार में मान्यता, कलाओं में कुशलता, चित्त में प्रसन्नता, (कल्यं=वार्तो निरामयः कल्यः) शरोर में आरोग्यता, परलोक से भयता, पुरुष (जातक) को देता है ॥ ३४ ॥

स्थानबल से युत ग्रह फल

स्थानबलेन समेतः स्थितिसौख्यसुहृच्च भागाढ्यः ।
धीरो निश्चलचित्तः स्वतन्त्रकर्मा भवेन्मनुजः ॥ ३५ ॥

स्थानबल से युत ग्रह जातक को स्थिर व मित्रसुखी, भाग्यवान्, धैर्यवान्, स्थिर चित्त एवं स्वतन्त्र कार्य कर्ता करता है ॥ ३५ ॥

दिग्बल से युत ग्रह फल

आशाबलसमुपेतो नयति स्वदिशं नभश्चरः पुरुषम् ।
नीत्वा वस्त्रविभूषणवाहनसौख्यान्वितं कुरुते ॥ ३६ ॥

दिशाबल से युत ग्रह पुरुष को अपनी दिशा में ले जाता है और वहाँ ले जाकर वस्त्र, भूषण, और वाहन सुख से युत करता है ॥ २६ ॥

अयनबल से यूत ग्रह फल

आयनबलसमुपेतो दद्याद्विविधार्थसङ्गमं स्वदिशि ॥३७॥

अयनबल से युत ग्रह अपनी दिशा में अनेक प्रकार से धनलाभ कराता है ॥३७॥

चेष्टाबल से युत ग्रह फल

क्वचिद्राज्यं क्वचित्पूजां क्वचिद्द्रव्यं क्वचिद्यशः ।
ददाति विहगश्चित्रं [3]चेष्टावीर्यसमन्वितः ॥ ३८ ॥

१–बल. २–ममलं ३–स्पष्टवीर्यं।

चेष्टाबल से युत ग्रह जातक को, कभी राज्य, कभी पूजा, कहीं द्रव्य (धन) कहीं यश, विचित्र फल देता है ॥ ३८ ॥

शुभ पाप वक्र ग्रह फल

वक्रिणस्तु महावीर्याः शुभा राज्यप्रदा ग्रहाः।
पापा व्यसनिनां[1] पुंसां कुर्वन्ति च [2]वृथाटनम् ॥ ३९ ॥

शुभ ग्रह वक्री होकर अति बलवान् होने से राज्य सुख को देते हैं। पापग्रह वक्री होने पर व्यसनी (दुःखदायी) और वृथा (व्यर्थ) घूमने वाला बना देते हैं ॥ ३९ ॥

निष्कंटक राज्यप्रद ग्रह फल

स्वस्थशरीरसमागमसुकरोद्भवजयबलेन विदधाति।
शुभमखिलं विहगेन्द्रो राज्यं च विनिर्जितारातिम् ॥ ४० ॥

यदि ग्रह का निर्मल बिम्ब, या चन्द्र का सान्निध्य हो एवं युद्ध में विजयी हो तो वह ग्रह सम्पूर्ण शुभ फल, और शत्रुओं से न जीतने वाले राज्य को देता है ॥ ४० ॥

दिन रात्रिबल से युत ग्रह फल

रात्रिदिवाबलपूर्णैर्भूगजलाभेन शौर्यपरिवृद्धया।
मलिनयति शत्रुपक्षं भजति च लक्ष्मीं नभश्चरैः पुरुषः ॥ ४१ ॥

रात्रि दिन बल से युत ग्रह, भूमि व हाथी के लाभ से एवं पराक्रम की अधिकता से, शत्रुपक्ष को मलिन अर्थात् जीतकर लक्ष्मी प्राप्त कराता है ॥ ४१ ॥

वर्षेशादि ग्रह फल

द्वि[3]गुणं द्विगुणं दद्युर्वर्षाधिपमासदिवसहोरेशाः।
क्रमपरिवृद्धया सौख्यं स्वदशासु धनं च कीर्तिं च ॥ ४२ ॥

वर्षेश, मासेश, दिवसेश और होरेश अपनी-अपनी दशा में क्रम वृद्धि से दुगना-दुगना सुख, कीर्ति व धन को देते हैं अर्थात् वर्षेश से द्विगुण मासेश, मासेश से द्विगुण दिवसेश, और दिवसेश से द्विगुण होरा स्वामी पूर्वोक्त सुखादि फल देता है ॥ ४२ ॥

पक्षबल से युत ग्रह का फल

पक्षबलाद्रिपुनाशं रत्नाम्बरहस्तिसंपदं दद्युः।
स्त्रीकनकभूमिलाभान्कीर्तिं च शशाङ्ककरधवलाम् ॥ ४३ ॥

पक्षबल से युत ग्रह शत्रु नाश, रत्न, वस्त्र, हाथी (वाहन) आदि सम्पत्ती और स्त्री, सुवर्ण, भूमि का लाभ एवं चन्द्र की किरणों के समान स्वच्छ कीर्ति को देता है ॥ ४३ ॥

समस्त बल से युत ग्रह का फल

सकलकर[4]भारभारितनिर्मलकरजालभासुराः सततम्।
राज्यं ग्रहाः प्रदद्युः सौख्यं च मनोरथा[5]तीतम् ॥ ४४ ॥

जो ग्रह पूर्वोक्त बलों से युत तथा स्वच्छ किरणों के समूह से शोभायमान हो तो जातक की इच्छा से भी अधिक राज्य और सुख को देता है ॥ ४४ ॥

१–व्यसनदः। २–पदाटनं। ३–द्विगुणा। ४–बलभार। ५–मनोरथादधिकं।

बलवान् शुभ ग्रहों का फल

आचारसत्यशुभशौचयुताः सुरूपा-
स्तेजस्विनः कृतिविदो द्विजदेवभक्ताः ।
स्रग्वस्त्रगन्धजलभूषणसंप्रियाश्च
सौम्यग्रहैर्बलयुतैः पुरुषा भवन्ति ॥ ४५ ॥

यदि जन्मकाल में समस्त शुभ ग्रह बलवान् हों तो जातक शुभाचार, सत्य, शुभ पवित्रता से युत सुन्दर स्वरूपवान्, तेजस्वी, कार्यकुशल, ब्राह्मण और देवता का भक्त, माला, वस्त्र, सुगन्धित जल, अलङ्कार में प्रीति करने वाला होता ॥ ४५ ॥

बलवान् पाप ग्रहों का फल

लुब्धाः कुकर्मनिरता निजकार्यनिष्ठाः
साधुद्विषः सकलहाश्च तमोभिभूताः ।
क्रूराः सदा वधरता[1] मलिनाः कृतघ्नाः
पापग्रहैर्बलयुतैः पिशुनाः कुरूपाः ॥ ४६ ॥

जन्मकाल में यदि समग्र पाप ग्रह बलवान् हों तो जातक लोभी, दुष्कर्म में प्रीति, स्वार्थ परायण, सज्जन द्वेषी, कलही, (कलह कर्त्ता), तामसी, क्रूर, हिंसक, मलिन, कृतघ्न, चुगलखोर और कुरुप होता है ॥ ४६ ॥

स्वमित्रादि राशिगत ग्रहों की दशा के नाम

स्वमित्रक्षेत्रसंस्थानां ग्रहाणां बालसंज्ञिका ।
स्वत्रिकोणगतानां च कुमारा नाम संज्ञिता ॥ ४७ ॥
ग्रहाणां स्वोच्चसंस्थानां युवराजाभिधा भवेत् ।
शत्रुक्षेत्रगतानां च वृद्धा नाम तथेरिता ॥ ४८ ॥
नीचगानां ग्रहाणां च दशा मरणसंज्ञिता ।
तत्तत्फलसमायुक्ता ग्रहाणां तु दशा भवेत् ॥ ४९ ॥

जो ग्रह अपने मित्र को राशि में हो उसकी बाला नाम दशा, स्वमूलत्रिकोणस्थ राशि में कुमारी नाम की दशा, अपनी उच्च राशि में ग्रह होने से युवती नाम दशा, अपनी शत्रु राशि में वृद्धा नाम दशा, स्वनीच राशि में ग्रहों की मरण नाम की दशा होती है । स्व-स्व फल से युक्त ग्रहों की दशा होती है ॥ ४७–४९ ॥

बालादि दशा का फल

बा[2]लैः सुखी सुशीलश्च[3] यौवनैर[4]वनीश्वरः ।
वृ[5]द्धैर्व्याधिरृणे वृद्धिर्मरणे मरणं व्ययम् ॥ ५० ॥

बाला दशा में सुख, कुमारी में सुन्दर शीलवान्, युवती में राजा, वृद्धा में रोगभय व ऋण (कर्ज) वृद्धि, मरण में मरण वा अपव्यय (व्यर्थ खर्चा) होता है ॥ ५० ॥

---

१ वधकरा. २ बाले. ३ स्यात्. ४ ने रजनी. ५ वृद्धे.

विषम राशिगत ग्रह फल

पुं[1]राशिगैः शुभखगैर्धीराः सङ्ग्रा[2]मरक्षिणो बलिनः ।
निश्चेष्टैः सुकठोराः क्रूरा मूर्खाश्च जायन्ते ।। ५१ ।।

जन्मकाल में यदि पुरुष (विषम) राशिगत बली ग्रह हों तो धैर्यवान्, लड़ाई की इच्छा करने वाला होता है । यदि विषम राशिगत निर्बल ग्रह हों तो कठोर, क्रूर, मूर्ख होता है ।। ५१ ।।

सम राशिगत ग्रह फल

युवतिभवनस्थितेषु च मृदवः सङ्ग्रामभीरुकाः पुरुषाः ।
जलकुसुमवस्त्रनिरताः सौम्याः कल्याः स्वजनहृष्टाः ।। ५२ ।।

जन्मकाल में यदि स्त्री (सम) राशिगत ग्रह हों तो सरल स्वभाव, लड़ाई से भय, जल-पुष्प वस्त्र में प्रीति, सौम्य, निरामय और अपने जनों का पोषक होता है ।। ५२ ।।

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां मिश्रकाध्यायः पञ्चमः ।।

षष्ठोऽध्यायः

परस्पर कारक ग्रह कथन

स्वर्क्षत्रिकोणतुङ्गस्था यदि केन्द्रेषु संस्थिताः ।
अन्योन्यं कारकास्ते स्युः केन्द्रेष्वेव हरेर्मतम् ।। १ ।।

जन्मकाल में यदि ग्रह अपनी राशि वा मूलत्रिकोण राशि में या अपनी उच्च राशि में स्थित होकर केन्द्र में (१।४।७।१०) विद्यमान हों तो वे परस्पर कारक होते हैं । ऐसा हरि नामक आचार्य का मत है ।। १ ।।

बृहत्पाराशर में कहा है—"स्वर्क्षे स्वोच्चे च मित्रर्क्षे मिथः केन्द्रगता ग्रहाः" (३२ अ० २६ श्लोक)

एवं बृहज्जातक में भी—"स्वर्क्षतुङ्गमूलत्रिकोणगाः कण्टकेषु यावन्त आश्रिताः सर्वं एव तेऽन्योन्यकारका ।" (२२ अ० १ श्लोक) ।। १ ।।

कारक ग्रह का उदाहरण

रवितनयो जूकस्थः कुलीरलग्ने बृहस्पतिहिमांशू ।
मेषे कुजो रवियुतः[3] परस्परं कारका एते ।। २ ।।

कर्क लग्न में गुरु व चन्द्रमा हो, शनि तुला में, मेष में भौम व सूर्य होने से ये परस्पर कारक अर्थात् राज्यप्रद ग्रह होते हैं ।। २ ।।

बृहज्जातक में कहा है—"कर्कटोदयगते यथोडुपे......" (२२ अ० २ श्लोक) ।।

---

[1] पुंराशिषु ग्रहेन्द्रैः. [2] संग्रामकांक्षिणो बलिभिः । [3] गविसितः ।

ग्रन्थ के आधार पर कारक कुण्डली

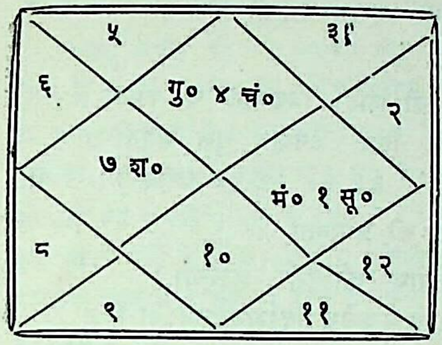

बृहज्जातक के आधार पर कुण्डली

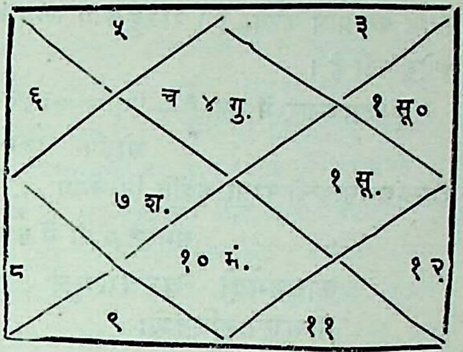

विशेष —यहाँ कर्क लग्न उपलक्षण मात्र है। जातक की कुण्डली में केन्द्र स्थित ग्रह यदि स्वर्क्षादि में स्थित हों तो कारक होते हैं। २ ॥

अन्य कारक ग्रह कथन

तुङ्गसुहृत्स्वगृहांशे स्थिता ग्रहाः कारकाः समाख्याताः।
मेषूरणे च रविरिति विशेषतो वक्ति चाणक्यः ॥ ३ ॥

ग्रह किसी भी भाव में उच्चस्थ या मित्रराशि में वा स्वनवांश में स्थित रहने पर कारक होता है एवं दशम भाव में सूर्य मेष राशि में होने पर विशेष कारक होता है। ऐसा चाणक्य ऋषि कहते हैं ॥ ३ ॥

बृहत्पाराशर में भी कहा है—"कर्मगस्तु विशेषतः" (३२ अ० २६ श्लोक)। ऐसा ही बृहज्जातक में वर्णन है—"कर्मगस्तु तेषां विशेषतः"

(२२ अ० १ श्लोक) ॥ ३ ॥

विशेष—कारक ग्रहों में १० स्थान की विशेषता यह है कि दशम भाव राज्य भाव है। इसलिए स्वोच्चादि स्थित ग्रह दशम भाव में विशेष राजयोग कारक होता है ॥ ३ ॥

अन्य कारक ग्रह कथन

लग्नस्थाः सुखसंस्था दशमस्थाश्चापि कारकाः सर्वे।
एकादशेपि केचिद्वाञ्छन्ति न तन्मतं मुनीन्द्राणाम् ॥ ४ ॥

स्वोच्चादि से भिन्न राशि में ग्रह लग्न चतुर्थ दशम में स्थित हों तो भी कारक होते हैं। किसी आचार्य के मत में एकादश भाव में स्थित ग्रह भो कारक होता है। किन्तु यह मत श्रेष्ठ मुनियों का नहीं हैं ॥ ४ ॥

कारक ग्रह का फल

नीचकुले संभूतः कारकविहगैः प्रधानतां याति।
क्षितिपतिवंशसमुत्थो भवति नरेन्द्रो न सन्देहः ॥ ५ ॥

जिसके जन्मकाल में पूर्वकथित कारक ग्रह हों तो नीच कुल में पैदा होकर भी प्रधान पद प्राप्त करता है। राजकुल में जन्म होने पर निश्चय ही राजा होता है। इसमें सन्देह नहीं है।

बृहत्पाराशर में कहा है—"नीचान्वयेऽपि यो जातः विद्यमाने च कारके।
सोऽपि राजसमो विप्र धनवान् सुख संयुतः॥
राजवंशसमुत्पन्नो राजा भवति निश्चयम्........" (३२ अ० २९-३० श्लोक)॥ ५॥

समस्त योगों में कारक की प्रधानता

कारकभेदो बलवान्मूलं योगेषु कीर्तितो हरिणा।
तस्मात्फलनिर्देशः कारकवेधादिभिर्वाच्यः॥ ६॥

समस्त योगों में कारक भेद ही बलवान् होता है। ऐसा हरि नामक आचार्य का कथन है। इसलिए कारक भेद से फलादेश करना चाहिए॥ ६॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां कारकाध्यायः षष्ठः॥

सप्तमोऽध्यायः

वारेशादि कथन

रविचन्द्रभौमबुधजीवशुक्रसौरा दिनादिपतयश्च[1]।
मासे चाश्वयुजादौ दिनेश्वरोऽब्दे दिनपतेश्च॥ १॥

सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि ये दिनादि के स्वामी होते हैं। आश्विनादि वर्ष व मास में प्रथम वार (सूर्यादि) जो होता है वही वर्षेश व मासेश होता है॥ १॥

विशेष--प्रथम वार सूर्य का, द्वितीय चन्द्रमा का, तृतीय भौम का इत्यादि। यहाँ यह शंका होती है कि सूर्य के बाद चन्द्रमा ही क्यों? गुरु क्यों नहीं?

उत्तर—आकाश में सबसे ऊपर शनि की कक्षा है, तदनन्तर क्रम से गुरु, मंगल, सूर्य, शुक्र, बुध, चन्द्रमा की कक्षा हैं। सूर्य सिद्धान्त में कहा है कि "मन्दादधः क्रमेण स्युश्चतुर्था दिवसाधिपाः" (१२ अ० ७८ श्लोक)। इस युक्ति से शनि से चतुर्थ सूर्य, सूर्य से चतुर्थ चन्द्रमा, चन्द्रमा से चतुर्थ भौम इत्यादि सात वार होते हैं। ये ही सात वार वर्षेश, मासेश, वारेश (दिनस्वामी) व होरेश होते हैं। वर्षारम्भ में जो सूर्यादि वार हो वही वर्षेश, मासारम्भ में जो वार हो वह मासेश एवं प्रथम होरारम्भ में भी जो वार हो वही होरेश होता है॥ १॥

प्रथम वर्षेश व होरेश से द्वितीयादि तथा अभीष्ट दिन में (मास मध्य में) वारेश कथन—

अब्दाधिपाश्चतुर्थाः क्रमेण षष्ठास्तु कालहोरेशाः।
द्विर्द्वादशहोराः स्युर्दिवसास्त्कीदिकास्त्रिशत्॥ २॥

---

[1] दिनाब्दपतयस्तु

मासास्त्रिशद्गुणिता गतर्दिनैः सप्तभाजिता दिवसाः ।
अब्दाधिपाः प्रगण्या गतैर्दिनाद्यैः प्रयत्नतस्तु स्युः ॥ ३ ॥

प्रथम वर्षेश दिन से चतुर्थ ग्रह (सूर्य-चन्द्रादि वार क्रम से) द्वितीय वर्षेश होता है। पुनः द्वितीय से चतुर्थ तृतीय वर्षेश होता है। इसी प्रकार अग्रिम वर्षेश का ज्ञान भी होता है। एक अहोरात्र में २४ घंटा होते हैं। १ घंटा=१ होरा=२½ घटी। इसलिए ६० घटी=१ अहोरात्र। इन २४ होरा स्वामियों का ज्ञान प्रथम होरा स्वामी से छटे-छटे ग्रह (वार) क्रम से होता है। प्रथम से षष्ठ-द्वितीय, द्वितीय से षष्ठ-तृतीय, इस प्रकार आगे भी। ३० सूर्यादि (सावन) दिन का १ मास होता है। इसलिए जिस मास के मध्य में वारेश का ज्ञान करना हो वहाँ तक चैत्र शुक्लादि से गत मास संख्या को तीस से गुणा करके गत दिन संख्या जोड़कर ७ का भाग देने पर जो शेष हो वह सूर्यादि क्रम से दिन का स्वामी (वारेश) होता है एवं गत दिनादि से वर्षेश का ज्ञान प्रयत्न से करना चाहिए ॥ २–३ ॥

विशेष—शुभ अथवा अशुभ फल ज्ञान के लिये समय के चार भेद होते हैं—१ होरा-२ अहोरात्र (दिन रात्रि), ३ मास, ४ वर्ष। इन चारों में सूक्ष्म होरा है। क्रम वार चारों का उदाहरण—

वर्ष स्वामी जानने का उदाहरण—यदि प्रथम वर्ष का स्वामी मंगल है तो द्वितीय वर्ष का स्वामी कौन होगा। उत्तर। मङ्गल से चतुर्थ शुक्र है इसलिये द्वितीय वर्ष का शुक्र हुआ। एवं शुक्र से चतुर्थ चन्द्र है यह तृतीय वर्ष का स्वामी हुआ इसी प्रकार आगे भी। इसकी उपपत्ति इस प्रकार से है। १ वर्ष में ३६० दिन होते हैं। अतः द्वितीय वर्षारम्भ में ३६१ दिन होंगे ३६१ में ७ का भाग देने पर ५१ लब्धि व शेष ४ आता है। इस कारण से द्वितीय वर्षेश चतुर्थ ग्रह (वार) निश्चित हुआ।

मास स्वामी जानने का उदाहरण— माना यदि प्रथम मास का स्वामी मंगल है तो छटे मास का स्वामी कौन होगा। उत्तर। गत मास संख्या ५ को ३० से गुना करने पर १५० हुआ इसमें षष्ठ मास प्रथम दिन सङ्ख्या १ जोड़कर ७ का भाग देने पर २१ लब्धि व ४ शेष बचा, इसलिये मंगल से चतुर्थ शुक्र छठे मास का स्वामी हुआ।

होरा स्वामी जानने का उदाहरण—मंगलवार के दिन चतुर्थ होरा का स्वामी कौन होगा। उत्तर। मंगलवार के दिन प्रथम होरा मंगल की द्वितीय मंगल से छटी सूर्य की सूर्य से छटी शुक्र की तृतीय होरा और शुक्र से छटी होरा बुध की अतः चतुर्थ होरा स्वामी बुध हुआ।

'सूर्य सिद्धान्त में कहा है, 'होरेशाः सूर्यतनयादधोऽधः क्रमशस्तथा' (१२ अ० ७९ श्लो०) ॥ २–३ ॥

सौर व, चान्द्रमास कथन

एकस्त्रिंशद्भागैर्युक्तश्चैत्रादीनां ग्रहादीनाम् ।
क्रमशो विज्ञातव्या शुक्लप्रतिपत्प्रसंख्यायाम् ॥ ४ ॥

तीस अंश का १ सौर मास होता है। चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से चान्द्रमास ३० तिथि का होता है। मेष के सूर्य में जो चान्द्र मास होता है उसकी चैत्र संज्ञा होती हैं, वृष में वैशाख इस प्रकार आगे भी जानना चाहिये ॥ ४ ॥

भावोक्त कर्म करने का समय

यस्य ग्रहस्य भावो यस्तस्य गृहे प्रशस्यते कर्म ।
तस्मिंश्चोपचयस्थे तस्मिंल्लग्ने गृहे चास्य ॥ ५ ॥
यत्कर्मग्रहदिवसे तदेव होराब्दमासकालेषु ।
पादविवृद्ध्या वा स्यात्तेषां कालस्य संपाकः ॥ ६ ॥

जिस ग्रह का जो भाव हो अर्थात् जो ग्रह जिस भाव का स्वामी हो उस भाव के कर्म उस ग्रह की राशि में ग्रह रहने पर, या भावेश राशि से उपचय राशि में ग्रह रहने पर, उसी राशि के लग्न में, उसी के दिन (वार ', होरा, वर्ष, मास में भावजन्य कर्म प्रशस्त होते हैं। किन्तु वर्षेश, मासेश, दिवसेश, होरेश के काल में चरण वृद्धि से भावोक्त कर्म की सिद्धि होती है ॥ ५–६ ॥

सूर्य के विषय

व्यालोर्णकशै[1]लसुवर्णशस्त्रविषदहनभेषजनृपाश्च ।
म्लेच्छाब्धितारकान्तारकाष्ठमन्त्रप्रभुः सूर्यः ॥ ७ ॥

सर्प, ऊन, पर्वत, सुवर्ण, शस्त्र, विष (जहर), अग्नि, औषधि, राजा, म्लेच्छ, समुद्र, तार (मोती वा रजत), वन, काष्ठ, और मन्त्र का स्वामी सूर्य है ॥ ७ ॥

चन्द्रमा के विषय

कवि[2]कुसुमभोज्यमणिरजतशंखलवणोदकेषु वस्त्राणाम् ।
भूषणनारीघृततिलतैलकनिद्राप्रभुश्चन्द्रः ॥ ८ ॥

कविता, फूल, खाने के पदार्थ, मणि, चाँदी, शङ्ख, क्षारजल, वस्त्र, भूषण (अलङ्कार) स्त्री, घी, तिल, तेल, और निद्रा का स्वामी चन्द्रमा है ॥ ८ ॥

मङ्गल के विषय

रक्तोत्पलताम्रसुवर्णरुधिरपारदमनः शिलाद्यानाम् ।
क्षितिनृपतिपतनमूर्च्छापैत्तिकचोरप्रभुर्भौमः ॥ ९ ॥

लाल कमल, ताँवा, सोना, रुधिर (खून), पारा, मन, शिला (पत्थर), भूमि, राजा, पतन, मूर्च्छा, पित्त, और चोर का स्वामी भौम है ॥ ९ ॥

बुध के विषय

श्रुतिलिखितशिल्पवैद्यकनैपुणमन्त्रित्वदूतहास्यानाम् ।
खगयुग्मख्यातिवनस्पतिस्वर्णमयप्रभुः सौम्यः ॥ १० ॥

वेद, लेख, कारीगरी, आयुर्वेद, निपुणता, मन्त्री, दूत, हास्य (हँसना), पक्षी; यमल, ख्याति, वनस्पति, और सुवर्ण का स्वामी बुध है ॥ १० ॥

---

१. व्यालोत्कर्णकशै । २. अपिकुसुम ।

गुरू के विषय

माङ्गल्यधर्मपौष्टिकमहत्वशिक्षानियोगपुरराष्ट्रम् ।
यानासनशयनसुवर्णधान्यवेश्मपुत्रपो जीवः ॥ ११ ॥

शुभ कर्म, धर्म, पौष्टिक (पुष्टता), महत्ता, शिक्षा, गर्भाधान, नगर, राष्ट्र, सवारी, आसन, शय्या, सुवर्ण, अन्न, गृह और पुत्र का स्वामी गुरु है ॥ ११ ॥

शुक्र के विषय

वज्रमणिरत्नभूषणविवाहगन्धेष्टमाल्ययुवतीनाम् ।
गोमयनिदानविद्यानिधुवनरजतप्रभुः शुक्रः ॥ १२ ॥

हीरा, मणि, रत्न भूषण, विवाह, गन्ध, मित्र, माला, स्त्री, गोबर, निदान (निर्णय), विद्या, सुरत, चांदी का स्वामी शुक्र है ॥ १२ ॥

शनि के विषय

त्रपुसीसकलोहककुधान्यमृतबन्धुमन्दभृतकानाम् ।
नीचस्त्रीपण्यकदासदीनदीक्षाप्रभुः सौरिः ॥ १३ ॥

रांगा, सीसा, लोहा, कुत्सित अन्न, मृतबन्धु, मूर्ख, नौकर, नीच, स्त्री, विक्रयवस्तु, दास, दीन, और दीक्षा का स्वामी शनि है ॥ १३ ॥

ग्रहों के देश

अर्कः कलिङ्गविषये यवनेषु च चन्द्रमाः ।
शुक्रः समतटे जातः सैन्धवेषु बृहस्पतिः ॥ १४ ॥
मगधेषु बुधो जातः सौराष्ट्रेषु शनैश्चरः ।
अङ्गारकस्तूज्जयिन्यां राहुः केतुश्च द्राविडे ॥ १५ ॥

सूर्य का कलिङ्ग, चन्द्र का यवन, शुक्र का समानतल, गुरू का सिन्धु, बुध का मगध, शनैश्चर का सौराष्ट्र, भौम का उज्जैन, और राहु केतु का द्रविण देश है ।१४-१५।

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां कारकाध्यायः सप्तमः ।

अष्टमोऽध्यायः

आधानाध्याय का कथन

राश्यादिफलविभागः कस्य विधेयो विना समुत्पत्तेः[1] ।
आधानमथो[2] वक्ष्ये कारणभूतं समस्तजन्तूनाम् ॥ १ ॥

राशि आदि (होरा, द्रेष्काणादि वर्ग) के फलों का विभाजन उत्पत्ति (जन्म) काल के विना किसका कौन समझ सकता है, इसलिये समस्त जीवों के कारण भूत मैं कल्याण वर्मा आधानाध्याय (निषेकाध्याय) को कहता हूँ ॥ १ ॥

---

१. समुत्पत्तिम् । २. मतो ।

गर्भाधानयोग्य रजो दर्शन कथन

अनुपचयराशिसंस्थे कुमुदाकरबान्धवे रुधिरदृष्टे ।
प्रतिमासं युवतीनां भवतीह रजो ब्रुवन्त्येके ॥ २ ॥

स्त्री की जन्म राशि से चन्द्रमा जब अनुपचय राशि में अर्थात् राशि से १।२।४।५।७।८।९।१२ इन स्थानों में हो और गोचर में स्थित मंगल की चन्द्रमा पर पूर्ण दृष्टि रहने पर प्रति मास स्त्री को मासिक धर्म होता है। ऐसा बहुत आचार्यों का कथन है।२।

बृहज्जातक में कहा है—'कुजेन्दुहेतुप्रतिमासमार्तवं गते तु········' (४ अ. १ श्लो०)

रजो दर्शन कारण

इन्दुर्जलं कुजोऽग्निर्जलमसृगथवाग्निरेव पित्तं स्यात् ।
एवं रक्ते[1] हीने पित्तेन रजः प्रवर्तते स्त्रीषु ॥ ३ ॥

स्त्रियों को प्रत्येक मास में योनि से तीन दिन तक रुधिर बहता है। उसी को रजो दर्शन कहते हैं। उस रजो दर्शन का कारण चन्द्रमा और मङ्गल है। क्योंकि जलमय चन्द्रमा, और अग्निमय मङ्गल है। इसलिये जल से रुधिर और अग्नि से पित्त उत्पन्न होता है। जब पित्त के द्वारा रुधिर (खून) में हलचल होती है तो स्त्रियों को मासिक धर्म होता है ॥ ३ ॥

गर्भाधान में अक्षम रजो दर्शन

एवं यद्भवति रजो गर्भस्य निमित्तमेव कथितं[2] तत् ।
उपचयसंस्थे विफलं[3] प्रतिमासं दर्शनं तस्य ॥ ४ ॥

इस प्रकार जो प्रत्येक मास, स्त्रियों को मासिक धर्म होता है वही गर्भ का कारण है। यदि स्त्री की राशि से ३।६।१०।११ वें चन्द्रमा हो तो वह मासिक धर्म निष्फल होता है, अर्थात् गर्भधारण की क्षमता उस रजो दर्शन में नहीं होती ॥ ४ ॥

स्त्री पुरुष संयोग कथन

उपचयभवने शशभृद् दृष्टो गुरुणा सुहृद्भिरथवासौ ।
पुंसा करोति योगं विशेषतः शुक्रसंदृष्टः ॥ ५ ॥

पुरुष की राशि से उपचय (३।६।१०।११) राशि में चन्द्रमा हो और उसपर गुरु की या अपने मित्र गृह की विशेष कर शुक्र की दृष्टि रहने पर यदि स्त्री पुरुष संयोग होता है तो गर्भ अवश्य होगा ॥ ५ ॥

बृहज्जातक में कहा है—'अतोऽन्यथास्थे शुभपुंग्रहेक्षिते नरेण संयोगमुपैति कामिनी' (४ अ० १ श्लो०)

इसकी भट्टोत्पल टीका में बादरायण का भी स्पष्ट वाक्य इस प्रकार से है—

'पुरुषोपचयगृहस्थो गुरुणा यदि दृश्यते हिममयूखः ।
स्त्रीपुरुषसंप्रयोगं तदा वदेदन्यथा नैव' ॥ ५ ॥

---

१. क्षुभिते । २. विहितं । ३. विपुलं ।

विशेष—तीन दिन तक रजोदर्शन गर्भ धारण करने में समर्थ नहीं होता है तथा धर्मशास्त्र में त्याज्य भी है। 'भर्तुः स्पृश्या चतुर्थेऽह्नि' चतुर्थ दिन भी निषेक के योग्य नहीं होता। कहा है 'नाद्याश्चतस्रोऽत्र निषेकयोग्या' इसलिये ५वें दिन से १६वें दिन तक ही निषेक का समय होने से इसी में पुरुष स्त्री की राशि से चन्द्रमा को पूर्वोक्त रीति से जानकर निषेक करने पर सन्तान अवश्य होती है। किन्तु 'न वन्ध्या वृद्धातुराल्पवयसामपि चैतदिष्टम् ॥ ५ ॥

अन्य पुरुष संयोग कथन

चन्द्रे कुजेन दृष्टे पुष्पवती सह विटेन संयोगम्।
राजपुरुषेण रविणा रविजेनाप्नोति भृत्येन ॥ ६ ॥
एकैकेन फलं स्याद्दृष्टे नान्यैः कुजादिभिः पापैः।
सर्वैः स्वगृहं त्यक्त्वा गच्छति वेश्यापदं युवतिः ॥ ७ ॥

यदि उपचयस्थ चन्द्रमा रजोदर्शन के समय मंगल से दृष्ट हो तो धूर्त पुरुष से, सूर्य से दृष्ट हो तो राजपुरुष से, शनि से दृष्ट हो तो नौकर से स्त्री का संयोग होता है। इस प्रकार एक-एक पाप ग्रह से दृष्ट हो और अन्य (शुभ ग्रह) से अदृष्ट होने पर पूर्वोक्त फल समझना चाहिये। यदि भौमादि सब पाप ग्रहों की दृष्टि चन्द्रमा पर हो तो वह स्त्री घर का परित्याग करके वेश्या हो जाती है ॥ ६–७ ॥

वृहज्जातक की निषेकाध्याय के प्रथम श्लोक की भट्टोत्पली टीका में मणित्य नामक आचार्य के वचन भी इस प्रकार हैं—

'ऋतु विरमे स्नातायां यद्युपचयसंस्थितः शशी भवति। बलिना गुरुणा दृष्टो भर्त्रा सह संगमश्च तदा। राजपुरुषेण रविणा विटेन भौमेन वीक्षिते चन्द्रे। सौम्येन चपलमतिना भृगुणा कान्तेन रूपवता। भृत्येन सूर्यपुत्रेणायाति स्त्रीसङ्गमंहि तदा। एकैकेन फलं स्याद् दृष्टे नान्यैः कुजादिभिः पापैः। (सर्वैः) स्वगृहं त्यक्त्वा गच्छति वेश्यापदं युवतिः ॥६–७॥

सम्भोग ज्ञान प्रकार

द्विपदादयो विलग्नात्सुरतं कुर्वन्ति सप्तमे यद्वत्।
तद्वत्स्त्रीपुरुषाणां गर्भाधाने समादेश्यम् ॥ ८ ॥
अस्तेऽशुभयुतदृष्टे[1] सरोषकलहं भवेद्ग्राम्यम्।
सौम्यं सौम्यैः सुरतं वात्स्यायनसंप्रयोगिकाख्यातम् ॥ ९ ॥
तत्र शुभाशुभमिश्रैः कर्मभिरधिवासिता विषयवृत्तिः।
गर्भावासे निपतति संयोगे शुक्रशोणितयोः ॥ १० ॥

गर्भाधान कालिक अथवा प्रश्न कालिक लग्न से सप्तमभाव स्थित द्विपदादि राशि जिस रीति से संभोग करता है अर्थात् यदि सप्तम में द्विपद राशि हो तो द्विपद की तरह, चतुष्पद हो तो चतुष्पद की तरह स्त्री पुरुष के सम्भोग को कहना चाहिये। यदि सप्तम-भाव पर पाप ग्रह की दृष्टि या स्थिति हो तो असमाजिक क्रोध व लड़ाई के साथ, यदि

---

[1] दृष्टियुते।

शुभ ग्रह से युत दृष्ट सप्तमभाव हो तो कामशास्त्र की रीति से शान्ति पूर्वक हासादि से युत, यदि शुभ पाप दोनों की दृष्टि या युति हो तो शुक्र (वीर्य) शोणित (रज) संयुक्त गर्भावास (बच्चेदानी) में कर्मानुकल विषय वृत्ति पतित होती है ॥ ८–१० ॥

बृहज्जातक में कहा है 'यथास्तराशिर्मिथुनं समेति तथैव वाच्यो'
(४ अ० २ श्लोक) ॥ ८–१० ॥

विशेष—द्विपदादि राशियों का वर्णन पूर्व में हो चुका है। यदि सप्तम में मेष राशि हो तो बकरा की तरह, वृष हो तो बैल की तरह इस प्रकार आगे भी ॥ ८–१० ॥

गर्भ सम्भव योग

उपचयगौ रविशुक्रौ बलिनौ पुंसः [1]स्वमंशकं प्राप्तौ ।
युवतेर्वा कुजचन्द्रौ यदा तदा गर्भसंभवो भवति ॥ ११ ॥

यदि गर्भाधान के समय पुरुष की राशि से उपचय (३।६।१०।११) राशि में अपने-अपने नवांश में स्थित बलवान् सूर्य व शुक्र हों अथवा स्त्री की राशि से उपचय राशि में मंगल व चन्द्रमा अपने-अपने नवांश में हों तो गर्भस्थिति की संभावना होती है ॥ ११ ॥

लघु जातक में कहा भी है—'बलयुक्तौ स्वगृहांशेष्वर्कसितावुपचयर्क्षौं पुंसाम् । स्त्रीणां वा कुजचन्द्रौ यदा तदा गर्भं संभवो भवति' (५ अ० ८ श्लोक ॥ ११ ॥

विशेष—इस श्लोक के द्वितीय चरण में प्रकाशित पुस्तकों में 'समांश-संप्राप्तौ' यह पाठ प्राप्त होता है। ग्रन्थान्तर से इसकी संगति अलब्ध है। तथा संस्कृत वि० वि० के सरस्वती भवन ग्रन्थागार के ग्रन्थाङ्क सं० ३६४७७ में जो पाठ प्राप्त हुआ है वही यहाँ दिया गया है। यह पाठान्तर ग्रन्थान्तर से भी समता रखता है ॥ ११ ॥

अन्य प्रकारान्त

शुक्रार्कभौमशशिभिः स्वांशोपचयस्थितैः सुरेड्ये वा ।
[2]धर्मोदयात्मजस्थे बलवति गर्भस्य संभवो भवति ॥ १२ ॥

गर्भ है या नहीं इसके जानने का पुनः प्रकारान्त—प्रश्न कालिक लग्न से अथवा आधान लग्न से यदि शुक्र, सूर्य, भौम, चन्द्रमा स्वनवांश में स्थित होकर उपचय राशि में हों अथवा बलवान् बृहस्पति यदि नवम, लग्न, या पञ्चम में स्थित हो तो गर्भ का संभव होता है अर्थात् गर्भ है ऐसा जानना चाहिये ॥ १२ ॥

बृहज्जातक में कहा है—'रवीन्दुशुक्रावनिजैः स्वभागगैर्गुरौ त्रिकोणोदयसंस्थितेऽपि वा' (४ अ० ३ श्लोक) ॥ १२ ॥

विशेष—पूर्वोक्त योग नपुंसक को निष्फल होते हैं। जैसे अंधे को चन्द्रमा की किरणों की शोभा विफल होती है ॥ १२ ॥

---

[1] समांशसंप्राप्तौ ।

[2] धर्मेथवात्मजे वा ।

गर्भस्थित का स्वरूप

मिथुनस्य मनोभावो यादृङ्मदलालसं भवति।
श्लेष्मादिभिः स्वदोषैस्तत्तुल्यगुणो निषिक्तः स्यात् ॥ १३ ॥

आधान काल में स्त्री पुरुष की जैसी मन की भावना, जिस प्रकार की इच्छा, कफ वातादि दोष से युत होती है तदनुरूप गुण दोष से युत गर्भस्थ बालक होता है ॥ १३ ॥

गर्भ में पुत्र और कन्या का ज्ञान

विषमे विषमांशगता होराशशिजीवभास्करा बलिनः।
कुर्वन्ति जन्म पुंसां समे[1] समांशे तु[2] युवतीनाम् ॥ १४ ॥

यदि आधान काल में अथवा प्रश्न काल में बलवान् लग्न, चन्द्रमा, गुरु, सूर्य विषम राशि में व विषम राशि के नवांश में हों तो पुत्र का जन्म, यदि पूर्वोक्त लग्न चन्द्रादि सम राशि व सम राशि के नवांश में हों तो कन्या का जन्म कहना चाहिए ॥ १४ ॥

लघु जातक में कहा है—'विषमर्क्षे विषमांशे संस्थिताश्च गुरुशशाङ्कलग्नार्काः। पुञ्जन्मकराः समभेषु' (५ अ० ११ श्लोक)।

तथा वृहज्जातक में भी—'ओजर्क्षे पुरुषांशकेषु बलिभिर्लग्नार्कगुर्विन्दुभिः'। पुंजन्म प्रवदेत्' (४ अ० ११ श्लोक) ॥ १४ ॥

अन्य प्रकार

ओजर्क्षे गुरुसूर्यौ बलिनौ पुंसः समे सितेन्दुकुजाः।
कन्यानां जन्मकरा गर्भाधाने स्थिता बलिनः ॥ १५ ॥

यदि बलवान् गुरु सूर्य विषम राशि में हों तो पुरुष का जन्म, यदि सम राशिस्थ बलवान् शुक्र, चन्द्रमा, भौम हों तो कन्या का जन्म कहना चाहिए ॥ १५ ॥

लघुजातक में कहा है—'बलिनौ विषमेर्कगुरू नरं स्त्रियं समगृहे कुजेन्दुसिताः'
(५ अ० ११ श्लोक)।

तथा वृहज्जातक में भी—'गुर्वर्कौ विषमे नरं शशिसितौ वक्रश्च युग्मे स्त्रियम्'
(४ अ० ११ श्लोक) ॥ १५ ॥

गर्भ में यमल योग

मिथुने चापेऽर्कगुरू बुधदृष्टौ दारकद्वयं कुरुतः।
स्त्रीयुग्मं कन्यायां सितशशिभौमा झषे च बुधदृष्टाः ॥ १६ ॥

यदि प्रश्न काल में अथवा गर्भाधान काल में मिथुन राशि में या धनु राशि में गुरु, सूर्य हों और बुध से दृष्ट हों तो दो पुत्र का, यदि शुक्र, चन्द्र, मंगल कन्या या मीन में बुध से दृष्ट हों तो दो कन्या का जन्म कहना चाहिए ॥ १६ ॥

वृहज्जातक में कहा है—'द्व्यङ्गस्था बुधवीक्षणाच्च यमलौ कुर्वन्ति पक्षे स्वके'।
(४ अ० ११ श्लोक) ॥ १६ ॥

---

[1] समा। [2] युवती नरजन्म।

पुनः पुत्र जन्म योग

लग्नं मुक्त्वा विषमे शनैश्चरः पुरुष[1]जन्मदो भवति।
योगे विहगस्य बलं संवीक्ष्य वदेन्नरं स्त्रियं वाऽपि ॥ १७ ॥

लग्न का त्याग करके यदि शनि विषम (३।५।७।९।११) भाव में हो तो पुरुष का जन्म कहना चाहिए। आधान काल में अथवा प्रश्न काल में ग्रह के बल को देखकर ही पुत्र या कन्या का जन्म कहना चाहिए ॥ १७ ॥

बृहज्जातक में कहा है—'विहाय लग्नं विषमर्क्षसंस्थः सौरोऽपि पुंजन्मकरो विलग्नात् प्रोक्तग्रहाणामवलोक्य वीर्यं' (४ अ० १२ श्लोक) ॥ १७ ॥

एवं लघुजातक में भी कहा है--(५ अ० १२ श्लोक)

नपुंसक जन्म योग कथन—

अन्योन्यं रविचन्द्रौ विषमर्क्षगतौ निरीक्षेते।
इन्दुजरविपुत्रौ वा दृष्टौ बलिनौ नपुंसकं कुरुतः ॥ १८ ॥
पश्यति वक्रः समभे सूर्यं चन्द्रोदयौ[2] च विषमर्क्षे।
यद्येवं गर्भस्थः क्लीबो मुनिभिः समादिष्टः[3] ॥ १९ ॥
ओजसमराशिसंस्थौ ज्ञेन्दू षण्ढं कुजेक्षितौ कुरुतः।
नरभे विषमनवांशे होरेन्दुबुधाः सितार्किदृष्टा वा ॥ २० ॥

प्रश्न अथवा आधान समय में यदि बलवान् विषम राशिगत सूर्य और चन्द्रमा परस्पर दृष्ट हों अर्थात् सूर्य चन्द्रमा को देखता हो और चन्द्रमा सूर्य को देखता हो तो गर्भ में नपुंसक का जन्म कहना चाहिये। यह एक योग है। यदि विषम राशिगत बली शनी और बुध परस्पर में दृष्टि सम्बन्ध रखते हों तो द्वितीय योग। यदि विषम राशिगत भौम समराशिगत सूर्य को देखता हो तो तृतीय योग। यदि समराशिगत मङ्गल, विषम राशिस्थ लग्न और चन्द्रमा को देखता हो तो चतुर्थ योग। यदि विषम राशिस्थ बुध, व समराशिस्थ चन्द्रमा को मंगल देखता हो तो पञ्चम योग। अथवा यदि विषम राशि में विषमराशि के नवांश में लग्न, चन्द्रमा, बुध हों और उन पर शुक्र शनि की दृष्टि हो तो भी नपुंसक का जन्म कहना चाहिए। यह छठा योग है ॥१८–२०॥

बृहज्जातक में कहा है—'अन्योन्यं यदि पश्यतः शशिरवी यदार्किसौम्यावपि वक्रो वा समगं....' (४ अ० १३ श्लो०)। इनका विचार जन्माङ्ग में भी करना चाहिये ॥ १८-२० ॥

विशेष—यहाँ पर ग्रन्थकार की उक्ति युक्ति सङ्गत प्रतीत होती है। क्योंकि बृहज्जातक में सूर्य चन्द्रमा को समविषम राशिगत कहकर योग का वर्णन किया है किन्तु पूर्ण दृष्टि वहाँ पर सूर्य चन्द्रमा में सिद्ध नहीं होती है पाद दृष्टि के बल पर ही योग बन सकता है। पाद दृष्टि से योग में न्यूनता आती है। पूर्ण दृष्टि तो सूर्य चन्द्रमा की सप्तम

---

१ पुत्र। २ दये। ३ स्तदा दृष्टः।

पर होती है। इसलिये परस्पर में समराशिस्थ अथवा विषम राशिस्थ सूर्य चन्द्रमा सिद्ध होते हैं। विद्वान् लोग इसका विचार करें ॥ १८–२० ॥

प्रकारान्तर से यमल योग—

लग्ने समराशिगते चन्द्रे च निरीक्षिते बलयुतेन।
गगनसदा वक्तव्यं मिथुनं गर्भस्थितं नित्य[1]म् ॥ २१ ॥
समराशौ शशिसितयोर्विषमे गुरुवक्रसौम्यलग्नेषु।
द्विशरीरे वा बलिषु प्रवदेत् स्त्रीपुरुषमत्रैव ॥ २२ ॥

यदि लग्न व चन्द्रमा समराशिगत हों और बलवान् ग्रह से दृष्ट हों तो गर्भ में यमल (दो) का जन्म कहना चाहिये। यदि समराशिस्थ चन्द्रमा व शुक्र हों तथा विषम राशिस्थ अथवा द्विस्वभाव राशिस्थ बली गुरु, भौम, बुध व लग्न हों तो भी यमल १ स्त्री १ पुरुष का जन्म कहना चाहिये ॥२१–२२॥

वृहज्जातक में कहा है—'युग्मे चन्द्रसितौ तथौजभवने स्युर्ज्ञारजीवोदया, लग्नेन्दूनृनिरीक्षितौ च समगौ युग्मेषु वा प्राणिनः।' (४ अ० ०४ श्लो०) ॥२१–२२॥

विशेष—यहाँ २१वें श्लोक में बलवान् ग्रह से दृष्ट कहा है किन्तु बृहज्जातक में पुरुष ग्रह से दृष्ट होने पर योग का वर्णन है। संस्कृत वि० वि० की पुस्तक में इसका (२१ वें श्लोक का) पाठान्तर इस प्रकार है।

'लग्ने समराशिगते चन्द्रेण निरक्षिते बलयुतेन।
गणितविदा वक्तव्यं मिथुनं गर्भस्थितं नूनम् ॥

अर्थ—यदि समराशि का लग्न हो और बली चन्द्रमा लग्न को देखता हो तो ज्योतिषो को गर्भ में दो बालक हैं ऐसा कहना चाहिये। इस पद्य के आगे सं० वि० वि० की पुस्तक में—

लग्नेन्दू समराशौ पुंग्रहदृष्टौ च मिथुनजन्मकरौ।
उदयज्ञवक्रगुरवो बलिनः समराशिगास्तथैवोक्ताः।' यह श्लोक अधिक प्राप्त होता है। यह 'लग्नेन्दूनृनिरीक्षितौ च समगौ, इत्यादि बृहज्जातकोक्त के अनुरूप ही है। किन्तु प्रकाशित ग्रन्थों में उपलब्ध नहीं होता है। उत्पलाचार्य जी ने अपनी बृहज्जातक (४ अ० १४ श्लो०) की टीका में श्लोक का पूर्वार्धं 'लग्नेन्दू वा समगौ पुंग्रहदृष्टौ च मिथुनजन्मकरौ' इस प्रकार से उद्धृत किया है। श्लोक का उत्तरार्धं समान है।२१-२२।

गर्भ में तीन बालकों के जन्म का योग

द्विशरीरांशकयुक्तान् ग्रहान् विलग्नं च पश्यतीन्दुसुते।
मिथुनांशे कन्यैका द्वौ पुरुषौ त्रित[2]यमेवं स्यात् ॥२३॥
[3]द्विशरीरांशकयुक्तान् ग्रहान् विलग्नं च पश्यतीन्दुसुते।
कन्यांशे द्वे कन्ये पुरुषश्च निषिच्यते [4]गर्भे ॥२४॥
[5]मिथुनधनुरंशगतान् ग्रहान् विलग्नं च पश्यतीन्दुसुतः।
मिथुनांशस्थश्च यदा पुरुषत्रितयं तदा गर्भे ॥२५॥

---

[1] नूनं [2] नियत। [3] श्लोकार्द्धं पुनरुक्त है। [4] गर्भः। [5] नृमिथुनधन।

कन्यामीनां[1]शस्थान् विहगानुदयं च युवतिभागगतः ।
पश्यति शिशिरगुतनयः कन्यात्रितयं तदा गर्भे[2] ॥२६॥

यदि द्विस्वभाव राशि के नवमांश में ग्रह व लग्न हों और मिथुन राशि के नवांश में स्थित बुध, लग्न व ग्रहों को देखता हो तो गर्भ में १ कन्या व दो पुत्र, यदि कन्या राशि के नवांश में स्थित बुध, पूर्वोक्त स्थिति में स्थित ग्रह व लग्न को देखता हो तो गर्भ में २ कन्या एक पुत्र कहना (समझना) चाहिये । यदि मिथुन व धनु राशि के नवांश में ग्रह व लग्न हों और मिथुन राशि के नवांश में स्थित बुध लग्न व ग्रहों को देखता हो तो गर्भ में तीन पुरुष ही समझना । यदि कन्या व मीन राशि के नवांश में लग्न व ग्रह हों और कन्या राशि के नवमांश में स्थित बुध देखता हो तो गर्भ में तीन कन्या कहनी चाहिये अर्थात् तीनों कन्या होती हैं ॥२३–२६॥

बृहज्जातक में कहा है 'ग्रहोदयगताद्द्व्यंगांशकान्पश्यति । स्वांशे ज्ञे त्रितयं ज्ञगांशकवशाद् युग्मं त्वमिश्रैः समम्' (४ अ० १४ श्लो०) ॥ २३–२६ ॥

माता-पिता-मौसी-चाचा ग्रह

दिवसे मातापितरौ शुक्ररवी शशिशनी निशायां च ।
मातृभगिनीपितृव्यौ विपर्ययात् कीर्तितौ यवनैः ॥२७॥

यदि दिन में गर्भाधान हो तो शुक्र की माता और सूर्य की पिता, यदि रात्रि में गर्भाधान हो तो चन्द्रमा की माता और शनि की पिता संज्ञा होती है । इसके विपरीत अर्थात् रात्रि के ग्रह दिन में और दिन के रात्रि में मौसी चाचा संज्ञक होते हैं । यथा यदि दिन में गर्भाधान हो तो चन्द्रमा की मौसी और शनि की चाचा, यदि रात्रि में गर्भाधान हो तो शुक्र की मौसी और रवि की चाचा संज्ञा होती है ॥२७॥

बृहज्जातक में कहा है 'दिवार्कशुक्रौ पितृमातृसंज्ञितौ शनैश्चरेन्दू निशि तद्विपर्ययात् । पितृव्यमातृष्वसृसंज्ञितौ च ' (४ अ० ५ श्लो ॥२७॥

इन संज्ञाओं का प्रयोजन

लग्नाद्विषमर्क्षगतः पितुः पितृव्यस्य खेचरः शस्तः ।
मातृ[3]भगिनीजनन्योः समगृहगोऽन्ये तथा भेषु ॥२८॥

यदि पिता व चाचा (पितृव्य) ग्रह लग्न (आधान, प्रश्न, जन्म) से विषम राशि में हो तो उनके लिये शुभ अर्थात् सुखकारक होते हैं । तथा माता व मौसी संज्ञक ग्रह लग्न से समराशिगत हों तो माता व मौसी के लिये सुख कारक होते हैं ॥२८॥

बृहज्जातक में कहा है 'तावथौजयुग्मर्क्षगतौ तयोः शुभौ' (४ अ० ५ श्लो० का ४ पाद ॥२८॥

गर्भाधान के अनन्तर प्रत्येक मास में गर्भ का स्वरूप

मासेष्वाधानादिषु गर्भस्य यथा क्रमेण जायन्ते ।
सप्तसु कलिलाण्डकशाखास्थित्वग्रोमचेतनताः ॥२९॥

---

[1] गतान् । [2] गर्भः । [3]. जननीभगिन्योः ।

मासेऽष्टमे च तृष्णा क्षुधा च नवमे तथोद्वेगः।
दशमें त्वथ[1] संपूर्णः पक्वमिव फलं पतति गर्भः ॥३०॥

आधान काल से ७ मास तक क्रम से गर्भ का रूप—प्रथम मास में कलल (शुक्र शोणित संमिश्रण)। २ य में पिण्ड, ३ य में शाखा (हस्तादि अवयव जन्म), ४ र्थं में अस्थि (हड्डी), ५ म में त्वचा (चर्म), ६ वें में रोम, ७ म में चेतनता, होती है। ८ म में प्यास भूख (माता की खाई हुई वस्तु का भोजन), ९ म में उद्वेग (चलना), १०वें मास में पूर्ण होकर पके हुए फल के समान गिरता है अर्थात् गर्भ से बालक बाहर आता है ॥२९-३०॥

वृहज्जातक में कहा है 'कललघनाङ्कुरास्थि चर्माङ्गजचेतनाः' (४ अ० १६ श्लो०) ॥२९–३०॥

गर्भ के १० मासों के स्वामी

शुक्रारजीवरविशशिसौरिबुधविलग्नपोडुपादित्याः ।
मासपतयः स्युरेतैर्गर्भस्य शुभाशुभं चिन्त्यम् ॥ ३१ ॥

१ म का शुक्र, २ य का भौम, ३ य का गुरु, ४ र्थं का सूर्य, ५ म का चन्द्रमा, षष्ठ का शनि, ७ म का बुध, ८ म का लग्नेश, ९ म का चन्द्रमा, १०वें मास का सूर्य स्वामी होता है। इन मासेशों के शुभाशुभत्व से गर्भ की शुभता वा अशुभता का विचार करना चाहिये ॥ ३० ॥

वृहज्जातक में कहा है—'सितकुजजीवसूर्य ''शुभाशुभं च मासाधिपतेः सदृशम्'। (४ अ० १६ श्लो०) ॥३०॥

गर्भपात योग

उत्पातक्रूरहते तस्मात् स्वस्याधिपे पतति गर्भः।
लग्नगृहं वा हेतुर्योगोऽसौ[2] गर्भपतनस्य ॥ ३२ ॥
अथवा निषेककाले विलग्नसंस्थौ यदा रुधिरमन्दौ।
तद्गृहगतेऽथवेन्दौ तदीक्षिते वा पतति गर्भः ॥ ३३ ॥

यदि गर्भाधान समय में जो ग्रह दिव्यान्तरिक्षादि उत्पात से हत या पापग्रह से पराजित हो तो उस ग्रह के मास में गर्भपतन होता है। अथवा लग्न राशि गर्भपतन का कारण होता है। अथवा आधान कालिक लग्न में शनि मंगल हों अथवा शनि मंगल की राशि (१०।११।१।८) में चन्द्रमा हो अथवा शनि मंगल से दृष्ट चन्द्रमा हो तो गर्भ का पतन होता है ॥ ३२–३३ ॥

वृहज्जातक में कहा है—'मासाधिपतौ निपीडिते तत्कालं स्रवणं समादिशेत्' (४ अ० ९ श्लो०) ॥ ३२–३३ ॥

गर्भपुष्टि ज्ञान

होरेन्दुयुतैः सौम्यैस्त्रिकोणजायार्थखाम्बुसंस्थैर्वा ।
पापैस्त्रिलाभयातैः सुखी च गर्भो निरीक्षिते रविणा ॥ ३४ ॥

---

[1] तथातिपूर्णः। [2] योगेशो।

यदि आधान कालिक वा प्रश्नकालिक होरा 'होरेति लग्नं' अर्थात् लग्न में शुभग्रह हों या चन्द्रमा शुभ ग्रह से युत हो अथवा लग्न वा चन्द्रमा से ९।५।७।२।१०।४ इन भावों में शुभग्रह हों, तथा ३।११ भाव में पाप हों ग्रह लग्न वा चन्द्रमा पर सूर्य की दृष्टि हो तो प्रसव पर्यन्त गर्भ सुखी रहता है ॥ ३४ ॥

बृहज्जातक में कहा 'शशाङ्कलग्नोपगतैः शुभग्रहैस्त्रिकोणजायार्थसुखास्पदस्थितैः। तृतीयलाभक्षंगतैश्च पापकै····' (४ अ० १० श्लो०) ॥ ३४ ॥

गर्भ सहित गर्भवती मरण ज्ञान

क्रूरान्तःस्थः सूर्यश्चन्द्रो वा युगपदेव मरणाय।
सौम्यैरदृष्टमूर्तिर्युवतीनां गर्भसहितानाम् ॥ ३५ ॥

यदि आधान समय में सूर्य या चन्द्रमा पाप ग्रह के मध्य में हो और उन पर शुभ ग्रह की दृष्टि का अभाव हो तो गर्भ सहित गर्भवती का मरण होता है ॥ ३५ ॥

विशेष—आचार्य वराह मिहिर ने लग्न व चन्द्रमा को पापग्रह के मध्य में रहने पर सगर्भा स्त्री का मरण योग कहा है। यहाँ सूर्य व चन्द्रमा को पापद्वय मध्य में अरिष्ट कारक कहा है। सूर्य पिता कारक है। इसलिए पितृ कारक ग्रह पाप मध्य में रहने पर सगर्भा को अरिष्ट कथन युक्तसङ्गत प्रतीत नहीं होता है। आचार्य वराह ने कहा है 'पापद्वयमध्यसंस्थितौ लग्नेन्दू न च सौम्यवीक्षितौ' (४ अ० ७ श्लोक)। विद्वान् लोग विचार करें ॥ ३५ ॥

अन्य प्रकारान्तर

उदयास्तगतैः पापैः सौम्यैरनवेक्षितैश्च मरणं स्यात्।
उदयस्थितेऽर्कजे वा क्षीणेन्दौ भौमसंदृष्टे ॥ ३६ ॥

यदि आधान समय में लग्न व सप्तम भाव में पाप ग्रह शुभ ग्रहों से अदृष्ट हों तो सगर्भा का मरण, अथवा लग्न में शनि हो और उस पर क्षीण चन्द्रमा व भौम की दृष्टि हो तो गर्भवती का मरण होता है ॥ ३६ ॥

बृहज्जातक में कहा—'उदयराशिसहिते च यमे स्त्री विगलितोडुपतिभूसुतदृष्टे'
(४ अ० ६ श्लोक) ॥ ३६ ॥

पुनः अन्य प्रकारान्तर

व्ययगेऽर्के [1]शशिनि कृशे पाताले लोहिते सगर्भा स्त्री।
म्रियते तस्मिन्नथवा शुक्रे पापद्वयान्तःस्थे ॥ ३७ ॥
चन्द्रचतुर्थैः क्रूरैर्विलग्नतो वा विपद्यते गर्भः।
होराद्यूने क्षितिजे म्रियते गर्भः सह जनन्या ॥ ३८ ॥
हिबुकगते धरणिसुते रिःफगतेऽर्के क्षपाकरे क्षीणे।
[2]गर्भेण सह म्रियते पापग्रहदर्शनं प्राप्ते ॥ ३९ ॥

---

१ च शशिनि कृशे. २ सहगर्भा स्त्री.

लग्ने रविसंयुक्ते क्षीणेन्दौ वा कुजेऽथवा म्रियते ।
व्ययधनसंस्थैः पापैस्तथैव सौम्यग्रहादृष्टैः ॥ ४० ॥
जामित्रे [1]रवियुक्ते लग्नगते वा कुजे निषिक्तस्य ।
गर्भस्य भवति मरणं शस्त्रच्छेदैः सह जनन्या ॥ ४१ ॥

यदि द्वादश भाव में सूर्य या क्षीण चन्द्रमा हो और भौम चतुर्थ भाव में हो, अथवा दो पापग्रह के बीच में शुक्र हो तो गर्भवती का गर्भ के साथ मरण होता है। चन्द्रमा या लग्न से चतुर्थ भाव में पापग्रह हों तो गर्भ नष्ट होता है। लग्न से सप्तम में भौम हो तो गर्भ के साथ गर्भवती का मरण होता है।

चतुर्थ भाव में मंगल हो तथा बारहवें भाव में सूर्य व क्षीण चन्द्रमा हो उन पर पाप ग्रह की दृष्टि हो तो सगर्भा का मरण होना है। लग्न में सूर्य हो वा चन्द्रमा क्षीण हो अथवा लग्न में भौम हो १२ व २ भावों में पाप ग्रह शुभग्रह से अदृष्ट हों तो भी गर्भवती का मरण होता है। सप्तम भाव में सूर्य हो और लग्न में मंगल हो तो शस्त्र के द्वारा (आपरेशन से) सगर्भा का मरण होता है ॥ ३७-४१ ॥

वृहज्जातक में कहा है—'क्रूरे शशिनश्चतुर्थगे लग्नाद्वा निधनाश्रिते कुजे। बन्ध्वन्त्यगयोः कुजार्कयोः क्षीणेन्दौ निधनाय पूर्ववत्' (४ अ० ८ श्लोक)। 'उदयास्तगयोः कुजार्कयोर्निधनं शस्त्रकृतं बदेत्तथा' (४ अ० ९ श्लोक) ॥ ३७-४१ ॥

गर्भ वृद्धि योगज्ञान

वलिभिर्बुधगुरुशुक्रैर्दृष्टेऽर्केण च विबर्धते गर्भः ।
मासाधिपबलतुल्यैस्तैस्तैः संयुज्यते भावैः ॥ ४२ ॥
मासि तृतीये स्त्रीणां दौहदकं[2] जायते तथाऽवश्यम् ।
मासाधिपस्वभावैर्विलग्नयोगादिभिश्चान्यत् ॥ ४३ ॥

गर्भाधान कालिक लग्न पर यदि बली बुध, गुरु, शुक्र और सूर्य की दृष्टि हो तो गर्भ वढ़ता है अर्थात् गर्भ का पतन नहीं होता। एवं प्रत्येक मास में मास स्वामी के बलानुसार मासेश के स्वभाव व गुणों से युत गर्भ होता है। गर्भवती स्त्री को तीसरे महीने में निश्चय दोहद (खान-पान की इच्छा) होता है। वह (दोहद) मास स्वामी के स्वभाव से व लग्न योगादि से भी जानना चाहिए ॥ ४२-४३ ॥

गर्भ समय से प्रसव मास ज्ञान

निषेककाले चरराशिगेऽर्के गर्भप्रसूतिर्दशमे च[3] मासे ।
एकादशे च स्थिरराशिसंस्थे स्याद्द्वादशे मास्युभयाश्रिते च ॥ ४४ ॥
गर्भाधाने चरे राशौ दशमासैः प्रसूयते ।
स्थिरेणैकादशे मासे उभये द्वादशे [4]भवः ॥ ४५ ॥

---

[1] जामित्रगेऽर्कदृष्टे. [2] दौहृदको. [3] दशमेऽथ. [4] सवः.

यदि आधान समय में सूर्य चर राशि में हो तो दशम मास में, स्थिर राशि में सूर्य हो तो ग्यारहवें मास में, द्विस्वभाव राशिस्थ सूर्य हो तो बारहवें मास में प्रसव होता है। अब चन्द्रमा के संचार से प्रसव का वर्णन—यदि गर्भाधान के समय चन्द्रमा चर राशि में हो तो दशम मास में, स्थिर राशिगत हो तो ग्यारहवें मास में, द्विस्वभाव राशि में होने पर बारहवें मास में प्रसव होता है ।। ४४–४५ ।।

विशेष—४४, ४५ श्लोक सं. वि. वि. की मातृका में नहीं हैं ।। ४४–४५ ।।

अन्य प्रकार से प्रसवज्ञान

गर्भप्रसवविधानं तात्कालिकलग्नवर्गतश्चि[1]न्त्यम् ।
आधा[2]नाज्जन्मर्क्षं दशमं वाञ्छन्ति केचिदाचार्याः ।। ४६ ।।
आधानोदयशशिनोः सप्तमभं बादरायणो ब्रूते ।
तस्मान्नैकान्तोऽयं सर्वेषां संमतं वक्ष्ये ।। ४७ ।।

गर्भ से प्रसव का ज्ञान गर्भाधान कालिक लग्न के होरादि षड्वर्ग से करना चाहिये। आधान राशि से दशवीं जन्म राशि होती है ऐसा मत किसी-किसी आचार्य का है। बादरायणाचार्य का मत है कि आधान लग्न से सप्तम जन्म लग्न व आधान राशि से सप्तम जन्म राशि होती है। इसलिये इस कथन में मतैक्य न होने के कारण मैं (ग्रन्थकार) सर्वसम्मत मत को कहता हूँ ।। ४६-४७ ।।

सर्वसम्मत से जन्म राशि ज्ञान

यस्मिन् द्वादशभागे गर्भाधाने स्थितो निशानाथः ।
तत्तुल्यर्क्षे प्रसवं गर्भस्य समादिशेत्प्राज्ञः ।। ४८ ।।

गर्भाधान समय में चन्द्रमा जिस राशि के द्वादशांश में हो उस राशि से आगे द्वादशांश संख्या तुल्य राशि में चन्द्रमा के होने पर संभव मास में विद्वान् लोगों को प्रसव का आदेश करना चाहिये ।। ४८ ।। बृहज्जातक में कहा है—

'तत्कालमिन्दुसहितो द्विरसांशको यस्तत्तुल्यराशिसहिते पुरतः शशाङ्के'
(४अ० २१ लो०)

और भी इस (तत्काल०) श्लोक की उत्पल टीका में गार्गि का वचन—'यावत्संख्ये द्वादशांशे शीतरश्मिर्व्यवस्थितः। तत्संख्यो यस्ततो राशिर्जन्मेन्दौ तद्गते भवेत्' ।। ४८ ।।

तीन वर्ष के बाद व बारह वर्ष के बाद प्रसव योग

लग्ने शनैश्चरांशे शनैश्चरे द्यूनगे यदि निषेकः ।
वर्षत्रयेण सूतिर्द्वादशभिः स्याच्छशिनि चैवम् ।। ४९ ।।

यदि आधान कालिक लग्न में शनि का नवमांश हो व शनि सप्तम भाव में हो तो तीन वर्ष में प्रसव होता है। यदि चन्द्रमा का नवमांश लग्न में हो और सप्तम भावगत चन्द्र हो तो बारहवें वर्ष में प्रसव होता है ।। ४९ ।।

---

[1] लग्नवच्चिन्त्यम्. [2] आधानजन्मऋक्ष, आधाने जन्मर्क्षं.

बृहज्जातक में कहा है —

'उदयति मृदुभांशे सप्तमस्थे च मन्दे यदि भवति निषेकः सूतिरब्दत्रयेण । शशिनि तु विधिरेष द्वादशाब्देऽपि कुर्यात्' (४च० २२ श्लो०) ॥ ४९ ॥

प्रसव के दिन, रात्रि काल का ज्ञान

तात्कालिकदिवसनिशासंज्ञः समुदेति राशिभागो यः ।
यावानुदयस्तावान् वाच्यो दिवसस्य रात्रेर्वा ॥ ५० ॥

गर्भाधान कालिक लग्न दिन संज्ञक या रात्रि संज्ञक जो हो उस राशि के जितने अंश उदित हों अर्थात् भुक्त हों उतना हो दिन या रात्रि व्यतीत होने पर प्रसव कहना चाहिये ॥ ५० ॥ बृहज्जातक में कहा है—

'यावानुदेति दिनरात्रिसमानभागस्तावद्गते दिननिशोः प्रवदन्ति जन्म' (४ अ० २१ श्लो०) ॥ ५० ॥

विशेष—'तत्कालमिन्दु स०' इसकी उत्पल टीका में यह श्लोक इस प्रकार से है—

'तत्कालदिवसनिशासंज्ञः समुदेति राशिभागो यः यावानुदयस्ता....' । सं० वि०वि० की मातृका में केवल 'समुदयति' यह पाठान्तर है ॥ ५० ॥

प्रसव के लग्नादि का विचार

मुनिभागे दिवसनिशोर्जन्मनि लग्नं वदेद्युक्त्या ।
उदयगणात् प्रसवः स्याद्दिनपक्षमुहूर्तमाससंज्ञर्क्षात् ॥ ५१ ॥
इत्याधाने प्रथमं प्रसूतिकालं सुनिश्चितं कृत्वा ।
जातकविहितं च[1] विधिं विचिन्तयेत्तत्र गणितज्ञः ॥ ५२ ॥

पूर्व श्लोक से दिन रात्रि ज्ञान करके जन्म के समय में होरादि षड्वर्ग में स्थित लग्नका ज्ञान युक्ति से कहना चाहिये । इस प्रकार उदय (लग्न) समुदाय (षड्वर्गादि) से दिन (वासर) पक्ष मुहूर्त मास संज्ञक राशि में प्रसव होता है ।

इस प्रकार आधान समय में प्रथम प्रसव समय का निश्चय करके ज्योतिषी को जातकोक्त फलादेश का विचार करना चाहिये ॥ ५०—५२ ॥

विशेष—दिन पक्षादि का ज्ञान चतुर्थाध्याय के १७वें श्लोक में किया है ॥५०-५२॥

नेत्र हीन योग ज्ञान

स्यातां यद्याधाने रविशशिनौ सिंहराशिगौ लग्ने ।
दृष्टौ कुजसौरिभ्यां जात्यन्धः संभवति तत्र ॥ ५३ ॥
आग्नेयसौम्यदृष्टौ रविशशिनौ बुद्बुदेक्षणं कुरुतः ।
नयनविनाशोऽपि यथा तथाधुना संप्रवक्ष्यामि ॥ ५४ ॥

यदि गर्भाधान कालिक सिंह लग्न में सूर्य व चन्द्रमा हों और उनपर मङ्गल व शनि की दृष्टि हो तो जातक अन्धा होकर जन्म लेता है । यदि सूर्य चन्द्रमा, मङ्गल व

---

[1] च ततो.

यदि आधान समय में सूर्य चर राशि में हो तो दशम मास में, स्थिर राशि में सूर्य हो तो ग्यारहवें मास में, द्विस्वभाव राशिस्थ सूर्य हो तो बारहवें मास में प्रसव होता है। अब चन्द्रमा के संचार से प्रसव का वर्णन--यदि गर्भाधान के समय चन्द्रमा चर राशि में हो तो दशम मास में, स्थिर राशिगत हो तो ग्यारहवें मास में, द्विस्वभाव राशि में होने पर बारहवें मास में प्रसव होता है ।। ४४–४५ ।।

विशेष—४४, ४५ श्लोक सं. वि. वि. की मातृका में नहीं हैं ।। ४४–४५ ।।

अन्य प्रकार से प्रसवज्ञान

गर्भप्रसवविधानं तात्कालिकलग्नवर्गतश्चि[1]न्त्यम् ।
आधा[2]नाज्जन्मर्क्षं दशमं वाञ्छन्ति केचिदाचार्याः ।। ४६ ।।
आधानोदयशशिनोः सप्तमभं वादरायणो ब्रूते ।
तस्मान्नैकान्तोऽयं सर्वेषां संमतं वक्ष्ये ।। ४७ ।।

गर्भ से प्रसव का ज्ञान गर्भाधान कालिक लग्न के होरादि षड्वर्ग से करना चाहिये। आधान राशि से दशवीं जन्म राशि होती है ऐसा मत किसी-किसी आचार्य का है। वादरायणाचार्य का मत है कि आधान लग्न से सप्तम जन्म लग्न व आधान राशि से सप्तम जन्म राशि होती है। इसलिये इस कथन में मतैक्य न होने के कारण मैं (ग्रन्थकार) सर्वसम्मत मत को कहता हूँ ।। ४६-४७ ।।

सर्वसम्मत से जन्म राशि ज्ञान

यस्मिन् द्वादशभागे गर्भाधाने स्थितो निशानाथः ।
तत्तुल्यर्क्षे प्रसवं गर्भस्य समादिशेत्प्राज्ञः ।। ४८ ।।

गर्भाधान समय में चन्द्रमा जिस राशि के द्वादशांश में हो उस राशि से आगे द्वादशांश संख्या तुल्य राशि में चन्द्रमा के होने पर संभव मास में विद्वान् लोगों को प्रसव का आदेश करना चाहिये ।। ४८ ।। बृहज्जातक में कहा है—

'तत्कालमिन्दुसहितो द्विरसांशको यस्तत्तुल्यराशिसहिते पुरतः शशाङ्के'

(४अ० २१ लो०)

और भी इस (तत्काल०) श्लोक की उत्पल टीका में गार्गि का वचन—'यावत्संख्ये द्वादशांशे शीतरश्मिर्व्यवस्थितः । तत्संख्यो यस्ततो राशिर्जन्मेन्दौ तद्गते भवेत्' ।। ४८ ।।

तीन वर्ष के बाद व बारह वर्ष के बाद प्रसव योग

लग्ने शनैश्चरांशे शनैश्चरे द्यूनगे यदि निषेकः ।
वर्षत्रयेण सूतिर्द्वादशभिः स्याच्छशिनि चैवम् ।। ४९ ।।

यदि आधान कालिक लग्न में शनि का नवमांश हो व शनि सप्तम भाव में हो तो तीन वर्ष में प्रसव होता है। यदि चन्द्रमा का नवमांश लग्न में हो और सप्तम भावगत चन्द्र हो तो बारहवें वर्ष में प्रसव होता है ।। ४९ ।।

---

१ लग्नवच्चिन्त्यम्. २ आधानजन्मऋक्ष, आधाने जन्मर्क्षं.

बृहज्जातक में कहा है —

'उदयति मृदुभांशे सप्तमस्थे च मन्दे यदि भवति निषेकः सूतिरब्दत्रयेण । शशिनि तु विधिरेष द्वादशाब्देऽपि कुर्यात्' (४ अ० २२ श्लो०) ॥ ४९ ॥

प्रसव के दिन, रात्रि काल का ज्ञान

तात्कालिकदिवसनिशासंज्ञः समुदेति राशिभागो यः ।
यावानुदयस्तावान् वाच्यो दिवसस्य रात्रेर्वा ॥ ५० ॥

गर्भाधान कालिक लग्न दिन संज्ञक या रात्रि संज्ञक जो हो उस राशि के जितने अंश उदित हों अर्थात् भुक्त हों उतना ही दिन या रात्रि व्यतीत होने पर प्रसव कहना चाहिये ॥ ५० ॥ बृहज्जातक में कहा है—

'यावानुदेति दिनरात्रिसमानभागस्तावद्गते दिननिशोः प्रवदन्ति जन्म' (४ अ० २१ श्लो०) ॥ ५० ॥

विशेष—'तत्कालमिन्दु स०' इसकी उत्पल टीका में यह श्लोक इस प्रकार से है—

'तत्कालदिवसनिशासंज्ञः समुदेति राशिभागो यः यावानुदयस्ता....' । सं० वि० वि० की मातृका में केवल 'समुदयति' यह पाठान्तर है ॥ ५० ॥

प्रसव के लग्नादि का विचार

मुनिभागे दिवसनिशोर्जन्मनि लग्नं वदेद्युक्त्या ।
उदयगणात् प्रसवः स्याद्दिनपक्षमुहूर्तमाससंज्ञर्क्षात् ॥ ५१ ॥
इत्याधाने प्रथमं प्रसूतिकालं सुनिश्चितं कृत्वा ।
जातकविहितं च[1] विधिं विचिन्तयेत्तत्र गणितज्ञः ॥ ५२ ॥

पूर्व श्लोक से दिन रात्रि ज्ञान करके जन्म के समय में होरादि षड्वर्ग में स्थित लग्नका ज्ञान युक्ति से कहना चाहिये । इस प्रकार उदय (लग्न) समुदाय (षड्वर्गादि) से दिन (वासर) पक्ष मुहूर्त मास संज्ञक राशि में प्रसव होता है ।

इस प्रकार आधान समय में प्रथम प्रसव समय का निश्चय करके ज्योतिषी को जातकोक्त फलादेश का विचार करना चाहिये ॥ ५०—५२ ॥

विशेष—दिन पक्षादि का ज्ञान चतुर्थाध्याय के १७वें श्लोक में किया है ॥५०-५२॥

नेत्र हीन योग ज्ञान

स्यातां यद्याधाने रविशशिनौ सिंहराशिगौ लग्ने ।
दृष्टौ कुजसौरिभ्यां जात्यन्धः संभवति तत्र ॥ ५३ ॥
आग्नेयसौम्यदृष्टौ रविशशिनौ बुद्बुदेक्षणं कुरुतः ।
नयनविनाशोऽपि यथा तथाधुना संप्रवक्ष्यामि ॥ ५४ ॥

यदि गर्भाधान कालिक सिंह लग्न में सूर्य व चन्द्रमा हों और उनपर मङ्गल व शनि की दृष्टि हो तो जातक अन्धा होकर जन्म लेता है । यदि सूर्य चन्द्रमा, मङ्गल व

---

[1] च ततो.

बुध से दृष्ट हों तो बुद्-बुद (पुनः-पुनः खुलना व बन्द होना) नेत्र जातक के होते हैं। जिन योगों में नेत्र का विनाश होता है अब उनको कहता हूँ ॥ ५३-५४ ॥

बृहज्जातक में कहा है—'रविशशियुते सिंहे लग्ने कुजार्किनिरीक्षिते, नयनरहितः सौम्यासौम्यैः सबुद्बुद्लोचनः' (४ अ० २० श्लो०)

पुनः हीन योग ज्ञान

व्ययभवनगतश्चन्द्रो वामं चक्षुर्विनाशयति हीनः।
सूर्यस्तथैव चान्य¹च्छुभदृष्टौ याप्यतां नयतः ॥ ५५ ॥

यदि द्वादश भाव में क्षीण चन्द्रमा हो तो वाम नेत्र, सूर्य निर्बल हो तो दक्षिण नेत्र का विनाश करता है। यदि द्वादशस्थ सूर्य व चन्द्रमा शुभ ग्रह से दृष्ट हों तो पूर्ण फल नेत्र हानि का नहीं देते हैं ॥ ५५ ॥

बृहज्जातक में कहा है—'व्ययगृहगतश्चन्द्रो वामं हिनस्त्यपरं रविर्न शुभगदिता योगा याप्या भवन्ति शुभेक्षिताः' (४ अ० २० श्लो०) ॥ ५५ ॥

मूक योग ज्ञान

क्रूरैर्ग्रहसन्धिगतैः शशिनि वृषे भौमसौरर²विदृष्टे।
मूकः सौम्यैर्दृष्टे वाचं कालान्तरे वदति ॥ ५६ ॥

यदि पाप ग्रह राशि सन्धि में हों और वृष राशिस्थ चन्द्रमा, मङ्गल शनि रवि से दृष्ट हो तो गर्भस्थ बालक गूँगा होता है। यदि वृषस्थ चन्द्रमा पर शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो कालान्तर के बाद बालक बोलता है ॥ ५६ ॥

बृहज्जातक में कहा है—'अवागवीन्दावशुभैर्भसन्धिगैः शुभेक्षितैश्चेत्कुरुते गिरं चिरात्'
(४ अ० १७ श्लो०) ॥ ५६ ॥

जड, सदन्त, योग ज्ञान

क्रूरेषु राशिसन्धिषु शशी न सौम्यैर्निरीक्ष्यते च जडः।
बुधनवमभागसंस्थौ शनिभौमौ यदि सदन्तः स्यात् ॥ ५७ ॥

यदि समस्त पाप ग्रह राशि सन्धि में हों व चन्द्रमा शुभ ग्रहों की दृष्टि से हीन हो तो जातक जड (मूर्ख) होता है। यदि शनि, मङ्गल बुध के नवमांश में हों तो गर्भस्थ बालक दांत के सहित जन्म लेता है ॥ ५७ ॥

बृहज्जातक में कहा है—'सन्धौ पापे शशिनि च जडः स्यान्न चेत्सौम्यदृष्टः'
'सौम्यर्क्षांशे रविजरुधिरौ चेत्सदन्तोऽत्र जातः'
(४ अ० १८ श्लो०) ॥ ५७ ॥

अधिकाङ्ग योग ज्ञान

सौम्ये त्रिकोणसंस्थे लग्नाच्छेषग्रहैर्बलविहीनैः।
द्विगुणास्यपादहस्तो योगेऽस्मिन्नाहितो भवति गर्भः ॥ ५८ ॥

यदि लग्न से बुध नवमभाव वा पञ्चमभाव में हो और अन्य समस्त ग्रह निर्बल हों तो गर्भस्थ बालक के मुख पैर हाथ दूने (द्विगुण) होते हैं ॥ ५८ ॥

---

१ सव्यं। २ संदृष्टे।

बृहज्जातक में कहा है—'त्रिकोणगे ज्ञे विबलैस्ततोऽपरैर्मुखाङ्घ्रिहस्तद्विगुणस्तथा भवेत्' (४ अ० १७ श्लो०)।

इस श्लोक की उत्पलटीका में भगवान् गार्गि का वचन इस प्रकार है—

'बलहीनैर्ग्रहैः सर्वैर्नवपञ्चमगे बुधे । द्विगुणाङ्घ्रिशिरोहस्तो भवत्येकोदरस्तथा' ॥५८॥

वामन व कुब्ज योग ज्ञान

वामनको मकरान्त्ये लग्ने रविचन्द्रसौरिभिर्दृष्टे ।
शशिनि विलग्ने कर्किणि [1]कुजार्किदृष्टेऽथ[2]वा कुब्जः ॥ ५९ ॥

यदि मकर राशि के अन्तिम नवांश में लग्न हो और सूर्य चन्द्रमा व शनि से दृष्ट हो तो गर्भस्थ बालक वामन (छोटा कद) होता है। यदि कर्क लग्न स्थित चन्द्रमा मङ्गल व शनि से दृष्ट हो तो गर्भस्थ बालक कुबड़ा होता है ॥ ५९ ॥

बृहज्जातक में कहा है—'सौरशशाङ्कदिवाकर दृष्टे वामनको मकरान्त्यविलग्ने' (४ अ० १९ श्लो०)।

'कुब्जः स्वर्क्षे शशिनि तनुगे मन्दमाहेयदृष्टे' (४ अ० १८ श्लो० २ चर०) ॥ ५९ ॥

पङ्गुयोग ज्ञान

मीनोदये च दृष्टे [3]कुजार्किशशिभिः पुमान् भवति पङ्गुः ।
याप्या भवन्ति योगाः सौम्यग्रहवीक्षिताः सर्वे ॥ ६० ॥

यदि मीन लग्न हो और उस पर मङ्गल, शनि, चन्द्रमा की दृष्टि हो तो गर्भस्थ बालक लंगड़ा होता है। कथित समस्त योग यदि शुभ ग्रह से दृष्ट हों तो कालान्तर में उपाय से निर्दोष, वा कुछ अल्पता होती है ॥ ६० ॥

बृहज्जातक में कहा है—'पङ्गुर्मीने यमशशिकुजैर्वीक्षिते लग्नसंस्थे' (४ अ० १८ श्लो० ३ च०) ॥ ६० ॥

विशेष—सं० वि० वि० की मातृका में 'याप्या' के स्थान पर 'व्यर्था' यह पाठ है।६०।

विना शिर पैर, हाथ के जन्म का योग

भौमयुता द्रेष्काणस्त्रिकोणलग्नेषु संदृष्टाः ।
विभुजाङ्घ्रिमस्तकः स्याच्छनिरविचन्द्रैर्वदेद्गर्भः ॥ ६१ ॥

यदि गर्भाधान काल में पञ्चमभावस्थ द्रेष्काण मङ्गल से युत हो और शनि, चन्द्र, सूर्य से दृष्ट हो तो विना हाथ का गर्भस्थ को कहना चाहिये। यदि नवमभावस्थ द्रेष्काण मङ्गल से युत व उक्त ग्रहों दृष्ट हो तो विना पैर का, लग्नस्थ द्रेष्काण भौम युत व उक्त ग्रह दृष्ट हो तो विना मस्तक का गर्भस्थ बालक को कहना चाहिये ॥ ६१ ॥

बृहज्जातक में कहा है—'धीनवमोदयगैश्च दृक्काणैः पापयुतैरभुजाङ्घ्रिशिराः स्याद्' (४ अ० १९ श्लो०)

तथा उत्पल टीका में भगवान् गार्गि का भी वचन इस प्रकार है—

---

[1] कुजार्क । [2] तथा [3] कुजार्कशशिभिः ।

'लग्ने द्रेष्काणगो भौमः सौरसूर्येन्दुवीक्षितः ।
कुर्याद् विशिरसं तद्वत्पञ्चमे बाहुवर्जितम् ।
विपदं नवमस्थाने यदि सौम्यैर्न वीक्षितः' ॥ ६१ ॥

विशेष—निर्णय सागर से प्रकाशित मूल पुस्तक में यह श्लोक इस प्रकार है--

'क्रूरग्रहस्त्रिकोणे त्रिकोणलग्ने शुभेषु बलवत्सु ।
विशिरोङ्घ्रि बाहु युग्मः शेषैरबलैर्भवति गर्भः ॥ ६१ ॥

किन्तु इसका अर्थ ठीक-ठीक नहीं लगता है। सं० वि० वि० की मातृका में पूर्वार्द्ध इस प्रकार है—'क्रूरग्रहद्दक्काणे त्रिकोणलग्ने शु·····' ।

यहाँ जो श्लोक दिया है वह उत्पल टीका में उद्धृत है तथा भगवान् गार्गि के वचन से समता रखता है ॥ ६१ ॥

इत्याधानविधानं प्रसूतिसमयेऽपि योजयेद्योग्यम् ।
आधाने यन्नोक्तं प्रसूतिविहितं तदपि चिन्त्यम् ॥ ६२ ॥

इस आधानाध्याय में जिन-जिन योगों का वर्णन किया है उन उपर्युक्त योगों का विचार जन्मकालिक लग्न से भी करना चाहिए। एवं जिन योगों का विचार इस अध्याय में नहीं है आगे के नवमाध्याय में है उन योगों का विचार आधान के समय में करना चाहिये ॥ ६२ ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां आधानेऽष्टमोऽध्यायः ॥

नवमोऽध्यायः

(सूतिकाध्याय)

[1]आधाने हि मयोक्तं प्रसूतिकालस्य निर्णयार्थं परम् ।
तस्मिन् सुपरिज्ञाते जन्माध्यायं प्रवक्ष्यामि ॥ १ ॥

आधानाध्याय में मैंने जो वर्णन किया है वह निश्चय करके प्रसूतिकाल के निर्णयार्थं ही किया है। अब आधानाध्याय को कहकर जन्माध्याय को कहता हूँ ॥ १ ॥

मस्तकादि से जन्मयोग ज्ञान

शीर्षोदये विलग्ने मूर्ध्ना प्रसवोऽन्यथोदये चरणैः ।
उभयोदये च हस्तैः शुभदृष्टे शोभनोऽन्यथा कष्टः[2] ॥२॥

यदि जन्म के समय शीर्षोदय संज्ञक लग्न हो तो प्रथम गर्भ से शिर, पृष्ठोदय हो तो चरण, उभयोदय लग्न हो तो प्रथम हाथ से प्रसव (जन्म) होता है अर्थात् पहले हाथ बाहर निकलता है। यदि लग्न, शुभ ग्रह से दृष्ट हो तो सुख पूर्वक, पापग्रह से दृष्ट हो तो कष्ट से जन्म होता है ॥ २ ॥

---

१ आधानं. २ करम्.

प्रसव स्थान का ज्ञान

भवनांशसदृशदेशे प्रसवो ज्ञेयः सदात्र युवतीनाम् ।
मिश्रगृहांशे वर्त्मनि स्थिरराश्यंशे तथा [1]स्वगृहे ॥३॥
स्वगृहनवांशे लग्ने स्वगृहेऽन्यस्मि[2]न्यदि प्रथमहर्म्ये ।

जन्म लग्न की राशि व नवमांश के समान जगह पर प्रसव (जन्म) होता है। यदि लग्न में द्विस्वभाव राशि का नवमांश हो तो मार्ग में, स्थिर राशि के नवांश में जन्म होने पर अपने घर में जन्म कहना चाहिये। यदि लग्न में अपनी राशि का नवांश हो तो अपने घर में, अन्य राशि का नवांश हो तो दूसरे के घर में जन्म होता है ॥३–३½॥

वृह० में कहा है—'राश्यंशसमानगोचरे मार्गे जन्म चरे स्थिरे गृहे। स्वक्षांशगते गते स्वमन्दिरे…' (५ अ० १२ श्लो०) ॥३–३⅓॥

विशेष—वृ० जा में चर नवांश में मार्ग में जन्म कहा गया है ॥ ३⅓ ॥

प्रकारान्तर से प्रसवस्थान का ज्ञान

पितृमातृग्रहबल[3]तस्तत्तत्स्वजनगृहेषु बलयोगात् ॥ ४ ॥
प्राकारतरुनदीषु च सूतिर्नीचा[4]श्रितैः सौम्यैः ।
नेक्षन्ते लग्नेन्दू यद्येकस्था ग्रहा महाटव्याम ॥ ५ ॥
सलिलभलग्ने[5] चन्द्रो जलराशौ वीक्षतेऽथवा पूर्णः ।
प्रसवं सलिले विद्यात् बन्धूदयदशमगश्च यदा ॥ ६ ॥

यदि पितृसंज्ञक (सूर्य शनि) ग्रह जन्मकाल में बली हों तो पिता या चाचा के घर में, मातृ संज्ञक ग्रह (चन्द्रमा, शुक्र) बलवान् हों तो माता (मामा) या मौसी के घर में बालक का जन्म होता है। यदि समस्त शुभग्रह नीच राशि में हों तो घर के बाहर वृक्ष के नीचे, या काष्ठ के घर में, या नदी के तट पर जन्म समझना। यदि सब ग्रह एक स्थान में स्थित लग्न व चन्द्रमा को नहीं देखते हों तो निर्जन वन (जहाँ कोई मनुष्य न हो) में जन्म कहना। यदि जन्म लग्न में जलचर राशि हो और चन्द्रमा भी जलचर राशि का हो तो जल में (जल के ऊपर) अर्थात् जल के समीप में अथवा पूर्ण चन्द्रमा जलचर राशिगत लग्न को देखता हो तो भी जल में, अथवा जलचर राशि का लग्न हो और चन्द्रमा जलचर राशि का दशम वा चतुर्थ भाव में हो तो भी जल में प्रसव (जन्म) कहना चाहिये ॥३½–६॥

वृह० में कहा है—'पितृमातृग्रहेषु तद्बलात्तरुशालादिषु नीचगैः शुभैः ।
यदि नैकगतैस्तु वीक्षितौ लग्नेन्दू विजने प्रसूयते (५ अ० १६ श्लो०) ।
'आप्योदयमाप्यगः शशी संपूर्णः समवेक्षतेऽथवा ।
मेषूरणबन्धुलग्नगः स्यात्सूतिः सलिले न संशयः' (५ अ० ९ श्लो०) ॥३½–६॥

विशेष—चतुर्थ श्लोक का उत्तरार्द्ध सं वि॰ वि॰ की पुस्तक में 'पितृमातृग्रहवर्गे तत्स्वजनगृहेषु बलयागात्'। यह पाठान्तर ह तथा उत्पल ने भी अपनी टीका में इसी

---

[1] तथान्यगृहे. [2] स्वगृहेऽन्यस्मिन् प्रांतद्वन्द्वे. [3] वर्गे. [4] चाश्रिते. [5] भवने.।

प्रकार उद्धृत किया है। एवं पञ्चम श्लोक के चतुर्थ चरण में 'महाटव्यां' के स्थान पर 'तदाटव्याम्' यह उभयत्र पाठ है ॥३३-६॥

पुनः प्रकारान्तर से प्रसव देश ज्ञान

सौम्यैर्लग्ने पूर्णे स्वगृहगते शशिनि सलिलसंयाते।
पातालस्थैश्च शुभैर्जलजे लग्नेऽम्बुगेहगे शशिनि ॥ ७॥
वृश्चिककुलीरलग्ने सौरे चन्द्रेक्षिते त्ववटे।
भवति प्रसवः स्त्रीणां वदन्ति यवनाः सह मणित्थैः ॥ ८॥
रविजे जलजविलग्ने क्रीडोद्याने बुधेक्षिते प्रसवः।
रविणा देवागारे तथोषरे चैव चन्द्रेण ॥ ९॥

यदि लग्न में शुभ ग्रह हों पूर्ण चन्द्रमा स्वराशि का हो या जलचर राशि का हो अथवा शुभ ग्रह चतुर्थ भाव में हों, लग्न व चन्द्रमा जलचर राशि के हों तो जल में जन्म होता है। यदि वृश्चिक वा कर्क लग्न में शनि, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो गड्ढे में स्त्रियों का प्रसव होता है। ऐसा मणित्थाचार्य के सहित यवनाचार्यों का कथन है। यदि शनि, जलचर राशिस्थ लग्न में बुध से दृष्ट हो तो क्रीडा के उद्यान में जन्म, उक्त शनि पर यदि सूर्य की दृष्टि हो तो देव मन्दिर में भूमि में जन्म, यदि चन्द्र से दृष्ट शनि हो तो ऊषर भूमि में जन्म होता है ॥ ७-९ ॥

बृहज्जातक में कहा है—'पूर्णशशिनि स्वराशिगे सौम्ये लग्नगते……'
(५अ० ८ श्लोक)
'अलिकर्कियुते विलग्नगे सौरे शीतकरेक्षितेऽवटे' (५ अ० १० श्लो०)
'मन्देऽब्जगते विलग्नगे बुधसूर्येन्दुनिरीक्षिते क्रमात्।
क्रीडाभवने सुरालये सोखरभूमिषु च प्रसूयते' ॥
(५ अ० ११ श्लो०) ॥ ७-९ ॥

पुनः अन्य प्रकार से जन्म स्थान का ज्ञान

आरण्यभवनलग्ने गिरिवनदुर्गे तथा नरविलग्ने।
रुधिरेक्षिते श्मशाने शिल्पकनिलयेषु सौम्येन ॥ १०॥
सूर्येक्षिते गोनृपदेववासे शुक्रेन्दुजाभ्यां रमणीयदेशे।
शक्रेड्यदृष्टे द्विजवह्निहोत्रे नरोदये सम्प्रवदन्ति सूतिम् ॥ ११ ॥

यदि वनचर राशि का लग्न हो तो पर्वत, वन, किला (दुर्ग) में जन्म कहना चाहिये। यदि पुरुषराशिगत लग्नस्थ शनि भौम से दृष्ट हो तो श्मशान में, बुध से दृष्ट हो तो शिल्पघर में, सूर्य से दृष्ट हो तो गोशाला या राजभवन या देव मन्दिर में जन्म होता है। यदि शुक्र या चन्द्रमा से दृष्ट शनि हो तो सुन्दर स्थान में, गुरु से दृष्ट हो तो अग्नि होत्र शाला में जन्म होता है ॥ १०-११ ॥

बृहज्जातक में कहा है—'नृलग्नगं प्रेक्ष्य कुजः श्मशाने रम्ये सितेन्दू गुरुरग्निहोत्रे।
रविर्नरेन्द्रामरगोकुलेषु शिल्पालये ज्ञः प्रसवं करोति' ॥
(५ अ० १२ श्लो०)

तथा उत्पलटीका में भी बादरायण का वचन इस प्रकार है--

'सूर्येक्षिते गोनृपदेववासे शुक्रेन्दुजाभ्यां रमणीयदेशे ।
सुरेज्यदृष्टे द्विजवह्निहोत्रे नरोदये संप्रवदन्ति सूतिम् ।। १०-११ ।।

सूतिका के गृह का ज्ञान

स्वोच्चे दशमे जीवे द्वित्रिचतुर्भूमिके गृहे प्रसवः ।
मन्दर्क्षांशेऽशालं[1] चतुर्थदशमस्थितैः सौम्यैः ।। १२ ।।

यदि जन्म समय में कर्क राशि का गुरु दशम भाव में हो तो २, ३ या ४ तल्ले (मञ्जिल) के मकान में जन्म होता है। शुभ ग्रह यदि शनि के नवांश में स्थित होकर चतुर्थ दशम भाव में हों तो वरामदा रहित मकान में प्रसव होता है ।। १२ ।।

लघुजातक में कहा है--'गुरुरुच्चो दशमस्थो द्वित्रिचतुर्भूमिकं करोति गृहम्'
(६ अ० ८ श्लो०) ।। १२ ।।

सूतिका गृह में शयन स्थान ज्ञान

द्वौ द्वौ राशी मेषात् पूर्वादिषु संस्थितौ गृहविभागे ।
कोणेषु द्विशरीरा [2]लग्नन्तु भवेद्धि तत्प्रमुखैः[3] ।। १३ ।।

यदि जन्मकाल में मेष वृष लग्न हो तो घर के पूर्व भाग में, मिथुन में अग्निकोण में, कर्क सिंह में दक्षिण में, कन्या में नैऋत्य कोण में, तुला वृश्चिक में पश्चिम में, धनु में वायव्य कोण में, मकर कुम्भ में उत्तर में, मीन में ईशान कोण में, सूतिका शयन स्थान होता है ।। १३ ।। बृह० में कहा है--

प्राच्यादि गृहे क्रियादयो द्वौ द्वौ कोणगता द्विमूर्तयः' (५ अ० २१ श्लो०) ।।१३।।

विशेष--श्लोक का भावार्थ--मेष राशि से दो दो राशि घर के पूर्वादि दिशाओं में, तथा ४ द्विस्वभाव राशि चारों कोण में न्यास करना चाहिये। उन राशियों में लग्न प्रमुख होता है ।। १३ ।।

प्रसव गृह में वरामदे का ज्ञान

दिग्भागराशिमण्डलकेन्द्रेषु खगेषु तच्छाला ।
[4]झषमृगहयबलवत्त्वे गृहं द्विशालं[5] त्रिशालं च ।। १४ ।।

पूर्व श्लोक से राशि चक्र का न्यास दिशाओं में करने से जिस दिशा के केन्द्र में अर्थात् राशि में ग्रह हों तो उस दिशा के घर के आगे वरामदा कहना चाहिये। यदि मीन मकर धनु राशि बलवान् हों तो दो या तीन वरामदे वाले घर में जन्म होता है ।। १४ ।।

विशेष—सं० वि० वि० की पुस्तक में विशाल के स्थान पर द्विशाल यह पाठ मिलता है। तथा अथ, के स्थान पर झष है ।। १४ ।।

---

१ साले २. लग्नस्य । ३. प्रमुखे । ४. अथ । ५. विशाल ।

सूतिका गृह स्वरूप ज्ञान

चित्रं नवं भृगुसुते च दृढं गुरौ च
दग्धं कुजे दिनकरे परिपू[1]र्णकाष्ठम्।
चन्द्रे नवं च बहुशिल्पकृतं बुधे च
जीर्णं भवेद्गृहमिहोष्णकरात्मजे च ॥ १५ ॥

यदि जन्मकाल में शुक्र बलवान् हो तो विचित्र व नवीन, गुरु बली हो तो मजबूत, मङ्गल सबल हो तो जला हुआ, सूर्य बली हो तो काष्ठ से पूर्ण, चन्द्रमा बली हो तो नवीन, बुध बली हो तो अत्यन्त शिल्प कला से युत, शनि बलवान् हो तो पुराना घर सूतिका का होता है ॥ १५ ॥

बृह० में कहा है— 'जीर्णं संस्कृतमर्कजे क्षितिसुते दग्धं नवं शीतगोः, काष्ठाढ्यं न दृढं····' (५ अ० १९ श्लो०) ॥ १५ ॥

सूतिका गृह के द्वार व समीप के घर का ज्ञान

वासगृहे द्यूनगतात् द्वारो दिक्पालकात् बलोपेतात्।
भवनग्रहसंयोगैः प्रतिवेश्माश्चिन्तनीयाः स्युः ॥ १६ ॥
देवालयाम्बुपावककोशविहारास्तथो[2]त्करो भूमेः।
निद्रागृहं च भास्करशशिकुजगुरुभार्गवार्किबुधयोगात् ॥ १७ ॥

जन्म काल में केन्द्र में जो (यहाँ द्यून शब्द केन्द्र का द्योतक प्रतीत होता है ग्रन्थान्तर से समता के लिये) ग्रह बलवान् हो उस ग्रह की दिशा में सूतिका के घर का दरवाजा समझना चाहिये। तथा घर के देने वाले ग्रह (चित्रं नवं १५ वें श्लोक से) की जिस दिशा में जैसी स्थिति में ग्रह हो उसी प्रकार से अन्य घर समझना चाहिये। यथा रवि से उस दिशा में देवालय, चन्द्रमा से जलाशय, मङ्गल से अग्नि घर (रसोईघर) गुरु जहाँ हो अर्थात् जिस दिशा में हो वहाँ धन सञ्चय घर, शुक्र हो तो बिहार स्थान (रतिघर), शनि से कतवारखाना, बुध से शयनागार सूतिका के घर से कहना चाहिये ॥ १६–१७ ॥ बृह० में कहा है -

'द्वारञ्च तद् वास्तुनि केन्द्रसंस्थैर्ज्ञेयं गृहैर्वीर्यसमन्वितैर्वा ॥ १६–१७ ॥

विशेष—यदि केन्द्र में कोई ग्रह नहीं हो तो सबसे बली ग्रह की दिशा में द्वार कहना चाहिये। तथा अन्य घरों को तत्तद् ग्रहवश कहना चाहिये ॥ १६--१७ ॥

सूतिका की शय्या का ज्ञान

खट्वास्थितिर्भवनवद्युतविहगसमानि तत्र चिह्नानि।
आस्तरणानि च विद्यात् दृष्टिशुभकृतानि दैवज्ञः ॥ १८ ॥
प्राच्यादिगृहद्वितयं द्विशरीरा राशयश्च गात्राणि।
आजानुशिरःशयनं ग्रहतुल्यं लक्षणं तत्र ॥ १९ ॥
ग्रहयुक्तं वा नियतं विनतत्वं च द्विमूर्तिराशिषु च।
षट्त्रिनवान्त्याः पादाः [3]पर्यङ्केऽङ्गानि राशयः शेषाः ॥२०॥

---

[1] जीर्णं। [2] उपस्कररस्थानम्। [3] पर्यन्ते।

सूतिका की शय्या का ज्ञान घर की तरह करना चाहिये। शय्या के जिस भाग में ग्रह जिस स्थिति में हो उसी प्रकार से वहाँ चिह्नों को कहना, तथा विस्तर का ज्ञान लग्न पर शुभ ग्रह की दृष्टि से दैवज्ञ (ज्योतिषी) को जानना चाहिये।

पूर्वादि दिशाओं में दो दो राशि एवं द्विस्वभाव राशियों (३।६।९।१२) को कोण में (पायों पर) न्यास करने से शय्या का स्वरूप होता है, अर्थात् शय्या में १२ भावों का न्यास इस प्रकार से करना चाहिये—लग्न व द्वितीय भाव को सिर की ओर, तृतीय भाव को सिर के दक्षिण पावा पर, ४, ५वां दक्षिण पाटी पर, षष्ठ भाव को पैर के दक्षिण पावा पर, ७, ८ वां भाव पैर की पाटी पर, ९वां भाव पैर के वाम भाग के पावा पर, १०, ११वाँ भाव, वाम पाटी पर और बारहवें भाग को सिर के वाम भाग के पावा पर न्यास करने से पाँय से सिर तक शय्या की स्थिति होती है। ग्रह के समान शय्या के लक्षण कहना चाहिये। द्विस्वभाव राशि जिस अङ्ग (शय्या के) में ग्रह युक्त हों वहाँ पर शय्या में टेढ़ापन समझना। पाप ग्रह से उस अङ्ग में आघात कहना। ६, ३, ९; १२ राशि भाव शय्या में पावा होती हैं और अन्य राशि शय्या के अङ्ग होते हैं। ॥ १८-२० ॥ बृह० में कहा है—

'शय्यास्वपि वास्तुवद्वदेत्पादैः षट्त्रिनवान्त्यसंस्थितैः' (५ अ० २१ श्लो०) ॥ १८-२० ॥

सूतिका का भूमि शयन, व उपसूतिका ज्ञान

नीचस्थे भूशयनं चन्द्रेऽप्यथवा सुखे विलग्ने वा।
शशिलग्नविवरयुक्तग्रहतुल्याः सूतिका ज्ञेयाः ॥ २१ ॥
अनुदितचक्रार्धयुतैरन्तर्बहिरन्यथा वदन्त्येके।
लक्षणरूपविभूषणयोगस्तासां शुभैर्योगात् ॥ २२ ॥
क्रूरैर्विरूपदेहा लक्षणहीनाः सुरौद्रमलिनाश्च।
मिश्रैर्मध्यमरूपा बलसहितैः सर्वमेवमवधार्यम् ॥ २३ ॥

यदि जन्मकाल में चन्द्रमा नीच राशि में होकर चतुर्थ भाव में वा लग्न में स्थित हो तो सूतिका का निवास (शयन) भूमि में होता है। अब उपसूतिका का ज्ञान बताते हैं। लग्न व चन्द्रमा के मध्य में जितने ग्रह हों उतनी वहाँ उपसूतिका (प्रसव के समय अन्य स्त्री) होती हैं। अनुदित चक्रार्द्ध (लग्न से सप्तम तक) में जितने ग्रह हों उतनी सहायक (उपसूतिका) स्त्री भीतर, और सप्तम से लग्न तक जितने ग्रह हों उतनी उपसूतिका बाहर में समझना चाहिये। उन ग्रहों में भी जितने ग्रह शुभ ग्रह हों जिस २ चक्रार्द्ध में हों उतनी सुलक्षणा सुरूपा, अलङ्कार युता समझना, क्रूरग्रहों से कुरूपा, कुलक्षणा, मलिना, दुर्भगा स्त्री कहना चाहिये। मिश्र (शुभाशुभ) ग्रह हों तो मध्यम रूप गुणादि से युत, इस प्रकार ग्रहों के बल के आधार पर सब फल कहना चाहिये। ॥ २१-२३ ॥ बृह० में कहा है—

‘लग्नचन्द्रान्तरगतैर्ग्रहैः स्युरुपसूतिकाः । बहिरन्तश्च चक्रार्धे दृश्यादृश्येऽन्यथा परे’ ‘नीचसंस्थैश्च भूमौ’ (५ अ० १७ श्लो०) ॥ २१–२३ ॥

सूतिका के घर में दीपक का स्थान व स्वरूप

द्वादशभागविभक्ते[1] वासगृहेऽवस्थिते सहस्रांशौ ।
दीपश्चरस्थिरादिषु तथैव वाच्यः प्रसवकाले ॥ २४ ॥

पूर्वोक्त रीति से सूतिका के घर में १२ राशियों को १२ भाग में विभक्त करके जिस राशि में सूर्य जिस भाग में स्थित हो वहाँ दीपक समझना चाहिये । यहाँ भी राशि न्यास करते समय प्राच्यादि क्रम से ही न्यास करना चाहिये । यदि सूर्य चरराशिगत हो तो दीपक को चल, स्थिर में स्थिर, द्विस्वभाव में कभी चल, कभी स्थिर, समझना चाहिये ॥ २४ ॥ बृहज्जातक में कहा है—

‘दीपोऽर्कयुक्तर्क्षवशाच्चराद्यः’ (५अ० ०८श्लो० २च०) ॥ २४ ॥

दीपक की वत्ति व तेल का ज्ञान

यावल्लग्नादुदितं वर्तिर्दग्धा तु तावती भवति ।
दीपः पूर्णे पूर्णः शशिनि क्षीणे क्षयस्तु तैलस्य ॥ २५ ॥

जन्म काल के समय लग्न के जितने अंश उदित (भुक्त) हों उतना भाग वत्ती का जला हुआ समझना । यदि चन्द्रमा पूर्ण हो तो तेल भी पूर्ण दीपक में, क्षीण चन्द्रमा हो तो तेल अल्प कहना चाहिये ॥२५॥

बृह० में कहा है–‘स्नेहः शशाङ्कादुङ्कादयाच्च वर्त्तिः’ (५अ० १८श्लोक १पादः)।२५।

अधिक दीप का ज्ञान

बलवति सूर्ये दृष्टे बहून् प्रदीपान् वदेत् कुपुत्रेण ।
अन्यैरपि[2] गतवीर्यैः सूतौ ज्योतिस्तृणैर्भवति ॥ २६ ॥

यदि जन्मकाल में बलवान् सूर्य, भौम से दृष्ट हो तो प्रसव काल में अधिक दीपक समझना, यदि अन्य ग्रह निर्बल हों तो तृण जलाकर प्रकाश प्रसव में होता है ॥२६॥

प्रसव के समय में अन्धकार का ज्ञान

सौरांशेऽथ जलांशे चन्द्रेऽर्कजसंयुतेऽथवा हिबुके ।
तद्दृष्टे वा कुर्यात्तमसि प्रसवं न संदेहः ॥ २७ ॥

यदि जन्मकाल में चन्द्रमा शनि के नवांश में वा जलचर राशि के नवमांश में, या शनि से युत चतुर्थ भाव में अथवा शनि से दृष्ट चन्द्रमा हो तो अन्धकार में जन्म होता है, इसमें सन्देह नहीं है ॥२७॥

बृह० में कहा है—‘मन्दर्क्षांशे शनिनि हिबुके मन्ददृष्टेऽब्जगे वा, तद्युक्ते वा तमसि शयनम्’ (५ अ० १७ श्लो०) ॥२७॥

पिता की अनुपस्थिति में जन्म योग ज्ञान

होरामनीक्षमाणे शशिनि परोक्षस्थिते पितरि जातः ।
मेषूरणाच्च्युते वा चरभे भानौ विदेशगते ॥ २८ ॥

---

[1] भागच्छन्ने । [2] रपगत ।

द्युनिशोरर्कासितयोः कुजेन सन्दृष्टयोः पितान्यगतः[1]।
चरराशौ परदेशे युक्तेक्षितयोस्तु तत्र मृतः ॥ २९ ॥
पञ्चमनवमद्यूने पापैरर्कात्तु पापसंदृष्टैः।
बद्धः पिताऽन्यदेशे राशिवशात् स्वेऽथवा मार्गे ॥ ३० ॥

यदि जन्म समय में लग्न, चन्द्रमा से अदृष्ट हो तो पिता के परोक्ष में जन्म कहना, दशमभाव से च्युत (अर्थात् ११, १२, वा ८, ९ भाव में) सूर्य चरराशि में हो तो परदेशस्थ पिता के परोक्ष में जन्म कहना चाहिये। यदि दिन में जन्म हो तो सूर्य, रात्रि में जन्म हो तो शनि, मङ्गल से दृष्ट हो तो पिता के परोक्ष में जन्म। यदि सूर्य, शनि, चरराशि में भौम से युत या दृष्ट हों तो परदेश में पिता को मृत समझना चाहिये। सूर्य से ५, ९, ७ भावों में पापग्रह पापग्रह से दृष्ट हो तो पिता को बन्धन (जेल) में कहना, चर राशिस्थ ग्रह होने पर अन्य देश में, स्थिर में स्वदेश में, द्विस्वभाव में मार्ग में समझना चाहिये ॥२८–३०

बृह० में कहा है—'पितुर्जातः परोक्षस्य लग्नमिन्दावपश्यति। विदेशस्थस्य चरभे मध्याद् भ्रष्टे दिवाकरे (५ अ० १ श्लो०) ॥२८–३०॥

कष्ट में प्रसव व माता सुख ज्ञान

जायात्रिकोणसंस्थैः क्रूरैरानन्दवर्जितः प्रसवः।
दशमचतुर्थोपगतैः सौम्यैः संपत्तयो विपुलाः ॥ ३१ ॥

यदि जन्मकाल के समय में सप्तम, नवम, पंचम भावों में पापग्रह हों तो कष्ट से प्रसव होता है। यदि चतुर्थ, दशम भाव में शुभग्रह हों तो सुख से प्रसव व अधिक सम्पत्ति प्राप्त होती है ॥ ३१ ॥

परजात जन्म योग ज्ञान

पश्यति न गुरुः शशिनं लग्नं च दिवाकरं सेन्दुम्।
पापयुतं वा सार्कं चन्द्रं यदि जारजातः स्यात् ॥ ३२ ॥
गुरुशशिरवयो नीचे सूतौ लग्नेऽथवार्कसूनुश्च।
लग्नोडुपभृगुपुत्राः शुभैरदृष्टास्तथान्यजातश्च[2] ॥ ३३ ॥

यदि जन्म समय में लग्न व चन्द्रमा गुरू से अदृष्ट हों अथवा एकराशिगत सूर्य व चन्द्रमा को गुरू न देखता हो तो, वा पापग्रह से युत सूर्य चन्द्रमा पर गुरू की दृष्टि का अभाव हो तो जातक जार से अर्थात् दूसरे से उत्पन्न कहना चाहिए। यदि गुरू, चन्द्रमा, सूर्य नीच राशि में हों अथवा शनि लग्न में हो व लग्न, चन्द्रमा, शुक्र पर शुभ ग्रह की दृष्टि का अभाव हो तब भी परजात अर्थात् अन्य से उत्पन्न जातक को समझना चाहिए ॥ ३२-३३ ॥

बृह० में कहा है—"न लग्नमिन्दुं च गुरुर्निरीक्षते न वा शशाङ्कं रविणा समागतम्। सपापकोऽर्केण युतोऽथवा शशी परेण जातं प्रवदन्ति निश्चयात् (५ अ० ६ श्लोक)॥३२-३३॥

---

१ प्यभवत्। २ जातः स्यात्।

विशेष—इस पद्य के आगे सं० वि० वि० की पुस्तक में परजात योग के परिहार में एक पद्य अधिक इस प्रकार से प्राप्त है—

गुरुक्षेत्रगते चन्द्रे तद्युक्ते वान्यराशिगे । तद्द्रेष्काणे तदंशे वा न परैर्जात इष्यते ॥३४॥

अर्थं—यदि गुरू की राशि (९।१२) में चन्द्रमा हो तो, अथवा अन्य किसी राशि में चन्द्रमा गुरू से युत हो तो, अथवा गुरू के द्रेष्काण में वा नवमांश में स्थित चन्द्रमा हो तो भी बालक दूसरे से उत्पन्न नहीं होता है । किन्तु बृह० की उत्पल टीका में यह पद्य भगवान् गार्गि के नाम से उद्धृत है । मनीषीगण इसका विचार करें कि किसका यह श्लोक है ॥ ३२-३३ ॥

प्रसव समय में मातृकष्ट का ज्ञान

केल्शो मातुः क्रूरैर्बन्ध्वस्तगतैः शशाङ्कयुक्तैर्वा ।
चन्द्रात् सप्तमराशौ पापा मरणाय[1] वक्रसन्दृष्टाः ॥ ३४ ॥
चन्द्राद्दशमे भानुर्मातुर्मरणं करोति पापयुतः ।
शुक्रात् पञ्चमभवने[2] सौरियुतस्तेन[3] वा दृष्टः ॥ ३५ ॥
चन्द्रात्त्रिकोणराशौ रविजो मातुर्वधं दिशति रात्रौ ।
शुक्रात्तथैव दिवसे भौमः पापेन सन्दृष्टः ॥ ३६ ॥

यदि जन्म के समय में पापग्रह के साथ चन्द्रमा चतुर्थ वा सप्तम भाव में हो तो मातृकष्ट के साथ प्रसव (जन्म) समझना (कहना) चाहिए । अथवा चन्द्रमा से सप्तम राशि में भौम से दृष्ट पापग्रह हो तो मरण होता है । चन्द्रमा से दशम स्थान में पापयुत सूर्य हो तब भी माता का मरण होता है तथा शुक्र से पञ्चम स्थान में सूर्य शनि से युत वा दृष्ट हो तो भी माता का मरण होता है । यदि रात्रि में जन्म हो व चन्द्रमा से पंचम वा नवम स्थान में शनि पापग्रह से दृष्ट हो तो भी मरण, अथवा दिन में जन्म हो, शुक्र से पंचम वा नवम भाव में मंगल पापग्रह से दृष्ट हो तब भी माता का मरण कहना चाहिए ॥ ३४-३६ ॥

बृह० में कहा है—"पापैश्चन्द्रस्मरसुखगतैः क्लेशमाहुर्जनन्याः ।" (५ अ० ६७ श्लोक)

विशेष—मातृकष्टकारक योग बृहत्पाराशर, सर्वार्थचिन्तामणि में भी इनसे भिन्न प्राप्त होते हैं ॥ ३४-३६ ॥

माता से त्यक्त योग का ज्ञान

कुजसौरयोस्त्रिकोणे चन्द्रेऽस्तगते वियुज्यते मात्रा ।
दृष्टे सुरेन्द्रगुरुणा सुखान्वितो दीर्घजीवी च ॥ ३७ ॥
म्रियते पापैर्दृष्टे शशिनि विलग्ने कुजेऽस्तगे त्यक्तः ।
लग्नाच्च[4] लाभगतयोर्वसुधासुतमन्दयोरेवम् ॥ ३८ ॥
पश्यति सौम्यो बलवान् यादृग्गृह्णाति तादृशो जातः ।
शुभपापग्रहदृष्टे परैर्गृहीतोऽथवा[5] म्रियते ॥ ३९ ॥

---

१ मरणाय निर्दिष्टाः । २ नवमे । ३ सौरियुतोऽर्कोऽथ । ४ त्स्वला, स्तला.... ।
५ गृहीतोऽपि स म्रियते ।

यदि जन्मकाल में सूर्य व भौम एक राशि में हों और उस राशि से नवम वा पंचम वा सप्तम में चन्द्रमा हो तो जातक का माता त्याग कर देती है। यदि इस योग में चन्द्रमा पर गुरू की दृष्टि हो तो माता के त्यागने पर भी जातक सुखी और दीर्घायु होता है। यदि लग्नस्थ चन्द्रमा व सप्तमस्थ भौम पापग्रह से दृष्ट हों वा लग्न से लाभ भाव में शनि-मंगल हों तो भी माता से वालक का त्याग होता है व बालक मृत होता है। यदि इन योगों पर बली शुभग्रह की दृष्टि हो तो अर्थात् चन्द्रमा पर शुभग्रह की दृष्टि होने पर शुभग्रह जिस वर्ण का हो उसी वर्ण के व्यक्ति के हाथ में जातक आकर जियेगा। यदि शुभ पाप दोनों की दृष्टि हो तो दूसरे के हाथ में जाने पर भी बालक मर जाता है॥ ३७-३९॥

बृह० में कहा है—"आरार्कजयोस्त्रिकोणगे चन्द्रेऽस्ते च विसृज्यतेऽम्बया।
दृष्टेऽमरराजमन्त्रिणा दीर्घायुः सुखभाक् च स स्मृतः॥
पापेक्षिते तुहिनगावुदये कुजेऽस्ते त्यक्तो विनश्यति कुजार्कजयोस्तथाये सौम्येऽपि....
(५ अ० १४-१५ श्लोक)॥ ३७-३९॥

विशेष—सं० वि० वि० की पुस्तक में ३८ श्लोक का उत्तरार्द्ध इस प्रकार है—लग्नास्तलाभ गतयोवसु....। बृह० के १५ वें श्लोक की टीका में 'लग्नाच्च लाभगतयोः' यह पाठ है इसलिए मूल में यही दिया गया है। लग्नात्स्वलाभगतयोः इस पाठ में स्व शब्द का वास्तविक कोई अर्थ नहीं प्रतीत होता है॥ ३७-३९॥

प्रकारान्तर से ज्ञान

[1]एकांशस्थितयोर्वा यमारयोस्त्यज्यतेऽथवा मात्रा।
लग्नत्सप्तमभवने भौमे शनिवीक्षिते नियतम्॥ ४०॥
यादृक्पश्यति सौम्यस्तत्तुल्यगुणं सुतः[2] समाधत्ते।
पितृजननीसादृश्यं रवेः शशाङ्कस्य बलयोगात्॥ ४१॥

यदि शनि व भौम किसी भी राशि में एक अंश (एक नवांश) में हों तो माता वालक का त्याग कर देती है। लग्न से सप्तम भाव में मंगल शनि से दृष्ट हो तो निश्चय माता त्याग कर देती है। जिस शुभ ग्रह की दृष्टि लग्न व चन्द्रमा पर हो उस शुभ ग्रह के गुण त्यक्त बालक में होते हैं। यदि रवि बलवान् हो तो पिता के समान, चन्द्र बली हो तो माता के सदृश बालक का गुण व स्वभाव होता है॥ ४०-४१॥

बृहत्पारा० में कहा है—'एकांशकस्थौ मन्दारौ यत्र कुत्र स्थितौ यदा' (९ अ० ३३ श्लोक)॥ ४०-४१॥

नालवेष्टित जन्म योग ज्ञान

सिंहाजगोभिरुदये जातो नालेन वेष्टितो जन्तुः।
लग्ने कुजेऽथ सौरे राश्यंशसमानगात्रश्च॥ ४२॥

---

[1] एकांशावस्थितयोर्यमारयोस्त्यज्यते मात्रा। [2] सुतम्।

यदि जन्मकाल में सिंह, मेष वा वृष लग्न हो और उस लग्न में भौम या शनि स्थित हो तो बालक का जन्म नाल से वेष्टित का कहना । लग्न में जिस राशि का नवांश हो वह राशि कालपुरुष के जिस अंग में हो उस अंग को नाल से वेष्टित कहना चाहिए ।। ४२ ।।

बृहज्जा० में कहा है—'छागे सिंहे वृषे लग्ने तत्स्थे सौरेऽथवा कुजे । राश्यंशसदृशे गात्रे जायते नालवेष्टितः' (५ अ० ५ श्लोक) ।। ४२ ।।

सर्पवेष्टित जन्म योग ज्ञान

भौमशनिद्रेक्काणे पापे लग्ने स्थिते शशियुते[1] वा ।
द्व्येकादशगैः सौम्यैरभिवेष्टितको भुजङ्गेन ।। ४३ ।।

यदि जन्मकालिक लग्न में शनि या भौम का द्रेष्काण हो, उसमें (लग्न में) पाप ग्रह वा चन्द्रमा हो व द्वितीय एवं एकादश भाव में शुभ ग्रह हो तो सर्प से वेष्टित का जन्म होता है ।। ४३ ।।

बृह० में कहा है—'शशाङ्के पापलग्ने वा वृश्चिकेशत्रिभागगे । शुभैः स्वायस्थितैर्जातः सर्पस्तद्वेष्टितोऽपि वा ।। (५ अ० ३ श्लोक)।। ४३ ।।

विशेष—बृहज्जातक में केवल भौम के द्रेष्काण में लग्न को कहा है । यहाँ ग्रंथकार ने शनि के द्रेष्काण में भी योग का वर्णन किया है । उत्पल टीका में भगवान् गार्गि ने भी मंगल के द्रेष्काण में ही योग कहा है । यथा—'भौमद्रेष्काणगे चन्द्रे सौम्यैरायधनस्थितैः । सर्पस्तद्वेष्टितस्तद्वत्पापलग्ने विनिर्दिशेत्' ।। तथा उत्पल टीका में सारावली का वचन भी 'भौमदृक्काणगतेन्दौ लग्ने वा संस्थिते वदेज्जातम् । द्वयेकादशगैः सौम्यैरहिवेष्टितको भुजंगो वा' ।। इस प्रकार है । किन्तु प्रकाशित पुस्तकों में व सं० वि० वि० की पुस्तक में उत्पल द्वारा उद्धृत पद्य नहीं प्राप्त होता है ।। ४३ ।।

यमल जन्म योग ज्ञान

सूर्यश्चतुष्पदस्थः शेषा द्विशरीरसंस्थिता बलिनः ।
कोशैर्वेष्टितदेहौ यमलौ खलु संप्रजायेते[2] ।। ४४ ।।

यदि जन्म समय में सूर्य चतुष्पद (मेष, वृष, सिंह, धनु का परार्द्ध और मकर का पूर्वार्द्ध) राशि में हो व बली अन्य सब ग्रह द्विस्वभाव राशि में हों तो एक नाल से वेष्टित दो बालक का जन्म कहना चाहिये ।। ४४ ।।

बृह० में कहा है—'चतुष्पादगते भानौ शेषैर्वीर्यसमन्वितैः । द्वितनुस्थैश्च यमलौ भवतः कोशवेष्टितौ' (५ अ० ४ श्लोक) ।। ४४ ।।

जातक के शरीर व वर्ण का ज्ञान

लग्ननवभागतुल्या मूर्तिर्बलसंयुताद्ग्रहाद्वापि ।
नवभागाद्वर्णोक्तिः शशियोगात्तत्र सूतस्य ।। ४५ ।।

---

१ सुते । २ प्रसूयेते ।

बह्वो यदि बलयुक्ता मिश्रा मूर्तिस्तदा वाच्या।
कुलजातिदेशपुरुषान् बुद्ध्वाऽऽदेशं समादिशेत्तज्ज्ञः ॥ ४६ ॥

जन्मकालिक लग्न में जिस राशि का नवांश हो उसका जो स्वामी ग्रह हो उसके सदृश अथवा जन्मकालिक ग्रहों में जो सबसे बली ग्रह हो उसके समान (ग्रह व राशि में जो बली) शरीर कहना चाहिए। चन्द्रमा जिस राशि के नवांश हो वा राशि स्वामी के तुल्य जातक का वर्ण कहना चाहिए। यदि अधिक ग्रह बली हों तो उन सबके समान मिश्रित देह और वर्ण समझना चाहिए। कुल, जाति, देश, व्यक्ति को समझकर विद्वान् ज्योतिषी को जातक के शरीर व वर्ण का आदेश करना चाहिए ॥ ४५-४६ ॥

बृह० में कहा है—'लग्ननवांशपतुल्यतनुः स्याद्वीर्ययुतग्रहतुल्यतनुर्वा। चन्द्रसमेत-नवांशपवर्णः (५ अ० २३ श्लोक) ॥ ४५-४६ ॥

जातक की प्रकृति का ज्ञान

त्रिंशद्भागे भानुर्ग्रहस्य [1]यस्य स्थितो भवति।
तत्तुल्याः प्रकृतिः स्यादेवं मुनयोऽध्यवस्यन्ति ॥ ४७ ॥
तत्कालसुहृदरित्वं बलं च नीचोच्चमध्यसंश्रितताम्।
ज्ञात्वा ग्रहस्वभावांस्तेभ्यः संचिन्त्यमन्यदपि ॥ ४८ ॥

जिस ग्रह के त्रिंशांश में सूर्य हो उस ग्रह के समान जातक की प्रकृति होती है, ऐसा मुनियों का कथन है। जन्म समय में ग्रहों की मित्रता, शत्रुता, बल, नीच, उच्च, स्थिति व ग्रह स्वभाव को जानकर अन्य विषय का भी विचार करना चाहिए॥४७-४८॥

जातक के पिता व माता के मरण योग का ज्ञान

क्षीणे शशिनि सपापे माता म्रियते पिता रवौ तद्वत्।
बलिभिर्दृष्टे मिश्रैर्व्याधिः सौम्यैः शुभं भवति ॥ ४९ ॥

यदि जन्मकाल में क्षीण चन्द्रमा पापग्रह से युत हो व पापग्रह से दृष्ट हो तो माता का मरण होता है। इसी प्रकार सूर्य निर्बल सपाप हो एवं पापग्रह से दृष्ट हो तो पिता का मरण कहना चाहिये। यदि शुभ पाप दोनों से युत हो तो क्लेश कारक, यदि शुभ ग्रह से सूर्य चन्द्रमा दृष्ट हों तो पिता माता को शुभ होता है ॥ ४९ ॥

माता पिता के सुख योग का ज्ञान

विपुलविमिलमूर्तिः स्वोच्चगो वा स्वराशौ
गुरुसितयुतइन्दुर्बोधनेनानुदृष्टः ।
अतिशयशुभदाता पञ्चमे वाऽपि मातुः
पितुरपि खलु तद्वत् भास्करः सर्वदैव ॥ ५० ॥

यदि जन्म के समय पञ्चम भाव में परिपूर्ण चन्द्रमा, गुरु वा शुक्र से युत हो और बुध से दृष्ट हो तथा अपनी राशि में वा उच्चराशि में स्थित हो तो माता के लिये अत्यन्त शुभफल देता है। इसी प्रकार सूर्य अपनी राशि में या स्वोच्च राशि में शुक्र गुरु से युत पञ्चम भाव में बुध से दृष्ट हो तो पिता को सुख देनेवाला होता है ॥ ५० ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां सूतिकाध्यायो नवमः ॥

---

[1] यस्येह संस्थितो।

॥ दशमोऽध्यायः ॥

आयुर्ज्ञानाभावे सर्वं विफलं प्रकीर्तितं यस्मात् ।
तस्मात्तज्ज्ञानार्थे रिष्टाध्यायं प्रवक्ष्यामि ॥ १ ॥

जब तक आयु का ज्ञान नहीं होता है तब तक जातकोक्त समस्त फल (विचार) निष्फल होता है । इसलिये आयु ज्ञान के लिये मैं अरिष्टाध्याय (बालारिष्ट) को कहता हूँ ॥ १ ॥

पुरुष-वनिता ग्रहों के बल ज्ञान

ओजे स्थिताः पुमांसः शुक्लेऽह्नि सूरिभिः समाख्याताः ।
युग्मभवनेषु सर्वे कृष्णे निशि योषितो बलिनः ॥ २ ॥

यदि जन्म शुक्ल पक्ष व दिन में हो तो विषम राशि में पुरुष ग्रह, कृष्ण पक्ष रात्रि में जन्म होने पर सम राशि में स्त्री ग्रह बली होते हैं ॥ २ ॥

तीन प्रकार के अरिष्टों का कथन

त्रिविधमिह शास्त्रकारा [1]नियतमनियतं च योगजं प्राहुः ।
योगसमुत्थं तावद्वक्ष्ये पश्चात्तु परिशेषौ ॥ ३ ॥

१ नियत, २ अनियत, ३ योगज ये तीन प्रकार के अरिष्ट शास्त्र कर्ताओं ने वर्णन किये हैं । इन तीनों में प्रथम, मैं योगजअरिष्ट को कहता हूँ । शेष नियत, अनियत अरिष्टों को पीछे कहूँगा ॥ ३ ॥

तृतीय वर्ष में अरिष्ट योग ज्ञान

बृहस्पतिर्भौमगृहेऽष्टमस्थः सूर्येन्दुभौसार्कजदृष्टमूर्तिः ।
अब्दैस्त्रिभिर्भार्गवदृष्टिहीनो लोकान्तरं प्रापयति प्रसूतम् ॥ ४ ॥

जन्म काल के समय यदि भौम की राशि (१, ८) में अष्टम भाव में गुरु हो और सूर्य, चन्द्रमा, भौम, व शनि से दृष्ट हो एवं शुक्र की दृष्टि से रहित (गुरु) हो तो जातक का तीसरे वर्ष में मरण होता है ॥ ४ ॥

जातकाभरण में कहा है—भौमालयेर्कारशनीन्दुदृष्टे । (अरिष्टा० २ श्लो०) ॥४॥

दूसरे वर्ष में अरिष्ट योग ज्ञान

वक्री शनिर्भौमगृहं प्रपन्नश्चन्द्रेऽष्टषष्ठेऽथ चतुष्टये वा ।
कुजेन सम्प्राप्तबलेन दृष्टो वर्षद्वयं जीवयति प्रजातम् ॥ ५ ॥

यदि जन्म समय में वक्री शनि भौम की राशि (१, ८) में हो, एवं चन्द्रमा ६, ८, १, ४, ७, १० में बली भौम से दृष्ट हो तो जातक २ वर्ष जीता है ॥ ५ ॥

जा० भ० में कहा है—षष्ठाष्टमे वापि चतुष्टये वा' (अ० ३ श्लो०) ॥५॥

---

[1] नियममनियमं च ।

नवम वर्ष के बाद अरिष्ट ज्ञान

भास्करहिमकरसहितः शनैश्चरो मृत्युदः प्रसवकाले ।
वर्षैर्नवभिर्यातैरित्याह ब्रह्मशौण्डाख्यः ॥ ६ ॥

यदि जन्म समय में सूर्य चन्द्रमा के साथ शनि हो तो नवम वर्ष के अनन्तर जातक की मृत्यु होती है । यह कथन ब्रह्म शौण्ड का है ॥ ६ ॥

जा० भ० में कहा है–'चन्द्रार्कयुग्जन्मनि भानुसनुः करोति नूनं निधनं नवाब्दैः'॥६॥

१ मास में अरिष्ट का ज्ञान

भौमदिवाकरसौराश्छिद्रे जातस्य भौमगृहे[1] ।
म्रियतेऽवश्यं स नरो यमकृतरक्षोऽपि मासेन ॥ ७ ॥

यदि जन्मकाल में भौम, सूर्य, शनि, मङ्गल को राशि (२, ८) में वा पाठान्तर से शुक्र की राशि (२ । ७ ।) में अष्टम भाव में हों तो जातक यमराज से रक्षित होने पर भी १ मास में अवश्य मरता है ॥ ७ ॥

जा० भ० में कहा है—'मासेन मन्दावनिसूनुसूर्याः' ॥७॥

एक (१) वर्ष में अरिष्ट ज्ञान

एकः पापोऽष्टमगः शुक्रगृहे पापवीक्षितो वर्षात् ।
मारयति नरं जातं सुधारसो येन पीतोऽपि ॥ ८ ॥

यदि जन्म समय में शुक्र की राशि (२ । ७ ।) में अष्टम भाव स्थित एक भी पापग्रह, पापग्रह से दृष्ट हो तो जातक को १ वर्ष में मार देता है चाहे उसने अमृत का पान भी किया हो तब भी मर जाता है ॥ ८ ॥

जा० भ० में कहा है—'एकोऽपि पापोऽष्टमगोऽरिगेहे' ॥८॥

६ वर्ष में अरिष्ट ज्ञान

रविशशिभवने शुक्रो द्वादशरिपुरन्ध्रगः[2] शुभैः सर्वैः ।
दृष्टः करोति षड्भिर्वर्षैर्मरणं किमत्र चित्रं हि ॥ ९ ॥

यदि जन्म के समय में शुक्र, सिंह या कर्क राशि में स्थित होकर बारहवें, षष्ठ या अष्टम भाव में शुभग्रहों से दृष्ट हो तो छटे वर्ष में मरण होता है । इसमें विचित्रता की बात क्या है ॥ ९ ॥

जा० भ० में कहा है—'सूर्येन्दुगेहे दनुजेन्द्रमन्त्री व्ययाष्टमारिस्थितसौम्यखेटैः' ॥९॥

चतुर्थ वर्ष में अरिष्ट का ज्ञान

कर्कटधामनि सौम्यः [3]षष्ठाष्टमसंस्थितो विलग्नर्क्षात् ।
चन्द्रेण दृष्टमूर्तिर्वर्षचतुष्केण मारयति ॥ १० ॥
तीव्रफलराजयोगा यवनाद्यैर्ये विनिर्मितास्तेषु ।
जायन्ते खलु कुलजा रिष्टं तेषु प्रसूतानाम् ॥ ११ ॥

---

[1] यस्य शुक्रगृहे । [2] रन्ध्रगः । [3] षष्ठाष्टव्ययगतो ।

यदि लग्न से ६, ८, १२ में भाव में कर्क राशिस्थ बुध, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो चार वर्ष में मरण होता है। यवनादि आचार्यों ने जिन उत्कृष्ट फलवाले राजयोगों का वर्णन किया है उन योगों में कुलीनों की उत्पत्ति होती है किन्तु उन्हें अरिष्ट का भी भय रहता है ॥ १०-१ ॥

जा० भ० में कहा है—'सोमस्य सूनुर्यदि कर्कटस्थः' ॥१०-११॥

२ मास में अरिष्ट ज्ञान

केतुर्यस्मिन्नृक्षेऽभ्युदितस्तस्मिन्प्रसूयते यो हि।
मासद्वयेन मरणं विनिर्दिशेत्तस्य जातस्य ॥ १२ ॥

जिस नक्षत्र में केतु का उदय हुआ हो, यदि उसी नक्षत्र में किसी का जन्म हो तो जातक का २ मास में निधन होता है ॥ १२ ॥

जा० भ० में कहा है—'केतूदयो भे प्रभवेच्च यस्मिन्' ॥१२॥

शीघ्र अरिष्ट ज्ञान

गगनस्थो दिवसकरः [1]पापैर्बहुभिर्निरीक्षितः सद्यः।
मारयति भौमधामनि शनिभे च न संशयो भवति ॥ १३ ॥

यदि भौम को राशि (१, ८) या शनि की राशि (१०, ११) में दशमभाव स्थित सूर्य, बली पापग्रहों से दृष्ट हो तो शीघ्र मरण होता है इसमें संदेह नहीं है ॥१३॥

जा० भ० में कहा है—'मेषूरणेऽर्को धरणीसुतस्य.....' ॥१३॥

जन्माधिपति के द्वारा शरीर पीड़ा ज्ञान

जन्माधिपतिः पापः पापर्क्षे पापयुग्दृष्टः।
पीड़ां जनयति पुंसां शुभदृष्ट्या न चातितराम् ॥ क १३ ॥

यदि राशीश पापग्रह हो व पापग्रह की राशि में हो व पाप ग्रह से दृष्ट या युत हो तो शरीर पीड़ा देता है। यदि शुभग्रह की दृष्टि हो तो अधिक पीड़ा नहीं देता है ॥ क १३ ॥

विशेष—यह श्लोक सं० वि० वि० की पुस्तक में अधिक प्राप्त होता है।

७ वर्ष में अरिष्ट ज्ञान

लग्ने यद्द्रेक्काणा निगडाहिविहङ्गपाशधरसंज्ञाः।
मरणाय सप्तवर्षैः क्रूरयुता न स्वपतिदृष्टाः ॥ १४ ॥

यदि लग्न में निगड़, सर्प, पक्षी, पाशधर संज्ञक द्रेष्काण पापग्रह से युत हो और द्रेष्काणेश की दृष्टि न हो तो सप्तम वर्ष में निधन होता है ॥ १४ ॥

विशेष—निगडादि द्रेष्काण—"कुलीरमीनालिगताद्दगाणा मध्यावसानप्रथमा भुजङ्गाः। अलिद्वितीयो मृगलेयपूर्वः क्रमेण पाशो निगडो विहङ्गः" ॥ १४ ॥

शरीर पीड़ा ज्ञान

लग्नं लग्नाधिपो यस्य पापयुक्तेक्षितो भवेत्।
पीड़ां करोति जातस्य शुभयुग्दृष्टितोऽल्पिकाम् ॥ क १४ ॥

---

[1] बलिभिः।

यदि जातक का लग्न व लग्नस्वामी पापग्रह से युत दृष्ट हो तो पीड़ा करता है । शुभग्रह की दृष्टि व युति से अल्प पीड़ा होती है ।। क १४ ।।

विशेष—यह पद्य सं० वि० वि० की पुस्तक में अधिक है ।। क १४ ।।

१० या १६ वर्ष में अरिष्ट ज्ञान

राहुश्चतुष्टयस्थो मरणाय निरीक्षितो भवति पापैः ।
वर्षैर्वदन्ति दशभिः षोडशभिः केचिदाचार्याः ।। १५ ।।

यदि जन्मकाल में राहु १, ४, ७, १० भाव में पापग्रह से दृष्ट हो तो किसी के मत से १० वर्ष में किसी के मत से १६ वें वर्ष में मरण होता है ।। १५ ।।

जा० भ० में० कहा है—राहुर्भवेज्जन्मनि केन्द्रवर्ती क्रूरग्रहैश्चापि निरीक्षितश्चेत् ।
करोति वर्षैर्दशभिर्विनाशं वदन्ति वा षोडशभिश्च केचित् ।
(अरि० अ० ११ श्लोक) ।। १५ ।।

शीघ्र मरण ज्ञान

पापास्त्रिकोणकेन्द्रे सौम्याः षष्ठाष्टमव्ययगताश्च ।
सूर्योदये प्रसूतः सद्यः प्राणांस्त्यजति जन्तुः ।। १६ ।।

यदि सूर्योदय के समय जन्म हो और पापग्रह ५, ९, १, ४, ७, १० भाव में हों तथा शुभग्रह ६, ८, १२ भाव में हों तो जातक का शीघ्र मरण होता है ।। १६ ।।

स्वल्पकाल में मरण ज्ञान

अंशाधिपजन्मपती लग्नपतिश्चास्तमुपगता यस्य ।
संवत्सरैस्तु मरणं निर्व्याजं कतिपयैरेव ।। १७ ।।

यदि नवांश पति, राशि स्वामी, लग्नस्वामी ये तीनों जिस जातक के अस्त हों तो अल्प ही वर्षों में मरण होता है ।। १७ ।।

अन्य अरिष्ट ज्ञान

राशिप्रमितैर्वर्षैर्मारयति विलग्नपो रिपुस्थाने ।
मासैर्द्रेक्काणपतिर्दिवसैरंशाधिपो हन्ति ।। १८ ।।
मारयति षोडशाहाच्छनैश्चरः पापवीक्षितो लग्ने ।
संयुक्तो मासेन तु वर्षाच्छुद्धस्तु मारयति ।। १९ ।।

यदि षष्ठ भाव में लग्न स्वामी हो तो षष्ठ भाव स्थित राशि तुल्य वर्ष में, द्रेष्काणपति हो तो राशि तुल्य मास में, लग्ननवांशपति षष्ठभाव में हो तो राशितुल्य दिन में मरण होता है ।

यदि पापदृष्ट शनि लग्न में हो तो सोलह दिन में, पापयुत शनि होने पर १ मास में, यदि पापदृष्ट युत शनि न हो तो १ वर्ष में मरण कारक होता है ।। १८–१९ ।।

अन्य अरिष्ट ज्ञान

क्षीणशरीरश्चन्द्रो लग्नस्थः क्रूरवीक्षितः कुरुते ।
स्वर्गगमनं हि पुंसां कुलीरगोऽजान्परित्यज्य ।। २० ।।

यदि जन्म काल में क्षीण चन्द्रमा कर्क, वृष, मेष राशि को छोड़कर पापग्रह से दृष्ट लग्न में हो तो जातक का स्वर्गगमन होता है ॥ २० ॥

१, ४, ८ वर्ष में अरिष्ट ज्ञान

वर्षान्मारयति शशी षष्ठाष्टमराशिसंस्थितो लग्नात् ।
सद्यः क्रूरैर्दृष्टः सौम्यैरब्दाष्टकाच्चैव ॥ २१ ॥
[1]अशुभशुभैः सन्दृष्टे वर्षचतुष्केण निर्दिशेदन्तम् ।
अनुपातः कर्तव्यः प्रोक्तादू[2]नैर्ग्रहैर्दृष्टे ॥ २२ ॥

यदि चन्द्रमा लग्न से षष्ठभाव वा अष्टम भाव में पापग्रह से दृष्ट हो तो शीघ्र ही १ वर्ष के मध्य में मरण, यदि शुभग्रह से दृष्ट चन्द्रमा हो तो अष्टम वर्ष में निधन होता है। यदि शुभपाप दोनों से दृष्ट हो तो चतुर्थ वर्ष में मरण होता है। ग्रहों की अल्पाधिक दृष्टिवश अनुपात द्वारा मरण काल का निश्चय करना चाहिये ॥ २१–२२ ॥

जा० भ० में० कहा है—सूतिकाले भवेच्चन्द्रः षष्ठे वाऽष्टमसंस्थितः ।
बालस्य कुरुते सद्यो मृत्युं पापविलोकितः ॥

शुभाशुभालोकनतुल्यतायां वर्षैश्चतुर्भिर्निधनं तदानीम् । न्यूनाधिकत्वे सुधिया विधेयस्त्रैराशिकेनैव विनिश्चयोऽयम् (अरि० अ० १३–१४ श्लोक०) ॥ २१–२२ ॥

१ ,६, ८ मास में अरिष्ट ज्ञान

सौम्याः षष्ठाष्टमगाः पापैर्वक्रोपसङ्गतैर्दृष्टाः ।
मासेन मृत्युदास्ते यदि न[3] शुभैस्तत्र सन्दृष्टाः ॥ २३ ॥
लग्नाद्द्वादशधनगैः क्रूरैर्म्रियते च रन्ध्ररिपुयुक्तैः ।
शुभसम्पर्कमयातैर्मासे षष्ठेऽष्टमे वाऽपि ॥ २४ ॥

यदि शुभग्रह षष्ठ अष्टम भाव में वक्रगतिवाले पापग्रह से दृष्ट हो तथा शुभग्रह से अदृष्ट हो तो १ मास में निधन होता है। यदि लग्न से १२, २, ८, ६ भाव में पापग्रह, शुभग्रह से अदृष्ट व पृथक् हों तो ६ या ८ वें मास में मरण होता है ॥२३–२४ ॥

जा० भ० में कहा है—धनान्तगैर्वाऽरिमृतिस्थितैर्वा धर्माष्टमस्थैर्व्ययशत्रुगैर्वा। क्रूरग्रहेर्यो जननं प्रपन्नः षष्ठेऽष्टमे मासि मृतिं प्रयाति ॥ षष्ठाष्टमस्था शुभखेचरेन्द्रा विलोमगैः पापखगैः प्रदृष्टाः । शुभैरदृष्टा यदि ते भवन्ति मासेन नूनं निधनं तदानीम्' ।
(अरि० अ० १५–१६ श्लो०) ॥ २३–२४ ॥

अन्य अरिष्ट ज्ञान

लग्नाधिपजन्मपती षष्ठाष्टमरिःफगौ प्रसवकाले ।
अस्तमितौ मरणकरौ राशिप्रमितैर्वदेद्वर्षैः ॥ २५ ॥
होराधिपतिर्द्यूने पापजितो मरणमेव विदधाति ।
मासेन जन्मनाथस्तद्वच्चन्द्रो न यदि शुभदृष्टः ॥ २६ ॥

---

१. अशुभैः शुभैश्च दृष्टो । २. न्यूनग्रहैर्दृष्टः । ३. तेन शुभैस्तु ।

यदि जन्मकाल में लग्न स्वामी व राशीश ६, ८, १२ भाव में अस्त होकर स्थित हों तो राशि तुल्य वर्ष में मरण होता है। यदि लग्न स्वामी पापग्रह से पराजित होकर सप्तम भाव में शुभग्रह से अदृष्ट हो तो १ मास में मरण होता है। इसी प्रकार यदि राशीश वा चन्द्रमा सप्तम भाव में पापग्रह से पराजित होकर शुभग्रह से अदृष्ट हो तो भी १ मास में मरण कारक होता है ॥ २५–२६ ॥

जा० भ० में कहा है—विलग्नजन्माधिपती भवेतामस्तङ्गतावष्टरिपुव्ययस्थौ। जातस्य जन्तोर्मरणप्रदौ तौ वदन्ति राशिप्रमितैर्हि वर्षैः ॥ होराधिपः पापयुतः स्मरस्थः करोति नाशं खलु जीवितस्य' (अरि० अ० १७–१९ श्लो०) ॥ २५–२६ ॥

नवम वर्ष में अरिष्ट ज्ञान

चन्द्रः कुजरवियुक्तः[1] स्वसुतस्थाने न चापि शुभदृष्टः।
मरणं शिशोः प्रयच्छति वर्षे नवमे न सन्देहः ॥ २७ ॥

यदि जन्मकाल में चन्द्रमा, भौम व सूर्य से युत व शुभग्रह से अदृष्ट मिथुन या कन्या में हो तो जातक का नवम वर्ष में मरण होता है इसमें सन्देह नहीं है ॥ २७ ॥

सर्वार्थ चिन्तामणि में कहा है—तरणीन्दुकुजाः पुत्रस्थाने युक्ता न सौम्यगाः। जातो यमपुरं याति नवमेऽब्दे न संशयः ॥ २७ ॥

जा० भ० में कहा है—युक्तो भवेदारदिवाकराभ्यां निशाकरश्चान्यखगैर्न दृष्टः। स्वसूनुगेहोपगतो विनाशं करोति वर्षे नवमेऽर्भकस्य' (अरि० अ० २० श्लोक) ॥ २७ ॥

चतुर्थ मास में अरिष्ट ज्ञान

होरेश्वरस्तु [2]मृत्यौ पापैः सकलैश्च दृश्यते बलिभिः।
मासि चतुर्थे मरणं जातस्य करोति मुनिवाक्यम् ॥ २८ ॥

यदि लग्न स्वामी अष्टम भाव में समस्त पापग्रहों से दृष्ट हो तो चतुर्थ मास में निधन करता है ऐसा मुनियों का कथन है ॥ २८ ॥

पुनः अन्य अरिष्ट ज्ञान

जन्माधिपतिः सूर्यः स्वपुत्रसहितोऽष्टमे भवति राशौ।
वर्षैं राशिप्रमितैर्मरणाय सितेन सन्दृष्टः ॥ २९ ॥
व्ययाष्टषष्ठोदयगे शशाङ्के पापेन युक्ते शुभदृष्टिहीने।
केन्द्रेषु सौम्यग्रहवर्जितेषु प्राणैर्वियोगं व्रजति प्रजातः ॥ ३० ॥

यदि जन्म राशीश सूर्य, शनि से युत होकर अष्टमभाव में शुक्र से दृष्ट हो तो राशि तुल्य वर्ष में मरण कारक होता है। यदि १२, ८, ६, १ भाव में चन्द्रमा पाप ग्रह से युत व शुभ ग्रह से अदृष्ट एवं केन्द्र (१।४।७।१०) में शुभग्रह न हों तो जातक का निधन होता है ॥ २९–३० ॥

जा० भ० में कहा है—'लग्नास्तरन्ध्रान्त्यगते शशाङ्के पापान्विते सौम्यखगैरदृष्टे। केन्द्रेषु सौम्यग्रहवर्जितेषु कीनाशदेशं हि शिशुः प्रयाति' (अरि० अ० २१ श्लो०) ॥२९-३०॥

---

[1] रविदृष्टः। [2] मूर्तौ।

प्रकारान्तर से अरिष्ट ज्ञान

चक्रस्य पूर्वभागे पापाः सौम्यास्तथेतरे चैव ।
वृश्चिकलग्ने जाता गतायुषो वज्रमुष्टियोगेऽस्मिन् ॥ ३१ ॥
क्षीणे शशिनि विलग्ने पापैः केन्द्रेषु मृत्युसंस्थैर्वा ।
भवति विपत्तिरवश्यं यवनाधिपतेर्मतं[1] चैतत् ॥ ३२ ॥

यदि भचक्र के पूर्वभाग में पाप ग्रह व पश्चिम भाग में शुभ ग्रह हों और वृश्चिक लग्न में जन्म हो तो इस वज्रमुष्टि योग में जातक का निधन होता है। यदि लग्न में क्षीण चन्द्रमा हो और समस्त पाप ग्रह केन्द्र में वा अष्टम भाव में हों तो मरण अवश्य होता है, यह यवन राजा का मत है ॥ ३१-३२ ॥

जा॰ भ॰ में कहा है— रन्ध्रालये वाथ चतुष्टयेषु खलग्रहाणां मिलनं यदि स्यात् । कलानिधौ क्षीणकलाकलापे लग्नस्थिते नश्यति यः प्रसूतः ॥ लग्ने कुलीरेऽप्यथवाऽलिसंज्ञे खलग्रहाः पूर्वदले यदि स्युः । सौम्यः परार्धे खलु वज्रमुष्टिर्योगोऽयमुक्तः प्रकरोति रिष्टम्' (अरि॰ अ॰ २२-२३ श्लोक) ॥ ३१-३२ ॥

अन्य अरिष्ट ज्ञान

राश्यन्तगतैः पापैः सन्ध्यायां तुहिनरश्मिहोरायाम्[2] ।
मृत्युः प्रत्येकस्थैः केन्द्रेषु शशाङ्कपापैश्च ॥ ३३ ॥
द्यूनचतुरस्रसंस्थे[3] पापद्वयमध्यगे शशिनि जातः ।
विलयं प्रयाति नियतं देवैरपि रक्षितो बालः ॥ ३४ ॥

यदि सन्ध्या काल में जन्म हो व पाप ग्रह राशि के अन्तभाग में हों और लग्न में चन्द्रमा की होरा हो, एवं चारों केन्द्र में चन्द्रमा व पापग्रह हों तो मरण होता है। यदि चन्द्रमा दो पापग्रह के मध्य में स्थित होकर ७।४।८ भाव में हो तो देवता से रक्षित होने पर भी जातक का निश्चय मरण होता है ॥ ३३-३४ ॥

जा॰ भ॰ में कहा है —रन्ध्राम्बुजायाभवनेषु खेटा विधौ च पापद्वयमध्ययाते । यस्य प्रसूतिः स तु याति कामं यमस्य धामं प्रवदन्ति पूर्वे । सन्ध्याद्वये भान्त्यगताश्च पापाश्चन्द्रस्य होरा यदि जन्मकाले । चतुर्षु केन्द्रेषु शशाङ्कपापाः स याति बालः किल कालगेहम्' (अरि॰ अ॰ २६-२७) ॥ ३३-३४ ॥

पुनः अन्य अरिष्ट ज्ञान

पापद्वयमध्यगतो होरासप्ताष्टमस्थितो चन्द्रे ।
सौम्यैरबलैर्दृष्टे जातो म्रियते ध्रुवं ह्यत्र[4] ॥ ३५ ॥
द्यूनाष्टमगैः पापैः क्रूरग्रहवीक्षितैः सह जनन्या ।
म्रियते शुभसंदृष्टैः सत्यस्य मताद्वदेद्व्याधिम् ॥ ३६ ॥

यदि दो पापग्रह के बीच में चन्द्रमा, लग्न वा सप्तम, वा अष्टमभाव में निर्बल शुभ ग्रह से दृष्ट हो तो निश्चय जातक का निधन होता है। यदि सप्तम अष्टम भाव में पाप

---

१. पतेर्न सन्देहः । २. वेलायां । ३. संस्थैः । ४. बालः ।

ग्रह से दृष्ट पाप ग्रह हों तो माता के साथ जातक का मरण होता है। यदि उक्त योग पर शुभ ग्रह की दृष्टि हो तो सत्याचार्य के मत से व्याधि मात्र होती है ॥ ३५–३६ ॥

जा० भ० में कहा है—स्मराष्टमस्था यदि पापखेटाः पापेक्षिताः साधुखगैर्न दृष्टाः। करोति रिष्टं त्वरयार्भकस्य साकं जनन्याभिमतं बहूनाम्' (अरि० अ० २८ श्लो०)।३५-३६।

माता के सहित अरिष्ट ज्ञान

ग्रहणोपगते चन्द्रे सक्रूरे लग्नगे कुजेऽष्टमगे।
मात्रा सार्धं म्रियते चन्द्रवदर्के च शस्त्रेण ॥ ३७ ॥

यदि जन्म के समय चन्द्रमा का ग्रहण हो और चन्द्रमा पापग्रह के साथ लग्न में व मङ्गल अष्टम भाव में हो तो माता के सहित जातक का मरण होता है। यदि सूर्य ग्रहण काल में जन्म हो व पाप ग्रह से युत सूर्य लग्न में हो और अष्टम भाव में मङ्गल हो तो माता के सहित जातक का निधन शस्त्र (आपरेशन) से होता है ॥ ३७ ॥

जा० भ० में कहा है—निजोपरागे त्वशुभान्वितेन्दुर्लग्नस्थितो भूमिसुतोऽष्टमस्थः। ततो जनन्या सह बालकस्य मृत्युस्तथार्के सति शस्त्रघातः' (अरि० अ० २९ श्लो०) ॥३७॥

शीघ्र निधन (अरिष्ट) ज्ञान

क्षीणे शशिनि विलग्ने कण्टकनिधनाश्रितैस्तथा पापैः।
सौम्यादृष्टे मृत्युः सद्यः सत्यस्य निर्देशः[1] ॥ ३८ ॥

यदि क्षीण चन्द्रमा लग्न में हो, एवं पाप ग्रह १।४।७।८।१० भाव में शुभ ग्रह से अदृष्ट हों तो शीघ्र मृत्यु होती है—ऐसा सत्याचार्य जी का कथन है ॥ ३८ ॥

शीघ्र अरिष्ट ज्ञान

द्यूनगतेऽर्के लग्ने यमे कुजे वा विपर्यये वाऽपि।
अन्यतरयुते वेन्दावशुभैर्दृष्टेऽचिरान्मृत्युः ॥ ३९ ॥
होरानिधनास्तगतैः पापैः क्षीणे व्ययस्थिते[2] चन्द्रे।
जातस्य भवेन्मरणं सद्यः केन्द्रेषु चेन्न शुभाः[3] ॥ ४० ॥

यदि जन्म समय में सप्तम भाव में सूर्य हो व लग्न में शनि वा भौम हो तो शीघ्र मरण होता है। अथवा सप्तमभाव में शनि वा भौम हो और लग्न में सूर्य हो तो शीघ्र मरण, यद्वा यदि चन्द्रमा भौम वा शनि से युत एवं पाप ग्रह से दृष्ट हो तो शीघ्र निधन होता है। यदि लग्न, अष्टम, सप्तम भाव में पाप ग्रह हों तथा क्षीण चन्द्रमा व्यय (द्वादश) भाव में हो और केन्द्र में शुभग्रह न हों तो शीघ्र मृत्यु होती है ॥३९–४०॥

जा० भ० में कहा है—भूमीसुते वार्कसुते विलग्ने भानौ स्मरस्थानगतेऽन्यथा वा। युक्ते तयोरन्यतमेन चन्द्रेऽचिरेण मृत्युः परिवेदितव्यः ॥ पापैर्विलग्नाष्टमधामसंस्थैः क्षीणे विधौ द्वादशभावयाते। केन्द्रेषु सौम्या न भवन्ति नूनं शिशोस्तदानीं निधनं प्रकल्प्यम्' (अरि० अ० ३०-३१ श्लो०) ॥ ३९-४० ॥

---

[1] निर्देशात्। [2] व्यवस्थिते। [3] चेदशुभा।

पुनः शीघ्र अरिष्ट ज्ञान

लग्नान्त्यनवमनैधनसंयुक्ताश्चन्द्रसूर्यसौराराः ।
जातस्य वधकृतः[1] स्युः सद्यो गुरुणा न चेद्दृष्टाः ॥ ४१ ॥
लग्ने चन्द्रेऽर्के वा पापा बलिनस्त्रिकोणनिधनेषु ।
सौम्यैरदृष्टयुक्ताः[2] सद्यो मरणाय कीर्तिता यवनैः ॥ ४२ ॥

यदि जन्म के समय लग्न, द्वादश, नवम, अष्टम भाव में चन्द्रमा, सूर्य, शनि, भौम से युत व गुरू से अदृष्ट हो तो जातक का शीघ्र निधन होता है । यदि लग्न में चन्द्रमा वा सूर्य हो और बलवान् पाप ग्रह पञ्चम, नवम, अष्टम भाव में शुभ ग्रहों की दृष्टि व युति से हीन हों तो शीघ्र मरण होता है—ऐसा यवनाचार्यों का मत है ॥४१–४२॥

नवम वर्ष में अरिष्ट ज्ञान

शुक्रो रविशनिसहितो मारयति नरं सदा प्रसवकाले ।
दृष्टोऽपि देवगुरुणा नवभिर्वर्षैर्न सन्देहः ॥ ४३ ॥

यदि जन्म काल में शुक्र, सूर्य शनि से युत हो तथा गुरू से दृष्ट भी हो तो जातक का नवम वर्ष में मरण होता है, इसमें सन्देह नहीं है ॥ ४३ ॥

जा० भा० में कहा है—भानुभानुतनयोशनसः स्युश्चेत्प्रसूतिसमये खलयुक्ताः । यद्यपीन्द्रगुरुणा परिदृष्टा रिष्टदास्तनुभृतां नवमेऽब्दे' (अरि० अ० ३३ श्लो०) ॥ ४३ ॥

मातृ अरिष्ट ज्ञान

यत्रस्थस्तत्रस्थो रुधिरार्कशनैश्चरेक्षितश्चन्द्रः ।
जननीमृत्युं कुर्यान्न तु सौम्यनिरीक्षितः सद्यः ॥ ४४ ॥

यदि जन्म के समय किसी भी भाव में चन्द्रमा, भौम, सूर्य, शनि इन तीनों से दृष्ट हो तो माता का शीघ्र निधन होता है । यदि चन्द्रमा शुभ ग्रह से दृष्ट हो तो माता का निधन नहीं होता है ॥ ४४ ॥

वृहत्पाराशर में कहा है—'त्रिभिः पापग्रहैः सूतौ चन्द्रमा यदि दृश्यते । मातृनाशो भवेत्तस्य शुभदृष्टे शुभं वदेत्' ॥ (९ अ० २४ श्लो०) ॥ ४४ ॥

पितृ अरिष्ट ज्ञान

रुधिरशनैश्चरदृष्टो दिवसकरो दिवसजन्मनि तु यस्य ।
पापयुतो वा हन्यात् पितरं निःसंशयं जातः ॥ ४५ ॥
रहितो बुधगुरुशुक्रैर्जन्मनि रुधिराङ्गसौरसहितोऽर्कः ।
कथयति पितरमतीतं पितुरपि च शरीरकर्तारम् ॥ ४६ ॥

जिस जातक का दिन में जन्म हो और सूर्य, भौम शनि से दृष्ट हो अथवा सूर्य, पाप ग्रह से युत हो तो निश्चय पिता का मरण होता है । यदि जन्म के समय में सूर्य, भौम और शनि से युत हो तथा बुध, गुरू, शुक्र से युत न हो तो जातक के पिता व पितामह का मरण कहना चाहिए ॥ ४५–४६ ॥

---

१. वधं कुर्युः । २. सौम्यैरमिश्रदृष्टाः ।

पिता के अरिष्ट का ज्ञान

पापद्वयमध्यगतो दिवसकरो दिवसजन्मनिरतस्य ।
पापयुतो वा हन्यात् पितरं निःसंशयं जातः ॥ ४७ ॥
[1]सूर्यादष्टमराशौ यदि युक्तौ सौरलोहितौ प्रसवे ।
सौम्यादृष्टौ निधनं कुर्यातां सद्य एव पितुः ॥ ४८ ॥
पापग्रहसंयुक्तश्चरराशिगतो दिवाकरः प्रसवे ।
विषशस्त्रजलान्मृत्युं कथयत्यल्पायुषं पितरम् ॥ ४९ ॥

यदि जातक का जन्म दिन में हो और सूर्यं दो पाप ग्रह के मध्य में हो, अथवा सूर्यं पाप ग्रह से युक्त हो तो अवश्य पिता का मरण होता है। यदि जन्म काल में सूर्यं की राशि से अष्टम राशि में पाठान्तर से सप्तम राशि में, शनि व भौम शुभग्रह से अदृष्ट हों तो पिता का शीघ्र मरण करते हैं। यदि जन्माङ्ग में चरराशि में सूर्यं, पाप ग्रह से युक्त हो तो अल्पायु पिता की मृत्यु विष या शस्त्र या जल से होती है ॥ ४७–४९ ॥

माता के साथ मरण योग का ज्ञान

चन्द्रादष्टमराशौ नवमे वा सप्तमेऽपि वा पापाः ।
सर्वे तत्रान्यतमे हन्युर्जातं सह जनन्या ॥ ५० ॥

यदि चन्द्रमा से अष्टम राशि में वा नवम में वा सप्तम में समस्त पाप ग्रह हों या एक पाप ग्रह हो तो माता के साथ जातक को मारते हैं अर्थात् दोनों का मरण होता है ॥ ५० ॥

जन्म के समय पिता का ज्ञान

चरराशिगते सूर्ये दिनजन्मनि वीक्षिते कुपुत्रेण[2] ।
कथयति विदेशयातं जातस्य शरीरकर्तारम् ॥ ५१ ॥
चरराशिगतं सौरं यद्यर्को रात्रिजन्मनीक्षेत ।
अत्रापि विदेशस्थं कथयति पितरं प्रसूतस्य ॥ ५२ ॥

यदि जातक का जन्म दिन में हो और चरराशिगत सूर्यं, भौम से दृष्ट हो तो पिता को परदेश में जन्म के समय कहना चाहिये। यदि जातक का जन्म रात्रि में हो और चरराशिगत शनि सूर्यं से दृष्ट हो तो, इस योग में भी जन्म के समय पिता को परदेश में कहना चाहिये ॥ ५१–५२ ॥

पिता के मरण योग का ज्ञान

रुधिरसहितस्तु सौरश्चरभवने रात्रिजन्मनिरतस्य ।
कथयति पितरमतीतं परदेशे नात्र सन्देहः ॥ ५३ ॥
यत्रस्थस्तत्रस्थः स्वपुत्ररुधिराङ्गसङ्गतः सूर्यः ।
प्राग्जन्मनो निवृत्तं कथयति पितरं प्रसूतस्य ॥ ५४ ॥

---

[1] सूर्यात्सप्तम । [2] तु पुत्रेण ।

यदि जातक का जन्म रात्रि में हो और चरराशिस्थ शनि, भौम से युक्त हो तो पिता का मरण परदेश में होता है—इसमें सन्देह नहीं है। यदि जन्माङ्ग में जिस किसी भी राशि में सूर्य, शनि व भौम से युत हो तो जन्म से पूर्व ही पिता का निधन कहना चाहिये ॥ ५३–५४ ॥

पुनः माता के साथ मरण योग का ज्ञान

जन्माष्टसप्तषष्ठद्वादशसंस्थेषु चैव पापेषु।
माता सुतेन सार्धं म्रियते नास्त्यत्र सन्देहः ॥ ५५ ॥

यदि जन्म के समय पाप ग्रह, प्रथम, अष्टम, सप्तम, षष्ठ, द्वादश, भाव में हों तो निःसन्देह माता के साथ जातक का निधन होता है ॥ ५५ ॥

माता व जातक में १ के मरण का ज्ञान

जीवति माता म्रियते सूनुः [1]षष्ठाष्टमेषु पापेषु।
जन्माष्टसप्तमेषु च जीवति सूनुर्म्रियेत तन्माता ॥ ५६ ॥

यदि कुण्डली में ६।८ भाव में पाठान्तर से ६।१२ भाव में सब पापग्रह हों तो माता जीती है और बालक (जातक) मरता है। यदि लग्न, अष्टम, सप्तम भाव में पापग्रह हों तो बालक जीता है और उसकी माता का मरण होता है ॥ ५६ ॥

नेत्र हानि योग ज्ञान

वक्रो वा सौरो वा द्वादशसंस्थो नयनहन्ता।
दक्षिणनयनं सौरो वाममथाङ्गारको हन्यात् ॥ ५७ ॥
युगपच्चन्द्रादित्यौ द्वादशभे निष्ठितौ[2] ग्रहौ स्याताम्।
कुरुतः प्रसूतमन्धं पापः षष्ठेऽथवा निधने ॥ ५८ ॥
अथवाप्यन्यतरयुते द्वादशभे वापि जायमानस्य।
अत्रापि हरेन्नयनं दक्षिणमर्कः शशी सव्यम् ॥ ५९ ॥
स्वर्भानुनोपसृष्टा यदि होरा दिनकरश्च जामित्रे।
जातस्तत्र मनुष्यो निःसन्दिग्धं [3]भवत्यन्धः ॥ ६० ॥

जिस जातक के जन्माङ्ग चक्र में द्वादश भाव में भौम अथवा शनि हो तो नेत्र हानि होती है। यदि शनि हो तो दक्षिण नेत्र की, भौम हो तो वाम नेत्र की हानि होती है। यदि बारहवें भाव में सूर्य चन्द्र दोनों ही हों तथा षष्ठ वा अष्टम भाव में पाप ग्रह हों तो जन्म से ही जातक अन्धा होता होता है। अथवा इन दोनों (सूर्य-चन्द्र) में एक भी बारहवें भाव में हो तो नेत्र हानि होती है। यहाँ भी सूर्य दक्षिण नेत्र की, चन्द्र वाम नेत्र की हानि करता है। यदि राहु लग्न में हो और सप्तम भाव में सूर्य हो तो जातक निश्चय ही अन्धा होता है ॥ ५७–६० ॥

---

१. षष्ठान्त्यगेषु। २. विष्ठितौ। ३. भवेदन्धः।

प्रकारान्तर से नेत्र हानि योग ज्ञान

धनराशौ द्वादशभे चन्द्रः सूर्यश्च [1]निष्ठितो यत्र।
तत्रापि भवत्यन्धो यद्यष्टमषष्ठयोः पापौ ॥ ६१ ॥
रजनिकरः षष्ठगतो निधने सूर्यो रवेः सुतस्तु[2] शुभे (व्यये)।
वक्रः कुटुम्बराशावत्राप्यन्धो भवेज्जातः ॥ ६२ ॥
रुधिराङ्गसौरयुक्तश्चन्द्रो निधनेऽथवाऽपि षष्ठे वा।
पित्तश्लेष्मविकारैर्दृष्टिं हन्यादशुभयुक्तः ॥ ६३ ॥
दक्षिणमष्टमसंस्थः सव्यं तु हरेत्समाश्रितः षष्ठम्।
सौम्यैर्निरीक्षिततनुः[3] सद्यो न हरेत्तु [4]पश्चाद्वा ॥ ६४ ॥
दिनकरसुतेन सहितो निधने चान्त्ये[5] समाश्रितश्चन्द्रः।
वातश्लेष्मविकारैर्दृष्टिं हन्यादशुभदृष्टः ॥ ६५ ॥
निधने दक्षिणनन्नं त्यागे सव्यं हरेत्तु नियमेन।
सौम्यैस्तु दृश्यमाने[6] न हरेदथवा हरेत्पश्चात् ॥ ६६ ॥
एतेनैव तु विधिना सौरारदिवाकराश्रितश्चन्द्रः।
कुर्याद्दृष्टिविकारं नानारोगैर्ध्रुवं जन्तोः ॥ ६७ ॥

यदि द्वितीय भाव में चन्द्र व द्वादशभाव में सूर्य हो तथा अष्टम व षष्ठ भाव में पाप ग्रह हों तो जातक अन्धा होता है। यदि षष्ठ भाव में चन्द्रमा व अष्टम भाव में सूर्य, शनि व्ययभाव में व भौम द्वितीय भाव में हो तो इस योग में भी जातक अन्धा होता है। (यहाँ रवेः सुतस्तु शुभे, यह पाठ युक्ति संगत प्रतोत नहीं होता है, शुभे के स्थान पर व्यये यह नेत्र विचार की दृष्टि से उचित प्रतोत होता है सं० वि० वि० की मातृका में ६२ वां श्लोक नहीं है)। यदि चन्द्रमा भौम व शनि से युत होकर षष्ठ भाव में वा अष्टम भाव में हो अथवा किसी भी पाप ग्रह से युत होकर ६ वा ८ में हो तो पित्त वा कफ के विकार से जातक का नेत्र नष्ट होता है। यदि अष्टम में स्थित हो तो दक्षिण नेत्र, षष्ठ में स्थित चन्द्रमा हो तो वाम नेत्र नष्ट होता है। यदि योग शुभग्रह से दृष्ट हो तो शीघ्र अर्थात् जन्म के समय में नहीं, पीछे कालान्तर में नेत्र नष्ट होता है। यदि चन्द्रमा सूर्य के साथ अष्टम भाव में वा व्यय भाव में पाप ग्रह से दृष्ट हो तो वायु या कफ के विकार से नेत्र नष्ट होता है। यह योग यदि अष्टम में हो तो दक्षिण नेत्र, व्यय भाव में हो तो वाम नेत्र नष्ट होता है। इसी प्रकार यदि चन्द्रमा, शनि सूर्य से युत हो तो नाना प्रकार के रोगों से निश्चय ही जातक के नेत्र में विकार होता है ॥ ६१-६७ ॥

---

१. विष्ठितो। २. सुतो धनभे। ३. निरीक्षित। ४. नयनं हरेद्धरेत्पश्चात्। ५. न्यतरमाश्रितश्चन्द्रः। ६. मानो।

कर्ण (कान) रोग योग ज्ञान

एकादशे तृतीये होरायां पापसंयुते शशिनि।
कर्णविकलो नरः स्यात्पापग्रहवीक्षिते सद्यः॥ ६८॥
नवमे पञ्चमराशौ पापग्रहवीक्षितौ ग्रहौ स्याताम्।
श्रोत्रोपघातमतुलं कुर्यातां जातमात्रस्य ॥ ६९॥
नवमे दक्षिणकर्णं वामं वै पञ्चमे ग्रहो हन्यात्।
अत्रैव सौम्यभे वा शुभदृष्टे वा शुभं वाच्यम्॥ ७०॥

यदि कुण्डली में पापग्रह से युत चन्द्रमा, एकादश, वा तृतीय, वा लग्नभाव में पापग्रह से दृष्ट हो तो जातक को शीघ्र ही कर्ण (कान) रोग होता है। यदि नवम भाव व पञ्चम भाव में ग्रह, पापग्रह से दृष्ट हों तो जातक के कानों में अधिक आघात (कष्ट वा रोग) करते हैं। यदि नवम भाव में ग्रह पापग्रह से दृष्ट हो तो दाहिना (दक्षिण) कान, तथा पञ्चम में ग्रह हों तो वाम कान में रोग होता है अर्थात् नष्ट होता है। यहाँ भी यदि शुभग्रह की राशि में, वा शुभग्रह से योग दृष्ट होने पर शुभ फल कहना चाहिये॥ ६८–७०॥

चन्द्र राशि से कर्ण रोग ज्ञान

राशौ होरान्तरं प्राप्य यो यस्मिन् व्याधिमाप्नुयात्।
तच्चास्य[1] होराप्रसवे चन्द्रस्थानं च यद्भवेत्॥ ७१॥
सव्यापसव्यभागे योगमथैव ग्रहास्तु संप्राप्ताः।
कुर्युर्नृणां च चिह्नं व्यङ्गभयं पापवीक्षिताः सौम्याः॥ ७२॥
विदित्वा त्रितयं ह्येतत् कृत्स्नस्य तु विशेषतः।
शुभाशुभौ तु विज्ञेयौ ग्रहसंयोगकारणौ॥ ७३॥

यदि जन्मलग्न के अतिरिक्त जो व्यक्ति जिस राशि के चन्द्रमा में रोग प्राप्त करता है उसे ही उस (रोग) का लग्न समझ कर रोग का विचार करना चाहिये, और जन्मकालीन चन्द्रमा से भी विचार करना चाहिये। इस प्रकार योग कारक ग्रहों से दक्षिण या वाम भाग में सौम्य (शुभ) ग्रह चिह्न करते हैं यदि वे पापग्रह से दृष्ट हों तो शरीर के उस अङ्ग को विरूप करते हैं। इन तीनों (जन्म लग्न, जन्मराशि, रोगोपत्ति समय चन्द्रराशि) को समझ कर विशेष रूप से ग्रहों के संयोग का कारण जानकर शुभाशुभ फल कहना चाहिये॥ ७१–७३॥

तीन दिन जीवन योग ज्ञान

चन्द्रादित्यौ तृतीयस्थौ [2]मीनक्षेत्रं स यस्य तु।
व्याधिं तत्र विजानीयात् त्रिरात्रं तस्य जीवितम्॥ ७४॥

---

१. तस्माच्च। २. क्षेत्रस्य।

जिस जातक की कुण्डली में मीन राशि के सूर्य व चन्द्रमा तृतीय भाव में हों तो जन्म से ही व्याधि (रोग) प्राप्त करके ३ दिन में उसका जीवन समाप्त होता है ।।७४।।

१ दिन जीवन योग ज्ञान

अतस्तृतीये नक्षत्रे समस्ते व्यस्तगेऽपि वा ।
रवौ रात्रिं परां जीवेच्चन्द्रे दशममाश्रिते ।। ७५ ।।

यदि चन्द्रमा दशम स्थान (भाव) में हो और चन्द्रमा से तृतीय नक्षत्र में सूर्य सब पापग्रहों से युत हो अथवा अकेला ही हो तो १ दिन जातक का जीवन होता है ।।७५।।

सात दिन जीवन योग ज्ञान

सहितौ चन्द्रजामित्रे यस्याङ्गारकभास्करौ ।
जातस्य तस्य हि तदा भवेत्सप्ताहजीवितम् ।। ७६ ।।

जिस जातक के चन्द्रमा से सप्तम भाव में भौम सूर्य दोनों हों तो उस जातक का जीवन सात दिन का होता है ।। ७६ ।।

रोगारम्भ से अरिष्ट ज्ञान

चतुरस्रस्थिताः पापा वामदक्षिणगा यदा ।
तदा यो व्याधिमाप्नोति दशरात्रं स जीवति ।। ७७ ।।
त्रिकोणे दक्षिणे सूर्यश्चन्द्रो वामे यदा भवेत् ।
यस्तदा लभते व्याधिं द्वादशाहं स जीवति ।। ७८ ।।

यदि जन्म के समय चतुर्थ, अष्टम भाव में पापग्रह हों और वे पापग्रह १२ । २ में हो जांय उस समय में यदि जातक रोग प्राप्त करता है तो १० दिन केवल जीता है । यदि रोगारम्भ के समय पञ्चम सूर्य और नवम चन्द्रमा हो तो १२ दिन का जीवन होता है ।। ७७-७८ ।।

पुनः रोगारम्भ से अरिष्ट ज्ञान

त्रिकोणस्थो यदा चन्द्रश्चतुरस्रेऽथ भास्करः[1] ।
तदा दुर्व्याधिना [2]युक्तस्त्रिरात्रं नातिवर्तते ।। ७९ ।।
यदा होराचतुर्थस्थश्चन्द्रः षष्ठस्थितो रविः ।
अष्टादशाहं च नरस्तदा व्याधिसमन्वितः ।। ८० ।।
रविर्यदा चन्द्रमसस्त्रिकोणस्थानमाश्रितः ।
विंशतिं दिवसान् जीवेत्तदा व्याधिभयार्दितः ।। ८१ ।।
होराष्टमस्थितः सूर्यः सौरभौमनिरीक्षितः ।
यः पुमान् प्राप्नुयाद्व्याधिं न स जीवेद्विपद्यते[3] ।। ८२ ।।

यदि रोगारम्भ समय में ९ वा ५ भाव में चन्द्रमा हो तथा चतुर्थ वा अष्टम में सूर्य हो तो इस योग में दुष्ट रोग से युक्त होकर तीन दिन से अधिक जातक नहीं जीता है।

---

[1] भास्करौ । [2] पुत्र । [3] विपत्स्यते ।

यदि लग्न से चतुर्थ भाव में चन्द्रमा हो तथा षष्ठ भाव में सूर्य हो तो अठारह दिन रोग से युक्त रहकर मरण होता है। यदि चन्द्रमा से नवम वा पञ्चम भाव में सूर्य हो तो इस स्थिति में रोग आरम्भ होने पर बीस दिन जातक जीता है। यदि रोगकालीन लग्न से अष्टम भाव में सूर्य, शनि भौम से दृष्ट हो तो उस व्यक्ति का जीवन न होकर मरण होता है ॥ ७९–८२ ॥

पुनः जन्माऽङ्ग से अरिष्ट योग ज्ञान

होरायां कण्टके भौमो भवेद्यस्य प्रजायतः।
न च केन्द्रगतो जीवो जायते मृत एव सः॥ ८३ ॥
अथ होरागतः सूर्यो न च केन्द्रे बृहस्पतिः।
निधने वा परः कश्चित् जातमात्रो विनश्यति॥ ८४ ॥
होरायां कण्टके चन्द्रो न च केन्द्रे बृहस्पतिः।
निधने [1]वा परः कश्चित् जातमात्रो विनश्यति॥ ८५ ॥
द्रेक्काणजामित्रगतो यस्य स्याद्दारुणग्रहः।
होरागतः शशाङ्कश्च सद्यो हरति जीवितम्॥ ८६ ॥

यदि १।४।७।१० भाव में भौम हो, और गुरु केन्द्र में न हो तो मृत का जन्म होता है। यदि जन्म काल में सूर्य लग्न में हो तथा गुरु केन्द्र से अन्य स्थान में हो तो जन्म के साथ ही मरण होता है। अथवा अष्टम में कोई पापग्रह हो और गुरु केन्द्र से भिन्न स्थान में हो तो भी जन्म के साथ ही मरण होता है। यदि लग्न या केन्द्र में चन्द्रमा हो और गुरु केन्द्र से अन्य स्थान में हो और अष्टम में कोई पापग्रह हो तो जन्म के साथ मरण होता है। यदि जन्म कालीन लग्नस्थ द्रेष्काण से सप्तम राशि में पापग्रह हो और लग्न में चन्द्रमा हो तो शीघ्र मरण होता है॥ ८४–८६ ॥

एक मास वा सात दिन की आयु योग का ज्ञान

ग्रहाः समेयुर्बहवो निधने यस्य जन्मनि।
मासं वा सप्तरात्रं वा तस्यायुः समुदाहृतम्॥ ८७ ॥

जिस जातक के जन्म काल के समय अष्टम भाव में अधिक ग्रह हों तो उसकी आयु एक मास या सात दिन की होती है॥ ८७ ॥

मृत जातक योग ज्ञान

शनैश्चरश्च होरायां निधने च महीसुतः।
न च देवगुरुः केन्द्रे मृतगर्भः प्रसूयते॥ ८८ ॥

यदि लग्न में शनि हो व अष्टम में भौम हो और गुरु केन्द्र (१।४।७।१०) से अन्य भाव में हो तो मृतक का जन्म होता है॥ ८८ ॥

---

[1] पापकः।

त्रिकोण गत पापग्रह से अरिष्ट योग ज्ञान

यः प्राग्विलग्ने द्रेक्काणस्तत्समानो यदा ग्रहः।
भवेत्त्रिकोणगाः पापाग्तत्समानफलो भवेत् ॥ ८९ ॥
सौरे व्याधिमवाप्नोति मरणं धरणीसुते।
सूर्यो स्याद्व्याधिवैकल्यं मरणं नात्र संशयः ॥ ९० ॥

जन्म के समय लग्न में जो द्रेष्काण वर्तमान हो अर्थात् जिस राशि का द्रेष्काण हो यदि वह राशि त्रिकोण (५ । ९) में पाप ग्रह से युत हो तो अग्रिम श्लोक में कथित ग्रह अपने समान फल देता है। यथा—यदि शनि हो तो व्याधि, भौम हो तो मरण सूर्य हो तो रोग से शरीर में कष्ट होकर मरण होता है इसमें सन्देह नहीं है ॥८९-९०॥

पुनः अरिष्टयोगज्ञान

अथ होरागतो भौमः केन्द्रस्थश्च भृगोः सुतः।
स वै मरणमाप्नोति होरायां पुनरागते ॥ ९१ ॥

यदि जन्म लग्न में भौम हो और शुक्र केन्द्र में हो तो पुनः जब भौम लग्नगत राशि में आता है तब बालक (जातक) का मरण होता है ॥ ९१ ॥

शीघ्र मरण योग ज्ञान

गुरुस्त्रिकोणे होरायां होरेशश्च महीसुतः।
तस्यान्यतरकेन्द्रस्थः सद्यो जीवितनाशनः ॥ ९२ ॥

यदि जन्म के समय गुरु त्रिकोण में हो और लग्न स्वामी लग्न में हो तथा गुरु वा जन्म लग्न से केन्द्र में भौम हो तो शीघ्र मरण होता है ॥ ९२ ॥

१०८ वर्ष की आयु योग ज्ञान

न नैधने [1]ग्रहः कश्चित् पापो होरागतोऽथवा।
केन्द्रे [2]वान्यतरे जीवो जीवत्यष्टशतोत्तरम् ॥ ९३ ॥
न केन्द्रे कश्चिदाग्नेयो न त्रिकोणे न नैधने।
गुरुशुक्रौ च केन्द्रस्थौ जीवेदष्टशताधिकम् ॥ ९४ ॥

यदि जन्म के समय अष्टमभाव व लग्न में कोई भी पापग्रह न हो तथा किसी भी केन्द्र राशि (१।४।७।१०) में गुरु हो तो १०८ वर्ष जातक जीता है। यदि केन्द्र, त्रिकोण व अष्टम भाव पापग्रह से रहित हों तथा गुरु, शुक्र केन्द्र में हों तो जातक १०८ वर्ष जीता है ॥ ९३–९४ ॥

१२० वर्ष की आयु योग ज्ञान

यदि होरागतः शुक्रः केन्द्रेष्वन्यतमे गुरुः।
नैधने न च पापः स्यात् स विंशं जीवते शतम् ॥ ९५ ॥

यदि लग्न में शुक्र हो और किसी भी केन्द्र में गुरु हो तथा अष्टम भाव में पापग्रह न हों तो १२० वर्ष जातक जीता है ॥ ९५ ॥

---

[1] गुरुः। [2] केन्द्रेष्वन्यतमे।

अरिष्ट ज्ञान

राशौ कर्कटहोरायां [1]गुरुशुक्रौ समन्वितौ।
गुरुश्चन्द्रयुतो वाऽपि निधने न च कश्चन॥ ९६॥

यदि कर्क लग्न में गुरु शुक्र हों वा गुरु चन्द्रमा से युत कर्क लग्न में हो तथा अष्टम में पापग्रह न हों तो अरिष्ट होता है॥ ९६॥

देवतुल्य आयु योग ज्ञान

न च केन्द्रगताः पापा न त्रिकोणे न नैधने।
तस्यायुरमरप्रख्यं निश्चयेन च कीर्त्यते॥ ९७॥

यदि केन्द्र, त्रिकोण व अष्टम भाव में पापग्रह न हों तो जातक की देव तुल्य आयु निःसंदेह कहना चाहिये॥ ९७॥

गतायु योग ज्ञान

निधनास्तव्ययलग्नत्रिकोणगाः क्षीणचन्द्रसंयुक्ताः।
पापा बलिनः शुभदैरदृश्यमाना गतायुषः[2] प्रायः॥ ९८॥

यदि ८।७।१२।१।९।५ इन भावों में क्षीण चन्द्रमा बली पापग्रह से युत हो तथा शुभग्रहों से अदृष्ट हो तो जातक की आयुगत कहना चाहिये अर्थात् जीवन नहीं होता है॥ ९८॥

अनुक्तकाल योगों में मरण समय ज्ञान

योगे बलिनः स्थानं[3] स्वं वा लग्नं गतेऽपि वा चन्द्रे।
बलवति पापैर्दृष्टे वर्षान्ते मृत्युकालः स्यात्॥ ९९॥

जिन योगों में मरण का समय नहीं लिखा है उनमें योग करने वाले ग्रहों में से जो बली ग्रह हो उसकी राशि में जब चन्द्रमा का संचार हो तब अरिष्ट कहना अथवा चन्द्रमा पुनः अपनी राशि में वा लग्न में आये और पापग्रहों से दृष्ट हो तो मरण होता है। यह विचार १ वर्ष के भीतर होता है॥ ९९॥

वृह० जा० में कहा है—'योगे स्थानं गतवति बलिनश्चन्द्रे स्वं वा तनुगृहमथवा'
(६ अ० १२ श्लो)॥ ९९॥

पुनः पाँचवें वर्ष में अरिष्ट योग ज्ञान

रविचन्द्रभौमगुरुभिः कुजगुरुसौरेन्दुभिस्तथैकस्थैः।
रविशनिभौमशशाङ्कैर्मरणं खलु पञ्चभिर्वर्षैः॥ १००॥

यदि जन्म के समय में सूर्य-चन्द्र-भौम-गुरू एकराशि में हों, वा भौम-गुरू-शनि-चन्द्र एक राशि में हों, अथवा सूर्य-शनि-भौम-चन्द्रमा एक राशि में हों तो पाँच वर्ष में जातक का मरण होता है॥ १००॥

---

[1] गुरुशुक्रसमविन्ते। [2] युषं प्रायः। [3] स्थाने।

जा० भ० में इसके कुछ विपरीत कहा है—'सूर्यज्ञजीवाः शनिभौमशुक्राः सूर्यारमन्दाश्च यदीन्दुयुक्ताः । प्रसूतिकाले मिलिता यदि स्युर्नाशः शिशोरब्दकपञ्चकेन' (अरि० अ० ३७ श्लोक) ॥ १०० ॥

ग्यारहवें वर्ष में अरिष्ट योग ज्ञान

रविणा[1] युक्तः शशिजोऽसौम्यैर्दृष्टो विनाशयति नूनम् ।
एकादशभिर्वर्षैर्देवाङ्केऽपि स्थितं जातम् ॥ १०१ ॥

यदि सूर्य से युत बुध, पाठान्तर से सूर्य-चन्द्र से युत बुध, पाप ग्रहों से दृष्ट हो तो देवता से रक्षित भी जातक का ११ वें वर्ष में मरण होता है ॥ १०१ ॥

जा० भ० में कहा है—'रवीन्दुयुक्पापनिरीक्षितो ज्ञश्चैकादशाब्दैः कुरुते विनाशम्' (अरि० अ० ४० श्लोक) ॥ १०१ ॥

सात वर्ष में अरिष्ट योग ज्ञान

लग्ने [2]रविमन्दकुजैः शुक्रगृहे सप्तमे शशी क्षीणः ।
दृष्टो न देवगुरुणा सप्तभिरब्दैर्विनाशयति ॥ १०२ ॥

यदि लग्न में सूर्य-शनि-भौम हों तथा सप्तम भाव में शुक्र की राशि (२।७) में क्षीण चन्द्रमा गुरू से अदृष्ट हो तो सात वर्ष में जातक का मरण होता है ॥ १०२ ॥

विशेष—यह योग मेष लग्न या वृश्चिक लग्न में बनता है ॥ १०२ ॥

जा० भ० में कहा है—'लग्नेऽर्कमन्दावनिजा कृशेन्दुः स्मरे षडब्दैरथ सप्तभिर्वा' (अरि० अ० ४० श्लोक) ॥ १०२ ॥

चतुर्थ वर्ष में अरिष्ट योग ज्ञान

केन्द्रे रविमुषिततनुः क्षितिसुतमन्दावलोकितोऽथ युतः ।
वर्षचतुष्के चन्द्रो मारयति किमत्र गणितेन ॥ १०३ ॥

यदि क्षीण चन्द्रमा केन्द्र में सूर्य से युत हो तथा भौम व शनि से दृष्ट या युत हो तो ४ वर्ष में जातक का मरण होता है । यहाँ (इस योग में) गणित करने की आवश्यकता नहीं होती है ॥ १०३ ॥

तीन वर्ष में अरिष्ट योग ज्ञान

लग्नाधिपतेश्चन्द्रो मरणपदस्थोऽतिकृष्णतां यातः ।
क्रूरैः सकलैर्दृष्टो न शुभैः सर्वैस्त्रिभिस्तु मारयति ॥ १०४ ॥

यदि लग्नेश से अष्टम स्थान में अत्यन्त कृष्ण (क्षीण) चन्द्रमा हो और समस्त पाप ग्रहों से दृष्ट व शुभग्रहों से अदृष्ट हो तो ३ वर्ष में मरण होता है ॥ १०४ ॥

जा० भ० में कहा है—'निशापतिर्लग्नपतेः सकाशाच्चेदष्टमस्थः कृशतां प्रयातः । क्रूरैश्च दृष्टश्च शुभैर्न दृष्टो वर्षद्वयान्ते स करोति रिष्टम्' (अरि० अ० ३३ श्लोक) ॥१०४॥

९ वर्ष में अरिष्ट योग ज्ञान

लग्नाधिपतिः पापः शशिनोंऽशे रिःफगो यदि च चन्द्रात् ।
क्रूरैर्विलोक्यमानो मारयति शिशुं नवभिरब्दैः ॥ १०५ ॥

---

[1] रविशशियुक्तः । [2] कुजाः शत्रुगृहे ।

यदि पाप ग्रह लग्नेश होकर चन्द्रमा के नवमांश में चन्द्र राशि से बारहवें स्थान में हो व पापग्रहों से दृष्ट हो तो जातक का ९ वर्ष में मरण होता है ।। १०५ ।।

जा० भ० में कहा है—'लग्नाधिपः पापखगो नवांशे चन्द्रस्य च द्वादशगः शशाङ्कात् ।
पापेक्षितो मारयति प्रसूतौ शिशुं नवाब्दैः खलु कीर्तयन्ति' ।।
(अरि० अ० ४४ श्लोक) ।। १०५ ।।

५ वर्ष में अरिष्ट योग ज्ञान

दर्शनभागे सौम्याः क्रूराश्चादृश्यके प्रसवकाले ।
राहुर्लग्नोपगतो यमक्षयं नयति पञ्चभिर्वर्षैः ।। १०६ ।।

यदि जन्म के समय सब शुभग्रह दृश्य चक्रार्ध में हों और समस्त पाप ग्रह अदृश्य चक्रार्ध में हों तथा राहु लग्न में हो तो ५ वर्ष में मरण होता है ।। १०६ ।।

जा० भ० में कहा है—'अदृश्यभागे यदि पापखेटा दृश्ये विभागे शुभदा भवन्ति । स्वर्भानुनामा तनुभावगामी' (अरि० अ० ४५ श्लोक) ।। १०६ ।।

१२ वर्ष में अरिष्ट योग ज्ञान

राहुः सप्तमभवने शशिसूर्यनिरीक्षितो न शुभदृष्टः ।
दशभिर्द्वाभ्यां सहितैरब्दैर्जातं विनाशयति ।। १०७ ।।

यदि राहु सप्तम भाव में सूर्य व चन्द्रमा से दृष्ट हो एवं शुभग्रह से अदृष्ट हो तो १२ वर्ष में जातक का मरण होता है ।। १०७ ।।

जा० भ० में कहा है—'सिंहीसुतः सप्तमभावसंस्थः शनैश्चरादित्यनिरीक्षितश्चेत् ।
नालोकितः सौम्यखगैस्तु जीवेद् वर्षाणि हि द्वादश यः प्रसूतः' ।।
(अरि० अ० ४७ श्लोक) ।। १७० ।।

७ वर्ष में अरिष्ट ज्ञान

घटसिंहवृश्चिकोदयकृतस्थितिर्जीवितं हरति राहुः ।
पापैर्निरीक्ष्यमाणः सप्तमितैर्निश्चितं वर्षैः ।। १०८ ।।

यदि कुम्भ वा सिंह वा वृश्चिक लग्न में राहु पापग्रहों से दृष्ट हो तो निश्चित ही ७ वर्ष में जीवन हरण (मरण) करता है ।। १०८ ।।

जा० भ० में कहा है—'सिंहालिकुम्भस्थितसैंहिकेयो विलोकितः क्रूरखगैर्यदि स्यात् । वर्षाणि सप्तैव तदीयमायुः प्रकीर्तितः जातकशास्त्रविद्भिः' (अरि०अ० ४८ श्लोक) ।।१०८।।

दुर्मुहूर्त में अरिष्ट ज्ञान

केतोरुदयं पूर्वः पश्चादुल्कादिपवननिर्घाताः ।
रौद्रे सार्पमुहूर्ते[1] प्राणैः सन्त्यज्यते जन्तुः ।। १०९ ।।

यदि जन्म के समय से प्रथम केतु का उदय हो, पीछे उल्कादि पात व वायु का निर्घात (आँधी) हो एवं रौद्र व सार्प मुहूर्त में जन्म हो तो मरण होता है ।। १०९ ।।

---

[1] सति च मुहूर्ते ।

जा० भ० में कहा है--'केतूदयः स्यात्प्रथमं ततश्चेन्निर्घातवाताशनयो भवन्ति ।
यो रौद्रसार्पाख्यमुहूर्तंजन्मा प्राप्नोति कामं यममन्दिरं सः' ॥
(अरि० अ० ४९ श्लोक) ॥ १०९ ॥

अल्प समय में अरिष्ट योग ज्ञान

क्षीणं यदा शशाङ्कं पश्येद्राहुः समागतं पापैः ।
मारयति तदा दिवसैर्निर्व्याजं कतिपयैरेव ॥ ११० ॥

यदि क्षीण चन्द्रमा पापग्रहों से युत हो और राहु से दृष्ट हो तो विना कारण अल्प समय में जातक का निधन होता है ॥ ११० ॥

जा० भ० में कहा है--'चन्द्रं क्रूरयुतं क्षीणं पश्येद् राहुर्यदा तदा । दिनैः स्वल्पतरैर्बालः कालस्यालयमाव्रजेत्' (अरि० अ० ५० श्लोक) ॥ ११० ॥

प्रत्येक राशि में, चन्द्रकृत अरिष्ट योग ज्ञान

कुम्भे दिशति शशाङ्को भागे मृत्युं तथैकविंशाख्ये[1] ।
सिंहे च पञ्चमेंशे वृषे[2] च नवमे तथैवोक्तः ॥ १११ ॥
अलिनि त्रिविंशयुक्ते मेषे च तथाष्टमे दिशति मृत्युम् ।
कर्कटके द्वाविंशे तुलिनि चतुर्थे मृगे विंशे ॥ ११२ ॥
कन्यायां प्रथमेंशे धनुर्धरेऽष्टादशे झषे दशमे ।
मिथुने च द्वाविंशे शशी प्रसूतस्य मरणकरः ॥ ११३ ॥

यदि जन्म कालीन चन्द्रमा कुम्भराशि के २१ वें अंश में हो, या सिंह के ५ वें अंश में हो, या वृष के नवें अंश में हो तो मरण करता है । वृश्चिक राशि के २३ वें अंश में, मेष के अष्टम अंश में, कर्क राशि के २२ वें अंश में, तुला के ४ थें अंश में, मकर राशि के २० वें अंश में चन्द्रमा हो तो निधन कारक होता है । कन्या राशि के प्रथमांश में, धनु के १८ वें अंश में, मीन के दशवें अंश में, मिथुन राशि के २२ वें अंश में चन्द्रमा हो तो मरण कारक होता है ॥ १११-११३ ॥

जा० भ० में कहा है--'मातङ्गैर्नवभिश्च रामनयनैर्नेत्राश्विभिः सायकैरेकेनाम्बुधिभिस्त्रिलोचनमितैर्धृत्या च विंशोन्मितैः । भूनेत्रैर्दशभिर्लवैर्यदि भवेन्मेषादिसंस्थो विधुर्वर्षैर्भागसमैः करोति निधनं कालोऽयमत्रोदितः' (अरि० अ० ५१ श्लोक) ॥१११-११३॥

कथित अंशों में मरण समय ज्ञान

ये भुक्ताः[3] शशिनोंशा जन्मनि वर्षैर्गतैस्तु तावद्भिः ।
मरणं हि जन्मभाजामप्यन्तकवद्धरक्षाणाम् ॥ ११४ ॥

जन्मकालीन समय में चन्द्रमा जिस राशि में जितने अंशों में मरण कारक कहा गया है उतने ही वर्षों में यमराज से रक्षित होने पर भी जातक का निधन होता है ॥ ११४ ॥

---

[1]. तथैकविंशेंशे । [2]. क्रूरेण वृषे मृतिर्मरणभागे । [3]. ये तूक्ताः

विशेष—इस अध्याय में जिन अरिष्टों का वर्णन किया है उन अरिष्टों में सबका निधन नहीं होता, किन्तु अरिष्ट भङ्ग योग होने पर इन योगों में भी जातक का जीवन होता है। प्रत्येक राशि में जिन-जिन अंशों में चन्द्रकृत अरिष्ट कहा है वहाँ अनुपात द्वारा समय का ज्ञान करके ही अरिष्ट कहना चाहिये। क्योंकि चन्द्रमा अश कलादि से युत होता है। यथा—मेष के अष्टम अंश में चन्द्रमा अरिष्ट कारक होता है कुण्डली में यदि ०।७।१०।२० चन्द्रमा है तो मेष के अष्टम अंश में होने से अष्टम वर्ष में अरिष्ट कारक हुआ। अष्टम वर्ष में कब मरण होगा यह अनुपात द्वारा जानकर फला देश कहना चाहिये ॥ ११४ ॥

कथित अरिष्ट योगों में गुरू की स्थिति वश मरण वर्ष ज्ञान

एवं सर्वप्रयत्नेन जायमानस्य देहिनः।
होरास्थानानि[1] केन्द्राणि चिन्तनीयानि तद्यथा ॥ ११५ ॥
चिन्तयेज्जायमानस्य स्थानराशिषु नित्यशः।
बृहस्पतिर्नृणां जीवस्तस्य[2] नित्यं बृहस्पतेः ॥ ११६ ॥
पञ्चदशषट्समेतश्चत्वारिंशत्तथैकविंशच्च[3] ।
शतमथ[4] चत्वारिंशत् षष्टिस्त्रिंशत्[5] क्रमायु होरायाः ॥ ११७ ॥
तृतीयचतुर्थपञ्चमसप्तमनवमदशमैकादशगृहेषु जीवस्थितौ[6] वर्षाः[7]।

इस प्रकार समस्त प्रयत्न से जातक के राशि स्थान व केन्द्र स्थान का विचार करके अरिष्ट कहना चाहिये। जातक का गुरू जीवन है इसलिये बृहस्पति की स्थिति-वश मृत्यु का विचार करना चाहिये। यथा यदि गुरू—३।४।५।७।९।१०।११।१ भाव में हो तो क्रम से ५।१०।४६।२१।१०० पाठान्तर से (३०) ४०।६०।३० पाठान्तर से (५०) वर्ष तक जातक का जीवन होता है ॥ ११५–११७½ ॥

विशेष—इस अध्याय में ११७½ या ११८ पद्य प्रकाशित पुस्तकों में प्राप्त होते हैं किन्तु सं० वि० वि० की मातृका में २, १७, ४४ से ९७ तक एवं ११५ से ११७½ तक श्लोक नहीं है। कुछ प्रकाशित पुस्तकों से अतिरिक्त पद्य प्राप्त हुए हैं उनको यथा स्थान दे दिया है तथा भाषा में अङ्कित भी किया गया है कि यह अधिक है ॥११५–११७½॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां अरिष्टाध्यायो दशमः ॥

---

[1] स्थानेषु। [2] तस्मान्मृत्युं। [3] तथैव विंशश्च। [4] त्रिंशच्चत्वारिंशत्। [5] पञ्चाशदेव यथोक्तहोरायाः। [6] वोत्थिता। [7] प्रोक्ताः सहजे तुर्ये पञ्चमके सप्तमे च नवमे च। दशमे चैकादशके गृहेषु जोवस्थितौ वर्षाः ॥ ११८ ॥

एकादशोऽध्यायः ।

संभूतारिष्टाख्या भङ्गस्तेषां यथा भवेद्योगैः ।
तानागमतो वक्ष्ये प्रधानभूता यतस्तेऽत्र[1] ॥ १ ॥
उडुपतिकृतरिष्टानां भङ्गस्तावन्निरूप्यते पूर्वम्[2] ।
सम्यक् [3]शेषाणामपि यथामतं ब्रह्मपूर्वाणाम् ॥ २ ॥

इससे पूर्व (दशम) अध्याय में जिन बालारिष्ट योगों का वर्णन किया है उन योगों की विफलता जिन योगों से होती है उन योगों को मैं (ग्रन्थकार) आगम से कहता हूँ, क्योंकि होराशास्त्र में वे योग प्रधान होते हैं। उनमें भी सर्वप्रथम मैं चन्द्रमा द्वारा कृत अरिष्ट योगों की विफलता का वर्णन करता हूँ। पुनः अवशिष्ट योगों की विफलता को ब्रह्मादि शास्त्रकारों के मत से कहूँगा ॥ १–२ ॥

पूर्णचन्द्र होने पर अरिष्ट विनाश ज्ञान

सर्वैर्गगनभ्रमणैर्दृष्टश्चन्द्रो विनाशयति रिष्टम् ।
आपूर्यमाणमूर्तिर्यथा नृपः सन्नयेद्द्वेषम्[4] ॥ ३ ॥
चन्द्रः सम्पूर्णतनुः शुक्रेण निरीक्षितः सुहृद्भागे ।
रिष्टहराणां श्रेष्ठो वातहराणां यथा बस्तिः ॥ ४ ॥

यदि जन्म समय में चन्द्रमा पूर्ण बिम्ब अर्थात् सोलह कला परिपूर्ण हो और समस्त ग्रहों से दृष्ट हो तो अरिष्ट का नाश करता है, जैसे न्याय के विरुद्ध चलने वालों का राजा नाश करता है। यदि पूर्ण बिम्ब से युत चन्द्रमा, मित्र के नवमांश में स्थित हो व शुक्र से दृष्ट हो तो अरिष्ट दूर करने वालों में श्रेष्ठ होता है अर्थात् अरिष्ट का विनाश करता है जैसे वायु रोग हरण में बस्ति क्रिया श्रेष्ठ होती है।

लघुजातक में कहा है—'चन्द्रः सम्पूर्णतनुः सौम्यर्क्षगतः स्थितः शुभस्यान्तः। प्रकरोति रिष्टभङ्गं विशेषतः शुक्रसंदृष्टः' ॥ (८ अ० ४ श्लो०) ॥ ३–४ ॥

तथा जा० भ० में भी 'पूर्णः कैरविणीपतिर्दिविचरैः सर्वैः प्रदृष्टस्तदा रिष्टं हन्त्यथवा सुहृल्लवगतः सद्वीक्षितोऽतिप्रभः' (अरि० भं० २ श्लो०) ॥ ३–४ ॥

प्रकारान्तर से रिष्टभङ्ग योग ज्ञान

परमोच्चे शिशिरतनुर्भृगुतनयनिरीक्षितो हरति रिष्टम् ।
सम्यग्विरेकवमनं कफपित्तानां[5] यथा दोषम् ॥ ५ ॥
चन्द्रः शुभवर्गस्थः क्षीणोऽपि शुभेक्षितो हरति रिष्टम् ।
जलमिव महातिसारं [6]जातीफलवल्कलक्वथितम् ॥ ६ ॥

यदि चन्द्रमा जन्म के समय में अपने परमोच्च रा० १ । अं० ३ में स्थित हो और शुक्र से दृष्ट हो तो अरिष्ट का नाश करता है, जैसे कफ व पित्त के दोष को विरेक

---

[1] भूतानतस्तत्र । [2] सम्यक् । [3] शेषाणामपि पश्चात् । [4] सुनयविद्वेष्टॄन् । [5] पित्तकफानां । [6] दाडिम ।

(जुलाव) व वमन (उल्टी) नाश करता है। यदि क्षीण भी चन्द्रमा शुभग्रहों के वर्ग में, शुभग्रह से दृष्ट हो तो अरिष्ट का नाश करता है जैसे जाइफल के छिलके का क्वाथ (काढ़ा) महातिसार रोग का विनाश करता है ॥ ५–६ ॥

जा० भ० में कहा है—'क्षीणो वापि निजोच्चगः शुभखगैः शुक्रेण दृष्टस्तदा रिष्टं यत् समुपागतं स तु हरेत्' (अरि० भं० २ श्लोक) ॥ ५–६ ॥

पुनः प्रकारान्तर से रिष्टभङ्ग योग ज्ञान

सप्ताष्टमषष्ठस्थाः शशिनः सौम्या हरन्त्यरिष्टफलम् ।
पापैरमिश्रचाराः कल्याणघृतं यथोन्मादम् ॥ ७ ॥
युक्तः शुभफलदायिभिरिन्दुः सौम्यैर्निहन्त्यरिष्टानि[1] ।
तेषामेव त्र्यंशे [2]लवणविमिश्रं घृतं नयनरोगम् ॥ ८ ॥

यदि चन्द्रमा से ७, ८, ६ भावों में पाप ग्रह से रहित शुभग्रह हों तो अरिष्ट का नाश करते हैं जैसे उन्माद रोग का नाश कल्याण घृत करता हैं। यदि चन्द्रमा शुभफल देने वाले शुभग्रह से युत हो और शुभग्रह के द्रेष्काण में हो तो अरिष्ट का नाश करता है, जैसे लवण से युत घृत नेत्र रोग (दर्द) का पाठान्तर से नमक गर्म पानी में मिलाकर कान में भरने से कान के रोग या दर्द का नाश करता है ॥ ७–८ ॥

जा० भ० में कहा है—रिष्टं निहन्युः शुभदाः शशाङ्कात्पापैर्विनास्ताष्टमशत्रुसंस्थाः । शुभान्वितः साधुदृकाणवर्ती पीयूषमूर्तिः शमयत्यरिष्टम्' (अरि० भं० ३ श्लो०) ॥ ७-८ ॥

पुनः प्रकारान्तर से अरिष्टभङ्ग योग ज्ञान

आपूर्यमाणमूर्तिर्द्वादशभागे शुभस्य यदि चन्द्रः ।
रिष्टं नयति विनाशं तक्राभ्यासो यथा गुदजम् ॥ ९ ॥
सौम्यक्षेत्रे चन्द्रो होरापतिना विलोकितो [3]हन्ति ।
रिष्टं न वीक्षितोऽन्यैः कुलाङ्गना कुलमिवान्यगता ॥ १० ॥

यदि जन्माऽङ्ग में चन्द्रमा पूर्ण बिम्ब से युत होकर शुभग्रह के द्वादशांश में हो तो अरिष्ट का विनाशक होता है, जैसे तक्र (मठा) के सेवन से गुद रोग (बवासीर) नष्ट होता है। यदि चन्द्रमा शुभग्रह की राशि में लग्नेश से दृष्ट हो और अन्य ग्रहों से अदृष्ट हो तो अरिष्ट का नाशक होता है, जैसे कुलाङ्गना अन्य के सङ्ग से अपने कुल का नाश करती है ॥ ९–१० ॥

जा० भ० में कहा है—'लग्नेशदृष्टः शुभराशियातो नान्येक्षितो रक्षति रिष्टयोगात्' (अरि० भं० ४ श्लोक) ॥ ९–१० ॥

पुनः प्रकारान्तर से

क्रूरभवने शशाङ्को भवनेशनिरीक्षितस्तदनुवर्गे ।
रक्षति शिशुं प्रजातं कृपण इव धनं प्रयत्नेन ॥ ११ ॥

---

[1] सर्वांन्निहन्त्यरिष्टानि । [2] स्तुतिपूरवच्छ्रवणशूलं । [3] हरति ।

जन्माधिपतिर्बलवान् सुहृद्भिरभिवीक्षितः शुभैर्भङ्गम् ।
रिष्टस्य करोति सदा भीरुरिव प्राप्तसंग्रामः ॥ १२ ॥

यदि चन्द्रमा पापग्रह की राशि में या पापग्रह के वर्ग में राशिस्वामी से दृष्ट हो तो जातक की रक्षा करता है, जैसे लोभी पुरुष अपने धन की प्रयत्न से रक्षा करता है । यदि राशि स्वामी बली हो और शुभ मित्र ग्रह से दृष्ट हो तो अरिष्ट का नाश करता है जैसे डरपोक मनुष्य संग्राम (लड़ाई) में उपस्थित होकर भी किसी को नहीं मारता है ॥ ११–१२ ॥

जा० भ० में कहा है—स्थितः शशी क्रूरखगस्य राशौ राशीश्वरेणापि विलोकितश्च तद्वर्गगो वा यदि तेन युक्तः कुर्यादलं मंगलमेव नान्यत् । जन्माधिपालो बलवान् किल स्यात्सौम्यैः सुहृद्भिश्च निरीक्षमाणः । (अरि० भं० ६–७ श्लोक) ११–१२ ॥

पुनः प्रकारान्तर से

[1]जन्माधिपतिर्लग्ने दृष्टः सर्वैर्विनाशयति रिष्टम् ।
घृष्टोषणविदलाभ्यां प्रत्येककृताञ्जनं यथा शुक्लम् ॥ १३ ॥

यदि जन्म का अधिपति अर्थात् राशि का स्वामी लग्न में समस्त ग्रहों से दृष्ट हो तो अरिष्ट का नाश करता है जैसे काली मिर्च और बाँस के कोमल ऊपरी भाग को घिसकर प्रतिदिन आँख में लगाने से शुभ्रता (फुली) नष्ट होती है ॥ १३ ॥

जा० भ० में कहा है—यद्वा तनुस्थः सकलैः प्रदृष्टो रिष्टं हि चन्द्रेण कृतं निहन्ति (अरि० भं० ७ श्लोक) ॥ १३ ॥

पुनः प्रकारान्तर से

[2]स्वोच्चस्थस्वगृहेऽथवापि सुहृदां [3]वर्गेऽपि [4]सौम्येऽथवा
संपूर्णः शुभवीक्षितः शशधरो वर्गे स्वकीयेऽथवा ।
शत्रूणामवलोकने न पतितः पापैरयुक्तेक्षितो
रिष्टं हन्ति सुदुस्तरं दिनपतिः प्रालेयराशिं यथा ॥ १४ ॥

यदि पूर्ण विम्ब चन्द्रमा अपनी उच्चराशि में वा अपनी राशि (कर्क) में, वा मित्र राशि के षड्वर्ग में अथवा शुभग्रह के वर्ग में वा अपने वर्ग में शुभग्रह से दृष्ट हो और स्वशत्रुग्रह व पापग्रह से अदृष्ट व अयुत हो तो अरिष्ट का विनाश करता है, जैसे सूर्य सुदुस्तर (पार करने में कठिन) प्रालेय राशि (पाला) को नष्ट करता है ॥ १४ ॥

पुनः प्रकारान्तर से

शशिनोऽन्त्ये बुधसितयोराये क्रूरेषु वाक्पतौ गगने ।
दुरितं चातुर्थिकमिव नश्यति मुनिकुसुमरसनस्यैः ॥ १५ ॥
लग्नेश्वरस्य चन्द्रः षट्त्रिदशायहिबुकेषु शुभदृष्टः ।
क्षपयति समस्तरिष्टान्यनुयाते[5] नृपतिरोध इव ॥ १६ ॥

---

१ जन्मेशो लग्नेश्वरदृष्टः सर्वं । २ स्वोच्चे वा । ३ वर्गेथ । ४ सौम्येऽपि ।
५ अनुयातो निरुप, रिष्टं वारयते ।

एको जन्माधिपतिः परिपूर्णबलः [1]शुभैर्दृष्टः ।
हन्ति निशाकररिष्टं व्याघ्र इव मृगान् वने मत्तः[2] ॥ १७ ॥

यदि चन्द्रमा से बारहवें भाव में बुध व शुक्र हों और ग्यारहवें भाव में पापग्रह हों एवं दशम भाव में गुरु हो तो अरिष्ट का नाश होता है, जैसे मुनि कुसुम (अगस्त्य पुष्प) के रस को सूँघने से कठिन चतुर्थ दिन में आने वाले रोग (ज्वर) का नाश होता है। यदि लग्न स्वामी से ६, ३, १०, ११, ४, में चन्द्रमा शुभग्रह से दृष्ट हो तो सब अरिष्टों का नाश होता है, जैसे राजा की सेना के पीछे चलनेवाले मनुष्य को कोई कष्ट नहीं होता है। यदि एक ही राशि स्वामी बलवान्, शुभग्रह से दृष्ट हो तो चन्द्रकृत अरिष्ट का नाश करता है, जैसे जंगल में उन्मत्त बाघ हरिणों का नाश करता है ॥ १५–१७ ॥

जा० भ० में कहा है--'वाचामधोशो दशमे शशाङ्काद् व्यये ज्ञशुक्रौ च खलः किलाये । विलग्नपात्त्र्यम्बुदशान्तलाभे शुभेक्षितेन्दुश्च हरेत्स रिष्टम्' (अरि० मं० ९ श्लोक) ॥ १५–१७ ॥

पुनः प्रकारान्तर से अरिष्टभङ्ग योग ज्ञान

पक्षे सिते भवति जन्म यदि क्षपायां
कृष्णेऽथवाऽहनि शुभाशुभदृश्यमानः ।
तं चन्द्रमा रिपुविनाशगतोऽपि यत्ना-
दापत्सु रक्षति पितेव शिशुं न हन्ति ॥ १८ ॥

यदि शुक्ल पक्ष हो और रात्रि में जन्म हो या कृष्णपक्ष में दिन में जन्म हो तो ६, ८ भाव में स्थित चन्द्रमा शुभाशुभ ग्रहों से दृष्ट होने पर भी यत्न से विपत्ति में रक्षा करता है, जैसे पिता अपने पुत्र को मारता नहीं है किन्तु रक्षा ही करता है ॥ १८ ॥

विशेष—सं० वि० वि० की पुस्तक में श्लोक ११–१७ तक अनुपलब्ध हैं किन्तु १८ वाँ श्लोक ११वें श्लोक के स्थान पर है। मैंने १८वें श्लोक का अध्याय समाप्ति पर समावेश किया है। यह १८वाँ श्लोक प्रकाशित पुस्तकों में नहीं प्राप्त होता है ॥१८॥

बृहत्पारा० में कहा है—'शुक्लपक्षे क्षपा जन्म, लग्ने सौम्यनिरीक्षितः । विपरीतं कृष्णपक्षे तथारिष्टविनाशनम्' (१० अ० ५२ श्लो०) ॥ १८ ॥

विशेष—यह श्लोक लघुजातक के अरिष्टभङ्गाध्याय में आचार्य वराह मिहिर ने कहा है। (९ अ० १६ श्लो०) ॥१८॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां चन्द्रारिष्टभङ्गो नामैकादशोऽध्यायः ॥

---

[1] शुभग्रहैर्दृष्टः । [2] मत्तान् ।

द्वादशोऽध्यायः

गुरु की स्थितिवश अरिष्टभङ्गयोग ज्ञान

[1]सर्वातिशाय्यतिबलः स्फुरदंशुमाली[2]
लग्ने स्थितः प्रशमयेत् सुरराजमन्त्री ।
एको बहूनि दुरितानि सुदुस्तराणि
भक्त्या प्रयुक्त इव [3]चक्रधरे प्रणामः ॥ १ ॥

यदि जन्माऽङ्ग में देदीप्यमान किरणों से युत बली गुरु इकेला भी लग्न में स्थित हो तो समस्त अरिष्टों का नाशक होता है, जैसे भक्ति पूर्वक किया हुआ श्रीविष्णु के पाठान्तर से श्री शिवजी के प्रति एक नमस्कार भी समग्र महापापों को नष्ट करता है ॥ १ ॥

बृहत्पाराशर में कहा है—'एक एव बली जीवो लग्नस्थोऽरिष्टसञ्चयम् । हन्ति पापक्षयं भक्त्या प्रणाम इव शूलिनः' (१० अ० ३ श्लो०) ॥१॥

विशेष—यह श्लोक लघुजातक (८ अ० १ श्लो०) में पठित है ॥१॥

प्रकारान्तर से अरिष्ट भङ्गयोगज्ञान

सौम्यग्रहैरतिबलैर्विबलैश्च पापै-
र्लग्नं च सौम्यभवने[4] [5]शुभदृष्टियुक्तम्[6] ।
[7]सर्वापदा विरहितो भवति प्रसूतः
पूजाकरः खलु यथा दुरितैर्ग्रहाणाम् ।

यदि जन्मकुण्डली में समस्त शुभग्रह पूर्ण बलवान् हों तथा सब पापग्रह निर्बल हों और शुभग्रह की राशि में लग्न, शुभग्रह से दृष्ट हो तो जातक के समस्त अरिष्टों (आपत्तियों) का विनाश होता है, जैसे सब ग्रहों की पूजा करने वाला पापों से रहित होता है ॥२॥

पुनः प्रकारान्तर से

पापा यदि शुभवर्गे सौम्यैर्दृष्टाः शुभांशवर्गस्थैः ।
निघ्नन्ति तदा रिष्टं पतिं विरक्ता यथा युवतिः ॥ ३ ॥

यदि जन्म-काल में सब पापग्रह शुभग्रह के षड्वर्ग में, शुभग्रहके नवमांशों के वर्गों में स्थित शुभग्रहों से दृष्ट हों तो अरिष्ट का नाश करते हैं, जैसे विरक्ता स्त्री अपने पति को नष्ट करती है ॥ ३ ॥

---

[1] सर्वानिमानतिब[illegible]र्वातिगाम्यतिबलः । [2] ज्ञालो । [3] शूलधरे । [4] भवनं । [5] भृगुदृष्टिपुष्टम् । [6] युक्ते । [7] सर्वापदाभिरहितो ।

विशेष—यह पद्य लघु जा० (८ अ० १२ श्लोक) में पठित हैं ॥ ३ ॥

राहु से अरिष्टभङ्ग योग ज्ञान

राहुस्त्रिषष्ठलाभे लग्नात् सौम्यैर्निरीक्षितः सद्यः ।
नाशयति सर्वदुरितं मारुत इव तूलसंघातम् ॥ ४ ॥

यदि जन्म के समय में लग्न से ३।६।११ भाव में राहु शुभग्रहसे दृष्ट हो तो सब अरिष्टों को शीघ्र नष्ट करता है, जैसे वायु, रुई के ढेर को नष्ट करती है ॥ ४ ॥

विशेष—यह श्लोक लघु जातक (८ अ० १३ श्लोक) में पठित है ॥ ४ ॥

पुनः अरिष्टभङ्ग योग ज्ञान

शीर्षोदयेषु राशिषु सर्वैर्गगनाधिवासिभिः सूतौ ।
प्रकृतिस्थैश्चारिष्टं विक्रियते[1] घृतमिवाग्निष्ठम् ॥ ५ ॥

यदि जन्मकाल के समय समस्त ग्रह शीर्षोदय (सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, कुम्भ, मिथुन) राशि में मार्गी हों तो जातक के अरिष्ट का नाश होता है, जैसे अग्नि में छोड़ा हुआ घी नष्ट होता है ॥ ५ ॥

विशेष—यह श्लोक लघुजातक (८ अ० १४ श्लोक) में पठित है ॥ ५ ॥

पुनः प्रकारान्तर से ज्ञान

तत्काले यदि विजयी शुभग्रहः शुभनिरीक्षितो वर्गे ।
तर्जयति[2] सर्वरिष्टं मारुत इव पादपान् प्रबलः ॥ ६ ॥

यदि जन्म-कुण्डली में कोई भी शुभग्रह युद्ध में विजयी हो एवं शुभग्रह से दृष्ट शुभवर्ग में हो तो अवश्य ही समस्त अरिष्ट का नाशक होता है, जैसे प्रबल वायु वृक्षों को नष्ट करती है ॥ ६ ॥

विशेष—यह पद्य लघुजातक में (८ अ० १५ श्लोक) आचार्य वराह ने कहा है ॥ ६ ॥

पुनः प्रकारान्तर से ज्ञान

परिविष्टो गगनचरः क्रूरैश्च विलोकितो हरति पापम् ।
स्नानं सन्निहितानां[3] कृतं यथा भास्करग्रहणे ॥ ७ ॥
स्निग्धमृदुपवनभाजो[4] जलदाश्च[5] तथैव खेचराः शस्ताः[6] ।
स्वस्थाः[7] क्षणाच्च रिष्टं शमयति[8] रजो [9]यथाम्बुधारौघः ॥ ८ ॥

यदि अरिष्टकारक ग्रह किसी ग्रह से घिरा हुआ (युत) पापग्रह से दृष्ट हो तो अरिष्ट का नाश करता है, जैसे सूर्यग्रहण के समय कुरुक्षेत्र में स्नान करने से पाप का नाश होता है । यदि जन्मकाल में सुन्दर मन्द वायु तथा मेघ हों और ग्रहसमुदाय बली व निर्मल बिम्ब हो तो क्षणभर में अरिष्ट का शमन होता है, जैसे जलधारा धूलिसमुदाय का शमन करती है ॥ ७-८ ॥

---

१ विलीयते । २ वर्जयति । ३ हितायां । ४ पवनविरजो । ५ जलजा । ६ स्वस्थाः । ७ शास्ति । ८ शमयन्ति हि । ९ यथाम्बुधराः ।

जा० भ० में कहा है—कश्चिदग्रहश्चेत्परिवेषगामो क्रूरैः प्रदिष्टः किल रिष्टभङ्गः। तेजो विहीनं गगनं च खस्थाः स्वस्था भवेयुर्जलदाः सुनीलाः। मन्दानिलाश्चेद्विमला मुहूर्ताः प्रसूतिकाले किल रिष्टभङ्गः' (स० रि० भं० ५-६ श्लो०) ॥७–८॥

पुनः प्रकारान्तर से ज्ञान

उदये चागस्त्यमुनेः सप्तर्षीणां [1]मरीचिपुत्राणाम्।
सर्वारिष्टं नश्यति तम इव सूर्योदये जगतः ॥ ९ ॥

अजवृषकर्किविलग्ने रक्षति राहुः समस्तपीडाभ्यः।
पृथ्वीपतिः प्रसन्नः कृतापराधं यथा पुरुषम् ॥ १० ॥

जिस जातक का जन्म अगस्त्य मुनि या मरीच्यादि सात ऋषिगण के उदय समय में होता है उसके (जातक के) समस्त अरिष्टों का नाश होता है जैसे सूर्य के उदय से संसार का अन्धकार नष्ट होता है। यदि जन्मकाल में मेष वा वृष वा कर्क लग्न में राहु हो तो समस्त अरिष्टों से रक्षा करता है जैसे राजा प्रसन्न होकर अपराध करने वाले की रक्षा करता है ॥ ९-१० ॥

जा० भ० में कहा है—कुम्भयोनिमुनीनां चेदुद्गमे जननं भवेत्। विलीयते तदा रिष्टं नूनं लाक्षेव वह्निना। वृषाजकर्काख्यविलग्नसंस्थो राहुर्भवेद्रिष्टविनाशकर्ता' (स० रि० भं ७-८ श्लो०) ॥ ९–१० ॥

प्रकारान्तर से अरिष्टभङ्ग योग ज्ञान

[2]यातंस्त्रिभागमपरैः सरोजजन्मापि विस्मयं कुरुते।
भञ्जयति[3] काष्ठमरिष्टं समतटदेशे यथा करभः[4] ॥ ११ ॥
बहवो यदि शुभफलदाः खेटास्तत्रापि शीर्यते रिष्टम्।
सूर्यात् त्रिकोण इन्दौ यथैव यात्रा नरेन्द्रस्य ॥ १२ ॥

यदि अरिष्टकारक ग्रह के विना सब ग्रह अपने-अपने द्रेष्काण में हों तो ब्रह्माजी को आश्चर्य होता है अर्थात् ब्रह्मा द्वारा लिखा हुआ भी अरिष्ट नष्ट होता है, जैसे समतल भूमि (मैदान) में हाथी काठ (वृक्षादि) का नष्ट करता है। यदि जन्म समय में अधिक ग्रह शुभ फल देने वाले हों तो भी अरिष्ट का नाश होता है जैसे सूर्य से ५।९ भाव में चन्द्रमा के रहने पर राजा की यात्रा में विघ्न दूर होते हैं ॥ ११-१२ ॥

गुरू-शुक्र केन्द्र में हों तो अरिष्टभङ्ग ज्ञान

गुरुशुक्रौ च केन्द्रस्थौ जीवेद्वर्षशतं नरः।
ग्रहानिष्टं हिंनस्त्याशु[5] चन्द्रानिष्टं तथैव च ॥ १३ ॥

यदि जन्मकुण्डली में गुरू-शुक्र केन्द्र में हों तो सौ वर्ष का जीवन होता है तथा ग्रह-जन्य व चन्द्रजन्य अनिष्ट शीघ्र नष्ट होता है ॥ १३ ॥

---

१ पूर्वाणां। २ यत्नेन भङ्गमपरे मारयति मगमपरे। ३ तज्ज्ञः कष्टमनिष्टं। ४ सरटः किरटः। ५ मिनत्याशु।

जा० भ० में कुछ विपरीत है—बृहस्पतिस्तुङ्गतो विलग्ने भृगोः सुतः केन्द्रगतः शतायुः' (स० रि० भं० १८ श्लो०) ॥ १३ ॥

अमितायु योग ज्ञान

बन्ध्वास्पदोदयविलग्नगतौ कुलीरे
गीर्वाणनाथसचिवः सकलश्च चन्द्रः ।
जूके रवीन्दुतनयावपरे च लाभे
दुश्चिक्यशत्रुभवनेष्वमितं तदायुः ॥ १४ ॥

यदि जन्मकुण्डली में पूर्ण चन्द्रमा व गुरू कर्क राशि में स्थित होकर चतुर्थ, दशम या लग्न में हों एवं शनि व बुध तुला राशि में हों और अन्य ग्रह तृतीय, षष्ठ, लाभ में हों तो जातक की अमित आयु होती है ॥ १४ ॥

एते सर्वे भङ्गा मया निरुक्ताः पुरातनाः सिद्धाः ।
यैर्ज्ञातैर्दैवविदो नरेन्द्रवाल्लभ्यमायान्ति ॥ १५ ॥

प्राचीन आचार्यों द्वारा वर्णित ये अरिष्टभङ्ग योग मैंने कहे हैं। इन योगों का ज्ञान करने पर ज्योतिषी राजा का प्रियपात्र होता है ॥ १५ ॥

विशेष—सं० वि० वि० की पुस्तक में ८।१३।१४ संख्यक पद्य प्राप्त नहीं हैं ॥१५॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां अरिष्टभङ्गो नाम द्वादशोऽध्यायः ।

त्रयोदशोऽध्यायः

सुनफा, अनफा, दुरुधरा योग ज्ञान

सुनफाऽनफादुरुधरा भवन्ति योगाः क्रमेण रविरहितैः ।
वित्तान्त्योभयसंस्थैः कैरववनबान्धवाद्विहगैः ॥ १ ॥

यदि जन्मकुण्डली में चन्द्रमा से सूर्य को छोड़कर द्वितीय भाव में कोई ग्रह हो तो सुनफा नामक योग होता है। यदि बारहवें स्थान में ग्रह हो तो अनफा योग, यदि सूर्य के विना द्वितीय व द्वादश दोनों स्थानों में चन्द्रमा से ग्रह हों तो दुरुधरा नामक योग होता है ॥ १ ॥

बृहत्पाराशर में कहा है—'चन्द्रात् स्वान्त्योभयस्थे हि ग्रहे सूर्यं विना क्रमात् । सुनफाख्योऽनफाख्यश्च योगो दुरुधराह्वयः' (३७ अ० ७ श्लोक) ।
तथा बृहज्जातक में भी 'हित्वार्कं सुनफानफादुरुधराः स्वान्त्योभयस्थैर्ग्रहैः, शीतांशोः कथितो....' (१३ अ० ३ श्लोक) ॥

एवं लघुजातक में भी—'रविवर्ज्यं द्वादशगैरनफा चन्द्राद् द्वितीयगैः सुनफा । उभयस्थितैर्दुरुधरा' (१२ अ० १ श्लोक) ॥ १ ॥

सुनफा योग

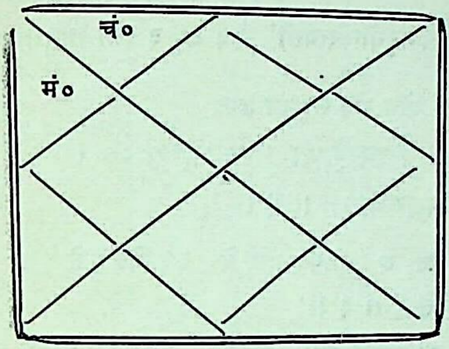

अनफा योग

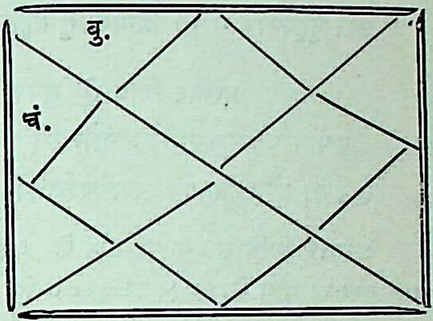

दुरुधरा योग

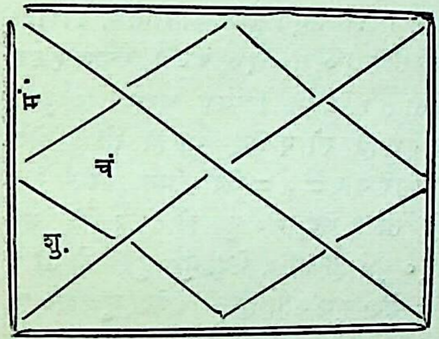

केमद्रुम योग ज्ञान

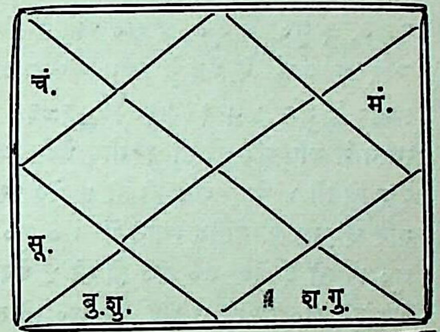

केमद्रुम योग ज्ञान

एते न यदा योगाः केन्द्रग्रहवर्जितः शशाङ्कश्च ।
केमद्रुमोऽतिकष्टः शशिनि [1]समस्तग्रहादृष्टे ॥ २ ॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा समस्त ग्रहों से अदृष्ट हो तथा चन्द्रमा से द्वितीय व द्वादश स्थान में सूर्य के विना अन्य ग्रह न हों अर्थात् सुनफादियोग न हों, और केन्द्र (१।४। ७।१०) में ग्रह व चन्द्रमा न हो तो केमद्रुम नाम का योग होता है । यह योग अनेक प्रकार के कष्ट देता है ॥ २ ॥

---

[1] च सर्वं ।

बृहत्पारा० में कहा है—'चन्द्रादाद्यधनान्त्यस्थो विना भानुं न चेद् ग्रहः कश्चित् स्याद्वा विना चन्द्रं लग्नात् केन्द्रगतोऽथवा ॥ ११ ॥ योगः केमद्रुमो नाम तत्र जातोऽतिगर्हितः' (३७अ० ११½ श्लोक)

तथा बृहज्जा० में भी 'अन्यथा तु बहुभिः केमद्रूमोन्यैस्त्वसौ' (१३ अ. ३ श्लो)॥२॥

प्रस्तार विधि से सुनफादि योग भेद सङ्ख्या ज्ञान

सुनफानफासरूपास्त्रिंशद्योगा (३०) स्त्रिसंगुणा षष्टिः (१८०) ।
संख्या दौरुधुराणां प्रस्तारविधौ समाख्याताः ॥ ३ ॥

प्रस्तार विधि से सुनफा योग के ३१ भेद, व अनफा योग के ३१ भेद होते हैं। एवं दुरुधरा योग के ६० × ३ = १८० भेद होते हैं ॥ ३ ॥

बृहज्जातक में कहा है—'त्रिशत्सरूपाः सुनफानफाख्याः षष्टित्रयं दौरुधुरे प्रभेदाः' (१३ अ० ४ श्लो०) ॥ ३ ॥

विशेष—सुनफा योग के ३१ भेद इस प्रकार से होते हैं—यह योग पाँच १ मं०, २ बु०, ३ गु०, ४ शु०, ५ श० ग्रहों से होता है। इसलिए प्रस्तार की रीति से ५।४।३।२।१ इन अङ्कों के भेद से प्रथम विकल्प ५, द्वितीय १०, तृ० १०, च० ५, पञ्चम १ इस प्रकार से योग ५+१०+१०+५+१=३१ होता है। प्रथम विकल्प चन्द्रमा से दूसरे स्थान में यदि मं० हो तो १ योग भेद, यदि बुध हो तो २ भेद, गुरु हो तो ३ भेद, शुक्र हो तो ४ भेद, शनि हो तो ५ भेद इस प्रकार योग = ५ = भेद प्रथम विकल्प से। यदि चन्द्रमा से द्वितीय स्थान में मं० बु० हों तो १ भेद, मं० गु० हों तो २ भेद, मं० शु० हों तो ३ भेद, मं० श० हों तो ४ भेद, बु० गु० हों तो ५ भेद, बु० शु० हों तो ६ भेद बु० श० हों तो ७ भेद, गुरु शु० हों तो ८ भेद; गुरु शनि हों तो ९ भेद, शु० श० हों तो १०वां भेद हुआ। अतः द्वितीय विकल्प से १० भेद, योग हुआ। यदि चन्द्रमा से द्वितीय स्थान में मं० बु० गु० हों तो १ भेद, मं० बु० शु० हों तो २ भेद, मं० बु० श० हों तो ३ भेद, मं० गु० शु० हों तो ४ भेद, मं० गु० श० हों तो ५ भेद, मं० शु० श० हों तो ६ भेद, बु० गु० शु० हों तो ७ भेद, बु० गु० श० हों तो ८ भेद, बु० शु० श० हों तो ९ भेद, गु० शु० श० हों तो १०वां भेद हुआ, अतः तृतीय विकल्प से १० भेद हुए।

अब चतुर्थ विकल्प से भेद दिखाये जाते हैं—यदि चन्द्रमा से द्वितीय स्थान में, मं० बु० गु० शु० हों तो १ भेद, मं० बु० गु० श० हों तो २ भे०, मं० गु० शु० श० हों तो ३ भे० मं० बु० शु० श० हों तो ४ भे०, बु० गु० शु० श०, हों तो ५ वाँ भेद होता है। इसलिये चतुर्थ विकल्प से ५ भेद हुए। यदि चन्द्रमा से द्वितीय स्थान में मं० बु० गु० शु० श० हों तो पञ्चम विकल्प से १ भेद होता है। इसलिये पांच विकल्प से ५+१०+१०+५+१ = ३१ भेद सुनफा योग के होते हैं यह ग्रन्थकार का आशय है।

इसी प्रकार से अनफा योग के भी ३१ भेद समझना चाहिये।

नीचे लिखी सारणी द्वारा दुरुधरा योग के १८० भेद जानना चाहिये—एक स्थान में एक ग्रह रहने से दुरुधरा योग के २० भेद नीचे सारिणी में दिये हैं।

भेद अङ्क	चन्द्रमा से द्वितीय भाव में	चन्द्रमा से बारहवें भाव में	भेद अङ्क	चन्द्रमा से द्वितीय भाव में	चन्द्रमा से बारहवें भाव में
१	मं०	बु०	११	बु०	शु०
२	बु०	मं०	१२	शु०	बु०
३	मं०	गु०	१३	बु०	श०
४	गु०	मं०	१४	श०	बु०
५	मं०	शु०	१५	गु०	शु०
६	शु०	मं०	१६	शु०	गु०
७	मं०	श०	१७	गु०	श०
८	श०	मं०	१८	श०	गु०
९	बु०	गु०	१९	शु०	श०
१०	गु०	बु०	२०	श०	शु०

एक ग्रह दूसरे में, दो ग्रह बारहवें में, दो ग्रह दूसरे में, एक ग्रह बारहवें में होने से ६० भेद नीचे दिये गये हैं—

भेद अङ्क	चन्द्रमा से द्वितीय में	चन्द्रमा से द्वादश में	भेद अङ्क	चन्द्रमा से द्वितीय में	चन्द्रमा से द्वादश में	भेद अङ्क	चन्द्रमा से द्वितीय में	चन्द्रमा से द्वादश में
१	मं.	बु. गु.	२१	बु.	गु. श.	४१	शु.	मं. श.
२	बु. गु.	मं.	२२	बु. श.	गु.	४२	शु. श.	मं.
३	गु.	बु. शु.	२३	बु.	शु. श.	४३	शु.	बु. गु.
४	मं. शु.	बु.	२४	बु. श.	शु.	४४	गु. शु.	बु.
५	मं.	बु. श.	२५	गु.	म. बु.	४५	शु.	बु. श.
६	मं. श.	बु.	२६	बु. गु.	मं.	४६	शु. श.	बु.
७	मं.	गु. शु.	२७	गु.	मं. शु.	४७	शु.	गु. श.
८	मं. शु.	गु.	२८	गु. शु.	मं.	४८	शु. श.	गु.
९	मं.	गु. श.	२९	गु.	मं. श.	४९	श.	मं. बु.
१०	मं. श.	गु.	३०	गु. श.	मं	५०	बु. श.	मं.
११	मं.	शु. श.	३१	गु.	बु. शु.	५१	श.	मं. गु.
१२	मं. श.	शु.	३२	गु. शु.	बु.	५२	गु. श.	मं.
१३	बु.	मं. गु.	३३	गु.	बु. श.	५३	श.	मं. शु.
१४	मं. बु.	गु.	३४	गु. श.	बु.	५४	शु. श.	मं.
१५	बु.	मं. शु.	३५	गु.	शु. श.	५५	श	बु. गु.
१६	बु. शु.	मं.	३६	गु. श.	शु.	५६	गु. श.	बु.
१७	बु.	मं. श.	३७	शु.	मं. बु.	५७	श.	बु. शु
१८	बु. श.	मं.	३८	बु. शु.	मं.	५८	शु. श.	बु.
१९	बु.	गु. शु.	३९	शु.	मं. गु.	५९	श.	गु. शु.
२०	बु. शु.	गु	४०	गु. शु.	मं.	८०	शु. श.	गु.

एक ग्रह द्वितीय भाव में, ३ ग्रह द्वादश में, ३ ग्रह द्वितीय में, १ ग्रह द्वादश में होने पर ४० भेद नीचे दिये गये हैं—

भेद अङ्क	द्वितीय में	द्वादश में	भेद अङ्क	द्वितीय में	द्वादश में	भेद अङ्क	द्वितीय में	द्वादश में
१	मं.	वु. गु. शु	१५	बु.	गु. शु. श.	२६	शु.	मं. गु. श.
२	बु. गु. शु.	मं.	१६	गु. शु. श.	बु.	३०	मं. गु. श.	शु.
३	मं.	वु. गु. श.	१७	गु.	मं वु. शु.	३१	शु.	बु. गु. श.
४	वु. गु. श.	मं.	१८	मं. बु. शु.	गु.	३२	वु. गु. शु.	श.
५	मं.	वु. शु. श.	१९	गु.	सं. वु. श.	३३	श.	मं. बु. गु.
६	वु. शु. श.	मं.	२०	मं. वु. श.	गु.	३४	मं. वु. गु.	श.
७	मं.	श. गु. शु.	२१	गु.	मं. शु. श.	३५	श.	मं. बु. शु.
८	गु. शु. श.	मं.	२२	मं. शु. श.	गु.	३६	मं. बु. शु.	श.
९	वु.	मं. गु. शु.	२३.	गु.	बु. शु. श.	३७	श.	मं. गु. शु.
१०	मं. गु. शु.	वु.	२४	वु. शु. श.	गु.	३८	मं. गु. शु.	श.
११	वु.	मं. गु. श.	२५	शु.	मं. वु. गु.	३९	श.	बु. गु. शु.
१२	मं. गु. श.	बु.	२६	मं. वु. गु.	शु.	४०	वु. गु. शु.	श.
१३	वु.	मं. शु. श.	२७	शु.	मं. वु. श.			
१४	मं. शु. श.	वु.	२८	मं. वु. श.	शु.			

एक ग्रह २ य में, ४ ग्रह १२ श में, चारग्रह २य में, १ ग्रह १२ श में होने पर दुरुधरा योग के निम्न १० भेद होते हैं।

भेद अंक	चन्द्रमा से २ य में	चन्द्रमा से १२ श में	भेद अंक	चन्द्रमा से २ य में	चन्द्रमा से १२ श में
१	मं.	वु. गु. शु. श.	६	मं. बु शु. श.	गु,
२	वु. गु. शु. श.	मं.	७	शु.	मं. वु. गु. श.
३	बु.	मं. गु. शु-श	८	मं. बु. गु. श.	शु.
४	मं. गु. शु. श.	बु.	९	श.	मं. बु. गु. शु.
५	गु.	मं. बु. शु. श.	१०	मं. बु. गु. शु.	श.

दो ग्रह २ य में, २ ग्रह १२ श में होने पर ३० भेद निम्न होते हैं।

भेद अंक	चन्द्रमासे २ य में	चन्द्रमासे १२ श में	भेद अंक	चन्द्रमासे २ य में	चन्द्रमासे १२ श में	भेद अंक	चन्द्रमासे २ य में	चन्द्रमासे १२ श में
१	मं. बु.	गु. शु.	११	मं. गु.	शु. श.	२१	मं. श.	बु. शु.
२	गु. शु.	म. बु.	१२	शु. श.	मं. गु.	२२	बु. शु.	मं. श.
३	मं. बु.	गु. श.	१३	मं. शु.	बु. गु.	२३	मं. श.	गु. शु.
४	गु. श	मं. बु.	१४	बु. गु.	मं. शु.	२४	गु. शु.	मं. श.
५	मं. बु.	शु. श.	१५	म. शु.	बु. श.	२५	बु. गु.	शु. श.
६	शु. श.	मं. बु.	१६	बु. श.	मं. शु.	२६	शु. श.	बु. गु.
७	मं. गु.	बु. शु.	१७	मं. बु.	गु. श.	२७	बु. शु.	गु. श.
८	बु. शु.	मं. गु.	१८	गु. श.	मं. बु.	२८	गु. श.	बु. शु.
९	मं. गु.	बु. श.	१९	बु. गु.	मं. श.	२९	गु. शु.	बु. श.
१०	बु. श.	मं. गु.	२०	मं. श.	बु. गु.	३०	बु. श.	गु. शु.

२ य में २ ग्रह, १२ श में तीन ग्रह, २ य में ३ ग्रह, १२ श में २ ग्रह होने पर २० भेद निम्न होते हैं।

भेद अंक	चन्द्रमा से २ य में	चन्द्रमा से १२ श में	भेद अंक	चन्द्रमा से २ य में	चन्द्रमा से १२ श में
१	मं. बु.	गु. शु. श.	११	बु. शु.	मं. गु. श.
२	गु. शु. श.	मं. बु.	१२	मं. गु. श.	बु. शु.
३	मं. गु.	बु. शु. श.	१३	बु. श.	मं. गु. शु.
४	बु. शु. श.	मं. गु.	१४	मं. गु. शु.	बु. श.
५	मं. शु.	बु. गु. श.	१५	गु. शु.	मं. बु. श.
६	बु. गु. श.	मं. शु.	१६	मं. बु. श.	गु. शु.
७	मं. श.	बु. गु. शु.	१७	गु. श.	मं. बु. शु.
८	बु. गु. शु.	मं. श.	१८	मं. बु. श.	गु. श.
९	बु. गु.	म. शु. श.	१९	शु. श.	मं. बु. गु.
१०	मं. शु. श.	बु. गु.	२०	मं. बु. गु.	शु. श.

इस प्रकार दुरुधरा के भेदों का योग २० + ६०+४०+१०+३०+२० = १८० होता है। यही ग्रन्थकार का अभिप्राय है ॥ . ॥

सुनफा योग का फल

श्रीमान् स्ववाहुविभवो बहुधर्मशीलः
शास्त्रार्थविद्बहुयशाः[1] सुगुणाभिरामः[2] ।
शान्तः[3] सुखी क्षितिपतिः सचिवोऽथ वा स्यात्
सूतः पुमान् विपुलधीः सुनफाभिधाने ॥ ४ ॥

---

१ त्पृथु । २ स्वगुणो । ३ कान्तः ।

यदि कुण्डली में सुनफा नामक योग हो तो अर्थात् सुनफा योग में उत्पन्न जातक लक्ष्मीवान्, अपनी भुजाओं (हाथ) से धन पैदा करने वाला, अत्यन्त धार्मिक, शास्त्रों के तत्व का ज्ञाता, बहुत यशस्वी, सुन्दर गुणों से युत, शान्त स्वभाव, सुखी राजा या मन्त्री, और परम बुद्धिमान् होता है ॥ ४ ॥

बृहत्पा० में कहा है—'राजा वा राजतुल्यो वा धीधनख्यातिमान्जनः । स्वभुजार्जितवित्तश्च सुनफायोगसम्भवः' (३७ अ० ८ श्लोक) ।

एवं बृहज्जातक में भी 'स्वयमधिगतवित्तः पार्थिवस्तत्समो वा, भवति हि सुनफायां धीधनख्यातिमांश्च' (१३ अ० ५ श्लोक) ॥ ४ ॥

अनफा योग का फल

वाग्मी प्रभुर्द्रविणवानगदः सुशीलो
भोक्तान्नपानकुसुमाम्बरभामिनीनाम्[1] ।
ख्यातः समाहितगुणः सुखशस्तचित्तो[2]
योगे निशाकरकृते त्वनफे सुवेषः ॥ ५ ॥

अनफा योग में पैदा हुआ जातक-वक्ता, (बोलने वाला) सामर्थ्यवान्, धनवान्, रोग रहित, सुन्दर शीलवान्, अन्न-पान-पुष्प-वस्त्र व स्त्री का सुख भोगने वाला, विख्यात, गुणवान्, सुखी, प्रसन्न चित्त, व सुन्दर शरीर होता है ॥ ५ ॥

बृहत्पा० में कहा है—'भूपोऽगदशरीरश्च शीलवान् ख्यातकीर्तिमान् । सुरूपश्चाऽनफाजातो सुखैः सर्वैः समन्वितः' (३७ अ० ९ श्लोक) ।

तथा बृहज्जातक में भी 'प्रभुरगदशरीरः शीलवान्ख्यातकीर्तिर्विषयसुखसुवेषो निर्वृतश्चानफायाम्' (१३ अ० ५ श्लोक) ॥ ५ ॥

दुरुधरा योग का फल

वाग्बुद्धिविक्रमगुणैः प्रथितः पृथिव्यां
स्वातन्त्र्यसौख्यधनवाहनभोगभोगी[3] ।
दाता[4] कुटुम्ब[5]धनपोषणलब्धखेदः
सद्वृत्तवान् दुरुधुराप्रभवो धुरिस्थः ॥ ६ ॥

जिस प्राणी (मनुष्य) का जन्म दुरुधरा योग में होता है तो वह वाणी-बुद्धि-पराक्रम व गुणों से भूमि (संसार) में ख्याति प्राप्त करने वाला, स्वतन्त्र-सुख-लक्ष्मी-वाहन (सवारी आदि के भोग (सुख) को भोगने वाला, दानी, पारिवारिक पालन से दुःख प्राप्त करने, वाला, अच्छे व्यवहार वाला व प्रधान होता है ॥ ६ ॥

बृहत्पारा० में कहा है—'उत्पन्नसुखभुग् दाता धनवाहनसंयुतः । सद्भृत्यो जायते नूनं जनो दुरुधराभवः' (३७ अ० १० श्लोक) ।

---

१ कामिनीनाम्. २ वित्तो. ३ भागी. ४ दान्तः. ५ जनपोषण.

तथा वृहज्जातक में भी 'उत्पन्नभोगसुखभुग्धनवाहनाढ्यस्त्यागान्वितो दुरुधराप्रभवः सुभृत्यः' (१३ अ० ६ श्लोक) ॥ ६ ॥

केमद्रुम योग का फल

कान्तान्नपानगृहवस्त्रसुहृद्विहीनो[1]
दारिद्र्यदुःखगददैन्यमलैरुपेतः ।
प्रेष्यः खलः सकललोकविरुद्धवृत्तिः
केमद्रुमे भवति पार्थिववंशजोऽपि ॥ ७ ॥

जिस मनुष्य का केमद्रुम योग में जन्म होता है तो वह राजा के वंश में उत्पन्न होने पर भी स्त्री-अन्न पान (दूध आदि) गृह (घर), वस्त्र व मित्रों से हीन, (अर्थात् स्त्री अन्नादि का अभाव), दरिद्रता-दुःख-रोग व दीनता के विकार से युत, मजदूरी करने वाला, दुष्ट प्रकृति वाला, व सबसे विरुद्ध व्यवहार करने वाला होता है ॥ ७ ॥

वृहत्पा० में कहा है—'तत्र जातोऽतिगर्हितः । बुद्धिविद्याविहीनश्च दरिद्रापत्तिसंयुतः' (३७ अ० १२ श्लोक) ।

एवं वृहज्जातक में भी 'केमद्रुमे मलिनदुःखितनीचनिस्वाः प्रेष्याः खलाश्च नृपतेरपि वंशजाताः' (१३ अ० ६ श्लोक) ॥ ७ ॥

सुनफादि योगों का केन्द्र में प्रधानत्व कथन

केन्द्रादिस्थैर्ग्रहैर्योगाः कीर्तिता येऽनफादयः ।
[2]ते प्रधा[3]नाः समा[4] ह्रस्वा[5]श्चन्द्ररूपाच्च[6] चिन्तयेत् ॥ ८ ॥

भौमादीनां बलं देशं जातस्य च कुलं बुधः ।
विज्ञाय प्रवदेत् सम्यक् सुनफादिकृतं फलम् ॥ ९ ॥

केन्द्रादि (१।४।७।१०) में ग्रहों के द्वारा ये सुनफादि योग मुख्य होते हैं । तथा इन योगों का समत्व व लघुत्व चन्द्रमा के स्वरूप (क्षीण, पूर्ण) से विचार करना चाहिये । सुनफादि योग कारक भौमादि ग्रहों के बल-देश-कुल का अच्छी तरह से ज्ञान करके ही इनका फल विद्वान् ज्योतिषी को कहना चाहिये ॥ ८–९ ॥

सुनफा योग कारक भौम का फल

विक्रमवित्तप्रायो निष्ठुरवचनश्चमूपतिश्चण्डः ।
हिंस्रो दम्भविरोधी सुनफायां भौमसंयोगे ॥ १० ॥

यदि सुनफा योग कारक भौम हो तो जातक पराक्रमी, धनी, कठोर वाणी बोलने वाला, उग्र, सेनापति, हिंसक, पाखण्ड का विरोध करने वाला होता है ॥ १० ॥

वृहज्जातक में कहा है—'उत्साहशौर्यधनसाहसवान्महीजः'
(१३ अ० ७ श्लो०) ॥ १० ॥

---

[1] बन्धुगृहवस्त्र । [2] तान् । [3] प्रधानान् । [4] समानान् । [5] स्वां । [6] न्वि ।

सुनफा योग कारक बुध का फल

श्रुतिशास्त्रगेयकुशलो धर्मपर[1]: काव्यकृन्मनस्वी च ।
सर्वहितो रुचिरतनुः सुनफायां सोमजे भवति ॥ ११ ॥

यदि सुनफा योग कारक जन्माऽङ्ग में बुध हो तो जातक वेद, शास्त्र, सङ्गीत विद्या में निपुण, धर्म में रत, काव्य बनाने वाला, मनस्वी, सबका हितैषी व सुन्दर शरीर वाला होता है ॥ ११ ॥

बृहज्जातक में कहा है 'सौम्यः पटुः सुवचनो निपुणः कलासु'
(१३ अ० ७ श्लोक) ॥ ११ ॥

सुनफा योग कारक गुरू का फल

विद्याचार्यं ख्यातं नृपतिं नृपतिप्रियं वाऽपि ।
सुकुटुम्बधनसमृद्धं सुनफायां सुरगुरुः कुरुते ॥ १२ ॥

यदि सुनफा योग कारक गुरु हो तो जातक विद्याओं में आचार्य अर्थात् समस्त विद्या जानने वाला, विख्यात (प्रसिद्ध) राजा या राजा का प्रिय पात्र, तथा सुन्दर परिवार व धन से परिपूर्ण होता है ॥ १२ ॥

बृहज्जातक में कहा है —'जीवोर्थधर्मसुखभाङ्नृपपूजितश्च'
(१३ अ० ७ श्लोक) ॥ १२ ॥

सुनफा योग कारक शुक्र का फल

स्त्रीक्षेत्रवि[2]त्तविभवश्चतुष्पदाढ्यः सुविक्रमो भवति ।
नृपसत्कृतः सुधीरो दक्षः शुक्रेण सुनफायाम् ॥ १३ ॥

यदि सुनफा योग कारक शुक्र हो तो जातक स्त्री, खेत, धन, गृह, वैभव, चतुष्पदों (गाय भैंसा घोड़ा हाथी आदि) से युक्त, सुन्दर पराक्रमी, राजा से सम्मानित, धैर्यवान्, व समस्त कार्यों में कुशल होता है ॥ १३ ॥

बृहज्जातक में कहा है—'कामी भृगुर्बहुधनो विषयोपभोक्ता'
(१३ अ० ७ श्लोक) ॥ १३ ॥

सुनफा योग कारक शनि का फल

निपुणमतिर्ग्रामपुरैर्नित्यं संपूजितो धनसमृद्धः ।
सुनफायां रविपुत्रे क्रियासु गुप्तो भवेद्धीरः ॥ १४ ॥

यदि सुनफा योग कारक शनि हो तो जातक चतुर बुद्धि वाला, गाँव तथा शहरी मनुष्यों से प्रतिदिन पूजित, धनी, कार्यों में संलग्न व धैर्यधारण करने वाला होता है ॥ १४ ॥ बृ० जा० में कहा है—

'परविभवपरिच्छदोपभोक्ता रवितनयो बहुकार्यकृद् गणेशः'
(१३ अ० ८ श्लोक) ॥ १४ ॥

इति सुनफा[3]प्रकारः ।

---

१ रतः. २ वित्तगृहवां. ३. प्रकरणम् ।

अनफा योग कारक भौम का फल

चोरस्वामी धृष्टः स्ववशो[1] मानी रणोत्कटः क्रोधी।
श्रेष्ठः[2] श्लाघ्यः सुतनुः कुजेऽनफायां सुलाभश्च[3] ॥ १५ ॥

यदि कुण्डली में अनफा योगकारक भौम हो तो जातक चोरों का मालिक, ढ़ीठ, स्वतन्त्र, अभिमानी, युद्ध-प्रिय, क्रोधी, श्रेष्ठ वा सेवा करने योग्य, प्रशंसनीय, सुन्दर शरीर वाला व सुन्दर लाभ कर्ता वा प्रगल्भ होता है ॥ १५ ॥

विशेष—आचार्य वराह मिहिर ने सुनफा, अनफा, दुरुधरा योगों का पृथक्-पृथक् ग्रह के आधार पर एक ही फल कहा है अर्थात् भौमादि ग्रहों का सुनफा योग में जो फल कथित है वही अनफादि में वर्णित है। यहाँ ग्रन्थकार ने पृथक्-पृथक् फल का वर्णन किया है ॥ १५ ॥

अनफा योग कारक बुध का फल

गान्धर्वलेखनपटुः[4] कविः प्रवक्ता नृपाप्तसत्कारः।
रुचिरतनुस्त्वनफायां प्रसिद्धकर्मा बुधेन भवेत् ॥ १६ ॥

यदि अनफा योग कारक बुध हो तो जातक गान्धर्व (गान, नृत्य) विद्या व लेख लिखने में चतुर, कवि, भाषण में निपुण, राजा से आदर व सत्कार पाने वाला, सुन्दर शरीर वाला, और प्रसिद्ध कार्य कर्ता होता है ॥ १६ ॥

अनफा योगकारक गुरू का फल

गाम्भीर्यसत्वमेधास्थानरतो[5] बुद्धिमान् नृपाप्तयशाः।
अनफायां त्रिदशगुरौ संजातः [6]सत्कविर्भवति ॥ १७ ॥

यदि अनफा योग करनेवाला गुरू हो तो जातक गम्भीर, बलवान्, मेधावी, शुभकार्यों में संलग्न, बुद्धिमान्, राजा से यश प्राप्त करने वाला, और उत्तम कवि होता है ॥१७॥

-अनफा योग कारक शुक्र का फल

[7]युवतीनामतिसुभगः प्रणयी क्षितिपश्च गोपतिः[8] ख्यातः।
कान्तः[9] कनकसमृद्धस्त्वनफायां भार्गवे भवति ॥ १८ ॥

यदि अनफा योग करने वाला शुक्र होतो जातक स्त्रियों का प्रिय, नम्र, राजा, गायों का स्वामी, वा भोगी स्वरूपवान्, प्रसिद्ध, सुवर्ण से सम्पत्ति वाला व उग्र होता है ॥१८॥

अनफा योग कारक शनि का फल

विस्तीर्णभुजो नेता गृहीतवाक्यश्चतुष्पदसमृद्धः।
दुर्वनिताया भक्तो[10] गुणसहितश्चार्कपुत्रेण ॥ १९ ॥

यदि अनफा योग करने वाला शनि हो तो विशाल हाथ वाला, (सं० वि० वि० की पुस्तक में 'विस्तीर्णभूवनेशो' यह पाठ है इसका अर्थ—विशाल भूमि व जंगल का

---

१. वंश। २. सेव्य। ३. प्रगल्भश्च। ४. गन्धर्व। ५. शुभो। ६. सत्वविद्भवति। ७. युवतिजनानां। ८. भोगवान् कान्तः। ९. कनकसमृद्धश्चण्ड। ३०. भर्ता। दुर्वनितायां सक्तस्त्वनफायामर्कपुत्रेण।

स्वामी, स्ववचन का पालनकर्ता, चतुष्पद सम्पत्ति वाला, दुश्चरित्रा स्त्री का पति वा भक्त एवं गुणवान् होता है ॥ १९ ॥

इत्यनफाप्रकरणम् ।

दुरुधरा योग कारक भौम बुध का फल

आनृतिको बहुवित्तो निपुणोऽतिशठोऽधिको[1] लुब्धः ।
वृद्धासतीप्रसक्तः कुलाग्रणीः शशिनि भौमबुधमध्ये ॥ २० ॥

यदि भौम बुध से दुरुधरा योग हो तो जातक असत्यवादी, धनी, चतुर, अत्यन्त दुष्ट, अधिक लोभी, वृद्ध कुलटा स्त्री में आसक्त व कुल में प्रधान होता है ॥ २० ॥

दुरुधरा योग कारक भौम गुरू का फल

ख्यातः कर्मसु विभवी बहुजनवैरस्त्वमर्षणो हृष्टः ।
कुलरक्षी कुजगुर्वोः संग्रहशीलः शशिनि मध्ये ॥ २१ ॥

यदि भौम गुरु से दुरुधरा योग हो तो जातक कार्यों में विख्यात, वैभव से युत अर्थात् धनी, अधिक मनुष्यों से शत्रुता करने वाला, क्रोधी, प्रसन्न चित्त, कुल का रक्षक, एवं संग्रह करने वाला होता है ॥ २१ ॥

दुरुधरा योग कारक भौम शुक्र का फल

उत्तमरामा[2] सुभगो विवादशीलः शुचिर्भवेद्दक्षः ।
व्यायामी रणशूरः सितारयोर्मध्यगे चन्द्रे ॥ २२ ॥

यदि भौम शुक्र से दुरुधरा योग हो तो जातक उत्तम स्त्री वाला, पाठान्तर से अच्छी कामना (इच्छा) करने वाला, सुन्दर ऐश्वर्य से युत, विवादी, पवित्र, कुशल कार्यकर्त्ता, व्यायाम (कसरत) करने वाला, और युद्ध में वीर होता है ॥ २२ ॥

दुरुधरा योग कारक भौम शनि का फल

कुत्सितयोषिद्र[3]मणो बहुसंचयकारको व्यसनतप्तः ।
क्रोधी पिशुनो रिपुहा[4] यमारयोः स्याद्दुरुधुरायाम् ॥ २३ ॥

यदि भौम शनि से दुरूधरा योग बनता हो तो जातक--निन्दित स्त्री के साथ रमण करने वाला पाठान्तर से खराव स्त्री व निन्दित धन वाला, अत्यन्त संग्रही, कुकर्मों में आसक्त, क्रोधी, चुगलखोर, व शत्रु को मारने वाला होता है ॥ २३ ॥

बुध गुरू से दुरुधरा योग का फल

धर्मपरः शास्त्रज्ञो वाचालः सत्कविर्धनोपेतः ।
त्यागयुतो विख्यातो बुधगुरुमध्ये स्थिते चन्द्रे ॥ २४ ॥

यदि बुध गुरू से दुरुधरा योग हो तो जातक—धर्मपरायण, शास्त्रज्ञाता, वाचाल, सुन्दर कवि, धनी, त्यागी और प्रसिद्ध होता है ॥ २४ ॥

बुध शुक्र से दुरुधरा योग का फल

प्रियवाक् सुभगः कान्तः प्रनृत्तगेयादिषु प्रियो भवति ।
सेव्यः शूरो मन्त्री बुधसितयोर्दुरुधुरायोगे ॥ २५ ॥

---

१. गुणाधिको । २. उत्तमरामः, उत्तमकामः । ३. द्रविणो । ४. रिपुमान यमारयोः ।

यदि बुध शुक्र से दुरुधरा योग हो तो जातक––मीठा वचन बोलने वाला, सुन्दर ऐश्वर्य से युत, स्वरूपवान्, नाच गाने में प्रीति रखने वाला, सेवा करने के योग्य, विक्रमी व मन्त्री होता है ॥ २५ ॥

बुध शनि से दुरुधरा योग का फल

देशाद्देशं गच्छति वित्तपरो नातिविद्यया सहितः ।
चन्द्रेऽन्येषां पूज्यः स्वजनविरोधी ज्ञमन्दयोर्मध्ये ॥ २६ ॥

यदि बुध शनि से दुरुधरा योग हो तो जातक––अल्पविद्या ज्ञान से देश से विदेश में जाकर धन पैदा करने वाला, दूसरों से वन्दनोय, व अपने मनुष्यों का विरोध करने वाला होता है ॥ २६ ॥

गुरू शुक्र से दुरुधरा योग का फल

धृतिमेधाशौर्ययुतो नीतिज्ञः कनकरत्नपरिपूर्णः ।
ख्यातो नृपकृत्यकरो गुरुसितयोर्दुरुधुरायोगे ॥ २७ ॥

यदि गुरू शुक्र से दुरूधरा योग हो तो जातक––धैर्य-बुद्धि-व पराक्रम से युत नीतिज्ञाता, सुवर्ण रत्नों से परिपूर्ण, विख्यात, राजा का कार्य करने वाला होता है ॥२७॥

गुरू शनि से दुरुधरा योग का फल

सुखनयविज्ञानयुतः प्रियवाग्विद्वान् धुरंधरोऽप्यार्यः ।
शान्तो धनी सुरूपश्चन्द्रे गुरुभानुजान्तस्थे ॥ २८ ॥

यदि गुरू शनि से दुरुधरा योग हो तो जातक––सुख-नीति-विज्ञान से युक्त, प्यारी वाणी बोलने वाला, श्रेष्ठ विद्वान्, उत्तम, शान्त, धनवान् व स्वरूपवान् होता है ॥२८॥

शुक्र शनि से दुरुधरा योग का फल

वृद्धचरितं कुलाग्र्यं निपुणं स्त्रीवल्लभं धनसमृद्धम् ।
नृपसत्कृतं बहुधनं कुरुते चन्द्रः सितासितयोः ॥ २९ ॥

यदि शुक्र शनि से दुरुधरा योग हो तो जातक– बूढ़े के से कार्य करने वाला, कुल में प्रधान, निपुण (चतुर), स्त्रियों का प्यारा, धनी, व राजा से सत्कार प्राप्त होने पर अधिक धन पाने वाला होता है ॥ २९ ॥

इति दुरुधुराप्रकरणम् ।

स्वल्प-मध्यम-उत्तम धनादि योग ज्ञान

सूर्यात् केन्द्रादिगतो निशाकरः स्वल्पमध्यभूयिष्ठान् ।
कुर्यात्क्रमेण धनधीनैपुणविज्ञानविनयांश्च ॥ ३० ॥

यदि कुण्डली में सूर्य से केन्द्र (१।४।७।१०) में चन्द्रमा हो तो धन-बुद्धि निपुणता (चतुरता)––विज्ञान-व नम्रता जातक में स्वल्प होती है । यदि पणफर (२।५।८।११) में चन्द्र हो तो धनादि मध्यम, यदि आपोक्लिम (३।६।९।१२) में चन्द्र हो तो धनादि उत्तम होता है ॥ ३० ॥

बृहत्पा० में कहा है—'सहस्ररश्मितश्चन्द्रे कण्टकादिगते क्रमात् । धनधीनैपुणादीनि न्यूनमध्योत्तमानि हि' (३७ अ० १२ श्लो०)

तथा बृहज्जा० में भी—'अधमसमवरिष्ठान्यर्ककेन्द्रादिसंस्थे शशिनि विनयवित्त-ज्ञान-धी-नैपुणानि' (१३ अ० १ श्लो०) ॥ ३० ॥

पुनः चन्द्रमा से उत्तमादि धन योग ज्ञान

औत्पातिकः[1] कृशतनुर्निशि चाप्यदृश्यो
[2]दृश्यो दिवा शिशिरगुर्भयशोकदः स्यात् ।
एवं स्थितः समफलं पृथिवीपतित्वं
यातोऽन्यथा प्रकुरुते परिपूर्णमूर्तिः ॥ ३१ ॥

यदि कुण्डली में क्षीण चन्द्रमा उत्पात से युत व जातक का जन्म रात्रि में हो तथा अदृश्य (लग्न से सप्तम) चक्र में हो तो भय शोक दाता, यदि पूर्वोक्त चन्द्रमा दृश्य (सप्तम से लग्न तक) चक्र में हो व दिन में जन्म हो तो मध्यम भयादि कारक, यदि पूर्ण चन्द्रमा रात्रि में, दृश्य चक्र में, होने पर, व दिन में अदृश्य चक्र में पूर्ण चन्द्रमा के होने पर जातक राजा होता है ॥ ३१ ॥

प्रकारान्तर से उत्तमादि धन योग ज्ञान

लग्नादुपचयसंस्थैः शुभैः समस्तैर्महाधनो द्वाभ्याम् ।
मध्यं चैकेनाधममेवं चन्द्रादपि तदूनः ॥ ३२ ॥
अधियोगादयोऽन्येऽपि[3] मयात्रैव न कीर्तिताः ।
नृपयोगा यतस्ते हि वक्ष्ये तत्रैव तानहम् ॥ ३३ ॥

यदि कुण्डली में लग्न से उपचय (३।६।१०।११) में समस्त शुभग्रह हों तो जातक अधिक धनी, यदि दो शुभग्रह उपचय में हों तो मध्यमधनी, यदि १ शुभग्रह हो तो अल्प धनी होता है ।

अन्य भी चन्द्रमा से अधियोग आदि योग मैंने यहाँ नहीं वर्णन किये हैं क्योंकि वे राज योग हैं इसलिये राजयोगाध्याय में ही आगे वर्णन करूँगा ॥ ३२–३३ ॥

बृहत्पारा० में कहा है—चन्द्राद् वृद्धिगतैः सर्वैः शुभैर्जातो महाधनी ।
द्वाभ्यां मध्यधनो जात एकेनाल्पधनो भवेत्' (३७ अ० ६ श्लो०) ।

इसी प्रकार चन्द्रमा से भी उपचय में शुभग्रह होने पर फल समझना चाहिए, किन्तु लग्न से यह योग प्रबल होता है चन्द्रमा से कुछ न्यून होता है ।

एवं बृहज्जा० में भी—'लग्नादतीव वसुमान् वसुमाञ्छशाङ्कात्सौम्यग्रहैरुपचयोपगतैः समस्तैः । द्वाभ्यां समोल्पवसुमांश्च……' (१३ अ० श्लो०) ॥ ३२-३३ ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां चन्द्रविधिर्नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥

---

१. उत्पातिकः, अल्पात्मजः । २. कृष्णे तु शीतकिरणो । ३. येऽपि ।

चतुर्दशोऽध्यायः

वेशि, वाशि, उभयचरी, योग ज्ञान

सूर्याद्व्ययगै[1]र्वाशिर्द्वितीयगैश्चन्द्रवर्जितैर्वेशिः[2] ।
उभयस्थितैर्ग्रहेन्द्रैरुभयचरी नामतः प्रोक्ता ॥ १ ॥

यदि जन्म कुण्डली में सूर्य से द्वादश स्थान में चन्द्रमा को छोड़कर अन्य कोई ग्रह हो तो वाशि नाम का योग, व सूर्य से द्वितीय स्थान में चन्द्रमा से भिन्न अन्य ग्रह हो तो वेशि नामक योग होता है। यदि सूर्य से द्वितीय व द्वादश दोनों स्थान में चन्द्र वर्जित ग्रह हों तो उभयचरी नामक योग होता है ॥ १ ॥

बृहत्पा० में कहा है—'सूर्यात् स्वान्त्योभयस्थैश्च विना चन्द्रं कुजादिभिः। वेशिवाशिसमाख्यौ च तथोभयचरी क्रमात्' (३८ अ० १ श्लो०) ॥ १ ॥

वेशि योग का फल

मन्ददृशं स्थिरवचनं परिभूतपरिश्रमं नतोर्ध्वतनुम् ।
कथयति यवनाधिपतिर्वेशिसमुत्थं तथा पुरुषम् ॥ २ ॥

यदि जातक की कुण्डली में वेशि योग हो तो जातक मन्द दृष्टि, स्थिर वाणी, अधिक परिश्रमी नम्र व लम्बा देह होता है। ऐसा यवन स्वामी अर्थात् यवनाचार्य ने कहा है ॥ २ ॥

बृहत्पा० में इससे कुछ विपरीत फल कहा है—'समदृक् सत्यवाङ्मर्त्यो दीर्घकायोऽलसस्तथा। सुखभागल्पवित्तोऽपि वेशियोसमुद्भवः' (३८ अ० २ श्लो०) ॥२॥

वेशि योग कारक गुरु-शुक्र का फल

वसुसंचयवित्तसुहृत्स्याद्वेशौ सुरगुरौ भवति जातः ।
भीरुः कार्योद्विग्नो लघुचेष्टो भृगुसुते पराधीनः ॥ ३ ॥

यदि वेशि योग कर्ता गुरू हो तो धन का संग्रही, विद्वान्, सुन्दर मित्रों से युत जातक होता है। यदि शुक्र योग कर्ता हो तो भयभीत (डरपोक), कार्य में अस्थिर, स्वल्प इच्छा करने वाला और जातक परतन्त्र होता है ॥ ३ ॥

वेशि योग कर्त्ता बुध व भौम का फल

[3]परिकर्मको दरिद्रो मृदुर्विनीतो बुधे सलज्जश्च ।
[4]मार्गलघुः क्षितिपुत्रे परोपकारी नरो वेशौ ॥ ४ ॥

यदि वेशि योग कर्त्ता बुध हो तो जातक बहुत कार्य करने वाला, निर्धन, कोमल, नम्र और लज्जा करने वाला होता है। यदि भौम योग कर्त्ता हो तो अधिक चलने वाला व परोपकारी होता है ॥ ४ ॥

---

१. वाशी तद्धनगैश्चन्द्रवर्जितैः । २. वेंशी । ३. कर्कशो । ४. मार्गघ्न ।

वेशि योग कर्त्ता शनि का फल

परदाररतश्चण्डो बह्वाकारः[1] शठो घृणी।
भवेन्मनुष्यः सधनो याते वेशिं शनैश्चरे ॥ ५ ॥

यदि वेशि योग कर्त्ता शनि हो तो जातक पर (दूसरी) दार (स्त्री) में रत (आसक्त), उग्रस्वभाव, बड़ी आकृति वाला, शठ (मूर्ख-धूर्त), घृणी (ग्लानि करने वाला), और धनी होता है ॥ ५ ॥

इति वेशिप्रकरणम् ।

वाशि योग का फल

[2]उत्कृष्टवचाः स्मृतिमानुद्योगयुतो निरीक्षते तिर्यक् ।
[3]सर्वशरीरे पृथुलो नृपतिसमः सात्विको वाशौ ॥ ६ ॥

यदि वाशि योग में जन्म हो तो जातक उत्कृष्ट (अच्छी) वाणी वाला, स्मरण शक्ति वाला, उद्योगी, तिरछी दृष्टि वाला, स्थूल शरीर धारी, राजा के तुल्य व सात्विकी होता है ॥ ६ ॥

बृहत्पाराश० में इसके विपरीत फल कहा है—'वाशौ च निपुणो दाता यशो विद्याबलान्वितः' (३८ अ० ३ श्लो०) ॥ ६ ॥

वाशि योग कर्त्ता गुरु व शुक्र का फल

धृतिसत्वबुद्धियुक्तो भवति गुरौ वाशिके [4]वचनसारः ।
शूरः ख्यातो [5]गुणवान् यशस्करो भार्गवे पुरुषः ॥७॥

यदि वाशि योग कर्त्ता गुरु हो तो जातक धैर्य-बल-बुद्धि से युत एवं वाणी में तत्त्व वाला होता है । यदि शुक्र योग कर्त्ता हो तो—वीर, विख्यात, गुणी, यशस्वी, जातक होता है ॥ ७ ॥

वाशि योग कर्त्ता बुध व भौम का फल

प्रियभाषी [6]रुधिरतनुर्वाश्यां स्याद् बोधने पराज्ञाकृत् ।
सङ्ग्रामे विख्यातो भूमिसुते [7]नान्यवाक्यश्च ॥८॥

यदि वाशि योग कर्त्ता बुध हो तो जातक प्रिय (प्यारी) वाणी बोलने वाला, लाल शरीर वाला, एवं दूसरों की आज्ञा का पालन करने वाला होता है । यदि भौम योग कर्त्ता हो तो संग्राम (युद्ध) में विख्यात (विजय प्राप्त कर्त्ता) तथा एक वाणी वाला पाठान्तर से अपने भाग्य से जीने वाला होता है ॥ ८ ॥

वाशि योग कर्त्ता शनि का फल

वणिक् [8]कुलस्वभावः स्यात्परद्रव्यापहारकः ।
गुरुद्वेषी [9]सुनिर्स्त्रिशो गते वाशिं शनैश्चरे ॥ ९ ॥

---

१ वृद्धा । २ उत्सृष्ट । ३ पूर्व । ४ पवनसारः । ५ बलवान् । ६ रुचिर । ७ भाग्यश्च । ८ खल । ९ मुनिस्त्रीशो ।

यदि वाशि योग कर्त्ता शनि हो तो जातक बनिया (व्यापारी) के कुल के समान स्वभाव वाला, पाठान्तर से दुष्ट स्वभाव वाला, दूसरे के धन को चुराने वाला, गुरुजनों से शत्रुता करने वाला व निर्लज्ज, पाठान्तर से तपस्विनी स्त्री का स्वामी होता है ॥ ९ ॥

फलादेश में विशेष कथन

संनिरीक्ष्य रवेर्वीर्यं ग्रहाणां चापि तत्त्वतः ।
राश्यंशसङ्गमात्सर्वं फलं ब्रूयाद्विचक्षणः ॥१०॥

फल कहने से पूर्व सूर्य व योगकर्त्ता ग्रहों के बल का तथा राशिस्थ नवांश के शुभाशुभ का ज्ञान करके ही इन योगों का विद्वान् ज्योतिषी को फलादेश करना चाहिये ॥१०॥

जा० भ० में कहा है—सूर्यस्य वीर्यात्खचरानुसाराद् राश्यंशयोगात्प्रविचार्यं सर्वम् । न्यूनं समं वा प्रवलं नराणां फलं सुधीभिः परिकल्पनीयम्' (सू० यो० ५ श्लो०) ॥१०॥

उभयचरी योग का फल

सर्वंसहः [1]सुभद्रः समकायः सुस्थिरो विपुलसत्वः ।
नात्युच्चः [2]परिपूर्णो विद्यायुक्तो भवेदुभयचर्याम् ॥११॥
सुभगो वहुभृत्यधनो बन्धूनामाश्रयो नृपतितुल्यः ।
नित्योत्साही हृष्टो भुङ्क्ते भोगानुभयचर्याम् ॥१२॥

यदि उभयचरी योग में जन्म हो तो जातक—समस्त कार्यभार को सहन करने वाला, कल्याण से युत पाठान्तर से सुन्दर समदृष्टि वाला, समान शरीर वाला, अधिक बलवान्, अधिक ऊँची (उच्च) देह से रहित, समस्त वस्तु व साधनों से पूर्ण, विद्यावान् सुन्दर ऐश्वर्य से युत, अधिक नौकर व धन से युत, अपने बन्धु बान्धवों का रक्षक, राजा के सदृश, पूर्ण उत्साही, प्रसन्न चित्त व सुख भोग करने वाला होता है ॥११-१२॥

जा० भ० में कहा है—सर्वंसहः स्थिरतरोऽतितरां समृद्धः सत्वाधिकः समशरीरविराजमानः । नात्युच्चकः सरलदृक् प्रबलामलश्रीयुक्तः किलोभयचरी प्रभवो नरः स्यात्' (सू० यो० ४ श्लो०) ॥ ११–१२ ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां वेशिवाश्युभयचर्यायां चतुर्दशोध्यायः ।

पञ्चदशोऽध्यायः

यवनाचार्यैर्वृद्धैर्द्विग्रहयोगेषु यत्फलं प्रोक्तम् ।
तदहमपहाय मत्सरमधुना वक्ष्ये विशेषेण ॥१॥

प्राचीन यवनाचार्यों ने दो ग्रहों की युति (योग) में जो फल कहा है उसको मैं यहाँ अहङ्कार त्यागकर विशेष रूप से कहता हूँ ॥ १ ॥

---

[1] सुसमदृक् । [2] परिपूर्णः सिंहग्रीवो भवेदुभयचर्याम् ।

सूर्य चन्द्रमा युति का फल

युवतीनां वशगः स्यादविनीतः [1]कूटवित्पृथुलवित्तः ।
आसवविक्रयकुशलो रव्युडुपत्योः क्रियानिपुणः ॥२॥

यदि जन्माऽङ्ग में सूर्य व चन्द्रमा एक भाव या राशि में हों तो जातक स्त्रियों के वश (अनुकूल) में रहने वाला, नम्रता से हीन, (अविनयी), कूट (धातु-मिश्रणादि कूटनीति) का ज्ञाता, अधिक धनी, आसव (मद्य व फलादि) के वेचने में चतुर और अच्छा कार्यकर्त्ता होता है ॥२॥

जातक परिजात में कहा है—'जातः स्त्रीवशगः क्रियासु निपुणश्चन्द्रान्विते भास्करे' (८ अ० १२ श्लो०) ॥२॥

सूर्य भौम युति का फल

ओजस्वी साहसिको मूर्खो बलसत्वसंयुतोऽनृतवाक् ।
पापमतिर्वधनिरतो[2] रविकुजयोः स्यात् प्रचण्डश्च ॥३॥

यदि कुण्डली में सूर्य के साथ भौम हो तो जातक तेजस्वी, साहसी, मूर्ख, बली, विक्रमी, झूठ बोलने वाला, पाप बुद्धि, हिंसा करने वाला, और उग्र स्वभाव वाला होता है ॥३॥

जा० पा० में कहा है—तेजस्वी बलसत्त्ववाननृतवाक् पापी सभौमे रवौ' (८ अ० १ श्लो०) ॥३॥

सूर्य बुध युति का फल

सेवाकृदस्थिरधनो रविज्ञयोः प्रियवचा यशोर्थः स्यात् ।
आर्यः क्षितिपतिदयितः सतां च बलरूपवित्तविद्यावान् ॥४॥

यदि कुण्डली में सूर्य, बुध से युत हो तो जातक—सेवा कार्य करने में चतुर, अथवा सेवक (नौकर), चञ्चल धनवाला, प्रियभाषी, यश (कीर्ति) रूप धनवाला, श्रेष्ठ, राजा व सज्जनों का कृपापात्र, बलवान्, रूपवान्, धनवान् और विद्वान् होता है ॥४॥

जा० पा० में कहा है—'विद्यारूपबलान्वितोऽस्थिरमतिः सौम्यान्विते पूषणि' (८ अ० १ श्लो०) ॥४॥

सूर्य गुरू युति का फल

बहुधर्मो नृपसचिवः [3]समृद्धिमान्मित्रसंश्रयाप्तार्थः ।
सूर्ये बृहस्पतियुते भवेदुपाध्यायसंज्ञश्च ॥५॥

यदि कुण्डली में सूर्य व गुरू एक स्थान में हों तो जातक—अधिक धर्मात्मा, राजमन्त्री, धनवान् पाठान्तर से सुन्दर बुद्धिवाला, मित्र के आश्रय से धन प्राप्त करने वाला, व अध्यापक होता है ॥५॥

जा० पा० में कहा है—'श्रद्धाकर्मपरो नृपप्रियकरो भानौ सजीवे धनी' (८ अ० १ श्लो०) ॥५॥

---

[1] कूटकृत् प्रलघुचित्तः । [2] निष्ठो । [3] सुबुद्धिमान् ।

सूर्य शुक्र युति का फल

शस्त्रप्रहरणविद्याशक्तियुतो नेत्रदुर्बलश्चरमे[1]।
रङ्गज्ञो रविसितयोः स्त्रीसङ्गाल्लब्धबन्धुधनः[2] ॥६॥

यदि कुण्डली में सूर्य के साथ शुक्र स्थित हो तो जातक—शस्त्र प्रहार-विद्या व सामर्थ्य से युत, वृद्धावस्था में आंख से दुर्बल पाठान्तर से यदि चर राशि (१।४।७।१०) में युति हो तो नेत्र पीड़ा, नृत्य नाटचादि कला का ज्ञाता, स्त्री सङ्ग से बान्धवों का धन प्राप्त करने वाला होता है ॥६॥

जा० पा० में कहा है—'स्त्रीमूलार्जितबन्धुमाननियुतः प्राज्ञः स शुक्रेऽरुणे'
(८ अ० २ श्लो०) ॥६॥

सूर्य शनि युति का फल

धातुज्ञो धर्ममयः [3]स्वधर्मनिरतः प्रणष्टसुतदारः।
निजवंशगुणैः [4]शुद्धः शनिरव्योरल्पशीलश्च ॥७॥

यदि कुण्डली में सूर्य के साथ शनि स्थित हो तो जातक—धातु सुवर्णादि को जानने वाला, धर्मात्मा, अपने धर्म वा कर्म (कार्य) में लीन, स्त्री-पुत्र से हीन, अपनी कुल परम्परा के गुणों से प्रसिद्ध व लघु शीलवान् होता है ॥७॥

जा० पा० में कहा है—'मन्दप्रायमतिः सपत्नवशगो मन्देन युक्ते रवौ'
(८ अ० २ श्लोक) ॥७॥

चन्द्र भौम युति का फल

शूरो रणप्रतापी मल्लोऽसृग्वेदनार्तदेहश्च[5]।
मृच्चर्मधातुशिल्पी कूटज्ञश्चन्द्रकुजयोगे ॥८॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा व भौम एक साथ स्थित हों तो जातक—शूर (वीर), युद्ध में विजयी, योद्धा, रुधिर जन्य पीड़ा से युत शरीर वाला, मिट्टी-चर्म (चमड़ा) धातु (सुवर्णादि) का कारीगर, कूटनीति का जानने वाला होता है ॥ ८ ॥

जा० पा० में कहा है—'शूरः सत्कुलधर्मवित्तगुणवानिन्दौ धराजान्विते'
(८ अ० २ श्लो०) ॥८॥

चन्द्र बुध युति का फल

काव्यकथास्वतिनिपुणः सधनः स्त्रीसंमतः सुरूपश्च।
स्मितवदनः शशिबुधयोर्धर्मरुचिः[6] स्याद्विशिष्टगुणः ॥९॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा के साथ बुध स्थित हो तो जातक—काव्य कथानक में अति चतुर, धनी, स्त्री का अनुगामी, स्वरूपवान्, हस-मुख, धर्म में रुचि रखने वाला व विशेष गुण से युत होता है ॥९॥

जा० पा० में कहा है—'धर्मी शास्त्रपरो विचित्रगुणवान् चन्द्रे सतारासुते'
(८ अ० २ श्लोक) ॥९॥

---

१ चरभे। २ जनः। ३ स्वकर्म। ४ सिद्धः। ५ वेदनाप्तदाह। ६ रति।

चन्द्र गुरू युति का फल

दृढसौहृदो विनीतः स्वबन्धुसंमानवर्धनेशश्च[1] ।
गुर्विन्द्वोः शुभशीलः सुरद्विजेभ्यो [2]रतो भवेत्पुरुषः ॥१०॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा के साथ गुरू स्थित हो तो जातक--स्थिर मित्रता वाला, विनयी, अपने बन्धु बान्धवों का आदर करने वाला, धनी, सुशील व देव ब्राह्मणों की सेवा में तत्पर होता है ॥१०॥

जा० पा० में कहा है—'जातः साधुजनाश्रयोऽतिमतिमानार्येण युक्ते विधौ'
(८ अ० ३ श्लो०) ॥१०॥

चन्द्र शुक्र युति का फल

[3]स्रग्धौताम्बरयुक्तः क्रियाविधिज्ञः [4]कुलप्रियोऽत्यलसः ।
क्रयविक्रयेषु कुशलः शशिभार्गवयोः सदा योगे ॥११॥

यदि कुण्डली में चन्द्र के साथ शुक्र स्थित हो तो जातक—माला-धूप वा शुभ्र वा धोती वस्त्र से युत, कार्य रीति का ज्ञाता, कुल का प्यारा वा कवि (कविता कर्त्ता) आलसी, खरीदने वेचने में निपुण होता है ॥११॥

जा० पा० में कहा है—'पापात्मा क्रयविक्रयेषु कुशलः शुक्रे सशीतद्युतौ'
(८ अ० ३ श्लो०) ॥११॥

चन्द्र शनि युति का फल

जीर्ण[5]वधूजनरमणो गजाश्वसम्पादको[6] विगतशीलः ।
वश्यो विधनः पुरुषः पराजितः स्याच्छशाङ्कशनियोगे ॥१२॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा के साथ शनि हो तो जातक—वृद्धा स्त्री में आसक्त, हाथी घोड़ों का अच्छी रीति से पालन करने वाला, शील (नम्रता) से रहित, दूसरों का अनुगामी, धन-हीन, एवं हारने वाला होता है ॥१२॥

जा० पा० में कहा है—'कुस्त्रीजः पितृदूषको गतधनस्तारापतौ सार्कजे'
(८ अ० ३ श्लोक) ॥१२॥

भौम बुध युति का फल

स्त्रीदुर्भगोऽल्पवित्तः सुवर्णलोहप्रकारकः स्थपतिः ।
दुष्टस्त्रीविधवानां कुजबुधयोरौषधक्रियानिपुणः ॥ १३ ॥

यदि कुण्डली में भौम के साथ बुध स्थित हो तो जातक स्त्री के द्वारा भाग्यहीन, लघुधनी, सुवर्ण (सोना) लोहे का कार्य करने वाला, कारीगर, दुश्चरित्रा व विधवा स्त्री का पोषक वा प्रेमी, तथा दवा बनाने में चतुर होता है ॥ १३ ॥

जा० पा० में कहा है—'वाग्मी चौषधशिल्पशास्त्रकुशलः सौम्यान्विते भूसुते'
(८ अ० ३ श्लोक) ॥ १३ ॥

---

१ संमानकृद्धनेशश्च । २ हितो । ३ धूपां । ४ कवि । ५ वधूनां । ६ सम्पालको ।

भौम गुरु युति का फल

शिल्प[1]श्रुतिशास्त्रज्ञो मेधावी वाग्विशारदो मतिमान्।
अस्त्रप्रियप्रधानः सुरगुरुकुजयोः [2]समागतयोः ॥ १४ ॥

यदि कुण्डली में भौम के साथ गुरू स्थित हो तो जातक—शिल्प (कारीगरी), व वेद शास्त्र का जानने वाला, तीव्रबुद्धि, भाषण चतुर, बुद्धिमान्, व शस्त्र प्रेमियों में प्रधान होता है ॥ १४ ॥

जा० पा० में कहा है—'कामी पूज्यगुणान्वितो गणितविद् भौमे सदेवार्च्चिते'
(८ अ० ४ श्लोक) ॥ १४ ॥

भौम शुक्र युति का फल

पूज्यो गणप्रधानो गणितज्ञः परयुवतिभी[3] रतो धूर्तः।
द्यूतानृतशाठ्यरतो विटश्च[4] सितरुधिरसंयोगे ॥ १५ ॥

यदि कुण्डली में भौम के साथ शुक्र स्थित हो तो जातक—पूंजा करने योग्य, जन समुदाय में मुख्य, गणित वेत्ता, दूसरे की स्त्री में आसक्त, धूर्त, जुआ-झूठ-शठता में लीन, व मायावी होता है ॥ १५ ॥

जा० पा० में कहा है—'धातोर्वादरतः प्रपञ्चरसिको धूर्तः सभौमे भृगौ'
(८ अ० ४ श्लोक ॥ १५ ॥

भौम शनि युति का फल

धात्विन्द्रजालकुशलः प्रवञ्चक[5]स्तेयकर्मकुशलश्च।
कुजसौरयोर्विधर्मः शस्त्रविषघ्नः कलिरुचिः स्यात् ॥ १६ ॥

यदि कुण्डली में भौम के साथ शनि स्थित हो तो जातक—धातु (सुवर्णादि) क्रिया व इन्द्रजाल (जादूगरी) विद्या में निपुण, ठग, चोरी कार्य में चतुर, धर्म हीन, शस्त्र व जहर से मृत्यु भय, एवं कलह प्रेमी होता है ॥ १६ ॥

जा० पा० में कहा है—'वादी गानविनोदविज्जडमतिः सौरेण युक्ते कुजे'
(८ अ० ४ श्लोक) ॥ १६ ॥

बुध गुरु युति का फल

नृत्तविधेर्विज्ञाता प्राज्ञोऽपि च [6]गेयशास्त्रविन्मनुजः।
बुधगुरुयोगे मतिमान्सौख्ययुतो जायतेऽवश्यम् ॥ १७ ॥

यदि कुण्डली में बुध के साथ गुरू स्थित हो तो जातक—नाचने की रीति का ज्ञाता, विद्वान्, गाने (गायन) व बजाने में चतुर, बुद्धिमान् और सुखसाधन से संपन्न होता है ॥ १७ ॥

जा० पा० में कहा है—'वाग्मी रूपगुणान्वितोऽधिकधनी वाचस्पतौ सेन्दुजे'
(८ अ० ४ श्लोक) ॥ १७ ॥

लको। [1] शिल्पी। [2] योगे। [3] युवतिको। [4] विटः सिते रुधिरसंयुते भवति।
[5] प्रपञ्चकस्तोयकर्म। [6] वाद्य।

बुध शुक्र युति का फल

अतिशयधनो नयज्ञो बहुशिल्पो वेदवित्सुवाक्यः स्यात् ।
गीतज्ञो हास्यरतिर्बुधसितयोर्गन्धमाल्यरुचिः ॥ १८ ॥

यदि कुण्डली में बुध के साथ शुक्र स्थित हो तो जातक—अत्यन्त धनी, नीतिवान् अधिक शिल्प कला का ज्ञाता, भेदज्ञ, सुन्दरभाषी, गायन विद्या का ज्ञाता, हँसने में प्रेम व इत्र पुष्पमाला में रुचि रखने वाला होता है ॥ १८ ॥

जा० पा० में कहा है—'शास्त्री गानविनोदहास्यरसिकः शुक्रे सचन्द्रात्मजे'
(८ अ० ५ श्लोक) ॥ १८ ॥

बुध शनि युति का फल

[1]ऋणवान् [2]दम्भप्रायः प्रपञ्चकः सत्कविर्गमनशीलः ।
निपुणः शोभनवाक्यो बुधशनियोगे पुमान् भवति ॥ १९ ॥

यदि कुण्डली में बुध के साथ शनि हो तो जातक—ऋणी, पाठान्तर से गुणी, दम्भी (पाखण्डी), प्रपञ्ची, सुन्दर कवि, घूँमने वाला, चतुर व सुन्दर वाणी का होता है ॥१९॥

जा० पा० में कहा है—'विद्यावित्तविशिष्टधर्मगुणवानर्कात्मजे सेन्दुजे' ।
(८ अ० ५ श्लो०) ॥ १९ ॥

गुरू शुक्र युति का फल

जीवति [3]विद्यावादैर्विशिष्टधर्मस्थितः प्रमाणयुतः ।
जीवसितयोर्मनुष्यो विशिष्टदारो भवेन्मतिमान्[4] ॥ २० ॥

यदि कुण्डली में गुरू के साथ शुक्र स्थित हो तो जातक—वेद विद्या से जीविका करने वाला, सप्रमाण विशेष धर्म में रहने वाला, श्रेष्ठ पत्नी वाला, बुद्धिमान् वा धनवान् होता है ॥ २० ॥

जा० पा० में कहा है--'तेजस्वी नृपतिप्रियोऽतिमतिमान् शूरः सशुक्रे गुरौ' ।
(८ अ० ५ श्लो०) ॥२०॥

गुरू शनि युति का फल

शूरो वित्तसमृद्धो नगराधि[5]पतिर्यशस्वी च ।
शनिजीवयोः प्रधानः श्रेणिसभाग्रामसंघानाम् ॥ २१ ॥

यदि कुण्डली में गुरू के साथ शनि स्थित हो तो जातक--वीर, (पराक्रमी), धनी, नगर का स्वामी, यशस्वी, श्रेणी-सभा-गाँव व समुदाय का स्वामी होता है ॥ २१ ॥

जा० पा० में कहा है--'शिल्पी मन्त्रिणी सार्कजे' (८ अ० ५ श्लो०) ॥ २१ ॥

शुक्र शनि युति का फल

दारुविदारणदक्षः क्षुरचित्राश्मादिकर्मशिल्पी च ।
मल्लोऽटनः पशुपतिः शनिसितयोगे पुमान् भवति ॥ २२ ॥

---

१. गुणवान् । २. डम्भ । ३. वेदै । ४. भवेद्धनवान् । ५. नगराधिपतिः सुखी यशस्वी च ।

यदि कुण्डली में शुक्र के साथ शनि स्थित हो तो जातक—लकड़ी चीरने में निपुण, क्षौर कर्म–चित्र रचना–पत्थल आदि में कारीगरी करने में चतुर, योद्धा, पर्यटन शील अर्थात् घुमक्कड़, व पशु पालक होता है ॥ २२ ॥

जा० पा० में कहा है—'पशुपतिर्मल्लः सिते सासिते' (८ अ० ५ श्लो०) ॥ २२ ॥

अध्याय का उपसंहार

उक्तं फलं गगनगा यद्यन्योन्यगणस्थिताः ।
अधमादि विकल्पेन कुर्वन्ति विकृतिं तथा ॥ २३ ॥

मैंने इस अध्याय में दो ग्रहों के योग से फल का वर्णन किया है। उसमें, ग्रह परस्पर वर्ग में हों तो अधमादि (उत्तम-मध्यमादि) विकल्प से फल में न्यूनाधिकता होती है ॥ २३ ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां द्विग्रहयोगो नाम पञ्चदशोऽध्यायः ॥

षोडशोऽध्यायः ।

सू० चं० मं० युति का फल

निर्लज्जः पापरतो यन्त्रज्ञः शत्रुदारणे शूरः ।
[1]अश्मक्रियासु कुशलः सहस्थितैः सूर्यशशिभौमैः ॥ १ ॥

यदि जन्माङ्ग में सूर्य, चन्द्रमा, मङ्गल एक राशि में हों तो जातक लज्जा से हीन, पाप में लीन, यन्त्र बनाने वाला अर्थात् मशीनरी का ज्ञाता, शत्रु को परास्त करने में समर्थ, पाषाणादि क्रियाओं में अर्थात् मूर्ति या शिल्प क्रियाओं में चतुर, पाठान्तर से समस्त कार्यों में चतुर होता है ॥ १ ॥

सू० चं० बु० युति का फल

तेजस्वी निपुणमतिः शास्त्रकलागोष्ठिपानरतः ।
नृपकृत्यकरो[2] धीरो रविशशिशशिजैः सहैकस्थैः ॥ २ ॥

यदि सूर्य, चन्द्रमा, बुध एक राशि में हों तो जातक तेजस्वी, सुन्दर बुद्धिवाला, शास्त्र-कला-सभा व पान (भाँग या मदिरा वा चायादि) में लीन, राजा का कार्य करने वाला अर्थात् राजकीय कर्मचारी पाठान्तर से राजकार्य में लीन, और धैर्यवान् होता है ॥ २ ॥

सू० चं० गुरु युति का फल

क्रुद्धो मायानिपुणः सेवाकुशलो विदेशगमनरतः ।
मेधावी चपलमतिः सहस्थितैरर्कशशिजीवैः ॥ ३ ॥

---

१ अखिल । २ रतो

यदि सूर्य, चन्द्रमा, गुरू एक राशि में हों तो जातक—क्रोध करने वाला, अपनी माया फैलाने मे चतुर, सेवा कार्य में निपुण, विदेश गमन में लीन अर्थात् परदेश में रहने वाला, अत्यन्त बुद्धिमान्, व चञ्चल बुद्धिवाला होता है ॥ ३ ॥

सू० चं० शुक्र युति का फल

परधनहरणे निपुणः परदाररतश्च शास्त्रनिपुणश्च ।
रविचन्द्रदैत्यपूज्यैरेकस्थैर्जायते मनुजः ॥ ४ ॥

यदि सूर्य, चन्द्र, शुक्र एक राशि में हों तो जातक—दूसरे के द्रव्य हरण (चुराने में) करने में चतुर, दूसरे की स्त्री में आसक्त व शास्त्र में चतुर होता है ॥ ४ ॥

सू० चं० शनि युति का फल

कामे[1] विवादकुशलो मूर्खः परतन्त्रगो दरिद्रश्च ।
सूर्यनिशाकररविजैरेकस्थैर्जायते मनुजः ॥ ५ ॥

यदि सूर्य, चन्द्रमा, शनि एक राशि में हों तो जातक—काम की चर्चा में चतुर, मूर्ख, दूसरे के आधीन व दरिद्री अर्थात् निर्धन होता है ॥ ५ ॥

सू० मं० बुध युति का फल

भवति ख्यातो मल्लः साहसिको निष्ठुरो विगतलज्जः ।
धनसुतकलत्ररहितः सहस्थितैरर्ककुजसौम्यैः ॥ ६ ॥

यदि सूर्य, भौम, बुध एक राशि में हों तो जातक—प्रसिद्ध, कुश्ती लड़ने वाला, साहसी, निठुर, निर्लज्ज व धन-पुत्र-स्त्री से रहित होता है ॥ ६ ॥

सू० मं० गुरु युति का फल

वचसि निपुणो महार्थः क्षितिपतिमन्त्री च[2] भूपतिर्वाऽपि ।
सत्यवचनः प्रचण्डः सहस्थितैर्भौमगुरुसूर्यैः ॥ ७ ॥

यदि सूर्य, भौम, गुरू एक राशि में हों तो जातक—बोलने में चतुर, बड़ा धनवान्, राजा का मन्त्री अर्थात् सलाहकार, अथवा राजा वा पाठान्तर से सेनानायक, सत्य बोलने वाला व उग्र स्वभाव का होता है ॥ ७ ॥

सू० भौ० शुक्र युति का फल

नयनातुरः कुलीनः सुभगो वाक्शल्यसंयुतो मनुजः ।
भृगुभौमदिवसनाथैः सहस्थितैः स्याद्विभवयुक्तः ॥ ८ ॥

यदि सूर्य, भौम, शुक्र एक राशि में हों तो जातक—नेत्र रोगी, अच्छे कुल में उत्पन्न, सुन्दर भाग्य वाला, कठोर वचन बोलने वाला व वैभव से युक्त होता है ॥ ८ ॥

सू० भौ० शनि युति का फल

विकलाङ्गो धनरहितो नित्यं रोगान्वितो मनुजः ।
स्वजनरहितोऽतिमूर्खः क्षितिजार्कजभानुभिः सहितैः ॥ ९ ॥

---

[1] कामविवादे । [2] चमूपतिः ।

यदि सूर्य, भौम, शनि एक राशि में हों तो जातक--अङ्गहीन, धनहीन, सदा रोगी, अपने व्यक्तियों से हीन अर्थात् कुटुम्ब का अभाव व अत्यन्त मूर्ख होता है ।। ९ ।।

सू० बु० गुरु युति का फल

नेत्रातुरोऽतिधनवान् [1]मूर्खः शास्त्रादिशिल्पकाव्यरतः ।
वाचस्पतिबुधसूर्यैरेकगतैर्लिपिकरः पुरुषः ।। १० ।।

यदि सूर्य, बुध, गुरू एक राशि में हों तो जातक--नेत्र रोगी, अत्यन्त धनी, मूर्ख, शास्त्रादि व शिल्पादि (चित्रादि) वा काव्यादि में लीन, पाठान्तर से शास्त्र चर्चा, काव्य, सभा, शिल्प कार्य में लीन, व सुन्दर लेखक होता है ।। १० ।।

सू० बु० शुक्र युति का फल

[2]अतितप्तो वाचाटो भ्रमणरुचिः प्रोषितो गुरुभिः ।
स्त्रीहेतोः सन्तप्तः शशिसुतरविभार्गवैः सहितैः ।। ११ ।।

यदि सूर्य, बुध, शुक्र एक राशि में हों तो जातक--अत्यन्त दुःखी, पाठान्तर से प्रशस्त, वाचाल, घूमने की प्रवृत्ति वाला, गुरूजनों की आज्ञा से परदेश में रहने वाला, एवं स्त्री के लिये दुःखी होता है ।। ११ ।।

सू० बु० शनि युति का फल

क्लीबाचारो द्वेष्यः सर्वजितो बन्धुभिः परित्यक्तः ।
सौरादित्येन्दुसुतैरेकस्थैर्जायते पुरुषः ।। १२ ।।

यदि सूर्य, बुध, शनि एक राशि में हों तो जातक--नपुंसक की तरह आचरण करने वाला, द्वेषी, सबसे पराजित, बन्धु बान्धवों से त्यक्त अर्थात् त्यागा हुआ होता है ।। १२ ।।

सू० गु० शुक्र युति का फल

दुर्बलचक्षुः शूरः प्राज्ञो निःस्वश्च भूपतेः सचिवः ।
परकार्यरतो नित्यं भार्गवगुरुभास्करैः सहितैः ।। १३ ।।

यदि सूर्य, गुरू, शुक्र एक राशि में हों तो जातक—कमजोर नेत्र वाला, वीर, पण्डित, निर्धन, राजा का मन्त्री व दूसरों के कार्य करने वाला होता है ।। १३ ।।

सू० गु० शनि युति का फल

असदृशकायः पूज्यः स्वजनद्वेष्यः सुदारसुतमित्रः ।
नृपतीष्टो विगतभयो जीवार्कजदिनकरैः सहितैः ।। १४ ।।

यदि सूर्य, गुरू, शनि एक राशि में हों तो जातक—असमान शरीर वाला, पूजनीय, अपने आदमियों से अनादृत, अर्थात् तिरस्कृत, सुन्दर स्त्री व पुत्र व मित्र वाला, राजा का प्रिय पात्र व निर्भय होता है ।। १४ ।।

---

[1] शास्त्रकथाकाव्यगोष्ठिशिल्परतः । [2] अभिशस्तो ।

सू० शु० शनि युति का फल

शत्रुभयात्सोद्वेगो मानकलाकाव्यवर्जितो मनुजः।
कुत्सितचरितः कुष्ठी सितार्किरविसंयुतैर्भवति ॥ १५ ॥

यदि सूर्य, शुक्र, शनि एक राशिगत हों तो जातक—शत्रुभय से दुःखी, सम्मान, कला (शिल्पादि) काव्य (शास्त्रादि) से रहित, दूषित आचरण करने वाला, और कोढ़ी होता है ॥ १५ ॥

चं० भौ० बुध युति का फल

पापकरा जायन्ते नीचाचाराः सुहृत्स्वजनहीनाः।
आजीविनश्च पुरुषाः शशाङ्कबुधभूमिजैः सहितैः ॥ १६ ॥

यदि चन्द्रमा, भौम, बुध एक राशि में हों तो जातक—पाप करने वाला, दुष्ट आचरण में लीन, जीवन पर्यन्त मित्र व अपने बन्धुओं से रहित होता है ॥ १६ ॥

चं० भौ० गुरु युति का फल

[1]विनताङ्गः स्त्रीलोलश्चोरः कान्तश्च संमतः स्त्रीणाम्।
भौमशशाङ्कसुरेज्यैरेकस्थैश्चण्डरोषश्च ॥ १७ ॥

यदि चन्द्र, भौम, गुरू एक राशि में हों तो जातक—नम्र देह, पाठान्तर से घावों से युत, स्त्री लोलुप, चोर, सुन्दर, स्त्रियों का प्रिय व महाक्रोधी होता है ॥ १७ ॥

चं० भौ० शुक्र युति का फल

दुःशीलायाः पुत्रः पतिश्च तस्याः सदैव निर्दिष्टः।
कुजभृगुशशिभिः सहितैर्भ्रमणरुचिः [2]शीतभीतश्च ॥ १८ ॥

यदि चन्द्रमा, भौम, शुक्र एक राशि में हों तो जातक—दुःशीला अर्थात् शील (नम्रता) रहित स्त्री का पुत्र व पति, घूँमने की रूचि वाला और ठण्ड से डरने वाला होता है ॥ १८ ॥

चं० भौ० शनि युति का फल

बाल्ये मृतजननीकः क्षुद्रो विषमश्च लोकविद्विष्टः।
जायेत नरो योगे भूसुतशशिभास्करसुतानाम् ॥ १९ ॥

यदि चन्द्र, भौम, शनि एक राशि में हों तो जातक—बाल्यावस्था में मातृ सुख से रहित, क्षुद्र स्वभाव, विषम बुद्धि व लोक (संसार) द्वेषी होता है ॥ १९ ॥

चं० बु० गुरू युति का फल

धनवान्कल्यो वाग्मी तेजस्वी ख्यातिमान्विपुलकीर्तिः।
बहुपुत्रभ्रातृयुतो बुधेन्दुसुरपूजितैर्युक्तैः ॥ २० ॥

यदि चन्द्र, बुध, गुरू एक राशि में हों तो जातक—धनी, रोगी, वक्ता, तेजस्वी, विख्यात, विशाल कीर्तिवाला, एवं अधिक भाई व पुत्रों से युक्त होता है ॥ २० ॥

---

[1] व्रणिताङ्गः। [2] भीरुश्च।

चं० बु० शुक्र युति का फल

विद्यासंस्कृतमतिरपि नीचाचारः पुमान्भवेज्जातः।
सौम्यो[1] धनप्रलुब्धो बुधभार्गवचन्द्रसंयोगे ॥ २१ ॥

यदि चन्द्र, बुध, शुक्र एक राशि में हों तो जातक——विद्या से संस्कृत अर्थात् विद्या से युत बुद्धि होने पर भी दुष्ट आचरण करने वाला, सौम्य अर्थात् विनीत, पाठान्तर से ईर्ष्या करने वाला व धन का लोभी होता है ॥ २१ ॥

चं० बु० शनि युति का फल

अस्वस्थो[2] विकलाङ्गः प्राज्ञो वाग्मी सुपूजितः क्षितिपः।
भवति नरः संयोगे सौरेन्दुशशाङ्कपुत्राणाम् ॥ २२ ॥

यदि चन्द्र, बुध, शनि एक राशि में हों तो जातक——रोगी पाठान्तर से पराधीन, विकल शरीर, पण्डित, वक्ता, पूजनीय व राजा होता है ॥ २२ ॥

चं० गु० शुक्र युति का फल

साध्वीतनयः प्राज्ञः कलास्वभिज्ञो बहुश्रुतः साधुः।
भार्गवगुरुशशियोगे जातः सुभगो भवेत्पुरुषः ॥ २३ ॥

यदि चन्द्र, गुरू, शुक्र एक राशि में हों तो जातक——पतिव्रता स्त्री का पुत्र, पण्डित, कलाओं को जानने वाला, बहुज्ञ, सज्जन व सुन्दर भाग्य वाला होता है ॥ २३ ॥

चं० गुरु शनि युति का फल

शास्त्रार्थतत्त्वबुद्धिर्वृद्धस्त्रीसङ्गतो [3]विगतरोगः।
शशिवाचस्पतिसौरैरेकस्थैर्ग्रामवृन्दपतिः ॥ २४ ॥

यदि चन्द्र, गुरू, शनि, एक राशि में हों तो जातक——शास्त्र के तत्त्व का ज्ञाता, वृद्धा स्त्री का प्रसङ्गी, गत रोग वा क्रोधहीन, व ग्राम एवं जन समूह का पति अर्थात् ग्राम का प्रधान व समूह का अध्यक्ष होता है ॥ २४ ॥

चं० शु० शनि युति का फल

लिपिकरपुस्तकवाचकपुरोधसां भवति जन्म सुकृतैश्च।
दैवविदां पुरुषाणां शशिभार्गवसौरिसंयोगे ॥ २५ ॥

यदि चन्द्र, शुक्र, शनि एक राशि में हों तो जातक——लेखक, कथा वाचक, पुरोहित ज्योतिषी, पूर्व जन्म के पुण्य से होता है ॥ २५ ॥

भौ० बु० गुरू युति का फल

सुकविः क्षोणीनाथः सद्युवतिपतिः परार्थ उद्युक्तः।
गान्धर्ववेदकुशलः स्याद्बुधगुरुभूसुतैः सहितैः ॥ २६ ॥

यदि भौम, बुध, गुरू एक राशि में, हों तो जातक——सुन्दर कवि, राजा, सज्जन स्त्री का स्वामी, दूसरों के उपकार करने में लीन, एवं गान विद्या में चतुर होता है ॥ २६ ॥

---

[1] सेर्ष्यो। [2] अस्वातन्त्र्यो विकलः। [3] रोषः।

भौ० बु० शुक्र युति का फल

अकुलीनो विकलाङ्गश्चपलो दुष्टश्च जायते मनुजः।
मुखरो नित्योत्साही कुजबुधभृगुनन्दनैः सहितः॥ २७॥

यदि कुण्डली में भौम, बुध, शुक्र एक राशि में हों तो जातक—सुन्दर कुल से हीन, विकृति शरीरी, चपल, दुष्ट, वाचाल, एवं प्रतिदिन उत्साही होता है॥ २७॥

भौ० बु० शनि युति का फल

प्रेष्यः श्यामलनेत्रः प्रवासशीलो भवेद्वदनरोगी।
रमते प्रहसनशीलैर्बुधार्किरुधिरैः सहैकस्थैः॥ २८॥

यदि भौम, बुध, शनि एक राशि में हों तो जातक--सेवक वा दरिद्री, काले नेत्र वाला, प्रवासी, अर्थात् परदेश में रहने वाला, मुख का रोगी, एवं हास्य प्रेमियों के साथ रमण करने वाला होता है॥ २८॥

भौ० गु० शुक्र युति का फल

नृपतीष्टः सत्सुतवान्विलासिनीभ्यः सदाप्तबहुसौख्यः।
सकलजनानन्दकरो भार्गवगुरुभूमिजैः सहितैः॥ २९॥

यदि भौम, बुध, शनि एक राशि में हों तो जातक—राजा का प्रिय पात्र, सुन्दर पुत्रों से युत, स्त्रियों से सदा बहुत सुख प्राप्त करने वाला, एवं समस्त लोगों का आन्नद दाता होता है॥ २९॥

भौ० गु० शनि युति का फल

नृपसंमतः क्षताङ्गो नीचाचारो विगर्हितो मित्रैः।
भवति नरो विगतघृणः सुरेज्यकुजसौरिसंयोगे॥ ३०॥

यदि भौम, गुरू, शनि एक राशि में हों तो जातक—राजा से संमत, भग्न देह, दुष्ट आचरण करने वाला, मित्रों से निन्दनीय, एवं घृणा से रहित होता है॥ ३०॥

भौ० शु० शनि युति का फल

चारित्रविहीनायाः पुत्रो भर्ता भवेत्सुखविहीनः।
नित्यं प्रवासशीलः संयुक्तैः सौरिकुजशुक्रैः॥ ३१॥

यदि भौम, शुक्र, शनि, एक राशि में हों तो जातक--चरित्रहीन स्त्री का पुत्र व पति, सुख से रहित, एवं प्रतिदिन परदेश में रहने वाला होता है॥ ३१॥

बु० गु० शुक्र युति का फल

सुतनुः क्षपितारिगणो नृपतिः सुभगस्तथा [1]पृथुलकीर्तिः।
बुधगुरुशुक्रैः सहितैर्भवति नरः सत्यवचनश्च॥ ३२॥

यदि बुध, गुरू, शुक्र, एक राशि में हों तो जातक--सुन्दर देहधारी, शत्रु से रहित, राजा, सुन्दर भाग्यवान्, विपुल यशवाला, एवं सत्यभाषी होता है॥ ३२॥

---

[1] विपुलकीर्ति।

बु० गु० शनि युति का फल

[1]स्थानधनैश्वर्ययुतं प्राज्ञं बहुभोगिनं स्वदाररतम् ।
धृतिसौख्यरतं[2] सुभगं जनयन्ति बुधार्किजीवाख्याः ॥ ३३ ॥

यदि बुध, गुरू, शनि, एक राशि में हों तो जातक—स्थान, पाठान्तर से मान-धन-ऐश्वर्य से युक्त, पण्डित, अत्यन्त सुख भोक्ता, अपनी स्त्री में लीन, धैर्य व सुख में लीन वा सुखादि से युत, एवं सुन्दर भाग्य वाला होता है ॥ ३३ ॥

बु० शु० शनि युति का फल

मुखरो धूर्तोऽनृतवाक् परयुवतिरतो भवेद्विषमशीलः ।
बुधशुक्रसूर्यतनयैः कलास्वभिज्ञः स्वदेशरतः ॥ ३४ ॥

यदि बुध, शुक्र, शनि एक राशि में हों तो जातक--कुत्सित वक्ता, धूर्त, असत्यभाषी, दूसरों की स्त्री में लीन, दुरूह स्वभाव वाला, कलाओं का ज्ञाता, एवं अपने देश का प्रेमी होता है ॥ ३४ ॥

गु० शु० शनि युति का फल

न्यूने कुलेऽपि जातो भवति नरो भूपतिर्विपुलकीर्तिः ।
गुरुभार्गवदिनकरजैरेकस्थैः शीलसम्पन्नः ॥ ३५ ॥

यदि गुरू शुक्र, शनि, एक राशि में हों तो जातक—निम्न अर्थात् लघुकुल में पैदा होकर भी अधिक यशवाला, राजा, एवं सुशील होता है ॥ ३५ ॥

माता व पिता के सुख का ज्ञान

पापैर्युक्ते चन्द्रे मातुरभावः प्रकीर्तितप्रायः ।
सूर्ये पितुस्तथान्यैः शुभं वदेन्मिश्रितैर्मिश्रम् ॥ ३६ ॥

यदि जन्म के समय में चन्द्रमा पापग्रहों से युत हो तो माता के सुख का अभाव, यदि सूर्य पाप ग्रहों से युत हो तो पितृसुख का अभाव जातक को होता है ।

यदि सूर्य, चन्द्रमा शुभग्रहों से युत हों तो माता पिता का सुख पूर्ण, यदि पाप व शुभग्रह दोनों से युत सूर्य, चन्द्रमा हों तो मध्यम सुख दोनों का हाता है ॥ ३६ ॥

शुभ ग्रहों की युति का फल

प्राय; शुभाः समेता धनभूतियशोन्वितं नृपतिचेष्टम् ।
उत्पादयन्ति मनुजं भूमण्डलमण्डनं श्रेष्ठम् ॥ ३७ ॥

यदि जन्माङ्ग में शुभ ग्रहों की स्थिति एक राशि में हो तो–धन, ऐश्वर्य, यश से युक्त, राजा के समान पृथ्वी के भूषण रूप अत्यन्त श्रेष्ठ मनुष्य का जन्म होता है ॥ ३७ ॥

पाप ग्रहों की युति का फल

पापस्त्रयोऽपि मिलिताः कुर्वन्ति नरं सुदर्भगं लोके ।
दारिद्र्यदुःखतप्तं गर्हितरूपं विनयहीनम् ॥ ३८ ॥

यदि जन्म के समय तीन पाप ग्रहों की स्थिति एक राशि में हों तो जातक—भाग्य हीन, दरिद्री, दुःखी, बुरे रूप वाला, एवं विनय से हीन होता है ॥ ३८ ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां त्रिग्रहयोगो नाम षोडशोऽध्यायः ॥

---

[1] मान । [2] युतं ।

सप्तदशोऽध्यायः

सू० चं० मं० बुध युति का फल

लिपिकरतस्करमुखरो रोगी मायाप्रपञ्चकुशलश्च ।
बुधरविभौमशशाङ्कै रेकर्क्षगतैः पुमान्भवति ॥ १ ॥

यदि जन्म के समय सूर्य, चन्द्र, भौम, बुध एक साथ हों तो जातक—लिपि कर्ता वा लेखक, चोर, वाचाल, रोगी व चतुर मायावी होता है ॥ १ ॥

सू० चं० भौ० गुरू युति का फल

धनवान्वनितानिन्द्यस्तेजस्वी नीतिमान्विगतशोकः ।
कर्मसमर्थो निपुणः शशिकुजगुरुभास्करैः सहितैः ॥ २ ।

यदि जन्म के समय सूर्य, चन्द्र, भौम, गुरू एक साथ हों तो जातक—धनी, स्त्री से निन्दित, तेजस्वी, नीतिज्ञ, शोक से रहित, कार्य करने में सक्षम व चतुर होता है ॥२॥

सू० चं० भौ० शुक्र युति का फल

[1]आर्योचितवाग्वृत्तिः सुखभाङ् निपुणोऽर्थसंग्रहणशील. ।
विद्यासुतदारयुतः शशिकुजभृगुभास्करैः सहितैः ॥ ३ ॥

यदि सूर्य, चन्द्र, भौम शुक्र एक साथ हों तो जातक—श्रेष्ठ, उचितवाणी व व्यवहार वाला, पाठान्तर से उग्र अर्थात् तीक्ष्ण, जठराग्नि वाला, सुखभोगी, चतुर, धन संग्रह कर्ता, विद्या-पुत्र-व स्त्री से युक्त होता है ॥ ३ ॥

सू० चं० भौ० शनि युति का फल

विषमशरीरो ह्रस्वो धनरहितो याचिताशनो मूर्खः ।
गम्यः सर्वस्य तथा रविशशिकुजसौरिसंयोगे ॥ ४ ॥

यदि सूर्य, चन्द्र, भौम, शनि एक साथ हों तो जातक--न्यूनाधिक शरीर वाला, वामन, (लघु) धन हीन, भिक्षाशी व सर्व विदित मूर्ख होता है ॥ ४ ॥

सू० चं० बु० गुरूयुति का फल

[2]सौवर्णिकः प्लुताक्षः शिल्पकरो वा महाधनो धीरः[3] ।
जातः[4] स्यान्निरुजतनुः शशिज्ञगुरुभास्करैः सहितैः ॥ ५ ॥

यदि सूर्य, बुध, गुरू चन्द्रमा एक साथ हों तो जातक—सुवर्ण (सोना) का कार्य करने वाला, (सुनार) बड़े नेत्र वाला, कला का ज्ञाता, बड़ा धनवान्, धैर्यधारी पाठान्तर से वीर व रोगहीन देहधारी, पाठान्तर से गम्भीर होता है ॥ ५ ॥

सू० चं० बु० शुक्र युति का फल

विकलः सुभगो वाग्मी [5]ह्रस्वो नृपसंमतो मनुजः ।
जातः स्यादेकस्थै रविशशिबुधभार्गवैः सहितैः ॥ ६ ॥

---

१. उग्रो हुतभूक्तीव्रः । २. सौवर्णकः । ३. वीरः ४. गाम्भीर्यो रुचिर । ५. त्रस्ताक्षो भूपसंमतो, पिङ्गक्षो भूपसंमतो ।

यदि सूर्य, चन्द्र, बुध, शुक्र एक साथ हों तो जातक--व्यग्र, सुन्दर भाग्य वाला, वक्ता, छोटे कद वाला, पाठान्तर से नेत्र रोगी वा पीत नेत्रवाला व राजा का प्यारा होता है ॥ ६ ॥

सू० चं० बु० शनि युति का फल

मातृपितृविप्रयुक्तो धनसौख्यविवर्जितो भ्रमणशीलः ।
भिक्षाशनोऽप्यनृतवाक् रवीन्दुसौम्यार्किभिर्नियतम ॥ ७ ॥

यदि सूर्य, चन्द्र, बुध, शनि एक साथ हों तो जातक—माता पिता से हीन, धन सुख से रहित, घूँमने वाला, भिक्षाशी व असत्यभाषी होता है ॥ ७ ॥

सू० चं० गु० शुक्र युति का फल

सलिलमृगारण्यानां स्वामी स्यात्सौख्यभाक्[1] भवति पूज्यः ।
शुक्रार्कगुरुशशाङ्कैरेकर्क्षगतैः पुमान् निपुणः ॥ ८ ॥

यदि सूर्य, चन्द्रमा, गुरू, शुक्र एक साथ हों तो जातक --जल,-हिरन-व जङ्गल का स्वामी, सुख भोगी पाठान्तर से राजा से सम्मानित व कुशल होता है ॥ ८ ॥

सू० चं० गु० शनि युति का फल

तामसनेत्रस्तीक्ष्णो बहुसुतवित्तो वराङ्गनासुभगः ।
सूर्येज्यचन्द्रसौरैरेकस्थैर्जायते पुरुषः ॥ ९ ॥

यदि सूर्य, चन्द्रमा, गुरू, शनि एक साथ हों तो जातक– लाल नेत्र वाला वा क्रोध दृष्टि वाला, उग्र, अधिक पुत्र व धन से युक्त व श्रेष्ठ स्त्रियों का प्रिय पात्र होता है ॥९॥

सू० चं० शु० शनि युति का फल

वनितासदृशाचारः पुरःसरोऽत्यन्तदुर्बलशरीरः ।
भीरुः सर्वत्र भवेदर्केन्दुसितासितैः सहितैः ॥ १० ॥

यदि सूर्य, चन्द्र, शुक्र, शनि एक साथ हों तो जातक--स्त्री के समान आचरण करने वाला अर्थात् जनखा, आगे चलने वाला, अत्यन्त दुर्बल देहधारी व सब जगह भयभीत होता है ॥ १० ॥

सू० भौ० बु० गुरू युति का फल

शूरोऽथ सूत्रकारश्चक्र[2]धरो वा विपन्नदारधनः ।
दुःखार्णवोऽटनपरः सुसङ्गतैरर्कजीवबुधभौमैः ॥ ११ ॥

यदि सूर्य, भौम, बुध, गुरू एक साथ हों तो जातक--वीर, सूत बनाने वाला वा चक्की चलाने वाला वा पाठान्तर से साइकिल वगैरह पर चलने वाला, स्त्री व धन से रहित, दुःखी व घूँमने वाला होता है ॥ ११ ॥

सू० भौ० बु० शुक्र युति का फल

परदाररतश्चोरो विषमाङ्गो दुर्जनो विगतसत्वः ।
भवति प्रसवे पुरुषो रविसितभौमेन्दुजैः सहितैः ॥ १२ ॥

---

[1] नृपतिपूज्यः । [2] चरो ।

यदि सूर्य, भौम, बुध, शुक्र एक साथ हों तो जातक––दूसरों की स्त्री में लीन, चोर, असमान शरीरधारी, दुर्जन व दुर्बल होता है ॥ १२ ॥

सू० भौ० बु० शनि युति का फल

योद्धा[1] प्राज्ञस्तीक्ष्णो नीचाचारः कविप्रधानश्च ।
मन्त्री च भूपतिर्वा बुधार्ककुजसौरिसंयोगे ॥ १३ ॥

यदि सूर्य, भौम, बुध, शनि एक साथ हों तो जातक––युद्ध करने वाला, पण्डित, उग्र, बुरे आचरण करने वाला, प्रधान कवि, उत्तम सलाहकार अर्थात् मन्त्री अथवा राजा होता है ॥ १३ ॥

सू० भौ० गु० शुक्र युति का फल

सुभगः पूज्यो लोके धनवान् नृपसंमतो भुवि ख्यातः ।
रविभौमजीवशुक्रैरेकस्थैर्नीतिमान्पुरुषः ॥ १४ ॥

यदि सूर्य, भौम, गुरु, शुक्र एक साथ हों तो जातक––सुन्दर भाग्य वाला, संसार में सम्मानित, धनी, राजा से सम्मत, संसार में विख्यात व नीति ज्ञाता होता है ॥१४॥

सू० भौ० गु० शनि युति का फल

सोमान्दो गणमान्यः सिद्धार्थो बन्धुमित्रसंप्रयुक्तः ।
भानुकुजजीवसौरैः संयुक्तैर्वा नृपाभिमतः ॥ १५ ॥

यदि सूर्य, भौम, गुरु शनि एक साथ हों तो जातक – पागल, जन समुदाय में सम्मानित, प्रयोजन सिद्ध कर्ता, बन्धु व मित्र से युत व राजा का प्रिय होता है ॥१५॥

सू० भौ० शु० शनि युति का फल

विकलो नीचाचारो विषमाक्षो बन्धुविद्विष्टः ।
सूर्यकुजशुक्रसौरैः पराभवं सर्वतो याति ॥ १६ ॥

यदि सूर्य, भौम, शुक्र, शनि एक साथ हों तो जातक––अशान्त चित्त, असत्कार्य कर्त्ता, असमान दृष्टि वाला, बन्धुद्वेषी व सबसे पराजित होता है ॥ १६ ॥

सू० बु० गु० शुक्र युति का फल

धनवान्सुखप्रधानः सिद्धार्थो बन्धुमान् प्रकृष्टश्च ।
भानुबुधजीवशुक्रैर्भवति पुमानेकराशिगतैः ॥ १७ ॥

यदि सूर्य, बुध, गुरु, शुक्र एक साथ हों तो जातक––धनी, पूर्ण सुखी, मतलब सिद्ध करने वाला, बन्धुओं से युत व श्रेष्ठ पुरुष होता है ॥ १७ ॥

सू० बु० गु० शनि युति का फल

क्लीबाचारो मानी कलहरुचिः [2]सहजवान् निरुत्साहः ।
अर्कार्किबुधसुरेज्यैरेकस्थैर्जायते पुरुषः ॥ १८ ॥

यदि सूर्य, बुध, गुरु, शनि एक साथ हों तो जातक––नपुंसक के समान आचरण करने वाला, अभिमानी, क्लेश प्रिय, भाई से युक्त व उत्साह से हीन होता है ॥ १८ ॥

---

[1] योधः । [2] सहजवाङ् ।

सू० बु० शु० शनि युति का फल

मुखरः सुभगः प्राज्ञो मृदुसौख्यः सत्त्वशौचसंपन्नः ।
धीरो मित्रसहायो रविबुधसितसौरिसंयोगे ॥ १९ ॥

यदि सूर्य, बुध, शुक्र, शनि एक साथ हों तो जातक वाचाल, सुन्दर भाग्यवाला, पण्डित, सरल, सुखी, सत्त्वगुण व पवित्रता से युक्त, धीर व मित्रों की सहायता करने वाला होता है ॥ १९ ॥

सू० गु० शु० शनि युति का फल

लुब्धः कविः प्रधानः कारुकनाथोऽधिपश्च नीचानाम् ।
आदित्यार्किसितार्यैः राज्ञां जातो भवेदिष्टः ॥ २० ॥

यदि सूर्य गुरू, शुक्र, शनि एक साथ हों तो जातक लोभी, कवि, अध्यक्ष, शिल्पकारों का स्वामी, नीच अर्थात् दुष्टों का मुखिया व राजाओं का प्रिय होता है ॥ २० ॥

चं० भौ० बुध गुरू युति का फल

शास्त्रकुशलो नरेन्द्रः सुमहामन्त्रोऽथवा महाबुद्धिः ।
शशिकुजसोमजजीवैरेकस्थैर्यः पुमाञ्जातः ॥ २१ ॥

यदि चन्द्र, भौम, बुध, गुरू एक साथ हों तो जातक शास्त्रों में निपुण, राजा या सुन्दर महान् मन्त्री अथवा बड़ी बुद्धि वाला होता है ॥ २१ ॥

चं० भौम बुध शुक्र युति का फल

कलहरुचिर्निद्रालुर्नीचः स्याद्बर्धकीपतिः सुभगः ।
बन्धुद्वेष्टा न सुखी शशिकुजबुधभार्गवैः सहितैः ॥ २२ ॥

यदि चन्द्र, भौम, बुध, शुक्र एक साथ हों तो जातक कलहप्रिय, अधिक सोने वाला अर्थात् आलसी, दुष्ट, कुलटा का पति, सुन्दर, बन्धुविरोधी व दुःखी होता है ॥ २२ ॥

चं० भौम बुध शनि युति का फल

शूरो विमातृपितृको दुष्कुलजो बहुकलत्रमित्रसुतः ।
भवति सुकर्माभिरतः शशिकुजबुधसौरिसंयोगे ॥ २३ ॥

यदि चन्द्र, भौम, बुध, शनि एक साथ हों तो जातक वीर, माता-पिता के सुख से रहित, नीच कुल में उत्पन्न, अधिक स्त्री व मित्र एवं पुत्र से युक्त, अच्छे कार्य करने वाला होता है ॥ २३ ॥

चं० भौम गु० शुक्र युति का फल

विकलाङ्गः सुकलत्रः [1]सकलसहोऽतीव मानसंयुक्तः ।
प्राज्ञो बहुमित्रसुखः शशिकुजगुरुभार्गवैः सहितैः ॥ २४ ॥

---

[1] कष्टसहो ।

यदि चन्द्र, भौम, गुरू, शुक्र एक साथ हों तो जातक अशान्त देहधारी, सुन्दर स्त्री वाला, सबको सहन करने वाला, पाठान्तर से कष्ट सहनकर्ता, अत्यन्त सम्मान से युक्त, पण्डित व अधिक मित्रों के सुख का भोगने वाला होता है ।। २४ ।।

चं० भौम गु० शनि युति का फल

बधिरो धनवाञ्शूरः सोन्मादो वाक्पटुः स्थिरप्रकृतिः ।
मतिमानुदारचित्तो भौमेन्दुशनैश्चरसुरेज्यैः ॥ २५ ॥

यदि चन्द्र, भौम, गुरू, शनि एक साथ हों तो जातक बहिरा, धनी, वीर, विक्षिप्त, भाषण में चतुर, स्थिर स्वभाव, बुद्धिमान् व उदार चित्त होता है ।। २५ ।।

चं० भौम शुक्र शनि युति का फल

कुलटापतिः प्रगल्भः सर्पाक्षो नित्यमेव सोद्वेगः ।
जातः पुरुषोऽवश्यं कुजेन्दुयमभार्गवैर्भवति ॥ २६ ॥

यदि चन्द्र, भौम, शुक्र, शनि एक साथ हों तो जातक व्यभिचारिणी स्त्री का स्वामी, धृष्ट, साँप के समान नेत्र वाला तथा सदा उद्वेग से युक्त होता है ।। २६ ।।

चं० बु० गु० शुक्र युति का फल

विद्वान्विमातृपितृकः सद्रूपो धनयुतोऽतिसुभगश्च ।
भवति नरो विगतारिर्बुधगुरुशशिभार्गवैः सहितः ॥ २७ ॥

यदि चन्द्र, बुध, गुरू, शुक्र एक साथ हों तो जातक पण्डित, माता-पिता से हीन, सुरूप, धनी, अत्यन्त भाग्यवान् एव शत्रु से रहित होता है ।। २७ ।।

चं० बु० गु० शनि युति का फल

कृतधर्मकीर्तिरग्रयस्तेजस्वी बन्धुवल्लभो मतिमान् ।
नृपसचिवः प्रवरकविः शशिबुधजीवार्किभिः सहितैः ॥ २८ ॥

यदि चन्द्र, बुध, गुरू, शनि एक साथ हों तो जातक धर्मात्मा, कीर्तिमान्, प्रधान, तेजस्वी, बन्धुप्रिय, बुद्धिमान्, राजा का मन्त्री व उत्तम कवि होता है ।। २८ ।।

चं० बु० शुक्र शनि युति का फल

परदारगमनशीलो विशीलभार्यो विपन्नबन्धुश्च ।
प्राज्ञो लोकद्विष्टः[1] स्यादिन्दुबुधार्किभृगुपुत्रः ॥ २९ ॥

यदि चन्द्र, बुध, शुक्र, शनि एक साथ हों तो जातक परस्त्रीगामी, दुःशीला स्त्री का स्वामी, विपत्ति से युक्त बन्धुवाला, पण्डित व संसार-द्वेषी होता है ।। २९ ।।

चं० गु० शु० शनि युति का फल

मात्रा रहितः सुभगस्त्वग्दोषी दुःखितो भ्रमणशीलः ।
बहुभाषी सत्यरतः शशिगुरुभृगुसौरिभिः सहितैः ॥ ३० ॥

---

[1] द्वेष्टा ।

यदि चन्द्र, गुरू, शुक्र, शनि एक साथ हों तो जातक माता से हीन, सुन्दर भाग्यवान्, चर्मरोगी, दुःखी, घूमने वाला, वहुत बोलने वाला व सत्य में लीन होता है ॥ ३० ॥

भौम बुध गुरू शुक्र युति का फल

[1]स्त्रीकलहरुचिर्धनभाक्पूज्यो लोके च शीलसंपन्नः ।
भवति पुमान्निरुजतनुर्बुधारगुरुभार्गवैः सहितैः ॥ ३१ ॥

यदि भौम, बुध, गुरू, शुक्र एक साथ हों तो जातक स्त्री से कलह करने में मन रखने वाला, धनो, संसार में सम्मानित, शील-गुण से युत व रोगहीन देहधारी होता है ॥ ३१ ॥

भौम बुध गुरू शनि युति का फल

शूरो विद्वान्वाग्मी धनरहितः सत्यशौचसंपन्नः ।
वादी द्वन्द्वसहिष्णुर्मतिमान्सहितैर्बुधारगुरुसौरैः । ३२ ॥

यदि भौम, बुध, गुरू, शनि एक साथ हों तो जातक वीर, पण्डित, वक्ता, निर्धन, सत्य व पवित्रता से युत, बोलने वाला, कष्ट सहनकर्ता व बुद्धिमान् होता है ॥ ३२ ॥

भौम बुध शुक्र शनि युति का फल

स्यान्मल्लः परपुष्टः कठिनाङ्गो युद्धदुर्मदः ख्यातः ।
रमते च सारमेयैर्बुधारयमभार्गवैः सहितैः ॥ ३३ ॥

यदि भौम, बुध, शुक्र, शनि एक साथ हों तो जातक योद्धा, दूसरों से पोषित, कठिन शरीरधारी, लड़ने का मद रखने वाला, प्रख्यात, व कुत्तों के साथ रमणकर्ता अर्थात् कुत्तों का पालक होता है ॥ ३३ ॥

भौम गु० शुक्र शनि युति का फल

तेजस्वी वित्तयुतः स्त्रीलोलः साहसप्रियश्चपलः ।
भौमगुरुशुक्रसौरैरेकस्थैर्जायते कितवः ॥ ३४ ॥

यदि भौम, गुरू, शुक्र, शनि एक साथ हों तो जातक तेजस्वी, धनी, स्त्रैण, साहसी, चपल एवं धूर्त होता है ॥ ३४ ॥

बुध गुरू शुक्र शनि युति का फल

मेधावी [2]श्राद्धरतो [3]रामासक्तो विधेयभृत्यश्च ।
बुधजीवशुक्रसौरैरेकस्थैस्तीव्रसंयोगे ॥ ३५ ॥

यदि बुध, गुरू, शुक्र, शनि एक साथ हों तो जातक मेधावी, श्राद्ध करने में लीन, पाठान्तर से शस्त्र वा शास्त्र में लीन, स्त्री में आसक्त, पाठान्तर से कामी व आज्ञाकारी नौकर वाला होता है ॥ ३५ ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां चतुर्ग्रहयोगः सप्तदशोऽध्यायः ॥

---

[1] रुचिर । [2] शस्त्र, शास्त्र । [3] कामाचारो ।

यदि चन्द्र, भौम, गुरू. शुक्र एक साथ हों तो जातक अशान्त देहधारी, सुन्दर स्त्री वाला, सबको सहन करने वाला, पाठान्तर से कष्ट सहनकर्त्ता, अत्यन्त सम्मान से युक्त, पण्डित व अधिक मित्रों के सुख का भोगने वाला होता है ॥ २४ ॥

चं० भौम गु० शनि युति का फल

बधिरो धनवाञ्छूरः सोन्मादो वाक्पटुः स्थिरप्रकृतिः ।
मतिमानुदारचित्तो भौमेन्दुशनैश्चरसुरेज्यैः ॥ २५ ॥

यदि चन्द्र, भौम, गुरू, शनि एक साथ हों तो जातक बहिरा, धनी' वीर, विक्षिप्त, भाषण में चतुर, स्थिर स्वभाव, बुद्धिमान् व उदार चित्त होता है ॥ २५ ॥

चं० भौम शुक्र शनि युति का फल

कुलटापतिः प्रगल्भः सर्पाक्षो नित्यमेव सोद्वेगः ।
जातः पुरुषोऽवश्यं कुजेन्दुयमभार्गवैर्भवति ॥ २६ ॥

यदि चन्द्र, भौम, शुक्र, शनि एक साथ हों तो जातक व्यभिचारिणी स्त्री का स्वामी, धृष्ट, साँप के समान नेत्र वाला तथा सदा उद्वेग से युक्त होता है ॥ २६ ॥

चं० बु० गु० शुक्र युति का फल

विद्वान्विमातृपितृकः सद्रूपो धनयुतोऽतिसुभगश्च ।
भवति नरो विगतारिर्बुधगुरुशशिभार्गवः सहितः ॥ २७ ॥

यदि चन्द्र, बुध, गुरू, शुक्र एक साथ हों तो जातक पण्डित, माता-पिता से हीन, सुरूप, धनी, अत्यन्त भाग्यवान् एव शत्रु से रहित होता है ॥ २७ ॥

चं० बु० गु० शनि युति का फल

कृतधर्मकीर्तिरग्र्यस्तेजस्वी बन्धुवल्लभो मतिमान् ।
नृपसचिवः प्रवरकविः शशिबुधजीवार्किभिः सहितैः ॥ २८ ॥

यदि चन्द्र, बुध, गुरू, शनि एक साथ हों तो जातक धर्मात्मा, कीर्तिमान्, प्रधान, तेजस्वी, बन्धुप्रिय, बुद्धिमान्, राजा का मन्त्री व उत्तम कवि होता है ॥ २८ ॥

चं० बु० शुक्र शनि युति का फल

परदारगमनशीलो विशीलभार्यो विपन्नबन्धुश्च :
प्राज्ञो लोकद्विष्टः[१] स्यादिन्दुबुधार्किभृगुपुत्रः ॥ २९ ॥

यदि चन्द्र, बुध, शुक्र, शनि एक साथ हों तो जातक परस्त्रीगामी, दुःशीला स्त्री का स्वामी, विपत्ति से युक्त बन्धुवाला, पण्डित व संसार-द्वेषी होता है ॥ २९ ॥

चं० गु० शु० शनि युति का फल

मात्रा रहितः सुभगस्त्वग्दोषी दुःखितो भ्रमणशीलः ।
बहुभाषी सत्यरतः शशिगुरुभृगुसौरिभिः सहितैः ॥ ३० ॥

---

[१] द्वेष्टा ।

यदि चन्द्र, गुरू, शुक्र, शनि एक साथ हों तो जातक माता से हीन, सुन्दर भाग्यवान्, चर्मरोगी, दुःखी, घूमने वाला, वहुत बोलने वाला व सत्य में लीन होता है ॥ ३० ॥

भौम बुध गुरू शुक्र युति का फल

[1]स्त्रीकलहरुचिर्धनभाक्पूज्यो लोके च शीलसंपन्नः।
भवति पुमान्निरुजतनुर्बुधारगुरुभार्गवैः सहितैः ॥ ३१ ॥

यदि भौम, बुध, गुरू, शुक्र एक साथ हों तो जातक स्त्री से कलह करने में मन रखने वाला, धनो, संसार में सम्मानित, शील-गुण से युत व रोगहीन देहधारी होता है ॥ ३१ ॥

भौम बुध गुरू शनि युति का फल

शूरो विद्वान्वाग्मी धनरहितः सत्यशौचसंपन्नः।
वादी द्वन्द्वसहिष्णुर्मतिमान्सहितैर्बुधारगुरुसौरैः ॥ ३२ ॥

यदि भौम, बुध, गुरु, शनि एक साथ हों तो जातक वीर, पण्डित, वक्ता, निर्धन, सत्य व पवित्रता से युत, बोलने वाला, कष्ट सहनकर्ता व बुद्धिमान् होता है ॥ ३२ ॥

भौम बुध शुक्र शनि युति का फल

स्यान्मल्लः परपुष्टः कठिनाङ्गो युद्धदुर्मदः ख्यातः।
रमते च सारमेयैर्बुधारयमभार्गवैः सहितैः ॥ ३३ ॥

यदि भौम, बुध, शुक्र, शनि एक साथ हों तो जातक योद्धा, दूसरों से पोषित, कठिन शरीरधारी, लड़ने का मद रखने वाला, प्रख्यात, व कुत्तों के साथ रमणकर्ता अर्थात् कुत्तों का पालक होता है ॥ ३३ ॥

भौम गु० शुक्र शनि युति का फल

तेजस्वी वित्तयुतः स्त्रीलोलः साहसप्रियश्चपलः।
भौमगुरुशुक्रसौरैरेकस्थैर्जायते कितवः ॥ ३४ ॥

यदि भौम, गुरू, शुक्र, शनि एक साथ हों तो जातक तेजस्वो, धनी, स्त्रैण, साहसी, चपल एवं धूर्त होता है ॥ ३४ ॥

बुध गुरू शुक्र शनि युति का फल

मेधावी [2]श्राद्धरतो [3]रामासक्तो विधेयभृत्यश्च।
बुधजीवशुक्रसौरैरेकेःथैस्तीव्रसंयोगे ॥ ३५ ॥

यदि बुध, गुरू, शुक्र, शनि एक साथ हों तो जातक मेधावी, श्राद्ध करने में लीन, पाठान्तर से शस्त्र वा शास्त्र में लीन, स्त्री में आसक्त, पाठान्तर से कामी व आज्ञाकारी नौकर वाला होता है ॥ ३५ ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां चतुर्ग्रहयोगः सप्तदशोऽध्यायः ॥

---

[1] रुचिर। [2] शस्त्र, शास्त्र। [3] कामाचारो।

अष्टादशोऽध्यायः ।

सू० चं० भौ० बु० गुरू योग फल

दुःखी बहुप्रपञ्चो जायाविरहेण तापितशरीरः ।
भवति पुमानेकस्थैः रवीन्दुकुजजीवचन्द्रसुतैः ॥ १ ॥

यदि कुण्डली मे सूर्य, चन्द्र, भौम, गुरू एक भवन में हों तो जातक—दुःखी, अधिक प्रपञ्ची व स्त्री के वियोग से तप्त देहधारी होता है ॥१॥

सू० चं० भौ० बु० शुक्र योग फल

परकर्मरतो नित्यं बन्धुसुहृद्भिः[1] कृतो विगतसत्वः ।
क्लीबैर्याति च सख्यं रवीन्दुकुजशुक्रसौम्यैश्च ॥ २ ॥

यदि कुण्डली मे सूर्य, चन्द्र, भौम, बुध, शुक्र, एक भवन में हों तो जातक–नित्य दूसरों के कार्य में लीन, बन्धु व मित्रों के वल से ज्ञान पाठान्तर से बन्धु व मित्रों से निन्दित या दुखी, एवं नपुंसकों से मित्रता करने वाला होता है ॥ २ ॥

सू० चं० भौ० बु० शनि योग फल

अल्पायुर्बन्धनभाग्दीनो भवतीह सर्वसुखहीनः ।
अकलत्रोऽसुतवित्तः सौरदिवाकरबुधेन्दुकुजैः ॥ ३ ॥

यदि कुण्डली में सूर्य, चन्द्र. भौम, बुध, शनि एक भवन में हों तो जातक—लघु आयु वाला, जेली, दीन, समस्त सुख से हीन, एवं स्त्री-पुत्र-धन से रहित होता है ॥३॥

सूर्य चन्द्र भौम गुरू शुक्र योग फल

जात्यन्धो बहुदुःखो मातृपितृभ्यां सदैव सन्त्यक्तः ।
भवति नरो गेयरुचिः कुजेन्दुगुरुभार्गवार्कैश्च ॥ ४ ॥

यदि कुण्डली में सूर्य, चन्द्र, भौम, गुरू, शुक्र एक भवन में हों तो जातक—जन्म से अन्धा, अत्यन्त दुःखी, माता पिता से सदा त्यक्त, अर्थात् माता-पिता के सुख का अभाव, व गान में अभिरुचि करने वाला होता है ॥४॥

सूर्य चन्द्र भौम गुरू शनि योग फल

युद्धकुशलः समर्थः परवित्तहरः परोपतापी च ।
पिशुनश्चलश्च[2] पुरुषः शनिशशिकुजजीवदिवसेशैः ॥ ५ ॥

यदि कुण्डली में सूर्य, चन्द्र, भौम, गुरू, शनि एक भवन में हों तो जातक—युद्ध में निपुण, सामर्थ्यवान्, दूसरों के धन का हरण करने वाला, अन्य लोगों को कष्टदायी व चुगलखोर एवं दुष्टस्वभाव का पाठान्तर से चञ्चल होता है ॥५॥

---

[1] बन्धुसुहृद्धिक्कृतो, बन्धुसुहृद्दुःखितो । [2] पिशुनः खलश्च ।

सूर्य चन्द्र भौम शुक्र शनि योग फल

मानार्थविभवहीनो मलिनाचारः पराङ्गनानिरतः[1] ।
पञ्चभिरेकस्थैः स्याद्दिनेशशशिशुक्रशनिभौमैः ॥ ६ ॥

यदि कुण्डली में सूर्य, चन्द्र, भौम, शुक्र, शनि, एक भवन में हों तो जातक—सम्मान, धन, वैभव से रहित, दुष्ट आचरण कर्ता व दूसरों की स्त्री मे लीन होता है ।६।

सूर्य चन्द्र बुध गुरू शुक्र योग फल

यन्त्रज्ञो बहुविभवो नृपसचिवो दण्डनायको वा स्यात् ।
ख्यातः शुभकीर्तियुतो बुधेन्दुरविजीवशुक्रैश्च ॥ ७ ॥

यदि कुण्डली में सूर्य, चन्द्र, बुध, गुरू, शुक्र एक भवन में हों तो जातक—मशीनरी का ज्ञाता, अधिक धनी, राजा का मन्त्री वा न्यायाधीश, विख्यात व अच्छे यशवाला होता है ॥७॥

सूर्य चन्द्र बुध गुरू शनि योग फल

भीरुः प्रियसन्त्यक्तः सोन्मादो वञ्चनासु निपुणश्च ।
उग्रः परान्नभोजी बुधेन्दुगुरुसूर्यरविपुत्रैः ॥ ८ ॥

यदि कुण्डली में सूर्य, चन्द्र, बुध, गुरू, शनि एक भवन में हों तो जातक—डरपोक, प्रियजनों से त्यक्त, उन्मादी, ठगने में चतुर, तीक्ष्ण, एवं परान्न को खाने वाला होता है ॥८॥

सूर्य चन्द्र बुध शुक्र शनि योग फल

दीर्घो रोमशगात्रो मरणोत्साही सुखार्थसुतहीनः ।
स्यात्पञ्चभिरेकस्थे रविचन्द्रबुधार्किभृगुपुत्रैः ॥ ९ ॥

यदि कुण्डली में सूर्य, चन्द्र, बुध, शुक्र, शनि एक भवन में हों तो जातक—लम्बा, रोम से युत देहधारी, आमरण उत्साही एवं सुख, धन, पुत्र से हीन होता है ॥९॥

सूर्य चन्द्र गुरू शुक्र शनि योगफल

वाग्मीन्द्रजालनिरतश्चलचित्तः स्त्रीषु वल्लभो मतिमान् ।
बहुशत्रुर्विगतभयो रवीन्दुगुरुशुक्रभानुसुतैः ॥ १० ॥

यदि कुण्डली में सूर्य, चन्द्र, गुरू, शुक्र शनि, एक भवन में हों तो जातक—वक्ता, इन्द्रजाल में लीन, अस्थिर चित्त, स्त्री का प्यारा, बुद्धिमान्, अधिकशत्रुवाला, एवं निर्भय होता है ॥१०॥

सूर्य भौम बुध गुरू शुक्र योग फल

कामी बहुतुरगनरः [2]स्वीकृतसेनापतिर्विगतशोकः ।
राजप्रियोऽतिसुभगो बुधाररविजीवशुक्रैः स्यात् ॥ ११ ॥

---

[1] भिरतः । [2] स्फातः सेनापतिः ।

यदि कुण्डली में सूर्य, भौम, बुध, गुरू, शुक्र एक भवन में हों तो जातक —कामी, बहुत घोड़े वाला, माना हुआ सेनाध्यक्ष वा पाठान्तर से उत्तरोत्तर वृद्धिकर्ता, शोकरहित, राजा का प्रियपात्र एवं अत्यन्त सौभाग्यवान् होता है ।।११।।

सूर्य मंगल बुध गुरू शनि योग फल

नित्योद्विग्नो रोगी भिक्षां भुङ्क्ते गृहाद्गृहं गत्वा ।
जीर्णमलीमसवासा रविकुजबुधजीवरविपुत्रैः ॥ १२ ॥

यदि कुण्डली में सूर्य, भौम, बुध, गुरू, शनि एक भवन में हों तो जातक—सदा चिन्तित, रोगी, घर-घर भिक्षा माँगकर खाने वाला एवं पुराना व मलिन (मैला) वस्त्रधारी होता है ।।१२।।

चन्द्र मंगल, बुध शुक्र शनि योग फल

वधबन्धनरोगार्तो विद्वाँल्लोके सुपूजितो भवति ।
निःस्वो विकलशरीरः कुजशशिबुधशुक्रमन्दैः स्यात् ॥ १३ ॥

यदि कुण्डली में चन्द्र, भौम, बुध, शुक्र, शनि एक भवन में हों तो जातक—मरण, बन्धन, रोग से पीडित, विद्वान्, संसार में सम्मान, निर्धन, व विकल देहधारी होता है ।।१३।।

सूर्य मंगल बुध शुक्र शनि योग फल

व्याधिभिररिभिर्ग्रस्तः स्थानभ्रष्टोऽतिदुःखसन्तप्तः ।
भ्रमति क्षुभितः पुरुषः कुजार्किरविशुक्रशशितनयैः ॥ १४ ॥

यदि कुण्डली में सूर्य, भौम, बुध, शुक्र, शनि एक भवन में हों तो जातक—रोग व शत्रु से पीडित, स्थान से हीन, अधिक दुःख से तप्त एवं क्षोभ युत होकर भ्रमणकर्ता होता है ।।१४।।

चन्द्र भौम गुरू शुक्र शनि योग फल

प्रेष्यो मूर्खः क्लीबो मलिनाचारोऽतिदुर्भगो विकलः ।
भवति नरो धनरहितः शशिकुजगुरुशुक्ररवितनयः ॥ १५ ॥

यदि कुण्डली में चन्द्र, भौम, गुरू, शुक्र, शनि एक भवन में हों तो जातक—सेवक, मूर्ख, नपुंसक, नीच आचरण कर्त्ता, अतिदुर्भाग्य युक्त, अशान्त एवं निर्धन होता है ।।१५।।

सूर्य भौम गुरू शुक्र शनि योग फल

जलयन्त्रधातुपारदरसायनेष्वतिपटुः पुमान भवति ।
एभिः प्रसिद्धकर्मा क्षितिसुतरविजीवसितसौरैः ॥ १६ ॥

यदि कुण्डली में सूर्य, भौम, गुरू, शुक्र, शनि, एक भवन में हों तो जातक—जल, यन्त्र, धातु, पारा आदि रसायन क्रिया में अधिक चतुर एवं इन्हीं कार्यों (रसायनादि) से प्रसिद्ध होता है ।।१६।।

सूर्य बुध गुरू शुक्र शनि योग फल

बहुशास्त्रज्ञानपटुर्मित्रहितः संमतो गुरूणां च ।
धर्मपरः कारुणिकः सूर्यासितशुक्रबुधजीवैः ॥ १७ ॥

यदि कुण्डली में सूर्य, बुध, गुरू, शुक्र, शनि एक भवन में हों तो जातक—अधिक शास्त्र जानने में चतुर, मित्रों का शुभ कर्ता, गुरुओं का प्रिय, धर्मात्मा एवं दया करने वाला होता है ॥१७॥

चन्द्र भौम बुध गुरू शुक्र योग फल

साधुः कल्यशरीरो विद्याधनसत्यसौख्यसम्पन्नः ।
बन्धुहितो बहुमित्रो बुधेन्दुकुजजीवभृगुपुत्रैः ॥ १८ ॥

यदि कुण्डली में चन्द्र, भौम, बुध, गुरू, शुक्र, एक भवन में हों तो जातक—सज्जन, रोग रहित, विद्या-धन-सत्य-सुख से युक्त, बान्धवों का प्रिय व अधिक मित्र वाला होता है ॥१८॥

चन्द्र भौम बुध गुरू शनि योग फल

तिमिरामयी दरिद्रः परान्नमभियाचते सदा दीनः ।
मलिनयति बन्धुवर्गं कुजार्किबुधजीवहिमकिरणैः ॥ १९. ॥

यदि कुण्डली में चन्द्र, भौम, बुध, गुरू, शनि एक भवन में हों तो जातक—नेत्र रोगी अर्थात् रतौंधी रोग वाला, दरिद्री, दीन, सदा परान्न को माँगने वाला व बान्धवों को दूषित करने वाला होता है ॥१९॥

चन्द्र भौम बुध शुक्र शनि योग फल

बहुशत्रुमित्रपक्षः परार्थहितकृद्विषमशीलः ।
एकस्थैरतिमानी बुधेन्दुकुजशुक्ररविपुत्रैः ॥ २० ॥

यदि कुण्डली में चन्द्र, भौम, बुध, शुक्र, शनि एक भवन में हों तो जातक—अधिक शत्रु व मित्रों से युक्त, परोपकारी, विपरीत स्वभाव वाला एवं अधिक अहंकारी होता है ॥२०॥

चं० बु० गु० शु० शनि योग फल

नृपमन्त्री नृपतिसमो गणनाथः सर्वलोकपूज्यश्च ।
एकर्क्षे भवति नरश्चन्द्रेन्दुजजीवशनिशुक्रैः ॥ २१ ॥

यदि कुण्डली में चन्द्र, बुध, गुरू, शुक्र, शनि एक भवन में हों तो जातक—राज्य सचिव या राजा के समान, समुदाय का स्वामी, एवं सर्वमान्य होता है ॥ २१ ॥

भौ० बु० गु० शु० शनि योग फल

सुमनस्कः सोन्मादो राज्ञामतिवल्लभो विगतशोकः ।
निद्रातुरो दरिद्रः कुजगुरुबुधशुक्ररविपुत्रः ॥ २२ ॥

यदि कुण्डली में भौम, बुध, गुरू, शुक्र, शनि एक भवन में हों तो जातक—सुन्दर मन (चित) वाला, उन्मादी, राजा का प्रिय पात्र, शोक से रहित, निद्रालु एवं निर्धन होता है ॥ २२ ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां पञ्चग्रहयोगो नामाष्टादशोऽध्यायः ॥

एकोनविंशोऽध्यायः

एकराशिस्थ सू० चं० भौ० बु० गु० शुक्र का फल

विद्याधनधर्मरतः ज्ञानी बहुभाषको [1]विकृष्टमतिः ।
एकभवनोपयातैर्बुधेन्दुरव्यारगुरुशुक्रैः ॥ १ ॥

यदि जन्माङ्ग में सूर्य, चन्द्र, भौम, बुध, गुरु, शुक्र एक स्थान में हों तो जातक—विद्या-वित्त-धर्म में लीन, कृश देहधारी, अधिक भाषी, एवं विशिष्ट बुद्धिमान् होता है ॥ १ ॥

एक राशिस्थ सू० चं० भौ० बु० गु० शनि का फल

दाता परकार्यकरश्चलस्वभावो विशुद्धसत्त्वश्च ।
रमते विजनोद्देशे रवीन्दुवक्रज्ञगुरुरविजैः ॥ २ ॥

यदि जन्माङ्ग में सूर्य, चन्द्र, भौम, बुध, गुरु, शनि एक स्थान में हों तो जातक—दानी, परोपकारी, अस्थिर स्वभाव वाला, सतो गुणी, एवं निर्जन स्थान में रमण करने वाला होता है ॥ २ ॥

एक राशिस्थ सू० चं० भौ० बु० शु० शनि का फल

चोरः परदाररतः कुष्ठी स्वजनैर्निराकृतो मूर्खः ।
स्थानभ्रष्टो विसुतो बुधेन्दुरव्यारशनिशुक्रैः ॥ ३ ॥

यदि जन्माङ्ग में सू० च० भौ० बु० शु० शनि एक स्थान में हों तो जातक—चोर, परस्त्रीगामी, कोढ़ी, अपने मनुष्यों से निरादर, मूर्ख, स्थान से च्युत, एवं पुत्र हीन होता है ॥ ३ ॥

एक राशिस्थ सू० चं० भौ० गु० शु० शनि का फल

नीच परकर्मरतः[2]क्षयरोगी [3]श्वासकासपरिभूतः ।
निन्द्यः स्याद्बन्धूनां सितेन्दुरव्यारगुरुरविजैः ॥ ४ ॥

यदि जन्माङ्ग में सू० चं० भौ० गु० शु० शनि एक स्थान में हों तो जातक—दुष्ट, दूसरों के कार्य में लीन वा करने वाला, क्षय-रोगी (टी० बी० का रोगी), श्वास व खांसी से पीड़ित देह व बन्धुओं में निन्दित होता है ॥ ४ ॥

एक राशिस्थ सू० चं० बु० गु० शु० शनि का फल

मन्त्री नृपस्य सुभगः क्षान्तियुतो भवति शोकपरितप्तः ।
अकलत्रो धनरहितो रवीन्दुबुधजीवसितसौरैः ॥ ५ ॥

यदि जन्माङ्ग में सू० च० गु० बु० शु० शनि एक साथ हों तो जातक—राजा का मन्त्री, सौभाग्यवान्, क्षमा से युक्त, शोक से पीड़ित, एवं स्त्री व धन से रहित होता है ॥५॥

---

१. विशिष्ट । २. कर्मकरः । ३. खास ।

एक राशिस्थ सू० मं० बु० गु० शु० शनि का फल

तीर्थेषु सदा रमते पुत्रैर्नित्यं धनेन रहितश्च ।
वनपर्वतोपसेवी बुधाररविजीवशनिशुक्रैः ॥ ६ ॥

यदि जन्माङ्ग में सू० मं० बु० गु० शु० शनि एक साथ हों तो जातक —तीर्थ में सदा रमण करने वाला, धन व पुत्र से हीन, वन व पर्वत का सेवन करने वाला होता है ॥ ६ ॥

एक राशिस्थ चं० मं० बु० गु० शु० शनि का फल

नित्यं शुचिः प्रतापी बहुयुवतिरतो नृपप्रियो मन्त्री ।
धनसुतसौभाग्ययुतः कुजार्किसितचन्द्रबुधजीवैः ॥ ७ ॥

यदि जन्माङ्ग में चं० मं० बु० गु० शु० शनि एक साथ हों तो जातक—सदा पवित्र, प्रतापी, अधिक स्त्रियों में लीन, राजा का प्यारा, राज्य मन्त्री, धन-पुत्र व सौभाग्य से युत होता है ॥ ७ ॥

एकत्रित पांच या छ ग्रहों का कन्दल के मत में फल

प्रायो दरिद्रदुःखी मूर्खः षट्पञ्चसंयुतैर्विहगैः ।
अन्योन्यदर्शनादपि फलमेतत्कन्दलाः प्राहुः ॥ ८ ॥

यदि जन्माङ्ग में पांच या छ ग्रहों का योग हो तो जातक विशेष कर दरिद्री, दुःखी व मूर्ख होता है। जिस प्रकार ग्रहों की युति होने पर फल कथन किया है उसी प्रकार परस्पर दृष्टि होने पर भी कन्दलाचार्यों के मत में फल होता है ॥ ८ ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां षट्ग्रहयोगो नामैकोनविशोऽध्यायः ॥

विंशोऽध्यायः

सन्यास योगों का वर्णन

योगा विभक्ताश्चतुरादिसंस्थैर्व्यासाद्ग्रहैः कैरपि तापसानाम् ।
जन्मादि[1] तेषामपरैर्मुनीन्द्रैः संवेदितं तत्कथयाम्यशेषात् ॥ १ ॥

यदि जन्म के समय चार या पाँच वा ६ या सात ग्रह एक राशि में हों तो कितने मुनियों ने तापस (संन्यासी) योग के भेद विस्तारपूर्वक कहे हैं। जिन योगों में संन्यासियों वा तपस्वियों के जन्म होते हैं, उन सब योगों को मैं ग्रन्थकार कहता हूँ ॥ १ ॥

बृ० जा० में कहा है 'एकस्थैश्चतुरादिभिर्बलयुतैः ..' (१५ अ० १ श्लोक) ॥१॥ एवं लघुजातक में भी — 'चतुरादिभिरेकस्थैः प्रव्रज्यां स्वां ग्रहः करोति बली' ॥ १ ॥

---

[1] जन्माहंतेषां ।

तपस्वी योग ज्ञान

सूर्येन्दुशुक्रार्यमहीसुतेषु सूर्येन्दुसोमात्मजभूमिजेषु ।
एकस्थितेषु प्रभवेत्तपस्वी भान्वारमन्दज्ञसितेषु चैव ॥ २ ॥

यदि कुण्डली में सू० चं० भौ० गु० शु० वा सू० चं० बु० भौ० यद्वा सू० मं० श० बु० शु० एक राशि में हों तो जातक तपस्वी होता है ॥ २ ॥

प्रव्राजक योग ज्ञान

कुजेन्दुसूर्यज्ञपुरोहितश्च तीक्ष्णांशुचन्द्रार्किशशाङ्कजैश्च ।
सूर्येन्दुभूपुत्रशनैश्चरैः स्यादेकर्क्षगैः प्रव्रजितो मनुष्यः ॥ ३ ॥

यदि कुंडली में मं० चं० सू० बु० गु०, वा सू० चं० श० बु०, अथवा सू० चं० मं० शनि एक राशि में हों तो जातक प्रव्राजक (संन्यासी) होता है ॥ ३ ॥

पुनः तपस्वी योग ज्ञान

आदित्यगुर्वार्किशशाङ्कपुत्रा भौमार्कचन्द्रात्मजसूरयश्च[1] ।
एकर्क्षसंस्थास्तपसि स्थितानां कुर्वन्ति जन्मप्रसवे ग्रहेन्द्राः ॥ ४ ॥
सितार्कभौमार्कसुता महाबलाः सुरेज्यभूपुत्रकसूर्य[2] सौरयः[3] ।
कुजेन्दुवागीशशनैश्चरा इमे समं गता वै जनयन्ति तापसम् ॥ ५ ॥

यदि कुंडली में सू० गु० श० बु०, यद्वा मं० सू० बु० गु० (श०), वा शु० सू० मं० श० वा गु० मं० सू० श० यद्वा मं० चं० गु० शनि एक राशि में बली होकर स्थित हों तो जातक तपस्वी होता है ॥ ४-५ ॥

व्रती योग ज्ञान

कुजार्किसोमात्मजदेववन्दितैः कुजार्किचन्द्रात्मजसूर्यभार्गवैः ।
रवीन्दुभौमासितदानवप्रियैर्भवन्ति सूता व्रतसंयुता नराः ॥ ६ ॥

यदि कुंडली में मं० श० बु० गु०, यद्वा मं० श० बु० सू० शु० अथवा सू० चं० मं० श० शु० एक राशि में हों तो जातक व्रती होता है ॥ ६ ॥

वनपर्वतस्थ तपस्वी योग ज्ञान

सितारसूर्यात्मजजीवभास्करैः कुजेन्दुदेवेज्यबुधार्कनन्दनैः ।
सितेन्दुपुत्रार्किशशाङ्कभूमिजैर्भवेत्तपस्वी वनपर्वताश्रयः ॥ ७ ॥

यदि कुण्डली में शु० मं० श० गु० सू०, वा मं० चं० गु० बु० श० वा शु० बु० श० चं० मं० एक राशि में हों तो जातक वन व पर्वत पर वास करने वाला तपस्वी होता है ॥ ७ ॥

अन्नत्यागी मुनि योग ज्ञान

चन्द्रेदुन्पुत्रारसुरेज्यभास्करैः शशाङ्कसूर्येन्दुजशुक्रभूमिजैः ।
स्थितैरमीभिः सहितैर्नृसम्भवा भवन्ति वन्द्या मुनयोऽन्नदूषकाः ॥८॥

---

१. सौरयश्च । २. सौर । ३. सूर ।

यदि कुण्डली में चं० बु० मं० गु० सू०, वा चं० सू० बु० गु० मं० एक राशि में हों तो जातक वन्दनीय अन्नत्यागी मुनि होता है ॥ ८ ॥

विशेष — सं० वि० वि० की पु० में चतुर्थ चरण में 'विद्यामुनयो दृढव्रताः' यह पाठ है ॥ ८ ॥

व्रती योग ज्ञान

रवीन्दुभौमेन्दुजजीवभार्गवैः शशाङ्कभौमार्किबुधेज्यभास्करैः ।
कुजेन्दुसूर्यार्किसितेन्दुसम्भवैर्भवद्मीभिः सहितैर्नरो व्रती ॥ ९ ॥

यदि कुण्डली में सू० चं० मं० बु० गु० शु० वा चं० मं० श० बु० गु० सू०, यद्वा मं० चं० सू० श० शु० बु० एक राशि में हों तो जातक व्रती होता है ॥ ६ ॥

यशस्वी मुनि योग ज्ञान

सितेन्दुजीवार्कजसूर्यलोहितैः सितार्कभौमार्किशशाङ्कसौमजैः ।
एकत्र यातैर्गगनेचरैः सदा भवन्ति जाता मुनयो यशस्विनः ॥१०॥

यदि कुण्डली में शु० चं० गु० श० सू० मं०, वा शु० सू० मं० श० चं० बु० एक राशि में हों तो जातक यशस्वी मुनि होता है ॥ १० ॥

तपस्वी योग ज्ञान

कुजज्ञवागीशसितार्किभास्करैः सितार्किजीवेन्दुजचन्द्रभूमिजैः ।
वलप्रधानैः सहितैर्विहङ्गमैर्व्रजेत्प्रजातः पुरुषस्तपस्विताम् ॥ ११ ॥

यदि कुण्डली में मं० बु० गु० शु० श० सू०, वा शु.० श० गु० बु० चं० मं०, एक राशि में बली होकर स्थित हों तो जातक तपस्वी होता है ॥ ११ ॥

फल-मूल-भक्षक तपस्वी योग ज्ञान

रवीन्दुवागीशशनैश्चरैश्च शनैश्चरेन्द्वर्कसितैरवश्यम् ।
रवीन्दुपुत्रक्षितिजेन्द्रपूज्यैस्तपस्विनः स्युः फलमूलभक्षिणः ॥ १२ ॥

यदि कुण्डली में सू० चं० गु० श० यद्वा श० चं० सू० शु०, वा सू० बु० मं० गु० एक राशि में स्थित हों तो जातक फल-मूल भक्षण कर्त्ता तपस्वी होता है ॥ १२ ॥

वल्कल चीरधारी व्रती योग ज्ञान

वक्रार्कसोमात्मजदानवेज्या भौमेन्दुवागीशशशाङ्कपुत्राः ।
एकर्क्षगा जन्मनि यस्य जन्तोर्भवेद्व्रती वल्कलचीरधारी ॥ १३ ॥

यदि कुण्डली में मं० सू० बु० शु०, वा मं० चं० गु० बु० एक राशि में हों तो जातक वृक्षों को छाल के वस्त्र धारण करने वाला व्रती होता है ॥ १३ ॥

शान्त तपस्वी योग ज्ञान

शशीन्दुपुत्रक्षितिजार्कपुत्रा वुधक्ष्मापुत्रसुरेड्यसौराः ।
एकर्क्षगा जन्मनि यस्य सूतौ कुर्वन्ति तं तापसमेव शान्तम् ॥१४॥

यदि कुण्डली में चंद्र बुध मंगल शनि वा बुध मंगल गुरू शनि, एक राशि में हों तो जातक शान्ति प्रिय तपस्वी होता है ॥ १४ ॥

फल भक्षक यती योग ज्ञान

चन्द्रार्कभार्गवशशाङ्कसुता बलस्था
भौमेन्दुपुत्रसितभास्करनन्दनाश्च ।
मन्देन्दुवाक्पतिसिता नियतं यतीनां
कुर्वन्ति जन्म फलपाककृताशनानाम् ॥ १५ ॥

यदि कुण्डली में चं० सू० शु० बु०, वा मं० बु० शु० श०, यद्वा श० चं० गु० शु० एक राशि में बली होकर स्थित हों तो जातक फलभक्षण कर्ता मुनि होता है ॥ १५ ॥

पर्वत वनवासी तपस्वी योग ज्ञान

रविकुजशशिशुक्रैश्चन्द्रभौमज्ञसूर्यै-
र्गुरुसितरविमन्दैः शुक्रजीवेन्दुवक्रैः ।
कुजबुधसितचन्द्रैरेभिरेकर्क्षयातै-
र्भवति गिरिवनौकास्तापसः सर्ववन्द्यः ॥ १६ ॥

यदि कुण्डली में सू० मं० चं० शु०, वा चं० मं० बु० सू०, वा गु० शु० सू० श०, वा शु० गु० चं० मं०, वा मं० बु० शु० चं० एक राशि में हों तो जातक पर्वत वन में वास करने वाला सबसे वन्दनीय तपस्वी होता है, अर्थात् समस्त जन इसको नमन करते हैं ॥ १६ ॥

दुःखी मुनि योग ज्ञान

सितशशिकुजगुरुमन्दैश्चन्द्रेन्दुजभौमदेवगुरुशुक्रैः ।
रविशशिकुजबुधजीवैर्भवति यतिर्दुःखितो दीनः ॥ १७ ॥

यदि कुण्डली में शु० चं० मं० गु० श०, वा चं० बु० मं० गु० शु०, वा सू० चं० मं० बु० गुe एक राशि में हों तो जातक तपस्वी दीन व दुःखी होता है ॥ १७ ॥

जटाधारी वल्कलवस्त्रधारी मुनि योग ज्ञान

कुजार्किदेवेड्यसितेन्दुपुत्रैः शनीनसोमात्मजचन्द्रभौमैः ।
समं गतै. स्युः सबलैर्यथोक्तैर्जटाधरा वल्कलधारिणश्च ॥ १८ ॥

यदि कुण्डली में मं० श० गु० शु० बु०, वा श० सू० बु० चं० मं० बलवान् होकर एक राशि में हों तो जातक-जटाधारण करने वाला व वृक्ष की छाल के वस्त्र धारण करने वाला होता है ॥ १८ ॥

तपस्वी योग ज्ञान

भान्विन्दुजेन्दुकुजजीवसुरारिपूज्यैः
सूर्येन्दुभौमगुरुशुक्रशनैश्चरैश्च ।
प्राप्नोत्यवश्यमिह तापसरूपमेभि-
रेकर्क्षगैर्गगनवासिभिरेव जातः ॥ १९ ॥

यदि कुण्डली में सू० बु० चं० मं० गु० शु०, वा सू० चं० मं० गु० शु० श० एक राशि में हों तो जातक अवश्य ही संन्यासी होता है ॥ १९ ॥

नोट—इन दोनों योगों का वर्णन इसी अध्याय के नवें व दशवे श्लोक में हो चुका है ॥१९॥

प्रव्रज्याभङ्ग योग ज्ञान

प्रव्रज्येशे दिनकरगते [1]भुक्तिमन्तोऽतिशक्ताः
प्रव्रज्यायाः सुबलसहितैः स्थैर्यमाहुर्महेन्द्रैः ।
सम्पूर्णानां [2]वशमनुगतैः [3]प्रच्युतैस्तैर्बहु स्वे
वीर्योपेतैर्भवति बहुभिः सद्बलस्यानुपूर्व्यात ॥ २० ॥

यदि प्रव्रज्या का स्वामी अर्थात् प्रव्रज्या कारक ग्रह सूर्य के साथ में हो तो सन्यास में जातक की आसक्ति व श्रद्धा रहती है। यदि प्रव्रज्या कारक ग्रह बली हो तो प्रव्रज्या की स्थिरता होती है। कारक ग्रह समस्त ग्रहों से पराजित हो तो संन्यास ग्रहण करके भी उसका त्याग जातक करता है। यदि अधिक ग्रह प्रव्रज्या कारक हों तो बहुत प्रकार की प्रव्रज्या होती है किन्तु वे प्रव्रज्या ग्रहों के बलानुसार होती हैं ॥ २० ॥

नोट—कालांश द्वारा ही दृश्यादृश्य का निर्णय करना चाहिये यहाँ यह शङ्का होती है कि जातक इन योगों में उत्पन्न होकर कब किस समय प्रव्रज्या ग्रहण करेगा उत्तर कारक ग्रह अर्थात् संन्यास दाता ग्रह चार वश बलवान् होने पर व उस ग्रह की अन्तर्दशा प्राप्त होने पर जातक संन्यास ग्रहण करता है ग्रन्थान्तर में कहा है—'दीक्षादानसमर्थो यो भवति तदा बलेन संयुक्तः। तस्यैव दशाकाले दीक्षां लभते नरोऽवश्यम्' ॥ २० ॥

पुनः प्रव्रज्या भङ्ग योग ज्ञान

प्रव्रज्यायाः स्वामी रविमुषिततनु[4]र्निरीक्षितो वाऽन्यैः ।
याचितदीक्षा भवति च यवनाधिपतेर्यथा वाक्यम ॥ २१ ॥

यदि प्रव्रज्या कारक ग्रह सूर्य के साथ अस्त हो, अथवा अन्य ग्रहों से दृष्ट हो तो जातक दीक्षा अर्थात् संन्यास की याचना करता है, केवल घर में रहकर कहता है कि मैं संन्यासी हो जाऊँगा किन्तु संन्यास नहीं लेता ऐसा यवनाचार्यों ने कहा है ॥ २१ ॥

बृ० जा० में कहा है—'रविलुप्तकरैरदीक्षिता बलभिस्तद्गतभक्तयो नरा। अभियाचितमात्रदीक्षिताः निहतैरन्यनिरीक्षितैरपि' (१५ अ० २ श्लो०) ॥ २१ ॥

एकस्थ चार आदि ग्रहों के विना प्रव्रज्या योग ज्ञान

शशी दृकाणे रविजस्य संस्थितः [5]कुजार्किदृष्टः प्रकरोति तापसम ।
कुजांशके वा रविजेन दृष्टो नवांशतुल्यं कथयन्ति [6]तत्पुनः ॥२२॥

यदि जन्माङ्ग में चन्द्रमा शनि के द्रेष्काण में भौम शनि से दृष्ट हो तो एक योग, यदि चन्द्रमा मङ्गल के नवांश में शनि से दृष्ट हो तो दूसरा योग, इन दोनों में उत्पन्न जातक तपस्वी होता है, तथा नवांश स्वामी की प्रव्रज्या ग्रहण करता है ॥ २२ ॥

बृ० जा० में कहा है—'दीक्षां प्राप्नोत्यार्किदृक्काणसंस्थे भौमार्क्यंशे सौरदृष्टे च चन्द्रे' (१५ अ० ३ श्लो०) ॥ २२ ॥

---

१ दिनकरगतैर्भक्तिमन्तो न शक्ताः । २ वधमुपगतैः । ३ प्रच्युतिस्तै ।
४ रुचि । ५ कुजार्क । ६. तं पुनः ।

प्रकारान्तर से प्रव्रज्या योग ज्ञान

जन्माधिपः सूर्यसुतेन दृष्टः शेषैरदृष्टः पुरुषस्य सूतौ।
आत्मीयदीक्षां कुरुते ह्यवश्यं पूर्वोक्तमत्रापि विचारणीयम्॥ २३॥

यदि जन्माङ्ग में जन्माधिप अर्थात् [जन्म के समय चन्द्रमा जिस राशि में हो उस राशि का स्वामी जन्माधिप होता है।] जन्म राशीश शनि से दृष्ट हो तथा अन्य ग्रहों से अदृष्ट हो तो जन्म राशीश अपनी प्रव्रज्या करता है, किन्तु यहाँ अर्थात् इस योग में भी पूर्वोक्त अस्तत्व व सबलत्व का विचार करना चाहिये॥ २३॥

वृ० जा० में कहा है—पश्यत्यार्किर्जन्मपं वा बलोनम्' (१५ अ० ३ श्लो) ॥ २३॥

भाग्यहीन प्रव्रज्या योग ज्ञान

जन्मपतिर्विकलाङ्गः पश्यति सौरिं चतुष्टये प्रबलम्।
यस्य स भाग्यविहीनः प्रव्रज्यां प्राप्नुयात् पुरुषः॥ २४॥

यदि जन्माङ्ग में जन्मराशीश विकल अङ्ग निर्बल होकर वा पाठान्तर से विपुल (बली) अङ्ग होकर, बली केन्द्रस्थ शनि को देखता हो तो जातक भाग्य से रहित होकर सन्यासी होता है॥ २४॥

वृ० जा० में कहा है—'जन्मेशोन्यैर्यद्यदृष्टोऽर्कपुत्रम्' (१५ अ० ३ श्लो) ॥ २४॥

दुःखी संन्यासी योग ज्ञान

गुरुहिमगुरवीनामेक एवोदयस्थो
गगनतलगतो वा रिःफगश्चाल्पमूर्तिः।
अविकलबलभाजा सूर्यपुत्रेण दृष्टो
जनयति खलु जातं तापसं दुःखभाजम्॥ २५॥

यदि कुण्डली में गुरू, चन्द्रमा, सूर्य इन तीनों में से एक भी ग्रह निर्बल होकर लग्न में वा दशम भाव में वा बारहवें भाव में स्थित हो तथा बलवान् शनि से दृष्ट हो तो जातक दुःखी संन्यासी होता है॥ २५॥

नृप संन्यासी योग ज्ञान

कुमुदवनसुबन्धुं सौम्यभागे बलस्थं
वियति गमनशीलान् स्वोच्चभस्थांश्च शेषान्।
यदि दिनकरपुत्रः पश्यति प्राप्तवार्यो
भवति भुवननाथो दीक्षितश्च स्वतन्त्रः॥ २६॥

यदि कुण्डली में बलवान् चन्द्रमा शुभग्रह के नवांश में स्थित होकर दशमभाव में हो तथा अन्य ग्रह उच्चराशि में हों, तथा इनको शनि देखता हो तो जातक राजा होकर भी स्वतन्त्र संन्यासी होता है॥ २७॥

---

१ विपुलाङ्गः।

दुःखित संन्यासी योग ज्ञान

अतिशयबलयुक्तः शीतगुः शुक्लपक्षे
बलविरहितरिक्तं प्रेक्षते लग्ननाथम् ।
यदि भवति तपस्वी दुःखितः शोकतप्तो
धनजनपरिहीनः कृच्छ्रलब्धान्नपानः ॥ २७ ॥

यदि कुण्डली में शुक्लपक्ष का चन्द्रमा पूर्णबली होकर बलहीन लग्न स्वामी को देखता हो तो जातक निर्धन, जन से हीन, शोक से दुःखी होकर संन्यासी होता है, एवं कष्ट से अन्न पानी प्राप्त करता है ॥ २७ ॥

प्रकारान्तर से ज्ञान

सौरिः शुभभागस्थः पश्यति चन्द्रं ग्रहांस्तथैवान्यान् ।
[1]कुम्भांशेषु प्राप्तान् जनयति दीक्षान्वितं पुरुषम् ॥ २८ ॥

यदि कुण्डली में शनि शुभग्रह के नवांश में स्थित होकर चन्द्रमा को व उच्चांश में स्थित अन्य ग्रहों को पाठान्तर से कुम्भ के नवांश में स्थित अन्य ग्रहों को देखता हो तो जातक संन्यासी होता है ॥ २८ ॥

पुनः प्रकारान्तर से

एकर्क्षगतैः सर्वैर्जन्माधिपतिर्निरीक्षितो यस्य ।
दीक्षा तस्यावश्यं भवतीति पुरातनैः कथितम् ॥ २९ ॥

यदि कुण्डली में जन्म राशीश, एकराशिस्थ समस्त ग्रहों से दृष्ट हो तो जातक संन्यासी अवश्य होता है, ऐसा प्राचीनाचार्यों का कथन है ॥ २९ ॥

प्रव्ज्या कारक सूर्य का फल

अग्नीनां परिचारका गिरिनदीतीराश्रमे तापसाः
सूर्याराधनतत्परा गणपतेर्भक्ता उमायाश्च ये ।
गायत्रीं जपतां वने नियमिनां गङ्गाभिषेकार्थिनां
कौमारव्रतमिच्छतामधिपतिस्तेषां सदा भास्करः ॥ ३० ॥

जिनकी कुण्डली में प्रव्रज्या कारक सूर्य हो तो वे जातक—पर्वत वा नदी के तट पर अपने आश्रम में अग्नि का सेवन करने वाले (धूनी रमाकर), सूर्य की उपासना में रत, गणेश व पार्वती के भक्त, वन में गायत्री मन्त्र के जापक, नियम से गङ्गा स्नान करने वाले, व ब्रह्मचर्य धारण करने वाले होते हैं ॥ ३० ॥

---

[1] तुङ्गांशेषु ।

चन्द्रमा का फल

वृद्धश्रावकभस्मधूलिधवलाः शैवव्रते ये स्थिता
बाह्याः पातकितां गता भगवतीभक्ताश्च निःसङ्गिनः।
सिद्धान्ते खलु सोमनाम्नि निरताः कापालिका निष्ठुरा-
स्तेषां नायकतां गतः शशधरः खट्वाङ्गपाणिद्युतिः ॥ ३१ ॥

जिनकी कुण्डली में प्रव्रज्या कारक चन्द्रमा हो तो वे जातक—वृद्ध श्रावक अर्थात् कपाली, भस्म लगाने वाले, महादेव के व्रती, समाज से पृथक् पतित होकर देवी के भक्त, एकान्तवासी सोम सिद्धान्त में लीन, निठुर व कापालिक होते हैं ॥ ३१ ॥

प्रव्रज्याकारक भौम का फल

उपासका बुद्धसमाश्रयं गताः शिखां [1]विना पाण्डरभिक्षवश्च ये।
सुवाससो रक्तपटा जितेन्द्रियाः प्रभुः सदैषां क्षितिजः प्रकीर्तितः ॥३२॥

जिनकी कुण्डली में प्रव्रज्याकारक भौम हो तो वे जातक बौद्ध धर्म के उपासक, शिखा (चोटी) से हीन, श्वेताम्बरधारी भिक्षु, सुवस्त्र धारणकर्ता, लाल वस्त्रधारी, जितेन्द्रिय होते हैं ॥ ३२ ॥

प्रव्रज्याकारक बुध का फल

आजीविनां कुहकिनां समयाधिका ये[2]
ये दीक्षितास्तनुभृतः खलु गारुडे च।
तन्त्रे मयूरपिशिताशनयोश्च युक्ता-
स्तेषां शशाङ्कतनयोऽधिपतिर्निरुक्तः ॥ ३३ ॥

जिनकी कुण्डली में प्रव्रज्याकारक बुध हो तो वे जातक काल के बन्धन में मदारी (बाजीगर) की जीविका वाले, गरुड़ के उपासक, मयूर व राक्षसतन्त्र से युक्त होते हैं ॥ ३३ ॥

प्रव्रज्याकारक गुरु का फल

एकं त्रीनथवा वहन्ति मुनयो दण्डान् कषायाम्बरा
वानप्रस्थमुपागताः फलपयोभक्षाश्च ये भिक्षवः[3]।
गार्हस्थ्येन तु संस्थिता नियमिनः सद्ब्रह्मचर्यं गता-
स्तेषां दण्डपतिः सुरेन्द्रसचिवस्तीर्थेषु ये स्नातकाः ॥ ३४ ॥

---

[1] शिखां गिताः। [2] समयाधिकारे। [3] सद्भिक्षवः।

जिनकी कुण्डली में प्रव्रज्याकारक गुरू हो तो वे जातक एक दण्ड वा तीन दण्डधारी, गेरुआ वस्त्र धारण करने वाले, वानप्रस्थी, फल व दूध खाने वाले भिक्षु, गृहस्थाश्रम में नियम से रहने वाले, ब्रह्मचारी और तीर्थों में स्नान करने वाले होते हैं ॥ ३४ ॥

प्रव्रज्या कारक शुक्र का फल

पाशुपतयज्ञदीक्षाव्रतेषु ये नित्यमेव संयुक्ताः ।
वैष्णवचरकाणामपि तेषां नेता प्रकीर्तितः शुक्रः ॥ ३५ ॥

जिनकी कुण्डली में प्रव्रज्याकारक शुक्र हो तो वे जातक नित्य ही शैव यज्ञ दीक्षा के व्रती वा वैष्णवी दीक्षा प्राप्त कर भ्रमण करने वाले होते हैं ॥ ३५ ॥

प्रव्रज्या कारक शनि का फल

पाषण्डव्रतनिरता दिगम्बरा भिक्षवो ये च ।
तेषामधिपतिरार्किः शावकतरुमूलिनश्च दुस्तपसः ॥ ३६ ॥

जिनकी कुण्डली में प्रव्रज्याकारक शनि हो तो वे जातक मिथ्या दम्भ करने वाले, नग्न, भिक्षु व छोटे वृक्ष के नीचे कठिन तपस्या करने वाले होते हैं ॥ ३६ ॥

उपसंहार

प्रकथितमुनियोगे राजयोगो यदि स्या-
दशुभफलविपाकं सर्वमुन्मूल्य पश्चात् ।
जनयति पृथिवीशं दीक्षितं साधुशीलं
प्रणतनृपशिरोभिः [1]स्पृष्टपादाब्जयुग्मम् ॥ ३७ ॥

इस अध्याय में कथित प्रव्रज्या योग में यदि राजयोग हो तो समस्त अशुभ फल का नाश करके नम्र राजाओं के शिरों से स्पर्श किया है चरण-कमल जिसका ऐसा सुशील राजा होकर भी दीक्षित (संन्यासी) जातक होता है ॥ ३७ ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां प्रव्रज्यायोगो नाम विंशोऽध्यायः ।

एकविंशोऽध्यायः

यवनाद्यैर्विस्तरतः कथिता योगास्तु नाभसा नाम्ना ।
अष्टादशशतगुणितास्तेषां द्वात्रिंशदिह वक्ष्ये ॥ १ ॥

यवनादि आचार्यों ने विस्तार से १८०० प्रकार के नाभस योगों को कहा है । मैं कल्याण वर्मा उन नाभस योगों को यहाँ ३२ प्रकार से कहता हूँ ॥१॥

---

[1] घृष्ट ।

३२ नाभस योगों के नाम

नौच्छत्रकूटकार्मुकशृङ्गाटकवज्रदामनीपाशाः ।
वीणासरोजमुसला वापीहलशरसमुद्रचक्राणि ॥ २ ॥
माला सर्पार्धेन्दू यवकेदारौ गदाविहगयूपाः ।
युगशकटशूलदण्डा रज्जुः शक्तिस्तथा नलो गोलः ॥ ३ ॥
सचराचरस्य जगतो योगैरेभिः प्रकीर्त्यते प्रसवः ।
आश्रयजातान् प्राहुर्मणित्था मुसलरज्जुनलयोगान् ॥ ४ ॥

१ नौ, २ छत्र, ३ कूट, ४ कार्मुक, ५ शृंगाटक, ६ वज्र, ७ दामनी, ८ पाश, ९ वीणा १० सरोज=कमल, ११ मुसल १२ वापी, १३ हल, १४ शर, १५ समुद्र, १६ चक्र, १७ माला, १८ सर्प, १९ अर्धचन्द्र, २० यव, २१ केदार, २२ गदा, २३ विहग, २४ यूप, २५ युग, २६ शकट, २७ शूल, २८ दण्ड, २९ रज्जु, ३० शक्ति, ३१ नल, ३२ गोल ये नाभस योग होते हैं। इन्हीं ३२ योगों में समस्त चराचर का जन्म होता है। इन ३२ में से ११वाँ मुसल, २९वाँ रज्जु, ३१वाँ नल ये ३ योग आश्रय संज्ञक मणित्यादि आचार्यों ने कहे हैं ॥२-४॥

बृ० पा० में कहा है—'रज्जुश्च मुसलश्चैव नलश्चेत्याश्रयास्त्रयः' (३५ अ० ३ श्लोक) ॥२-४॥

विशेष—इसी प्रकार बृहत्पाराशर के ३५ वें अध्याय में, बृहज्जातक के १२वें अध्याय में ये योग उपलब्ध हैं ॥२-४॥

३२ में से ७ योगों की संख्या संज्ञा का ज्ञान

गोलयुगशूलपाशा वीणाकेदारदामनीसंज्ञाः ।
सप्तैते संख्याख्याः पूर्वाचार्यैः समुद्दिष्टाः ॥ ५ ॥

१ गोल, २ युग, ३ शूल, ४ पाश, ५ वीणा, ६ केदार, ७ दामनी ये सात योग की पूर्वाचार्यों ने संख्या संज्ञा की है ॥५॥

बृ० पा० में कहा है—'संख्याख्या वल्लकीदाम-पाश-केदार-शूलकाः । युगो गोलश्च सप्तैते·····' (३५ अ० ६ श्लोक० ॥५॥

दल संज्ञक व आकृति संज्ञक योग ज्ञान

द्वे चार्धयोगसंज्ञे भुजङ्गमाले पराशरेणोक्ते ।
आकृतिजाता विंशतिरपरैः कथिताश्च सावित्रैः[1] ॥ ६ ॥

१ भुजङ्ग=सर्प, २ माला इन दोनों की दल संज्ञा पराशर ऋषि ने की है। अवशिष्ट २० योगों की सावित्राचार्य ने आकृति संज्ञा की है ॥६॥

---

[1] सावित्रे ।

वृ० पा० में कहा है—'मालाख्यः सर्पसंज्ञश्च दलयोगौ प्रकीर्त्तितौ' (३५ अ० ३ श्लोक) ।।६।।

विशेष—अवशिष्ट २० योगों के नाम जिनकी कि आकृति संज्ञा है, वृहत्पाराशर में पराशर ऋषि ने वर्णन निम्न प्रकार से किया है—'गदाख्यः शकटाख्यश्च शृङ्गाटकविहङ्गमौ । हलवज्रयवाश्चैव कमलं वापियूपकौ । शरशक्तिदण्डनौकाकूटच्छत्रधनूंषि च । अर्द्धचन्द्रस्तु चक्रञ्च समुद्रश्चेति विंशतिः' (३५ अ० ४-५ श्लोक) ।।६।।

आश्रय योग का फल

आश्रययोगे जाता अमिश्रिते सौख्यलाभगुणयुक्ताः ।
अन्योन्यमिश्रिताश्चेद्विगतफलाः स्युस्तदा योगाः ।। ७ ।।

जिनका अमिश्रित (अन्य योग से हीन) आश्रय योग में जन्म होता है वे जातक सुख-लाभ-गुण से युक्त होते हैं । यदि आश्रय योग अन्य याग से मिश्रित हो तो आश्रय योगोक्त फल नहीं होता है ।।७।।

आकृति योगों में उत्पन्न का फल

नन्दन्ति स्वैर्भाग्यैर्नृपलब्धधना नृपप्रियाः ख्याताः ।
प्रायेण सौख्ययुक्ताश्चाकृतियोगेषु ये जाताः ।। ८ ।।

जिनका जन्म आकृति योगों में होता है वे जातक—अपने भाग्य से आनन्दित, राजा से धनागमकर्त्ता, राजा के प्रिय, विख्यात व प्रायः सुख से युक्त होते हैं ।। ८ ।।

सङ्ख्यायोग में उत्पन्न का फल

परभाग्यलब्धसौख्या धनभाग्यैरेव [1]जीवितं तेषाम् ।
संख्यासंज्ञे जाता ये पुरुषाः सर्वतो विकलाः ।। ९ ।।

जिनका जन्म सङ्ख्या योगों में होता है वे जातक—दूसरे के भाग्य से सुखी, एवं दूसरे के भाग्य से ही जीवन यापन करने वाले, तथा चारों ओर से अशान्त होते हैं ।।९।।

दल योग में उत्पन्न का फल

क्वचित् स्वभाग्यैः क्वचिदेवमेव क्वचित्पराद्भूपतितं फलं वा[2] ।
क्वचित्सुखं दुःखमतीव कष्टं दलाख्ययोगे[3] पुरुषो लभेत ।। १० ।।

जिनका जन्म दल योगों में होता है वे जातक—कभी अपने भाग्य से कभी ऐसे ही कभी दूसरों के द्वारा भूमि पर फेंके हुए फल को लेकर, कभी सुखी, कभी अत्यन्त कष्ट से दुःखमय जीवन व्यतीत करते हैं ।। १० ।।

विशेष—सं० वि० वि० की मातृका में 'दलाख्य योगे' यह उचित पाठ प्राप्त होने से 'समार्धयोगे' के स्थान पर दिया गया है ।। १० ।।

---

[1] परभाग्यैरेव जीवितास्तेषाम् । [2] च । [3] समार्धयोगे ।

३२ नाभस योगों के नाम

नौच्छत्रकूटकार्मुकशृङ्गाटकवज्रदामनीपाशाः ।
वीणासरोजमुसला वापीहलशरसमुद्रचक्राणि ॥ २ ॥
माला सर्पार्धेन्दू यवकेदारौ गदाविहगयूपाः ।
युगशकटशूलदण्डा रज्जुः शक्तिस्तथा नलो गोलः ॥ ३ ॥
सचराचरस्य जगतो योगैरेभिः प्रकीर्त्यते प्रसवः ।
आश्रयजातान् प्राहुर्मणित्था मुसलरज्जुनलयोगान् ॥ ४ ॥

१ नौ, २ छत्र, ३ कूट, ४ कार्मुक, ५ शृंगाटक, ६ वज्र, ७ दामनी, ८ पाश, ९ वीणा १० सरोज=कमल, ११ मुसल १२ वापी, १३ हल, १४ शर, १५ समुद्र, १६ चक्र, १७ माला, १८ सर्प, १९ अर्धचन्द्र, २० यव, २१ केदार, २२ गदा, २३ विहग, २४ यूप, २५ युग, २६ शकट, २७ शूल, २८ दण्ड, २९ रज्जु, ३० शक्ति, ३१ नल, ३२ गोल ये नाभस योग होते हैं। इन्हीं ३२ योगों में समस्त चराचर का जन्म होता है। इन ३२ में से ११वाँ मुसल, २९वाँ रज्जु, ३१वाँ नल ये ३ योग आश्रय संज्ञक मणित्थादि आचार्यों ने कहे हैं ॥२–४॥

बृ० पा० में कहा है—'रज्जुश्च मुसलश्चैव नलश्चेत्याश्रयास्त्रयः' (३५ अ० ३ श्लोक) ॥२–४॥

विशेष—इसी प्रकार बृहत्पाराशर के ३५ वें अध्याय में, बृहज्जातक के १२वें अध्याय में ये योग उपलब्ध हैं ॥२–४॥

३२ में से ७ योगों की संख्या संज्ञा का ज्ञान

गोलयुगशूलपाशा वीणाकेदारदामनीसंज्ञाः ।
सप्तैते संख्याख्याः पूर्वाचार्यैः समुद्दिष्टाः ॥ ५ ॥

१ गोल, २ युग, ३ शूल, ४ पाश, ५ वीणा, ६ केदार, ७ दामनी ये सात योग की पूर्वाचार्यों ने संख्या संज्ञा की है ॥५॥

बृ० पा० में कहा है—'संख्याख्या वल्लकीदाम-पाश-केदार-शूलकाः । युगो गोलश्च सप्तैते····' (३५ अ० ६ श्लोक० ॥५॥

दल संज्ञक व आकृति संज्ञक योग ज्ञान

द्वे चार्धयोगसंज्ञे भुजङ्गमाले पराशरेणोक्ते ।
आकृतिजाता विंशतिरपरैः कथिताश्च सावित्रैः[1] ॥ ६ ॥

१ भुजङ्ग=सर्प, २ माला इन दोनों की दल संज्ञा पराशर ऋषि ने की है। अवशिष्ट २० योगों की सावित्राचार्य ने आकृति संज्ञा की है ॥६॥

---

[1] सावित्रे ।

बृ० पा० में कहा है—'मालाख्यः सर्पसंज्ञश्च दलयोगौ प्रकीर्त्तितौ' (३५ अ० ३ श्लोक) ॥६॥

विशेष—अवशिष्ट २० योगों के नाम जिनकी कि आकृति संज्ञा है, वृहत्पाराशर में पराशर ऋषि ने वर्णन निम्न प्रकार से किया है—'गदाख्यः शकटाख्यश्च शृङ्गाटकविहङ्गमौ। हलवज्रयवाश्चैव कमलं वापियूपकौ। शरशक्तिदण्डनौकाकूटच्छत्रधनूंषि च। अर्द्धचन्द्रस्तु चक्रञ्च समुद्रश्चेति विंशतिः' (३५ अ० ४–५ श्लोक) ॥६॥

आश्रय योग का फल

आश्रययोगे जाता अमिश्रिते सौख्यलाभगुणयुक्ताः।
अन्योन्यमिश्रिताश्चेद्विगतफलाः स्युस्तदा योगाः ॥ ७ ॥

जिनका अमिश्रित (अन्य योग से हीन) आश्रय योग में जन्म होता है वे जातक सुख–लाभ–गुण से युक्त होते हैं। यदि आश्रय योग अन्य योग से मिश्रित हो तो आश्रय योगोक्त फल नहीं होता है ॥७॥

आकृति योगों में उत्पन्न का फल

नन्दन्ति स्वैर्भाग्यैर्नृपलब्धधना नृपप्रियाः ख्याताः।
प्रायेण सौख्ययुक्ताश्चाकृतियोगेषु ये जाताः ॥ ८ ॥

जिनका जन्म आकृति योगों में होता है वे जातक—अपने भाग्य से आनन्दित, राजा से धनागमकर्त्ता, राजा के प्रिय, विख्यात व प्रायः सुख से युक्त होते हैं ॥ ८ ॥

सङ्ख्यायोग में उत्पन्न का फल

परभाग्यलब्धसौख्या धनभाग्यैरेव [1]जीवितं तेषाम्।
संख्यासंज्ञे जाता ये पुरुषाः सर्वतो विकलाः ॥ ९ ॥

जिनका जन्म सङ्ख्या योगों में होता है वे जातक—दूसरे के भाग्य से सुखी, एवं दूसरे के भाग्य से ही जीवन यापन करने वाले, तथा चारों ओर से अशान्त होते हैं ॥९॥

दल योग में उत्पन्न का फल

क्वचित् स्वभाग्यैः क्वचिदेवमेव क्वचित्पराद्भूपतितं फलं वा[2]।
क्वचित्सुखं दुःखमतीव कष्टं दलाख्ययोगे[3] पुरुषो लभेत ॥ १० ॥

जिनका जन्म दल योगों में होता है वे जातक—कभी अपने भाग्य से कभी ऐसे ही कभी दूसरों के द्वारा भूमि पर फेंके हुए फल को लेकर, कभी सुखी, कभी अत्यन्त कष्ट से दुःखमय जीवन व्यतीत करते हैं ॥ १० ॥

विशेष—सं० वि० वि० को मातृका में 'दलाख्य योगे' यह उचित पाठ प्राप्त होने से 'समार्धयोगे' के स्थान पर दिया गया है ॥ १० ॥

---

[1] परभाग्यैरेव जीवितास्तेषाम्। [2] च। [3] समार्धयोगे।

नौ कूट छत्र-चाप योगों के लक्षण

होरादिकण्टकेभ्यः सप्तर्क्षगतैः क्रमेण योगाः स्युः ।
नौकूटच्छत्रकार्मुकनिर्देशाः पूर्वयवनेन्द्रैः ॥ ११ ॥

यदि कुण्डली में लग्न से सप्तम पर्यन्त लगातार सात ग्रह हों तो नौका योग, चतुर्थ से दशम पर्यन्त लगातार सात ग्रह हों तो कूट योग, सप्तम से लग्न तक ग्रह होने पर छत्र योग, एवं दशम से चतुर्थ तक लगातार ग्रह हों तो चाप योग होता है ये योग प्राचीन यवनेन्द्रों ने कहे हैं ॥ ११ ॥

बृह० पा० में कहा है 'लग्नात्सप्तमगैर्नौका कूटस्तुर्याच्च सप्तगैः । छत्राख्यः सप्तमादेवं चापं मध्याद् श्च सप्तगैः' (३५ अ० १४ श्लो० ।

बृ० जा० में भी—'नौकूटच्छत्रचापानि तद्वत्सप्तर्क्षसंस्थितैः' ॥ ११ ॥

नौका योग

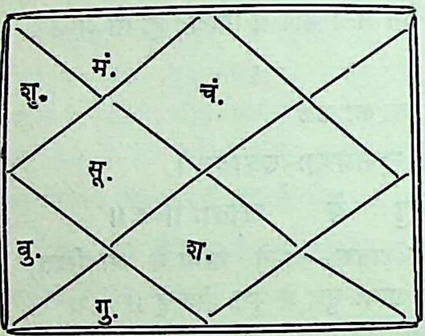

कूट योग

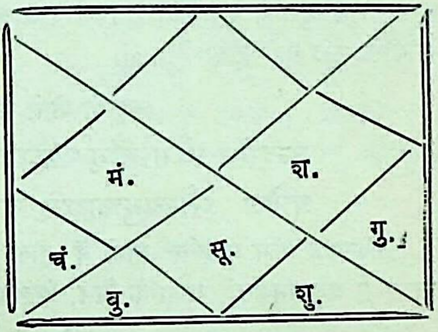

इसी प्रकार छत्र और चाप योग को कथित प्रकार से जानना चाहिये ॥ ११ ॥

यूप-शर-शक्ति-दण्ड योग ज्ञान

लग्नादिकण्टकेभ्यश्चतुर्गृहावस्थितैर्ग्रहैर्योगाः ।
यूपशरशक्तिदण्डाः सत्याचार्यप्रिया नित्यम् ॥ १२ ॥

जिसकी कुण्डली में लग्न से लगातार चतुर्थ पर्यन्त सब ग्रह हों तों यूप योग, चतुर्थ से सप्तम पर्यन्त समस्त ग्रह हों तो शरयोग, सप्तम से दशम तक सब ग्रह हों तो शक्ति योग व दशम से लग्न तक समस्त ग्रह हों तो दण्ड योग होता है। ये नित्य सत्याचार्य के प्रिय हैं ॥ १२ ॥

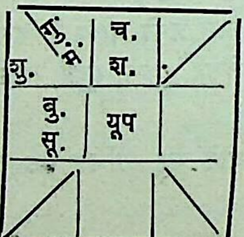

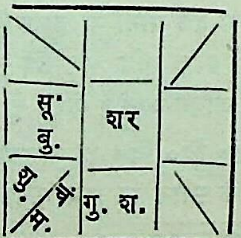

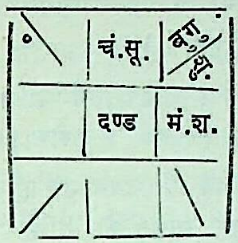

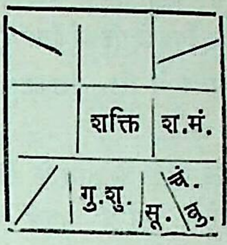

वृ० पा० में कहा है—'यूपो लग्नाच्चतुर्भस्थैः शरस्तुर्याच्चतुर्थगैः । शक्तिर्मदाच्चतुर्भस्थैर्दण्डो मध्याच्चतुर्भगैः' (३५ अ० १३ श्लोक) ।

वृ० जा० में भी कण्टकादिप्रवृत्तैस्तु चतुर्गृहगतैर्ग्रहैः । यूपेषु शक्तिदण्डाख्या होराद्यैः कण्टकैः क्रमात्' ।(१२ अ. ७ श्लो.) ॥ १२ ॥

अर्द्धचन्द्र व गदा योग लक्षण

सप्तर्क्षगैर्ग्रहेन्द्रैः केन्द्रादन्यत्र कीर्तितोऽर्धशशी ।
केन्द्रप्रत्यासन्नैर्भवनद्वयगैर्गदा नाम ॥ १३ ॥

यदि कुण्डली में केन्द्र से भिन्न स्थान से आरम्भ करके सात स्थानों में क्रम से ग्रह होने पर अर्धचन्द्र नामक योग होता है और यह आठ प्रकार का होता है। यथा—द्वितीय से अष्टम पर्यन्त १ भेद, तृतीय से नवम पर्यन्त २ भेद, पञ्चम से लाभ तक ३ भेद, षष्ठ से द्वादश तक ४ भेद, अष्टम से द्वितीय भाव तक ५ भेद, नवम से तृतीय तक ६ भेद, एकादश से पंचम तक ७ भेद, द्वादश से षष्ठ तक ये आठ भेद होते हैं।

यदि समीपस्थ दो-दो केन्द्रों में सब ग्रह हों तो गदा नामक योग होता है। यह योग भी चार प्रकार का होता है—लग्न चतुर्थ में सब ग्रह १ भेद, चतुर्थ व सप्तम में २ भेद, सप्तम व दशम में ३ भेद, दशम व लग्न में सब ग्रह होने पर ४ भेद होता है ॥१३॥

वृ० जा० में कहा है—'अर्धचन्द्रस्तु नावाद्यैः प्रोक्तस्त्वन्यर्क्षसंस्थितः' (१२ अ० ८ श्लोक)। 'असान्नकेन्द्रभवनद्वयगैर्गदाख्यः' (१२ अ० ४ श्लोक) तथा वृ० जा० में भी—'आसन्नकेन्द्रद्वयगैः सर्वैः योगो गदाह्वयः' (३५ अ० ९ श्लोक) ॥ १३ ॥

वज्र व यव योग ज्ञान

लग्नास्तगतैः सौम्यैः पापैः सुखकर्मगैर्भवति वज्रम् ।
विपरीतैर्यवयोगो मिश्रैः पद्मं बहिःस्थितैर्वापी ॥ १४ ॥

यदि कुण्डली में लग्न और सप्तमभाव में सब शुभग्रह हों, तथा चतुर्थ व दशम में सब पाप ग्रह हों तो वज्र योग होता है। यदि लग्न व सप्तम में सब पाप ग्रह हों एवं चतुर्थ व दशम में सब शुभग्रह हों तो यव योग होता है ॥ १४ ॥

वृ० पा० में कहा है—'लग्नजायास्थितैः सौम्यैः पापाख्यैर्खाम्बुसंस्थितैः । योगो वज्राभिधः प्रोक्तः विपरीतस्थितैर्यवः' (३८ अ० ११ श्लोक)।

एवं वृ० जातक में भी—'शकटाण्डजवच्छुभाशुभैर्वज्रं तद्विपरीतगैर्यवः' ।
(१२ अ० ५ श्लोक) ।। १४ ।।

विशेष—इन योगों के ज्ञान के लिए जो प्रमाण दिये हैं उनमें शुभग्रह बुध शुक्र हैं तथा पापग्रह सूर्य है सूर्य से चतुर्थ भाव में बुध शुक्र गणित की युक्ति से हो नहीं सकते, क्योंकि परम शीघ्रांक और मन्दांकों का योग चार राशि से अल्प ही सिद्ध होता है। आचार्य कल्याण वर्मा ने पूर्व शास्त्रानुरोध से ही इन योगों का वर्णन किया है।

आचार्य वराहमिहिर ने भी यही कह कर छुटकारा पाया है। यथा—'पूर्वशास्त्रानुसारेण मया वज्रादयः कृताः। चतुर्थे भवने सूर्याज् ज्ञसितौ भवतः कथमिति। किन्तु पं० सीताराम झा जी ने तो योगों को द्विविध करके अर्थात् लग्न व सप्तम में शुभ ग्रह होने से ही योग का वर्णन एक प्रकार से किया है द्वितीय प्रकार से केवल चतुर्थ व दशम में पाप ग्रह होने पर वज्र योग होता है, इसके विपरीत दो प्रकार से यव योग को भी कहा है। मनीषी पाठक गण झा जी के कथन की युक्ति का अन्वेषण करने की कृपा करें ।। १४ ।।

शकट, विहग, हल व श्रृङ्गाटक योग ज्ञान

होरास्तगतैः शकटं चतुर्थदशमाश्रितैर्भवेद्विहगः ।
उदयान्यगैस्त्रिकोणे हल इति श्रृङ्गाटकं सलग्ने तत् ।। १५ ।।

यदि कुण्डली में लग्न व सप्तम भाव में समस्त ग्रह हों तो शकट योग और चतुर्थ व दशम में सब ग्रह हों तो विहग योग होता है। लग्न को छोड़कर परस्पर त्रिकोण में सम्पूर्ण ग्रह हों तो हल योग होता है। इस हल योग के तीन भेद होते हैं, यथा—द्वितीय, षष्ठ व दशम; इन भावों में समस्त ग्रह हों तो १ भेद, तृतीय, सप्तम, एकादश इन तीनों भावों में समस्त ग्रह हों तो दूसरा भेद, चतुर्थ, अष्टम, द्वादश इन स्थानों में समस्त ग्रह हों तो तीसरा भेद हल योग का होता है। लग्न, पञ्चम. नवम इन स्थानों में सम्पूर्ण ग्रह हों तो श्रृङ्गाटक नाम का योग होता है ।। १५ ।।

वृ० पा० में कहा है—'शकटं लग्नजायास्थैः खाम्बुगैर्विहगः स्मृतः । योगः श्रृंगाटकं नाम लग्नात्मजतपः स्थितैः । अन्यस्थानात् त्रिकोणस्थैः सर्वैर्योगो हलाभिध' (३५ अ० ८-१० श्लोक)

एवं वृ० जा० में भी—'तन्वस्तगेषु शकटं विहगः खन्बध्वोः । श्रृंगाटकं नवमपञ्चमलग्नसंस्थैर्लग्नान्यगैर्हलमिति प्रवदन्ति तज्ज्ञाः' (१२ अ० ४ श्लोक ।।१५।।

चक्र व समुद्र योग ज्ञान

राश्यन्तरितैर्लग्नात् षट्भवनगतैर्भवेच्चक्रम् ।
अर्थात्तथैव यातैश्चक्राकारो भवेज्जलधिः ।। १६ ।।

इत्याकृतिजा एते विंशतिसंख्या मया समुद्दिष्टाः ।
आश्रयजातान् वक्ष्ये यथामतं वृद्धगार्ग्यस्य ॥ १७ ॥

यदि कुण्डली में लग्न से एक राशि का अन्तर करके सब ग्रह हों तो चक्र योग, अर्थात् १।३।५।७।९।११ इन ६ भावों में ही समस्त ग्रह हों तो होता है। द्वितीय भाव से १२ वें भाव तक एक अन्तर से अर्थात् इन २।४।६।८।१०।१२ सम भावों में समस्त ग्रह हों तो समुद्र योग होता हैं।

सारांश—विषम भावों में सब ग्रह होने पर चक्र व सम भावों में समस्त ग्रह होने पर समुद्र योग होता है। इस प्रकार मैंने इन २० आकृति योगों का वर्णन किया है, अब वृद्ध गार्गि के मत से आश्रय योगों का वर्णन करता हूँ ॥ १६-१७ ॥

बृ० पा० में कहा है—'लग्नादेकान्तरस्थैश्च षड्भगैश्चक्रमुच्यते। धनादेकान्तरस्थैश्च समुद्रः षड्गृहाश्रितैः' (३५ अ० १५ श्लोक)।

बृ० जा० में भी—'एकान्तरगतैरर्थात्समुद्रः षड्गृहाश्रितैः। विलग्नादिस्थितैश्चक्रं...' (१२ अ० ९ श्लोक) ॥ कुण्डली में आकृति बनने के कारण हो इन २० योगों को आकृति योग कहा है ॥ १६—१७ ॥

नल, मुसल, रज्जु, माला, सर्प योगों का ज्ञान

उभयस्थिरचरसंस्थैः सर्वैर्नलमुसलरज्जवः क्रमशः ।
केन्द्रेषु सौम्यपापैर्माला सर्पश्च दलयोगौ ॥ १८ ॥

यदि कुण्डली में सम्पूर्ण ग्रह द्विस्वभाव राशि में हों तो नल योग अर्थात् मिथुन, कन्या, धनु, मीन इन राशियों में एक में, या दो में, या तीन में, या चारों में ग्रह हों तो नल योग होता है। इसी प्रकार यदि समस्त ग्रह स्थिर राशियों में हों तो मुसल योग एवं चर राशियों में सम्पूर्ण ग्रह हों तो रज्जु योग होता है। यदि केन्द्र (१।४।७।१०) में सब शुभग्रह हों तो माला योग, सम्पूर्ण पापग्रह केन्द्र में हों तो सर्प योग होता है। माला व सर्प की दल संज्ञा होती है यह पूर्व में वर्णन किया गया है ॥ १८ ॥

बृ० पा० में कहा है—'सर्वैश्चरे स्थितै रज्जुः स्थिरस्थैर्मुसलः स्मृतः। नलाख्यो द्विस्वभावस्थै...' (३५ अ० ७ श्लोक)। 'केन्द्रत्रयगतैः सौम्यैः पापैर्वा दलसंज्ञकौ। क्रमान्मालाभुजङ्गाख्यौ....'(३५ अ० ८ श्लोक)

एवं बृ० जा० में भी—'रज्जुर्मुसलं नलश्चराद्यैः सत्यश्चाश्रयजाञ्जगाद योगान्। केन्द्रैः सदसद्युतैर्दलाख्यौ स्रक्सर्पौ कथितौ पराशरेण' (१२ अ० २ श्लोक) ॥ १८ ॥

विशेष—आचार्य कल्याण वर्मा ने तीन केन्द्रों में केवल शुभ ग्रह रहने पर माला व तीन केन्द्रों में केवल पाप ग्रह रहने पर सर्प योग का वर्णन नहीं किया है किन्तु महर्षि पराशर ने तो तीन केन्द्र की ही सत्ता स्वीकार की है। इस पराशर के कथन

में प्रमाणान्तर भी उपलब्ध हैं। बृहज्जातक अध्याय १२ वें के श्लोक सं० २ य की भट्टोत्पली टीका में भगवान् गार्गि का वचन यह है—'त्रिकेन्द्रगैर्यमारार्कैः सर्पो दुःखितजन्मदः। भोगिजन्मप्रदा माला तद्वज्जीवसितेन्दुजैः'। तथा वादरायण का भी वाक्य इस प्रकार से है—केन्द्रेष्वपापेषु सितज्ञजीवैः केन्द्रत्रिसंस्थैः कथयन्ति मालाम्। सर्पंस्त्वसौम्यैश्च यमारसूर्यैः....'। तथा अन्य वचन मणित्याचार्य का भी इस प्रकार है 'केन्द्रत्रयगैः पापैः सौम्यैर्वा दलसंज्ञितौ। द्वौ योगौ सर्पमालाख्यौ'। इत्यादि इसलिए तीन केन्द्रों में पाप रहित शुभ ग्रह हों तो माला एवं तीन केन्द्रों में केवल पापग्रह हों तो सर्प योग होता है। मेरी दृष्टि में भी तीन केन्द्रों में ग्रहों की सत्ता से दल योगों का होना उचित प्रतीत होता है। यतः किसी भी देवता या मनुष्य को धारण करायी गयी माला का पृष्ठ भाग दृष्टि पथ पर नहीं आता अतः चतुर्थांश का त्याग करके ही योग का विचार करना चाहिऐ। प्रायः सर्प की भी स्थिति पूर्ण वृत्त में न रहकर वक्र ही रहती है॥ १८॥

सात सङ्ख्यायोगों के लक्षण का ज्ञान

एकभवनादिसंस्थैः संख्याख्याः स्युर्यथाक्रमं योगाः।
गोलयुगशूलसंज्ञाः केदारः पाशदामनीवीणाः॥ १९॥

यदि कुण्डली में सम्पूर्ण ग्रह एक राशि में हों तो गोल योग, दो राशि में युग, तीन राशियों में शूल, चार राशियों में केदार, पाँच राशियों में पाश, छ राशियों में दामनी योग और सात राशियों में समस्त ग्रह हों तो वीणा योग होता है। इन सातों योगों की संख्या संज्ञा है क्योंकि राशि संख्या वश ही योग होते हैं॥ १९॥

बृ० पा० में कहा है—'एकराशिस्थितैर्गोलो युगाख्यो द्विभसँस्थितै ..' (३५अ०-१६-१७ श्लो०)। एवं बृ० जा० में भी—'सङ्ख्या योगाः स्युः सप्तसप्तर्क्षसंस्थैरेका-पायाद्वल्लकी दामिनी च...' (१२ अ० १० श्लो०)॥ १९॥

विशेष—यदि सङ्ख्या योगों के साथ-साथ आश्रय योग की प्राप्ति हो तो आश्रय योग ही फल देता है, सङ्ख्या योग का फल नहीं होता है॥ १९॥

नाभस योगों के फल प्राप्ति का ज्ञान

एतेषां फलयोगं कथयामि यथाक्रमं मुनिभिरुक्तम्।
सर्वदशास्वपि फलदाः सकला एते बुधैश्चिन्त्याः॥ २०॥

पूर्वोक्त नाभस योगों के फल को जिस प्रकार मुनियों ने कहा है उस रीति से मैं कल्याण वर्मा यथा क्रम से कहता हूँ। इन योगों के फल, योग कर्ता ग्रह की दशा में होते हैं, इसको विद्वान् जन ध्यान पूर्वक विचार करके फल कहें॥ २०॥

नौका योग का फल

सलिलोपजीविविभवा बह्वायाख्यातकीर्तयो हृष्टाः ।
कृपणा बलिनो लुब्धा नौसम्भूताश्चलाः पुरुषाः ॥ २१ ॥

यदि कुण्डली में नौका नामक योग हो तो जातक—जल से जीविका करके अधिक विभव व धन लाभ कर्त्ता, प्रसिद्ध यश वाला, प्रसन्न चित्त, कृपण, बली, लालची व चल स्वभाव का होता है ॥ २१ ॥

वृ० पा० में इसी प्रकार का श्लोक है । यथा—'सलिलोपजीविविभवा बह्वाशाः ख्यातकीर्तयो दुष्टाः । कृपणा मलिना लुब्धा नौ सञ्जाताः खलाः पुरुषाः' (३५ अ० ३६ श्लो०) । पराशर व कल्याण वर्मा के फल में अल्प अन्तर है ।

वृ० जातक में इसका फल यह है—'कीर्त्यायुतश्चलसुखः कृपणश्च नौजः' (१२ अ० १६ श्लो०) ॥ २१ ॥

कूट योग का फल

आनृतिककितवबन्धनपाला निष्किञ्चनाः शठाः क्रूराः ।
कूटसमुत्था नित्यं भवन्ति गिरिदुर्गवासिनो मनुजाः ॥ २२ ॥

यदि कुण्डली में कूट योग हो तो जातक—असत्यवादी, धूर्त, जेलर (जेल का रक्षक) निर्धन, धूर्त क्रूर स्वभाव, सदा पर्वत रूपी किले में निवास करने वाला होता है ॥२२ ॥

एवमेव वृ० पा० में कहा है—'अनृतकथनबन्धनपा निष्किञ्चनाः शठाः क्रूराः । कूटसमुत्था नित्यं भवन्ति गिरिदुर्गवासिनो मनुजाः' (३५ अ० ३७ श्लो०) ।

वृ० जा० में तो यह कहा है—'कूटेऽनृतप्लवनबन्धनपश्च जातः' (१२ अ० १६ श्लो०) ॥ २२ ॥

छत्र योग का फल

स्वजनाश्रयो दयावान् दाता नृपवल्लभः प्रकृष्टमतिः ।
प्रथमेऽन्त्ये वयसि नरः सुखभाग्ययुतः सितातपत्रः स्यात् ॥ २३ ॥

यदि कुण्डली में छत्र योग हो तो जातक—अपने जनों का आश्रय, दयालु, दाता, राजप्रिय, उत्तम बुद्धि वाला, बाल्य व वृद्धावस्था में सुख व सौभाग्य से युक्त होता है ॥ २३ ॥

वृ० पा० में कहा है—'स्वजनाश्रयो दयावान्नानानृपवल्लभः प्रकृष्टमतिः । प्रथमेऽन्त्ये वयसि नरः सुखवान् दीर्घायुरातपत्री स्यात्' (३५ अ० ३८ श्लो०) ।

और भी वृ० जा० में—'छत्रोद्भवः स्वजनसौख्यकरोऽन्त्यसौख्यः' (१२ अ० १६ श्लो०) ॥ २३ ॥

चाप योग का फल

आनृतिकगुप्तिपालाश्चौराः कितवाश्च कानने निरताः ।
कार्मुकयोगे जाता भाग्यविहीना वयोमध्ये ।। २४ ।।

यदि कुण्डली में चाप नामक योग हो तो जातक—असत्यभाषी, जेलरक्षक, चोर, धूर्त (ठग), वन में लीन व मध्य आयु में भाग्य हीन होता है ।। २४ ।।

वृ० पा० में कहा है–'आनृतिकगुप्तपालाश्चौराः कितवाश्च कानने निरताः । कार्मुकयोगे जाता भाग्यविहीना शुभा वयोमध्ये' (३५ अ० ३९ श्लो०) ।

वृ० जा० में भी—'शूरश्च कार्मुकभवः प्रथमान्त्यसौख्यः' (१२ अ० १६ श्लो०) ।।२४।।

अर्धचन्द्र योग का फल

सुभगाः सेनापतयः कान्तशरीरा नृपप्रिया बलिनः ।
मणिकनकभूषणयुता भवन्ति योगेऽर्धचन्द्राख्ये ।। २५ ।।

यदि कुण्डली में अर्धचन्द्र योग हो तो जावक—सुन्दर भाग्यशाली, सेनानायक, सुन्दर देहधारी, राजा का प्रियपात्र, बली, मणि व सोने के आभूषण (गहने) से युक्त होता है ।। २५ ।।

वृ० पा० में कहा है—'सेनापतयः सर्वे कान्तशरीरा नृपप्रिया बलिनः । मणिकनकभूषणयुता भवन्ति योगेऽर्धचन्द्राख्ये' (३५ अ० ४० श्लो०) ।

एवं वृ० जा० में भी—'अर्धेन्दुजः सुभगकान्तवपुः प्रधानः' (१२ अ० १७ श्लो०)

वज्र योग का फल

आद्यन्तवयसि[1] सुखिताः शूराः सुभगा विरोगदेहाश्च ।
भाग्यविहीना वज्रे जाताः स्वजनैर्विरुद्धाश्च ।। २६ ।।

यदि कुण्डली में वज्र योग हो तो जातक—प्रथम व अन्तिम अवस्था में सुखी, शूर, सुन्दर भाग्य वाला, निरोग (रोग रहित) भाग्य से हीन व अपने जनों से विरुद्ध होता है ।। २६ ।।

वृ० पा० में कहा है—आद्यन्तवयः सुखिनः शूराः सुभगा निरीहाश्च । भाग्यविहीना वज्रे जाता खला विरुद्धाश्च' ।। (३५ अ० २८ श्लोक)

वृ० जा० में भी—'वज्रेऽन्त्यपूर्वसुखिनः सुभगोऽतिशूरो वीर्यान्वितो….'

(१२ अ० १४ श्लोक) ।। २६ ।।

विशेष—इस श्लोक में सुभगा व भाग्य विहीना यह फल में विरोध प्रतीत होता है किन्तु सं० वि० वि० की मातृका में श्लोक के उत्तरार्धं में 'भाग्यविहीना मध्ये वज्रे जाता खलैर्विरुद्धाः' यह पाठ उचित उपलब्ध होता है । इसलिये अवस्था के मध्य में ही

---

[1] आद्यन्तवयः सुखिनः ।

भाग्यविहीनता सिद्ध होती है, एवं खलैर्विरुद्धा का अर्थ है दुष्टों का विरोधी यह भी उचित ही है ॥ २६ ॥

यव योग का फल

व्रतनियममङ्गलपरा वयसो मध्ये सुखार्थसंयुक्ताः ।
दातारः स्थिरवित्ता यवयोगभवाः सदा पुरुषाः ॥ २७ ॥

यदि कुण्डली में यव योग हो तो जातक—व्रत-नियम व शुभ कर्म में तत्पर, अवस्था के मध्य में सुख व धन से युक्त, दानी व स्थिर धनी होता है ॥ २७ ॥

बृ० पा० में कहा है—'व्रतनियममङ्गलपरा वयसो मध्ये सुखार्थपुत्रयुताः । दातारः स्थिरचित्ता यवयोगभवाः सदा पुरुषाः' (३५ अ० २९ श्लो०) ।

और भी बृ० जा० में—'अथ यवे सुखितो वयोऽन्तः' (१२ अ० १४ श्लो०) । यहाँ अन्त शब्द मध्य का पर्यायवाची है ॥ २७ ॥

कमल योग का फल

स्फीतयशसो गुणाढ्याः स्थिरायुषो विपुलकीर्तयः कान्ताः ।
शुभयशसः पृथिवीशाः कमलभवा मानवा नित्यम् ॥ २८ ॥

यदि कुण्डली में कमल योग हो तो जातक—अधिक यशस्वी, गुणी, चिरायु, विख्यात कीर्ति, मनोहर रूपवान्, शुभ यशवाला व राजा होता है ॥ २८ ॥

बृ० पा० में कहा है—'विभवगुणाढ्याः पुरुषाः स्थिरायुषो विपुलकीर्तयः शुद्धाः । शुभशतकाः पृथ्वीशाः कमलभवाः मानवा नित्यम्' (३५ अ० ३० श्लो०) ।

अन्य भी बृ० जा० में—'विख्यातकीर्त्यमितिसौख्यगुणश्च पद्मे' (१२ अ० १४ श्लो०) ॥ २८ ॥

वापी योग का फल

निधिकरणे निपुणधियः स्थिरार्थसुखसंयुताः [१]सुरूपाश्च ।
नयनसुखसम्प्रहृष्टा वापीयोगे नरा जाताः ॥ २९ ॥

यदि कुण्डली में वापी योग हो तो जातक—धन संग्रह करने में चतुर बुद्धिवाला, स्थिर धन व सुख से युत, स्वरूपवान् पाठान्तर से तृष्णा से युत वा अनिच्छा वाला व नेत्र सुख से प्रसन्न होता है ॥ २९ ॥

बृ० पा० में कहा है—'निधिकरणे निपुणधियः स्थिरार्थसुखसंयुताः सुतयुताश्च । नयनसुखसम्प्रहृष्टा वापीयोगेन राजानः' (३५ अ० ३१ श्लो०)

---

[१] सुतृष्णाश्च सुतृप्ताश्च ।

एवं वृ० जा० में भी—'वाप्यां तनुस्थिरसुखो निधिकृन्न दाता' (१२ अ० १४ श्लो० ॥ २९ ॥

शकट योग का फल

रोगार्ताः कुकलत्रा मूर्खाः शकटानुजीविनो निःस्वाः ।
स्वजनैर्मित्रैर्हीनाः शकटे जाता भवन्ति नराः ॥ ३० ॥

यदि कुण्डली में शकट योग हो तो जातक—रोग से दुःखी, निन्दित स्त्री का पति, मूर्ख, गाड़ीवान् अर्थात् बैलगाड़ी से जीविका करने वाला, निर्धन व अपने जनों से व मित्रों से रहित होता है ॥ ३० ॥

वृ० पा० में कहा है—'रोगार्ताः कुनखाः मूर्खा शकटानुजीविनो निःस्वाः । मित्रस्वजनविहीनाः शकटे जाता भवन्ति नराः' (३५ अ० २४ श्लो०) ।

एवं वृ० जा० में भी—'तद्वृत्तिभुच्छकटजः सरुजः कुदारः' (१२ अ० १३ श्लो०) ॥ ३० ॥

विहग योग का फल

[1]भ्रमणरुचयो निकृष्टा दूताः सुरतानुजीविनो धृष्टाः ।
कलहप्रियाश्च नित्यं विहगे योगे सदा जाताः ॥ ३१ ॥

यदि कुण्डली में विहग योग हो तो जातक—घूँमने की इच्छा करने वाला, पाठान्तर से नीच, निकृष्ट (निम्न गन्दा), पाठान्तर से निम्न योनि में जन्म लेने वाला, दूत मैथुन की जीविका वाला, धृष्ट (ढीठ) व नित्य कलह प्रिय होता है ॥ ३१ ॥

वृ० पा० में कहा है—'भ्रमणरुचयो विकृष्टा दूताः सुरतानुजीविनो धृष्टाः । कलहप्रियाश्च नित्यं विहगे योगे सदा जाताः' (३५ अ० २५ श्लो०) ।

एवं वृ० जा० में भी—दूतोऽटनः कलहकृद् विहगे प्रदिष्टः' (१२ अ० १३ श्लो०) ॥ ३१ ॥

गदा योग का फल

सततं मानार्थपरा यज्वानः शास्त्र[2]योगकुशलाश्च ।
धनकनकरत्नसम्पत्संयुक्ता मानवा गदायान्तु ॥ ३२ ॥

यदि कुण्डली में गदा नामक योग हो तो जातक—निरन्तर सम्मान व धन की इच्छा करने वाला यज्ञ कर्ता, शास्त्र व योग में निपुण, पाठान्तर से शास्त्र व संगीत में निपुण व धन (द्रव्य) सुवर्ण रत्नादि सम्पत्ति से युक्त होता है ॥ ३२ ॥

वृ० पा० में कहा है—'सततोद्युक्तार्थवशा यज्वानः शस्त्रगेयकुशलाश्च । धनकनकरत्नसम्पत्संयुक्ता मानवा गदायान्तु' (३५ अ० २३ श्लो०) ।

---

[1] नीचा योनिनिकृष्टाः । [2] गेय ।

एवं वृ० जा० में भी—यज्वार्थभाक्सततमर्थरुचिर्गदायां' (१२ अ० १३ श्लो०) ।३२।

शृङ्गाटक योग का फल

प्रियकलहसमरसाहससुखिनो नृपतेः प्रियाः सुभगकान्ताः ।
आढ्या युवतिद्वेष्याः शृङ्गाटकसंभवा मनुजाः ॥ ३३ ॥

यदि कुण्डली में शृङ्गाटक योग हो तो जातक—प्रेम कलहकर्ता, युद्ध में साहसी, सुखी, राजा का प्रिय पात्र, सुन्दर भाग्य वाला, स्वरूपवान्, श्रेष्ठ व स्त्री द्वेषी होता है ॥ ३३ ॥

वृ० पा० में कहा है—प्रियकलहाः समरसहाः सुखिनो नृपतेः शुभकलत्राः । आढ्या युवतिद्वेष्याः शृङ्गाटकसम्भवा मनुजाः' (३५ अ० २६ श्लो०) ।

एवं वृ० जा० में भी—शृङ्गाटके बहुसुखी' (१२ अ० १३ श्लो०) ॥ ३२ ॥

हल योग का फल

बह्वाशिनो दरिद्राः कृषीवला दुःखिताश्च सोद्वेगाः ।
बन्धुसुहृत्स[1]न्त्यक्ताः प्रेष्या हलसंज्ञिते पुरुषाः ॥ ३४ ॥

यदि कुण्डली में हल योग हो तो जातक—अधिक भोजी, दरिद्री, खेती करने वाला, दुःखी, उद्वेगी, बन्धु (कुटुम्बी) व मित्र से त्यक्त व प्रेष्य (नोकर) होता है ॥ ३४ ॥

वृ० पा० में कहा है—'बह्वाशिनो दरिद्राः कृषीवला दुःखिताश्च सोद्वेगाः । बन्धुसुहृद्भिः सक्ताः प्रेष्या हलसंज्ञके सदा पुरुषाः' (३५ अ० २७ श्लो०) ।

एवं वृ० जा० में भी—'कृषिकृद्धलाख्ये' (१२ अ० १३ श्लो०) ॥ ३४ ॥

चक्र योग का फल

प्रणताशेषनराधिपकिरीटरत्नप्रभाच्छुरितपादः ।
भवति नरेन्द्रो मनुजश्चक्रे यो जायते योगे ॥ ३५ ॥

यदि कुण्डली में चक्र नामक योग हो तो जातक—विनीत समस्त राजाओं के मुकुट की रत्न कान्ति से स्पर्श किया है चरण जिसका ऐसा राजा होना है अर्थात् समस्त राजाओं से वन्दनीय चरण वाला राजाओं का राजा होता है ॥ ३५ ॥

वृ० पा० में कहा है—'प्रणताऽशेषनराधिपकिरीटरत्नप्रभास्फुरितपादः । भवति नरेन्द्रो मनुजश्चक्रे यो जायते योगे' (३५ अ० ४१ श्लो०) ।

और भी वृ० जा० में—चक्रे नरेन्द्रमुकुटद्युतिरंजिताङ्घ्रिः' (१२ अ० १७ श्लो०) ॥ ३५ ॥

---

[1] सुहृद्भिस्त्यक्ताः ।

समुद्र योग का फल

बहुधनरत्नाः क्षितिपा भोगार्थयुता जनप्रिया[1]श्चापि ।
उदधिसमुत्थाः पुरुषाः स्थिरचित्ताः सत्ववन्तश्च ॥ ३६ ॥

यदि कुण्डली में समुद्र योग हो तो जातक--अधिक धन-रत्न भोगों से युत जनता का प्यारा (प्रिय) स्थिर चित्त, बली राजा होता है ॥ ३६ ॥

बृ० पा० में कहा है--बहुरत्नधनसमृद्धा भोगयुता धनजनप्रियाः ससुताः । उदधि-समुत्था पुरुषाः स्थिरविभवाः साधुशीलाश्च' (३५ अ० ४२ श्लो०) ।

बृ० जा० में भी--'तोयालये नरपतिप्रतिमस्तु भोगी' (१२ अ० १७ श्लो) ॥३६॥

यूप योग का फल

आत्मनि रक्षानिरतस्त्यागयुतो वित्तसौख्यसम्पन्नः ।
व्रतनियमसत्यनिरतो यूपे जातो विशिष्टश्च ॥ ३७ ॥

यदि कुण्डली में यूप योग हो तो जातक--अपनी रक्षा करने में लीन, त्यागी, धन, सुख से युत, व्रत-नियम-सत्य में लीन व विशिष्ट जन होता है ॥ ३७ ॥

बृ० पा० में कहा है--'आत्मविदिज्यानिरतः स्त्रिया युतः सत्त्वसम्पन्नः । व्रत-नियमरतमनुष्यो यूपे जातो विशिष्टश्च' (३५ अ० ३२ श्लो०) ।

बृ० जा० में भी--'त्यागात्मवान्क्रतुवरैर्यजते च यूपे' (१२ अ० १५ श्लो) ॥३७॥

शर योग का फल

इषुकरणदस्युबन्धनमृगयावनसेवनेतिसोन्मादाः ।
हिंस्राः कुशिल्पनि[2]रताः शरयोगे सम्प्रसूताः स्युः ॥ ३८ ॥

यदि कुण्डली में शर योग हो तो जातक—बाण (शस्त्रादि) बनाने वाला, डाकू व चोरों को पकड़ने वाला, शिकार के लिये जङ्गल में वास करने के लिये पागल के समान, हिंसक व निम्न श्रेणी का कारीगर या दुरूह चित्र कर्ता होता है ॥ ३८ ॥

बृ० पारा० में कहा है--'इषुकारा बन्धनपाः मृगयावनसेविताश्च मांसादाः । हिंस्राः कुशिल्पकाराः शरयोगे मानवाः प्रसूयन्ते' (३५ अ० ३३ श्लो०) ।

बृ० जा० में भी--'हिंस्रोऽथ गुह्यधिकृतः शरकृच्छराख्ये'
(१२ अ० १५ श्लो०) ॥ ३८ ॥

विशेष--सं० वि वि० की मातृका में 'वनसेविनोतिमांसादाः' यह पाठान्तर होने से अतिमांस भक्षी यह भी बृहत्पाराशर के अनुरूप है ॥ ३८ ॥

---

१. स्सशुभाः । २. काराः ।

शक्ति योग का फल

धनरहितविकलदुःखितनीचालसा[1]श्चिरायुषः पुरुषाः ।
सङ्ग्रामयुद्धनिपुणाः शक्त्यां जाताः स्थिराः सुभगाः ॥ ३९ ॥

यदि कुण्डली में शक्ति योग हो तो जातक—निर्धन, चिन्तित, दुःखी, नीच, आलसी, दीर्घायु, संग्राम में लड़ाई लड़ने में चतुर, स्थिर व सुन्दर भाग्यवान् होता है ॥ ३९ ॥

बृ० पा० में कहा है—'धनरहितविफलदुःखितनीचालसाश्चिरायुषः पुरुषाः । संग्रामबुद्धिनिपुणाः शक्त्यां जाताः स्थिराः शुभगाः' (३५ अ० ३४ श्लो०)

बृ० जा० में भी—'नीचोऽलसः सुखधनैर्वियुतश्च शक्तौ' (१२ अ० १५ श्लो०) ॥३९॥

दण्ड योग का फल

हतपुत्रदारनिःस्वाः सर्वजनैर्न्यकृताः स्वजनबा[2]ह्याः ।
दुःखितनीचाः प्रेष्या दण्डप्रभवा नराः[3] सततम् ॥ ४० ॥

यदि कुण्डली में दण्ड योग हो तो जातक—पुत्र-स्त्री-धन से रहित, समस्त मनुष्यों से तिरस्कृत, अपने मनुष्यों से बाहर या हीन, दुःखी, नीच व सेवक होता है ॥ ४० ॥

बृ० पा० में कहा है—'हतपुत्रदारनिस्वाः सर्वत्र च निर्घृणाः स्वजनबाह्याः । दुःखितनोचप्रेष्या दण्डप्रभवाः भवन्ति नराः' (३५ अ० ३५ श्लो) ·

बृ० जा० में भी—'दण्डे प्रियैर्विरहितः पुरुषोन्त्यवृत्तिः' (१२ अ० १५ श्लो) ॥४०॥

माला योग का फल

नित्यं सुखप्रधाना वाहनवस्त्रार्थभोगसम्पन्नाः ।
कान्ताः सुबहुस्त्रीका मालायां सम्प्रसूताः स्युः ॥ ४१ ॥

यदि कुण्डली में माला योग हो तो जातक—प्रतिदिन सुखी, वाहन-वस्त्र-धन-भोग से युत, सुन्दर व अधिक स्त्री वाला होता है ॥ ४१ ॥

बृ० पा० में कहा है—'नित्यं सुखप्रधाना वाहनवस्त्रान्नभोगसम्पन्नाः । कान्ताः सुबहुस्त्रीका मालायां सम्प्रसूताः स्युः' (३५ अ० २१ श्लो) ।

बृ० जा० में भी—'स्रगुत्थो भोगान्वितो' (१२ अ० ११ श्लो) ॥ ४१ ॥

सर्प योग का फल

विषमाः क्रूरा निःस्वा नित्यं दुःखार्दिताः सुदीनाश्च ।
परभुक्ताः[4] पानरताः सर्पे जाता भवन्ति नराः ॥ ४२ ॥

---

[1] सपेलवा । [2] हीनाः । [3] भवन्ति नराः ।
[4] परमभक्तपापनिरताः, परवेश्मभक्ष्यनिरताः ।

यदि कुण्डली में सर्प नामक योग हो तो जातक—विषम स्वभाव वाला, क्रूर, निर्धन, नित्य दुःख से पीड़ित, दीन व दूसरों के घर खाने में लीन होता है ॥ ४२ ॥

बृ० पा० में कहा है—'विषमाः क्रूराः निःस्वा नित्यं दुःखार्दिताः सुदीनाश्च । परभक्षपाननिरताः सर्पप्रभवा भवन्ति नराः (३५ अ० २२ श्लो०) ।

बृ० जा० में भी—भुजगजो बहुदुःखभाक् स्यात्' (१२ अ० ११ श्लो०) ॥४२॥

रज्जु योग का फल

अटनप्रियाः सुरूपाः परदेशेष्वर्थभागिनो मनुजाः ।
क्रूराः खलस्वभावा रज्जुप्रभवाः सदा कथिताः ॥ ४३ ॥

यदि कुण्डली में रज्जु योग हो तो जातक घूँमने का प्रेमी, स्वरूपवान्, परदेश में धन उपार्जन करने वाला, कठिन व दुष्ट स्वभाव वाला होता है ॥ ४३ ॥

बृ० पा० में कहा है—'अटनप्रियाः सरूपाः परदेशस्वास्थ्यभागिनो मनुजाः । क्रूराः खलस्वभावा रज्जुप्रभवाः सदा कथिताः' (३५ अ० १८ श्लो०) ।

बृ० जा० में भी—'ईर्ष्याविदेशनिरतोऽध्वरुचिश्च रज्वाम्' १२ अ० ११ श्लो) ॥४३॥

मुसल योग का फल

मानधनज्ञानयुताः कर्मोद्युक्ता नृपप्रियाः ख्याताः ।
स्थिरचित्ता मुसलोत्था भवन्ति शूराः सदा पुरुषाः ॥ ४४ ॥

यदि कुण्डली में मुसल योग हो तो जातक — सम्मान-धन व ज्ञान से युत, कार्य करने में उद्यत, राजा का प्रियपात्र, प्रसिद्ध, स्थिरचित्त व बली होता है ॥ ४४ ॥

बृ० पा० में कहा है—'मानज्ञानधनाद्यैर्युक्ता भूपप्रियाः ख्याताः । बहुपुत्राः स्थिरचित्ता मुसलसमुत्था भवन्ति नराः' (३५ अ० १९ श्लो०) ।

बृ० जा० में भी—'मानी धनी च मुसले बहुकृत्यसक्तः' (१२ अ० ११ श्लो०) ॥४४॥

नल योग का फल

ऊनातिरिक्तदेहा धनसंचयभागिनोऽतिनिपुणाश्च ।
बन्धुहिताश्च सुरूपा नलयोगे सम्प्रसूयन्ते ॥ ४५ ॥

यदि कुण्डली में नल योग हो तो जातक—न्यूनाधिक शरीरधारी, धन-संग्रही, अधिक चतुर, बान्धवों का हितकारी व स्वरूपवान् होता है ॥ ४५ ॥

बृ० पा० में कहा है—'न्यूनातिरिक्तदेहा धनसञ्चयभागिनोऽतिनिपुणाश्च । बन्धुहिताश्च सुरूपा नलयोगे सम्प्रसूयन्ते' (३५ अ० २० श्लो०) ।

बृ० जा० में भी—'व्यङ्गस्थिराढ्यनिपुणो नलजः' (१२ अ० ११ श्लो०) ॥४.॥

गोल योग का फल

दारिद्र्यालस्ययुता विद्याज्ञानवर्जिता मलिनाः ।
नित्यं दुःखितदीना गोले योगे भवन्ति नराः ॥ ४६ ॥

यदि कुण्डली में गोल योग हो तो जातक—दरिद्री, आलसी, मूर्ख, अज्ञानी, मलिन, नित्य दुःखी व दीन होता है ॥ ४६ ॥

वृ० पा० में कहा है—'बलसंयुक्ता विधना विद्याविज्ञानवर्जिता मलिनाः । नित्यं दुःखितदीना गोले भवन्ति नराः' (३५ अ० ४९ श्लो०) ।

वृ० जा० में भी—'स्वथ गोलके, विधनमलिनोऽज्ञानोपेतः कुशिल्प्यलसोऽटनः' (१२ अ० १९ श्लो०) ॥ ४६ ॥

युग योग का फल

पाषण्डभागिनो वा धनरहिता वा बहिष्कृता लोके ।
सुतमानधर्मरहिता युगयोगे मानवा जाताः ॥ ४७ ॥

यदि कुण्डली में युग योग हो तो जातक—पाखण्डी वा निर्धन वा संसार से बहिष्कृत, पुत्र-सम्मान व धर्म से रहित होता है ॥ ४७ ॥

वृ० पा० में कहा है—'पाखण्डवादिनो वा धनरहिता वा बहिष्कृता लोके । सुत-मातृ-धर्मरहिता युगयोगे ये नरा जाताः' (३५ अ० ४८ श्लो०) ।

वृ० जा० में भी—'धनविरहितः पाखण्डी वा युगे' (१२ अ० १९ श्लो०) ॥४७॥

शूल योग का फल

तीक्ष्णालसधनरहिता हिंस्राः [1]सुबहिष्कृता महाशूराः ।
सङ्ग्रामलब्धशब्दाः शूले रौद्राः प्रजायन्ते ॥ ४८ ॥

यदि कुण्डली में शूल योग हो तो जातक—उग्र, आलसी, निर्धन, हिंसक, अच्छे जनों से तिरस्कृत, अधिक वीर, युद्ध में कोलाहल करने वाला व रौद्र रूप धारण करने वाला होता है ॥ ४८ ॥

वृ० पा० में कहा है—'तीक्ष्णालसधनहीना हिंस्राः सुबहिष्कृता महाशूराः । संग्रामे लब्धयशा शूले योगे भवन्ति नराः' (५ अ० ४७ श्लो०) ।

वृ० जा० में भी—'शूरः क्षतो धनरुचिर्विधनश्च शूले' (१२ अ० १८ श्लो) ॥४८॥

केदार योग का फल

सुबहूनामुपयोज्याः कृषीवलाः सत्यवादिनः सुखिताः ।
केदारे सम्भूताश्चलस्वभावा धनैर्युक्ताः ॥ ४९ ॥

यदि कुण्डली में केदार योग हो तो जातक—अधिक जनों के मध्य उपयोगी, अर्थात् बहुतों का उपकारी, कृषक, सत्यभाषी, चञ्चल स्वभाव व धनी होता है ॥ ४९ ॥

वृ० पा० में कहा है—'सुबहूनामुपयोज्याः कृषीवलाः सत्यवादिनः सुखिनः । केदारे सम्भूताश्चलस्वभावा धनैर्युक्ताः' (३५ अ० ४६ श्लो०) ।

---

[1] सुबहुकृता ।

बृ० जा० में भी—'केदारजः कृषिकरः सुबहूपयोज्यः' (१२ अ० १८ श्लो०)।।४९।।

पाश योग का फल

पाशे बन्धनभाजः कार्योद्युक्ताः प्रपञ्चकाराश्च ।
बहुभाषिणो विशीला बहुभृत्याः सम्प्रसूताः स्युः ।। ५० ।।

यदि कुण्डली में पाश नामक योग हो तो जातक--जेली, कार्य में लीन, प्रपञ्ची, अधिक भाषी, शील से रहित व अधिक सेवक वाला होता है ।। ५० ।।

बृ० पा० में कहा है--'पाशे बन्धनभाजः कार्ये दक्षाः प्रपञ्चकाराश्च । बहुभाषिणो विर्शाला बहुभृत्याः सम्प्रतानश्च' (३५ अ० ४५ श्लो०) ।

बृ० जा० में भी–'पाशे धनार्जनविशोलसभृत्यबन्धुः' (१२ अ० १८ श्लो०) ।।५०।।

दामिनी योग का फल

दामिन्यामुपकारी पशुगणयुक्तो धनेश्वरो मूढ़ः ।
बहुसुतरत्नसमृद्धो धीरो विद्वान् प्रजातः स्यात् ।। ५१ ।।

यदि कुण्डली में दामिनी योग हो तो जातक—उपकार करने वाला, पशु समुदाय से युत, धनी, मूढ़, अधिक पुत्र व रत्न से युक्त, धोर और विद्वान् होता है ।। ५१ ।।

बृ० पा० में कहा है—'दामिन्यामुपकारी नयधनयुक्तो महेश्वरख्यातः । बहुसुतरत्नसमृद्धा धीरो जायेत विद्वाँश्च' (३५ अ० ४४ श्लो०) ।

बृ० जा० में भी—'दातान्यकार्यनिरतः पशुपश्च दाम्नि' (१२अ०१८ श्लो०) ।।५१।।

वीणा योग का फल

मित्रान्विताः सुवचसः शास्त्रपरा गेयवाद्यनिरताश्च ।
सुखभाजो बहुभृत्या वीणायां कीर्तिता मनुजाः ।। ५२ ।।

यदि कुण्डली में वीणा योग हो तो जातक—मित्रों से युत, सुन्दर भाषी, शास्त्रज्ञ, गान व वाद्य में अर्थात् गाने बजाने में तत्पर, सुख भागी व अधिक नौकर वाला होता है ।। ५२ ।।

बृ० पा० में कहा है--'प्रियगीतनृत्यवाद्यनिपुणाः सुखिनश्च धनवन्तः । नेतारो बहुभृत्या वीणायां कीर्तिताः पुरुषाः' (३५ अ० ४३ श्लो०) ।

बृ० जा० में भी—'वीणोद्भवश्च निपुणः प्रियगीतनृत्यः' (१२ अ० १७ श्लो.)।।५२।।

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां नाभसयोगो नामैकविंशोऽध्यायः ।।

द्वाविंशोऽध्यायः

सर्वस्य सर्वकालं ग्रहराशिसमुद्भवं फलं यस्मात्[1]।
कथायम्यतः प्रयत्नान् शेषाचार्यान् समाश्रित्य ॥ १ ॥

समस्त जीवधारियों को सब समय ग्रह व राशि से उत्पन्न फल की प्राप्ति होती है, इसलिये मैं ग्रन्थकार शेष (अवशिष्ट) आचार्यों के मत को लेकर प्रयत्न से राशिस्थ फल को कहता हूँ ॥ १ ॥

विशेष—सं० वि० वि० की मातृका में 'शेषाचार्यान्' के स्थान पर 'सत्याचर्यं' यह पाठ प्राप्त होता है इसलिये सत्याचार्य के मत से कहता हूँ यह समझना चाहिये ॥१॥

मेषस्थ सूर्य का फल

शास्त्रार्थकृतिकलाभिः ख्यातो युद्धप्रियः प्रचण्डश्च।
उद्युक्तो भ्रमणरुचिर्दृढास्थिवन्धः क्रिये श्रेष्ठः ॥ २ ॥
साहसकर्माभिरतः पित्तासृग्व्याधिकान्तिसत्वयुतः।
सूर्ये भवति नरेन्द्रः स्वतुङ्गराशौ नरो जातः ॥ ३ ॥

यदि जन्म के समय सूर्य मेष राशि में हो तो जातक—शास्त्रार्थी व पुस्तक रचना कला से विख्यात, युद्ध प्रेमी, उग्र, कार्यों में उद्यत, घूँमने की इच्छा करने वाला, मजबूत हड्डी वाला, साहस से कर्म में तत्पर, पित व रक्त पीड़ा से युक्त, स्वरूपवान् राजा होता है ॥ २–३ ॥

वृ० जा० में कहा है—'प्रथितश्चतुरोऽटनोऽल्पवित्तः क्रियगे ···'
(१८ अ० १ श्लो०) ॥ २–३ ॥

विशेष—सं० वि० वि० की मातृका में २ य श्लोक का पूर्वार्ध इस प्रकार है—'शास्त्रार्थकर्मवाग्भिः ख्यातो बान्धवप्रिय····' इसका अर्थ—शास्त्रार्थ-कार्य-व वाणी से प्रसिद्ध होता है ॥२–३॥

भौम राशिस्थ सूर्य पर ग्रहों की दृष्टि के फल

दानरतो वहुभृत्यो ललितो युवतिप्रियो मृदुशरीरः।
कुजभवनगते सूर्ये चन्द्रेण निरीक्षिते भवति ॥ ४ ॥
सङ्ग्रामोत्कटवीर्यः क्रूरः संरक्तनेत्रकरचरणः।
भौमगृहे कुजदृष्टे भानौ तेजोबलोपेतः ॥ ५ ॥

---

१. यत्स्यात् । २. सुबहुव्रता ।

प्रेष्यः परकर्मरतो मन्दधनः सत्वहीनबहुदुःखः ।
भानौ बुधसंदृष्टे कुजभवने मलिनकायश्च ॥ ६ ॥
भूरिद्रविणो दाता नृपमन्त्री दण्डनायको वाऽपि ।
तरणौ सुरगुरुदृष्टे कुजभवने जायते श्रेष्ठः ॥ ७ ॥
[1]कुत्सितरामाभर्ता बहुशत्रुः क्षीणबान्धवो दीनः ।
भौमगृहे सितदृष्टे दिवाकरे जायते कुष्ठी ॥ ८ ॥
दुःखपरिप्लुतदेहः कार्योन्मादी भवेद्विमूढमतिः ।
भौमर्क्षे दिवसकरे रवितनयनिरीक्षिते मूर्खः ॥ ९ ॥

यदि जन्म के समय में सूर्य, मेष या वृश्चिक में चन्द्र से दृष्ट हो तो जातक—दानी, अधिक नौकर वाला, सुन्दर, स्त्री-प्रेमी व कोमल देहधारी होता है ।

यदि भौम की दृष्टि हो तो युद्ध में अधिक बली, क्रूर, लाल नेत्र व लाल हाथ पैर वाला, व तेज बल से युक्त होता है ।

यदि बुध से दृष्ट सूर्य हो तो, भृत्य वा दरिद्री, दूसरों के कार्य में लीन, अल्पधनी, निर्बल, अधिक दुःखी व मलिन (गन्दा) देहधारी होता है ।

यदि गुरु की दृष्टि हो तो—अधिक धनी, दानी, राजा का मन्त्री, वा न्यायाधीश व श्रेष्ठ होता है ।

यदि भौम की राशि में सूर्य पर शुक्र की दृष्टि हो तो नीच स्त्री का पति वा दुष्ट स्त्री में आसक्त, अधिक शत्रुवाला, अल्प बन्धुवाला, दीन व कोढ़ी होता है ।

यदि शनि से दृष्ट भौमराशिस्थित सूर्य हो तो - दुःख से परिपूर्ण देहधारी, कार्यों में पागल, बुद्धि हीन व मूर्ख होता है ॥ ४–९ ॥

विशेष—सं० वि० वि० को मातृका में ४–९ तक श्लोक नहीं हैं ॥ ४–९ ॥

वृष राशिस्थ सूर्य का फल

वदनाक्षिरोगतप्तः क्लेशसहिष्णुर्न[2] चापि बहुशत्रुः ।
भक्तो व्यवहाररतो [3]मतिमान्वन्ध्याङ्गनाद्वेषी ॥ १० ॥
भोजनमाल्याच्छादनगन्धयुतो गेयवाद्यनृत्तज्ञः ।
दिवसकरे वृषसंस्थे भवति पुमान् सलिलभीरुश्च ॥ ११ ॥

यदि जन्म के समय में वृष राशि में सूर्य हो तो जातक—मुख व नेत्र रोग से पीड़ित, क्लेश (कलह) सहन कर्त्ता, अधिक शत्रु वाला नहीं अर्थात् अल्प शत्रुवाला, पाठान्तर से कृश काय, अल्पपुत्रवाला, भक्त, व्यहार कुशल, बुद्धिमान्, वन्ध्या स्त्री का शत्रु, भोजन-

---

[1] कुत्सितरामासक्तः । [2] कृशोन बहुपुत्रः । [3] रतिमान् ।

माला-वस्त्र-व गन्ध (इत्र) से युत, गान-वाद्य-नाँच का ज्ञाता व जल से भय करने वाला होता है ॥ १०–११ ॥

बृ० जा० में कहा है—'गवि वस्त्रगन्धपण्यजीवी वनिताद्विट् कुशलश्च गेयवाद्ये' (१४ अ० १ श्लो०) ॥ १०–११ ॥

वृष व तुला में स्थित सूर्य पर ग्रहों की दृष्टि के फल

वेश्यारतिर्मृदुवचा बहुयुवतिसमाश्रयो भवति ।
दिननाथे सितभवने दृष्टे शशिना सलिलजीवी ॥ १२ ॥

शूरः संग्रामरुचिस्तेजस्वी साहसाप्तधनकीर्तिः ।
दिननाथे सितभवने कुजसंदृष्टे पुमान् विकलः ॥ १३ ॥

लिपिलेख्यकाव्यपुस्तकगेयादिविधास्वतीव निपुणमतिः ।
दिननाथे सितभवने बुधसंदृष्टे भवेत् सुतनुः ॥ १४ ॥

बहुशत्रुमित्रपक्षो नृपसचिवश्चारुलोचनः कान्तः ।
दिननाथे सितभवने गुरुणा दृष्टे [1]सुतोषितो नृपतिः ॥ १५ ॥

नृपतिर्नृपमन्त्री वा स्त्रीधनबहुयोगसंयुतो मतिमान् ।
दिननाथे सितभवने सितसंदृष्टे भवेद्भीरुः ॥ १६ ॥

नीचोऽलसो दरिद्रो वृद्धस्त्रीसंगतो विषमशीलः ।
दिननाथे सितभवने शनिदृष्टे व्याधिसन्तप्तः ॥ १७ ॥

यदि कुण्डली में वृष या तुला में स्थित सूर्य, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक वेश्या में आसक्त, सुन्दर भाषी, अधिक स्त्रियों का पोषक व जल से जीविका करने वाला होता है ।

यदि शुक्र राशिस्थ सूर्य, भौम से दृष्ट हो तो जातक वीर, युद्ध-प्रिय, तेजस्वी, साहस से धन व यश प्राप्त कर्ता तथा विकल होता है ।

यदि शुक्र राशिस्थ सूर्य, बुध से दृष्ट हो तो जातक प्रतिलिपि करने में, लेख लिखने में, काव्य रचना में, पुस्तक बनाने में तथा गाने में अत्यन्त सुन्दर बुद्धिवाला व सुन्दर शरीर वाला होता है ।

यदि उक्त राशिस्थ सूर्य, गुरु से दृष्ट हो तो जातक अधिक शत्रु व मित्र वाला, राजा का मन्त्री, सुन्दर नेत्र वाला, कान्तः = प्रिय, व सन्तुष्ट, पाठान्तर से सदा उद्योगी वा उद्विग्न राजा होता है ।

---

[1] सदोद्युक्तः, सदोद्विग्नः ।

यदि उक्त राशिस्थ सूर्य, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक राजा अथवा राजा का मन्त्री, स्त्री-धन-अधिक योग से युक्त, बुद्धिमान् और डरपोक होता है।

यदि शुक्र राशिस्थ सूर्य, शनि से दृष्ट हो तो जातक नीच, आलसी, दरिद्री (निर्धन), वृद्धा स्त्री के साहचर्य से क्रूर स्वभाव तथा रोग से पीड़ित होता है ॥ १२–१७ ॥

मिथुन राशि में स्थित सूर्य का फल

मेधावी वाङ्मधुरो वात्सल्यगुणैर्युतः श्रुताचारः।
विज्ञानशास्त्रकुशलो बहुवित्त उदारचेष्टश्च ॥ १८ ॥
निपुणो ज्योतिषवेत्ता मध्यमरूपो द्विमातृकः सुभगः।
मिथुनस्थे दिनभर्तरि जातः पुरुषो विनीतः स्यात् ॥ १९ ॥

यदि कुण्डली में मिथुन राशि का सूर्य हो तो जातक बुद्धिमान्, वाणी से मधुर, वात्सल्य गुणों से युक्त, शास्त्रीय आचार वाला, विज्ञान शास्त्र में निपुण, अधिक धनी, उदार चेता, कुशल चतुर), ज्योतिषी, मध्यमरूप, दो माता वाला, सुन्दर, एवं नम्रता से युक्त होता है ॥ १८–१९ ॥

बृ० जा० में कहा है--'विद्याज्योतिषवित्तवान् मिथुनगे भानौ'।

(१८ अ० २ श्लोक) ॥ १८–१९ ॥

बुध राशिस्थ सूर्य पर ग्रहों की दृष्टि के फल

रिपुबान्धवकृतपीडा विदेशगमनार्दितो बहुविलापी।
बुधभवने दिनभर्तरि दृष्टे चन्द्रेण पुरुषः स्यात् ॥ २० ॥
रिपुभयकलहसमेतो रणापवादादिदुःखितो दीनः।
बुधराशौ दिनभर्तरि कुजेक्षिते भवति सव्रीडः ॥ २१ ॥
भूपतिचरितः ख्यातो बान्धवसहितोऽरिभिश्च संत्यक्तः।
बुधराशौ दिनभर्तरि [1]बुधदृष्टेऽक्ष्यामययुतः स्यात् ॥ २२ ॥
बहुशास्त्रदारितमुखो राज्ञां दूतो विदेशगश्चण्डः।
बुधराशौ दिनभर्तरि गुरुणा दृष्टे सदोन्मादः ॥ २३ ॥
धनदारपुत्रसुखितो[2] मन्दस्नेहस्त्वनामयः [3]सुखितः।
बुधराशौ दिनभर्तरि सितसंदृष्टे भवेच्चपलः ॥ २४ ॥
बहुभृत्योद्विग्नमना बहुबन्धुविपोषणे सदा [4]निरतः।
बुधराशौ दिनभर्तरि सौरेण निरीक्षिते कितवः ॥ २५ ॥

---

[1] बुधेन दृष्टे कृशतनुः स्यात्। [2] सहितो। [3] सुभगः। [4] खिन्नः।

यदि कुण्डली में मिथुन या कन्या में स्थित सूर्य, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक शत्रु व बान्धवों से पीड़ित, विदेश गमन से दुःखी व अधिक विलाप करने वाला होता है।

यदि बुध राशिस्थ सूर्य, भौम से दृष्ट हो तो जातक शत्रु से भय कर्ता, कलह से युत, युद्ध में अपकीर्ति से दुःखी, दीन एवं लज्जा से युत होता है।

यदि बुध राशिस्थ सूर्य, बुध से दृष्ट हो तो जातक राजा के तुल्य आचरण वाला, विख्यात, बन्धु बान्धवों से युत, शत्रु रहित तथा नेत्ररोगी, पाठान्तर से कृश शरीर वाला होता है।

यदि बुधराशिस्थ सूर्य, गुरू से दृष्ट हो तो जातक—अधिक शास्त्र मुखी अर्थात् बहुज्ञ, राजदूत, विदेश गामी, उग्र, एवं पागल होता है।

यदि बुध राशिस्थ सूर्य, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक धन-स्त्री-पुत्र से सुखी वा युक्त, अल्प स्नेही, नीरोग, वा सुन्दर और चंचल होता है।

यदि बुधराशिस्थ सूर्य, शनि से दृष्ट हो तो जातक अधिक नौकर वाला, उद्विग्न मन वाला, अधिक बन्धु पालन में लीन, पाठान्तर से खिन्न तथा धूर्त होता है ॥२०–२५॥

कर्क राशिस्थ सूर्य का फल

कर्मसु चपलः ख्यातो गुणैर्नृपाणां स्वपक्षविद्वेषी।
स्त्रीदुर्भगः सुरूपः कफपित्तार्तः श्रमाभिसन्तप्तः ॥ २६ ॥
[1]मद्यरुचिः समधर्मा मानी वरवाक्यदेशदिग्वेत्ता।
सूर्ये कुलीरसंस्थे वहुस्थितिः पितृगणद्वेष्टा ॥ २७ ॥

यदि कुण्डली में कर्क राशि में सूर्य हो तो जातक—कार्यों में चञ्चल, राजाओं के गुणों से प्रसिद्ध अर्थात् राजतुल्य गुण होने से विख्यात, अपने मनुष्य का शत्रु अर्थात् आत्मीय जनों का शत्रु, भाग्यहीन स्त्री का पति, स्वरूपवान् कफ व पित्त से पीड़ित, श्रम से दुःखी, शराब में इच्छा रखने वाला, अर्थात् मदिरा प्रेमी, समान धर्म वाला वा धर्मात्मा, अभिमानी श्रेष्ठ वक्ता, देश व दिशा का ज्ञाता, अधिक स्थिर, एवं पिता माता का द्वेषी अर्थात् पिता माता से शत्रुता का व्यहार करने वाला होता है ॥ २६–२७ ॥

बृ० जा० में कहा है—'भानौ कुलीरे स्थिते, तीक्ष्णोऽस्वः परकार्यकृच्छ्रमपथक्लेशैश्च संयुज्यते' (१८ अ० २ श्लो०) ॥ २६–२७ ॥

कर्क राशि में स्थित सूर्य पर ग्रहों की दृष्टि के फल

राजा राजसमो वा [2]जलपण्यधनस्थिरः[3] क्रूरः।
कर्कटके तीव्रकरे दृष्टे शशिना भवेत्पुरुषः ॥ २८ ॥
[4]शोषभगन्दररोगैः सन्तप्तो बन्धुभिः सह [5]विरक्तः।
कर्कटके दिननाथे भौमेन निरीक्षिते [6]पिशुनः ॥ २९ ॥

---

१ मद्यप्रियः, सधर्मो। २ बहु। ३ स्थितिः। ४ शोफ। ५ विरुद्धः। ६ विसुतः।

विद्यामानयशोभिः ख्यातो नृपवल्लभो भवेन्निपुणः।
सूर्ये कुलीरराशौ बुधेन दृष्टे विगतशत्रुः ॥ ३० ॥
श्रेष्ठो राज्ञो मन्त्री सेनानाथोऽथ सुप्रसिद्धश्च।
सूर्ये शशिभवनस्थे गुरुणा दृष्टे कलाभ्यधिकः ॥ ३१ ॥
स्त्रीसेवी युवतिधनः परकार्यकरो रणे [1]प्रचण्डश्च।
कर्कटकस्थे सूर्ये शुक्रेण निरीक्षिते प्रियालापः ॥ ३२ ॥
कफमारुतरोगार्तः परस्वहारी विलोममतिचेष्टः।
कर्कटकस्थे भानौ स्वपुत्रदृष्टे पुमान् पिशुनः ॥ ३३ ॥

यदि कुण्डली में कर्क राशिस्थ सूर्य, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक—राजा अथवा राजा के तुल्य, जल के व्यापार से वा अधिक व्यापार से स्थिर धनी तथा क्रूर होता है।

यदि कर्कराशिस्थ सूर्य, भौम से दृष्ट हो तो जातक—क्षय-वा सूजन तथा भगन्दर रोगों से पीड़ित, बन्धु बान्धवों से विरक्त वा विरुद्ध, और चुगलखोर वा विना पुत्र के होता है।

यदि कर्कराशिस्थ सूर्य, बुध से दृष्ट हो जातक—विद्या-सम्मान व कीर्ति से विख्यात, राजा का प्रिय, चतुर व शत्रुहीन होता है।

यदि कर्क राशिस्थ सूर्य, गुरू से दृष्ट हो तो जातक—उत्तम, राजा का सचिव, सेनानायक, सुप्रसिद्ध, तथा अधिक कलाओं से युत होता है।

यदि कर्कराशिस्थ सूर्य, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—स्त्री भक्त वा से स्त्री धन प्राप्त कर्त्ता, परोपकारी, रण=युद्ध में वीर एवं प्रियभाषी, होता है।

यदि कर्कराशिस्थ सूर्य शनि से दृष्ट हो तो जातक—कफ व वायुरोग से दुःखी दूसरों के धन का हरण करने वाला, विपरीत बुद्धि व चेष्टा वाला और चुगलखोर होता है ॥ २८–३३ ॥

सिंह राशिस्थ सूर्य का फल

रिपुहन्ता क्रोधपरो विशिष्टचेष्टो वनाद्रिदुर्गचरः।
उत्साही सच्छूरस्तेजस्वी मांसभक्षणो रौद्रः ॥ ३४ ॥
गम्भीरः स्थिरसत्वो [2]बधिरः क्षितिपालको धनसमृद्धः।
सिंहस्थे दिवसकरे ख्यातः पुरुषा भवेज्जातः ॥ ३५ ॥

यदि कुण्डली में सिंह राशिस्थ सूर्य हो तो जातक—शत्रु का मारने वाला, क्रोध परायण, विशेष इच्छा वाला, वन-पहाड़ व किले में चलने वाला, उत्साही, अच्छा वीर, तेजस्वी, मांसाहारी, भयानक, गम्भीर, स्थिर बलवान्, बहिरा या वाचाल, नृप, धन से युत व विख्यात होता है ॥ ३४–३५ ॥

---

[1] प्रभग्नश्च। [2] मुखरः।

बृ० जा० में कहा है—'सिंहस्थे वनशैलगोकुलरतिर्वीर्यावन्तोऽज्ञः पुमान्' (१८ अ० २ श्लो०) ॥ ३४–३५ ॥

सिंह राशिस्थ सूर्य पर ग्रहों की दृष्टि के फल

मेधावी सुकलत्रः कफार्दितो भूपवल्लभो मनुजः ।
आदित्ये सिंहस्थे चन्द्रेण निरीक्षिते भवति ॥ ३६ ॥
परदाररतः शूरः साहसकारी कृतोद्यमो रौद्रः ।
दिवसकरे सिंहस्थे कुजेन दृष्टे प्रधानश्च ॥ ३७ ॥
विद्वान् लिपिलेख्यकरः कितवासेवी परिभ्रमति हीनः ।
सिंहस्थे दिवसकरे बुधेन दृष्टे न बहुसत्वः ॥ ३८ ॥
देवारामतटाकान् करोति सत्वाधिको विजनशीलः ।
सिंहे सहस्ररश्मौ सुरगुरुदृष्टे महाबुद्धिः ॥ ३९ ॥
दुर्नामकुष्ठरोगैरभिभूतो निर्दयो विगतलज्जः ।
सिंहे तिमिरविनाशे शुक्रेण निरीक्षिते जातः ॥ ४० ॥
कार्यविनाशनदक्षः षण्डो जातः परोपतापकरः ।
सिंहस्थे दिवसकरे स्वपुत्रदृष्टे पुमान् भवति ॥ ४१ ॥

यदि कुण्डली में सिंह राशिस्थ सूर्य, चन्द्र से दृष्ट हो तो जातक—बुद्धिमान्, अच्छी स्त्री का स्वामी, कफजन्य व्याधि से पीड़ित, एवं राजा का प्रिय मित्र होता है ।

यदि सिंहस्थ सूर्य, भौम से दृष्ट हो तो जातक—दूसरे की स्त्री में लीन, वीर, साहसी, उद्योग करने वाला, भयानक एवं प्रधान होता है ।

यदि सिंहस्थ सूर्य, बुध से दृष्ट हो तो जातक—मनीषी, लिपि (प्रति लिपि) कर्ता, लेखक, धूर्त मनुष्यों के साथ रहने वाला, पर्यटन-शील, हीन एवं अल्प बली होता है ।

यदि सिंहस्थ सूर्य, गुरू से दृष्ट हो तो जातक—देव मन्दिर-बगीचा-तालाब बनाने वाला, अधिक बली, एकान्त प्रेमी व बड़ा बुद्धिमान् होता है ।

यदि सिंहस्थ सूर्य, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—दूषित नाम वाले कुष्ठ रोग से पीड़ित, निर्दयी व निर्लज्ज (लज्जा से रहित) होता है ।

यदि सिंहस्थ सूर्य, शनि से दृष्ट हो तो जातक—कार्य नष्ट करने में चतुर, नपुंसक व दूसरे को सताप करने वाला होता है ॥ ३६–४१ ॥

कन्या राशिस्थ सूर्य का फल

स्त्रीतुल्यतनुर्ह्रीमान् लिपिवेत्ता दुर्बलश्च वल्गुकथः ।
मेधावी लघुसत्त्वो विद्वान् शुश्रूषकः [1]सुरगुरूणाम् ॥ ४२ ॥

---

[1] सुगुणः ।

संवाहनादिकर्मसु दक्षः श्रुतिगेयवाद्यपरितुष्टः ।
कन्यायां दिवसकरे जातो मृदुदीनवाक्यश्च ॥ ४३ ॥

यदि कुण्डली में कन्या राशिस्थ सूर्य हो तो जातक—स्त्री के सदृश शरीर वाला, लज्जा से युक्त, लिपि ज्ञाता, दुर्बल, मृदुभाषी, मेधावी, अल्प बली, मनीषी, देवता व गुरु (बड़े) जनों का सेवक, पैर दबाने आदि कार्यों में चतुर, वेद-गाना-बजाने से संतोषी, कोमल एवं दीनवचन बोलने वाला होता है ॥ ४२–४३ ॥

बृ० जा० में कहा है—'कन्यास्थे लिपिलेख्यकाव्यगणितज्ञानान्वितः स्त्रीवपुः'
(१८ अ० २ श्लो०) ॥ ४२–४३ ॥

तुला राशिस्थ सूर्य का फल

[1]भङ्गक्षयव्ययार्तो विदेशमार्गादिलम्पटो द्विष्टः ।
नीचोपहतप्रीतिर्हिरण्यलोहादिपण्यजीवी च ॥ ४४ ॥
द्वेष्यः परकर्मरतः परदाररतिः पुमान् भवेन्मलिनः ।
सूर्ये तुलाधरस्थे नृपपरिभूतः प्रगल्भश्च ॥ ४५ ॥

यदि कुण्डली में तुला राशिस्थ सूर्य हो तो जातक—पराजय वा सङ्गति-हानि व खर्च से दुःखी, विदेश जाने में प्रीति रखने वाला, अस्थिर चित्त; नीच, प्रेम से रहित, सुवर्ण व लोहादि से जीविका करने वाला, द्वेषी, दूसरों के कार्य में लीन, पर स्त्री में प्रेमी, मलिन, राजा से तिरष्कृत व ढीठ होता है ॥ ४४–४५ ॥

बृ० जा० में कहा है—'जातस्तौलिनि शौण्डिकोऽध्वनिरतो हैरण्यको नीचकृत्'
(१८ अ० ३ श्लो०) ।

वृश्चिक राशिस्थ सूर्य का फल

अनिवारितरणवेगः श्रुतिधर्मरतो न सत्यवाङ्मूर्खः ।
प्रविनष्टदुष्टयुवतिः क्रूरः कुस्त्रीविधेयश्च ॥ ४६ ॥
क्रोधपरोऽसद्वृत्तो लोभिष्ठः कलहवल्लभोऽनृतवाक् ।
शस्त्राग्निविषग्रस्तः पितुर्जनन्याश्च दुर्भगः कीटे ॥ ४७ ॥

यदि कुण्डली में वृश्चिक राशि का सूर्य हो तो जातक—युद्ध में रोकने पर भी नहीं रुकने वाला, वैदिक धर्म में तत्पर, झूठ बोलने वाला, मूर्ख, नष्ट, दुष्टा स्त्री वाला, क्रूर, दुष्ट स्त्री की आज्ञा का पालक, क्रोधी, दुष्ट आचरण कर्त्ता, अति लोभी, कलह प्रिय, मिथ्या भाषी, शस्त्र वा अग्नि वा विष से पीड़ित, माता व पिता का शत्रु होता है ॥ ४६–४७ ॥

बृ० जा० में कहा है—'क्रूरः साहसिको विषार्जितधनः शस्त्रान्तगोऽलिस्थिते'
(१८ अ० ३ श्लोक) ॥ ४६–४७ ॥

---

[1] सङ्ग ।

धनुराशिस्थ सूर्य का फल

द्रव्यान्वितो नृपेष्टो जातः प्राज्ञः सुरद्विजानुरतः ।
शस्त्रास्त्रहस्तिशिक्षानिपुणो व्यवहारयोग्यश्च ॥ ४८ ॥
पूज्यः सतां प्रशान्तो धनवान् विस्तीर्णपीनचारुतनुः ।
बन्धूनां हितकारी सत्त्वयुतः कार्मुके सूर्ये ॥ ४९ ॥

यदि कुण्डली में धनु राशि का सूर्य हो तो जातक—धन से युक्त, नृप प्रिय, विद्वान्, देवता व ब्राह्मण का भक्त, शस्त्र-अस्त्र व हाथी की शिक्षा में चतुर, व्यवहार में कुशल, सज्जनों में पूजा करने योग्य, शान्त चित्त, धनी, सुन्दर विशाल देहधारी, बन्धुओं का कल्याण करने वाला व बलवान् होता है ॥ ४८–४९ ॥

बृ० जा० में कहा है—'सत्पूज्यो धनवान्धनुर्धरगते तीक्ष्णो भिषक्कारुकः'
(१८ अ० ३ श्लो०) ॥ ४८–४९ ॥

धनु या मीन राशिस्थ सूर्य पर ग्रहों की दृष्टि के फल

वाग्बुद्धिविभवपुत्रैः समन्वितो नृपसमो विगतशोकः ।
वाक्पतिराशौ तपने दृष्टे चन्द्रेण सुशरीरः ॥ ५० ॥
संग्रामे लब्धयशाः स्फुटवचनो वित्तसौख्यसम्पन्नः ।
सूर्ये वाक्पतिराशौ भौमेन निरीक्षिते चण्डः ॥ ५१ ॥
मधुरवचनो लिपिज्ञः काव्यकलागोष्ठियानधातुज्ञः ।
गुरुभे सवितरि दृष्टे बुधेन जनसंमतो भवति ॥ ५२ ॥
विचरति नरेन्द्रभवने नृपतिर्वा वारणाश्वधनयुक्तः ।
सुरगुरुगृहे विवस्वति गुरुणा दृष्टे सदा विद्वान् ॥ ५३ ॥
दिव्यस्त्रीभोगयुतः सुगन्धमाल्यादिभिः सहितः ।
सुरगुरुभवने भानौ शुक्रेण निरीक्षिते शान्तः ॥ ५४ ॥
अशुचिः परान्नकांक्षी नीचानुरतश्चतुष्पदक्रीडः ।
देवेज्यगृहे सूर्ये मन्देन निरीक्षिते भवति ॥ ५५ ॥

यदि कुण्डली में धनु अथवा मीन राशिस्थ सूर्य, चन्द्र से दृष्ट हो तो जातक—वाणी बुद्धि-वैभव व पुत्र से युत, राजा के समान, शोक से हीन तथा सुन्दर देहधारी होता है ।

यदि गुरु राशिस्थ सूर्य, भौम से दृष्ट हो तो जातक—लड़ाई में यश पाने वाला अर्थात् विजय पाने वाला, स्पष्टवक्ता, धन व सुख से युक्त व उग्र प्रकृति का होता है । यदि गुरु राशिस्थ सूर्य, बुध से दृष्ट हो तो जातक—मीठा बोलने वाला, लिपि-काव्य-कला-सभा-यान व धातुओं का ज्ञाता तथा जन प्रिय होता है ।

यदि गुरु राशिस्थ सूर्य, गुरू से दृष्ट हो तो जातक--राजभवन में घूँमने वाला अथवा राजा, हाथी-घोड़ा व धन से युत, तथा पण्डित होता है।

यदि गुरु राशिस्थ सूर्य, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक--अच्छी सुन्दर स्त्री के भोग से युत, सुन्दर गन्ध (इत्र) व माल्यादि से युक्त, एवं शान्तचित्त, होता है।

यदि गुरु राशिस्थ सूर्य, शनि से दृष्ट हो तो जातक--अपवित्र, दूसरे के अन्न की इच्छा करने वाला, दुष्ट-जनों का सेवी व चार पैर वालों का पालक होता है ॥५०--५५॥

मकर राशिस्थ सूर्य का फल

लुब्धः कुस्त्रीसक्तः कुकर्मसंवर्धितः सतृष्णश्च।
बहुकार्यरतो भीरुर्विहीनबन्धुश्चलप्रकृतिः ॥ ५६ ॥
अटनप्रियोऽल्पसत्त्वः स्वपक्षविक्षोभनाशितसमस्तः।
मकरस्थे दिवसकरे जातो बहुभक्षकः पुरुषः ॥ ५७ ॥

यदि कुंडली में मकर राशि में सूर्य हो तो जातक लोभी, चरित्रहीन स्त्री में लीन, दुष्कर्म से बढ़ने वाला, तृष्णा करने वाला, अधिक कार्यों में लीन, डरपोक, बन्धुओं से रहित, अस्थिर प्रकृति वाला, घूमने का प्रेमी, अल्प बली एवं अपने पक्ष के विक्षोभ से सर्वनाश करने वाला होता है ॥ ५६-५७ ॥

बृ० जा० में कहा है—'नीचोज़ः कुवणिङ् मृगेऽल्पधनवांल्लुब्धान्यभाग्यै रतः' (१८ अ० ३ श्लोक) ॥ ५६।५७ ॥

शनि राशिस्थ सूर्य पर ग्रहों की दृष्टि के फल

मायापटुश्चलमतिः स्त्रीसङ्गान्नष्टधनसौख्यः।
मन्दगृहे तीव्रकरे चन्द्रेण निरीक्षिते भवति ॥ ५८ ॥
व्याधिभिररिभिर्ग्रस्तः परकलहाच्छस्त्रविक्षतशरीरः।
मन्दगृहे तिमिररिपौ भौमेन निरीक्षिते विकलः ॥ ५९ ॥
शूरः षण्डप्रकृतिः परस्वहारी न [1]सारसर्वाङ्गः।
नलिनीदयिते शनिभे बुधेन संवीक्षिते भवति ॥ ६० ॥
शोभनकर्मा मतिमान् सर्वेषामाश्रयो विपुलकीर्तिः।
कोणगृहे दिनभर्तरि गुरुणा दृष्टे मनस्वी च ॥ ६१ ॥
शङ्खप्रवालमणिभिर्जीवति वेश्याङ्गनाधनसमृद्धः।
कोणभवने दिनपतौ भृगुणा दृष्टे सुखी जातः ॥ ६२ ॥

---

[1] साधु।

ध्वंसयति शत्रुपक्षं नरेन्द्रसन्मानवर्धिताश्वासः।
भानौ शनैश्चरगृहे शनिदृष्टे सूयते योऽसौ ॥ ६३ ॥

यदि कुण्डली में शनि राशिस्थ सूर्य, चन्द्र से दृष्ट हो तो जातक माया में चतुर अर्थात् मायावी, चंचल बुद्धि व स्त्री की संगति से धन व सुख का नाशक होता है।

यदि शनि राशिस्थ सूर्य, भौम से दृष्ट हो तो जातक रोग व शत्रु से पीड़ित, दूसरे के कलह से शस्त्र से चोट खाने वाला एवं बेचैन (दु-खो) होता है।

यदि मन्द राशिस्थ सूर्य बुध से दृष्ट हो तो जातक वीर, नपुंसक प्रकृति का, दूसरे के धन का हरण करने वाला एवं सारहीन देहधारी वा असुन्दर शरीर वाला होता है।

यदि मन्द राशिस्थ सूर्य गुरू से दृष्ट हो तो जातक सुन्दर कार्यकर्ता, बुद्धिमान्, सबों का आश्रय और अधिक कीर्तिमान् होता है।

यदि शनि राशिस्थ सूर्य, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक शङ्ख-मूँगामणि की जोविका करने वाला, वेश्या स्त्री के धन से धनी एवं सुखी होता है।

यदि शनि राशिस्थ सूर्य शनि से दृष्ट हो तो जातक शत्रु का नाशक व राजा के सम्मान से बढ़े हुए आश्वासन वाला होता है। ॥ ५८-६३ ॥

कुम्भ राशिस्थ सूर्य का फल

हृद्रोगी बहुसत्त्वः सतां विगर्ह्योऽतिरोपश्च।
परदाराणां सुभगः कर्मस्वतिनिश्चितो भवति ॥ ६४ ॥
दुःखप्रायोऽल्पधनः शठश्चलितसौहृदो मलिनमूर्तिः।
कुम्भधरेऽर्के जातः पिशुनः स्यात् दुष्प्रलापश्च ॥ ६५ ॥

यदि कुंडली में कुम्भ राशिस्थ सूर्य हो तो जातक हृदय रोगी, अधिक बली, सज्जनों से निन्दित, अधिक क्रोधी, दूसरों की स्त्रियों का सुन्दर भाग्यवान्, कार्यों में अत्यन्त निश्चित, दुःखी, अल्प धनी, धूर्त, चंचल मैत्री वाला, मलिन देहधारी, चुगलखोर एवं असत् वक्ता होता है ॥ ६४-६५ ॥

बृ० जा० में कहा है—'नीचो घटे तनयभाग्यपरिच्युतोऽस्वः' (१८ अ० ४ श्लोक) ॥ ६४-६५ ॥

मीन राशिस्थ सूर्य का फल

सुहृदां संग्रहशीलः स्त्रीप्रीत्या लब्धसौख्यसंभारः।
प्राज्ञो [1]बहुशत्रुघ्नः क्षयोदयी भवति धनकीर्त्या ॥ ६६ ॥

---

[1] जयोदयी।

सत्सुतभृत्याप्तयशा जलपण्यधनः सुवागनृतवादी ।
ऊर्जितगुह्यरुगार्तो बहुसहजो मीनसंस्थेऽर्के ॥ ६७ ॥

यदि कुण्डली में मीन राशिस्थ सूर्य हो तो जातक मित्रों के संग्रह में तत्पर, स्त्री की प्रीति (प्रेम) से सुख की सामग्री को प्राप्त करने वाला, पण्डित, अधिक शत्रुओं का नाशक, धन-कीर्ति से (यश के लिए धन खर्च करने पर) जय प्राप्तकर्ता, वा धनहानिकर्ता, सुन्दर पुत्र व नौकरों से प्राप्त यश वाला, जल के व्यापार से धनी, मृदुभाषी, झूठ बोलने वाला, ओजस्वी, गुप्तरोग से पीड़ित व अधिक भाई वाला होता है ॥६६-६७॥

वृ० जा० में कहा है—'तोयोत्थपण्यविभवो वनिताहृतोऽन्त्ये' (१८ अ० ४ श्लोक) ॥ ६६-६७ ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यामादित्यचारदृष्टियोगो नाम द्वाविंशोऽध्यायः ।

त्रयोविंशोऽध्यायः ।

मेष राशि में चन्द्रमा का फल

सौवर्णाङ्गः स्थिरस्वः सहजविरहितः साहसी मानभद्रः
कामार्तः क्षामजानुः कुनखतनुकचश्चञ्चलो मानवित्तः ।
पद्माभैः पाणिपादैर्विततसुतजनो वर्तुलाकारनेत्रः
सस्नेहस्तोयभीरुर्व्रणविकृतशिराः स्त्रीजितो मेष इन्दौ ॥ १ ॥

यदि जन्म के समय मेष राशि में चन्द्रमा हो तो जातक सुवर्ण (सोना) के समान देह वाला अर्थात् लाल (गौर) देहधारी, स्थिर धनी, भाइयों से रहित अर्थात् इकलौता, साहसी, सम्मान से श्रेष्ठ वा अभद्र, काम से पीड़ित, कमजोर घुटने वाला, दूषित नखधारी, अल्पकेशी, अस्थिर, सम्मान को धन मानने वाला, कमल की कान्ति के समान हाथ व पैर वाला, विस्तृत (अधिक) पुत्र व मनुष्यों से युत, गोल नेत्र वाला, स्नेही, जल से भय करने वाला, घाव से विकृत (दूषित) सिर वाला व स्त्री से पराजित होता है ॥ १ ॥

वृ० जा० में कहा है--'वृत्तातानाम्रदृगुष्णशाकलघुभुक्क्षिप्रप्रसादोऽटनः, कामी दुर्बलजानुरस्थिरधनः शूरोऽङ्गनावल्लभः । सेवाज्ञः कुनखी व्रणाङ्कितशिरा मानी सहोत्थाग्रजः शक्त्या पाणितलेऽङ्कितोऽतिचपलस्तोये च भीरुः क्रिये' (१७ अ० १ श्लोक) ॥ १ ॥

---

१ सेवाविघ्नः । २ वानभद्रः ।

मेष राशिस्थ चन्द्रमा पर ग्रहों की दृष्टि के फल

अत्युग्रतरो नृपतिः प्रणतानां मार्दवं [1]भजति जातः ।
धीरः संग्रामरुचो रविणा दृष्टे शशिनि मेषे ॥ २ ॥
दन्ताक्षिरोगतप्तः [2]शिखिवातादिक्षतशरीरः ।
माण्डलिकः स्यान्मेषे कुजदृष्टे शशिनि [3]भूतार्तः ॥ ३ ॥
[4]नानाविद्याचार्यः सद्वाक्यः स्यान्मनोभीष्टः ।
बुधदृष्टे मेषस्थे निशाकरे सत्कविर्विपुलकीर्तिः ॥ ४ ॥
बहुभृत्यधनसमृद्धो नृपतेः सचिवश्चमूपतिर्वाऽपि ।
मेषगृहे हिमरश्मौ दृष्टे गुरुणा पुमान् जातः ॥ ५ ॥
सुभगः सुतधनयुक्तो वरयुवतिविभूषणोऽ[5]ल्पभोक्ताः च ।
मेषे शिशिरमयूखे भृगुतनयनिरीक्षिते भवति ॥ ६ ॥
विद्विष्टो बहुदुःखो दारिद्रयतनुर्मलीमसोऽनृतवाक् ।
मेषे शिशिरमयूखे रवितनयनिरीक्षिते भवति ॥ ७ ॥

यदि जन्म के समय में मेष राशिस्थ चन्द्रमा, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक अत्यन्त क्रोधी, राजा, विनयशील मनुष्यों के प्रति सरलता का व्यवहार करने वाला, धैर्यवान् व युद्ध की इच्छा करने वाला होता है ।

यदि मेषस्थ चन्द्रमा, भौम से दृष्ट हो तो जातक दांत व नेत्र रोग से दुखी, अग्नि व वायु आदि रोग से विकृत देहधारी वा जहर व अग्नि से पीड़ित, शस्त्र से विकृत शरीर वाला, जिलाधीश वा जिले में प्रधान एवं भूतों से पीड़ित वा मूत्रकृच्छ्र रोग से पीड़ित होता है ।

यदि मेष राशिस्थ चन्द्रमा, बुध से दृष्ट हो तो जातक अनेक विद्याओं का ज्ञाता वा स्त्री विद्या का आचार्य, शुभवक्ता, इच्छित मन वाला, अच्छा कवि एवं अधिक यशस्वी होता है ।

यदि मेष राशिस्थ चन्द्रमा, गुरू से दृष्ट हो तो जातक अधिक नौकर वाला, धन से परिपूर्ण, राजा का मन्त्री वा सेनाध्यक्ष होता है ।

यदि मेष राशिस्थ चन्द्रमा शुक्र से दृष्ट हो तो जातक सुन्दर भाग्यवान्, पुत्र व धन से युक्त, श्रेष्ठ स्त्री का विभूषण (विशेष अलङ्कार) व अल्प खाने वाला होता है ।

यदि मेष राशिस्थ चन्द्रमा शनि से दृष्ट हो तो जातक विशेष द्रोहकर्ता, अधिक दुःखी, दरिद्री, मलिन व झूठ बोलने वाला होता है ॥ २-७ ॥

---

[1] वहति । [2] विषशिखितापास्त्रवैकृतशरीरः । [3] मूत्रकृच्छ्रार्तः । [4] वामा विद्याचार्यं । [5] भोक्ता ।

वृष राशि में चन्द्रमा का फल

व्यूढोरस्कोऽतिदाता घनकुटिलकचः कामुकः कीर्तिशाली ।
कान्तः कन्याप्रजावान् वृषसमनयनो हंसलीलाप्रचारः ।
मध्यान्ते भोगभागी पृथुक[1]टिचरणस्कन्धजान्वास्यजङ्घः ।
सांकः पार्श्वास्यपृष्ठे ककु[2]र्दि शुभगतिः क्षान्तियुक्तो गवीन्दौ ॥८॥

यदि जन्म के समय वृष राशि में चन्द्रमा हो तो जातक विशाल वक्षस्थल, अधिक दानी, सघन टेढ़े (घुँघराले) बाल वाला, कामी, कीर्तिमान्, सुन्दर, कन्या सन्तान वाला, बैल के समान नेत्र वाला, नीर-क्षीर विवेकी, मध्य व अन्तिम समय में सुख का भोक्ता, दीर्घ (स्थूल) कमर-पैर-कन्धा-घुटना-मुख व जंघा वाला, पसुली-मुख-पीठ व कन्धे पर चिह्न वाला, सुन्दर चलने वाला तथा क्षमा से युक्त होता है ॥ ८ ॥

वृ० जा० में कहा है—'कान्तः खेलगतिः पृथूरुवदनः पृष्ठास्यपार्श्वाङ्कितस्त्यागी क्लेशसहः प्रभुः ककुदवान्कन्याप्रजः श्लेष्मलः । पूर्वैर्बन्धुधनात्मजैर्विरहितैः सौभाग्ययुक्तक्षमी दीप्ताग्निः प्रमदाप्रियः स्थिरसुहृन्मध्यान्त्यसौख्यागति': (१७ अ० २ श्लोक) ॥ ८ ॥

वृष राशिस्थ चन्द्रमा पर ग्रहों की दृष्टि के फल

कर्षकमतिकर्मकरं द्विपदचतुष्प[3]पदसमृद्धमत्याढ्यम् ।
प्रायोगिकं प्रकुरुते वृषभे रविवीक्षितश्चन्द्रः ॥ ९ ॥
अतिकामं कुजदृष्टो युवतिकृते नष्टदारमित्रजनम् ।
हृदयहरं नारीणां मातु[4]र्न शुभं शशी वृषे कुरुते ॥१०॥
प्राज्ञं वाक्यविधिज्ञं प्रमुदितमिष्टं समस्तभूतानाम् ।
जनयति बुधेन दृष्टः शशी वृषेऽनुपमगुणैर्युक्तम् ॥११॥
स्थिरपुत्रदारसुहृदं मातापितृभक्तिमन्तमतिनिपुणम् ।
धार्मिकमतिविख्यातं गवि गुरुदृष्टः शशी कुरुते ॥१२॥
भूषणयानगृहाणां शयनासनगन्धवस्त्रमाल्यानाम् ।
भागिनमुपभोक्तारं सितेक्षितो यदि शशी कुरुते ॥१३॥
धन[5]हीनमनिष्टकरं वृषभे द्वेष्यं सदा च युवतीनाम् ।
सुतमित्रबन्धुसहितं रविसुतदृष्टः शशी कुरुते[6] ॥१४॥

यदि जन्म के समय में वृष राशिस्थ चन्द्रमा, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—खेती कर्त्ता अधिक परिश्रम से कार्य करने वाला अर्थात् परिश्रमी, दो पैर व चार पैर वालों से लाभ की मति वाला व प्रयोग करने वाला होता है ।

---

[1] कर । [2] ककुद । [3] चतुष्पदैः समृद्धं । [4] मातुरस्पथ्यं । [5] धनसुखहीनमनिष्टं मातुर्वृषभे करोति युवतीनाम् । [6] पुरुषम् ।

यदि वृष राशिस्थ चन्द्रमा, भौम से दृष्ट हो तो जातक—अत्यन्त कामी, स्त्री के कारण पत्नी व मित्रजनों से हीन, स्त्रियों के हृदय का हरण करने वाला एवं माता के लिये अशुभ होता है।

यदि वृष राशिस्थ चन्द्रमा, बुध से दृष्ट हो तो जातक—पंडित, बोलने की विधि (प्रक्रिया) को जानने वाला, प्रसन्नचित्त, सब प्राणियों का प्रिय एवं उत्कृष्ट गुणों से युत होता है।

यदि वृष राशिस्थ चन्द्रमा, गुरू से दृष्ट हो तो जातक—स्थिर पुत्र-स्त्री-मित्र वाला, माता-पिता का भक्त, अत्यन्त चतुर, धार्मिक बुद्धिवाला एवं अधिक विख्यात होता है।

यदि वृष राशिस्थ चन्द्रमा, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—अलङ्कार-सवारी-घर-शय्या, आसन-इत्र-वस्त्र-माला का उपभोग करने वाला होता है।

यदि वृष राशिस्थ चन्द्रमा, शनि से दृष्ट हो तो जातक-निर्धन, बुरा अशुभ कर्ता वा धन सुख से रहित, माता का अशुभ करने वाला, सर्वदा स्त्रियों का द्वेषी व पुत्र-मित्र-बन्धु से युत होता है ॥ ९-१४ ॥

वृषस्थ चन्द्रमा के पूर्वार्धं व परार्धं का फल

पूर्वार्धे सम्भूतो जननीमृत्युं करोति न चिरेण।
पश्चार्द्धे वृषभे पितुर्वियोगं शशी कुरुते ॥१५॥

यदि जन्म के समय चन्द्रमा वृष राशि के पूर्वार्धं में हो तो जातक—शीघ्र माता की मृत्यु करता है अर्थात् मातृ रहित होता है। यदि वृष राशि के उत्तरार्धं में चन्द्रमा हो तो पिता का वियोग करता है ॥१५॥

मिथुन राशिस्थ चन्द्रमा का फल

उन्नासश्यामचक्षुः सुरतविधिकलाकाव्यकृद्भोगभोगी
हस्ते मत्स्याधिपांको विषयसुखरतो बुद्धि[1]दक्षः सिरालः।
कान्तः सौभाग्यहास्यप्रियवचनयुतः स्त्रीजितोऽव्यायताङ्गो
याति क्लीबैश्च सख्यं शशिनि मिथुनगे मातृयुग्मप्रपुष्टः ॥१६॥

यदि जन्म के समय में मिथुन राशि में चन्द्रमा हो तो जातक—ऊँची नाक वाला, काले नेत्र वाला, सुरत विधि व कला का ज्ञाता, काव्य कर्त्ता, सुख भोगी, हाथ में मत्स्याधिप के चिह्न से युत, विषय सुख में लीन, वुद्धि में प्रवीण वा बुद-बुद नेत्र वाला, सिरा (नसों) से युत, सुन्दर, सौभाग्यवान्, हास्य (हसने वाला), मीठी वाणी से युक्त, स्त्री से पराजित अर्थात् स्त्री के वश में, लम्बे देह वाला, नपुंसकों से मित्रता करने वाला तथा दो माताओं से पालन होता है ॥१६॥

वृ० जा० में कहा है—'स्त्रीलोलः सुरतोपचारकुशलस्ताम्रेक्षणः शास्त्रविद् दूतः कुञ्चितमूर्द्धजः पटुमतिर्हास्येंगितद्यूतवित्। चावंङ्गः प्रियवाक्प्रभक्षणरुचिर्गीतप्रियो नृत्यवित्, क्लीवैर्याति रतिं समुन्नतनसश्चन्द्रे तृतीयर्क्षगे (१७ अ० ३ श्लो०) ॥१६॥

---

[1] बुद्बुदाक्षः।

मिथुन राशिस्थ चन्द्रमा पर ग्रहों की दृष्टि के फल

प्रज्ञाधनं प्रकाशं मिथुने रूपान्वितं सुधर्मिष्ठम् ।
अतिदुःखितमल्पार्थं करोति सूर्येक्षितश्चन्द्रः ॥ १७ ॥
अतिशूरमतिप्राज्ञं सुखवाहनविभवरूपसम्पन्नम् ।
कुरुते मिथुने चन्द्रो वक्रेण निरीक्षितोऽवश्यम् ॥ १८ ॥
अर्थोत्पादनकुशलं कुरुते ह्यपराजितं सुधीरं च ।
पार्थिवमखण्डिताज्ञं मिथुने बुधवीक्षितश्चन्द्र ॥ १९ ॥
विद्याशास्त्राचार्यं विख्यातं सत्यवाचमतिरूपम् ।
मान्यं वाग्मिनमिन्दुः करोति गुरुवीक्षितो मिथुने ॥ २० ॥
वरयुवतिमाल्यवस्त्रैर्वरवाहनयानभूषणैर्मणिभिः ।
क्रीडां कुरुते पुरुषो भृगुदृष्टे शशनि मिथुनस्थे ॥ २१ ॥
कुरुते बान्धवरहितं युवतिसुखविभूतिवर्जितं चापि ।
अधनं लोकद्वेष्यं जितुमे शशिनेक्षितश्चन्द्रः ॥ २२ ॥

यदि जन्म के समय में मिथुन राशिस्थ चन्द्रमा, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—बुद्धि रूप धन वाला, प्रसिद्ध, रूप से युत, धर्मात्मा, अत्यन्त दु:खी व अल्पधनी होता है ।

यदि मिथुनस्थ चन्द्रमा, भौम से दृष्ट हो तो जातक—अत्यन्त वीर, अधिक विद्वान्, सुख-सवारी-वैभव व रूप से युत, होता है ।

यदि मिथुनस्थ चन्द्रमा बुध से दृष्ट हो तो जातक—धन पैदा करने में चतुर, विजयी, धैर्यवान् राजा व अखण्डित आज्ञा वाला होता है ।

यदि मिथुनस्थ चन्द्रमा गुरू से दृष्ट हो तो जातक—विद्या शास्त्र में आचार्य, प्रसिद्ध, सत्यवक्ता, अतिरूपवान्, सम्मानित व बुद्धिमान् होता है ।

यदि मिथुनस्थ चन्द्रमा शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—सुन्दर स्त्री माला व वस्त्रों से, श्रेष्ठ वाहन-यान-अलङ्कारों से व रत्नों से क्रीडा करता है अर्थात् उक्त वस्तुओं से युत होता है ।

यदि मिथुनस्थ चन्द्रमा शनि से दृष्ट हो तो जातक बान्धवों से हीन, स्त्री-सुख-ऐश्वर्य से रहित, निर्धनी व संसार का शत्रु होता है ॥१७-२२॥

कर्क राशि में चन्द्रमा का फल

युक्तः सौभाग्य[१]योगैर्गृहसुहृदटनज्योतिषज्ञानशीलैः
कामासक्तः कृतज्ञः क्षितिपतिसचिवः सत्प्रमाणः प्रवासी ।
सोन्मादः केशकल्पो जलकुसुमरुचिर्हानिवृद्ध्यानुयातः
प्रासादोद्यानवापीप्रियकरणरतः पीनकण्ठः कुलीरे ॥ २३ ॥

---

[१] सौभाग्यधैर्यगृह ।

यदि जन्म के समय में कर्क राशि में चन्द्रमा हो तो जातक-सौभाग्य-धैर्य-घर-मित्र-घूमना-ज्योतिष ज्ञान व नम्रता से युत, काम (विषय) में आसक्त, कृतज्ञ, राज्य मन्त्री, सत्य बोलने वाला अर्थात् अच्छे प्रमाण वाला, प्रवासी, उन्माद से युक्त, अधिक बाल वाला, जल व पुष्प में इच्छा रखने वाला, हानि (ह्रास) व वृद्धि से युत, घर-बगीचा-वापी का प्रेमी या बनाने में लीन व स्थूल कण्ठ वाला होता है ।।२३।।

वृ० जा० में कहा है—'आवक्रद्रुतगः समुन्नतकटिः स्त्रीनिर्जितः सत्सुहृद् दैवज्ञः प्रचुरालयः क्षयधनैः संयुज्यते चन्द्रवत् । ह्रस्वः पीनगलः समेति च वशं साम्ना सुहृद्-वत्सलः, तोयोद्यानरतः स्ववेश्मसहिते जातः शशाङ्के नरः' (१७ अ० ४ श्लो०) ।।२३।।

कर्क राशिस्थ चन्द्रमा पर ग्रहों की दृष्टि के फल

नरपतिपुरुषमधन्यं धनरहितं क्ले[१]शकारकं वाऽपि ।
कुरुते स्वगृहे चन्द्रो रविदृष्टो दुर्गपालं च ।। २४ ।।
शूरं विकलशरीरं मातुरनर्थावहं प्रियं दक्षम् ।
क्षितितनयवीक्षिततनुर्जनयति चन्द्रो नरं स्वगृहे ।। २५ ।।
अविकलमतिं नयज्ञं जनयति बुधवीक्षितः शशी स्वगृहे ।
धनदारपुत्रवन्तं नृपसचिवं सौख्यवन्तं च ।। २६ ।।
नृपतिं नृपगुणयुक्तं जनयति चन्द्रः सुरेज्यसंदृष्टः ।
स्वगृहे सुखितसुभार्यं नयविनयपराक्रमाक्रान्तम् ।। २७ ।।
धनकनकवस्त्रयोषिद्रत्नानां भाजनं शशी कुरुते ।
कर्कटके सितदृष्टो वेश्याजननायकं कान्तम् ।। २८ ।।
अटनमसुखं दरिद्रं मातुरनिष्टं प्रियानृतं पापम् ।
शनिना दृष्टः स्वगृहे करोति चन्द्रो नरं नीचम् ।। २९ ।।

यदि जन्म के समय में कर्क राशिस्थ चन्द्रमा सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—राजा का अधन्य पुरुष, निर्धन, क्लेशकर्त्ता व लेख (पत्र) वाहक वा किले का रक्षक होता है ।

यदि कर्क राशिस्थ चन्द्रमा भौम से दृष्ट हो तो जातक—वीर, चिन्तित देहधारी, माता के लिये अनर्थकारी व कार्य चतुर होता है ।

यदि कर्क राशिस्थ चन्द्रमा बुध से दृष्ट हो तो जातक—स्थिर बुद्धिवाला, नीतिज्ञ, धन-स्त्री-व पुत्र से युत, राजमन्त्री व सुखी होता है ।

यदि कर्कराशिस्थ चन्द्रमा, गुरू से दृष्ट हो तो जातक—राजकीय गुणों से युत राजा, सुखी, अच्छी स्त्री का पति, नीति-नम्रता व पराक्रम से युत होता है ।

यदि कर्क राशिस्थ चन्द्रमा, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—धन-सुवर्ण वस्त्र-स्त्री-रत्नों का पात्र, अर्थात् भागी, वेश्या स्त्री का नायक व सुन्दर होता है ।

---

[१] लेखहारकं ।

यदि कर्क राशिस्थ चन्द्रमा, शनि से दृष्ट हो तो जातक—भ्रमण प्रिय, सुख से रहित, दरिद्री, माता का अनिष्टकारी, प्रिय झूठ बोलने वाला, पापी व दुष्ट होता है ॥२४-२९॥

सिंह राशि में चन्द्रमा का फल

स्थूला[1]स्थिर्मन्दरोमा पृथुवदनगलो ह्रस्वपिङ्गाक्षियुग्मः
स्त्रीद्वेषी क्षुत्पिपासाजठररदरुजापीडितो मांसभक्षः ।
दाता तीक्ष्णो[2]ऽह्यपुत्रो विपिननगरतिर्मातृवश्यः सुवक्षा
विक्रान्तः कार्यलापी शशभृति रविभे सर्वगम्भीरदृष्टिः ॥ ३० ॥

यदि जन्म के समय में चन्द्रमा सिंह राशि में हो तो जातक—मोटी हड्डी वाला अर्थात् पुष्ट हड्डी वाला वा बड़े मुखवाला, अल्प रोमवाला, स्थूल मुख व कण्ठ वाला, छोटी पीत आँख वाला, स्त्री का शत्रु, भूख-प्यास-उदर व दाँत के रोग से पीड़ित, मांसभक्षी, दानी, उग्र स्वभाव, पुत्रहीन वा अल्प पुत्रवाला, वन व पर्वत का प्रेमी माता का भक्त, सुन्दर वक्ष स्थल वाला, विक्रमी, कायारम्भप्रलापी, व सर्वत्र गहन दृष्टि वाला होता है ॥ ३० ॥

बृ० जा० में कहा है—'तीक्ष्णस्थूलहनुर्विशालवदनः पिङ्गेक्षणोऽल्पात्मजः स्त्रीद्वेषी प्रियमांसकानननगः कुप्यत्यकार्ये चिरम् । क्षुत्तृष्णोदरदन्तमानसरुजा संपीडितस्त्यागवान्, विक्रान्तः स्थिरधीः सुगर्वितमना मातुर्विधेयोऽर्कभे' (१७ अ० ५ श्लो०) ॥ ३० ॥

सिंह राशिस्थ चन्द्रमा पर ग्रहों की दृष्टि के फल

[3]नृपतिसपत्नं कुरुते प्रोत्कृष्टगुणं महास्पदं[4] वीरम् ।
रविणा दृष्टः सिंहे पापरतं विश्रुतं चन्द्रः ॥ ३१ ॥
सेनापतिं प्रचण्डं वरयुवतिसुतार्थवाहनोपेतम् ।
जनयत्युत्तमपुरुषं कुजेक्षितश्चन्द्रमाः सिंहे ॥ ३२ ॥
स्त्रीसत्वं स्त्रीललितं स्त्रीवश्यं युवतिसेवकं सिंहे ।
कुरुते बुधेन दृष्टो धनसुखभोगान्वितं चन्द्रः ॥ ३३ ॥
अभिजातं कुलपुत्रं बहुश्रुतं गुणसमृद्धं च ।
कुरुते नरेन्द्रतुल्यं गुरुदृष्टश्चन्द्रमाः सिंहे ॥ ३४ ॥
प्रमदाविभवैर्युक्तं रोगिणमपि युवतिसेवकं कुरुते ।
सुरतविधिज्ञं प्राज्ञं शशी हरौ शुक्रसन्दृष्टः ॥ ३५ ॥
कर्षकमधनं कुरुतेऽनृतवाचं दुर्गपालकं सिंहे ।
रविजेन तथा दृष्टो युवतिसुखैर्हीनमल्पकं च शशी ॥ ३६ ॥

---

१ स्थूलास्यो मन्द । २ ऽल्पपुत्रो । ३ नृपतिमपुत्रं ४ महास्वनं धीरं ।

यदि जन्म के समय सिंह राशिस्थ चन्द्रमा, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—राजा से शत्रुता, वा पुत्र हीन राजा, उत्तम गुणों से युत, बड़ा वीर वा उच्चशब्द वाला, धीर, पाप (दुष्कर्म) में लीन, तथा विख्यात होता है।

यदि सिंहराशिस्थ चन्द्रमा भौम से दृष्ट हो तो जातक—सेना का अध्यक्ष, उग्र, श्रेष्ठ स्त्री-पुत्र-धन-सवारी से युत, उत्तम पुरुष होता है।

यदि सिंह राशिस्थ चन्द्रमा, बुध से दृष्ट हो तो जातक—स्त्री के वश में, स्त्री का प्रिय, स्त्री से वली, स्त्री का नौकर, धन व सुखभोग से युत होता है।

यदि सिंह राशिस्थ चन्द्रमा गुरू से दृष्ट हो तो जातक—विख्यात कुल का पुत्र, बहुश्रुत (ज्ञानी) गुणों से युत, व राजा के समान होता है।

यदि सिंह राशिस्थ चन्द्रमा शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—स्त्री के ऐश्वर्य से युत, रोगी स्त्री का नौकर, सुरत विधि का ज्ञाता, व पण्डित होता है।

यदि सिंह राशिस्थ चन्द्रमा शनि से दृष्ट हो जातक—खेती करने वाला, धन से रहित, झूठ बोलने वाला, किले का रक्षक, स्त्री सुख से हीन, तथा क्षुद्र होता है ॥ ३१–३६ ॥

कन्याराशिस्थ चन्द्रमा का फल

स्त्रीलोलो लम्बबाहुर्ललितत[१]नुमुखश्चारुदन्ताक्षिकर्णो
विद्वानाचार्यधर्मा प्रियवचनयुतः सत्यशौचप्रधानः।
धीरः सत्वानुकम्पी परविषयरतः क्षान्तिसौभाग्यभागी
कन्याप्रायप्रसूतिर्बहुसु[२]तरहितः कन्यकायां शशाङ्के ॥ ३७ ॥

यदि जन्म के समय में कन्या राशिस्थ चन्द्रमा हो तो जातक—स्त्री में अनुरक्त, लम्बे हाथ वाला, सुन्दर शरोर-मुख-दाँत-आँख व कान वाला, पण्डित आचार्य (अध्यक्ष) धर्मात्मा, प्रिय (मधुर) भाषी, सत्य व शुद्धता से प्रधान (श्रेष्ठ) धैर्यवान् प्राणियों पर दया करने वाला, परोपकारी, क्षमा व सुन्दर ऐश्वर्य से युत, अधिक कन्या व अल्प पुत्र वाला होता है ॥ ३७ ॥

वृ० जा० में कहा है—व्रीडामन्थरचारुवीक्षणगतिः स्रस्तांसबाहुः सुखी, श्लक्ष्णः सत्यरतः कलासु निपुणः शास्त्रार्थविद्धार्मिकः मेधावी सुरतप्रियः परगृहैर्वित्तश्च संयुज्यते, कन्यायां परदेशगः प्रियवचाः कन्याप्रजोऽल्पात्मजः’ (१७ अ० ६ श्लोक) ॥ ३७ ॥

कन्यारशिस्थ चन्द्रमा पर ग्रहों की दृष्टि के फल

नृपकोशकरं ख्यातं गृहीतवाक्यं विशिष्टकर्माणम्।
कन्यायां रविदृष्टो भार्याहीनं शशी कुरुते ॥ ३८ ॥

---

[१] तनुयुत। [२] बहुसुरतहितः।

शिल्पाचार्यं ख्यातं धनवन्तं शिक्षितं सुधीरं च ।
कन्यायां कुजदृष्टो मातुरनिष्टं शशी कुरुते ॥ ३९ ॥
ज्योतिषकाव्यविधिज्ञं विवादकलहेषु विजयिनं [1]सुतराम् ।
सातिशयं कन्यायां जनयति निपुणं बुधेक्षितश्चन्द्रः ॥ ४० ॥
बन्धुजनाढ्यं सुखिनं नृपकृत्यकरं गृहीतवाक्यं च ।
कन्यायां गुरुदृष्टो जनयति विभवान्वितं चन्द्रः ॥ ४१ ॥
कन्यायां बहुदारं विविधालङ्कारभोगिनमथाढ्यम् ।
सततमिहोर्जितमुदितं कुरुते भृगुणा निरीक्षितश्चन्द्रः ॥ ४२ ॥
अदृढस्मृतिं दरिद्रं सुखरहितममातृकं युवतिवश्यम् ।
कन्यायां यमदृष्टः स्त्रीभागधनं शशी कुरुते ॥ ४३ ॥

यदि जन्म के समय में कन्याराशिस्थ चन्द्रमा, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—राजा का कैशियर, विख्यात, वचन का पालक, श्रेष्ठ कार्य कर्ता तथा स्त्री से रहित होता है।

यदि कन्या राशिस्थ चन्द्रमा, भौम से दृष्ट हो तो जातक—शिल्प कला में प्रधान विख्यात, धनी, शिक्षित, धीर तथा माता का अनिष्ट कर्ता होता है।

यदि कन्या राशिस्थ चन्द्रमा, बुध से दृष्ट हो तो जातक—ज्योतिष व काव्य की विधि का जानने वाला विवाद व कलह में निरन्तर विजय प्राप्त कर्ता एवं अत्यन्त चतुर होता है।

यदि कन्या राशिस्थ चन्द्रमा गुरू से दृष्ट हो तो जातक—बन्धु-बान्धवों से युत, सुखी राजकर्मचारी, वचन का पालक व ऐश्वर्य से युत होता है।

यदि कन्या राशिस्थ चन्द्रमा, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—अधिक स्त्री वाला, अनेक प्रकार के भूषण व भोग से युत, धनी व निरन्तर व प्रसन्नता से युत होता है।

यदि कन्या राशिस्थ चन्द्रमा, शनि से दृष्ट हो तो जातक—स्मरण शक्ति से हीन, दरिद्री, सुख से रहित, माता से हीन, स्त्री के अनुकूल व स्त्री के भाग्य से धनी होता है ॥ ३८–४३ ॥

तुला राशिस्थ चन्द्रमा का फल

उन्नासो व्यायताक्षः कृशवदनतनुर्भूरिदारो वृषाढ्यो ।
गोभूभ्यः[2] शौचसारो वृषसमवृषणो विक्रमज्ञः क्रियेशः ।
भक्तो देवद्विजानां बहुविभवयुतः स्त्रीजितो हीनदेहो
धान्यादानेकबुद्धिस्तुलिनि शशधरे बन्धुवर्गोपकारी ॥ ४४ ॥

यदि जन्म के समय में चन्द्रमा तुला राशि में हो तो जातक—ऊँची नांक वाला, विशाल आँख वाला, पतला मुख व शरीर, अधिक स्त्री व बैलों से युत, गाय व भूमि

---

[1] सुभगम् । [2] गुह्यः ।

से बल प्राप्त करने वाला, बैल के समान अण्डकोश वाला, पराक्रम का ज्ञाता, क्रिया (कार्य) का स्वामी, देवता ब्राह्मणों का भक्त, अधिक ऐश्वर्य से युत, स्त्री से पराजित, देह से हीन अर्थात् अङ्ग हीन, सङ्ग्रही व बन्धुओं का उपकार करने वाला होता है ॥ ४४ ॥

बृ० जा० में कहा है—देवब्राह्मणसाधुपूजनरतः प्राज्ञः शुचिः स्त्रीजितः, प्रांशुश्चोन्नतनासिकः कृशचलद्गात्रोटनार्थान्वितः। हीनाङ्गः क्रयविक्रयेषु कुशलो देवद्विनामा सरुग् बन्धूनामुपकारकृद्विरुषितस्त्यक्तस्तु तैः सप्तमे' (१७ अ० ७ श्लोक) ॥ ४४ ॥

तुला राशिस्थ चन्द्रमा पर ग्रहों की दृष्टि के फल

अधनं व्याधितमटनं परिभूतं भोगविप्रयुक्तं च।
असुतमसारं जूके जनयति रविवीक्षितश्चन्द्रः ॥ ४५ ॥
तीक्ष्णं चोरं क्षुद्रं परयोषिद्गन्धमाल्यसंयुक्तम्।
मतिमन्नयनातुरगं जनयति वक्रेक्षितश्चन्द्रः ॥ ४६ ॥
दृष्टो बुधेन चन्द्रः कलाविदग्धं प्रभूतधनधान्यम्।
शुभवाक्यं विद्वांसं देशख्यातं तुलाधरे कुरुते ॥ ४७ ॥
जीवेक्षितस्तुलायां जनयति सर्वत्र पूजितं हिमगुः।
क्रयविक्रयेषु कुशलं रत्नादिषु भाण्डजातेषु ॥ ४८ ॥
ललितमरोगं सुभगं समुपचिताङ्गं धनान्वितं प्राज्ञम्।
विविधोपायविधिज्ञं कुरुते भृगुवीक्षितः शशी तुलके ॥ ४९ ॥
कुरुते शशी धनाढ्यं प्रियवाक्यं वाहनैर्युतं जूके।
विषयरतिं सुखरहितं भास्करिदृष्टो हितं मातुः ॥ ५० ॥

यदि जन्म के समय में तुला राशिस्थ चन्द्रमा सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—धनहीन, रोगी, पर्यटन कर्त्ता, तिरस्कृत, भोग रहित, पुत्र हीन एवं निर्बल होता है।

यदि तुला राशिस्थ चन्द्रमा, भौम से दृष्ट हो तो जातक—उग्रस्वभाव वाला, चोर, अल्प, पर स्त्री व गन्ध माला से युत, बुद्धिमान् व आँख के रोग से युत होता है।

यदि तुला राशिस्थ चन्द्रमा, भौम से दृष्ट हो तो जातक—कलाओं में श्रेष्ठ, प्रचुर धन अन्न से युत, शुभभाषी पण्डित व देश में विख्यात होता है।

यदि तुला राशिस्थ चन्द्रमा गुरू से दृष्ट हो तो जातक—समस्त स्थानों में पूजित व रत्नादि के खरीदने व बेचने में निपुण होता है ॥

यदि तुला राशिस्थ चन्द्रमा, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—सुन्दर, नीरोग, सुन्दर भाग्य-शाली, समान उचित देहधारी, धनी, पण्डित व अनेक उपायों की विधि का ज्ञाता होता है ।

यदि तुला राशिस्थ चन्द्रमा, शनि से दृष्ट हो तो जातक—धनी, मृदुभाषी, वाहनों से युत, विषय का स्नेही, सुख से हीन तथा माता का हित करने वाला होता है ॥४५–५०॥

वृश्चिक राशिस्थ चन्द्रमा का फल

लुब्धो वृत्तोरुजङ्घः कठिनतरतनुर्नास्तिकः क्रूरचेष्टः
चौरो वाल्ये रुगार्तो हतचिबुकनखश्चारुनेत्रः समृद्धः।
कर्मोद्युक्तः प्रदक्षः परयुवतिरतो बन्धुहीनः प्रमत्तः
चण्डो राज्ञा हृतस्वः पृथुजठरशिराः कीटभे शीतरश्मौ ॥ ५१ ॥

यदि जन्म के समय में चन्द्रमा वृश्चिक राशि में हो तो जातक–लोभी, गोल जानु व जङ्घा वाला, कठोर शरीरधारी, नास्तिक, उग्र इच्छा वाला, चोर, वाल्यकाल में रोगी, दाढ़ी व नखों में आघात, सुन्दरनेत्र, धनी, कार्य में उद्यत व चतुर, परस्त्री में आसक्त, बन्धुओं से हीन, पागल, प्रतापी, राजा के द्वारा नष्ट धन वाला, तथा बड़े पेट व मस्तक से युत होता है ॥५१॥

वृ० जा० में कहा है—'पृथुलनयनवक्षा वृतजङ्घोरुजानुर्जनकगुरुवियुक्तः शैशवेव्याधितश्च। नरपतिकुलपूज्यः पिङ्गलः क्रूरचेष्टो झषकुलिशखगाङ्कश्छन्नपापोऽलिजातः' (१७ अ० ८ श्लो०) ॥५१॥

वृश्चिक राशिस्थ चन्द्रमा पर ग्रहों की दृष्टि के फल

कुरुते लोकद्वेष्यं बुधमटनं चैव वित्तवन्तं च।
दिनकरदृष्टोऽलिगतश्चन्द्रः सुखवर्जितं पुरुषम् ॥ ५२ ॥
अनुपमधैर्यं कुरुते नृपतिसमं वृश्चिके विभूतियुतम्।
शूरमजय्यं समरे प्रभक्षणं भूमिजेन संदृष्टः ॥ ५३ ॥
अचतुरमसृष्टवाक्यं यमलापत्यं च युक्तिमन्तं च।
जनयति बुधेन दृष्टः कूटकरं वृश्चिके च गीतज्ञम् ॥ ५४ ॥
कर्मासक्तं कुरुते लोकद्वेष्यं च वित्तवन्तं च।
गुरुणा दृष्टोऽलिगतो निशाकरो रूपवन्तं च ॥ ५५ ॥
अतिमदम[1]तीव सुभगं [2]धनवाहनभोगललितमिह कीटे।
युवतिविनाशितसारं जनयति भृगुवीक्षितश्चन्द्रः ॥ ५६ ॥
नीचापत्यं कृपणं व्याधितमधनं च सत्यहीनं च।
जनयत्यन्तकदृष्टो नरमधमं चन्द्रमाः कीटे ॥ ५७ ॥

यदि जन्म के समय में वृश्चिक राशिस्थ चन्द्रमा, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक–संसार द्रोही, पण्डित, घूमने वाला, धनी तथा सुख से रहित होता है।

---

[1] अतिमति। [2] वर।

यदि वृश्चिक राशिस्थ चन्द्रमा भौम से दृष्ट हो तो जातक—अद्वितीय धैर्यधारी, राजा के समान, ऐश्वर्य से युक्त, युद्ध में न पराजित होने वाला, वीर एवं अधिक भोजनी होता है।

यदि वृश्चिक राशिस्थ चन्द्रमा बुध से दृष्ट हो तो जातक—चतुरता से रहित, कटुभाषी, जुड़वा सन्ततिवाला, योग्य, नकली कर्म कर्त्ता एवं गान विद्या का ज्ञाता होता है।

यदि वृश्चिक राशिस्थ चन्द्रमा गुरू से दृष्ट हो तो जातक—कार्यों में तत्पर, संसार द्वेषी, धनी तथा सुरूपवान् होता है।

यदि वृश्चिक राशिस्थ चन्द्रमा, शनि से दृष्ट हो तो जातक - अधम पुत्रवाला, लोभी, रोगी, निर्धनी, मिथ्याभाषी एवं अधम (नीच) होता है ।।५२-५७।।

धनुराशिस्थ चन्द्रमा का फल

कुब्जाङ्गो वृत्तनेत्रः पृथुहृदयकटिः पीनबाहुः प्रवक्ता
दीर्घांसो दीर्घकण्ठो जलतटवसतिः शिल्पविद् गूढगुह्यः।
शूरो दृष्टोऽस्थिसारो [2]विततबहुबलः स्थूलकण्ठोष्ठघोणो
बन्धुस्नेही कृतज्ञो धनुषि शशिधरे संहताङ्घ्रिः प्रगल्भः ॥ ५८ ॥

यदि जन्म के समय में चन्द्रमा धनु राशि में हो तो जातक—कुबड़ा, गोल आँख वाला, मोटी छाती व कमर व हाथ वाला, सुन्दर वक्ता, लम्वे कन्धा व लम्वे गले वाला, जल के किनारे निवास करने वाला, चित्रकारी का ज्ञाता, गूढ़ गुह्यधारी, वीर, प्रसन्न, मजबूत हड्डी वाला, बहुत बली, मोटे कण्ठ व ओठ व नाक वाला, बन्धु प्रेमी, कृतज्ञ, प्रगल्भ एवं मिले हुए पैर वाला होता है ॥ ५८ ॥

वृ० जा० में कहा है—'व्यादीर्घास्यशिरोधरः पितृधनस्त्यागी कविर्वीर्यवान्, वक्ता स्थूलरदश्रवाधरनसः कर्मोद्यतः शिल्पवित्। कुब्जांसः कुनखी समांसलभुजः प्रागल्भ्यवान्धर्मविद् बन्धुद्विट् न बलात्समेति च वशं साम्नैकसाध्योऽश्वजः' (१७ अ० ९ श्लोक ॥५८॥

धनुराशिस्थ चन्द्रमा पर ग्रहों की दृष्टि के फल

नृपतिमथाढ्यं कुरुते शूरं विख्यातपौरुषं चापे।
भास्करदृष्टश्चन्द्रस्त्वनुपमसुखवाहनोपेतम् ॥ ५९ ॥
सेनापतिं समृद्धं सुभगं प्रख्यातपौरुषं पुरुषम्।
जनयत्यनुपमभृत्यं क्षितिसुतदृष्टः शशी धनुषि ॥ ६० ॥
बहुभृत्यं त्वक्सारं ज्योतिषशिल्पक्रियादिनिपुणं च।
बुधदृष्टो हिमरश्मि[3]र्नग्नाचार्यं हये कुरुते ॥ ६१ ॥

---

१ लालितं कीटे। २ विदित। ३ नाट्याचार्यं।

अनुपमदेहं कुरुते पृथ्वीपालस्य मन्त्रिणं चापे ।
त्रिदशगुरुदृष्टमूर्तिर्धनधर्मसुखान्वितं चन्द्रः ॥ ६२ ॥
सुखिनमतीव हि ललितं सुभगं पुत्रार्थकामवन्तं च ।
चापे सुमित्रभार्यं भार्गवदृष्टः करोतीन्दुः ॥ ६३ ॥
प्रियवादिनं सुवाक्यं वहुश्रुतं सत्यवादिनं सौम्यम् ।
अभिजातं नृपपुरुषं जनयति सौरेक्षितः शशी धनुषि ॥ ६४ ॥

यदि जन्म के समय में धनुराशिस्थ चन्द्रमा, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—राजा, धनवान्, वीर, प्रसिद्ध पुरुषार्थी, अद्वितीय सुखी तथा सवारी से युक्त होता है ।

यदि धनु-राशिस्थ चन्द्रमा भौम से दृष्ट हो तो जातक—सेनाध्यक्ष, धनी, सुन्दर, विख्यात पराक्रमी, एवं सुन्दर (अद्वितीय) नौकर वाला होता है ।

यदि धनुराशिस्थ चन्द्रमा, बुध से दृष्ट हो तो जातक—अधिक नौकर वाला, पुष्ट चमड़ी वाला, ज्योतिष विद्या व चित्रकारी (शिल्प) विद्या में चतुर, एवं नागाओं का अध्यक्ष होता है ।

यदि धनुराशिस्थ चन्द्रमा, गुरू से दृष्ट हो तो जातक—सुन्दर देहधारी, राजा का मन्त्री, धनी, धर्मात्मा व सुखी होता है ।

यदि धनुराशिस्थ चन्द्रमा शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—अधिक सुखी, सुन्दर, सौभाग्यवान्, पुत्रवान्, धनी, कामी व अच्छे मित्र तथा अच्छी स्त्री से युत होता है ।

यदि धनुराशिस्थ चन्द्रमा, शनि से दृष्ट हो तो जातक—प्रियभाषी, सुन्दर वक्ता, वहुत शास्त्र (विषय) का ज्ञाता, सत्य बोलने वाला, मृदु, विख्यात व राजा का पुरुष होता है ॥ ५९–६४ ॥

मकर राशिस्थ चन्द्रमा का फल

गीतज्ञः शीतभीरुः पृथुलतरशिराः सत्यधर्मोपसेवी
प्रांशुः ख्यातोऽल्परोषो मनसिभवयुतो निर्घृणस्त्यक्तलज्जः ।
चार्वक्षः[1] क्षामदेहो गुरुयुवतिरतः सत्कविर्वृत्तजङ्घो
मन्दोत्साहोऽतिलुब्धः शशिनि मकरगे दीर्घकण्ठोऽति[2]कर्णः ॥६५॥

यदि जन्म के समय में चन्द्रमा मकर राशि में हो तो जातक—गान विद्या का ज्ञाता, ठण्ड से डरने वाला, स्थूल मस्तक वाला, सत्यभाषी, धर्मात्मा, उन्नत, विख्यात; अल्पक्रोधी, कामी, घृणा से हीन, निर्लज्ज, सुन्दर नेत्र वा शरीर वाला, कृश शरीर, गुरु पत्नी में लीन, सुन्दर कवि, गोलजङ्घा वाला, अल्पोत्साही, अत्यन्त लोभी, लम्बे कण्ठ और कानवाला होता है ॥ ६५ ॥

---

१ चार्वङ्गः । २ ऽतिदीर्घः ।

वृ० जा० में कहा है—'नित्यं लालयति स्वदारतनयान् धर्मध्वजोऽधः कृशः, स्वक्षः क्षामकटिर्गृहीतवचनः सौभाग्ययुक्तोऽलसः। शीतालुर्मनुजोऽटनश्च मकरे सत्वाधिकः काव्यकृल्लुब्धोऽगम्यजराङ्गनासु निरतः सन्त्यक्तलज्जोऽघृणः' (१७ अ० १० श्लोक) ॥६५॥

मकरराशिस्थ चन्द्रमा पर ग्रहों की दृष्टि के फल

अधनं दुःखितमटनं परकर्मरतं मलीमसं कुरुते।
मकरे कु[१]वलयनाथः शिल्पमतिं वीक्षितो रविणा ॥ ६६ ॥
अतिविभवमत्युदारं सुभगं धनसंयुतं मृगे पुरुषम्।
वाहनयुतं प्रचण्डं करोति वक्रेक्षितश्चन्द्रः ॥ ६७ ॥
मूर्खं प्रवासशीलं गतयुवतिं चञ्चलं मृगे तीक्ष्णम्।
जनयति बुधेन दृष्टः सुखरहितं निर्धनं पुरुषम् ॥ ६८ ॥
भूपतिमनुपमवीर्यं नृपतिगुणैः संयतं मृगे जातम्।
बहुदारपुत्रमित्रं जनयति गुरुवीक्षितश्चन्द्रः ॥ ६९ ॥
व (प)रयुवतिधनविभूषणवाहनमालान्वितं नरं मकरे।
सोपक्रोशमपुत्रं जनयति भृगुवीक्षितश्चन्द्रः ॥ ७० ॥
अलसं मलिनं सधनं मदनार्तं पारदारिकमसत्यम्।
दिवसकरपुत्रदृष्टः करोति चन्द्रो नरं मकरे ॥ ७१ ॥

यदि जन्म के समय में मकरराशिस्थ चन्द्रमा, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—निर्धनी, दुःखी, घूमने वाला, परोपकारी, मलिन व चित्रकारी की बुद्धिवाला होता है।

यदि मकर राशिस्थ चन्द्रमा, भौम से दृष्ट हो तो जातक—अत्यन्त ऐश्वर्यवान् व उदार, सौभाग्यवान्, धनी, सवारी वाला व प्रतापी होता है।

यदि मकरराशिस्थ चन्द्रमा, बुध से दृष्ट हो तो जातक—मूर्ख, प्रवासी, नष्ट स्त्री वाला, अस्थिर, उग्र, सुख से हीन व निर्धन होता है।

यदि मकर राशिस्थ चन्द्रमा, गुरू से दृष्ट हो तो जातक—राजा, अतुलवीर, राजकीय गुणों से युक्त एवं बहुत स्त्री-पुत्र-मित्र वाला होता है।

यदि मकर राशिस्थ चन्द्रमा, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—श्रेष्ठ वा दूसरों की स्त्री-धन अलङ्कार-सवारी-माला से युत, क्रोधी व पुत्र हीन होता है।

यदि मकर राशिस्थ चन्द्रमा, शनि से दृष्ट हो तो जातक—आलसी, मलिन, धनी, काम से पीडित, परस्त्रीगामी व असत्य-भाषी होता है ॥ ६६–७१ ॥

कुम्भराशिस्थ चन्द्रमा का फल

उद्घोणो रूक्षदेहः पृथुकरचरणो मद्यपानप्रसक्तः
सद्द्वेष्यो धर्महीनः परसुजतनकः स्थूलमूर्धा कुनेत्रः।

---

[१] कुविषयनाथं शस्यल्पमतिं निरीक्षितो।

शाठ्यालस्याभिभूतो विपुलमुखकटिः शिल्पविद्यासमेतो
दुःशीलो दुःखतप्तो घट[1]भमुपगते रात्रिनाथे दरिद्रः ॥ ७२ ॥

यदि जन्म के समय में चन्द्रमा कुम्भराशि में हो तो जातक–ऊँची नाक वाला, खुश्क देहधारी, मोटे मोटे हाथ पैर वाला, शराबी, सुन्दर द्रोही, धर्म से रहित, दूसरों के पुत्र पैदा करने वाला, विशाल मस्तक वाला, बुरे नेत्र वाला, शठ, आलसी, विशाल मुख व कमर वाला, शिल्प (चित्र) विद्या का ज्ञाता, दुष्ट स्वभाव वाला, दुःखी व दरिद्री होता है ॥ ७२ ॥

बृ० जा० में कहा है—करभगलः शिरालुः खरलोमशदीर्घतनुः, पृथुचरणोरुपृष्ठजघनास्यकटिर्जरठः । परवनितार्थपापनिरतः क्षयवृद्धियुतः प्रियकुसुमानुलेपनसुहृद्घटजोऽध्वसहः' (१७ अ० ११ श्लोक) ॥ ७२ ॥

कुम्भराशिस्थ चन्द्रमा पर ग्रहों की दृष्टि के फल

अतिमलिनमति च शूरं नृपरूपं धार्मिकं कृषिकरं च ।
कुरुते दिनकरदृष्टो घटधरसंस्थः क्षपानाथः ॥ ७३ ॥
कुम्भेऽतिसत्यवाक्यं मातृगुरुधनैर्वियुक्तमलसं च ।
विषमं परकार्यरतं करोति भौमेक्षितश्चन्द्रः ॥ ७४ ॥
[2]शयनोपचारकुशलं गीतविधिज्ञं प्रियं च युवतीनाम् ।
तनुविभवसुखं पुरुषं करोति बुधवीक्षितः शशी कुम्भे ॥ ७५ ॥
ग्रामक्षेत्रतरूणां वरभवनानां वराङ्गनानां च ।
कुरुते भोगिनमार्यं साधुं गुरुवीक्षितः शशी कुम्भे ॥ ७६ ॥
नीचमपुत्रममित्रं कातरमाचार्यनिन्दितं पापम् ।
कुरुते शशी कुयुवतिं सितेक्षितो घटधरेऽल्पसुखम् ॥ ७७ ॥
नखरोमधरं मलिनं परदाररतं शठं विधर्माणम् ।
स्थावरभागिनमाढ्यं शशी घटे सौरसंदृष्टः ॥ ७८ ॥

यदि जन्म के समय में कुम्भराशिस्थ चन्द्रमा, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—अत्यन्त मलिन, अति (अधिक) वीर, राजा के सदृश धर्मात्मा व खेती कर्त्ता होता है ।

यदि कुम्भराशिस्थ चन्द्रमा भौम से दृष्ट हो तो जातक—अधिकसत्यभाषी, माता व गुरू व धन से हीन, आलसी, विपरीत स्वभाव वाला, एवं दूसरों के कार्य करने वाला होता है ।

यदि कुम्भराशिस्थ चन्द्रमा, बुध से दृष्ट हो तो जातक—शयन वा भोजन विधि में चतुर, गान की विधि (प्रक्रिया) का ज्ञाता, स्त्रियों का प्रेमी, अल्प ऐश्वर्य व सुख से युत होता है ।

---

[1] घटभृदुपगते । [2] अशनो ।

यदि कुम्भराशिस्थ चन्द्रमा, गुरू से दृष्ट हो तो जातक--गांव-खेत-वृक्ष-सुन्दर मकान व सुन्दर स्त्रियों का सज्जन व श्रेष्ठ होकर भोग करने वाला होता है।

यदि कुम्भराशिस्थ चन्द्रमा, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—दुष्ट, विना पुत्र व मित्र के अर्थात् पुत्र व मित्र से हीन, डरपोक, गुरुजनों से तिरस्कृत, पापी व अल्प सुखी होता है।

यदि कुम्भराशिस्थ चन्द्रमा शनि से दृष्ट हो तो जातक—नाखून व रोमधारी, मलिन, परस्त्रीगामी, शठ, विधर्मी (धर्म से हीन) अचर (वृक्षादि) वस्तु से धनी होता है ॥ ७३–७८ ॥

मीन राशिस्थ चन्द्रमा का फल

शिल्पोत्पन्नाधिकारोऽहितजयनिपुणः शास्त्रविच्चारुदेहो
गेयज्ञो धर्मनिष्ठो बहुयुवतिरतः सौख्य[1]भाक् भूपसेवी।
ईषत्कोपो महत्कः सुखनिधिधनभाक् स्त्रीजितः सत्स्वभावो
[2]यानासक्तः समुद्रे तिमियुगलगते शीतगौ दानशीलः ॥ ७९ ॥

यदि जन्म के समय में चन्द्रमा मीन राशि में हो तो जातक—शिल्प शास्त्र में निपुण, शत्रु जीतने में चतुर, शास्त्र का ज्ञाता, सुन्दर शरीरधारी, गान विद्या का जानने वाला, धर्मात्मा, अधिक स्त्रियों में लीन सुखभागी वा मृदुवाणी, राजा का नौकर, अल्प क्रोधी, बड़े मस्तक वाला, सुखी, खान से उत्पन्न द्रव्य को भोगने वाला, स्त्री से पराजित, सुन्दर स्वभाववाला, समुद्री जहाज में बैठने की प्रीति रखने वाला व दानी होता है।७८।

वृ० जा० में कहा है—'जलपरधनभोक्ता दारवासोऽनुरक्तः, समरुचिरशरीरस्तुङ्गनासो बृहत्कः। अभिभवति सपत्नान्स्त्राजितश्चारुदृष्टिर्द्युतिनिधिधनभोगी पण्डितश्चान्त्यराशौ' (१७ अ० १२ श्लोक) ॥ ७९ ॥

मीनराशिस्थ चन्द्रमा पर ग्रहों की दृष्टि के फल

तीव्रमदनप्रकाशं सुखिनं सेनापतिं धनसमृद्धम्।
जनयति दिनकरदृष्टः सुमुदितभार्यं शशी मीने ॥ ८० ॥
परिभूतं [3]सुखरहितं कुलटापुत्रं [4]च पापनिरतं च।
जनयति नक्षत्रपतिः क्षितिसुतदृष्टो झषे शूरम् ॥ ८१ ॥
जनयति बुधेन दृष्टो मीनस्थश्चन्द्रमाः पुरुषम्।
भूपतिमतीव सुखिनं [5]वरयुवतिसमावृतं वश्यम् ॥ ८२ ॥
गुरुदृष्टो मीनस्थो ललितं चन्द्रोऽग्रमाण्डलिकम्।
अत्याढ्यं सुकुमारं बहुभिः स्त्रीभिर्वृतं जनयेत् ॥ ८३ ॥

---

१ सौम्यावाक्। २ ज्ञाने सक्तः। ३ सुतं। ४ पापरहितं। ५ परयुवति।

कुरुते शशी सुशीलं रतिमन्तं नृत्यवाद्यगेयरतम् ।
शुक्रेक्षितो झषस्थो हृदयहरं कामिनीनां च ॥ ८४ ॥
विकलमहितं जनन्याः कामार्तं पुत्रदारमतिहीनम् ।
कुरुते रविसुतदृष्टो नीचविरूपाङ्गनासक्तम् ॥ ८५ ॥

यदि जन्म के समय में मीन राशिस्थ चन्द्रमा सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—अत्यन्त कामी, सुखी, सेना का अध्यक्ष, धन से युत व प्रसन्न स्त्री से युत होता है ।

यदि मीन राशिस्थ चन्द्रमा भौम से दृष्ट हो तो जातक—अपमानित, सुख वा पुत्र से हीन, वेश्या का पुत्र, पापी वा पाप से रहित, व वीर होता है ।

यदि मीन राशिस्थ चन्द्रमा, बुध से दृष्ट हो तो जातक—राजा, अधिक सुखी, श्रेष्ठ स्त्री से वा दूसरे की स्त्री से युत व वश में होता है ।

यदि मीनराशिस्थ चन्द्रमा, गुरू से दृष्ट हो तो जातक—सुन्दर, जिलाधीशों में श्रेष्ठ, अधिक धनी, सुकुमार, व अधिक स्त्रियों से युत होता है ।

यदि मीनराशिस्थ चन्द्रमा, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—सुशील, रतिमान्, नाचने, बजाने व गाने में लीन और स्त्रियों के मनको चुराने वाला होता है ।

यदि मीनराशिस्थ चन्द्रमा, शनि से दृष्ट हो तो जातक—अशान्त, माता का शत्रु, काम से पीडित, पुत्र-स्त्री-बुद्धि से रहित एवं अधम व कुरूपा स्त्री में आसक्त होता है ॥८०–८५॥

कथित फलों का निर्णय

राशिपतौ बलयुक्ते राशौ च बलान्विते तथा चन्द्रे ।
राशिफलं स्यात् सकलं नीचोच्चविधिना च संचिन्त्यम् ॥ ८६ ॥

यदि जन्म के समय में जन्मराशि का स्वामी व राशि तथा चन्द्रमा, ये तीनों बलवान् हों तो अध्याय में कथित फल पूर्ण प्राप्त होते हैं । अर्थात् उच्च नीचादि स्थिति के आधार पर फल में अल्पाधिकता विचार करके आदेश देना चाहिये ॥ ८६ ॥

बृ० जा० में कहा है—बलवति राशौ तदधिपतौ च स्वबलयुत.......'

(१७ अ० १३ श्लोक) ॥ ८६ ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां चन्द्रचारो नाम त्रयोविंशोऽध्यायः ॥

चतुर्विंशोऽध्यायः

भौम राशिनवांशस्थ चन्द्रमा पर ग्रहों की दृष्टि के फल

[1]भौमेंशे कुजदृष्टो निकर्तनश्चन्द्रमाः[2] प्रचण्डश्च[3] ।
जनयति मायाबहुलं प्रवञ्चकं सूर्यजेन किल[4] पुरुषम् ॥ १ ॥

---

१ भौमांशे । २ नंच । ३ ण्डं च । ४ कलि ।

सूर्येण चोरघातकमथवाप्यारक्षकं शूरम् ।
जीवेन मनुजनाथं ख्यातं विद्वत्समाराध्यम् ॥ २ ॥
शुक्रेण नृपतिसचिवं धनान्वितं स्त्रीविलेपनानुरतम् ।
शीघ्रं वदन्ति चपलं सौम्येन निरीक्षिते चन्द्रे ॥ ३ ॥

यदि जन्म के समय में चन्द्रमा मेष या वृश्चिक राशि के नवाँश में स्थित हो व भौम से दृष्ट हो तो जातक—शत्रु को जीतने वाला एवं उग्र होता है । यदि शनि से दृष्ट हो तो मायावी व ठग होता है । यदि सूर्य से दृष्ट हो तो चोर, हिंसक, रक्षा करने वाला एवं वीर होता है । यदि गुरू से दृष्ट चन्द्रमा हो तो मनुष्यों का नाथ अर्थात् राजा विख्यात एवं पण्डितों का पूजनीय होता है । यदि शुक्र से दृष्ट हो तो राजा का मन्त्री धनी एवं स्त्री के शृङ्गार में लीन होता है । यदि बुध से दृष्ट हो तो जातक—शीघ्र (जल्दी) बोलने वाला व अस्थिर होता है ॥ १-३ ॥

शुक्र नवांशस्थ चन्द्रमा पर ग्रहों की दृष्टि के फल

सितभागे सितदृष्टे योषिद्वस्त्रान्नपानधनसौख्यम् ।
जनयति बुधेन चन्द्रो वाद्यज्ञं नृत्तगेयपरम् ॥ ४ ॥
गुरुणा कविप्रधानं नयशास्त्रविशारदं नृपतिसचिवम् ।
परदारदर्शनपरं[1] कामिनमारेण[2] बहुभृत्यम् ॥ ५ ॥
सूर्येण महामूर्खं प्रियंवदं सततमन्नपानरुचिम् ।
सौरेण वर्धकीनां गुणैश्च सदृशं दिशति चन्द्रः ॥ ६ ॥

यदि जन्म के समय में शुक्र नवांशस्थ चन्द्रमा, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक–स्त्री-वस्त्र-अन्न-पान (पेय) धन से सुखी होता है । यदि बुध से दृष्ट हो तो–वादन (बजाना) का ज्ञाता, एवं नाच व गाने में तत्पर होता है । यदि गुरू से दृष्ट हो तो–मुख्य कवि, नीति शास्त्र में चतुर व राजा का मन्त्री होता है । यदि भौम से दृष्ट हो तो–दूसरे की स्त्री को देखने में लीन, कामी तथा अधिक नौकर वाला होता है । यदि सूर्य से दृष्ट हो तो महामूर्ख, प्रिय भाषी, निरन्तर खाने पीने की इच्छा करने वाला होता है । यदि शुक्रनवाँशस्थ चन्द्रमा शनि से दृष्ट हो तो जातक—वर्धकी (बढ़ाई) के गुणों के समान होता है ॥ ४–६ ॥

बुध नवांशस्थ चन्द्रमा पर ग्रहों की दृष्टि के फल

बुधभागे बुधदृष्टः शिल्पाचार्यं कविं शशी जनयेत् ।
शुक्रेक्षितो विशालं गेयज्ञं वचनसाराढयम् ॥ ७ ॥

---

[1] धर्षण । [2] कामिनमस्त्रेण बहुमान्यम् ।

नृपमन्त्रिणं गुणाढ्यं गुरुणा दृष्टः प्रतिष्ठितं कान्तम् ।
भौमेक्षितोऽतिचोरं विवादकुशलं नरं रौद्रम् ॥ ८ ॥
शास्त्रार्थकाव्यबुद्धिं[1] प्राज्ञं शिल्पिनमवेक्षितः शनिना ।
रङ्गचरं विख्यातं जनयति सूर्येक्षितश्चन्द्रः ॥ ९ ॥

यदि जन्म के समय में बुधनवांशस्थ चन्द्रमा बुध से दृष्ट हो तो जातक—कारीगरी जानने वालों का आचार्य अर्थात् गुरू व कवि होता है। यदि शुक्र से दृष्ट हो तो–विस्तृत देहधारी, गान विद्या का ज्ञाता व वाणी का पालन कर्त्ता होता है। यदि गुरू से दृष्ट हो तो–राजमन्त्री गुणों से युत, प्रतिष्ठित एवं सुन्दर होता है। यदि भौम से दृष्ट हो तो–अत्यन्त चोर, विवाद में चतुर, तथा भयङ्कर होता है। यदि शनि से दृष्ट हो तो–शास्त्रार्थं व काव्य रचना करने की बुद्धि वाला, पण्डित, तथा शिल्प (कारीगरी) का ज्ञाता होता है। यदि सूर्य से दृष्ट हो तो–युद्ध में विजयी व प्रसिद्ध होता है ॥ ७-९ ॥

कर्कराशिनवांशस्थ चन्द्रमा पर ग्रहों की दृष्टि के फल

स्वांशे दिनकरदृष्टः शशी कृशतनुमविक्षतशरीरम्[2] ।
परधनरक्षणनिपुणं[3] लुब्धं नितरां कुजेनापि ॥ १० ॥
सौरेणाकृत्यकरं वधवन्धविवादसन्तप्तम् ।
[4]शुक्रेण स्त्रीद्वेष्यं जनयेदथवा नपुंसकाकारम् ॥ ११ ॥
नृपमन्त्रिणं नृपं वा जनयति गुरुणावलोकितश्चन्द्रः ।
सौम्येनाधर्मरतं निद्राबहुलं च [5]सततमध्वरतम् ॥ १२ ॥

यदि जन्म के समय में कर्कराशिस्थ चन्द्रमा, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—पतली देह वाला, तथा अक्षत शरीर धारी होता है। यदि भौम से दृष्ट हो तो–दूसरे के धन की रक्षा करने में चतुर वा दूसरे के धन चुराने में कुशल, तथा अधिक लोभी होता है। यदि शनि से दृष्ट हो तो–कुकर्मी, वध-बन्धन विवाद से पीड़ित होता है। यदि शुक्र से दृष्ट हो तो–स्त्री का शत्रु वा नपुंसकाकार होता है। यदि गुरू से दृष्ट हो तो–राजमन्त्री वा राजा होता है। यदि बुध से दृष्ट हो तो पाप में लीन, अधिक सोने वाला तथा निरन्तर घूमने वाला होता है ॥ १०-१२ ॥

सिंह राशिनवांशस्थ चन्द्रमा पर ग्रहों की दृष्टि के फल

रविभागे रविदृष्टे सुरोषणः समुपलब्धकीर्तिधनः ।
पापो निर्दय इन्दौ सौरेण प्राणिनां हन्ता ॥ १३ ॥
भौमेन सुवर्णधनं ख्यातं नृपसत्कृतं प्रचण्डतरम् ।
गुरुणा दृष्टो जनयति चमूपतिं वा नरेद्रं वा ॥ १४ ॥

---

[1] कार्यं । [2] तनु परिक्षयशरीरम् । [3] हरणे । [4] शुक्रे स्त्रीवेषधरं । [5] सतमस्कम् ।

शुक्रेण दृष्टमूर्तिः सुतार्थिनं मृतसुतं[1] वाऽपि।
सौम्येन दैवचिन्तकमितिहासरतं च निधिभाजम् ॥ १५ ॥

यदि जन्म के समय में सिंह राशिनवांशस्थ चन्द्रमा सूर्य से दृष्ट हो तो जातक–क्रोधी; यशस्वी एवं धनी होता है। यदि शनि से दृष्ट हो तो–पापी, निर्दयी, एवं प्राणियों को मारने वाला होता है। यदि भौम से दृष्ट हो तो–सोने से धनी, विख्यात, राजा से सम्मान पाने वाला व अधिक प्रतापी होता है। यदि गुरू से दृष्ट हो तो–सेनापति वा राजा होता है। यदि शुक्र से दृष्ट हो तो–सुत (पुत्र) की इच्छा करने वाला अर्थात् पुत्र हीन वा मृत पुत्र वाला होता है। यदि बुध से दृष्ट हो तो–ज्योतिषी, इतिहास में लीन अर्थात् ज्ञाता तथा गड़े हुए धन को प्राप्त करने वाला होता है ॥ १३–१५ ॥

गुरु राशि (धनु मीन) नवांशस्थ चन्द्रमा पर ग्रहों की दृष्टि के फल

गुरुभागे गुरुदृष्टो विशदं नृपवल्लभं विपुलकीर्तिम्।
जनयति शशी सितेन स्त्रीणां भोगैः सुसंयुक्तम् ॥ १६ ॥
बुधदृष्टो हास्यकरं नृपप्रियं नायकं वरूथिन्याः।
अस्त्राचार्यं कुरुते कुजेक्षितः सर्वतः ख्यातम् ॥ १७ ॥
दोषैर्विविधैः ख्यातं दिनकरदृष्टो नरं [2]प्रमाणस्थम्।
सौरेण वृद्धशीलं बलिभिश्च निराकृतं नीचम् ॥ १८ ॥

यदि जन्म के समय में गुरु राशिनवांशस्थ चन्द्रमा गुरू से दृष्ट हो तो जातक—अधिक राजा का प्रिय, एवं अधिक कीर्तिमान् होता है। यदि शुक्र से दृष्ट हो तो स्त्रियों के भोग से युक्त होता है। यदि बुध से दृष्ट हो तो–हँसने वाला, राजा का प्रिय व सेनापति होता है। यदि भौम से दृष्ट हो तो–अस्त्र-विद्या में आचार्य अर्थात् प्रधान व संसार में प्रसिद्ध होता है। यदि सूर्य से दृष्ट हो तो–अनेक दोषों से विख्यात वा प्रमाणस्थ होता है। यदि शनि से दृष्ट हो तो–वृद्धस्वभाव, बली जनों से तिरस्कृत व दुष्ट होता है ॥ १६–१८ ॥

शनि राशि नवांशस्थ चन्द्रमा पर ग्रहों की दृष्टि के फल

सौरांशे शनिदृष्टः कृपणं रोगान्वितं मृतसुतं वा।
सूर्येणाल्पापत्यं व्याधिग्रस्तं विरूपतनुम् ॥ १९ ॥
भौमेन नरपतिसमं स्वाढ्यं स्त्रीदुर्भगं सुखैर्युक्तम्।
शुक्रेण विषमशीलं युवतिभिरवधीरितं धीरम्[3] ॥ २० ॥
सौम्येन [4]पापनिरतं कुत्सितचरितं शशी सदा दृष्टः।
गुरुणा स्वकर्मनिरतं कुरुते पुरुषं न चोदात्तम् ॥ २१ ॥

---

[1] हृतसुतं। [2] प्रणाश्यं वा। [3] जरठम्। [4] पाननिरतं।

यदि जन्म के समय में शनि नवांशस्थ चन्द्रमा शनि से दृष्ट हो तो जातक––लोभी, रोगी वा मृत पुत्र होता है। यदि सूर्य से दृष्ट हो तो–अल्प पुत्र वाला, व्याधि से पीड़ित तथा कुरूप होता है। यदि भौम से दृष्ट हो तो–राजा के समान, धन से युत, दुर्भगा स्त्री का पति तथा सुख से युत होता है। यदि शुक्र से दृष्ट हो तो–विपरीत स्वभाव वाला स्त्रियों में लीन तथा धैर्यवान् होता है। यदि बुध से दृष्ट हो तो पाप (दुष्कर्म) में लीन व दुःश्चरित्रवान् होता है। यदि शनिनवांशस्थ चन्द्रमा गुरू से दृष्ट हो तो–अपने कार्यों में तत्पर और उत्तम नहीं होता है ॥ १९–२१ ॥

फल कथन में विशेषता

वर्गोत्तमे स्वकीये परकीयनवांशके[1] च दृष्टिफलम् ।
पुष्टं मध्यं स्वल्पं विपरीतं स्यादनिष्टफलम् ॥ २२ ॥
राशिफलं यद् दृष्टं पूर्वैः कथितं ग्रहैः शशाङ्कस्य ।
तस्य निरोधो दृष्टो यद्यंशपतिर्बली भवति ॥ २३ ॥
अंशपतेश्चन्द्रस्य च फलं विनिश्चित्य दर्शनकृतानि ।
कथितानि यवनवृद्धाः फलानि सम्यग्व्यवस्यन्ति ॥ २४ ॥

यदि चन्द्रमा वर्गोत्तम नवांश मे या अपने नवांश में या दूसरे के नवांश में हो तो जातक का पूर्वकथित शुभ फल वर्गोत्तम में पूर्ण, अपने नवांश में मध्य, अन्य नवांश में अल्प होता है। एवं अशुभ फल–वर्गोत्तम में अल्प, स्वांश में मध्य व अन्यनवांश में पूर्ण होता है। जो राशि फल प्रथम देखे व पूर्व में आचार्यों ने कहे उनका निरोध तब होता है कि जब राशीश से नवांश पति बली हो अर्थात् राशि फल न होकर नवांश का फल होता है। राशिस्थ चन्द्रमा का फल पूर्ण प्राप्त न होने से चन्द्रमा के नवांशस्थ फलों को देख कर ही वृद्ध यवनाचार्यों ने इन फलों का वर्णन किया है ॥ २२–२४ ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां अंशकदर्शने
चन्द्रचारो नाम चतुर्विशोऽध्यायः ॥

पञ्चविंशोऽध्यायः

मेष राशिस्थ भौम का फल

तेजस्वी सत्ययुतः शूरः क्षितिपोऽथवा रणश्लाघी ।
साहसकर्माभिरतश्चमूपुरग्रामवृन्दपतिः ॥ १ ॥
राभसिको दानरतः प्रभूतगोऽजाविधान्य[2]करः ।
भौमे क्रिये प्रचण्डो बहुयुवतिरतो भवेत्पुरुषः ॥ २ ॥

---

[1] नवांशकेन्दुदृष्टिफलं । [2] जनः ।

यदि जन्माङ्ग में मेष राशि में मङ्गल हो तो जातक—तेजस्वी, सत्यभाषी, वीर, राजा वा युद्धाकाङ्क्षी, साहसी, कार्य तत्पर, सेना-पुर-गाँव-या जनसमुदाय का स्वामी, प्रसन्नचित्त, दानी, अधिक गाय-बकरी भेड़ व अन्न का संग्रह करने वाला, उग्र व अधिक स्त्रियों में लीन होता है ।। १–२ ।।

वृष राशि में भौम का फल

साध्वीव्रतभङ्गकरः[1] प्रभाषणो[2] मन्दधनपुत्रः ।
द्वेष्यो बहुभरणपरो विस्रम्भस्थितिविहीनश्च ।। ३ ।।
प्रोद्धतवेषक्रीडो बहुदुष्टवचाः कुजे वृषभसंस्थे ।
सङ्गीतरतः पापो बन्धुविरुद्धः कुलोत्सादी ।। ४ ।।

यदि जन्माङ्ग में वृष राशि में मङ्गल हो तो जातक—पतिव्रता स्त्री के व्रत का नाशक, अधिकभाषी, अल्प धन व पुत्र से युत, द्रोह कर्त्ता, अधिक लोगों के पालन में लीन, अविश्वासी, उद्दण्डता के वेष से खेलने वाला अर्थात् उद्दण्ड, अधिक अप्रिय भाषी, गान विद्या में लीन, पापी, बन्धुजन विरोधी और कुल (परिवार) में कलङ्की होता है ।। ३–४ ।।

मिथुनस्थ भौम का फल

कान्तः क्लेशसहिष्णुर्बहुश्रुतः काव्यविधिनिपुणः ।
नानाशिल्पकलासु च निपुणो बहुशो विदेशगमनरतः ।। ५ ।।
धर्मपरो निपुणमतिर्हितानुकूलः सुतेषु सुहृदां च ।
मिथुनस्थे क्षितिपुत्रे भवति प्रचुरक्रियासु रतः ।। ६ ।।

यदि जन्माङ्ग में मिथुन राशि में भौम हो तो जातक—सुन्दर, कष्ट सहन कर्त्ता, बहुत विषयों का ज्ञाता, काव्य रचना में चतुर, अनेक शिल्प (कारीगरी) कलाओं में कुशल, अधिक परदेश गमन में लीन, धर्मात्मा, सुन्दर बुद्धिमान्, पुत्र व मित्रों का शुभ-चिंतक व अनुकूल एवं अधिक कार्यों में लीन होता है ।। ५–६ ।।

कर्कस्थ भौम का फल

परगृहनिवासशीलो वैकल्यरुगर्दितः कृषिधनश्च ।
बाल्ये च राजभोजनवस्त्रेप्सुः परगृहान्नाशी ।। ७ ।।
सलिलाशयतो धनवान् पुनः पुनर्वृद्धिवेदनार्तश्च ।
कर्कटके क्षितितनये भवति मृदुः सर्वतो दीनः ।। ८ ।।

यदि जन्माऽङ्ग में कर्क राशि में भौम हो तो जातक—दूसरे के घर में रहने वाला, रोग पीड़ा से विकल, खेती से धनी, बालकपन में उत्तम (राजतुल्य) भोजन व वस्त्र

---

[1] रतः । [2] प्रभक्षणो ।

की इच्छा करने वाला, दूसरे के घर में खाने वाला, जलाशय से धनी, बार-बार बढ़ने की वेदना से दुःखी, सरल व सब से दीन होता है ॥ ७-८ ॥

सिंहस्थ भौम का फल

असहः प्रचण्डशूरः परस्वसन्तानसङ्ग्रहणशीलः ।
अटवीनिवासगोकुलमांसरुचिः स्यान्मृतप्रथमदारः ॥ ९ ॥
व्यालमृगोरगहन्ता न पुत्रवान् धर्मफलहीनः ।
भौमे हरौ सुसत्वः क्रियोद्यतः स्याद्वपुष्मांश्च ॥ १० ॥

यदि जन्माऽङ्ग में सिंहस्थ भौम हो तो जातक—असहनशील, प्रतापी, वीर, दूसरे के धन व सन्तति का संग्रहकर्त्ता, जङ्गल निवासी, गौ मांस में इच्छा रखने वाला, प्रथम पत्नी से हीन, मत्त सिंह वा हाथी–हरिण व सर्प को मारने वाला, पुत्र हीन, धर्मफल से रहित, बलवान् व कार्यों में तत्पर होता है ॥ ९–१० ॥

कन्या राशिस्थ भौम का फल

पूज्यः सतामतिधनो रतिगीतधनो मृदुप्रियाभाषी ।
विविधव्ययोऽल्पशौर्यो विद्वान् [1]भवति प्रणीतपार्श्वश्च ॥११॥
अहितेभ्योऽर्ज[2]नभीरुर्वेदस्मृतिधर्मवान् सुबहुशिल्पः ।
कन्यायां भूतनये स्नानविलेपनरतः कान्तः ॥ १२ ॥

यदि जन्माऽङ्ग में कन्या राशि में मङ्गल हो तो जातक—सज्जनों में पूजनीय, अतिधनी सुरत व सङ्गीत को ही धन मानने वाला, मनोहर व प्रियवादी, अनेक व्यर्थ अर्थात् बहुत खर्चा करने वाला, अल्पबली, पण्डित, मजबूत पसुली वाला, शत्रुओं से अधिक डरने वाला, श्रुति धर्म का मानने वाला, सुन्दर, अधिक शिल्पज्ञ, स्नान व चन्दन वा पाउडर लगाने में तत्पर और सुन्दर होता है ॥ ११–१२ ॥

तुलाराशिस्थ भौम का फल

अध्वनिरतः [3]कुपण्यप्रसक्तवाक्यो विकत्थनः सुभगः ।
हीनाङ्गः स्वल्पजनः सङ्ग्रामेप्सुः परोपभोगी च ॥१३॥
योषिद्गुरुमित्राणां[4] मनोरमो नष्टपूर्वदारश्च ।
शौण्डिकवेश्यानिकटे सम्प्राप्तधनक्षयस्तुलिनि भौमे ॥१४॥

यदि जन्माऽङ्ग में तुला राशि में भौम हो तो जातक—पर्यंटनशील, दूषित व्यापार में आसक्त वाणी वाला, वक्ता, विशेष सुन्दर, किसी अङ्ग से हीन, अल्प परिवार वाला युद्धेच्छु, दूसरे की वस्तु का उपभोग (उपयोग) कर्त्ता, स्त्री-गुरू व मित्रों का प्रेमी,

---

१ वह्नि । २ अधिकभीरुः । ३ सुपण्य । ४ पुत्राणां ।

प्रथम स्त्री से रहित, मद्य बेचने वाले व वेश्या के सम्पर्क से प्राप्त धन का नाशक होता है ।। १३–१४ ।।

वृश्चिक राशिस्थ भौम का फल

व्यापारश्रुतिसत्यश्चोरसमूहाधिपः क्रियानिपुणः ।
युद्धोत्सुकोऽतिपापो बह्वपराधी च वैरशठः ।।१५।।
द्रोहवधाहितबुद्धिः प्रसूचको भूमिपुत्रयुवतीशः ।
वृश्चिकगे भूपुत्रे विषाग्निशस्त्रव्रणैस्तक्तः ।।१६।।

यदि जन्माऽङ्ग में वृश्चिक राशि में भौम हो तो जातक—व्यवसायिक बातों में वेद-तुल्य सत्यता का आचारी, चोर समुदाय का स्वामी, कार्य-चतुर, सङ्ग्राम प्रिय, अत्यन्त-पापी, अधिक अपराधी, शत्रुओं को दुष्ट, द्वेष-हिंसा-अकल्याण में बुद्धि रखने वाला, चुगल-खोर, भूमि-पुत्र-स्त्री का स्वामी अर्थात् पालक, विष (जहर) अग्नि-शस्त्र-व घाव से पीडित होता है ।। १५–१६ ।।

धनु राशिस्थ भौम का फल

बहुभिः क्षतैः कृशाङ्गो निष्ठुरवाक्यः शठः पराधीनः ।
रथगजपदातियोधी रथेन शरधारकोऽथ परसैन्ये ।।१७।।
विपुलश्रमैश्च सुखितः परस्परं क्रोधनष्टसुखवित्तः ।
कार्मुकसंस्थे वक्रे गुरुष्वसक्तः[1] पुमान् भवति ।।१८।।

यदि जन्माऽङ्ग में धनु राशि में भौम हो तो जातक—अधिक आघातों से दुर्बल शरीरधारी, कटुभाषी, दुष्ट, पराधीन, रथ-हाथी-व-पैदल युद्ध कर्त्ता, रथ से दूसरे की सेना पर तीर चलाने वाला, अधिक मेहनत से सुखी, आपस में क्रोध करने से धन व सुख का नाशक तथा गुरुजनों में असक्त, वा गुरुजनों का अभक्त होता है ।। १७–१८ ।।

मकर राशिस्थ भौम का फल

धन्यो वित्ताहर्ता सुखभोगसमन्वितो भवति सुस्थः ।
श्रेष्ठमतिः प्रख्यातः सेनानाथो नरेन्द्रो वा ।।१९।।
[2]सद्युवतीरणविजयी स्वबन्धुविषयस्थितः स्वतन्त्रश्च ।
आरक्षकः सुशीलः कुजे स्वतुङ्गे बहूपचाररतः ।।२०।।

यदि जन्माऽङ्ग में मकर राशि में अर्थात् अपनी उच्चराशि में भौम हो तो जातक—धन्यवाद का पात्र, धनसङ्ग्रही, सुख व भोग से युत, स्वस्थ, सुन्दर बुद्धिमान्, प्रसिद्ध,

---

१ सत्यः । २ सद्यः प्रतिरणविजयी ।

सेनापति वा राजा, सुशीला स्त्री का पति, युद्ध में विजयी, अपने देश का वासी, स्वतन्त्र, रक्षक, सुशील व अधिक उपचारों में लीन होता है ॥ १९–२० ॥

कुम्भ राशिस्थ भौम का फल

प्रश्रयशौचविहीनो वृद्धाकारः सुदुर्गतिर्मरणे ।
मात्सर्यासूयानृतवाग्दोषैरपहृतार्थश्च ॥२१॥
रोमशगात्रो विकृतो द्यूताद्याहृतधनः कुवेषधरः ।
दुःखसमाहृतवृत्तिः पानरुचिर्दुर्भगः कुजे कुम्भे ॥२२॥

यदि जन्माऽङ्ग में कुम्भ राशि में भौम हो तो जातक––नम्रता व पवित्रता से रहित, वृद्धाकृति, मरण समय में कुगतिवाला, ईर्ष्या निन्दा झूठ बोलने के दोषों से धन नष्ट कर्त्ता, अधिक रोम से युत देहधारी, विकृति, जुआ में धन हारने वाला, कुत्सित वेषधारी, दुःखी, मद्यपीने वाला एवं भाग्यहीन होता है ॥ २१–२२ ॥

मीन राशिस्थ भौम का फल

रोगार्तो मन्दसुतः प्रवासशीलः स्वबन्धुपरिभूतः ।
मायावञ्चनदोषैर्हृतसर्वस्वो विषादी च ॥ २३ ॥
जिह्मोऽतितीक्ष्णशोको गुरुद्विजावज्ञकः सदा हीनः ।
ईप्सितवेत्ता ज्ञाता स्तुतिप्रियोऽन्त्ये कुजे ख्यातः ॥ २४ ॥

. यदि जन्माऽङ्ग में मीन राशि में भौम हो तो जातक—रोग से पीडित, अल्प पुत्र वाला, परदेशवासी, अपने बन्धुओं से तिरस्कृत, कपट व धूर्तता के दोष से सर्वस्व को नष्ट करने वाला, विषाद से युक्त, कुटिल, अतितीव्रशोकसे युत, गुरुजन व ब्राह्मणों का अनादर करने वाला, सर्वदा हीन बुद्धि वाला, इच्छित वस्तु का जानने वाला, ज्ञानी, प्रशंसा प्रिय व विख्यात होता है ॥ २३–२४ ॥

स्वराशिस्थ (मेष-वृश्चिक) भौम पर ग्रहों की दृष्टि के फल

धनदारपुत्रवन्तं नृपसचिवं दण्डनायकं ख्यातम् ।
नृपतिमुदारं कुरुते दिनेश्वरनिरीक्षतः कुजः स्वर्क्षे ॥२५॥
मातृरहितं क्षताङ्गं स्वजनद्वेष्यं च मित्ररहितं च ।
स्वगृहेऽसृक् शशिदृष्टः सेर्ष्यं कन्याप्रियं कुरुते ॥२६॥
परधनहरणे निपुणं चानृतकं कामदेवभक्तं च ।
कुरुते स्वभे ज्ञदृष्टो द्वेष्यं वेश्यापतिं भौमः ॥२७॥
प्राज्ञं मधुरं सुभगं मातृपितृवल्लभं धनसमृद्धम् ।
अनुपममीश्वरमाढ्यं त्रिदशगुरुनिरीक्षितोऽवनेः पुत्रः ॥२८॥

स्वगृहेऽसृक् सितदृष्टः स्त्रीहेतोर्बन्धभागिनं कुरुते ।
असकृत् सकृच्च विभवं स्त्रीहेतोरार्जितं [1]चापि ॥२९॥
चोरविघाते शूरं निर्वीर्यं स्वजनपरिहीनम् ।
अन्यस्त्रीभर्तारं जनयति सौरेक्षितः स्वभे भौमः ॥३०॥

यदि जन्माङ्ग में भौम राशिस्थ (मेष वृश्चिक) भौम, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—धनवान्, कलत्र (स्त्री) वान्, पुत्रवान्, राजा का मन्त्री, न्यायाधीश, विख्यात एवं उदार राजा होता है ।

यदि भौम राशिस्थ भौम; चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक—माता से हीन, क्षत शरीरधारी, अपने जनों का द्रोही, मित्र से हीन, ईर्ष्यालु व कन्या-प्रिय होता है ।

यदि भौम राशिस्थ भौम, बुध से दृष्ट हो तो जातक—दूसरे के धन चुराने में चतुर, मिथ्याभाषी, कामी, द्रोही व वेश्या का पति होता है ।

यदि भौम राशिस्थ भौम; गुरू से दृष्ट हो तो जातक—पण्डित, मृदुभाषी, सुन्दर, माता व पिता का प्रियपात्र, धन से युत एवं अनुपम ऐश्वर्यता से युक्त होता है ।

यदि भौम राशिस्थ भौम, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—स्त्री निमित्त से जेल में जानेवाला, एक बार वा अनेक बार स्त्री के कारण धन व सरलता को नष्ट करने वाला होता है ।

यदि भौम राशिस्थ भौम, शनि से दृष्ट हो तो जातक—निर्बल होने पर भी चोर को मारने वाला, अपने जनों से हीन तथा दूसरे की स्त्री का भर्ता (पति) होता है ॥२५–३०॥

॥ स्वर्क्षगतभौमस्य दर्शनफलम् ॥

शुक्र राशिस्थ भौम पर ग्रहों की दृष्टि के फल

वनपर्वतेषु रमते रामाद्विष्टो भवेद्बहुविपक्षः ।
सितभे रविणा दृष्टे प्रचण्डवेषः[2] कुजे धीरः ॥ ३१ ॥
मातुरप[3]थ्यो विषमो [4]बहुयुवतीनां पतिः प्रियस्तासाम् ।
शुक्रगृहे शशिदृष्टे रणभीरुर्जायते भौमे ॥ ३२ ॥
कलहप्रियो [5]मृदुवचा मृदुकायो मन्दपुत्रधनः ।
सितभे भवति च भौमे बुधदृष्टे शास्त्रवित्पुरुषः ॥ ३३ ॥
वादितगीतविधिज्ञः सौभाग्ययुतः स्वबन्धुदयितश्च ।
शुक्रभवने क्षितिसुते दृष्टे गुरुणा भवेत् स्फीतः ॥ ३४ ॥

---

[1] स्त्रीहेतोरार्जवं याति । [2] कोपः । [3] मातुरपक्षो । [4] वेषवधूनां । [5] बहु ।

नृपमन्त्री नृपदयितः सेनानाथः प्रसिद्धनामा च ।
शुक्रगृहे भवति कुजे शुक्रेण निरीक्षिते सुखितः ॥३५॥
सुखभाक्[1] ख्यातो धनवान् मित्रस्वजनैर्युतः कुजे विद्वान् ।
श्रेणिपुरग्रामाणामधिपः सितभे च शनिदृष्टे ॥३६॥

यदि जन्माङ्ग में शुक्र राशिस्थ (वृष-तुला) भौम, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—वन व पहाड़ों में घूमने वाला, स्त्री द्वेषी, अधिक शत्रु वाला, उग्र वेषधारी व धैर्यवान् होता है ।

यदि शुक्र राशिस्थ भौम चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक—माता का अभक्त, विषम स्वभाव वाला, अधिक स्त्रियों का पति एवं प्रेमी, तथा सङ्ग्राम (लड़ाई) में डरपोक होता है ।

यदि शुक्र राशिस्थ भौम, बुध से दृष्ट हो तो जातक—कलह प्रेमी, कोमलभाषी, सुन्दर शरीरधारी, अल्पपुत्र व अल्पधनी तथा शास्त्र का ज्ञाता होता है ।

यदि शुक्र राशिस्थ भौम, गुरू से दृष्ट हो तो जातक—वाद्य व गान की विधि का ज्ञाता, सौभाग्य से युक्त, अपने बन्धुओं का प्रेमी एवं स्वच्छ होता है ।

यदि शुक्र राशिस्थ भौम, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—राजा का मन्त्री, राजा का प्रिय, सेनापति, विख्यात नाम एवं सुखी होता है ।

यदि शुक्रराशिस्थ भौम, शनि से दृष्ट हो तो जातक—सुखी, प्रसिद्ध, धनी, मित्र व अपने जनों से युक्त, पण्डित, पङ्क्ति-नगर व ग्राम का अध्यक्ष होता है ॥३१–३६॥

॥ इति भृगुभे दृष्टिः ॥

बुध राशिस्थ भौम पर ग्रहों की दृष्टि के फल

विद्याधनशौर्ययुतं गिरिवनदुर्गप्रियं महासत्वम् ।
बुधभवने रक्ताङ्गो जनयति दृष्टः सदा रविणा ॥ ३७ ॥
[2]कन्यापुररक्षकरं युवतिपतिं सद्विनीतमतिसुभगम् ।
ज्ञगृहे नृपगृहपालं जनयति चन्द्रेक्षितो भौमः ॥ ३८ ॥
लिपिगणितकाव्यकुशलं बहुभाषिणमनृतमधुरवाक्यं च ।
दूतं बहुदुःखसहं जनयति वक्रो बुधेक्षितो ज्ञर्क्षे ॥ ३९ ॥
राजपुरुषं प्रकाशं [3]दौत्येन विदेशगं नरं कुरुते ।
सर्वक्रियासु कुशलं बुधराशौ नायकं च गुरुदृष्टः ॥ ४० ॥

---

[1] सुखभाग्ययुतो । [2] सुखिनं धनिनं कान्तं कन्यापुररक्षकं युवतिसत्वयुतम् । [3] दैन्येन विदेशगं ।

शुक्रेण दृश्यमानः स्त्रीकृत्यकरं समृद्धसुभगं च।
बुधभवने रक्ताङ्गः कुरुते वस्त्रान्नभोक्तारम् ॥४१॥
आकरगिरिदुर्गरतं कर्षकमतिदुःखभागिनं कुरुते।
[1]अतिशूरमति च मलिनं यमेक्षितो बुधगृहे विभवहीनम् ॥४२॥

यदि कुण्डली में बुध राशिस्थ भौम, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—पण्डित, धनी पराक्रमी, पर्वत-वन-किले का प्रेमी एवं अधिक बलवान् होता है।

यदि बुध राशिस्थ भौम, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक—कन्या नगर का रक्षक, स्त्रियों का अध्यक्ष, सुन्दर नम्रता से युत, सुबुद्धिमान् व राजगृह का रक्षक व सुखी, धनी, मनोहर, कन्यापुर रक्षक, स्त्रैण होता है।

यदि बुध राशिस्थ भौम, बुध से दृष्ट हो तो जातक-लेख-गणित व काव्य में चतुर, अधिक वक्ता, मिथ्या मधुरभाषी, दूत तथा अधिक कष्ट सहन कर्त्ता होता है।

यदि बुधराशिस्थ भौम, गुरू से दृष्ट हो तो जातक—राज पुरुष, तेजस्वी, दूत होकर विदेश जाने वाला, समस्त कार्यों में चतुर व नेता होता है।

यदि बुधराशिस्थ भौम, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—स्त्री का कार्य कर्त्ता, धनी, सुन्दर तथा अन्न वस्त्र भोक्ता होता है।

यदि बुध राशिस्थ भौम, शनि से दृष्ट हो तो जातक-खान-पर्वत-किले में लीन, खेती कर्त्ता, दुःखी, अधिक वीर, अधिक गन्दा एवं ऐश्वर्य से रहित होता है ॥३७-४२॥

॥ इति बुधभवने दृष्टिः ॥

कर्क राशिस्थ भौम पर ग्रहों की दृष्टि के फल

पित्तरुगर्दितदेहस्तेजस्वी दण्डनायको धीरः।
चन्द्रगृहस्थे भौमे दिनकरदृष्टे भवेत्पुरुषः ॥४३॥
बहुभिर्व्याधिभिरार्तो नीचाचारो विरूपदेहश्च।
शशिराशौ भूतनये शशिना दृष्टे सशोकश्च ॥४४॥
मलिनः पापाचारः क्षुद्रकुटुम्बो बहिष्कृतः स्वजनैः।
कर्कटके बुधदृष्टे क्षितितनये भवति निर्लज्जः ॥४५॥
विख्यातो नृपमन्त्री विद्वांस्त्यागान्वितो भवेद्धन्यः।
गुरुदृष्टे शशिभवने भोगैश्च विवर्जितो वक्रे ॥४६॥
[2]स्त्रीसङ्गादुद्विग्नः परिभूतस्त्रीकृतैस्तथा दोषैः।
कर्कटके क्षितिपुत्रे सितदृष्टे स्याद्विपन्नधनः ॥४७॥

---

१ अतिशूरमति मलिनं। २ स्त्रीसङ्गान्नष्टधनः।

[1]जलसंयानो विधनः क्षितिपाल[2]समानललितचेष्टश्च ।
शशिगृहसंस्थे भौमे यमेक्षिते स्यात् सदा कान्तः ॥४८॥

यदि कुण्डली में कर्कराशिस्थ भौम, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—पित्तरोग से पीडित देहधारी, तेजस्वी, न्यायाधीश व धैर्यवान् होता है ।

यदि कर्क राशिस्थ भौम चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक—अधिक रोगों से दुःखी, निम्न आचरण वाला, कुरूप, एवं शोक से युक्त होता है ।

यदि कर्क राशिस्थ भौम, बुध से दृष्ट हो तो जातक—मलिन पापी, नीच परिवार वाला, अपने जनों से बहिष्कृत तथा निर्लज्ज होता है ।

यदि कर्कराशिस्थ भौम, गुरू से दृष्ट हो तो जातक—प्रसिद्ध, राजा का सचिव, पण्डित, त्यागी, धन्य व भोग रहित होता है ।

यदि कर्कराशिस्थ भौम, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—स्त्री के साहचर्य से चिन्तित तथा स्त्री के दोष से तिरस्कृत एवं धनहीन होता है ।

यदि कर्क राशिस्थ भौम, शनि से दृष्ट हो तो जातक—जलयात्रा कर्त्ता, निर्धनी वा जलयात्रा से धन लाभ करने वाला, राजा के समान, सुन्दर इच्छा वाला तथा मनोहर होता है ॥४३–४८॥

॥ इति चन्द्रगृहे दृष्टिः ॥

सिंह राशिस्थ भौम पर ग्रहों की दृष्टि के फल

प्रणतानां हितकारी मित्रैः स्वजनैश्च संयुतश्चण्डः ।
गोकुलवनाद्रिचारी सिंहे भौमे तरणिदृष्टे ॥ ४९ ॥
मातुर्न शुभो मतिमान् कठिनशरीरो विपुलकीर्तिः ।
केसरिभवने भौमे शशिना दृष्टेऽङ्गनाप्रा[3]र्थ्यः ॥ ५० ॥
बहुशिल्पज्ञो लुब्धः काव्यकलालम्पटो विषमशीलः ।
पञ्चमभवने भौमे बुधेन दृष्टेऽतिनिपुणश्च ॥ ५१ ॥
भूपतिसमीपवर्ती विद्याचार्यो विशुद्धबुद्धिश्च ।
अवनिसुते सिंहस्थे गुरुणा दृष्टे चमूनाथः ॥ ५२ ॥
विविधस्त्रीभोगयुतः स्त्रीसुभगो नित्ययौवनो हृष्टः ।
लेयगृहे रक्ताङ्गे सितेन दृष्टे भवेज्जातः ॥ ५३ ॥

---

१ जलसंयानाढ्यधनः ।

२ क्षितिपालसमः पुमान् ललितचेष्टः ।

३ अङ्गनाढ्यार्थः ।

वृद्धाकारो निःस्वः परवेश्मभ्रमणशीलवान् दुःखी।
दिनकरराशौ रुधिरे दिनकरतनयेन संदृष्टे ॥ ५४ ॥

यदि कुण्डली में सिंह राशिस्थ भौम, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—नम्रजनों का हित करने वाला, मित्र व अपने मनुष्यों से युत, उग्र तथा गौशाला-वन-पर्वतों में घूँमने वाला होता है।

यदि सिंहराशिस्थ भौम, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक—माता को अशुभ, बुद्धिमान्, कठोर देहधारी, अधिक यशस्वी तथा स्त्री के द्वारा धनी होता है।

यदि सिंहराशिस्थ भौम, बुध से दृष्ट हो तो जातक—अधिक चित्रकारी का ज्ञाता, लोभी, काव्य-कला जानने में धूर्त, विपरीत स्वभाव वाला तथा अत्यन्त चतुर होता है।

यदि सिंह राशिस्थ भौम गुरू से दृष्ट हो तो जातक—राजा का दरबार करने वाला, विद्या में आचार्य, विशुद्ध बुद्धिमान् व सेनापति होता है।

यदि सिंह राशिस्थ भौम, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—अनेक स्त्रियों का भोगी, स्त्रियों का प्रेमी, सदा जवानी से युत, तथा प्रसन्नचित्त होता है।

यदि सिंह राशिस्थ भौम, शनि से दृष्ट हो तो जातक—वृद्धाकृति, निर्धन, दूसरे के घर में घूँमने वाला एवं दुःखी होता है ॥ ४९–५४ ॥

॥ इति सिंहे दृष्टिः ॥

गुरु राशिस्थ भौम पर ग्रहों की दृष्टि के फल—

लोकनमस्यं सुभगं वनगिरिदुर्गेषु [1]लब्धगृहवासम्।
सुरगुरुभवने भौमः करोति रविणेक्षितः [2]क्रूरम् ॥ ५५ ॥
विकलं कलहप्रायं प्राज्ञं रुधिरः करोति शशिदृष्टः।
विद्वांसं गुरुभवने नृपतिविरुद्धं सदा पुरुषम् ॥ ५६ ॥
मेधाविनं सुनिपुणं शिल्पाचार्यं बुधेन संदृष्टः।
गुरुभवने क्षितितनयः करोति [3]विद्वांसमत्यन्तम् ॥ ५७ ॥
अकलत्रं सुखरहितं रिपुभिरधृष्यं च वित्तवन्तं च।
गुरुभवने गुरुदृष्टो व्यायामपरं कुजः कुरुते ॥ ५८ ॥
कन्यानामतिदयितं चित्रालङ्कारभागिनमुदारम्।
विषयपरमति च सुभगं गुरुभे काव्येक्षितः कुजः कुरुते ॥ ५९ ॥
गुरुभेऽसृक् शनिदृष्टः कुशरीरमुदारमाहवे पापम्।
अटनं [4]सुखलवरहितं परधर्मरतं कुजः कुरुते ॥ ६० ॥

---

[1] सद्गृहावासम्। [2] शूरम्। [3] विकलांसमतिनिपुणम्। [4] सुखधनरहितं।

यदि कुण्डली में गुरुराशिस्थ भौम, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—संसार में पूजनीय, सुन्दर, वन-पर्वत-व किले में रहने वाला तथा क्रूर होता है।

यदि गुरुराशिस्थ भौम, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक—विकल, (अशान्त), कलह प्रेमी, पण्डित, तथा राजा का विरोधी होता है।

यदि गुरुराशिस्थ भौम, बुध से दृष्ट हो तो जातक—मेधावी, अच्छा चतुर, शिल्प में प्रधान तथा अधिक पण्डित होता है।

यदि गुरुराशिस्थ भौम, गुरू से दृष्ट हो तो जातक—स्त्री व सुख से हीन, शत्रुओं से अजेय, धनी तथा कसरत करने वाला होता है।

यदि गुरुराशिस्थ भौम, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—स्त्रियों का अधिक प्रेमी, चित्र ज्ञाता, आभूषण भागी, उदार, विषय में बुद्धि वाला एवं सुन्दर होता है।

यदि गुरुराशिस्थ भौम, शनि से दृष्ट हो तो जातक—कुरूप शरीरधारी, युद्ध में उदार, पापी, पर्यटन कर्त्ता, सुख के अंश से हीन तथा दूसरे के धर्म में तत्पर होता है ॥ ५५–६० ॥

॥ इति गुरुभे दृष्टिः ॥

शनि राशिस्थ भौम पर ग्रहों की दृष्टि के फल—

अतिकृष्णतनुं शूरं योषिदपत्यार्थविस्तरैर्युक्तम्।
सूर्येक्षितोऽतितीक्ष्णं सौरगृहे भूमिजः कुरुते ॥ ६१ ॥
चपलमहितं जनन्या यमभेऽलंकारभागिनमुदारम्।
अस्थिरसौहृदमाढ्यं जनयति चन्द्रेक्षितो वक्रः ॥ ६२ ॥
अतिमधुरगम[1]नमधनं रवितनयगृहे न निर्वृतमसत्वम्।
कापटिकमधर्मपरं जनयति बुधवीक्षितो भौमः ॥ ६३ ॥
[2]अविरूपं मन्दगृहे नृपतिगुणसमन्वितं स्थिरारम्भम्।
दीर्घायुषं क्षमाजो गुरुसंदृष्टः करोति बन्ध्वाप्तम् ॥ ६४ ॥
विविधोपभोगमाढ्यं शनिभे स्त्रीपोषणानुरतमेव।
शुक्रेण दृश्यमानो जनयति कलहप्रियं वक्रः ॥ ६५ ॥
नृपतिमतिवित्तवन्तं युवतिद्वेष्यं बहुप्रजं प्राज्ञम्।
सुखरहितं रणशौण्डं करोति शनिभे शनीक्षितो भौमः ॥ ६६ ॥

यदि कुण्डली में शनि राशिस्थ भौम सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—काले रङ्ग शरीर वाला, वीर, अधिक स्त्री-पुत्र-धन से युक्त एवं अति तीव्र स्वभाव होता है।

---

[1] अतिमधुरमटन। [2] अतिरूपम्।

यदि शनिराशिस्थ भौम चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक—चञ्चल, माता का अकल्याण कारी, आभूषणभागी, उदार चित्त व चल मित्रता वाला होता है।

यदि शनिराशिस्थ भौम बुध से दृष्ट हो तो जातक—अति मीठा चलने वाला, निर्धन, असफल, निर्बल, कपटी व अधर्म में तत्पर होता है।

यदि शनि राशिस्थ भौम, गुरू से दृष्ट हो तो जातक—कुरूप व अतिरूपवान्, राजा के गुणों से युत, स्थिरारम्भी, चिरायु, व बन्धुओं से युक्त होता है।

यदि शनिराशिस्थ भौम, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—अनेक सुखों से युक्त, स्त्री पालन में लीन तथा कलह प्रेमी होता है।

यदि शनिराशिस्थ भौम शनि से दृष्ट हो तो जातक—राजा बुद्धि का, धनी, स्त्री का द्वेषी, अधिक सन्तान वाला, पण्डित, सुख हीन, तथा युद्ध में वीर होता है ॥ ६१–६६ ॥

नोट—बृहज्जातक में पृथक्-पृथक् राशियों में भौम का फल अनुपलब्ध होने से यहाँ पर नहीं दिया गया है ॥ ६१–६६॥

॥ इति शनिभे दृष्टिः ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां अङ्गारकचारो नाम पञ्चविंशोऽध्यायः ॥

षड्विंशोऽध्यायः

मेष राशिस्थ बुध का फल

प्रियविग्रहस्तु वेत्ताचार्यो विटधूर्तचेष्टकृशगात्रः।
सङ्गीतनृत्तनिरतो न सत्यवचनो रतिप्रियो लिपिवित् ॥ १ ॥
कूटकरो बह्वाशी बहुश्रमोत्पन्ननष्टधनः।
बहृणबन्धनभागी चलस्थिरः स्यात् क्रिये बुधे कितवः ॥ २ ॥

यदि जन्म के समय मेष राशिस्थ बुध हो तो जातक—युद्ध प्रिय, ज्ञाता, आचार्य, वञ्चक व धूर्त की चेष्टा (क्रिया) वाला, कृश देह, गान व नाच में लीन, असत्यभाषी, सुरतप्रेमी, लिपि ज्ञाता वा लेखक, नकली वस्तु का कर्त्ता, अधिक भोजनी, अधिक परिश्रम से प्राप्त धन का नाशक, अधिक ऋण व बन्धन (जेल) का भोगने वाला, चञ्चल व स्थिर स्वभाव का तथा ठग होता है ॥ १–२ ॥

वृष राशिस्थ बुध का फल

दक्षः प्रगल्भदाता ख्यातो विज्ञातवेदशास्त्रार्थः।
व्यायामाम्बरभूषणमाल्याभिरतः स्थिरप्रकृतिः ॥ ३ ॥

स्फीतधनस्त्रीसहितः प्रियवल्गुकथो [1]गृहीतवाक्यश्च ।
गान्धर्वहास्यशीलो रतिलोलो वै बुधे वृषभे ॥ ४ ॥

यदि जन्म के समय वृष राशिस्थ बुध हो तो जातक—चतुर, ढीठ, दानी, विख्यात, वेदार्थ का ज्ञाता, कसरत—वस्त्र-अलङ्कार व माला (सुगन्ध) में लीन, स्थिर स्वभाव वाला, उत्तम धन व स्त्री से युक्त, मधुर व मनोहर वाणी, वचन पालक वा गम्भीर वचन, सङ्गीत युक्त, हास्य व सुरत का प्रेमी होता है ॥ ३–४ ॥

मिथुन राशिस्थ बुध का फल

शुभवेषः प्रियभाषी प्रख्यातधनो विकत्थनो मानी ।
प्रोज्झितसुखकोल्परतिर्द्विस्त्रीपुत्रो विवादरतः ॥ ५ ॥
श्रुतिकल्पकलाभिज्ञः कविः स्वतन्त्रः प्रियः प्रदानरतः ।
कर्मठवहुसुतमित्रो नरमिथुनस्थे बुधे भवति ॥ ६ ॥

यदि जन्म के समय मिथुन राशिस्थ बुध हो तो जातक—सुन्दर वेषधारी, मनोहर वचन, प्रसिद्ध धनी, प्रवक्ता, अभिमानी, सुख का त्यागी, लघु रतिमान्, दूसरो स्त्री का पुत्र, विवादी, वेद शास्त्र कला का ज्ञाता, कवि, स्वच्छन्द, प्रेमी, दानी, कर्मठ, व अधिक पुत्र व मित्रों से युत होता है ॥ ५–६ ॥

कर्क राशिस्थ बुध का फल

प्राज्ञो विदेशनिरतः स्त्रीरतिगेयादिसक्तचित्तश्च ।
चपलो बहुप्रलापी स्वबन्धुविद्वेषवादरतः ॥ ७ ॥
स्त्रीवैरान्नष्टधनः कुत्सितशीलो बहुक्रियाभिरतः ।
सुकविः कर्कटसंस्थे स्ववंशकीर्त्या प्रसिद्धश्च ॥ ८ ॥

यदि जन्म के समय कर्क राशिस्थ बुध हो तो जातक—पण्डित, विदेश जाने में लीन, स्त्री रति (प्रसङ्ग) व गानादि में दत्त चित्त, चञ्चल, अधिक बकवादी, अपने बन्धु बान्धवों से द्रोह व विवाद में लीन, स्त्री शत्रुता वश धन का नाशक, कुकर्म में रत, अधिक कार्यों में तत्पर, सुन्दर कवि तथा अपने कुल की कीर्ति से प्रसिद्ध होता है ॥७–८॥

सिंह राशिस्थ बुध का फल

ज्ञानकलापरिहीनो लोकख्यातो न सत्यवाक्यश्च ।
अल्पस्मृतिश्च धनवान् सत्वविहीनः सहजहन्ता ॥ ९ ॥
स्त्रीदुर्भगः स्वतन्त्रो जघन्यकर्मा बुधे भवति[2] पुरुषः ।
प्रेष्योऽप्रजस्तु सिंहे स्वकुलविरुद्धो जनाभिरामश्च ॥ १० ॥

---

[1] गभीर । [2] युवतिरूपः ।

यदि जन्म के समय सिंह राशिस्थ बुध हो तो जातक—ज्ञान व कला से रहित, संसार में प्रसिद्ध, असत्यवादी, अल्प स्मरण शक्ति वाला, धनी, निर्बल, भाईयों का नाशक, स्त्री सुख से हीन, स्वच्छन्द, दुष्कर्मी, सेवक, सन्तान हीन, अपने कुल का विरोधी तथा दूसरों का स्नेही होता है ॥ ९–१० ॥

कन्या राशिस्थ बुध का फल

धर्मप्रियोऽतिवाग्मी चतुरः स्याल्लेख्यकाव्यज्ञः ।
विज्ञानशिल्पनिरतो मधुरः स्त्रीष्वल्पवीर्यश्च ॥ ११ ॥
ज्येष्ठः पूज्यः सुहृदां [1]नानाविनयोपचारवादरतः[2] ।
ख्यातो गुणैरुदारः कन्यायां सोमजे बलवान् ॥ १२ ॥

यदि जन्म के समय कन्या राशिस्थ बुध हो तो जातक—धार्मिक, प्रवक्ता, चतुर, लेखक, काव्य ज्ञाता, विज्ञान व चित्रकारी में लीन, मनोहर, स्त्रियों में अल्पबली बड़ा, पूजनीय, मित्रों के मध्य अनेक विनय उपचार व विवाद में लीन, स्वकीय गुणों से प्रसिद्ध उदार व बलवान् होता है ॥ ११–१२ ॥

तुलाराशिस्थ बुध का फल

शिल्पविवादाभिरतो वाक्चतुरोऽर्थार्थमीप्सितव्ययकृत् ।
नानादिक्पण्यरतिर्विप्रातिथिदेवगुरुभक्तः ॥ १३ ॥
कृतकोपचारकुशलः सुसम्मतो देवभक्तश्च ।
सप्तमभवने शशिजे शठश्चलक्षिप्रकोपपरितोषः ॥ १४ ॥

यदि जन्म के समय तुला राशिस्थ बुध हो तो जातक—चित्रकारी व विवाद में लीन, वाणी से चतुर, धन को इच्छानुसार खर्च करने वाला, अनेक दिशाओं में व्यापार की इच्छा करने वाला, ब्राह्मण-अतिथि-देवता व गुरुजनों का भक्त, किये हुए उपचारों में चतुर, सम्मत, देश का भक्त, धूर्त, चापलूस व जल्दी ही क्रोध व शान्ति धारक होता है ॥ १३–१४ ॥

वृश्चिक राशिस्थ बुध का फल

श्रमशोकानर्थपरः सद्द्वेष्यो त्यक्तधर्मलज्जश्च[3] ।
मूर्खो न साधुशीलो लुब्धो दुष्टाङ्गनारमणः ॥ १५ ॥
पारुष्यदण्डनिरतश्छलकृद्विद्विष्टकर्मसु निरुद्धः ।
ऋणवान्नीचानुरुचिः परवस्त्वादानवान् कीटे ॥ १६ ॥

यदि जन्म के समय वृश्चिक राशिस्थ बुध हो तो जातक—परिश्रमी, शोकयुत व अनर्थ कर्ता, द्रोही, अधर्मी, निर्लज्ज, मूर्ख, क्रूर स्वभावी, लोभी, दुष्ट स्त्री भोक्ता कठोर दण्ड में लीन, छलिया (कपटी), नीच कार्यों में लीन, ऋणी, अधम जनों में प्रीति व दूसरों की वस्तु को लेने वाला होता है ॥ १५–१६ ॥

---

१ मानी । २ दार । ३ वर्जश्च ।

धनु राशिस्थ बुध का फल

विख्यातोदारगुणः शास्त्रश्रुतिशौर्यशीलसमधिगतः[१] ।
मन्त्री पुरोहितो वा कुलप्रधानो महापुरुषः[२] ॥ १७ ॥
यज्ञाध्यापननिरतो मेधावी वाक्पटुर्व्रती दाता ।
लिपिलेख्यदानकुशलः[३] कार्मुकसंस्थे बुधे जातः ॥ १८ ॥

यदि जन्म के समय धनु राशिस्थ बुध हो तो जातक—प्रसिद्ध, उदार, गुणी, स्मृति व वेद का ज्ञाता, वीर शीलता से युत, मन्त्री वा पुरोहित, कुल में प्रधान, महापुरुष वा बड़ाधनी, यज्ञ व पढ़ाने में तत्पर, बुद्धिमान्, वाक्चतुर, व्रती, दानी, लिपि कर्ता वा लेखक एवं दान में चतुर वा व्याकरण शास्त्र में चतुर होता है॥१७-१८॥

मकर राशिस्थ बुध का फल

नीचो मूर्खः षण्ढः परकर्मकरः कुलादिगुणहीनः ।
नानादुःखपरीतः स्वप्नविहारादिशीलश्च ॥ १९ ॥
पिशुनस्त्वसत्यचेष्टो बन्धुविमुक्तोत्यसंस्थितात्मा च ।
मलिनो भयसञ्चलितो निष्ठो[४] मकरे बुधे पुरुषः ॥ २० ॥

यदि जन्म के समय मकर राशिस्थ बुध हो तो जातक—अधम, मूर्ख, नपुंसक, दूसरों के कार्य का कर्ता, कुल के गुणों से रहित, अनेक दुःखों से युक्त, सोने (शयन) व घूँमने वाला, चुगलखोर, असत्यवादी, बन्धुओं से त्यक्त, अति अस्थिर आत्मा का, मलिन व डरपोक होता है ॥ १९–२० ॥

कुम्भ राशिस्थ बुध का फल

वाग्बुद्धिकर्मनिरतः[५] प्रकीर्णधर्मार्थ [६]वर्जविहितार्यः[७] ।
परपरिभूतो न शुचिः शीलविहीनस्तथाऽज्ञश्च[८] ॥ २१ ॥
अतिदुष्टदारशत्रुभोगैस्त्यक्तो घटे विवाग्भवति ।
अतिदुर्भगोऽतिभीरुः क्लीबो मलिनो विधेयश्च ॥ २२ ॥

यदि जन्म के समय कुम्भराशिस्थ बुध हो तो जातक—वाणी-बुद्धिकर्म (कार्य) में लीन वा हीन, अनेक धर्म में तत्पर, कृत कार्य का त्यागी, शत्रु से पीडित, अपवित्र, शालीनता से रहित, मूर्ख, अत्यन्त दुष्टा स्त्री का रिपु, अभोगी, गूँगा, अधिक भाग्यहीन अधिक डरपोक, नपुंसक, अधम एवं दूसरे की आज्ञा का पालक होता है ॥ २१–२२ ॥

मीन राशिस्थ बुध का फल

आचारशौचनिरतो देशान्तरगोऽप्रजो दरिद्रश्च ।
शुभयुवतिः कृतिसाधुः सतां च सुभगो विधर्मरतः ॥ २३ ॥
सूच्यादिकर्मकुशलो [९]विज्ञानश्रुतिकलावियुक्तश्च ।
परधनसंचयदक्षो मीने शशिजेऽधनः प्रकीर्णश्च ॥ २४ ॥

---

[१] शिल्प। [२] विभव। [३] शब्द, शास्त्र। [४] दिष्टो। [५] रहित। [६] लज्ज। [७] विहितात्मा। [८] कलाज्ञश्च। [९] विज्ञातः।

यदि जन्म के समय मीन राशिस्थ बुध हो तो जातक—सदाचारी, पवित्र, विदेशवासी, सन्तति से हीन, दरिद्री, पतिव्रता स्त्री का पति, कार्य चतुर, सज्जनों का प्रेमी, अन्य धर्म में तत्पर, (विधर्मी), सिलाई के कार्य में निपुण, विज्ञान-वेद—कला से हीन, दूसरे के धन संग्रह में चतुर, निर्धन व मिला जुला होता है ॥ २३–२४ ॥

भौम राशिस्थ (मेष वृश्चिक) बुध पर ग्रहों की दृष्टि के फल

सत्यवचनं सुखाढ्यं भूपतिसत्कारसत्कृतं मनुजम् ।
कुरुते बुधोऽर्कदृष्टो बन्धुजने सुक्षमं कुजभे ॥ २५ ॥
रजनीकरेण दृष्टो युवतिजनमनोहरं क्षितिजराशौ ।
अतिसेवकमतिमलिनं चन्द्रसुतो हीनशीलं च ॥ २६ ॥

अनृतप्रियं सुवाक्यं कलहसमेतं च पण्डितं कुजभे ।
जनयति कुजेन दृष्टः प्रचुरधनं क्षितिपवल्लभं शूरम् ॥ २७ ॥
सुखिनं कुजभे शशिजः स्निग्धाङ्गं रोमशं सुकेशं च ।
जीवेक्षितोऽतिधनिनं जनयत्याज्ञापकं[1] पापम् ॥ २८ ॥
नृपकृत्यकरं सुभगं गणनगरपुरोगमं चतुरवाक्यम् ।
प्रत्यर्यिकं[2]सितदृष्टः कुजभे स्त्रीसंयुतं[3] शशिजः ॥ २९ ॥

रुधिरगृहे शनिदृष्टो हिमकिरणसुतोऽतिदुःखितं जनयेत् ।
उग्रं हिंसाभिरतं कुलजनहीनं नरं नित्यम् ॥ ३० ॥

यदि जन्म के समय भौमराशिस्थ बुध, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—सत्यवादी, सुखी, राजा से सम्मानित तथा बन्धुजनों में क्षमाशील होता है ।

यदि भौमराशिस्थ बुध, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक - स्त्रीजन का प्रिय, अत्यन्त सेवक, अत्यन्त दूषित व शीलता से रहित होता है ।

यदि भौमराशिस्थ बुध, भौम से दृष्ट हो तो जातक—मिथ्याभाषी, सुन्दर वक्ता, कलह से युत, विद्वान्, बहु धनी, राजा का प्रिय व वीर होता है ।

यदि भौम राशिस्थ बुध, गुरु से दृष्ट हो तो जातक—सुखी, चिकनी देह व रोम से युत, सुन्दर केशधारी, अधिक धनी, आज्ञा (आदेश) कर्त्ता व पापी होता है ।

यदि भौम राशिस्थ बुध, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—राजा का कार्य कर्त्ता, सुन्दर, समूह या नगर का (मण्डल) अध्यक्ष, वाणी में निपुण, विश्वासी व स्त्री से युत होता है ।

यदि भौमराशिस्थ बुध, शनि से दृष्ट हो तो जातक—अत्यन्त दुःखी, उग्र, हिंसक व अपने कुटुम्बियों से रहित होता है ॥ २५–३० ॥

॥ इति कुजभे दृष्टिः ॥

---

[1] रतं । [2] प्रत्ययिनं । [3] युजं ।

शुक्र राशिस्थ (वृष-तुला) बुध पर ग्रहों की दृष्टि के फल

दारिद्र्यदुःखतप्तं व्याधितदेहं परोपचाररतम् ।
दिनकरदृष्टः सौम्यः कुरुते जनधिक्कृतं सितभे ।। ३१ ।।
प्रत्ययितं धनवन्तं दृढभक्तिमरोगिणं दृढकुटुम्बम् ।
ख्यातं नरेन्द्रसचिवं ज्ञश्चन्द्रनिरीक्षतः सितभे ।। ३२ ।।
व्याधिभिररिभिर्ग्रस्तं क्लिष्टं भूपावमानसन्तप्तम् ।
जनयति [1]विदसृग्दृष्टो बहिष्कृतं सर्वविषयेभ्यः ।। ३३ ।।
प्राज्ञं गृहीतवाक्यं देशपुरश्रेणिनायकं ख्यातम् ।
त्रिदशगुरुदृष्टमूर्तिर्जनयति सौम्यः सितगृहस्थः ।। ३४ ।।
सुभगं ललितं सुखिनं वस्त्रालङ्कारभोगिनं सितभे ।
हृदयहरं कन्यानां कुरुते शुक्रेक्षितः सौम्यः ।। ३५ ।।
शुक्रगृहेऽर्कजदृष्टः सुखरहितं बन्धुशोकसंक्लिष्टम् ।
व्याधितमनर्थबहुलं सौम्यः कुरुते नरं मलिनम् ।। ३६ ।।

यदि जन्म के समय शुक्र राशिस्थ बुध, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—दरिद्रता रूपी दुःख से पीड़ित, रोगी, दूसरे के कार्य में तत्पर व संसार में निन्दनीय होता है ।

यदि शुक्र राशिस्थ बुध, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक—विश्वासी, धनी, स्थिर भक्तिमान्, नीरोग, स्थिर परिवारी, विख्यात व राजा का मन्त्री होता है ।

यदि शुक्र राशिस्थ बुध, भौम से दृष्ट हो तो जातक—रोगों से व शत्रुओं से पीड़ित, क्रूर राजा के अपमान से दुःखी, तथा समस्त विषयों से बाहर होता है ।

यदि शुक्र राशिस्थ बुध, गुरु से दृष्ट हो तो जातक—पण्डित, वचन का पालक, देश-पुर-पंक्ति का नेता व विख्यात होता है ।

यदि शुक्र राशिस्थ बुध, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—सौभाग्यवान्, सुन्दर, वस्त्र व आभूषण का भोगी एवं कन्याओं के हृदय का चोर होता है ।

यदि शुक्र राशिस्थ बुध, शनि से दृष्ट हो तो जातक—सुख से रहित, बन्धु शोक से निपीड़ित, रोगी, अधिक अनर्थी व मलिन होता है ।। ३१-३६ ।।

इति शुक्रगृहे दृष्टिः

बुधराशिस्थ (मिथुन, कन्या) बुध पर ग्रहों की दृष्टि के फल

अवितथकथनं मधुरं नृपवल्लभमीश्वरं ललितचेष्टम् ।
दयितं करोति लोके रविणा दृष्टो बुधः स्वगृहे ।। ३७ ।।
सुमधुरमतिवाचाटं कलहरतं [2]शास्त्रवत्सलं सुदृढम् ।
जनयति शशिना दृष्टो बुधः शुभं सर्वकार्येषु ।। ३८ ।।
[3]विक्षतगात्रं मलिनं प्रतिभायुक्तं नरेन्द्रभृत्यं च ।
वल्लभमतीव कुरुते स्वगृहे रुधिरेण सन्दृष्टः ।। ३९ ।।

---

१ बुधोऽसृग्दृष्टः. २ शस्त्रवत्सलं. ३ अविहतगात्रं.

पार्थिवमन्त्रिणमग्र्यं प्रतिरूपमुदारविभवपरिवारम् ।
यूपध्वजेन दृष्टो जनयति शूरं स्वभे सौम्यः ॥ ४० ॥
प्राज्ञं नरेन्द्रभृत्यं दूतं वा सन्धिपालकं शशिजः ।
स्वगृहे सितेन दृष्टो जनयति नीचाङ्गनासक्तम् ॥ ४१ ॥
सततोत्थितं विनीतं सफलारम्भं परिच्छदसमृद्धम् ।
सौम्यः स्वगृहे दृष्टो रविजेन नरं सदा कुरुते ॥ ४२ ॥

यदि जन्म के समय बुधराशिस्थ बुध, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—सत्यभाषी, मनोहर, राजा का प्रिय या राजा, सुन्दर इच्छा वाला व दयालु होता है ।

यदि बुधराशिस्थ बुध, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक—सुन्दर मीठा अधिक बोलने वाला, कलही, शास्त्र का प्रेमी, सबल व समस्त कार्यों में निपुण होता है ।

यदि बुधराशिस्थ बुध, भौम से दृष्ट हो तो जातक—भग्नदेहधारी, मलिन, प्रतिभा से युक्त अर्थात् प्रतिभाशाली व राजा का अधिक प्रिय सेवक होता है ।

यदि बुध राशिस्थ बुध, गुरू से दृष्ट हो तो जातक—राजा का सचिव, श्रेष्ठ, स्वरूपवान्, उदार, धन व परिवार से युत व वीर होता है ।

यदि बुध राशिस्थ बुध, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—विद्वान्, राजा का नौकर वा राजदूत, मित्रता का रक्षक तथा दुष्टा स्त्री में आसक्त होता है ।

यदि बुधराशिस्थ बुध, शनि से दृष्ट हो तो जातक—उन्नति कर्त्ता, विनयी, कार्य सिद्धि करने वाला तथा धन-अन्न-वस्त्र से संपन्न होता है ॥३७-४२॥

इति स्वगृहे दृष्टिः

कर्क राशिस्थ बुध पर ग्रहों की दृष्टि के फल

रजकं मालाकारं गृहवास्तुज्ञं तथा च मणिकारम् ।
जनयति रविणा दृष्टो बुधो गृहं शिशिरगोश्च गतः ॥ ४३ ॥
युवतिविनाशितसारं युवतिनिमित्तं च दुःखितशरीरम् ।
कर्कटके शशिदृष्टो जनयति सुखवर्जितं सौम्यः ॥ ४४ ॥
स्वल्पश्रुतम[1]तिमुखरं प्रियानृतं कूटकारिणं चोरम् ।
वक्रेक्षितः शशिगृहे कुरुते सौम्यः प्रियालापम् ॥ ४५ ॥
मेधाविनमतिदयितं भाग्ययुतं वल्लभं नरेन्द्राणाम् ।
गुरुणा दृष्टः शशिभे विद्यानां पारगं बुधः कुरुते ॥ ४६ ॥
कन्दर्पसदृशरूपं प्रियंवदं गीतवादनविधिज्ञम् ।
सुभगं शशिभे ललितं कुरुते शुक्रेक्षितः सौम्यः ॥ ४७ ॥
दम्भरुचिं पापरतं बन्धनभाजं गुणैर्वियुक्तं ज्ञः ।
द्वेष्यं सहजाचार्यैः कुरुते सौरेक्षितः शशिभे ॥ ४८ ॥

यदि जन्म के समय कर्क राशिस्थ बुध, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—धोबी, माली, घर (मकान) बनाने वाला तथा मणि कर्त्ता होता (सुनार) है ।

---

[1] मधुरं ।

यदि कर्कराशिस्थ बुध चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक—स्त्री के कारण बल का नाशक, स्त्री के कारण पीडित देहधारी तथा सुख-से रहित होता है।

यदि कर्क राशिस्थ बुध, भौम से दृष्ट हो तो जातक—अल्पविद्यावान्, अधिक बोलने वाला व अधिक सुन्दर (मनोहर), मधुर असत्यभाषी, नकली वस्तु बनाने वाला, चोर एवं प्रियभाषी होता है।

यदि कर्क राशिस्थ बुध गुरू से दृष्ट हो तो जातक—मेधावी (बुद्धिमान्) अधिक दयालु, भाग्यवान्, राजा का प्रिय तथा पूर्ण विद्वान् होता है।

यदि कर्क राशिस्थ बुध शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—कामदेव के समान रूपवान्, प्रियभाषी, गाने बजाने की विधि का ज्ञाता, भाग्यवान् व सुन्दर होता है।

यदि कर्क राशिस्थ बुध शनि से दृष्ट हो तो जातक—आडम्बर में इच्छा करने वाला अर्थात् पाखण्डी, पापी, जेल भोगी, गुणहीन, भाई व गुरुजनों का द्रोही होता है।४३-४८।

इति कर्कटके दृष्टिः

सिंह राशिस्थ बुध पर ग्रहों की दृष्टि के फल

[1]सेव्यं दिनकरदृष्टो धनगुणवृद्धं नरं बुधः कुरुते।
हिंस्रं क्षुद्रं सिंहे चञ्चलभाग्यं[2] विगतलज्जम्॥ ४९॥
रूपान्वितमतिचतुरं काव्यकलागेयनृत्तरतिसिंनभे।
धनिनं सुशीलवेषं कुरुते चन्द्रेक्षितः सौम्यः॥ ५०॥
ज्ञो नीचं रविभवने दुःखार्तं [3]विक्षताङ्गसमरूपम्।
अचतुरलीलाकान्तं नपुंसकं भौमसन्दृष्टः॥ ५१॥
सुकुमारमतिप्राज्ञं रविभे वागीश्वरं [4]त्वतिख्यातम्।
परिचारवाहनयुतं कुरुते गुरुवीक्षितः सौम्यः॥ ५२॥
अतिशयरूपं ललितं प्रियंवदं वाहनाढ्यमतिधीरम्।
जनयति सितेन दृष्टो मन्त्रिणमथ पार्थिवं सिंहे॥ ५३॥
व्यायतगात्रं रूक्षं [5]सुविरूपं स्वेदनोग्रगन्धं च।
अतिदुःखितं रविगृहे जनयति सुखवर्जितं रविजदृष्टः॥५४॥

यदि जन्म के समय सिंहराशिस्थ बुध, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—सेवा करने के योग्य वा ईर्ष्यालु, धनी, गुणी, हिंसक, क्षुद्र (अल्प), अस्थिर भाग्यवान् वा अस्थिर स्वभाव वाला एवं निर्लज्ज होता है।

यदि सिंहराशिस्थबुध चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक—रूपवान्, अतिचतुर (कुशल) काव्य-कला-गान-व नाच में प्रेम रखने वाला, धनी व सुशील वेषधारी होता है।

यदि सिंहराशिस्थ बुध, भौम से दृष्ट हो तो जातक—दुष्ट, दुःख से पीडित, भग्नदेहधारी, समान रूपवान्, चतुरता से रहित, लीला में सुन्दर व नपुंसक होता है।

यदि सिंहराशिस्थ बुध, गुरू से दृष्ट हो तो जातक—कोमल देहधारी, अति पण्डित, भाषण में प्रधान, प्रसिद्ध, सेवक व वाहन से युक्त होता है।

---

[1] सेर्ष्यं। [2] भावं। [3] कल्पिताङ्ग। [4] च विख्यातम्। [5] शुचिरूपं।

यदि सिंहराशिस्थ बुध, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—अधिक स्वरूपवान्, मनोहर, प्रियभाषी, वाहन (सवारी) से युत, अधिक धैर्यवान् तथा राजा का सचिव होता है।

यदि सिंहराशिस्थ बुध, शनि से दृष्ट हो तो जातक—लम्बे कद (आकार) का, कान्तिहीन, कुरूप वा पवित्र, पसीने की उत्कृष्ट गन्ध से युत, अतिदुःखी तथा सुख से हीन होता है ।।४९-५४।।

गुरु राशिस्थ (धनु, मीन) बुध पर ग्रहों की दृष्टि के फल

शूरं प्रमेहपीडितमश्मर्योपहतमातुरं शान्तम् ।
जनयति रविणा दृष्टो जीवगृहे चन्द्रजः पुरुषम् ।।५५।।
लेखकमतिसुकुमारं प्रत्यर्थि[१]तं संमतं गुरुगृहस्थः ।
सुखभागिनमत्याढ्यं कुरुते चन्द्रेक्षितः सौम्यः ।।५६।।
श्रेणीभृतिनगराणां चोराणां विपिनवासिनां चापि ।
कुरुते लिपिकरमधिपं सौम्यो गुरुमन्दिरे रुधिरदृष्टः ।।५७।।
स्मृतिमतिकुलसम्पन्नं गुरुभे प्रतिरूपमार्यविज्ञानम् ।
नृपमन्त्रकोशपालं लिपिकरमिह वीक्षितो गुरुणा ।।५८।।
कन्याकुमारकाणां लेख्याचार्यं धनान्वितं कुरुते ।
गुरुभे भृगुसुतदृष्टः सुकुमारं शौर्यसंयुतं शशिजः ।।५९।।
दुर्गारण्याभिरतं बह्वशनं दुष्टशीलमतिमलिनम् ।
कुरुते रविसुतदृष्टो बुधो नरं सर्वकार्यविभ्रष्टम् ।।६०।।

यदि जन्म के समय गुरुराशिस्थ बुध, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—वीर, प्रमेह व मिर्गी रोग से पीड़ित तथा शान्त स्वभाव का होता है।

यदि गुरुराशिस्थ बुध, चन्द्रमा से दृष्ट हो जातक—लेखक अधिक सुन्दर कोमल, विश्वस्त, लोकप्रिय, सुखी व अधिक धनी होता है।

यदि गुरुराशिस्थ बुध; भौम से दृष्ट हो तो जातक—मजदूर बस्तियों-चोरों व वन वासियों का अध्यक्ष तथा लेखक होता है।

यदि गुरुराशिस्थ बुध, गुरू से दृष्ट हो तो जातक—स्मरण शक्तिवाला, कुलीन, सुन्दर, श्रेष्ठ वैज्ञानिक, राजा का सचिव व कोषध्यक्ष तथा लेखक होता है ।

यदि गुरुराशिस्थ बुध, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—बालिका व बालकों को पढ़ाने वाला, धनी, सुकुमार तथा पराक्रम से युत होता है।

यदि गुरुराशिस्थ बुध, शनि से दृष्ट हो तो जातक—किला व वन में निवास करने वाला, अधिक भोजन कर्त्ता, दुष्ट (नीच) स्वभावी, अत्यन्त मलिन तथा समस्त कार्यों में असफल होता है ।।५५-६०।।

।। इति गुरुभे दृष्टिः ।।

---

[१] प्रत्ययिकं।

शनि राशिस्थ बुध पर ग्रहों की दृष्टि के फल

मल्लमतिसारयुक्तं बहुभक्षं निष्ठुरं प्रियालापम् ।
जनयति रविणा दृष्टः सौरगृहे बोधनः ख्यातम् ।।६१।।
जलजीविनं समृद्धं पुष्पसुराकन्दवणिजं वा ।
भीरुस्वरूपमचरं शनिभे चन्द्रेक्षितः कुरुते ।।६२।।
वाक्चपलमतिसुसौम्यं व्रीडालसमन्थरं [1]सुखाधारम् ।
कुरुते भूसुतदृष्टो रवितनयगृहे बुधः पुरुषम् ।।६३।।
बहुधनधान्यसमृद्धं ग्रामपुरश्रेणिपूजितं सुखिनम् ।
कुरुते गुरुणा दृष्टः सौरगृहे बोधनः ख्यातम् ।।६४।।
नीचापतिं विरूपं बुद्धिविहीनं च कामवश्यं च ।
अतिसुतजननं कुरुते भार्गवदृष्टो बुधः शनिभे ।।६५।।
पापकरं सुदरिद्रं कर्मकरं चातिदुःखितं दीनम् ।
कुरुते शनिना दृष्टः सौरगृहे बोधनः पुरुषम् ।।६६।।

यदि जन्म के समय शनिराशिस्थ बुध, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—पहलवान् अधिक बलवान्, अधिक भोजन करने वाला, निठुर, प्रियभाषी तथा विख्यात होता है ।

यदि शनिराशिस्थ बुध, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक—जल से जीविका करने वाला, धनी, फूल-मदिरा-तथा कन्द का व्यापारी, भयङ्कर देहधारी व स्थिर होता है ।

यदि शनिराशिस्थ बुध, भौम से दृष्ट हो तो जातक—चञ्चलवाणी, अतिसुशील, सलज्ज, आलसी, मन्द व सुखी होता है ।

यदि शनिराशिस्थ बुध, गुरू से दृष्ट हो तो जातक—अधिक धन-धान्य से संपन्न, ग्राम-नगर-पङ्क्ति में पूज्य, सुखी तथा विख्यात होता है ।

यदि शनिराशिस्थ बुध, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—दुष्टा स्त्री का पति, कुरूप, निर्बुद्धि, कामी व अधिक पुत्रों का जनक होता है ।

यदि शनिराशिस्थ बुध, शनि से दृष्ट हो तो जातक—पापी, दरिद्री, कार्य-कर्त्ता, अधिक दुःखी व दीन होता है ।।६१-६६।।

।। इति शनिभे दृष्टिः ।।

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां बुधचारो नाम षड्विंशोऽध्यायः ।।

सप्तविंशोऽध्यायः

मेष राशिस्थ गुरू का फल

वादिगुणैः सम्पन्नः प्रयत्नरत्नाभरण[2]संसर्गः ।
सत्वात्मजार्थबलयुक् प्रगल्भविख्यातकर्मा च ।। १ ।।

---

[1] सुखाधीनम् । [2] सभासङ्गः ।

ओजस्वी बहुशत्रुर्बहुव्ययार्थः क्षताङ्कितशरीरः ।
चण्डोग्रदण्डनाथो जीवे क्रियगे भवेत्पुरुषः ॥ २ ॥

यदि कुण्डली में मेष राशिस्थ गुरू हो तो जातक—विवादियों के गुण से युत अर्थात् विवादी, उत्तम यत्न से रत्न व अलङ्कार का संसर्गी, सात्त्विक, पुत्र-धन-बल से युक्त, प्रतिभा से युत, प्रसिद्ध कार्य कर्ता, तेजस्वी, अधिक शत्रुवाला, अधिक धन खर्च करने वाला, भग्न देहधारी, तीक्ष्ण व उग्र (कठोर) दण्डनायक होता है ॥ १–२ ॥

वृष राशिस्थ गुरू का फल

पीनो विशालदेहः सुरद्विजगवां च भक्तिमान् कान्तः ।
सुभगः स्वदारनिरतः सुवेषकृषिगोधनाढ्यश्च ॥ ३ ॥
सद्वस्तुभूषणयुतो विशिष्टवाङ्मतिगुणो नयज्ञश्च ।
वृषभे गुरौ विनीतो भिषक् प्रयोगाप्तकौशलकः ॥ ४ ॥

यदि कुण्डली में वृष राशिस्थ गुरू हो तो जातक—मोटा, विस्तृत शरीरधारी, देवता-ब्राह्मण-व गाय का भक्त, सुन्दर, सौभाग्यवान्, अपनी स्त्री में आसक्त, सुन्दर वेषधारी, खेती व गोधन से युत, उत्तम वस्तु व अलङ्कारों से युत, विशिष्ट-उत्तम वाणी-बुद्धि व गुणों से युक्त, नीति का ज्ञाता, विनम्र, व वैद्यक क्रिया में चतुर होता है ॥ ३–४ ॥

मिथुन राशिस्थ गुरू का फल

आहितधनः सुमेधा विज्ञानविशारदः सुनयनश्च ।
वाग्मी दाक्षिण्ययुतो निपुणः स्याद्धर्मशीलश्च ॥ ५ ॥
मान्यो गुरुबन्धूनां मण्डनमाङ्गल्यलब्धवरशब्दः ।
मिथुनस्थे देवगुरौ क्रियारतिः सत्कविश्चैव ॥ ६ ॥

यदि कुण्डली में मिथुन राशिस्थ गुरू हो तो जातक—प्राप्त धनी, सुबुद्धि, विज्ञान में कुशल, सुनेत्री, वक्ता, सरल, चतुर, धर्मात्मा, गुरुजन व बन्धुओं से सत्कृत, विवाह व मङ्गल कार्यों में प्राप्त श्रेष्ठ शब्द वाला, कार्यों में प्रेम व सुन्दर कवि होता है ॥ ५–६ ॥

कर्क राशिस्थ गुरू का फल

विद्वान् सुरूपदेहः प्राज्ञः प्रियधर्मसत्स्वभावश्च ।
सुमहद्बलो यशस्वी प्रभूतधान्याकरधनेशः ॥ ७ ॥
सत्यसमाधि[१]सुयुक्तः स्थिरात्मजो लोकसत्कृतः ख्यातः ।
नृपतिर्जीवे शशिभे विशिष्टकर्मा सुहृज्जनानुरतः ॥ ८ ॥

यदि कुण्डली में कर्क राशिस्थ गुरू हो तो जातक – पण्डित, सुन्दर देहधारी, ज्ञाता, धर्म प्रेमी, सुन्दर स्वभाव वाला, अधिक बलवान्, यशस्वी, अधिक अन्न सङ्ग्रही, खजाने का खजान्ची, सत्य व समाधि से युत, स्थिर पुत्रवाला, संसार में पूज्य, प्रसिद्ध, राजा, उत्तम कार्य कर्ता व मित्रों में आसक्त होता है ॥ ७–८ ॥

---

[१] समेतः ।

सिंह राशिस्थ गुरू का फल

दृढवैरसत्वधीरः सुबहुस्नेहः सुहृज्जने विद्वान् ।
आढ्यः शिष्टाभिजनो नृपो नृपतिपौरुषः सभालक्ष्यः ॥ ९ ॥
त्रिदशगुरौ सिंहस्थे समस्तरोषोद्धृतारिपक्षश्च ।
सुदृढव्यस्तशरीरो गिरिदुर्गवनालये जातः ॥ १० ॥

यदि कुण्डली में सिंह राशिस्थ गुरू हो तो जातक-स्थिर शत्रुता वाला, बली, धैर्यवान् मित्रवर्ग से सुन्दर अधिक प्रेम कर्ता, पण्डित, धनी, शिष्ट परिजनों से युत, राजा, या राजा के तुल्य पुरुषार्थ वाला, सभा का लक्ष्य, क्रोध से समस्त शत्रुओं को जीतनेवाला, दृढव्यस्त देहधारी व पर्वत-किला-वन में वास करने वाला होता है ॥ ९–१० ॥

कन्या राशिस्थ गुरू का फल

मेधावी धर्मपरः क्रियापटुर्धर्मवान्युवतिराशौ ।
प्रियगन्धपुष्पवस्त्रः कृत्येषु विनिश्चितार्थश्च ॥ ११ ॥
शास्त्रार्थशिल्पकार्यैर्धनवान् दाता विशुद्धशीलश्च ।
स्याद्देवगुरौ निपुणश्चित्राक्षरविद्धनसमृद्धः ॥ १२ ॥

यदि कुण्डली में कन्या राशिस्थ गुरू हो तो जातक—बुद्धिमान्, धर्मपरायण, कार्य कुशल, धर्मात्मा, इत्र-फूल-वस्त्र का प्रेमी, कार्यों में स्थिर, शास्त्र के अर्थ से व चित्रकारी के कार्यों से धनी, दानी, सुशील, चतुर, अनेक लिपि ज्ञाता व धनी होता है ॥ ११–१२ ॥

तुला राशिस्थ गुरू का फल

मेधावी बहुपुत्रो विदेशाच्चर्यागतः प्रभूतधनः ।
[1]भूषाप्रियो विनीतो नटनर्तकसंगृहीतधनः ॥ १३ ॥
कान्तः श्रुताभिनिरतो महत्तरः सार्थवाहवणिजां हि ।
वणिजीन्द्रमन्त्रिणि गते सुरातिथीज्यारतः प्राज्ञः ॥ १४ ॥

यदि कुण्डली में तुला राशिस्थ गुरू हो तो जातक—बुद्धिमान्, अधिक पुत्र वाला विदेश भ्रमण से अधिक धनी, भूषण प्रेमी, विनम्र, नट नर्तकों (नाचने वालों) से धन संग्रह करने वाला, सुन्दर, शास्त्राभ्यासी, अपने सहयोगी व्यापारियों से बड़ा, तथा देवता व अतिथि के पूजन में लीन और पण्डित होता है ॥ १३–१४ ॥

वृश्चिक राशिस्थ गुरू का फल

बहुशास्त्राणां कुशलो नृपतिर्बहुभाष्यकारको निपुणः ।
देवालयपुरकर्ता सद्बहुदारोऽल्पपुत्रश्च ॥ १५ ॥
व्याध्यार्तः श्रमबहुलः [3]प्रसक्तदोषो गुरौ भवत्यलिनि ।
दम्भेन धर्मनिरतो जुगुप्सिताचारनिरतश्च ॥ १६ ॥

---

[1] भाषाप्रियो । [2] हर्म्यं । [3] रोषो ।

यदि कुण्डली में वृश्चिक राशिस्थ गुरू हो तो जातक—अधिक शास्त्रों में चतुर, राजा, अधिक ग्रन्थों का भाष्य (टीका) करने वाला, कुशल, देव मन्दिर व नगर का निर्माता, अच्छी अधिक स्त्रियों से युत, अल्प (लघु) पुत्र वाला, रोग से पीड़ित, अधिक मेहनती, दोष में आसक्त वा अधिक क्रोधी, पाखण्ड से धर्म में तत्पर तथा निन्द्य आचरण वाला होता है ॥ १५–१६ ॥

धनु राशिस्थ गुरू का फल

आचार्यो व्रतदीक्षायज्ञादीनां[1] स्थिरार्थश्च ।
दाता सुहृत्स्वपक्षः प्रियोप[2]कारश्रुताभिरतः ॥ १७ ॥
माण्डलिको मन्त्री वा धनुर्धरस्थे भवेत्सदा जीवे ।
नानादेशनिवासी विविक्ततीर्थायतनबुद्धिः ॥ १८ ॥

यदि कुण्डली में धनु राशिस्थ गुरू हो तो जातक—व्रत-दीक्षा (मन्त्रग्रहण) यज्ञादि में आचार्य, (प्रधान) स्थिरधनी, दानी, मित्रों का शुभी, परोपकार प्रेमी, शास्त्र में तत्पर, जिलाधीश वा सचिव, अनेकदेशों का निवासी, एकान्त व तीर्थों में बुद्धि रखने वाला होता है ॥ १७–१८ ॥

मकर राशिस्थ गुरू का फल

लघुवीर्यो मकरस्थे बहुश्रमक्लेशधारको जीवे ।
[3]नानाचारो मूर्खो दुरन्तनिःस्वः परप्रेष्यः ॥ १९ ॥
माङ्गल्यदयाशौचस्ववन्धुवात्सल्यधर्मपरिहीनः ।
दुर्वलदेहो भीरुः प्रवासशीलो विषादी च ॥ २० ॥

यदि कुण्डली में मकर राशिस्थ गुरू हो तो जातक—अल्पबली, अधिक परिश्रमी, क्लेश को धारण करने वाला, अनेक वा नीच आचरण वाला, मूर्ख, अधिक निर्धन, दूसरों का नौकर, माङ्गल्य-दया-पवित्रता-स्वबन्धु प्रेम-व धर्म से रहित, कृश देहधारी, डरपोक, परदेशवासी व विषाद (दुःख) से युक्त होता है ॥ १९–२० ॥

कुम्भ राशिस्थ गुरू का फल

पिशुनो न साधुशीलः कुशिल्पतोयाश्रमेषु कर्मरतः ।
मुख्यो गणस्य सुतरां नीचाभिरतो नृशंसश्च ॥ २१ ॥
लुब्धो व्याधिग्रस्तः स्ववा[4]क्यदोषेण नाशितार्थश्च ।
प्रज्ञादिगुणैर्हीनो घटे गुरौ स्याद्गुरुस्त्री[5]गः ॥ २२ ॥

यदि कुण्डली में कुम्भ राशिस्थ गुरू हो तो जातक—चुगलखोर, दुःस्वभावी, निन्द्य-शिल्प व जलाशयों में कार्य तत्पर, समुदाय में प्रधान, निरन्तर नीचजन सेवी, पापी, लोभी, रोग से पीड़ित, अपने वचन के दोष से धन का नाशक, बुद्धिहीन तथा गुरू की स्त्री में आसक्त होता है ॥ २१–२२ ॥

---

[1] समः स्थिरार्थश्च । [2] हार । [3] नीचा । [4] वास । [5] स्त्रीकः ।

मीन राशिस्थ गुरू का फल

वेदार्थशास्त्रवेत्ता सुहृदां पूज्यः सतां च नृपनेता।
श्लाध्यः सधनोऽधृष्यो [1]ह्यहीनदर्पस्थिरारम्भः ॥ २३ ॥
राज्ञः सुनीतिशिक्षाव्यवहाररणप्रयोगवेत्ता च।
ख्यातः प्रशान्तचेष्टो [2]स्थिरसत्वयुतश्च मीनगे जीवे ॥ २४ ॥

यदि कुण्डली में मीन राशिस्थ गुरू हो तो जातक—वेद का अर्थ व शास्त्रों का जानने वाला, मित्र व सज्जनों का पूजनीय, राजा का मन्त्री, प्रशंसनीय, धनी, निर्भीक, अधिक गर्वी (अहङ्कारी), स्थिर कार्यारम्भी, राजा की सुन्दर नीति-शिक्षा-व्यवहार-युद्ध प्रयोग का जानने वाला, विख्यात और शान्तिप्रिय होता है ॥ २३–२४ ॥

भौम राशिस्थ (मेष, वृश्चिक) गुरू पर ग्रहों की दृष्टि के फल

धर्मिष्ठमनृतभीरुं विख्यातसुतं महाभाग्यम्।
भौमगृहे रविदृष्टो ह्यतिरोमचितं गुरुः कुरुते ॥ २५ ॥
इतिहासकाव्यकुशलं बहुरत्नं स्त्रीषु भाजनं कुरुते।
कुजगेहे शशिदृष्टस्त्रिदशगुरुः पार्थिवं प्राज्ञम् ॥ २६ ॥
नृपपुरुषशूरमुग्रं नयविनयसमन्वितं च [3]विधनं च।
अविधेयभृत्यदारं जनयति वक्रेक्षितो जीवः ॥ २७ ॥
अनृतं वञ्चनपापं परविवरान्वेषणेषु निपुणं च।
सेवाविनयकृतज्ञं कापटिकं सौम्यसंदृष्टः ॥ २८ ॥
गृहशयनवसनगन्धैर्माल्यालङ्कारयुवतिभिर्विभवैः।
समुचितमतीव भीरुं कुरुते शुक्रेक्षितो जीवः ॥ २९ ॥
मलिनं लुब्धं तीक्ष्णं साहसिकं संमतं च सिद्धं च।
अस्थिरमित्रापत्यं त्रिदशगुरुः सौरसंदृष्टः ॥ ३० ॥

यदि कुण्डली में भौम राशिस्थ गुरू, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक धर्मात्मा, असत्य से भयभीत, प्रसिद्ध पुत्र वाला, बड़ा भाग्यवान् व अधिक रोमयुत देहधारी होता है।

यदि भौम राशिस्थ गुरू चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक इतिहास व काव्य में चतुर, अधिक रत्न वाला, स्त्रियों का प्रियपात्र, राजा व पण्डित होता है।

यदि भौम राशिस्थ गुरू भौम से दृष्ट हो तो जातक राजपुरुष, वीर, उग्र, नीति व विनय (नम्रता) से युक्त, निर्धन व धनवान्, कुत्सित नौकर व कुस्त्री वाला होता है।

यदि भौम राशिस्थ गुरू बुध से दृष्ट हो तो जातक झूठ बोलने वाला, ठग, पापी, दूसरे के छिद्र ढूँढ़ने में चतुर, सेवक, नम्र, कृतज्ञ एवं कपटी होता है।

यदि भौम राशिस्थ गुरू शुक्र से दृष्ट हो तो जातक मकान-शय्या-वस्त्र-सुगन्ध-माल्य-भूषण-स्त्री-ऐश्वर्य से युत तथा अत्यन्त डरपोक होता है।

---

[1] विशत्रुगर्वस्थिरारंभः। [2] मीनयुगे भवति ना। [3] धनिनं।

यदि भौम राशिस्थ गुरू शनि से दृष्ट हो तो जातक मलिन, लोभी, तीखा, साहसी, जन सहयोगी, सिद्ध तथा अस्थिर मित्र व पुत्र वाला होता है ॥ २५-३० ॥

॥ इति जीवस्य कुजभे दृष्टिः ॥

शुक्र राशिस्थ (वृष-तुला) गुरू पर ग्रहों की दृष्टि के फल

द्विपदचतुष्पदभागिनमत्यटनं[1] व्यायताङ्गमिह [2]पुरुषम् ।
प्राज्ञं नरेन्द्रसचिवं करोति सूर्येक्षितो जीवः ॥ ३१ ॥
अतिधनमतीव मधुरं जननीदयितं प्रियं च युवतीनाम् ।
अत्युपभोगं कुरुते चन्द्रेण निरीक्षितो जीवः ॥ ३२ ॥
दयितं बालस्त्रीणां प्राज्ञं शूरं च धनसमृद्धं च ।
सुखिनं नरेन्द्रपुरुषं भृगुभे जीवो रुधिरदृष्टः ॥३३॥
प्राज्ञं चतुरं मधुरं [3]सुधनं विभवान्वितं गुणसमृद्धम् ।
सुरुचिरशीलं कान्तं जनयति बुधवीक्षितो जीवः ॥ ३४ ॥
अतिललितमति च धनिनं परभूषणधारिणं मृजाशीलम् ।
वरशयनं वरवसनं भृगुभे भृगुवीक्षितो जीवः ॥ ३५ ॥
प्राज्ञं बहुधनधान्यं महत्तरं ग्रामनगरपुरुषाणाम् ।
मलिनमरूपमभार्यं कुरुते सौरेक्षितो जीवः ॥ ३६ ॥

यदि कुण्डली में शुक्र राशिस्थ गुरू, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक मनुष्य व पशुओं से युत, अत्यन्त घूमने वाला, लम्बी देह, पण्डित व राजा का मन्त्री होता है।

यदि शुक्र राशिस्थ गुरू, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक अधिक धनी, अधिक सुन्दर, माता का कृपापात्र, स्त्रियों का प्रिय व अधिक भोगी होता है।

यदि शुक्र राशिस्थ गुरू, भौम से दृष्ट हो तो जातक बालक व स्त्रियों का प्रेमी, पण्डित,वीर, धनी, सुखी एवं राजपुरुष होता है।

यदि शुक्र राशिस्थ गुरू, बुध से दृष्ट हो तो जातक पण्डित, चतुर, मधुर (प्यारा), सुधनी वा सौभाग्यवान्, ऐश्वर्य से युत, गुणी, सुन्दर शीलवान् तथा मनोहर होता है।

यदि शुक्र राशिस्थ गुरू, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक अधिक सुन्दर, अधिक धनी, दूसरे के अलङ्कार को धारण करने वाला, शरीर की सफाई में तत्पर, श्रेष्ठ शय्या व श्रेष्ठ वस्त्र वाला होता है।

यदि शुक्र राशिस्थ गुरू, शनि से दृष्ट हो तो जातक पण्डित, अधिक धन व अन्न वाला, गाँव व नगर (शहर) वासियों में श्रेष्ठ, मलिन, कुरूप तथा स्त्री से रहित होता है ॥ ३१-३६ ॥

॥ इति जीवस्य भृगुभे दृष्टिः ॥

बुध राशिस्थ (मिथुन कन्या) गुरू पर ग्रहों की दृष्टि के फल

आर्यं ग्रामश्रेष्ठं कुटुम्बिनं दारपुत्रधनयुक्तम्[4] ।
बुधभे दिनकरदृष्टस्त्रिदशगुरुर्मानवं कुरुते ॥ ३७ ॥

---

[1] त्याढ्यं । [2] ङ्गिनं पुरुगम् । [3] सुभगं । [4] दारपुत्रगृहयुक्तम् ।

चन्द्रेक्षितस्तु कुरुते वसुमन्तं मातृवल्लभं[1] धन्यम् ।
सुखयुवतिपुत्रवन्तं सुरगुरुरतिरूपमनुपमं बुधभे ॥ ३८ ॥
शाश्वतसुलब्धविषयं[2] [3]चित्रितगात्रं धनान्वितं कुरुते ।
धरणिसुतेक्षितदेहस्त्रिदशगुरुः संमतं लोके ॥३९॥
कुरुते ज्योतिषकुशलं बहुसुतदारं च सूत्रकारं च ।
अतिशयविरूपवाक्यं बुधभे सौम्येक्षितो जीवः ॥४०॥
देव[4]प्रासादानां कृत्यकरं वेशदारभोक्तारम् ।
हृदयहरं नारीणां कुरुते शुक्रेक्षितो जीवः ॥४१॥
श्रेणीगणराष्ट्राणां पुरोगमं ग्रामपत्तनानां च ।
जनयति शनिना दृष्टः सुतनुं जीवो नरं बुधभे ॥४२॥

यदि कुण्डली में बुध राशिस्थ गुरू, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक उतम, गाँव में प्रधान, परिवार वाला, स्त्री-पुत्र-धन से युत होता है ।

यदि बुध राशिस्थ गुरू, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक धनवान्, माता का प्रिय, पूज्य, सुख-स्त्री-पुत्र से युत, अधिक स्वरूपवान् तथा उपमा से रहित अर्थात् अद्वितीय होता है ।

यदि बुध राशिस्थ गुरू, भौम से दृष्ट हो तो जातक निरन्तर विषय सुख का भोगी वा निरन्तर विजय प्राप्तकर्ता, चित्रित देहधारी वा विचार से युत शरीर वाला, धनी एवं संसार में पूज्य होता है ।

यदि बुध राशिस्थ गुरू, बुध से दृष्ट हो तो जातक ज्योतिष शास्त्र में चतुर, अधिक पुत्र व स्त्री से युत, सूत्रकर्त्ता तथा अत्यन्त विरूपवादो होता है ।

यदि बुध राशिस्थ गुरू, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक देव-मन्दिरों का कार्यकर्ता वेश्यागामी तथा स्त्रियों के हृदय को चुराने वाला होता है ।

यदि बुध राशिस्थ गुरू, शनि से दृष्ट हो तो जातक मजदूर राज्यों का व गाँव व नगरों का अध्यक्ष एवं सुन्दर देहधारी होता है ॥ ३७-४२ ॥

॥ इति जीवस्य बुधभे दृष्टिः ॥

कर्क राशिस्थ गुरु पर ग्रहों की दृष्टि के फल

रविदृष्टः शशिभवने विख्यातं ह्यग्रगं समूहानाम् ।
सुखधनदारविहीनं पश्चादाढ्यं गुरुः कुरुते ॥४३॥
अत्यर्थं द्युतिमन्तं नृपतिं बहुकोशवाहनसमृद्धम् ।
उत्तमयुवतीपुत्रं जनयेच्छशिभे गुरुर्हिमगुदृष्टः ॥४४॥
कौमारदारसाढ्यं हेमालङ्कारभागिनं प्राज्ञम् ।
शूरं सव्रणगात्रं रुधिराङ्गनिरीक्षितो गुरुः कुरुते ॥४८॥
बान्धवसात्रनिमित्तं धनिनं कलान्वितं विगतपापम् ।
जनयति बुधेन दृष्टः [5]प्रत्ययिनं मन्त्रिणं जीवः ॥४६॥

---

१ मातृवत्सलं । २ विजयं । ३ विकृत्त । ४ प्रसादसुमुखं । ५ प्रत्यायकसमन्त्रिणं ।

बहुदारं बहुविभवं नानालङ्कारभागिनं सुखिनम् ।
भृगुतनयदृष्टिमूर्तिः सुभगं पुरुषं गुरुः कुरुते ।।४६।।
सौरेण दृष्टमूर्तिर्महत्तरं ग्रामसैन्यनगराणाम् ।
वाचाटं बहुविभवं वार्धक्ये भोगभागिनं जीवः ।।४८।।

यदि कुंडली में कर्क राशिस्थ गुरू, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक प्रसिद्ध, जनसमूहों के आगे चलने वाला, सुख-धन-स्त्री से रहित व पीछे सुखादि से युत होता है ।

यदि कर्क राशिस्थ गुरू, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक अधिक कान्तिमान्, राजा, अधिक धन व सवारी से युक्त व श्रेष्ठ स्त्री व पुत्र वाला होता है ।

यदि कर्क राशिस्थ गुरू, भौम से दृष्ट हो तो जातक कुमार अवस्था की स्त्री को प्राप्त करने वाला, धनी, सुवर्ण व अलंकार का भागी, पण्डित, वीर, व घाव से युत देह वाला होता है ।

यदि कर्क राशिस्थ गुरू, बुध से दृष्ट हो तो जातक बन्धुओं का शुभचिन्तक, धनी, कलही अर्थात् कलहप्रिय, पाप से रहित तथा विश्वसनीय मन्त्री (सलाहकार) होता है ।

यदि कर्क राशिस्थ गुरू, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक अधिक स्त्री वाला, अधिक ऐश्वर्य से युत, अनेक प्रकार के भूषणों को प्राप्त करने वाला, सुखी व सौभाग्यवान् होता है ।

यदि कर्क राशिस्थ गुरू, शनि से दृष्ट हो तो जातक गाँव-सेना व शहर का प्रधान, बहुभाषी, अधिक ऐश्वर्यवान् तथा वृद्धावस्था में भोगसम्पन्न होता है ।। ४३-४८ ।।

।। इति कंटके जीवदृष्टिः ।।

सिंह राशिस्थ गुरू पर ग्रहों की दृष्टि के फल

सिंहे दयितं ख्यातं सतां च नृपतिं महाधनसमृद्धम् ।
जनयति दिनकरदृष्टस्त्रिदशगुरुर्नरमतीव हि सुशीलम् ।।४९।।
अतिसुभगमति च मलिनं स्त्रीभाग्यै[1]रतिसुभगमत्याढ्यम् ।
लेये चन्द्रसुदृष्टो जितेन्द्रियं जनयति सुरेज्यः ।।५०।।
सत्यं सतां गुरूणां विशिष्टकर्माण[2]मुग्रमतिनिपुणम् ।
शुद्धं शूरं क्रूरं गुरुरिह भौमेक्षितः सिंहे ।।५१।।
गृहवास्तुज्ञानरतं विज्ञानगुणान्वित रुचिरवाक्यम् ।
सिंहे मन्त्रिणसग्रथं बुधेक्षितो विश्रुतं जीवः ।।५२।।
दयितं स्त्रीणां सुभगं भूपतिसत्कारसत्कृतं पुरुषम् ।
सितदृष्टः सुरपूज्यो जनयति सिंहे महासत्त्वम् ।।५३।।
बहुकथनमधुरवचनं सुखरहितं चित्रभागिनं तीक्ष्णम् ।
अमरस्त्रीतुल्यसुखं सिंहगुरुः सौरसन्दृष्टः ।।५४।।

---

१ स्त्रीभाग्यैरुपचितार्थमत्याढ्यम् । २ मग्र्च

यदि कुंडली में सिंह राशिस्थ गुरू, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक दयालु, सज्जनों में विख्यात, राजा, अधिक धनी तथा अत्यन्त सुशील होता है।

यदि सिंह राशिस्थ गुरू, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक अधिक सौभाग्यवान्, अधिक मलिन, स्त्री के भाग्य से धन प्राप्त करने की बुद्धि से युत तथा जितेन्द्रिय होता है।

यदि सिंह राशिस्थ गुरू, भौम से दृष्ट हो तो जातक सज्जनों व गुरुजनों के मध्य सत्यभाषी, श्रेष्ठ कार्यकर्ता, उग्र वा आगे चलने वाला, अत्यन्त चतुर, शुद्ध (पवित्र), वीर व कठोर होता है।

यदि सिंह राशिस्थ गुरू, बुध से दृष्ट हो तो जातक गृह-निर्माण के ज्ञान में लीन, वैज्ञानिक, सुन्दर वक्ता, सचिव, अग्रगामी या प्रधान तथा शास्त्रज्ञ होता है।

यदि सिंह राशिस्थ गुरू, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक स्त्रियों का प्यारा, सौभाग्यवान्, राजा के सत्कार से युत तथा अधिक बली होता है।

यदि सिंह राशिस्थ गुरू, शनि से दृष्ट हो तो जातक अधिक बोलने वाला, मधुर (मीठा) भाषी, सुख से हीन, चित्रकार, निठुर वा देवाङ्गना के समान सुखी होता है ॥ ४९-५४ ॥

॥ इति सिंहस्थे जीवदृष्टिः ॥

स्वराशिस्थ गुरू पर ग्रहों की दृष्टि के फल

नृपतिविरुद्धं जनयति विबुधगुरुः संस्थितः स्वगृहे।
रविदृष्टः परितप्त धनबन्धुजनेन परिमुक्तम् ॥ ५५ ॥
नानाविधसौख्ययुतं स्वगृहे चन्द्रेक्षितो जीवः।
अतिसुभगं युवतीनां मानधनैश्वर्यगर्वितं कुरुते ॥ ५६ ॥
सङ्ग्रामे विकृताङ्गं क्रूरं वधकं [1]परोपतापकरम्।
जनयति कुजेन दृष्टो [2]देवगुरुर्नष्टपरिवारम् ॥ ५७ ॥
मन्त्रिणमथ नृपतिं वा सुतधनसौभाग्यसौख्यसम्पन्नम्।
स्वगृहे बुधेन दृष्टः सकलानन्दं गुरुः कुरुते ॥ ५८ ॥
सुखिनं धनिनं प्राज्ञं व्यपगतदोष चिरायुषं सुभगम्।
स्वगृहे सितेन दृष्टो लक्ष्मीपरिवेष्टितं गुरुः पुरुषम् ॥ ५९ ॥
मलिनमतीव च सुभगं ग्रामपुरश्रेणिधिकृतं दीनम्।
स्वगृहगुरुः शनिदृष्टो जनयति सुखभोगधर्मपरिहीनम् ॥ ६० ॥

यदि कुण्डली में स्वराशिस्थ (धनु, मीन) गुरू, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—राजा का विरोधी, पीड़ित, धन व बन्धुओं से युक्त अर्थात् निर्धन व बिना परिवार का होता है।

यदि स्वराशिस्थ गुरु, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक—अनेक प्रकार के सुखों से युत अर्थात् सर्वसम्पन्न, स्त्रियों का अतिस्नेही, सम्मान-धन विभव से अहङ्कारी होता है।

---

२ परोपकारपरम्। ३ दृष्टः स्वगृहगुरुः। ४ सभयं।

यदि स्वराशिस्थ गुरू, भौम से दृष्ट हो तो जातक—युद्ध (लड़ाई) में भग्नशरीर, निठुर, हिंसक, दूसरे को पीड़ा करने वाला या परोपकारी तथा कुटुम्बहीन होता है।

यदि स्वराशिस्थ गुरू, बुध से दृष्ट हो तो जातक—सचिव वा राजा, पुत्र-धन-सौभाग्य-सुख से युत तथा सबको प्रसन्न करने वाला होता है।

यदि स्वराशिस्थ गुरू, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—सुखी, धनी, पण्डित, निर्दोषी, दीर्घायु, सौभाग्यवान् तथा लक्ष्मी से युत होता है।

यदि स्वराशिस्थ गुरू, शनि से दृष्ट हो तो जातक—मलिन, अत्यन्त डरपोक, गाँव नगर—पक्ति में तिरस्कृत, दीन, सुखभोग व धर्म से रहित होता है ॥ ५५–६० ॥

॥ इति स्वगृहे दृष्टिः ॥

शनि राशिस्थ (मकर, कुम्भ) गुरू पर ग्रहों की दृष्टि के फल

प्राज्ञं पृथिवीपालं सौरगृहे भानुना च संदृष्टः।
[1]प्रकृतिसमृद्धं जनयति [2]वहुभोगसमन्वितं सुविक्रान्तम् ॥ ६१ ॥
पितृमातृभक्तमार्यं कुलोद्भवं प्राज्ञमाढ्यमादेयम्।
चन्द्रेक्षितस्तु जीवः सुशीलमतिधार्मिकं शनिभे ॥ ६२ ॥
शूरं नरेन्द्रयोधं गर्वितमोजस्विनं सुवेषं च।
विख्यातमार्यमान्यं शनिभे वक्रेक्षितो जीवः ॥ ६३ ॥
[3]कामरतिं गणमुख्यं मानवमथ सार्थवाहमाढ्यं वा।
ख्यातमतिमित्रवन्तं बुधसंदृष्टो गुरुः शनिभे ॥ ६४ ॥
भोज्यान्नपानविभवं वरगृहशयनासनोत्तमस्त्रीकम्।
आभरणवसनमन्तं शनिभे शुक्रेक्षितो जीवः ॥ ६५ ॥
अनुपमविद्यावृत्तं महत्तरं देशपार्थिवं शनिभे।
द्विपदचतुष्पदमाढ्यं भोगिनमथ सौरवीक्षितो जीवः ॥ ६६ ॥

यदि कुण्डली में शनिराशिस्थ गुरू, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—पण्डित, राजा, स्वभाव से धनी, अनेक भोगों से युत या सुख का भोक्ता, एवं सुन्दर पराक्रमी होता है।

यदि शनि राशिस्थ गुरू, चन्द्रमा स दृष्ट हो तः जातक—पिता माता का भक्त, कुल (वंश) में श्रेष्ठ, पण्डित, धनी, दानी, सुशील एवं अत्यन्त धार्मिक होता है।

यदि शनि राशिस्थ गुरू, भौम से दृष्ट हो तो जातक—वीर, राजा का योद्धा, अहङ्कारी, पराक्रमी सुन्दर वेषधारी, प्रसिद्ध व श्रेष्ठ जनों से पूजित होता है।

यदि शनि राशिस्थ गुरू, बुध से दृष्ट हो तो जातक—कामी, समुदाय का अध्यक्ष, वाहन चालक वा धनी विख्यात व अधिक मित्र वाला होता है।

यदि शनि राशिस्थ गुरू, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—खाने योग्य अन्न-पान का संग्रही, उत्तम घर-शय्या-आसन-स्त्री-भूषण (अलङ्कार) व वस्त्र से युत होता है।

यदि शनि राशिस्थ गुरू, शनि से दृष्ट हो तो जातक—अद्वितीय विद्या व आचरण से युत, श्रेष्ठ, किसी देश का राजा, परिजन व पशुओं से युक्त तथा भोगी होता है। ६१–६६।

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां गुरुचारो नाम सप्तविंशोऽध्यायः।

---

[1] प्रकृतिसमुत्थं। [2] सुख। [3] मतिं।

अष्टाविंशोऽध्यायः

मेष राशिस्थ शुक्र का फल

नैशान्धो बहुदोषो विरोधशीलः पराङ्गनाचोरः।
वेश्यावनाद्रिचारी स्त्रीहेतोर्बन्धनं प्राप्तः ॥ १ ॥
क्षुद्रः कठोरचोरश्चसूपुरश्रेणिवृन्दनाथश्च।
मेषे स्याद्भृगुतनये नो विश्वासी प्रगल्भश्च ॥ २ ॥

यदि उत्पत्ति के समय मेषराशिस्थ शुक्र हो तो जातक--रात्रि में अन्धा, अनेक दोषी, विरोध में तत्पर, दूसरे की स्त्री को चुराने वाला, वेश्यागामी, वन व पर्वत में विचरण कर्त्ता, स्त्री के निमित्त कारावास का भागी, नीच, कठोर (क्रूर) तस्कर, सेना नगर पंक्ति समुदाय का स्वामी, अविश्वासी व धृष्ट होता है ॥ १–२ ॥

वृष राशिस्थ शुक्र का फल

बहुयुवतिरत्नसहितः कृषीबलो गन्धमाल्यवस्त्रयुतः।
गोकुलजीवी दाता स्वबन्धुभर्ता सुमूर्तिश्च ॥ ३ ॥
आढ्यस्त्वनेकविद्यो बहुप्रदः सत्वहितकारी।
वृषभे गुणैः प्रधानः परोपकारी सिते भवति जातः ॥ ४ ॥

यदि उत्पत्ति के समय वृषराशिस्थ शुक्र हो तो जातक--अधिक स्त्री व रत्न वाला, खेती करने वाला, इत्र-माला-वस्त्रों से युत, गाय के कुल से आजीविका करने वाला, दानी, अपने वन्धुओं का पालक--सुन्दर देहधारी, धनी, अनेक विद्या संपन्न, अधिक देने वाला, प्राणिमात्र का शुभ चिन्तक, गुणों से प्रधान तथा परोपकारी होता है ॥ ३–४ ॥

मिथुन राशिस्थ शुक्र का फल

[1]विज्ञानकलाशास्त्रः प्रथितः सततं सुमूर्तिगः कामी।
आलेख्यलेख्यनिरतः काव्यकरः स्यात् प्रियः साधुः ॥ ५ ॥
[2]धृतगीतनृत्तविभवः सुहृज्जनाढ्यः सुरद्विजानुरतः।
संरूढस्नेहो वै मिथुनस्थे भार्गवे भवति ॥ ६ ॥

यदि उत्पत्ति के समय मिथुन राशि में शुक्र हो तो जातक--विज्ञान-कला-शास्त्र ज्ञान से सत्य में आरूढ वा विज्ञान कला-शास्त्र का ज्ञाता, निरन्तर प्रसिद्ध, सुन्दर देहधारी, कामी, टिप्पणी व लेख लिखने में लीन, काव्य कर्ता, प्रेमी, सज्जन, गान व नाच से धन प्राप्त करने वाला, मित्र मण्डली से युत, देवता व ब्राह्मण का भक्त एवं स्थिर मैत्री वाला होता है ॥ ५–६ ॥

कर्क राशिस्थ शुक्र का फल

रतिधर्मरतः प्राज्ञो बली मृदुर्गुणवतां प्रधानश्च।
आकाङ्क्षितैः सुखार्थैर्युक्तः प्रियदर्शनः सुनीतिश्च ॥ ७ ॥

---

[1] विज्ञानकलाशास्त्रप्रतीतसत्यस्थितो वाग्मी। [2] स्मृति।

योषित्पानप्रभवैर्व्याधिभिरधिकं प्रपीडितो मनुजः ।
शुक्रे कर्कटसंस्थे स्ववंशभवदोषसन्तप्तः ॥ ८ ॥

यदि उत्पत्ति के समय कर्क राशि में शुक्र हो तो जातक—काम व धर्म में लीन, पण्डित, बलवान्, गुणियों में सरल व प्रधान, इच्छित सुख व धन से युत, सुन्दर देहधारी, उत्तम न्याय कर्त्ता, स्त्री व मद्यपान करने से अधिक रोगों से पीड़ित एवं अपने वंश के दोष से दुःखी होता है ॥ ७–८ ॥

सिंह राशिस्थ शुक्र का फल

युवतिजनोपासनको[1] लब्धसुखद्रविणसम्प्रमोदश्च ।
लघुसत्त्वः प्रियबन्धुर्विचित्रसौख्यश्च दुःखी च ॥ ९ ॥
उपकारी च परेषां गुरुद्विजाचार्यसमतो निरतः ।
सिंहस्थे भृगुतनये बहुचिन्तास्वनभियोगः स्यात् ॥ १० ॥

यदि उत्पत्ति के समय सिंह राशि में शुक्र हो तो जातक—स्त्री जन का उपासक (सेवी), सुख-धन-आनन्द से युत वा स्त्रीजन की उपासना से सुख-धन आनन्द का प्राप्त करने वाला, अल्पबली, बन्धुओं का प्रेमी, अनेक प्रकार के सुख होने पर कदाचित् दुःखी, परोपकारी, गुरु-ब्राह्मण-आचार्य से निरन्तर सम्मत (वश) में रहने वाला तथा अधिक चिन्ताओं से रहित होता है ॥ ९–१० ॥

कन्या राशिस्थ शुक्र का फल

लघुचिन्तो मृदुनिपुणः परोपसेवी कलाविधिज्ञश्च ।
स्त्रीसम्भाषणमधुरः प्रणयनगणनार्थकृतयत्नः ॥ ११ ॥
नारीषु दुष्टरतिषु प्रणयी दीनो न सौख्यभोगयुतः ।
कन्यायां भृगुतनये तीर्थसभापण्डितो जातः ॥ १२ ॥

यदि उत्पत्ति के समय कन्या राशि में शुक्र हो तो जातक—अल्प चिन्ता वाला, सरल, चतुर, परोपकारी, कला की रीति का ज्ञाता, स्त्री वार्ता में मीठा, नम्रता गणना हेतु प्रयत्नी, दुःशीला स्त्रियों में विनम्र, दान-सुख-भोग से रहित, तीर्थ एवं सभा में पण्डित होता है ॥ ११–१२ ॥

तुला राशिस्थ शुक्र का फल

श्रमलब्धधनः शूरो विचित्रमाल्याम्बरो विदेशरतः ।
नैपुणरक्षणकुशलः कर्मसु चपलः सुदुष्करेषु तथा ॥ १३ ॥
आढ्यो रुचिरसुपुण्यो द्विजदेवार्चनविलब्धकीर्तिश्च ।
शुक्रे तुलाधरगते भवति पुमान् पण्डितः सुभगः ॥ १४ ॥

यदि उत्पत्ति के समय तुला राशि में शुक्र हो तो जातक—परिश्रम से धन पैदा करने वाला, वीर, अनेक पुष्पों की माला व वस्त्र का प्रेमी, विदेश में तत्पर, निपुणता

---

[1] जनोपासनया ।

से रक्षा करने में चतुर, कठिन कार्यों में चञ्चल, धनी, शोभनीय पुण्यवान्, ब्राह्मण व देवता की पूजा से प्राप्त यशवान्, पण्डित एवं सौभाग्यवान् होता है ॥ १३–१४ ॥

वृश्चिक राशिस्थ शुक्र का फल

विद्वेषरतिनृशंसो विमुक्तधर्मा विकत्थनोऽतिशठः।
सहजविरक्तोऽधन्यो विपन्नशत्रुस्तथा पापः ॥ १५ ॥
आर्यः कुलटाद्वेषी वधनिपुणो बह्वृणो दरिद्रश्च।
अलिनि सिते भवति पुमान् गर्हितशीलः सुगुह्यगदः ॥ १६ ॥

यदि उत्पत्ति के समय वृश्चिक राशि में शुक्र हो तो जातक—द्रोह (विरोध) प्रिय, घृणित, अधर्मी; बकवादी, अधिक धूर्त, भाइयों से विरक्त (अनिच्छित), अप्रशंसनीय, विपत्तियों का शत्रु, पापी, श्रेष्ठ, वेश्या शत्रु, हिंसा में चतुर, अधिक ऋणी, दरिद्री, नीचता में तत्पर एवं गुप्ताङ्ग रोगी होता है ॥ १५–१६ ॥

धनु राशिस्थ शुक्र का फल

सद्धर्मकर्मधनजैः फलैरुपेतो जगत्प्रियः कान्तः।
आर्यः [1]कुलब्धशब्दो विद्वान् गोमानलंकरिष्णुश्च ॥ १७ ॥
[2]सद्वित्तसारसुभगो नरेन्द्रमन्त्री सुचतुरोऽपि।
पीनोच्चतनुः पूज्यः सतां समूहस्य धनुषि कवौ ॥ १८ ॥

यदि उत्पत्ति के समय धनुराशि में शुक्र हो तो जातक—अच्छे धर्म-कर्म अर्थ के फल से युक्त, संसार प्रिय, सुन्दर, श्रेष्ठ, वंश में धनी, पण्डित, गायों का पालक, भूषणेच्छु, अच्छे धन व स्त्री से सौभाग्यवान्. राजा का सचिव, सुन्दर चतुर, मोटा व ऊँचा शरीर वाला तथा सज्जन समुदाय का पूजनीय होता है ॥ १७–१८ ॥

मकर राशिस्थ शुक्र का फल

व्ययभयपरिसन्तप्तो दुर्बलदेहो जराङ्गनासक्तः।
हृद्रोगी धनलुब्धो लोभानृतवञ्चनो निपुणः ॥ १९ ॥
क्लीबो विपन्नचेष्टः परार्थचेष्टः सुदुःखितो मूढः।
मकरे दानवपूज्ये क्लेशसहो जायते पुरुषः ॥ २० ॥

यदि उत्पत्ति के समय मकर राशि में शुक्र हो तो जातक—खर्चे के भय से दुःखी वा खर्च व भय से पीड़ित, कृश शरीर, वृद्धा स्त्री में आसक्त (प्रेम), हृदय का रोगी, धन का लोभी, लोभ के पीछे झूठ बोल कर ठगने वाला, चतुर, नपुंसक, विपत्ति का इच्छुक, दूसरे के धन की इच्छा करने वाला, दुःखो, मूर्ख तथा क्लेश सहन कर्ता होता है ॥ १९–२० ॥

कुम्भ राशिस्थ शुक्र का फल

उद्वेगरोगतप्तः कर्मसु विफलेषु सर्वदाभिरतः।
परयुवतिगो विधर्मा गुरुभिः पुत्रैश्च कृतवैरः ॥ २१ ॥

---

[1] कुलार्थ। [2] दार।

स्नानोपभोगभूषणवस्त्रादिनराकृतो मलिनः ।
कुम्भधरे भृगुपुत्रे भवति पुमान्नात्र सन्देहः ॥ २२ ॥

यदि उत्पत्ति के समय कुम्भ राशि में शुक्र हो तो जातक—उद्वेग रोग से पीड़ित, व्यर्थ के कार्यों में सदा तत्पर, पर स्त्री गामी, अधर्मी, गुरुजन व पुत्रों से शत्रुता करने वाला, स्नान-उपभोग-अलङ्कार, वस्त्रादि से रहित व मलिन होता है इसमें संदेह नहीं है ॥ २१–२२ ॥

मीन राशिस्थ शुक्र का फल

दाक्षिण्यदानगुणवान् महाधनोऽधःकृतारिपक्षश्च ।
लोके ख्यातः श्रेष्ठो विशिष्टचेष्टो नृपतिदयितः ॥ २३ ॥
वाग्बुद्धियुतोदारः सज्जनपरिलब्धविभवमानश्च ।
स्वादेयवचा मीने वंशधरो ज्ञानवान् शुक्रे ॥ २४ ॥

यदि उत्पत्ति के समय मीन राशि में शुक्र हो तो जातक—चतुर, दानी, गुणी, बड़ा धनी, शत्रु पक्ष को नीचा दिखाने वाला, संसार में प्रसिद्ध, श्रेष्ठ, विशेष कार्य का इच्छुक, राजा का प्रिय, वाणी व बुद्धि से युत अर्थात् वाग्मी व बुद्धिमान्, उदार, सज्जनों से ऐश्वर्य व सम्मान को पाने वाला, अपनी बात का धनी, वंश पालक तथा ज्ञानी होता है ॥२३–२४॥

भौम राशिस्थ (मेष, वृश्चिक) शुक्र पर ग्रहों की दृष्टि के फल

स्त्रीहेतोर्दुःखार्तं युवतिनिमित्ताद्विनष्टधनसौख्यम् ।
कुजभवने रविदृष्टो जनयति शुक्रो नृपं प्राज्ञम् ॥ २५ ॥
उद्बन्धनमतिचपलं कामातुरमधमयुवतिभर्तारम् ।
जनयति भृगोरपत्यं रजनीकरवीक्षितं कुजभे ॥ २६ ॥
धनसौख्ययानरहितं परकर्मकरं मलिनचेष्टम् ।
जनयति रुधिरक्षेत्रे रुधिरेण निरीक्षितः शुक्रः ॥ २७ ॥
मूर्खं धृष्टमनार्यं स्वबन्धुपरिवादकं विनयहीनम् ।
चोरं क्षुद्रं क्रूरं बुधदृष्टो भार्गवः कुरुते ॥ २८ ॥
सुनयनमुदारदानं[1] सुशीरं व्यायतं बहुसुतं च ।
त्रिदशगुरुदृष्टमूर्तिर्जनयति रुधिरालये शुक्रः ॥ २९ ॥
अतिमलिन[2]मलसमटनस्वभिमतजनसेवकं कुरुते ।
भृगुतनयो रुधिरगृहे दिनकरपुत्रेण वीक्षितश्चोरम् ॥ ३० ॥

यदि उत्पत्ति के समय भौम राशिस्थ शुक्र, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—स्त्री के निमित्त दुःखी व पीड़ित, स्त्री के कारण धन व सुख को नष्ट करने वाला, राजा व पण्डित होता है ।

---

१ दारं । २ मधन ।

यदि भौम राशिस्थ शुक्र, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक—बन्धन भोक्ता, अधिक चञ्चल, काम के पीछे आतुर व नीच स्त्री का पति होता है।

यदि भौम राशिस्थ शुक्र, भौम से दृष्ट हो तो जातक—धन-सुख-सम्मान से हीन, दूसरे का कार्य करने वाला व दूषित इच्छा कर्ता होता है।

यदि भौम राशिस्थ शुक्र, बुध से दृष्ट हो तो जातक—मूर्ख, ढीठ, नीच, अपने बन्धुओं की शिकायत करने वाला, नम्रता से रहित, चोर, क्षुद्र व कठोर होता है।

यदि भौम राशिस्थ शुक्र, गुरू से दृष्ट हो तो जातक—सुन्दर नेत्र वाला, उदार चित्त स्त्री वाला वा उदारता से दान कर्त्ता, सुन्दर देहधारी, लम्बा व अधिक पुत्र वाला होता है।

यदि भौम राशिस्थ शुक्र, शनि से दृष्ट हो तो जातक—अत्यन्त मलीन, आलसी, घूमने वाला व निर्धन, अपने स्वभाव के मनुष्यों का नौकर व चोर होता है ॥२५–३०॥

॥ इति कुजभे दृष्टिः ॥

स्वराशिस्थ (वृष तुला) शुक्र पर ग्रहों की दृष्टि के फल

दिनकरदृष्टः शुक्रो वरजायाभोगिनं धनसमृद्धम् ।
जनयत्युत्तमपुरुषं स्त्रीहेतोर्निर्जितं स्वगृहे ॥ ३१ ॥
परमकुलीनापुत्रं सुखधन[1]दानैः सुखैरुपेतं च ।
अत्यार्यमति[2]कान्तं स्वगृहे चन्द्रेक्षितः शुक्रः ॥ ३२ ॥
दुःशीलाभर्तारं प्रमदाहेतोश्च नष्टगृहदारम् ।
जनयति भृगुनन्दकरो मदनवशं वक्रसन्दृष्टः ॥ ३३ ॥
कान्तं मधुरं सुभगं सुखधृतिमतिसंयुतं विपुलसत्वम् ।
जनयति बुधेन दृष्टः सर्वगुणसमन्वितं ख्यातम् ॥ ३४ ॥
प्रमदापुत्रगृहाणां भागिनमथ यानवाहनानां च ।
स्वर्क्षे गुरुसन्दृष्टः कुरुते भृगुरिष्टचेष्टानाम् ॥ ३५ ॥
स्वल्पसुखं स्वल्पधनं दुःशीलं [3]वर्धकीपतिं चैव ।
सौरेक्षितस्तु जनयेत् व्याधितदेहं नरं शुक्रः ॥ ३६ ॥

यदि उत्पत्ति के समय स्वराशिस्थ शुक्र, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—सुन्दर स्त्री भोक्ता, धन से संपन्न, उत्तम पुरुष तथा स्त्री के निमित्त पराजित होता है।

यदि स्वराशिस्थ शुक्र, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक—परम कुलीना स्त्री का पुत्र, अर्थात् माता का वंश उत्तम, सुख-धन-सम्मान-व पुत्रों से युत, अत्यन्त श्रेष्ठ बुद्धिमान् व सुन्दर होता है।

यदि स्वराशिस्थ शुक्र, भौम से दृष्ट हो तो जातक—दुश्चरित्रा स्त्री का पति, स्त्री के कारण घर व स्त्री को नष्ट करने वाला तथा कामी होता है।

---

[1] सुखधनमानैः सुतैरुपेतं । [2] अति च कान्तं । [3] बन्धकीपतिं ।

यदि स्वराशिस्थ शुक्र, बुध से दृष्ट हो तो जातक—सुन्दर, मीठा, सौभाग्यवान्, सुख-धैर्य-बुद्धि से युक्त, अधिक बली, सर्वगुण संपन्न तथा विख्यात होता है।

यदि स्वराशिस्थ शुक्र, गुरु से दृष्ट हो तो जातक—स्त्री-पुत्र-घर-यान-सवारी का सुख भोक्ता व इच्छित वस्तु का प्राप्त कर्त्ता होता है।

यदि स्वराशिस्थ शुक्र, शनि से दृष्ट हो तो जातक—अल्प सुखी, लघुधनी, दुष्ट स्वभावी, दुश्चरित्रा स्त्री का पति व रोग से युत शरीर वाला होता है ॥ ३१–३६ ॥

॥ इति स्वगृहे दृष्टिः ॥

बुध राशिस्थ (मिथुन कन्या) शुक्र पर ग्रहों की दृष्टि के फल

नृपजननीपत्नीनां कृत्यकरं पण्डितं धनिनम्।
दिनकरदृष्टः शुक्रो जनयति सुखभागिनं बुधभे ॥ ३७ ॥
कृष्णनयनं सुकेशं शयनासनयानभागिनं कान्तम्।
सुकुमारमिन्दुदृष्टो जनयति शुक्रो नरं सुभगम् ॥ ३८ ॥
कामपरमति च सुभगं युवतिकृते चार्थनाशनं।
वक्रेक्षितस्तु शुक्रो बुधभवनमुपाश्रितः प्रसवे ॥ ३९ ॥
प्राज्ञं मधुरं धनिनं वाहन[1]परिवारभागिनं सुभगम्।
गणपतिस[2]थेशं वा बुधदृष्टो भार्गवो बुधभे ॥ ४० ॥
बुधभवनगतः शुक्रस्त्रिदशगुरुनिरीक्षितः कुरुते।
अतिसुखमतीव दीनं प्रतिरूपकरं ज्ञमाचार्यम् ॥ ४१ ॥
दिनकरसुतेन दृष्टो बुधभवनगोऽतिदुःखिनं शुक्रः।
जनयति [3]खलु परिभूतं चपलं द्वेष्यं च मूर्खं च ॥ ४२ ॥

यदि उत्पत्ति के समय बुध राशिस्थ शुक्र, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—राजा-माता व स्त्री का कार्य-कर्त्ता, विद्वान्, धनी तथा सुख भोगी होता है।

यदि बुध राशिस्थ शुक्र, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक—काले नेत्र वाला, सुन्दर वालों से युत, शय्या-आसन (बिछौना) यान (सवारी) का सुखभोगी तथा सुन्दर सुकुमार होता है।

यदि बुध राशिस्थ शुक्र, भौम से दृष्ट हो तो जातक—कामी, अत्यन्त सौभाग्यवान् व स्त्री के निमित्त धन का नाशक होता है।

यदि बुध राशिस्थ शुक्र, बुध से दृष्ट हो तो जातक—पण्डित, मनोहर, धनी, सवारी व परिवार से युत, सौभाग्यवान्, समुदाय का स्वामी वा ईश्वर वा धनाधिप होता है।

यदि बुध राशिस्थ शुक्र, गुरु से दृष्ट हो तो जातक—अत्यन्त सुखी, अधिक दीन, फोटो बनाने वाला, पण्डित व आचार्य होता है।

यदि बुध राशिस्थ शुक्र, शनि से दृष्ट हो तो जातक—अधिक दुःखी-तिरस्कृत, चञ्चल, द्रोही व मूर्ख होता है ॥ ३७–४२ ॥

॥ इति बुधभवने दृष्टिः ॥

---

[1] परिभोग। [2] गणपतिमथेश्वरं वा। [3] लघुपरिभूतं।

कर्क राशिस्थ शुक्र पर ग्रहों की दृष्टि के फल

कर्मपरां [1]शुद्धाङ्गीं नृपतिसुतां रोषणां धनोपेताम् ।
भार्यां ददाति शुक्रश्चन्द्रगृहे भानुसन्दृष्टः ॥ ४३ ॥
मातृसपत्नीजननं कन्यापूर्वप्रजं बहुसुतं च ।
सुखिनं सुभगं ललितं कुरुते चन्द्रेक्षितः शुक्रः ॥ ४४ ॥
सुकलाविदमत्याढयं स्त्रीहेतोर्दुःखितं सुभगम् ।
भौमेक्षितस्तु जनयेद्वृद्धिकरं बन्धुवर्गस्य ॥ ४५ ॥
पण्डितभार्यापतिकं बन्धुनिमित्तं च दुःखितं नित्यम् ।
[2]अतिसुखधनिनं प्राज्ञं करोति शशिभे बुधेक्षितः शुक्रः ॥ ४६ ॥
भृत्यैर्धनैश्च पुत्रैर्वाहनभोगैश्च बान्धवैर्मित्रैः ।
कुरुते नरमिह युक्तं नरपतिदयितं च गुरुदृष्टः ॥ ४७ ॥
स्त्रीनिर्जितं दरिद्रं पतितमरूपं तथैव चपलं च ।
जनयति सुखैर्विहीनं शशिभे शनिवीक्षितः शुक्रः ॥४८॥

यदि उत्पत्ति के समय कर्क राशिस्थ शुक्र, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—कार्यरत-शुद्ध (पवित्र) शरीर वाली वा गौरवर्ण की राजपुत्री-क्रोधिन-धन से युक्त स्त्री वाला होता है।

यदि कर्कराशिस्थ शुक्र, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक— सौतेली मा का जनक प्रथम कन्या का जन्म दाता, अधिक पुत्र वाला, सुखी, सौभाग्यवान् व सुन्दर होता है।

यदि कर्कराशिस्थ शुक्र, भौम से दृष्ट हो तो जातक—अच्छी कलाओं का ज्ञाता, अधिक धनी, स्त्री के कारण दुःखी, सौभाग्यवान् व कुटुम्बी लोगों को बढ़ाने वाला होता है।

यदि कर्क राशिस्थ शुक्र, बुध से दृष्ट हो तो जातक—विदुषी स्त्री का पति, बन्धु के निमित्त नित्य दुःखी, अधिक सुख व धन से युक्त वा सुख से हीन-पर्यटन कर्त्ता व पण्डित होता है।

यदि कर्क राशिस्थ शुक्र, गुरू से दृष्ट हो तो जातक—नौकर-धन-पुत्र-सवारी-भोग-बन्धु व मित्रों से युक्त तथा राजा का कृपा पात्र होता है।

यदि कर्क राशिस्थ शुक्र, शनि से दृष्ट हो तो जातक - स्त्री के वश में, दरिद्री, पतित, कुरूप, चञ्चल व सुखों से रहित होता है ॥ ४३–४८ ॥

॥ इति चन्द्रगृहे दृष्टिः ॥

सिंह राशिस्थ शुक्र पर ग्रहों की दृष्टि के फल

सेर्ष्यं कन्यादयितं कामार्तं युवति[3]कारणं धनिनम् ।
भागिनमथ करभाणां जनयति सिंहे रवीक्षितः शुक्रः ॥४९॥
मातृसपत्नीजननं युवतिकृते दुःखितं विभववन्तम् ।
सिंहे नानामतिकं करोति चन्द्रेक्षितः शुक्रः ॥५०॥

---

१ अतिरुचिरां शुक्लाङ्गी । २ असुखिनमटनं । ३ युवतिकारणाद्धनिनं ।

नृपपुरुषं विख्यातं युवतिकृते वल्लभं धनसमृद्धम् ।
सुभगं परदाररतं सिंहे बुधवीक्षितः शुक्रः ॥५१॥
संग्रहनिरतं लुब्धं स्त्रीलोलं पारदारिकं शूरम् ।
शठमानृतिकं धनिनं सिंहे बुधवीक्षितः शुक्रः ॥५२॥
वाहनधनभृत्ययुतं बहुदारपरिग्रहं रविक्षेत्रे ।
कुरुते नरेन्द्रमन्त्रिणमिन्द्रगुरुनिरीक्षतः शुक्रः ॥५३॥
नृपतिं नृपतिप्रतिमं विख्यातं कोशवाहनसमृद्धम् ।
रण्डापतिं सुरूपं दुःखयुतं सौरसन्दृष्टः ॥५४॥

यदि उत्पत्ति के समय सिंह राशिस्थ शुक्र, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—ईर्ष्यालु, कन्या का प्यारा, काम से पीडित, स्त्री के निमित्त धनी, तथा हाथियों का सुखभागी होता है ।

यदि सिंह राशिस्थ शुक्र, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक—माता के लिये सौतेली माता को पैदा करने वाला, स्त्री के लिये दुःखी, ऐश्वर्यवान् तथा अनेक बुद्धि वाला अर्थात् अस्थिर बुद्धि का होता है ।

यदि सिंह राशिस्थ शुक्र, भौम से दृष्ट हो तो जातक—राज पुरुष, विख्यात, स्त्रियों का प्रेमी, धन से संपन्न, सौभाग्यवान् एवं परस्त्री में लीन होता है ।

यदि सिंह राशिस्थ शुक्र, बुध से दृष्ट हो तो जातक—संग्रह करने में तत्पर, लोभी स्त्रैण, परस्त्रीगामी, वीर, धूर्त, मिथ्यावादी तथा धनी होता है ।

यदि सिंह राशिस्थ शुक्र, गुरू से दृष्ट हो तो जातक—सवारी-धन-नौकर से युक्त, अधिक स्त्री का गृहीता तथा राज सचिव होता है ।

यदि सिंह राशिस्थ शुक्र, शनि से दृष्ट हो तो जातक—राजा या राजा के समान, प्रसिद्ध, धन व सवारी से संम्पन्न, विधवा का पति, स्वरूपवान् व दुःखी होता है ।४९-५४।

॥ इति सिंहे दृष्टिः ॥

गुरु राशिस्थ (धनु, मीन) शुक्र पर ग्रहों की दृष्टि के फल

अतिरौद्रमतिं च शूरं गुरुभे प्राज्ञं च धनिनमतिदयितम् ।
रविणा दृष्टो जनयति विदेशगमनं नरं शुक्रः ॥ ५५ ॥
ख्यातं नरेन्द्रपुरुषं भोगैरशनैः [1]समन्वितं विपुलैः ।
कुरुते ह्यनुपमसारं गुरुभे चन्द्रेक्षितः शुक्रः ॥ ५६ ॥
अधिकद्वेष्यं स्त्रीणां विचित्रसुखदुःखमर्थवन्तं च ।
कुरुते गोधनमग्र्यं गुरुभे भौमेक्षितः शुक्रः ॥ ५७ ॥
आभरणभूषणानां भागिनमपि चान्नपानानाम् ।
बुधदृष्टो भृगुतनयः कुरुते गुरुभेऽर्थवाहनसमृद्धम् ॥ ५८ ॥
गजतुरगगोधनाढ्यं बहुपुत्रकलत्रमतिसुखिनम् ।
गुरुणा दृष्टो गुरुभे जनयति शुक्रो महाविभवम् ॥ ५९ ॥

---

[1] समैः ।

नित्यं च धनप्रायं सुखिनं भोगान्वितं धनसमृद्धम् ।
गुरुभवने शनिदृष्टः कुरुते शुक्रो नरं सुभगम् ॥ ६० ॥

यदि उत्पत्ति के समय गुरुराशिस्थ शुक्र, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—अत्यन्त क्रोध युक्त बुद्धि वाला, वीर, पण्डित, धनी, अधिक कृपालु व विदेश गामी होता है ।

यदि गुरुराशिस्थ शुक्र, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक– प्रसिद्ध, राजपुरुष, अनेक अशनादि भोगों से युत तथा अद्वितीय बलवान् होता है ।

यदि गुरुराशिस्थ शुक्र, भौम से दृष्ट हो तो जातक—स्त्रियों का अधिक द्वेषी, अनेक प्रकार के सुख-दुःख-धन से युक्त, गोधन वाला तथा उत्तम अर्थात् समस्त कार्यों में अग्रगण्य होता है ।

यदि गुरुराशिस्थ शुक्र, बुध से दृष्ट हो तो जातक—वस्त्र अलङ्कार-अन्न-पान का भागी तथा धन-सवारी से सम्पन्न होता है ।

यदि गुरुराशिस्थ शुक्र, गुरू से दृष्ट हो तो जातक—हाथी-घोड़ा-गायादि से धनी, अधिक पुत्र व स्त्री वाला, अति सुखी तथा बड़ा धनवान् होता है ।

यदि गुरुराशिस्थ शुक्र, शनि से दृष्ट हो तो जातक—प्रतिदिन धन कमाने वाला, सुखी, भोगी, धन संपन्न एवं सौभाग्यवान् होता है ॥ ५५–६० ॥

॥ इति गुरुभे दृष्टिः ॥

शनि राशिस्थ (मकर, कुम्भ) शुक्र पर ग्रहों की दृष्टि के फल

स्तिमितं वृषभं स्त्रीणां महाधनं सत्यसौख्यसंपन्नम् ।
सौरगृहे रविदृष्टः कुरुते शुक्रो नरं शूरम् ॥६१॥
ओजस्विनमतिशूरं[1] स्वाढ्यं वपुषान्वितं सुभगम् ।
कुरुते शशिना दृष्टो रविजगृहे भार्गवः कान्तम् ॥६२॥
जायाविनाशकारणमनर्थवहुलं च रोगिणं शुक्रः ।
कुरुते श्रमाभितप्तं पश्चात्सुखिनं च कुजदृष्टः ॥६३॥
प्राज्ञं धनचयनिरतं निधानरुचिमतिशयेन विद्वांसम् ।
जनयति बुधेन दृष्टो भृगुतनयः सत्यसौख्यसम्पन्नम् ॥६४॥
प्रियवस्त्रमाल्यगन्धं सुकुमारं गीतवादितविधिज्ञम् ।
जनयति गुरुणा दृष्टो भृगुपुत्रः सत्कलत्रयुतम् ॥६५॥
सौरगृहे शनिदृष्टः शुक्रो नरवाहनार्थभोगयुतम् ।
मलिनं श्यामशरीरं सुरुचिरगात्रं महादेहम् ॥६६॥

यदि उत्पत्ति के समय शनि राशिस्थ शुक्र, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—निश्चल, स्त्रियों के मध्य में सांड़ की तरह स्वच्छन्दचारी, अधिक धनी, सत्यता व सुख से युत तथा वीर होता है ।

यदि शनि राशिस्थ शुक्र, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक—तेजस्वी, अधिक वीर वा अति रूववान्, धनवान्, सुन्दर शरीर धारी एवं भाग्यवान् होता है ।

---

[1] अतिरूपं ।

यदि शनि राशिस्थ शुक्र, भौम से दृष्ट हो तो जातक—स्त्री नाश निमित्त से अधिक अन्याय कर्त्ता, रोगी, परिश्रम से पीड़ित तथा पीछे सुखी होता है ।

यदि शनि राशिस्थ शुक्र, बुध से दृष्ट हो तो जातक—पण्डित, धन-संग्रह में तत्पर, निधान का इच्छुक, अत्यन्त विद्वान्, सत्य व सुख से समृद्ध होता है ।

यदि शनि राशिस्थ शुक्र, गुरू से दृष्ट हो तो जातक—वस्त्र-माला व सुगन्धादि का प्रेमी, सुकुमार, गाने बजाने की प्रक्रिया का ज्ञाता तथा अच्छी स्त्री से युत होता है ।

यदि शनि राशिस्थ शुक्र, शनि से दृष्ट हो तो जातक—नौकर व धन भोग से युत, दूषित तथा विशाल सुन्दर कृष्ण (काला) देहधारी होता है ।। ८१–८६ ।।

।। इति सौरगृहे दृष्टिः ।।

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां शुक्रचारो नामाष्टाविंशोऽध्यायः ।

एकोनत्रिंशोऽध्यायः

मेष राशिस्थ शनि का फल

व्यसनपरिश्रमतप्तः [1]प्रचण्डशीलः स्वबन्धुपक्षघ्नः ।
निष्ठुरधृष्टातिवचा विगर्हितो निर्धनः कुवेषश्च ।।१।।
मेषेऽर्कजे सुरोषो जघन्यकर्मा च लब्धदोषोऽपि ।
प्रियवैरो नैकृतिको नृशंसकोऽसूयकः पापः ।।२।।

यदि प्रादुर्भाव के समय मेष राशि में शनि हो तो जातक—व्यवसन व परिश्रम से पीड़ित, उग्र स्वभावी वा प्रपञ्ची, अपने बन्धु वर्ग का निहन्ता, निठुर, ढीठ, अधिक बोलने वाला, निन्दित, धनहीन, कुरूप, क्रोधी, घृणित कार्य कर्ता, दोषी, शत्रुता का प्रेमी, कुचाली वा शठ, पर द्रोही, दया रहित व पापी होता है ।। १–२ ।।

वृष राशिस्थ शनि का फल

अर्थविहीनः प्रेष्यो न युक्तवाक्यो न सत्यकर्मा च ।
वृद्धस्त्रीहृदयहरः कुसुहृत् स्त्रीव्यसनसंसक्तः ।।३।।
सौरे वृषभं याते भवति च जातः पराङ्गनाप्रेष्यः ।
नैकृतिकः स्फुटदृष्टो बहुक्रियासङ्गतो मूढः ।।४।।

यदि प्रादुर्भाव के समय वृष राशि में शनि हो तो जातक—निर्धन, सेवक, अनुचित वादी, असत्य कार्य कर्त्ता, वृद्धा स्त्री के हृदय को चुराने वाला, नीच मित्रों से युत, स्त्री व्यवसन में तत्पर, दूसरे की स्त्री का नौकर, कुचाली वा शठ, देखने में स्पष्ट, अधिक कार्यों में तत्पर व मूर्ख होता है ।। ३–४ ।।

मिथुन राशिस्थ शनि का फल

बह्वृणबन्धनतप्तः श्रमान्वितो दाम्भिकोऽनुमन्त्री च ।
वाक्यगुणैः सन्त्यक्तः सदैव[2] गुह्यश्च कामशीलश्च ।।५।।

---

१ प्रपञ्चशीलः । २ पुंगुह्य ।

छलकृच्च मन्युदुष्टः क्रियातिशायी शठः [1]कुशीलश्च ।
बन्धनविहारसक्तो बाह्यक्रीडानुगो मिथुने ॥६॥

यदि प्रादुर्भाव के समय मिथुन राशि में शनि हो तो जातक––अधिक ऋण व बन्धन से पीड़ित, परिश्रमी पाखण्डी व उनका मन्त्री, कुत्सित वादी, सदा ही छिपक के रहने वाला, कामी, छलिया (कपटी), कोध से नीच, कार्यों में आलसी, धूर्त, दुष्टस्वभावी, बन्धन व विहार में आसक्त व बाहरी क्रोडा का अनुगामी होता है ॥ ५–६ ॥

कर्क राशिस्थ शनि का फल

सुभगान्वितो दरिद्रो बाल्ये रोगातिपीडितः प्राज्ञः ।
जननीरहितोऽतिमृदुर्विशिष्टनिरतः सदातुरश्चापि ॥७॥
परबाधको विशिष्टो बन्धुविरुद्धो विलोमशीलश्च ।
मध्ये भूपतितुल्यः परभोगविबर्धितः शशिभे ॥८॥

यदि प्रादुर्भाव के समय कर्क राशि में शनि हो तो जातक–––सुन्दर भाग्यवती से युक्त, दरिद्री, बाल्यकाल में रोगों से अधिक दुःखो, पण्डित, मातृहीन, अति सरल, विशेष कार्यों में तत्पर, सदा रोगी, दूसरे का प्रतिबन्धक, विशिष्ट (प्रसिद्ध), बन्धु विरोधी, विपरीत स्वभावी, बीच में (मध्यावस्था में) राजा के समान तथा दूसरे के सुख से बढ़ने वाला होता है ।। ७–८ ॥

सिंह राशिस्थ शनि का फल

लिपिपाठ्यपरोऽभिज्ञो विगर्हितो विगतशीलश्च ।
स्त्रीवियुतो भृतिजीवी स्वपक्षरहितो मुदा हीनः ॥९॥
नीचक्रियासु निरतो विवृद्धरोषो मनोरथै[2]र्दान्तः ।
भाराध्वश्रमदुःखैः प्रकीर्णदेहो यमे सिंहे ॥१०॥

यदि प्रादुर्भाव के समय सिंह राशि में शनि हो तो जातक—लिखने व पढ़ने में रत, ज्ञाता, निन्दित, शालोनता से रहित, स्त्री से हीन, सेवक (नौकर) वृत्ति से जीने वाला अपने जनों से हीन, अप्रसन्न, निन्दित कार्यों में तत्पर, अधिक क्रोधी, मनोरथों से अनुद्विग्न वा भ्रान्त, भार व मार्ग के श्रम से दुखो तथा मध्यम शरीरधारी होता है ॥ ९–१० ॥

कन्या राशिस्थ शनि का फल

षण्डाकारोऽतिशठः परान्नवेश्यारतोऽल्पमन्त्रश्च ।
शिल्पकथास्वनभिज्ञो वि[3]कृत्यचेष्टो लसत्सुतार्थश्च ॥११॥
[4]अधनः परोपकारी कन्याजनदूषकः क्रियानुरतः ।
कन्यायां रवितनये ह्यवेक्ष्यकारी पुमान् जातः ॥१२॥

यदि प्रादुर्भाव के समय कन्या राशि में शनि हो तो जातक—नपुंसाकृति, अधिक धूर्त, दूसरे के अन्न को खाने वाला, वेश्यागामी, लघुगुप्त वादी, शिल्प कथा अर्थात् शिल्प शास्त्र का अज्ञाता, विशिष्ट कार्य का इच्छुक, सुत (पुत्र) व धन से शोभित,

---

१ कुशिल्पश्च । २ भ्रान्तः । ३ स्वकृत्य । ४ अशठः । ५ स्थिरार्थं ।

सज्जन, परोपकारी, कन्याजन को दूषित करने वाला, कार्यों में तत्पर तथा देखकर कार्य करने वाला होता है ॥ ११–१२ ॥

तुला राशिस्थ शनि का फल

अर्थपरश्चारुवचा नरो विदेशाटनाप्तमानधनः ।
नृपतिः सुबोधनो वा स्वपक्षगुप्तस्थितार्थः स्यात् ॥१३॥
वृन्दसभानां ज्येष्ठो वयःप्रकर्षात्कृतास्पदः साधुः ।
कुलटानटीविटस्त्रीरमणो रविजे तुलायाते ॥१४॥

यदि प्रादुर्भाव के समय तुला राशि में शनि हो तो जातक—धन लोलुप, सुन्दर वादी, विदेश भ्रमण से धन व सम्मान प्राप्त कर्ता, राजा वा सुन्दर ज्ञाता, अपने जनों से रक्षित धन वाला, समुदाय व सभा में महान्, (बड़ा), अवस्था के प्रभाव से श्रेष्ठ स्थान प्राप्त करने वाला तथा कुलटा-नर्तकी-धूर्त स्त्री का भोगी होता है ॥ १३–१४ ॥

वृश्चिक राशिस्थ शनि का फल

द्वेषपरो विषमो वा विषशस्त्रघ्नः प्रचण्डकोपश्च ।
लुब्धो दृप्तोऽर्थयुतः परस्वहरणे समर्थश्च ॥१५॥
बाह्यो मङ्गलवाद्यैर्नृशंसकर्मा ह्यनेकदुःखः स्यात ।
अष्टमराशौ रविजे क्षयव्ययव्याधिभिस्तप्तः ॥१६॥

यदि प्रादुर्भाव के समय वृश्चिक राशि में शनि हो तो जातक––द्रोह, में तत्पर, वा कुटिल, विष (जहर) व शास्त्र से आहत, उग्र क्रोधी, लोभी अहङ्कारी, धनी, दूसरे के धन हरण करने में समर्थ, माङ्गलिक कार्यों से बहिर्मुख, निन्दित कार्य कर्ता, हानि व्यय (खर्च) रोगों से पीड़ित होकर अनेक प्रकार के दुख पाने वाला होता है ॥ १५–१६ ॥

धनु राशिस्थ शनि का फल

व्यवहारबोध्यशिक्षाश्रुतार्थविद्याभिधानुकूलमतिः ।
पुत्रगुणैर्विख्यातः स्वधर्मवृत्तैश्च शीलैश्च ॥१७॥
अन्त्ये वयसिं च लक्ष्मीं भुनक्ति परमां प्रलब्धमानस्तु ।
अल्पवचा बहुसंज्ञो मृदुर्यमे कार्मुकस्थे स्यात् ॥१८॥

यदि प्रादुर्भाव के समय धनु राशि में शुक्र हो तो जातक—व्यवहार-बोध्य (ज्ञान) अध्ययन-शास्त्रार्थ-विद्या-अभिधा में अनुकूल बुद्धिवाला, पुत्र के गुणों से एवं अपने धर्माचरण से व स्वभाव (शालीनता) से विख्यात, अन्त्य अवस्था में अतुल लक्ष्मी का भोगी, संसार में सम्मान प्राप्त कर्ता, अल्प भाषी, बहुत नाम व सरल होता है ॥ १७–१८ ॥

मकर राशिस्थ शनि का फल

परयोषित्क्षेत्राणां प्रभुः श्रुतिगुणैर्युतश्च बहुशिल्पः ।
श्रेष्ठश्च वंशजातैः पूज्यः परवृन्दसत्कृतः ख्यातः ॥ १९ ॥

स्नानविभूषणनिरतः क्रियाकलाज्ञः प्रवासशीलश्च ।
कोणे मृगभे जातः प्रजातशौर्योपचारः स्यात् ॥ २० ॥

यदि प्रादुर्भाव के समय मकर राशि में शनि हो तो जातक—दूसरे की स्त्री व क्षेत्र (स्थान) का मालिक, वेद का ज्ञाता व गुणी, अधिक शिल्प वेत्ता, श्रेष्ठ कुल के लोगों से पूजित, दूसरे समुदाय से सम्मान प्राप्त कर्ता, विख्यात स्थान व अलङ्कार का स्नेही, क्रिया (कार्य) कला का ज्ञाता, परदेशवासी, अधिक पराक्रमी व उपचार वेत्ता होता है ॥ १९–२० ॥

कुम्भ राशिस्थ शनि का फल

बह्वनृतः सुमहान्स्यान्मद्यस्त्रीव्यसनसम्प्रसक्तश्च ।
[1]धूर्तो वञ्चनशीलः कुसौहृदो ह्यतिदृढश्चण्डः ॥ २१ ॥
ज्ञानकथास्मृतिबाह्यः पराङ्गनार्थः सुकर्कशाभाषी ।
रवितनये कुम्भस्थे बहुक्रियारम्भकृतयत्नः ॥ २२ ॥

यदि प्रादुर्भाव के समय कुम्भ राशि में शनि हो तो जातक—अधिक झूठ बोलने वाला, मदिरा व स्त्री के व्यसन में आसक्त, अधिक धूर्त, ठग स्वभावी, दुष्ट मित्र वाला अधिक स्थिर, उग्र ज्ञानकथा व स्मृति धर्म से बहिर्मुख, दूसरे की स्त्री का इच्छुक कटुवक्ता तथा अधिक कार्यों का आरम्भ करने वाला होता है ॥ २१–२२ ॥

मीन राशिस्थ शनि का फल

प्रिययज्ञशिल्पविद्यः स्वबन्धुसुहृदां प्रधानशान्तश्च ।
संवर्धितार्थसुनयो रत्नपरीक्षासु कृतयत्नः ॥ २३ ॥
धर्मव्यवहाररतो विनीतशीलो गुणैः समायुक्तः ।
मीने भास्करतनये पश्चाद्भावास्पदं पुरुषः ॥ २४ ॥

यदि प्रादुर्भाव के समय मीन राशि में शनि हो तो जातक—यज्ञ व शिल्प का प्रेमी, अपने बन्धु व मित्रों में प्रधान तथा शान्त स्वभाव, धन वृद्धि कर्ता, नीति ज्ञाता रत्नों की परीक्षा में प्रयत्न करने वाला, धर्म व व्यवहार में लीन, नम्रस्वभावी, गुणवान् पीछे विकृत स्थान का प्राप्तकर्ता अथवा पीछे भावुक पद का प्राप्त कर्ता होता है ॥ २३–२४ ॥

नोट—सं० वि० वि० की पुस्तक में २४ वें श्लोक के चतुर्थ पाद में 'विषदः पश्चाद् भवेत्पुरुषः' अर्थात् पीछे जहर देने वाला होता है ॥ २३–२४ ॥

भौम राशिस्थ (मेष, वृश्चिक) शनि पर ग्रहों की दृष्टि के फल

कर्षणनिरतमथाढ्यं गोमहिषाजाविसंयुतं धन्यम् ।
सूर्येण दृश्यमानो जनयति कर्मोद्यतं सौरिः ॥ २५ ॥
चपलं नीचप्रकृतिं नीचविरूपाङ्गनासु संसक्तम् ।
शनिरिन्दुदृष्टमूर्तिः सुखधनरहितं नरं कुरुते ॥ २६ ॥

---

[1] धूर्तकवञ्चनकुशलः ।

प्राणिवधपरं क्षुद्रं कुरुते चोराधिपं सुविख्यातम् ।
प्रिययुवतिकमांसपानं सौरो वक्रेक्षितः कुजभे ॥ २७ ॥
आनृतिकमधर्मपरं [1]बह्वाशं तस्करं प्रकाशं च ।
कौजे शनिर्ज्ञदृष्टः सुखविभवविनाकृतं पुरुषम् ॥ २८ ॥
सुखधनसौभाग्ययुतं नृपमन्त्रिणमग्रगं च सचिवानाम् ।
गुरुदृष्टो रवितनयः कुजगेहे मानवं कुरुते ॥ २९ ॥
अतिचपलमतिविरूपं पराङ्गनापण्ययुवतिसंसक्तम् ।
कुजभवने भृगुदृष्टो जनयति रविजो विवर्जितं भोगैः ॥ ३० ॥

यदि प्रादुर्भाव के समय भौम राशिस्थ शनि, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—खेती में तत्पर, धनी, गाय भैंस बकरी बकरा से युत, उत्तम तथा कार्यों में सन्नद्ध होता है।

यदि भौम राशिस्थ शनि, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक—चञ्चल, दुष्ट स्वभावी, दुष्टा व कुरूपा स्त्रियों में आसक्त, तथा सुख व धन से हीन होता है।

यदि भौम राशिस्थ शनि, भौम से दृष्ट हो तो जातक—जीवों की हिंसा में तत्पर, क्षुद्र, चोरों का स्वामी, प्रसिद्ध व स्त्री-मांस-मदिरा का प्रेमी होता है।

यदि भौम राशिस्थ शनि, गुरू से दृष्ट हो तो जातक—झूठ बोलने वाला, अधर्मी, अधिक खाने वाला वा अधिक बोलने वाला, प्रसिद्ध चोर तथा सुख-ऐश्वर्य से हीन होता है।

यदि भौम राशिस्थ शनि, गुरू से दृष्ट हो तो जातक—सुखी, धनी, सौभाग्यवान्, राजा का सचिव या सचिवों में प्रधान मुख्यमन्त्री वा प्रधान मन्त्री होता है।

यदि भौम राशिस्थ शनि, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—अधिक चञ्चल, बहुत कुरूप, दूसरों की स्त्री में या वेश्या में आसक्त तथा सुख भोग से हीन होता है ॥ २५–३० ॥

॥ इति कुजभवने दृष्टिः ॥

शुक्र राशिस्थ (वृष, तुला) शनि पर ग्रहों की दृष्टि के फल

स्फुटवाक्यं विगतधनं विद्वांसं परगृहेषु भोक्तारम् ।
रविणा दृष्टः सौरिः सितभे परिपेलवं पुरुषम् ॥ ३१ ॥
युवतिजनजनितसारं नृपमन्त्रिपुरस्कृतं युवतिकान्तम् ।
शशिना दृष्टः सौरिः कुरुते[2] सितभे कुटुम्बपरिवारम् ॥ ३२ ॥
संग्रामकथाभिज्ञं संग्रामपलायिनं सुबहुवाक्यम् ।
भृगुभे कुजसन्दृष्टो जनधनपरिवेष्टितं सौरः ॥ ३३ ॥
नित्यं विहसनशीलं [3]क्लीबतरं युवतिसेवकं नीचम् ।
बुधदृष्टो रवितनयः शुक्रगृहे मानवं कुरुते ॥ ३४ ॥

---

२ बहुवाचं । २ सितभे वस्त्रान्नकुसुमपरिवारं । ३ क्लीबकरं ।

परविषयदुःखसुखिनं परकार्यकरं प्रियं च लोकस्य।
कुरुते गुरुणा दृष्टो दातारं सोद्यमं सौरिः॥ ३५ ॥
मद्यस्त्रीकृतसौख्यं रत्नानां भाजनं महासत्त्वम्।
शुक्रगृहे सितदृष्टो जनयति सौरो नृपतिदयितम्॥ ३६ ॥

यदि प्रादुर्भाव के समय शुक्र राशिस्थ शनि, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—स्पष्ट बोलने वाला, निर्धन, विद्वान्, दूसरे के घर में खाने वाला तथा कृशगात्र (दुर्बल) होता है।

यदि शुक्र राशिस्थ शनि, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक—स्त्रियों की सहायता से बली, राज सचिव द्वारा सत्कृत अर्थात् पुरस्कार पाने वाला, स्त्रियों का प्रिय तथा बन्धुवों से युक्त होता है।

यदि शुक्र राशिस्थ शनि, भौम से दृष्ट हो तो जातक—युद्ध क्रिया का ज्ञाता, लड़ाई से दूर हटने वाला, सुन्दर अधिक भाषी, परिवार के मनुष्यों से व धन से युक्त होता है।

यदि शुक्र राशिस्थ शनि, बुध से दृष्ट हो तो जातक—प्रतिदिन हास्य में निरत, नपुंसक, स्त्रियों का भृत्य (दास) तथा दुष्ट होता है।

यदि शुक्रराशिस्थ शनि, गुरू से दृष्ट हो तो जातक—दूसरे के दु ख में दुःखी व सुख में सुखी, परोपकारी, संसार का प्रिय अर्थात् लोक प्रिय, दानी तथा उद्यमी होता है।

यदि शुक्र राशिस्थ शनि, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—मदिरा व स्त्रियों से सुख पाने वाला, अनेक रत्नों का पात्र, बड़ा बली तथा राजा का कृपा पात्र होता है॥ ३१–३६॥

॥ इति शुक्रगृहे दृष्टिः ॥

बुध राशिस्थ (मिथुन, कन्या) शनि पर ग्रहों की दृष्टि के फल

सुखरहितमथात्यन्तं धनरहितं धार्मिकं जितक्रोधम्।
क्लेशसहिष्णुं धीरं बुधभे रविवीक्षितः सौरिः॥ ३७ ॥
नृपतुल्यं स्निग्धतनुं नारीभ्यः प्राप्तविभवसत्कारम्।
स्त्रीणां वा कृत्यकरं सौरश्चन्द्रेक्षितो बुधभे॥ ३८ ॥
विख्यातमल्लमोहितमतिभारवहं तथा विकृतगात्रम्[1]।
रुधिराङ्गवीक्षिततनुर्जनयति सौरो नरं बुधभे॥ ३९ ॥
धनिनं नियुद्धकुशलं नृत्ताचार्यं च गीतकुशलं च।
शिल्पकमतीव निपुणं बुधभे बुधवीक्षितः सौरः॥ ४० ॥
प्रात्ययिकं राजकुले सर्वगुणसमन्वितं सतामिष्टम्।
गुणगुह्यधनं कुरुते गुरुणा दृष्टः शनैश्चारी॥ ४१ ॥
स्त्रीमण्डलेषु[2] कुशलं योगाचार्यमथ योगिनं वाऽपि[3]।
शुक्रेक्षितोऽर्कपुत्रः स्त्रीणामिष्टं नरं बुधभे॥ ४२ ॥

---

[1] विकृष्टमतिम्। [2] मण्डनेषु। [3] चापि।

यदि प्रादुर्भाव के समय बुध राशिस्थ शनि, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—सुख से हीन, अत्यन्त निर्धन, धर्मात्मा, क्रोध से रहित, कष्ट को सहने वाला तथा धैर्यवान् होता है।

यदि बुध राशिस्थ शनि, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक—राजा के सदृश, मुलायम (चिक्कण) शरीर वाला, स्त्रियों से ऐश्वर्य व सत्कार पाने वाला, अथवा स्त्रियों का कार्य कर्त्ता होता है।

यदि बुध राशिस्थ शनि, भौम से दृष्ट हो तो जातक—प्रसिद्ध योद्धा वा कुश्ती लड़ने वाला, मोह (ममता) बुद्धिवाला, वजन ढोनेवाला तथा विकार युक्त देहधारी वा टेढ़ी बुद्धिवाला होता है।

यदि बुध राशिस्थ शनि, बुध से दृष्ट हो तो जातक—धनी, युद्ध में चतुर, नाचने में प्रधान, गान में निपुण, चित्रकारी ज्ञाता तथा अत्यन्त चतुर होता है।

यदि बुध राशिस्थ शनि, गुरू से दृष्ट हो तो जातक—राजकुल का विश्वासी, समस्त गुणों से युक्त, सज्जनों का प्रेमी तथा गुणों से गुप्त धनी होता है।

यदि बुध राशिस्थ शनि, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक स्त्री समुदायों में चतुर वा स्त्री विवाहों में निपुण, योग शास्त्र का ज्ञाता वा योगाभ्यासी तथा स्त्रियों का प्रेमी होता है ॥ ३७-४२ ॥

॥ इति बुधभवने दृष्टिः ॥

कर्क राशिस्थ शनि पर ग्रहों की दृष्टि के फल

पित्रा रहितं बाल्ये दिनपतिदृष्टः शनैश्चरः शशिभे।
धनसुखदारविहीनं कदशनतुष्टं नरं पापम् ॥ ४३ ॥
जन्मनि मातुरनिष्टं धनवन्तं सहजपीडितं चैव।
शशिदृष्टः शशिभवने दिनक[1]रपुत्रो नरं कुरुते ॥ ४४ ॥
नृपतिसमर्पितविभवं विकलाङ्गं कनकरत्नपरिवारम्।
कुजदृष्टः शशिभवने कुबन्धुपत्नीरतं सौरिः ॥ ४५ ॥
निष्ठुरमतिप्रवाचं शमितारातिं च दाम्भिकं चापि।
जनयत्युत्तमचेष्टं बुधदृष्टो भास्करिः शशिभे ॥ ४६ ॥
क्षेत्रगृहाणां सुहृदां पुत्राणां भागिनं नरं कुरुते।
धनरत्नदारवन्तं शशिभे गुरुवीक्षितः सौरः ॥ ४७ ॥
आयतकुलजातानां रूपविलासैः सुखैश्च रहितानाम्।
कुरुते जन्म नराणां भृगुदृष्टः कर्कटे सौरिः ॥ ४८ ॥

यदि प्रादुर्भाव के समय कर्क राशि में शनि, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—बाल्यावस्था में पिता से हीन, धन-सुख-स्त्री से हीन, कुत्सित भोजन से प्रसन्न व पापी होता है।

यदि कर्क राशि में शनि, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक—माता के लिये अनिष्टकारी, धनी व भाईयों से पीडित होता है।

---

[1] पत्नीश्वरं।

यदि कर्क राशि में शनि, भौम से दृष्ट हो तो जातक—राजा से ऐश्वर्य पाने वाला, चिन्तित देहधारी, सुवर्ण व रत्नों से युत, कुत्सित परिवार की स्त्री में लीन वा पति होता है।

यदि कर्क राशि में शनि, बुध से दृष्ट हो तो जातक—कठोर बुद्धि, प्रवक्ता, शत्रु को शान्त करने वाला, पाखण्डी तथा उत्तम इच्छा करने वाला होता है।

यदि कर्क राशि में शनि, गुरू से दृष्ट हो तो जातक—खेत-घर-मित्र-पुत्रों का प्राप्त-कर्ता तथा धन-रत्न व स्त्री से युत होता है।

यदि कर्क राशि में शनि, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—उत्तम कुल में जन्म धारण करके स्वरूप-विलास (भोग) व सुखों से हीन होता है ॥ ४३–४८ ॥

॥ इति कर्कटके दृष्टिः ॥

सिंह राशिस्थ शनि पर ग्रहों की दृष्टि के फल

सुखधनहीनमनार्यं प्रियानृतं पानसक्तकुतनुं च।
भृतकं दुःखिनमेकं सिंहे सूर्येक्षितः सौरः ॥ ४९ ॥
नानारत्नधनानां युवतीनां भाजनं विपुलकीर्तिम्।
शिशिरगुद्दृष्टः सिंहे सौरो नृपवल्लभं पुरुषम् ॥ ५० ॥
प्रतिदिनमटनमधन्यं चोरं गिरिदुर्गवासिनं क्षुद्रम्।
भार्यापुत्रविहीनं सिंहे सौरो रुधिरदृष्टः ॥ ५१ ॥
नैकृतिकमलसमधनं स्त्रीकर्मकरं मलीमसं दीनम्।
जनयति वुधेन दृष्टो दिनकरभवनाश्रितः सौरिः ॥ ५२ ॥
ग्रामपुरश्रेणीनां पुरोगमाढ्यं च पुत्रवन्तं च।
गुरुदृष्टः प्रात्ययिकं सिंहे सौरः सुशीलं च ॥ ५३ ॥
युवतिद्वेष्यं कान्तं मन्थरसुखभागिनं धनसमृद्धम्।
शुक्रेक्षितस्तु कुरुते भानुगृहे रविसुतः स्वन्तम् ॥ ५४ ॥

यदि प्रादुर्भाव के समय सिंह राशि में शनि, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—सुख व धन से रहित, उत्तमता से हीन, मिथ्याभाषी, मद्यपान में लीन, कुत्सित देहधारी, भृत्य तथा दुःखी होता है।

यदि सिंह राशि में शनि, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक—अनेक रत्न-धन-स्त्री का पात्र, अधिक कीर्ति वाला तथा राजा का प्रिय होता है।

यदि सिंह राशि में शनि, भौम से दृष्ट हो तो जातक—प्रतिदिन घूमने वाला, अप्रशंसनीय, चोर, पर्वत व किले का निवासी, क्षुद्र, स्त्री व पुत्र से हीन होता है।

यदि सिंह राशि में शनि, बुध से दृष्ट हो तो जातक—कपटी, आलसी, निर्धन, स्त्री का कार्यकर्ता, मलिन व दीन होता है।

यदि सिंह राशि में शनि, गुरू से दृष्ट हो तो जातक—गाँव-नगर-पंक्ति वा समुदाय का प्रधान, धनी, पुत्रवान्, विश्वासी तथा सुशील होता है। –

यदि सिंह राशि में शनि, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—स्त्रियों का द्रोही, सुन्दर, अल्प सुखभागी, धन से संपन्न, अन्त में शुभ गति पाने वाला होता है ।। ४९–५४ ।।

।। इति सिंहे दृष्टिः ।।

गुरुराशिस्थ (धनु, मीन) शनि पर ग्रहों की दृष्टि के फल

परपुत्राणां पितरं गुरुभे सूर्येक्षितः सौरः ।
तेभ्यो धनं च लभते नाम ख्यातिं च पूजां च ।। ५५ ।।
मातृरहितं सुशीलं नामद्वयसंयुतं रवेस्तनयः ।
कुरुते शशिना दृष्टो भार्यासुतवित्तसम्पन्नम् ।। ५६ ।।
वातव्याधिगृहीतं लोकद्वेष्यं च[1] पापशीलं च ।
क्षुद्रं निन्दितशीलं गुरुभे भौमेक्षितः सौरः ।। ५७ ।।
जनयति गुरुभवनस्थो नृपतिसमं सौख्यवन्तमाचार्यम् ।
मान्यं धनिनं सौम्यं सुभगं सौम्येक्षितः सौरः ।। ५८ ।।
नृपतिं नृपतुल्यं वा मन्त्रिणमथ नायकं च सेनायाः ।
जनयति गुरुणा दृष्टः [2]सर्वापद्वर्जितं सौरः ।। ५९ ।।
कुरुते द्विमातृपितृकं विपिनाद्रिषु जीविनं विविधशीलम् ।
जनयति सितेन दृष्टो रवितनयः कर्मसम्पन्नम् ।। ६० ।।

यदि प्रादुर्भाव के समय गुरुराशिस्थ शनि, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—दूसरे के पुत्रों का पिता तथा उन्हीं पुत्रों द्वारा धन-नाम-ख्याति-पूजा को पाने वाला होता है ।

यदि गुरुराशिस्थ शनि, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक—माता से हीन, सुशील, दो नाम वाला तथा स्त्री-धन-पुत्र से युक्त होता है ।

यदि गुरुराशिस्थ शनि, भौम से दृष्ट हो तो जातक—वायु जन्य रोग से युत, संसार द्वेषी; पापी वा प्रवासी, क्षुद्र तथा घृणित कार्य में रत होता है ।

यदि गुरुराशिस्थ शनि, बुध से दृष्ट हो तो जातक—राजा के समान, सुखी, प्रधान, सम्मानित, धनी, मृदु तथा सुन्दर या सौभाग्यवान् होता है ।

यदि गुरुराशिस्थ शनि, गुरू से दृष्ट हो तो जातक—राजा या राजा के सदृश वा सचिव, सेनानायक तथा समस्त आपत्तियों से रहित वा अर्थहीन मन्त्री होता है ।

यदि गुरुराशिस्थ शनि, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—दो माता व दो पिता वाला, वन व पर्वतों जीविका करने वाला, अनेक कार्यों में रत तथा कार्य को संपन्न करने वाला होता है ।। ५५–६० ।।

।। इति गुरुभे दृष्टिः ।।

स्वराशिस्थ (मकर, कुम्भ) शनि पर ग्रहों की दृष्टि के फल

रोगिणमरूपभार्यं परान्नभोगिनमतीव दुःखसहम् ।
अटनरतं भारसहं सौरः सूर्येक्षितः स्वगृहे ।।६१।।

---

[1] प्रवासशीलं । [2] शनिः सचिवमर्थवर्जितं गुरुभे ।

चपलमसत्यं पापं मातुरनिष्टं प्रियानृतं स्वाढ्यम् ।
उत्पन्नाटनदुःखं स्वगृहे चन्द्रेक्षितः सौरः ॥६२॥
अतिशूरं विक्रान्तं विख्यातगुणं महाजनपुरोगम् ।
तीक्ष्णं साहसनिरतं स्वगृहे वक्रेक्षितः सौरः ॥६३॥
भारसहं तामसिकं शोभनमटनज्ञमल्पवित्तं च ।
धन्यं जनयति शनिभे बुधेन संवीक्षितः सौरः ॥६४॥
समुदितगुणं नरेन्द्रं नृपवंशकरं चिरायुषमरोगम् ।
त्रिदशगुरुदृष्टमूर्तिर्जनयति सौरः स्वगृहसंस्थः ॥६५॥
धनिनं परदाररतं सुभगं सुखिनं च वित्तवन्तं च ।
उत्पन्नपानभक्ष्यं स्वगृहे शुक्रेक्षितः सौरः ॥६६॥

यदि प्रादुर्भाव के समय स्वराशिस्थ शनि, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—रोगी, रूप-रहित स्त्री का पति, दूसरे के अन्न को खाने वाला, अधिक दुःख को सहने वाला, घूमने में तत्पर व वजन को सहने वाला होता है।

यदि स्वराशिस्थ शनि, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक—चपल (चञ्चल) झूठा, वादी, पापी, माता का अनिष्टकारी, मधुर मिथ्याभाषी, धनी तथा घूँमने से दुःखी होता है।

यदि स्वराशिस्थ शनि, भौम से दृष्ट हो तो जातक—अधिक वीर, पराक्रमी, प्रसिद्ध गुणी, समुदाय का अग्रगामी, तीक्ष्ण (तीखा) तथा साहसी होता है।

यदि स्वराशिस्थ शनि, बुध से दृष्ट हो तो जातक—वजन सहने वाला, क्रोधी, सुन्दर, गति का ज्ञाता, अल्पधनी तथा प्रशंसनीय होता है।

यदि स्वराशिस्थ शनि, गुरू से दृष्ट हो तो जातक—प्रसिद्ध गुणी, राजा, राजा के वंश का कर्त्ता, दीर्घायु तथा नीरोग होता है।

यदि स्वराशिस्थ शनि, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—धनी, दूसरे की स्त्री में अनुरक्त, सौभाग्यवान्, सुखी, धनी तथा उपस्थित पान का भक्षी होता है ॥ ६१–६६ ॥

॥ इति स्वगृहे दृष्टिः ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां सौरचारो नाम एकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥

त्रिंशोऽध्यायः

ग्रहभाव फलाध्याय का कथन

मर्त्यादयः पदार्था जायन्ते येन सर्वजन्तूनाम् ।
तस्मादधुना वक्ष्ये भावाध्यायं विशेषेण ॥१॥

जिससे समस्त प्राणियों के शरीर, धन-भाई-सुखादि पदार्थ उत्पन्न होते हैं, इस कारण से अब मैं भावाध्याय का विशेषता पूर्वक वर्णन करता हूँ ॥ १ ॥

लग्नस्थ सूर्य का फल

लग्नेऽर्केऽल्पकचः क्रियालसमतिः क्रोधी प्रचण्डोन्नतो ।
मानी लोचनरूक्षककर्कशतनुः शूरोऽक्षमो निर्घृणः ।
स्फोटाक्षः शशिभे क्रिये सतिमिरः सिंहे निशान्धः पुमान् ।
दारिद्र्योपहतो विनष्टतनयो जातस्तुलायां नरः ॥२॥

यदि कुण्डली में लग्नस्थ सूर्य हो तो जातक—थोड़े बाल वाला, कार्यों में आलस्य युक्त बुद्धिवाला, क्रोधी, उग्र, ऊँची देहवाला अर्थात् लम्बा, अहङ्कारी, शुष्क दृष्टिवाला, कठोर देहधारी, वीर, क्षमा से रहित व निर्दयी होता है ।

यदि लग्न में कर्क राशिस्थ सूर्य हो तो फुली युक्त नेत्रवाला, मेष राशिस्थ सूर्य लग्न में हो तो मन्द दृष्टिवाला, सिंह राशिस्थ लग्न में हो तो रतोंदी वाला, यदि तुला राशिस्थ लग्न में हो तो दरिद्री और नष्ट पुत्र वाला होता है ॥ २ ॥

बृ० जा० में कहा है—शूरः स्तब्धो विकलनयनो निर्घृणोऽर्के तनुस्थे, मेषे सस्वस्तिमिरनयनः सिंहसंस्थे निशान्धः । नीचेऽन्धोऽस्वः शशिगृहगते बुद्बुदाक्षः पतङ्गे, (२० अ० १ श्लो) ॥ २ ।

द्वितीय भावस्थ सूर्य का फल

द्विपदचतुष्पद[1]भागी मुखरोगी नष्टविभवसौख्यश्च ।
नृपचोरमुषितसारः कुटुम्बगे स्याद्रवौ पुरुषः ॥३॥

यदि कुण्डली में द्वितीय भाव में सूर्य हो तो जातक—नौकर व गाय, भैंस बैलादि के सुख को भोगने वाला या इनसे युक्त, मुख का रोगी, ऐश्वर्य व सुख से रहित, राजा या चोर से अपहृत धन वाला होता है । ॥ ३ ॥

बृ० जा० में कहा है—भूरिद्रव्यो नृपहृतधनो वक्त्ररोगी द्वितीये (२० अ० १ श्लो०) ॥ ३ ॥

तृतीयभावस्थ सूर्य का फल

विक्रान्तो बलयुक्तो विनष्टसहजस्तृतीयके सूर्ये ।
लोके [2]मतोऽभिरामः प्राज्ञो जितदुष्टपक्षश्च ॥४॥

यदि कुण्डली में तृतीय भाव में सूर्य हो तो जातक—पराक्रमी, बलवान्, भाईयों से रहित, संसार में मान्य या संसार में श्रेष्ठ, पण्डित तथा शत्रुओं को जीतनेवाला होता है ॥ ४ ॥

बृ० जा० में कहा है—'मतिविक्रमवांस्तृतीयगेऽर्के' (२० अ० २ श्लो०) ॥४॥

चतुर्थभावस्थ सूर्य का फल

वाहनबन्धुविहीनः पीडितहृदयश्चतुर्थके सूर्ये ।
पितृगृहधननाशकरो भवति नरः कुनृपसेवी च ॥५॥

---

[1] भोगी । [2] मनो ।

यदि कुण्डली में चतुर्थ भाव में सूर्य हो तो जातक—सवारी व बन्धुओं से रहित, पीड़ित हृदयवाला, अर्थात् उद्विग्न चित्तवाला, पिता-घर-धन का नाशक तथा कुत्सित राजा का सेवन करने वाला होता है ॥ ५ ॥

बृ० जा० में कहा है—'विसुखः पीड़ितमानसश्चतुर्थे' (२० अ० २ श्लो०) ॥ ५ ॥

पञ्चमभावस्थ सूर्य का फल

सुखसुतवित्तविनः कर्षणगिरिदुर्गसेवकश्चपलः ।
मेधावी धनरहितः स्वल्पायुः पञ्चमे तपने ॥६॥

यदि कुण्डली में पञ्चमभाव में सूर्य हो तो जातक—सुख-पुत्र-धन से रहित, खेती पर्वत-किले का सेवी, चञ्चल, बुद्धिमान्, निर्धन तथा अल्पायु होता है ॥ ६ ॥

बृ० जा० में कहा है—'असुतो धनवर्जितस्त्रिकोणे' (२० अ० २ श्लो०) ॥ ६ ॥

विशेष—यहाँ वित्त विहीनः, धनरहितः यह पुनरुक्त होने से दोष प्रतीत होता है किन्तु सं० वि० की मातृका में 'सुख सुत मित्र विहीनः' यह पाठ उपलब्ध होने से दोषाभाव है । वित्त के स्थान पर मित्र होने से मित्रों से रहित यह अर्थ है ॥ ६ ॥

शत्रुभावस्थ सूर्य का फल

प्रबलमदनोदराग्निर्बलवान् षष्ठं समाश्रिते भानौ ।
श्रीमान् विख्यातगुणो नृपतिर्वा दण्डनेता वा ॥७॥

यदि कुण्डली में छटे भाव में सूर्य हो तो जातक—अधिक कामी, प्रबलजठराग्निवाला, अर्थात् अधिक पाचन शक्तिवाला, बली, धनवान्, प्रसिद्ध गुणी, राजा वा न्यायाधीश होता है ॥७॥

बृ० जा० में कहा है—'बलवान् शत्रुजितश्च शत्रुयाते' (२० अ० २ श्लो) ॥ ७ ॥

सप्तमभावस्थ सूर्य का फल

निःश्रीकः परिभूतः कुशरीरो व्याधितः [1]पुमान् द्यूने ।
नृपबन्धनसन्तप्तोऽमार्गरतो युवतिविद्वेषी ॥८॥

यदि कुण्डली में सप्तमभाव में सूर्य हो तो जातक-- निर्धन या चेष्टाहीन, तिरस्कृत, कुरूपवान्, रोगी, राजा के बन्धन से पीड़ित (दुःखी) दूषित मार्ग पर चलने वाला तथा स्त्री से शत्रुता रखने वाला होता है ॥ ८ ॥

बृ० जा० में कहा है—'स्त्रीभिर्गतःपरिभवं मदगे पतङ्गे' (२० अ० ३ श्लो०) ॥८॥

अष्टमभावस्थ सूर्य का फल

विकलनयनोऽष्टमस्थे धनसुखहीनोऽल्पजीवितः पुरुषः ।
भवति सहस्रमयूखे स्वभितजनविरहसन्तप्तः ॥९॥

यदि कुण्डली में अष्टमभाव में सूर्य हो तो जातक--चञ्चल नेत्र वाला वा हीन दृष्टि वाला, धन व सुख से रहित, अल्पायु तथा अपने इष्ट जनों के वियोग से दुःखी होता है ॥ ९ ॥

बृ० जा० में कहा है--'स्वल्पात्मजो निधनगे विकलेक्षणश्च' (२०अ० ३श्लो०) ॥९॥

---

[1] व्याधितो रवौ द्यूने ।

नवमभावस्थ सूर्य का फल

धनपुत्रमित्रभागी द्विजदेवतपूजनेऽतिरक्तश्च[1]।
पितृयोषिद्विद्वेषी नवमे तपने सुतप्तः स्यात् ॥१०॥

यदि कुण्डली में नवम भाव में सूर्य हो तो जातक—धन-पुत्र-मित्र से युक्त, ब्राह्मण व देव पूजा का भक्त, पिता व स्त्री से शत्रुता करने वाला तथा दुःखी होता है ॥ १० ॥

बृ० जा० में कहा है—'धर्मे सुतार्थसुतभाक्' (२० अ० ३ श्लो०) ॥ १० ॥

दशम भावस्थ सूर्य का फल

अतिमतिरतिविभवबलो धनवाहनबन्धुपुत्रवान् सूर्ये ।
सिद्धारम्भः शूरो दशमेऽधृष्यः प्रशस्यश्च ॥११॥

यदि कुण्डली में दशम भाव में सूर्य हो तो जातक अधिक बुद्धिमान्, अधिक ऐश्वर्यवान्, अधिक बली, धनवान्, सवारी का सुख पाने वाला, बान्धव व पुत्र से युक्त, प्रारम्भित कार्य की सिद्धि करने वाला, वीर, अजित व उत्तम होता है ॥ ११ ॥

बृ० जा० में कहा है—'सुखशौर्यभाक् खे' (२० अ० ३ श्लोक) ॥ ११ ॥

लाभ भावस्थ सूर्य का फल

सञ्चयनिरतो बलवान् द्वेष्यः प्रेष्यो विधेय भृत्यश्च[2]।
एकादशे विधेयः प्रियरहितः सिद्धकर्मा च ॥१२॥

यदि कुण्डली में एकादश भाव में सूर्य हो तो जातक संग्रहकर्ता बली, द्रोही, नौकर (सेवक) से रहित, वाणीपालक, प्रेमहीन तथा कार्यसाधक होता है ॥ १२ ॥

बृ० जा० में कहा है—'लाभे प्रभूतधनवान्' (२० अ० ३ श्लोक) ॥ १२ ॥

द्वादश भावस्थ सूर्य का फल

विकलशरीरः काणः पतितो वन्ध्यापतिः पितुरमित्रः ।
द्वादशसंस्थे सूर्ये बलरहितो जायते क्षुद्रः ॥ १३ ॥

यदि कुण्डली में बारहवें भाव में सूर्य हो तो जातक चञ्चल देहधारी, काना, पतित अर्थात् अपने कर्म से च्युत, वन्ध्या स्त्री का पति, पिता का शत्रु, बलहीन व नीच होता है ॥ १३ ॥

बृ० जा० में कहा है—'पतितस्तु रिःफे' (२० अ० ३ श्लोक) ॥ १३ ॥

॥ इति रविः ॥

लग्नस्थ चन्द्रमा का फल

दाक्षिण्यरूपधनभोगगुणैः प्रधान-
श्चन्द्रे कुलीरवृषभाजगते विलग्ने ।
उन्मत्तनीचबधिरो विकलश्च मूकः
शेषे नरो भवति कृष्णतनुर्विशेषात् ॥ १४ ॥

---

१ भक्तश्च । २ विभृत्यश्च ।

यदि कुण्डली में मेष-वृष-कर्क राशि का चन्द्रमा लग्न में हो तो जातक चतुरता-स्वरूप धन-भोग गुणों से प्रधान होता है। अवशिष्ट राशियों में स्थित होकर चन्द्र लग्न में हो तो पागल, दुष्ट, बहिरा; अशान्त, गूँगा एवं विशेषकर काली देह वाला होता है ॥ १४ ॥

वृ० जा० में कहा है—'मूकोन्मत्तजडान्धहीनबधिरप्रेष्याः शशाङ्कोदयः स्वर्क्षाजोच्चगते बहुसुतः सस्वः' (२० अ० ४ श्लोक) ॥ १४ ॥

द्वितीय भावस्थ चन्द्रमा का फल

अतुलितसुखमित्रयुतो धनैश्च चन्द्रे द्वितीयराशिगते ।
सम्पूर्णेऽतिधनेशो भवति नरोऽल्पप्रलापकरः ॥ १५ ॥

यदि कुण्डली में द्वितीय भाव में चन्द्रमा हो तो जातक अपरिमित सुख-धन-मित्रों से युक्त, सम्पूर्ण चन्द्रमा होने पर अधिक धन का स्वामी व अल्प बोलने वाला होता है ॥ १५ ॥

वृ० जा० में कहा है—'कुटुम्बो धने' (२० अ० ४ श्लोक) ॥ १५ ॥

तृतीय भावस्थ चन्द्रमा का फल

भ्रातृजनाश्रयणीयो मुदान्वितः सहजगे बलिनि ।
चन्द्रे भवति च शूरो विद्यावस्त्रान्नसङ्ग्रहणशीलः ॥ १६ ॥

यदि कुण्डली में तृतीय भाव में बली चन्द्रमा स्थित हो तो जातक भाईवर्ग का आश्रय अर्थात् सहारा, हर्ष से युक्त, वीर व विद्या-वस्त्र-अन्न के संग्रह में तत्पर होता है ॥ १६ ॥

वृ० जा० में कहा है 'हिस्रो भ्रातृगते' ॥ १६ ॥

चतुर्थ भावस्थ चन्द्रमा का फल

बन्धुपरिच्छदवाहनसहितो दाता चतुर्थगे चन्द्रे ।
[1]जलसंचारानुरतः सुखासुखोत्कर्षपरिमुक्तः ॥ १७ ॥

यदि कुण्डली में चतुर्थ भाव में चन्द्रमा हो तो जातक बन्धु-आच्छादन (वस्त्र) सेवा से युत, दानी, जल में घूमने की आसक्ति वाला, वा बाल आशय में अनुरक्त व सुख-दुःख के उत्कर्ष से मुक्त होता है ॥ १७ ॥

वृ० जा० में कहा है—'सुखतनये तत्प्रोक्तभावान्वितो' (२० अ० ४ श्लोक) ॥१७॥

पञ्चम भावस्थ चन्द्रमा का फल

चन्द्रे भवति न शूरो विद्यावस्त्रान्नसंग्रहणशीलः ।
बहुतनयसौम्यमित्रो मेधावी पञ्चमे तीक्ष्णः ॥ १८ ॥

यदि कुण्डली में पञ्चम भाव में चन्द्रमा हो तो जातक वीरत्व से हीन, विद्या-वस्त्र-अन्न का संग्रहकर्ता, अधिक पुत्र व सुशील मित्रों से युत, बुद्धिमान् वं उग्र प्रकृति का होता है ॥ १८ ॥

---

[1] बालाशयानुरक्तः ।

शत्रुभावस्थ चन्द्रमा का फल

प्रचुरामित्रस्तीव्रो मृदुकायाग्निमदालसश्चन्द्रे ।
षष्ठे [1]नरउदरभवै रोगैः सम्पीडितो भवति ।
रजनिकरे स्वल्पायुः षष्ठगते भवति संक्षीणे ॥ १९ ॥

यदि कुण्डली में शत्रुभाव में चन्द्रमा हो तो जातक अधिक शत्रु वाला, तीखा, कोमल शरीराग्नि वाला, नशे में चूर, उदरजन्य रोगों से दुःखी, क्षीण चन्द्रमा षष्ठ भाव में होने पर अल्पायु होता है ॥ १९ ॥

बृ० जा० में कहा है—'नैकारिमृंदुकायवह्निमदनस्तीक्ष्णोऽलसश्चारिगे' (२० अ० ४ श्लोक) ॥ १९ ॥

सप्तम भावस्थ चन्द्रमा का फल

सौम्यो धृष्यः सुखितः सुशरीरः कामसंयुतो द्यूने ।
दैन्यरुगर्दितदेहः कृष्णे संजायते शशिनि ॥ २० ॥

यदि कुण्डली में सप्तम भाव में चन्द्रमा हो तो जातक सुशील, धर्षण योग्य (दमनीय), सुखी, सुन्दर देहधारी, कामी, कृष्ण पक्ष का निर्बल चन्द्रमा हो तो दीन व रोग से पीड़ित देह वाला होता है ॥ २० ॥

बृ० जा० में कहा है ईर्ष्युंस्तीव्रमदो मदे' (२० अ० ५ श्लोक) ॥ २० ॥

अष्टम भावस्थ चन्द्रमा का फल

अतिमतिरतितेजस्वी व्याधिविबन्धक्षपितदेहः ।
निधनस्थे रजनिकरे स्वल्पायुर्भवति संक्षीणे ॥ २१ ॥

यदि कुण्डली में अष्टम भाव में चन्द्रमा हो तो जातक अधिक बुद्धिमान् बड़ा तेजवान्, रोग-बन्धन से कृश देहधारी, क्षीण चन्द्रमा होने पर अल्पायु होता है ॥ २१ ॥

बृ० जा० में कहा है 'बहुमतिर्व्याध्यर्दितश्चाष्टमे' (२० अ० ५ श्लोक) ॥ २१ ॥

नवम भावस्थ चन्द्रमा का फल

दैवतपितृकार्यपरः सुखधनमतिपुत्रसंपन्नः ।
युवतिजननयनकान्तो नवमे शशिनि [2]प्रियतमोद्योतः ॥ २२ ॥

यदि कुण्डली में नवम भाव में चन्द्रमा हो तो जातक देव व पितृकार्य में तत्पर, सुख-धन-बुद्धि-पुत्र से युक्त, स्त्री जन के नेत्रों का रमणीय तथा प्रिय कार्यों में उद्योगी होता है ॥ २२ ॥

बृ० जा० में 'सौभाग्यात्मज मित्रबन्धुधनभाग्धर्मस्थिते शीतगौ' (२० श्लो०) ॥२२॥

दशम भावस्थ चन्द्रमा का फल

अविषादी कर्मपरः सिद्धारम्भश्च धनसमृद्धश्च ।
शुचिरतिबलोऽथ दशमे शूरो दाता भवेच्छशिनि ॥ २३ ॥

---

[1] वृको दरभवैः । [2] प्रियसमाक्षः ।

यदि कुण्डली में दशम भाव में चन्द्रमा हो तो जातक खेद से रहित, कार्य में तत्पर, प्रारम्भिक कार्य को सिद्धि करने वाला, धन से सम्पन्न, पवित्र, अधिक बली, वीर व दानी होता है ॥ २३ ॥

बृ० जा० में कहा है—'निष्पत्तिं समुपैति धर्मधनधीशौर्यैर्युतः कर्मणि' (२० अ० ५ श्लोक) ॥२३॥

एकादश भावस्थ चन्द्रमा का फल

धनवान् बहुसुतभागी बह्वायुः स्विष्टभृत्यवर्गश्च ।
इन्दौ भवेन्मनस्वी तीक्ष्णः शूरः प्रकाशश्च ॥ २४ ॥

यदि कुन्डली में एकादश भाव में चन्द्रमा हो तो जातक धनी, अधिक पुत्रवान्, दीर्घायु, सुन्दर इच्छित नौकर वाला, मनस्वी, उग्र वीर व कान्तिमान् होता है ॥ २४ ॥

बृ० जा० में कहा है—'ख्यातो भावगुणान्वितो भवगते' (२० अ० ५ श्लोक) ॥२४॥

द्वादश भावस्थ चन्द्रमा का फल

द्वेष्यः पतितः क्षुद्रो नयनरुगार्तोऽलसो भवेद्विकलः ।
चन्द्रे तथान्यजातो द्वादशगे नित्यपरिभूतः ॥ २५ ॥

यदि कुण्डली में बारहवें भाव में चन्द्रमा हो तो जातक द्वेषी, पतित, नीच, नेत्र रोगी, आलसी, अशान्त, दूसरे से उत्पन्न व सदा दुःखी होता है ॥ २५ ॥

बृ० जा० में कहा है 'क्षुद्रोऽङ्गहीनो व्यये' (२० अ० ५ श्लोक) ॥ २५ ॥

॥ इति चन्द्रः ॥

लग्नस्थ भौम का फल

क्रूरः साहसनिरतः स्तब्धोऽल्पायुः स्वमानशौर्ययुतः ।
क्षतगात्रः सुशरीरो वक्रे लग्नाश्रिते चपलः ॥ २६ ॥

यदि कुण्डली में लग्नस्थ भौम हो ता जातक कठोर, पराक्रमी, आश्चर्यचकित, अल्पायु, अपने सन्मान व धीरता से युत, भग्नदेही, सुन्दर देहधारी व चंचल होता है ॥ २६ ॥

बृ० जा० में कहा है 'लग्ने कुजे क्षत तनुः' (२० अ० ६ श्लोक) ॥ २६ ॥

द्वितीय भावस्थ भौम का फल

अधनः कदशनतुष्टः पुरुषो विकृताननो धनस्थाने ।
कुजनाश्रयश्च रुधिरे भवति नरो विद्यया रहितः ॥ २७ ॥

यदि कुण्डली में द्वितीय भाव में भौम हो तो जातक निर्धन, कुत्सित भोजन से प्रसन्न, विकार से युत मुख वाला, दूषित मनुष्यों का आश्रय, व विद्या से हीन होता है ॥ २७ ॥

बृ० जा० में कहा है 'धनगे कदन्नो' (२० अ० ६ श्लोक) ॥ २७ ॥

तृतीय भावस्थ भौम का फल

शूरो भवत्यधृष्यो भ्रातृवियुक्तो मुदान्वितः पुरुषः।
भूपुत्रे सहजस्थे समस्तगुणभाजनं ख्यातः॥ २८ ॥

यदि कुण्डली में तृतीय भाव में भौम हो तो जातक—वीर, अदमनीय, भाई से रहित, हर्षयुक्त, समस्त गुणों का पात्र अर्थात् सकल गुण निधान व प्रसिद्ध होता है ॥ २८ ॥

चतुर्थ भावस्थ भौम का फल

बन्धुपरिच्छदरहितो भवति चतुर्थेऽथ वाहनविहीनः।
अतिदुःखैः संतप्तः परगृहवासी कुजे पुरुषः॥ २९ ॥

यदि कुण्डली में चौथे भाव में भौम हो तो जातक—बन्धु व वस्त्र से हीन, सवारी रहित, अधिक दुःखों से पीडित तथा दूसरों के घर में रहने वाला होता है ॥२९॥

पंचम भावस्थ भौम का फल

[1]सौम्यार्थपुत्रमित्रश्चलमतिरपि पञ्चमे कुजे भवति।
पिशुनोऽनर्थप्रायः खलश्च विकलो नरो नीचः॥ ३० ॥

यदि कुण्डली में पंचम भाव में भौम हो तो जातक—मृदु, धन-पुत्र-मित्र से युत वा सुख-धन-मित्र से हीन, अस्थिर बुद्धि वाला, चुगल खोर, अनर्थी, पापी, अशान्त व दुष्ट होता है ॥ ३० ॥

शत्रु भावस्थ भौम का फल

[2]प्रबलमदनोदराग्निः सुशरीरो व्यायतो बली षष्ठे।
रुधिरे सम्भवति नरः स्वबन्धुविजयी प्रधानश्च॥ ३१ ॥

यदि कुण्डली में छटे भाव में भौम हो तो जातक—अधिक कामी, प्रबल जठराग्नि वाला, सुन्दर चौकोर देहधारी, बलवान्, अपने बन्धुओं को जीतने वाला तथा प्रधान (मुखिया) होता है ॥ ३१ ॥

सप्तम भावस्थ भौम का फल

मृतदारो रोगार्तोऽमार्गरतो भवति दुःखितः पापः।
[3]श्रीरहितः सन्तप्तः शुष्कतनुर्भवति सप्तमे भौमे॥ ३२ ॥

यदि कुण्डली में सप्तम भाव में भौम हो तो जातक—मृत पत्नी वाला, रोग से दुःखी, कुकर्मी अर्थात् असत् मार्ग में लीन, दुःखी, पापी, लक्ष्मी से हीन, सन्तप्त व नीरस (पतला) देहधारी होता है ॥ ३२ ॥

अष्टम भावस्थ भौम का फल

व्याधिप्रायोऽल्पायुः कुशरीरो नीचकर्मकर्ता च।
निधनस्थे क्षितितनये भवति पुमान् शोकसन्तप्तः॥ ३३ ॥

---

[1] सौख्यार्थमित्ररहितश्चञ्चलमतिरपि च पञ्चमे रुधिरे। [2] प्रबलोदराग्निपुंस्त्वः। [3] स्त्रीरहितो विगततनुः सप्तमभवनस्थिते भौमे।

यदि कुण्डली में अष्टमभाव में भौम हो तो जातक—रोगी, अल्पायु, कुत्सित देह-धारी, दूषित कार्य कर्ता तथा शोक से दुःखी होता है ॥ ३३ ॥

नवम भावस्थ भौम का फल

अकुशलकर्मा द्वेष्यः प्राणिवधपरो भवेन्नवमसंस्थे।
धर्मरहितोऽतिपापो नरेन्द्रकृतगौरवो रुधिरे ॥ ३४ ॥

यदि कुण्डली में नवम भाव में भौम हो तो जातक—अचतुर कार्यकारी, द्रोही, जीव मात्र की हिंसा में तत्पर, अधर्मी, अधिक पापी व राजा से सम्मान पाने वाला होता है ॥ ३४ ॥

दशम भावस्थ भौम का फल

कर्मोद्युक्तो दशमे शूरो धृष्यः प्रधानजनसेवी।
सुतसौख्ययुतो रुधिरे प्रतापबहुलः पुमान् भवति ॥ ३५ ॥

यदि कुण्डली में दशम भाव में भौम हो तो जातक—कार्यों में उद्यत, दमनीय, प्रधान मनुष्यों का सेवन करने वाला, पुत्र व सुख से युक्त तथा अधिक प्रतापी होता है ॥३५॥

एकादश भावस्थ भौम का फल

एकादशगे धनवान् प्रियसुखभागी तथा भवेच्छूरः।
धनधान्यसुतैः सहितः क्षितितनये विगतशोकश्च ॥ ३६ ॥

यदि कुण्डली में आय भाव में भौम हो तो जातक—धनी, अभीष्ट सुख भोक्ता, वीर, धन-धान्य (अन्नादि) पुत्र से युत तथा शोक से रहित होता है ॥ ३६ ॥

द्वादश भावस्थ भौम का फल

नयनविकारी पतितो जायाघ्नः सूचकश्च रौद्रश्च।
द्वादशगे परिभूतो बन्धनभाक् भवति भूपुत्रे ॥ ३७ ॥

यदि कुण्डली में बारहवें भाव में भौम हो तो जातक—नेत्र रोगी, पतित, स्त्री को मारने वाला, चुगलखोर, भयंकर, पीडित तथा जेल भोगने वाला होता है ॥ ३७ ॥

॥ इति कुजः ॥

लग्नस्थ बुध का फल

अनुपहतदेहबुद्धिर्देशकलाज्ञानकाव्यगणितज्ञः ।
अतिमधुरचतुरवाक्यो दीर्घायुः स्याद्बुधे लग्ने ॥३८॥

यदि कुण्डली में लग्न में बुध हो तो जातक—अक्षत देह व बुद्धिवाला, देश-कला-ज्ञान-काव्य-गणित का ज्ञाता, अधिक मीठे व कुशल वचन बोलने वाला व दीर्घायु होता है ॥ ३८ ॥

द्वितीय भावस्थ बुध का फल

बुद्ध्योपार्जितविभवो धनभवनगतेऽन्नपानभोगी च।
शोभनवाक्यः सुनयः शशितनये मानवो भवति ॥३९॥

यदि कुण्डली में द्वितीय भाव में बुध हो तो जातक—बुद्धि से ऐश्वर्य अर्जित करने वाला, अन्न व पान (पेय) का भोक्ता, सुन्दर वाणी वाला व सुन्दर न्याय का प्रेमी होता है ॥ ३९ ॥

तृताय भावस्थ बुध का फल

[1]श्रमनिरतः परिदीनस्तृतीयराशौ बुधे भवति जातः ।
निपुणः सहजसमेतो मायाबहुलो नरश्चलितः[2] ॥ ४० ॥

यदि कुण्डली में तृतीय भाव में बुध हो तो जातक—परिश्रमी वा वेद शास्त्र में लीन, पीडित वा दीन, कार्य कुशल, भाईयों से युत, अधिक मायावी तथा चञ्चल होता है ॥ ४० ॥

चतुर्थ भावस्थ बुध का फल

पण्डितबाहुः सुभगो वाहनयुक्तो बुधे हिबुकसंस्थे ।
सुपरिच्छदः सुबन्धुर्भवति नरः पण्डितो नित्यम् ॥ ४१ ॥

यदि कुण्डली में चतुर्थ भाव में बुध हो तो जातक—भुजवल से विद्वान्, सौभाग्यवान्, सवारी से युत, सुन्दर वस्त्रधारी तथा अच्छे बन्धुओं से युत व विद्वान् होता है ॥ ४१ ॥

पञ्चमस्थ बुध का फल

मन्त्राभिचारकुशलो बहुतनयः पञ्चमे सौम्ये ।
[3]विद्यासुखप्रभावैः समन्वितो हर्षसंयुक्तः ॥ ४२ ॥

यदि कुण्डली में पञ्चमभाव में बुध हो तो जातक—मन्त्र वेत्ता, मारण क्रिया में चतुर, अधिक पुत्रवाला, विद्या-सुख-प्रभाव से युत वा पराक्रम से युक्त व प्रसन्नता से युत होता है ॥ ४२ ॥

शत्रु भावस्थ बुध का फल

वादविवादे कलहे नित्यजितो व्याधितो बुधे षष्ठे ।
अलसो विनष्टकोपो निष्ठुरवाक्योऽतिपरिभूतः ॥ ४३ ॥

यदि कुण्डली में शत्रुभाव में बुध हो तो जातक वाद विवाद व कलह में नित्य विजयी, रोगी, आलसी, क्रोधहीन, कठोरवादी व अति पीडित होता है ॥ ४३ ॥

सप्तमभावस्थ बुध का फल

प्राज्ञां सुचारुवेषां नातिकुलीनां च कलहशीलां च ।
भार्यामनेकवित्तां द्यूने लभते महत्त्वं च ॥ ४४ ॥

यदि कुण्डली में सप्तमभाव में बुध हो तो जातक—विदुषी-सुन्दर वेष वाली-उत्कृष्ट-कुल से हीन व कलह में लीन-अनेक धनों यत स्त्री को प्राप्त करने वाला तथा महान् होता है ॥ ४४ ॥

---

[1] श्रुतिनिरतः परिभूतः । [2] नरस्सचलः । [3] विद्यासुखप्रतापैः ।

अष्टमभावस्थ बुध का फल

विख्यातनामसारश्चिरजीवी कुलधरो निधनसंस्थे ।
शशितनये भवति नरो नृपतिसमो दण्डनायको वाऽपि ।। ४५ ।।

यदि कुण्डली में अष्टमभाव में बुध हो तो जातक–प्रसिद्ध नाम वाला, दीर्घायु, वंशधर, राजा के समान वा न्यायाधीश होता है ।। ४५ ।।

नवमभावस्थ बुध का फल

नवमगते भवति पुमानतिधनविद्यायुतः शुभाचारः ।
वागीश्वरोऽतिनिपुणो धर्मिष्ठः सोमपुत्रे हि ।। ४६ ।।

यदि कुण्डली में नवमभाव में बुध हो तो जातक—अधिक धन व विद्या से सम्पन्न शुभ-अर्थात् सदाचरी, वाणी का ईश्वर, अत्यन्त चतुर व धर्मात्मा होता हैं ।। ४६ ।।

दशमभावस्थ बुध का फल

प्रवरमतिकर्मचेष्टः [1]सफलारम्भो विशारदो दशमे ।
धीरः [2]सत्वसमेतो विविधालङ्कारसत्वभाक् सौम्ये ।। ४७ ।।

यदि कुण्डली में दशमभाव में बुध हो तो जातक—श्रेष्ठ बुद्धि से कार्यों की इच्छा करने वाला, कार्य सिद्धि कर्त्ता, श्रेष्ठ, धैर्यवान्, बल से युत वा सत्य से युत, वा युद्ध से युत व अनेक आभूषणों के सुख का भोगी होता है ।। ४७ ।।

एकादशभावस्थ बुध का फल

धनवान् विधेयभृत्यः प्राज्ञः सौख्यान्वितो विपुलभोगी ।
एकादशे बुधे स्याद्बह्वायुः ख्यातिमान् पुरुषः ।। ४८ ।।

यदि कुण्डली में एकादश भाव में बुध हो तो जातक—धनी, आज्ञाकारी नौकर, पण्डित, सुखी, अधिक भोगी, दीर्घायु व प्रसिद्धि प्राप्त करने वाला होता है ।। ४८ ।।

द्वादशभावस्थ बुध का फल

सुगृहीतवाक्यमलसं परिभूतं वाग्मिनं तथा प्राज्ञम् ।
व्ययगः करोति सौम्यः पुरुषं दीनं नृशंसं च ।। ४९ ।।

यदि कुण्डली में बारहवें भाव में बुध हो तो जातक—सुन्दर ग्रहण करने वाली वाणी वाला, आलसी, पीडित, वाग्मी, पण्डित, दीन व निन्दित होता है ।। ४९ ।।

।। इति बुधः ।।

लग्नस्थ गुरू का फल

होरासंस्थे जीवे सुशरीरः प्राणवान् सुदीर्घायुः ।
सुसमीक्षितकार्यकरः प्राज्ञो धीरस्तथार्यश्च ।। ४० ।।

यदि कुण्डली में लग्न में गुरू हो तो जातक—सुन्दर देहधारी, बली, दीर्घायु, सुन्दर, समान दृष्टि से कार्य करने वाला, पण्डित, धैर्यवान् तथा श्रेष्ठ होता है ।। ५० ।।

---

[1] सकलारम्भो । [2] सत्य समर ।

द्वितीयभावस्थ गुरू का फल

धनवान् भोजनसारो वाग्मी सुवपुः सुवाक् सुवस्त्रश्च ।
कल्याणवपुस्त्यागी सुमुखो जीवे भवेद्धनगे ॥ ५१ ॥

यदि कुण्डली में द्वितीयभाव में गुरू हो तो जातक—धनी, भोजनार्थी, वाग्मी, सुन्दर शरीर व वाणी व मुखवाला, परोपकारी व सुन्दर वस्त्र व त्यागी होता है ॥५१॥

तृतीय भावस्थ गुरू का फल

अतिपरिभूतः कृपणः [1]सदाजितो मानवो भवति जीवे ।
मन्दाग्निस्त्रीविजितो दुश्चिक्ये पापकर्मा च ॥ ५२ ॥

यदि कुण्डली में तृतीय भाव में गुरू हो तो जातक—अधिक दुःखी, लोभी, सदा विजयी वा भाई से पराजित, मन्दाग्नि, स्त्री से पराजित व पापी होता है ॥ ५२ ॥

चतुर्थभावस्थ गुरू का फल

स्वजनपरिच्छदवाहनसुखमतिभोगार्थसंयुतो भवति ।
श्रेष्ठः शत्रुविषादी चतुर्थसंस्थे सदा जीवे ॥ ५३ ॥

यदि कुण्डली में चतुर्थ भाव में गुरू हो तो जातक—अपने जन-वस्त्र-सवारी-सुख-बुद्धि-भोग-धन से युक्त, श्रेष्ठ व शत्रु को दुःख देने वाला होता है ॥ ५३ ॥

पञ्चमभावस्थ गुरू का फल

सुखसुतमित्रसमृद्धः प्राज्ञो धृतिमांस्तथा विभवसारः ।
पञ्चमभवने जीवे सर्वत्र सुखी भवति जातः ॥ ५४ ॥

यदि कुण्डली में पञ्चमभाव में गुरू हो तो जातक—सुख-पुत्र-मित्र से संपन्न, पण्डित, धैर्यवान्, ऐश्वर्य में लीन तथा सब जगह सुखी होता है ॥ ५४ ॥

शत्रुभावस्थ गुरू का फल

सन्नोदराग्निपुंस्त्वः परिभूतो दुर्बलोऽलसः षष्ठे ।
स्त्रीविजितो रिपुहन्ता जीवे पुरुषोऽतिविख्यातः ॥ ५५ ॥

यदि कुण्डली में शत्रु भाव में गुरू हो तो जातक—दूषित जठराग्नि वाला, पीडित, निर्बल, आलसी, स्त्री से पराजित, शत्रु को मारने वाला तथा अधिक प्रसिद्ध होता है ॥५५॥

सप्तमभावस्थ गुरू का फल

सुभगः सुरुचिरदारः पितुरधिकः सप्तमे भवति जातः ।
वक्ता कविः प्रधानः प्राज्ञो जीवे सुविख्यातः ॥ ५६ ॥

यदि कुण्डली में सप्तम भाव में गुरू हो तो जातक–सुन्दर भाग्यवान्, सुन्दर इच्छित स्त्री का पति, पिता से अधिक, वक्ता, कवि, प्रधान, पण्डित व विख्यात होता है ॥५६॥

अष्टमभावस्थगुरू का फल

परिभूतो दीर्घायुर्भृतको दासोऽथवा निधनसंस्थे ।
[2]स्वजनप्रेष्यो दीनो मलिनस्त्रीभोगवान् जीवे ॥ ५७ ॥

---

१ सहजातो, सहजजितो । २ सुजनप्रेष्यो ।

यदि कुण्डली में अष्टम भाव में गुरू हो तो जातक– पीडित, दीर्घायु, वेतन से जीने वाला, दास (सेवक), अपने जनों का भृत्य, दीन, मलिन (दूषित) तथा स्त्री भोगी होता है ॥ ५७ ॥

नवमभावस्थ गुरू का फल

दैवतपितृकार्यरतो विद्वान् सुभगो भवेत्तथा नवमे ।
नृपमन्त्री नेता वा जीवे जातः प्रधानश्च ॥ ५८ ॥

यदि कुण्डली में नवमभाव में गुरू हो तो जातक––देव च पितृ कार्यों में लीन, विद्वान्, सुन्दर भाग्यवान्, राजा का मन्त्री वा नेता तथा प्रधान होता है ॥ ५८ ॥

दशमभावस्थ गुरू का फल

सिद्धारम्भो मान्यः सर्वोपायः कुशलसमृद्धश्च ।
दशमस्थे त्रिदशगुरौ सुखधनजनवाहनयशोभाक् । ५९ ॥

यदि कुण्डली में दशमभाव में गुरू हो तो जातक—प्रारम्भित कार्यों को सफल करने वाला, सम्मानित, समस्त उपायों का ज्ञाता, चतुरता से सम्पन्न, सुख-धन-जन-सवारी व यश का भोगी होता है ॥ ५९ ॥

एकादशभावस्थ गुरू का फल

अपरिमितायुर्धीरो बहुवाहनभृत्यसंयुतः साधुः ।
एकादशभे जीवे न चातिविद्यो न चातिसुतः ॥ ६० ॥

यदि कुण्डली में एकादशभाव में गुरू हो तो जातक—दीर्घायु, धैर्यवान्, अधिक सवारी व नौकरों से युत; सज्जन एवं अधिक विद्या व अधिक पुत्रवान् न होता है ॥६०॥

द्वादशभावस्थ गुरू का फल

अलसो लोकद्वेष्यो ह्यपगतवाग्दैवपक्षभग्नो वा ।
परितः सेवानिरतो द्वादशसंस्थे गुरौ भवति ॥ ६१ ॥

यदि कुण्डली में बारहवें भाव में गुरू हो तो जातक–आलसी, संसार द्वेषी, अस्थिर वाणी वाला वा वाणी हीन वा देवपक्ष से नष्ट व चारो तरफ सेवा में लीन होता है ।६१।

॥ इति गुरुः ॥

लग्नस्थ शुक्र का फल

सुनयनवदनशरीरं सुखितं दीर्घायुषं तथा भीरुम् ।
युवतिजननयनकान्तं जनयति होरागतः शुक्रः ॥ ६२ ॥

यदि कुण्डली में लग्नगत शुक्र हो तो जातक—सुन्दर नेत्र व मुख से युत शरीर-धारी, सुखी, दीर्घायु, डरपोक व स्त्री समुदाय के नेत्रों को सुन्दर लगने वाला होता है ॥६२॥

द्वितीयभावस्थ शुक्र का फल

प्रचुरान्नपानविभवं श्रेष्ठविलासं[1] तथा सुवाक्यं च ।
कुरुते द्वितीयराशौ बहुधनसहितं सितः पुरुषम् ॥ ६३ ॥

---

[1] शिष्ट ।

यदि कुण्डली में द्वितीयभाव में शुक्र हो तो जातक—अधिक अन्न-पेय व ऐश्वर्य से युत, उत्तम भोगी, सुन्दरभाषी तथा अधिक धनवान् होता है ।। ६३ ।।

तृतीयभावस्थ शुक्र का फल

सुखधनसहितं शुक्रो दुश्चिक्ये स्त्रीजितं तथा कृपणम् ।
जनयति मन्दोत्साहं सौभाग्यपरिच्छदातीतम् ।।६४।।

यदि कुण्डली में तृतीय भाव में शुक्र हो तो जातक—सुखी, धनी, स्त्री से पराजित, लोभी, अल्पोत्साही, सौभाग्यवान् व वस्त्रों से युत होता है ।। ६४ ।।

चतुर्थभावस्थ शुक्र का फल

बन्धुसुहृत्सुखसहितं कान्तं वाहनपरिच्छदसमृद्धम् ।
ललितमदीनं सुभगं जनयति हिबुके नरं शुक्रः ।।६५।।

यदि कुण्डली में चतुर्थ भाव में शुक्र हो तो जातक—बान्धव-मित्र-सुख से युत, सुन्दर, सवारी व वस्त्रों से सम्पन्न, मनोहर, अदीन (दीनता से रहित) व सौभाग्यवान् होता है ।। ६५ ।।

पञ्चमभावस्थ शुक्र का फल

सुखसुतमित्रोपचितं रतिपरमतिधनमखण्डितं शुक्रः ।
कुरुते पञ्चमराशौ मन्त्रिणमथ दण्डनेतारम् ।।६६।।

यदि कुण्डली में पञ्चम भाव में शुक्र हो तो जातक—सुख-पुत्र-मित्र से युत, कामी, अधिक धनी; अखण्डित, सचिव व न्यायाधीश होता है ।। ६६ ।।

शत्रुभावस्थ शुक्र का फल

अधिकमनिष्टं स्त्रीणां प्रचुरामित्रं [1]निराकृतं विभवैः ।
विक्लवमतीव नीचं कुरुते षष्ठे भृगोस्तनयः ।।६७।।

यदि कुण्डली में शत्रुभाव में शुक्र हो तो जातक—अधिक अशुभकारी, स्त्रियों का अधिक शत्रु, ऐश्वर्य से रहित, विकल व अधिक दुष्ट होता है ।। ६७ ।।

सप्तमभावस्थ शुक्र का फल

अतिरूपदारसौख्यं [2]बहुरूपं कलहवर्जितं पुरुषम् ।
जनयति सप्तमधामनि सौभाग्यसमन्वितं शुक्रः ।।६८।।

यदि कुण्डली में सप्तमभाव में शुक्र हो तो जातक—अधिक रूपवती स्त्री के सुख का भोगी, बहुरूपिया वा अधिक ऐश्वर्यवान्, कलह (लड़ाई) से रहित तथा सुन्दर भाग्य से युत होता है ।। ६८ ।।

अष्टमभावस्थ शुक्र का फल

दीर्घायुरनुपमसुखः शुक्रे निधनाश्रिते धनसमृद्धः ।
भवति पुमान् नृपतिसमः क्षणे क्षणे लब्धपरितोषः ।।६९।।

यदि कुण्डली में अष्टमभाव में शुक्र हो तो जातक—दीर्घायु, अद्वितीय सुखी, धन से संपन्न, राजा के समान व क्षण-क्षण में संतोष प्राप्त करने वाला होता है ।। ६९ ।।

---

[1] विनाकृतं । [2] बहुविभवं ।

नवमभावस्थ शुक्र का फल

सममायततनुवित्तोदारयुवतिसुखसुहृज्जनोपेतः ।
भृगुतनये नवमस्थे सुरातिथिगुरुप्रसक्तः स्यात् ॥७०॥

यदि कुण्डली में नवमभाव में शुक्र हो तो जातक—समान लम्बी चौड़ी देहवाला, धनी, उदार स्त्री वाला, सुखो, मित्रों से युक्त, देवता-अतिथि व गुरू का भक्त होता है ॥७०॥

दशमभावस्थ शुक्र का फल

[1]उद्यानसुविभवा हितसुखरतिमानार्थकीर्त्तयो यस्य ।
दशमस्थे भृगुतनये भवति पुमान् बहुमतिः ख्यातः ॥७१॥

जिसकी कुण्डली में दशम भाव में शुक्र हो तो जातक—वगीचे से ऐश्वर्यंवाला, मित्रों से युत, सुखी, रतिमान्, धनी, यशस्वी, अधिक बुद्धिमान् व प्रसिद्ध होता है ॥ ७१ ॥

एकादशभावस्थ शुक्र का फल

प्रतिरूपदासभृत्यं बह्वायं सर्वशोकसन्त्यक्तम् ।
जनयति भवभवनगतो भृगुतनयः सर्वदा पुरुषम् ॥७२॥

यदि कुण्डली में एकादशभाव में शुक्र हो तो जातक—प्रतिविम्ब सेवी का नौकर, अधिक लाभी व समस्त दुःखों से रहित होता है ॥ ७२ ॥

द्वादशभावस्थ शुक्र का फल

अलसं सुखिनं स्थूलं पतित मृष्टाशिनं भृगोस्तनयः ।
शयनोपचारकुशलं द्वादशगः स्त्रीजितं जनयेत् ॥७३॥

यदि कुण्डली में बारहवें भाव में शुक्र हो तो जातक—आलसी, सुखी, मोटा, पतित, शोधित (साफ) भोजी, शय्या के उपचार में चतुर तथा स्त्री से पराजित होता है ॥७३॥

॥ इति शुक्रः ॥

लग्नस्थ शनि का फल

स्वोच्चस्वकीयभवने क्षितिपालतुल्यो
लग्नेऽर्कजे भवति देशपुराधिनाथः ।
शेषेषु दुःखगदपीडित एव बाल्ये
दारिद्र्य[2]कर्मवशगो मलिनोऽलसश्च ॥७४॥

यदि कुण्डली में लग्नस्थ शनि, तुला वा मकर वा कुम्भ राशि का हो तो जातक देश या नगर का स्वामी, राजा के समान होता है । अवशिष्ट राशियों में लग्नस्थ शनि हो तो जातक—दुःखी व बाल्यावस्था में रोग से पीडित दरिद्री, कार्यों के वश में वा कामी, दूषित तथा आलसी होता है ॥ ७४ ॥

द्वितीयभावस्थ शनि का फल

विकृतवदनोऽर्थभोक्ता जनरहितो न्यायकृत्कुटुम्बगते ।
पश्चात्परदेशगतो जनवाहनभोगवान् सौरे ॥७५॥

---

[1] उत्थानविवादार्जितसुखरतिमानार्थकीर्तयो यस्य ।
दशमस्थे भृगुतनये भवति पुमान् बहुमतिख्यातः ॥ [2] कामवशगो ।

यदि कुण्डली में द्वितीय भाव में शनि हो तो जातक—विकृत मुखवाला अर्थात् मुख का रोगी, धन भोगी, मनुष्यों से हीन, न्यायकर्त्ता, पीछे परदेशगामी तथा मनुष्य व सवारी का सुख भोगने वाला होता है ॥ ७५ ॥

तृतीयभावस्थ शनि का फल

मलिनः संस्कृतदेहो नीचोऽलसपरिजनो भवति सौरे।
शूरो दानानुरतो दुश्चिक्यगते विपुलबुद्धिः ॥७६॥

यदि कुण्डली में तृतीयभाव में शनि हो तो जातक—दूषित, संस्कार से युत देहवाला दुष्ट, आलसी मनुष्यों से युक्त, वीर, दानी तथा बड़ा बुद्धिमान् होता है ॥ ७६ ॥

चतुर्थभावस्थ शनि का फल

पीडितहृदयो हिबुके निर्बान्धववाहनार्थमतिसौख्यः।
बाल्ये व्याधितदेहो नखरोमधरो भवेत् सौरे ॥७७॥

यदि कुण्डली में चतुर्थभाव में शनि हो तो जातक—दुःखित हृदयवाला, बन्धुहीन, सवारीवाला, धनी, बुद्धिमान्, सुखी, बाल्यावस्था में रोगी, नाखून-व लोम को धारण करने वाला होता है ॥ ७७ ॥

पञ्चमभावस्थ शनि का फल

सुखसुतमित्रविहीनं मति[1]रहितचेतसं त्रिकोणस्थः।
सोन्मादं रवितनयः करोति पुरुषं सदा दीनम् ॥७८॥

यदि कुण्डली में पञ्चमभाव में शनि हो तो जातक—सुख-पुत्र-मित्र से रहित, बुद्धि हीन, अचेत, पागल तथा दीन होता है ॥ ७८ ॥

रिपुभावस्थ शनि का फल

प्रबलमदनं सुदेहं शूरं बह्वाशिनं विषमशीलम्।
बहुरिपुपक्षक्षपितं रिपुभवनगतोऽर्कजः कुरुते ॥७९॥

यदि कुण्डली में शत्रुभाव में शनि हो तो जातक—प्रबल (बड़ा) कामी, सुन्दर शरीरधारी, वीर, अधिक खानेवाला, विपरीत स्वभावी तथा अधिक शत्रुओं से पीडित होता है ॥ ७९ ॥

सप्तमभावस्थ शनि का फल

सततमनारोग्यतनुं मृतदारं धनविवर्जितं जनयेत्।
द्यूनेऽर्कजः कुवेषं पापं बहुनीचकर्माणम् ॥८०॥

यदि कुण्डली में सप्तम भाव में शनि हो तो जातक निरन्तर रोगी, मृत पत्नी वाला, निर्धन, दूषित वेषधारी, पापी व अधिक घृणित कार्य करने वाला होता है ॥ ८० ॥

अष्टमभावस्थ शनि का फल

कुष्ठभगन्दररोगैरभितप्तं ह्रस्वजीवितं निधने।
सर्वारम्भविहीनं जनयति रविजः सदा पुरुषम् ॥८१॥

---

[1] विचेतसं।

यदि कुण्डली में अष्टम भाव में शनि हो तो जातक कोढ़ व भगन्दर रोग से दुःखी, अल्पायु व समस्त कार्यों से रहित होता है ॥ ८१ ॥

नवमभावस्थ शनि का फल

धर्मरहितोऽ[1]ल्पधनिकः सहजसुतविवर्जितो नवमसंस्थे ।
रविजे सौख्यविहीनः परोपतापी च जायते मनुजः ॥८२॥

यदि कुण्डली में नवम भाव में शनि हो तो जातक अधर्मी, अल्पधनी वा कुमार्गी, भाई व पुत्र से हीन, सुख से रहित तथा पश्चात्तापी होता है ॥ ८२ ॥

दशमभावस्थ शनि का फल

धनवान् प्राज्ञः शूरो मन्त्री वा दण्डनायको वाऽपि ।
दशमस्थे रविनयये वृन्दपुरग्रामनेता च ॥८३॥

यदि कुण्डली में दशम भाव में शनि हो तो जातक धनी, पण्डित, वीर, सचिव वा न्यायाधीश एवं समुदाय-नगर-ग्राम का प्रधान होता है ॥ ८३ ॥

एकादशभावस्थ शनि का फल

बह्वायुः स्थिरविभवः शूरः शिल्पाश्रयो विगतरोगः ।
आयस्थे भानुसुते धनजनसम्पद्युतो भवति ॥८४॥

यदि कुण्डली में एकादश भाव में शनि हो तो जातक दीर्घायु, स्थिर ऐश्वर्य वाला, वीर, कारीगरों का आश्रय, नीरोग तथा धन-मनुष्य-सम्पत्ति से युत होता है ॥ ८४ ॥

द्वादशभावस्थ शनि का फल

विकलः पतितो मुखरो विषमाक्षो निर्घृणो विगतलज्जः ।
व्ययभवनगते सौरे बहुव्ययः स्यात् सुपरिभूतः ॥८५॥

यदि कुण्डली में बारहवें भाव में शनि हो तो जातक—अशान्त चित्त, पतित, अग्रगामी वा प्रधान, विषम दृष्टि वाला, घृणा से हीन, निर्लज्ज, अधिक खर्चीला तथा पीड़ित होता है ॥ ८५ ॥

॥ इति शनिः ॥

भावों का शुभाशुभत्व ज्ञान

पापा निघ्नन्ति मूर्त्यादीन् भावान् पुष्णन्ति शोभनाः ।
विपरीतं रिपूरन्ध्रव्ययेषु सदसत्फलम् ॥८६॥
योगा[3]ये बलयोगाः[4] सौम्यसुहृद्रिपुनिरीक्षणाच्चैव ।
उच्चादिभवनसंस्थैर्ग्रहैश्च फलमन्यथा भवति ॥८७॥

यदि लग्नादि भावों में शुभ ग्रह हों तो उस भाव की वृद्धि करते हैं, पाप ग्रह होने पर उस भाव के फल का नाश करते हैं। ६, ८, १२ भावों के शुभ-अशुभ फल विपरीत हैं अर्थात् त्रिक में स्थित शुभ ग्रह अशुभ फल और पापग्रह शुभ फल करता है। शुभ-

---

[1] ऽपथरतः । [2] शिल्पाश्रितो । [3] योगाश्रय । [4] योगात्सौम्य ।

मित्र-शत्रु ग्रह से दृष्ट योग बली होते हैं तथा उच्चस्थ ग्रहों से दृष्ट योग का फल विपरीत होता है ॥ ८६-८७ ॥

लघु जातक में कहा है—'पुष्णन्ति शुभा भावान्मूर्त्यादीन् घ्नन्ति संस्थिताः पापाः' (१२ अ० ४ श्लोक) ॥ ८६-८७ ॥

विशेष—८६-८७ श्लोक सं० त्रि० वि० की मातृका में अनुपलब्ध हैं ॥ ८६-८७ ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां भावाध्यायस्त्रिंशः ॥

एकत्रिंशोऽध्यायः

केन्द्रस्थ दो-दो ग्रहों के फल का कथन

होराचतुर्थसप्तमदशमेषु यथा द्वयोर्द्वयोर्ग्रहयोः ।
भवति फलसम्प्रयोगो जातस्य तथायमुपदेशः ॥ १ ॥

लग्न—चतुर्थ-सप्तम-दशम भाव स्थित दो-दो ग्रहों का जैसा-जैसा फल होता है वैसा-वैसा ही फल जातक का इस अध्याय में वर्णित है ॥ १ ॥

केन्द्रस्थ सूर्य-चन्द्रमा युति का फल

मातृपितृदुःखतप्तः सूर्येन्द्वोरुदयसंस्थयोर्मनुजः ।
मानसुतविभवहीनः परिभूतो जायते दुःखी ॥ २ ॥
बान्धवसुतसुखहीनो दारिद्र्ययुतो महाजडप्रकृतिः ।
चन्द्रे रसातलस्थे भास्करसहिते पुमान् जातः ॥ ३ ॥
मित्रैः सुतैश्च हीनः परिभूतो युवतिभिः सदा पुरुषः ।
चन्द्रे सप्तमभवने दिनकरसहिते भवेद्दीनः ॥ ४ ॥
सुशरीरं बलनाथं राजसिकं निर्दयं विषमशीलम् ।
सूर्येन्दू गगनस्थौ कुरुतः क्षपितारिपक्षं च ॥ ५ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में सूर्य-चन्द्रमा हों तो जातक माता-पिता के दुःख से दुःखी, सम्मान-पुत्र-ऐश्वर्य से हीन, पीड़ित व दुःखी होता है।

यदि चतुर्थ भाव में सूर्य व चन्द्रमा हों तो जातक बान्धव-पुत्र-सुख से रहित, दरिद्री व अधिक मूर्ख स्वभाव का होता है।

यदि सप्तम भाव में सूर्य-चन्द्रमा का योग हो तो जातक मित्र-पुत्र से रहित, सदा स्त्रियों से पीड़ित तथा दीन होता है।

यदि दशम भाव में सूर्य-चन्द्रमा का योग हो तो जातक सुन्दर देहधारी, बलवानों का स्वामी, राजसी, निर्दयी, विपरीत स्वभाव वाला तथा शत्रुपक्ष को पीड़ा देने वाला होता है ॥ २–५ ॥

केन्द्रस्थ सूर्य-भौम युति का फल

रविभौमयोर्विलग्ने पित्तप्रकृतिर्महाहवे शूरः ।
क्रोधी विक्षतगात्रः क्रूरश्च शठः कठोरः स्यात् ॥ ६ ॥
बन्धुजनवित्तहीनः[1] समस्तसुखवर्जितः क्षुभितः ।
कुजसूर्ययोश्चतुर्थे भवति पुमान् सर्वतो द्वेष्यः ॥ ७ ॥
स्त्रीविरहदुःखखिन्नः स्त्रीहेतोः परिभवं सदा प्राप्तः ।
रविरुधिरयोर्युवत्यां विदेशगमने रतो भवति ॥ ८ ॥
विफलारम्भो भृतको नित्योद्विग्नः प्रधाननृपसेवी ।
भूतनयदिवाकरयोः कर्मणि गतयोर्भवेद्विकलः ॥ ९ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में सूर्य व भौम हों तो जातक—पित्त प्रकृति, युद्ध में वीर, क्रोधी, भग्नदेही, क्रूर (पापी), धूर्त तथा कठोर होता है ।

यदि चतुर्थ भाव में सूर्य-भौम का योग हो तो जातक बन्धु-बान्धव तथा धन से रहित वा मित्र से वा ऐश्वर्य से रहित, सम सुखों से हीन, दुःखी तथा सबसे द्रोह करने वाला होता है ।

यदि सप्तम भाव में सूर्य भौम का योग हो तो जातक स्त्री के विरहरूपी दुःख से अन्य-मनस्क, स्त्री के कारण सर्वदा पराजय प्राप्त करने वाला व विदेश (परदेश) जाने में आसक्त होता है ।

यदि दशम भाव में सूर्य-भौम का योग हो तो जातक कार्यारम्भ करने पर असिद्धि प्राप्त करने वाला, नौकर, सदा चिन्तित, प्रधान राजा का सेवी तथा अशान्त चित्त होता है ॥ ६-९ ॥

केन्द्रस्थ सूर्य-बुध युति का फल

[2]प्राज्ञो बहुप्रलापी कठिनाङ्गः शूरवल्लभो मतिमान् ।
लग्ने बुधदिनकरयोर्दीर्घायुः संभवेत्पुरुषः ॥ १० ॥
नृपतिसमो विख्यातो गृहीतकाव्यः कुवेरसमविभवः ।
रविशशितनयौ हिबुके स्थूलतनुर्वक्रनासश्च ॥ ११ ॥
वधबन्धनकृन्मृत्यु गृहीतवाक्यो न चातिधनलुब्धः ।
स्त्रीरतिहीनश्चोरो द्यूने बुधसूर्ययोर्भवति ॥ १२ ॥
त्रिषु लोकेषु ख्यातो गजाश्वनाथो भवेन्महीपालः ।
दिनकरबुधयोर्दशमे न नीचराशिस्थयोरेव ॥ १३ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में सूर्य-बुध हों तो जातक पण्डित वा मूर्ख, अधिक भाषी, कठोर देही, वीरों का प्रिय, बुद्धिमान् तथा दीर्घायु होता है ।

यदि चतुर्थ भाव में सूर्य व बुध हों तो जातक राजा के सदृश, ख्यातिमान्, काव्य शास्त्र का ग्रहणकर्ता, कुबेर के समान ऐश्वर्य वाला, मोटी देह वाला व टेढ़ी नासिका वाला होता है ।

---

[1] मित्रहीनः, विभवहीनः । [2] अज्ञो ।

यदि सप्तम भाव में सूर्य व बुध हों तो जातक हिंसा व बन्धनकर्ता, मृत्यु के समय सारगर्भित वचन वाला, अधिक धन का लोभी नहीं, स्त्रीभोग से रहित एवं चोर होता है।

यदि दशम भाव में सूर्य व बुध हों तो जानक तीनों लोकों में प्रसिद्ध, हाथी व घोड़ों का स्वामी अर्थात् हाथी-घोड़ा का पालक व राजा होता है। नीच राशि में सूर्य वा बुध न हों तो पूर्वोक्तफल होता है॥ १०-१३ ।

केन्द्रस्थ सूर्य गुरू युति का फल

जीवार्कयोर्गुणयुतो मन्त्री बलनायकोऽथवा साधुः।
लग्नस्थयोः प्रसूतौ विद्याधनभोगवान्ख्यातः॥ १४॥
श्रुतिनीतिकाव्यनिरतं भव्यं जनसम्पदं प्रियालापम्।
हिबुके सुरेज्यसूर्यौ निभृताचारं नरं कुरुतः॥ १५॥
जीवार्कयोर्युवत्यां मदनवशात्स्त्रीजितः पितृद्वेषी।
कनकमणिरजतमोक्तिकसमन्वितःशुभशरीरः स्यात्॥ १६॥
कीर्तिसुखमानविभवैः समन्वितः पार्थिवो भवेन्नभसि।
रविदेवपुरोहितयोर्निन्द्येऽपि कुले नरो जातः॥ १७॥

यदि जन्म के समय लग्न में सूर्य व गुरू हों तो जातक—गुणी, सचिव, बलवानों का नेता वा साधु, विद्वान्, धनो, भोगी व विख्यात होता है।

यदि चतुर्थ भाव में सूर्य व गुरू हों तो जातक—वेद-नीति (नय)-काव्य में तत्पर, सुन्दर, मनुष्य सम्पत्ति वाला, प्रियभाषी व गुप्ताचारी होता है।

यदि सप्तमभाव में सूर्य गुरू हों तो जातक–काम के वशीभूत होकर स्त्री से पराजित पिता का द्वेषी (शत्रु), सुवर्ण-मणि-चांदी-मोती से युत व शुभ देहधारी होता है।

यदि दशमभाव में सूर्य व गुरू हों तो जातक—नीच कुल में उत्पन्न होकर भी यश-सुख-सम्मान-ऐश्वर्य से युत राजा होता है॥ १४–१७॥

केन्द्रस्थ सूर्य शुक्र युति का फल

प्रियकलहस्त्वविनीतो मलिनाचारः सुदुःखितो नीचः।
लग्ने रविभृगुसुतयोरत्यर्थकलत्रसम्परित्यक्तः॥ १८॥
आदित्ये हिबुकस्थे भार्गवसहिते भवेन्नरो जातः।
परभृत्यः शोकार्तो लोकद्वेष्यो दरिद्रश्च॥ १९॥
स्त्रीभिः सम्परिभूतो द्रविणविहीनो बृहत्तनुर्द्वेष्यः।
शैलवनेषु च विचरति रविसितयोः सप्तमस्थाने॥ २०॥
कर्मणि दिनकरसितयोर्व्यवहाररतो नरेन्द्रसचिवः स्यात्।
शास्त्रकलानिपुणमतिर्धनवाहनसौख्यसम्पन्नः॥ २१॥

यदि जन्म के समय लग्न में सूर्य शुक्र हों तो जातक—कलह प्रेमी, नम्रता से रहित, दूषित आचरण कर्त्ता, दुःखी, दुष्ट, धनहीन व स्त्री से रहित होता है।

यदि चतुर्थ भाव में सूर्य व शुक्र हों तो जातक—दूसरे का नौकर, शोक से पीडित, संसार का शत्रु व दरिद्र होता है ।

यदि सप्तम भाव में सूर्य शुक्र हों तो जातक--स्त्रियों से सम्यक् प्रकार से पीडित, निर्धन, महान् देहधारी, द्रोही तथा पर्वत व वनों में घूँमने वाला होता है ।

यदि दशमभाव में सूर्य व शुक्र हों तो जातक—व्यवहार में लीन अर्थात् व्यवहार कुशल, राजा का मन्त्री, शास्त्र व कला में चतुर बुद्धिवाला व धन-सवारी-सुख से समृद्ध होता है ॥ १८–२१ ॥

केन्द्रस्थ सूर्य शनि युति का फल

निन्दितजननीपुत्रः कुत्सितवृत्तिः सदा मलिनबुद्धिः ।
लग्ने सूर्यार्कजयोः पापाचारो भवेत्पुरुषः ॥ २२ ॥
सौरिश्चतुर्थराशौ भास्करसहिते पुमान भवति नीचः ।
दारिद्र्यविहितमूर्तिः स्वबन्धुभिश्चापि परिभूतः ॥ २३ ॥
भान्वर्कजयोर्मदने मन्दालसदुर्भगाश्च जायन्ते ।
युवतिधनैः सन्त्यक्ता मृगयाभिरता महामूर्खाः ॥ २४ ॥
भानुः स्वपुत्रसहितो गगने भृतकं विदेशगं जनयेत् ।
नृपतेः क्वचिदाप्तधनैश्चोरैर्मुषितं सदश्वधनम् ॥ २५ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में सूर्य शनि हों तो जातक--कुत्सित माता का पुत्र, निन्दित आजीविका वाला, दूषित बुद्धिवाला तथा पापाचरण कर्त्ता होता है ।

यदि चतुर्थ भाव में सूर्य शनि हों तो जातक—दुष्ट, दरिद्रता का स्वरूप तथा अपने बन्धुओं से पीडित होता है ।

यदि सप्तम भाव में सूर्य शनि हों तो जातक—अल्प, आलसी, भाग्यहीन, स्त्री धन से त्यक्त, शिकार का प्रेमी तथा बड़ा मूर्ख होता है ।

यदि दशम भाव में सूर्य शनि हों तो जातक—नौकर, विदेश जाने वाला, राजा से कभी पाये हुए धन का चोरों द्वारा हरण तथा अच्छे घोड़ों का धनी होता है ।२२-२५।

केन्द्रस्थ चन्द्र भौम युति का फल

रक्ता[1]ग्निपित्तदोषैरभिभूतो जायते नरो राजा ।
क्षोणीसुतहिमकरयोर्लग्ने तीक्ष्णः स्वभावश्च ॥ २६ ॥
सक्लेशो निर्द्रव्यः सुखसुतधनवन्धुहीनश्च ।
पाताले कुजशशिनोर्विकलश्च भवेत्तथा जातः ॥ २७ ॥
क्षुद्रः परधनलुब्धो वहुप्रलापो न सत्यवचनश्च ।
ईर्ष्यायुक्तो मनुजः कुजशशिनोः सप्तमस्थाने ॥२८॥
तुरगगजपत्तिसम्पत्समाकुलं तुहिनगुर्नरं कुरुते ।
रुधिरेण समायातो गगनतले विक्रमैर्युक्तम् ॥२९॥

---

[1] पित्तरोगैः ।

यदि जन्म के समय लग्न में चन्द्रमा मङ्गल हों तो जातक—खून-अग्नि-पित्त दोष वा रोग से पीडित एवं उग्र स्वामी होता है।

यदि चन्द्रमा मङ्गल का योग चतुर्थ भाव में हो तो जातक—क्लेश (कलह) से युक्त, निर्धन, सुख-पुत्र-धन-बन्धु से रहित तथा अशान्त होता है।

यदि सप्तम भाव में चन्द्रमा मङ्गल हों तो जातक—अल्प, दूसरे के धन का लोभी, अधिकभाषी, असत्यवादी व ईर्ष्यालु होता है।

यदि दशमभाव में चन्द्रमा मङ्गल हों तो जातक—घोड़ा-हाथी-सेना-सम्पत्ति से युत तथा पराक्रमो होता है ॥ २६–२९ ॥

विशेष—२७ वें श्लोक में धन से हीन दो स्थानों पर आने से अरुचि उत्पन्न होती है, किन्तु सं० वि० वि० की मातृका में 'बान्धवजनवाहनास्पदविहीनः' इस पाठान्तर से बन्धुजन-सवारी-स्थान से हीन यह उचित प्रतीत होता है ॥ २६–२९ ॥

केन्द्रस्थ चन्द्रबुध युति का फल

सुखबुद्धिसत्वयुक्तः सुभगः कान्तो विलग्नगे शशिनि ।
बुधसहिते भवति नरो वाचालश्चातिनिपुणश्च ॥३०॥
बन्धुसुहृत्तनयसुखप्रतापकनकाश्वरत्नसंयुक्तम् ।
बान्धवराशाविन्दुर्जनयति बुधसंयुतः सुभगम् ॥३१॥
द्यूने बुधसंयुक्तो जनयति चन्द्रः प्रतापिनं पुरुषम् ।
नृपसंमतं नृपं वा विख्यातं सत्कविं ललितम् ॥३२॥
दशमे बुधहिमकरयोर्मानी धनवानतिख्यातः ।
नृपसचिवो वयसोऽन्ते दुःखी स्याद्बन्धुपरिहीनः ॥३३॥

यदि जन्म के समय लग्न में चन्द्रमा बुध हों तो जातक—सुखी, बुद्धिमान्, बलवान्, सौभाग्यवान्, सुन्दर, वाचाल (बहुभाषी) व अत्यन्त चतुर होता है।

यदि चतुर्थ भाव में चन्द्रमा बुध हों तो जातक—बान्धव-मित्र-सुत-सुख-प्रताप-सुवर्ण-अश्व-व रत्न से युक्त एवं सुन्दर भाग्यवान् होता है।

यदि सप्तम भाव में चन्द्रमा बुध हों तो जातक—प्रतापी, राजा से सम्मत, वा राजा, प्रसिद्ध, अच्छा कवि व सुन्दर होता है।

यदि दशमभाव में चन्द्रमा व बुध हों तो जातक—अभिमानी, धनी, अधिक प्रसिद्ध, राजा का मन्त्री, अवस्था के अन्त में दुःखी तथा बन्धुओं से रहित होता है ॥ ३०–३३ ॥

केन्द्रस्थ चन्द्रगुरु युति का फल

लग्ने सुरेज्यशशिनोः क्षितिपः पृथुपीनवक्षाः स्यात् ।
बहुतनयमित्रभार्यः सुशरीरो बन्धुभिर्जुष्टः ॥३४॥
मन्त्री राजप्रतिमः सुखबन्धुसमन्वितो महाविभवः ।
बहुशास्त्राक्षतबुद्धिर्हिबुके स्याज्जीवशशिनोश्च ॥३५॥
जायाभवने कुरुतः सुप्राज्ञं पार्थिवं कलाकुशलम् ।
वाणिजकं जीवेन्दू नृपवल्लभमर्थवत्स्फीतम् ॥३६॥

कर्मणि सुरेज्यशशिनोर्विद्यादानार्थमानकीर्तियुतः ।
सौम्यः प्रलम्बबाहुः सर्वनमस्यो नरो भवति ॥३७॥

यदि जन्म के समय लग्न में चन्द्रमा गुरु हों तो जातक--अधिक मोटी छातीवाला, अधिक पुत्र-मित्र-स्त्री से यक्त, सुन्दर देहधारी, तथा बन्धुओं से युक्त होता है ।

यदि चतुर्थभाव में चन्द्रमा व गुरू हों तो जातक--सचिव, राजा के समान, सुखी, बान्धवों से युत, बड़ा ऐश्वर्यवान् व अधिक शास्त्रों में अनष्ट बुद्धि वाला अर्थात् अधिक शास्त्रज्ञ होता है ।

यदि सप्तम भाव में चन्द्रमा व गुरू हों तो जातक, सुन्दर पण्डित, राजा, कलाओं में निपुण, व्यापारी, राजा का प्रिय, धन की तरह बढ़ने वाला होता है ।

यदि चन्द्रमा गुरू दशमभाव में हों तो जातक--विद्वान्, दानी, धनी, अभिमानी, यशस्वी, मृदु, लम्बी भुजावाला तथा सबका नमनीय होता है ॥ ३४–३७ ॥

केन्द्रस्थ चन्द्रशुक्र युति का फल

वेश्यास्त्रीकृतसौख्यः [1]कान्ततनुः संमतो गुरूणां च ।
माल्याम्बरगन्धयुतो लग्ने शशिशुक्रयोर्भवति ॥३८॥
पाताले शशिशुक्रौ स्त्रीजनसुखभागिनं नरं कुरुतः ।
जलसंयानाप्तधनं जनप्रियं भोगसम्पन्नम् ॥३९॥
जामित्रे सितशशिनोर्बहुयुवतिरतो न चातिधनपुत्रः ।
स्त्रीजननो मेधावी भूपति[2]चरितो भवेत्पुरुषः ॥४०॥
मानाज्ञाविभवयुतः कर्मणि शुक्रे शशाङ्कयुते ।
राज्ञो मन्त्री ख्यातः क्षमान्वितः स्याद्बहुजनश्च ॥४१॥

यदि जन्म के समय लग्न में चन्द्रमा शुक्र हों तो जातक—कुलटा स्त्री से सुखी, सुन्दर देहधारा, गुरुजनों से सम्मत व माला-वस्त्र-सुगन्ध से युत होता है ।

यदि चतुर्थभाव में चन्द्रमा व शुक्र हों तो जातक—स्त्री जन का सुख भोगी, जल की सवारी से धन प्राप्त करनेवाला, लोकप्रिय, व भोग से युत होता है ।

यदि सप्तम भाव में चन्द्र शुक्र हों तो जातक—अधिक स्त्रियों में लीन, अधिक धन पुत्रों से युत नहीं अर्थात् अल्पधनी, अल्प पुत्रवान् स्त्री को पैदा करने वाला, अच्छा बुद्धिमान् व राजा के समान चरित्रवाला वा राजा से अजेय होता है ।

यदि दशमभाव में चन्द्रमा शुक्र हों तो जातक—सम्मान-आदेश व ऐश्वर्य से युत, राजा का सचिव, प्रसिद्ध, क्षमा से युक्त, तथा अधिक मनुष्यों से युत होता है ॥ ३८–४१ ॥

केन्द्रस्थ चन्द्र शनि युति का फल

दासाः खलाः सुरौद्रा भवन्ति लुब्धाश्च मानवा हीनाः ।
भास्करसुतहिमकरयोर्लग्ने निद्रालसाः पापाः ॥४२॥

---

[1] कल्पतरुः. [2] भूपतिरजितो.

जलमुक्तामणिपोतैर्जीवन्ति नरास्तथा खननवृत्त्या।
हिबुके शशिरविसुतयोः श्रेष्ठा जनसंमता जाताः ॥४३॥
नगरग्रामपुराणां महत्तरा राजपूजिताः पुरुषाः।
जायन्तेऽर्कजशशिनोर्जायाभवने युवतिहीनाः ॥४४॥
प्रचुरतुरंगमदलितारातिः ख्यातः कुयोषितः पुत्रः।
भवति नराणामधिपः शशिशनियोगे खमध्यगते ॥४५॥
सौम्यग्रहसंयुक्तः प्रायेण शुभावहो भगणनाथः।
भौमार्कियुतो [1]दृष्टो दशमे च चमूपतिं कुर्यात् ॥४६॥

यदि जन्म के समय लग्न में चन्द्रमा शनि हों तो जातक—सेवक, दुष्ट, भयानक, लोभी, हीन, निद्रालु, आलसी व पापी होता है।

यदि चतुर्थभाव में चन्द्रमा शनि हों तो जातक—जल-मोती-मणि-व जहाज की जीविका वाला, खोदने की वृत्तिवाला, श्रेष्ठ व लोक सम्मत होता है।

यदि सप्तम स्थान में चन्द्रमा शनि हों तो जातक—शहर-ग्राम व पुर (छोटे ग्राम) में महान् (बड़ा) राजा से सत्कृत तथा स्त्री से रहित होता है।

यदि दशमभाव में चन्द्रमा शनि हों तो जातक—अधिक घोड़ों की सेना से शत्रु को पराजित करने वाला, विख्यात, कुत्सत स्त्री का पुत्र तथा मनुष्यों का स्वामी होता है।

दशमभाव में प्रायः चन्द्रमा शुभग्रह से युत शुभफल देने वाला तथा भौम शनि से युत अशुभ फलदाता व सेनाध्यक्ष कर्ता होता है॥ ४२–४६ ॥

केन्द्रस्थ भौम-बुध युति का फल

हिंस्रोऽग्निकर्मकुशलो धातोर्वादे कृतश्रमो दूतः।
भौमबुधयोर्विलग्ने [2]गुप्त्यधिकारी भवेत्पुरुषः ॥४७॥
बान्धवरहितः सहितो मित्रैश्च धनान्नभोगवाहनवान्।
हिबुके बुधभूसुतयोः स्वजनेषु निराकृतो जातः ॥४८॥
भ्रमति च देशाद्देशं कर्मकरो नीचपरिभूतः।
भौमेन्दुजयोर्द्यूने सुविवादकरो मृतप्रथमदारः ॥४९॥
सेनाधिपतिः शूरः शठस्वभावो भवेदतिक्रूरः।
बुधकुजयोराकाशे राज्ञोऽभिमतो नरो धीरः ॥५०॥

यदि जन्म के समय लग्न में भौम-बुध हों तो जातक हिंसक, अग्नि कार्य में चतुर, धातु विवाद में परिश्रम करने वाला, दूत, गोपनीय अधिकारी वा परोपकारी होता है।

यदि चतुर्थ भाव में भौम-बुध हों तो जातक बन्धुहीन, मित्रों से युक्त, धन-अन्न-भोग-सवारी से युत व अपने जनों में तिरस्कृत होता है।

यदि सप्तम भाव में भौम-बुध हों तो जातक देश-देशान्तर में घूमने वाला, मजूर, दुष्टों से पीड़ित, सुन्दर विवादी व प्रथम स्त्री का नष्ट कर्ता होता है।

---

[1] नेष्टो। [2] परोपकारी।

यदि दशम भाव में भौम-बुध हों तो जातक सेनाध्यक्ष, वीर, धूर्त प्रकृति, अधिक कठोर, राजा से सम्मत व धैर्यवान् होता है ।। ४७-५० ।।

केन्द्रस्थ भौम-गुरु युति का फल

मन्त्री गुणप्रधानो धर्मक्षेत्रे प्रलब्धपरिकीर्तिः ।
बुधकुजयोर्विलग्ने नित्योत्साही भवेत्पुरुषः ।।५१।।
वन्धुसुहृत्सम्पन्नः [1]स्थिरचित्तः सौख्यभाक् भवेद्धिबुके ।
भौमामरपूजितयोर्नृपसेवी देवगुरुभक्तः ।।५२।।
गिरिदुर्गतोयकाननविचरणशीलः सुबान्धवः शूरः ।
कुजजीवयोर्युवत्यां जायाहीनः पुमान्भवति ।।५३।।
त्रिदशगुरुभूमिसुतयोराकाशे पार्थिवो विपुलकीर्तिः ।
वहुधनजनपरिवारः कर्मसु निपुणो भवेत्पुरुषः ।।५४।।

यदि जन्म के समय भौम गुरू लग्न में हों तो जातक सचिव, प्रधान गुणी, धार्मिक कार्यों में कीर्ति प्राप्तकर्ता तथा प्रतिदिन उत्साही होता है ।

यदि चतुर्थ भाव में भौम-गुरू हों तो जातक बन्धु व मित्रों से युक्त, स्थिर चित्त वा वित्त (धन) वाला, सुखभोगी, राजा का सेवनकर्ता व देवता एवं गुरुओं का भक्त होता है ।

यदि सप्तम भाव में भौम-गुरू हों तो जातक पर्वत-किला-जल-वन में घूमने वाला, अच्छे बान्धवों से युत, वीर तथा स्त्रीरहित होता है ।

यदि दशम भाव में भौम गुरु हों तो जातक राजा, अधिक कीर्तिमान्, अधिक धन व परिवार से युत तथा चतुर होता है ।। ५१-५४ ।।

केन्द्रस्थ भौम-शुक्र युति का फल

शुक्रकुजयोर्विलग्ने वेश्यानिरतः [2]कुशीलकर्मा च ।
स्त्रीहेतोर्नष्टधनो न तु चिरजीवी भवेत्पुरुषः ।।५५।।
बन्धुसुतमित्रहीनो मानसपीडाभिरर्दितः पुरुषः ।
भौमसितयोश्चतुर्थे नानादुःखैर्भवेत्तप्तः ।।५६।।
स्त्रीलोलुपः कुचरितः स्त्रीहेतोः प्राप्तवान्महादुःखम् ।
भौमसितयोर्युवत्यां हीनाचारो भवेत्पुरुषः ।।५७।।
अस्त्राचार्यो मतिमान् विद्याधनवस्त्रमाल्यवान्भवति ।
ख्यातो नरेन्द्रसचिवः सितकुजयोर्व्योम्नि संस्थितयोः ।।५८।।

यदि जन्म के समय लग्न में भौम-शुक्र हों तो जातक वेश्यागामी, दूषित स्वभाव व दूषित कार्यकर्ता, स्त्री के निर्मित्त धन को नष्ट करने वाला व दीर्घायु नहीं होता है ।

यदि चतुर्थस्थ भौम-बुध हों तो जातक बान्धव-पुत्र-मित्र से रहित, मानसिक पीड़ा से दुःखी तथा अनेक दुःखों से पीड़ित होता है ।

---

१ स्थिरवित्तः । २ कुशिल्प ।

यदि सप्तम भाव में भौम-शुक्र हों तो जातक स्त्री का लोभी, दुष्टाचरणकर्ता, स्त्री के के कारण अधिक दुःख प्राप्त करने वाला तथा दुष्टाचारी होता है।

यदि दशम भाव में भौम-शुक्र हों तो जातक अस्त्र विद्या में आचार्य (प्रधान), बुद्धिमान्, विद्या-धन-वस्त्र-माला से युक्त, प्रसिद्ध व राजा का मन्त्री होता है ॥५५-५८॥

केन्द्रस्थ भौम-शनि युति का फल

संग्रामलब्धविजयो जननीद्वेष्यो भवेत्पुरुषः ।
भौमार्कजयोर्लग्ने ह्रस्वायुः क्षीणभाग्यश्च ॥५९॥
पानान्नसौख्यरहितः स्वजनैस्त्यक्तो भवति जातः ।
भौमार्कजयोर्हिबुके मित्रैश्च विवर्जितः पापः ॥६०॥
जायासुखसुतहीनो दैन्यपरो व्याधितो व्यसनशीलः ।
भौमार्कजयोर्दशमे न सत्यवचनो नरो भवति ॥६१॥
राज्ञः सम्प्राप्तधनो महापराधाच्च दण्डितस्तेन ।
भौमार्कजयोर्दशमे न सत्यवचनो नरो भवति ॥६२॥

यदि जन्म के समय लग्न में भौम-शनि हों तो जातक युद्ध में विजयी, माता का द्रोही (शत्रु), अल्पायु व भाग्यहीन होता है।

यदि चतुर्थ भाव में भौम-शनि हों तो जातक पेय-अन्न-सुख से हीन, अपने जनों से त्यक्त (छोड़ा हुआ), मित्रों से हीन व पापी होता है।

यदि सप्तम भाव में भौम-शनि हों तो जातक स्त्री-सुख-पुत्र से हीन, दीनता से युत, रोगी, व्यसनी, मनुष्यों से पीड़ित व लोभी होता है।

यदि दशम भाव में भौम-शनि हों तो जातक राजा से धन प्राप्त करने वाला, बड़े अपराध से दण्डित होने के कारण असत्य भाषी होता है ॥ ५९-६२ ॥

केन्द्रस्थ बुध-गुरु युति का फल

शुभमूर्तिः शुभशीलो विद्वान्नृपसत्कृतो विषयनाथः ।
बुधजीवयोर्विलग्ने वाहनसुखभोगवान् भवति ॥६३॥
बन्धुसुहृत्सुखसहितः स्त्रीधनसौभाग्यसम्पन्नः ।
बुधजीवयोश्चतुर्थे निपुणो [1]नृपसंमतो भवति ॥६४॥
सुकलत्रो हतशत्रुर्बहुजनमित्रार्थसत्त्वसम्पन्नः ।
बुधजीवयोर्युवत्यामतीत्य पितृपक्षमधिकः स्यात् ॥६५॥
बोधनगुर्वोर्दशमे नरेन्द्रमन्त्री नृपोऽथवा भवति ।
मानाज्ञाख्यातियुतः श्रौतार्थपरो विनीतश्च ॥६६॥

यदि जन्म के समय लग्न में बुध-गुरू हों तो जातक शोभनीय देहधारी, शुभ-चिन्तक, विद्वान्, राजा से सत्कृत, विषय स्वामी तथा सवारी का सुख भोगने वाला होता है।

---

[1] बहुसमंतो।

यदि चतुर्थ भाव में बुध-गुरू हों तो जातक बान्धव-मित्र व सुख-स्त्री-धन-सुन्दर भाग्य से युत, चतुर तथा राजा से सम्मत वा अधिक जनों से सम्मत होता है।

यदि सप्तम भाव में बुध-गुरू हों तो जातक पिता के पक्ष का अतिक्रमण करके महान् अर्थात् पिता से अधिक मान-प्रतिष्ठा वाला, सुन्दर स्त्री वाला, नष्ट शत्रु, अधिक मनुष्य-मित्र-धन-बल से युक्त होता है।

यदि दशम भाव में बुध-गुरू हों तो जातक राजा का सचिव वा राजा, सम्मान-आदेश-प्रसिद्धि से युत, श्रौत ग्रन्थों के अर्थ में तत्पर व नम्रता से युक्त होता है ॥६३-६६॥

केन्द्रस्थ बुध-शुक्र-युति का फल

बुधशुक्रयोर्विलग्ने सुशरीरः पण्डितः सतां सुभगः ।
नृपपूजितोऽतिधन्यो द्विजसुरभक्तो भवेत्ख्यातः ॥६७॥
बुधशुक्रौ हिबुकस्थौ पुत्रसुहृद्बन्धुसंयुतं सुभगम् ।
मन्त्रिणमथवा नृपतिं कुरुतः कल्याणसम्पन्नम् ॥६८॥
बुधशुक्रयोर्युवत्यां सद्बहुयुवतिपरिवेष्टितः पुरुषः ।
भोगधनैश्वर्ययुतो भवति सुखी संमतो राज्ञाम् ॥६९॥
बोधनसितयोः कर्मणि नीतिज्ञो भवति भूपतिः साधुः ।
नीचाश्रयो न चाढ्यः सफलारम्भः समर्थश्च ॥७०॥

यदि जन्म के समय लग्न में बुध-शुक्र हों तो जातक सुन्दर देहधारी, विद्वान्, सज्जनों का प्रिय, राजा से सत्कृत, अधिक प्रशंसनीय, ब्राह्मण व देवता का भक्त तथा प्रसिद्ध होता है।

यदि चतुर्थ भाव में बुध-शुक्र हों तो जातक पुत्र-मित्र-बन्धुओं से युक्त, सुन्दर भाग्य वाला, सचिव वा राजा तथा कल्याण से युत अर्थात् शुभ कार्यों से युत होता है।

यदि सप्तम भाव में बुध-शुक्र हों तो जातक अच्छी अधिक स्त्रियों से युत, भोग-धन-ऐश्वर्य से युत, सुखी व राजाओं से सम्मत होता है।

यदि दशम भाव में बुध-शुक्र हों तो जातक नीति का ज्ञाता, राजा, सज्जन, नीच (दुष्ट) जनों की सङ्गति में रहने वाला, अल्पधनी, प्रारम्भिक कार्यों का सिद्धिकर्ता व सामर्थ्यवान् होता है ॥ ६७-७० ॥

केन्द्रस्थ बुध-शनि युति का फल

मलिनशरीरः पापी विद्याधनवाहनैः परित्यक्तः ।
सौम्यार्कजयोर्लग्ने ह्रस्वायुः क्षीणभाग्यश्च ॥७१॥
पानान्नबन्धुरहितः स्वजनेषु तिरस्कृतो भवति मूढः ।
सौम्यार्कजयोर्हिबुके मित्रैश्च विवर्जितः पापः ॥७२॥
ईश्वरभृतको मूर्खः परोपकारी न साधुरतिमलिनः ।
सौम्यार्कजयोरस्ते न सत्यवचनो नरो भवति ॥७३॥

प्रशमितसमस्तशत्रुः स्वजनसुहृद्वाहनार्थसम्पन्नः ।
सौम्यार्कजयोर्दशमे द्विजगुरुसुर[1]पूजको भवति ॥७४॥

यदि जन्म के समय लग्न में बुध-शनि हों तो जातक दूषित देहधारी, पापी, विद्या-धन-सवारी से रहित, अल्पायु व हीन भाग्य वाला होता है ।

यदि चतुर्थ भाव में बुध शनि हों तो जातक—पेय-अन्न-बन्धु से हीन, अपने मनुष्यों में असम्मान प्राप्त कर्त्ता, मूर्ख, मित्रों से रहित व पापी होता है ।

यदि सप्तमभाव में बुध शनि हों तो जातक—ईश्वर का सेवक, मूर्ख, परोपकारी, दुर्जन, अधिक दूषित तथा असत्यभाषी होता है ।

यदि दशमभाव में बुध शनि हों तो जातक—समस्त शत्रुओं को शान्त करने वाला, अपने मनुष्य-मित्र-सवारी-धन से समृद्ध तथा ब्राह्मण-गुरु-देवता की पूँजा करने वाला होता है ॥ ७१–७४ ॥

केन्द्रस्थ गुरु शुक्र युति का फल

जीवसितयोर्विलग्ने सुरू[2]पदेहो भवेत्क्षमानाथः ।
ब्राह्मणकुलसंभूतोऽप्यनुकूलो भवति नृपतुल्यः ॥७५॥
प्रशमितसमस्तशत्रुः स्वजनसुहृद्वाहनार्थसम्पन्नः ।
जीवसितयोश्चतुर्थे द्विजगुरुसुरपूजको[3] भवति ॥७६॥
सुस्त्रीरत्नार्थयुतः स्त्रीजननो लब्धसौख्यकीर्तिश्च ।
गुरुशुक्रयोर्युवत्यां वरवाहनभोगवान्भवति ॥७७॥
गगनस्थौ गुरुशुक्रौ मानाज्ञाविभवविस्तरैः सहितम् ।
जनयेतां पृथिवीशं बहुभृत्यधनं सुशीलं च ॥७८॥

यदि जन्मके समय लग्न में गुरू शुक्र हों तो जातक—सुन्दर देहधारी, राजा, ब्राह्मण कुल में उत्पन्न होने पर भी अनुकूल तथा राजा के समान होता है ।

यदि चतुर्थ भाव में गुरू शुक्र हों तो जातक—सकल शत्रुओं को शान्त करने वाला अपने मनुष्य-मित्र-सवारी-धन से सम्पन्न तथा ब्राह्मण गुरु-देवता की पूँजा करने वाला होता है ।

यदि सप्तम भाव में गुरू शुक्र हों तो जातक—सुन्दर स्त्री-रत्न-धन से युत, कन्या सन्तान पैदा करने वाला, सुखी, कीर्तिमान् अर्थात् सुख व कीर्ति को प्राप्त करने वाला तथा उत्तम सवारी का भोगी होता है ।

यदि दशम भाव में गुरू शुक्र हों तो जातक—सम्मान-आदेश-ऐश्वर्य के विस्तार से युत, राजा, अधिक नौकर व धन वाला तथा सुशील होता है ॥ ७५–७८ ॥

विशेष—७४ व ७६ श्लोक का अर्थ एक ही है ॥ ७५–७८ ॥

केन्द्रस्थ गुरु शनि युति का फल

लग्ने जीवार्कजयोर्मदालसा निष्ठुराः समभिजाताः ।
विद्वांसो धनसाराः किञ्चित्सुखिता भवन्ति खलाः ॥७९॥

---

[1] पुजितो [2] गुरूपदेशो [3] पुजितो

नृपसचिवो निरुजतनुर्जयोदयी बान्धवैः सुहृद्भिश्च ।
पातालेऽर्कजगुर्वोः प्रीतिधनः सौख्यवान्भवति ॥८०॥
स्त्रीवैरान्नष्टधनः शूरो व्यसनी शठो न शुभमूर्तिः ।
द्यूने सुरेज्ययमयोः पितृधनलुब्धश्च जायते मूर्खः ॥८१॥
दशमे भास्करिजीवौ नरेन्द्रदयितं च भूपतिं कुरुतः ।
अल्पापत्यं न चलं गोकुलबहुवाहनार्थं च ॥८२॥

यदि जन्म के समय लग्न में गुरू शनि हों तो जातक—नशे में चूर, निठुर, (निर्मोही) पण्डित, धन को महत्व देनेवाला, अल्प सुखी तथा दुष्ट (पापी) होता है ।

यदि चतुर्थ भाव में गुरू शनि हों तो जातक—राजा का मन्त्री, निरोग देही, विजयी बान्धव व मित्रों से युक्त, प्रेम को धन मानने वाला अर्थात् स्नेही तथा सुखी होता है ।

यदि सप्तम भाव में गुरू शनि हों तो जातक—स्त्री शत्रुता से धन का नाशक, वीर, दुर्व्यसनी, धूर्त, अशुभ मूर्ति, पिता के धन का लोभी व मूर्ख होता है ।

यदि दशम भाव में गुरू शनि हों तो जातक—राजा का कृपा पात्र या राजा, अल्प सन्तान वाला अर्थात् पुत्रवान्, स्थिर, गाय के कुल का पालक, अधिक सवारी व धन से युक्त होता है ॥ ७९–८२ ॥

केन्द्रस्थ शुक्र शनि युति का फल

रमते सर्ववधूभिः कान्तशरीरः सुखार्थभोगयुतः ।
लग्ने भृगुसुतयमयोर्बहुभृत्यः शोकसन्तप्तः ॥८३॥
मित्रेभ्यो धनलाभं बन्धुभ्यः सत्क्रियाः समाप्नोति ।
शनिशुक्रयोश्चतुर्थे नृपतेश्च तथाप्ततां याति ॥ ८४ ॥
स्त्रीरत्नानि सुखानि च धनानि कीर्तिं च भूतिमखिलां च ।
मन्दसितयोर्युवत्यां प्राप्नोति पुमान्विषयलाभम् ॥ ८५ ॥
सर्वद्वन्द्वविमुक्तो लोके ख्यातो विशिष्टकर्मा च ।
मेषूरणे सितार्क्योर्नृपतेर्मन्त्री भवेदधिकः ॥ ८६ ॥
एवं त्रिभिश्चतुर्भिः पञ्चभिरथ सप्तभिश्च षड्भिर्वा ।
वक्तव्यं केन्द्रस्थैर्ग्रहयोगफलं विचिन्त्य धिया ॥ ८७ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में शुक्र-शनि हों तो जातक—समस्त स्त्रियों के साथ रमण करने वाला, सुन्दर देहधारी, सुख-धन-भोग से युक्त, अधिक नौकर वाला व शोक से पीडित होता है ।

यदि चतुर्थ भाव में शुक्र शनि हों तो जातक—मित्रों से धन प्राप्तकर्त्ता, बन्धुओं से अच्छा व्यवहारी तथा राजा से श्रेष्ठता प्राप्त करने वाला होता है ।

यदि सप्तम भाव में शुक्र शनि हों तो जातक—स्त्री रत्न-सुख-धन-कीर्ति समस्त ऐश्वर्य को प्राप्त करने वाला तथा विषय प्राप्तकर्त्ता होता है ।

यदि दशम भाव में शुक्र शनि हों तो जातक—समस्त झंझटों से रहित, संसार में प्रसिद्ध, विशेष कार्य कर्त्ता तथा राजा का बड़ा सचिव होता है। इस प्रकार मैंने केन्द्रस्थ दो-दो ग्रहों का फल कहा है, तीन, चार, पाँच, छः ग्रहों का केन्द्रस्थ ग्रहयोग फल बुद्धि से विचार कर कहना चाहिये ॥ ८३—८७ ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां द्व्यन्तरयोगो नाम एकत्रिंशोऽध्यायः ॥

द्वात्रिंशोऽध्यायः

सर्वमपहाय चिन्त्यं भाग्यर्क्षं प्राणिनां विशेषेण ।
भाग्यं विना न जन्तुर्यस्मात्तद्यत्नतो वक्ष्ये ॥ १ ॥

विशेष कर प्राणियों के समस्त भावों को त्यागकर भाग्य राशि का विचार करना चाहिये क्योंकि भाग्य के विना प्राणियों का शुभ फल ज्ञात नहीं होता है इसलिये मैं यत्न से भाग्य भाव को कहता हूँ ॥ १ ॥

लग्नान्निशाकराद्वा [1]यन्नवमं तद्गृहं भवेद्भाग्यम् ।
अनयोर्यो बलयुक्तो भाग्यगृहं चिन्तयेदस्मात् ॥ २ ॥

लग्न व चन्द्रमा से जो नवम राशि (भाव) होता है उसे भाग्य भाव कहते हैं। इन दोनों में (लग्न, चन्द्रमा) जो बलवान् हो उसके नवम गृह से भाग्य का विचार करना चाहिये ॥ २ ॥

भाग्यर्क्षपतिः कस्मिन्नेको[2] भाग्यर्क्षमाश्रितो विहगः ।
बलवान्मन्दबलो वा तस्याधिपतेस्तु कारको ज्ञेयः ॥ ३ ॥

भाग्य भाव का स्वामी किस भाव में है उससे तथा भाग्य भाव में जो ग्रह बली वा निर्बल हो उससे तथा उसके स्वामी को कारक ग्रह जानना चाहिये ॥ ३ ॥

स्वस्वामिदृष्टयुक्तं स्वदेशफलदायकं मुनिभिरुक्तम् ।
अन्येन सहितदृष्टं परदेशफलप्रदं भवति भाग्यम् ॥ ४ ॥

यदि भाग्य भाव अपने स्वामी से दृष्ट वा युक्त हो तो अपने देश में ही फल देने वाला होता है। तथा भाग्यभाव स्वामी से दृष्ट व युक्त न होकर अन्य किसी ग्रह से दृष्ट वा युक्त हो तो जातक का भाग्य परदेश में फलीभूत होता है। ऐसा मुनिगणों का कथन है ॥ ४ ॥

दुश्चिक्यगतो भाग्यं पञ्चमभवनस्थितो ग्रहः पश्येत् ।
होरागतश्च बलवान् येषां ते मानवाः श्रेष्ठाः ॥ ५ ॥

जिनकी कुण्डली में तृतीय-पञ्चम-लग्नस्थ बलवान् ग्रह भाग्य भाव को देखते हों तो वे जातक उत्तम भाग्यवान् होते हैं ॥ ५ ॥

---

[1] यन्नवमर्क्षं गृहं । [2] कस्मिन् को वा ।

नृपसचिवो निरुजतनुर्जयोदयी बान्धवैः सुहृद्भिश्च ।
पातालेऽर्कजगुर्वोः प्रीतिधनः सौख्यवान्भवति ॥८०॥
स्त्रीवैरान्नष्टधनः शूरो व्यसनी शठो न शुभमूर्तिः ।
द्यूने सुरेज्ययमयोः पितृधनलुब्धश्च जायते मूर्खः ॥८१॥
दशमे भास्करिजीवौ नरेन्द्रदयितं च भूपतिं कुरुतः ।
अल्पापत्यं न चलं गोकुलबहुवाहनार्थं च ॥८२॥

यदि जन्म के समय लग्न में गुरू शनि हों तो जातक—नशे में चूर, निठुर, (निर्मोही) पण्डित, धन को महत्व देनेवाला, अल्प सुखी तथा दुष्ट (पापी) होता है।

यदि चतुर्थ भाव में गुरू शनि हों तो जातक—राजा का मन्त्री, निरोग देही, विजयी बान्धव व मित्रों से युक्त, प्रेम को धन मानने वाला अर्थात् स्नेही तथा सुखी होता है।

यदि सप्तम भाव में गुरू शनि हों तो जातक—स्त्री शत्रुता से धन का नाशक, वीर, दुर्व्यसनी, धूर्त, अशुभ मूर्ति, पिता के धन का लोभी व मूर्ख होता है।

यदि दशम भाव में गुरू शनि हों तो जातक—राजा का कृपा पात्र या राजा, अल्प सन्तान वाला अर्थात् पुत्रवान्, स्थिर, गाय के कुल का पालक, अधिक सवारी व धन से युक्त होता है ॥ ७९–८२ ॥

केन्द्रस्थ शुक्र शनि युति का फल

रमते सर्ववधूभिः कान्तशरीरः सुखार्थभोगयुतः ।
लग्ने भृगुसुतयमयोर्बहुभृत्यः शोकसन्तप्तः ॥८३॥
मित्रेभ्यो धनलाभं बन्धुभ्यः सत्क्रियाः समाप्नोति ।
शनिशुक्रयोश्चतुर्थे नृपतेश्च तथाप्ततां याति ॥ ८४ ॥
स्त्रीरत्नानि सुखानि च धनानि कीर्तिं च भूतिमखिलां च ।
मन्दसितयोर्युवत्यां प्राप्नोति पुमान्विषयलाभम् ॥ ८५ ॥
सर्वद्वन्द्वविमुक्तो लोके ख्यातो विशिष्टकर्मा च ।
मेषूरणे सितार्क्योर्नृपतेर्मन्त्री भवेदधिकः ॥ ८६ ॥
एवं त्रिभिश्चतुर्भिः पञ्चभिरथ सप्तभिश्च षड्भिर्वा ।
वक्तव्यं केन्द्रस्थैर्ग्रहयोगफलं विचिन्त्य धिया ॥ ८७ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में शुक्र-शनि हों तो जातक—समस्त स्त्रियों के साथ रमण करने वाला, सुन्दर देहधारी, सुख-धन-भोग से युक्त, अधिक नौकर वाला व शोक से पीडित होता है।

यदि चतुर्थ भाव में शुक्र शनि हों तो जातक—मित्रों से धन प्राप्तकर्त्ता, बन्धुओं से अच्छा व्यवहारी तथा राजा से श्रेष्ठता प्राप्त करने वाला होता है।

यदि सप्तम भाव में शुक्र शनि हों तो जातक—स्त्री रत्न-सुख-धन-कीर्ति समस्त ऐश्वर्य को प्राप्त करने वाला तथा विषय प्राप्तकर्त्ता होता है।

यदि दशम भाव में शुक्र शनि हों तो जातक—समस्त झंझटों से रहित, संसार में प्रसिद्ध, विशेष कार्य कर्त्ता तथा राजा का बड़ा सचिव होता है। इस प्रकार मैंने केन्द्रस्थ दो-दो ग्रहों का फल कहा है, तीन, चार, पाँच, छः ग्रहों का केन्द्रस्थ ग्रहयोग फल बुद्धि से विचार कर कहना चाहिये ॥ ८३—८७ ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां द्व्यन्तरयोगो नाम एकत्रिंशोऽध्यायः ॥

द्वात्रिंशोऽध्यायः

सर्वमपहाय चिन्त्यं भाग्यर्क्षं प्राणिनां विशेषेण।
भाग्यं विना न जन्तुर्यस्मात्तद्यत्नतो वक्ष्ये ॥ १ ॥

विशेष कर प्राणियों के समस्त भावों को त्यागकर भाग्य राशि का विचार करना चाहिये क्योंकि भाग्य के विना प्राणियों का शुभ फल ज्ञात नहीं होता है इसलिये मैं यत्न से भाग्य भाव को कहता हूँ ॥ १ ॥

लग्नान्निशाकराद्वा [1]यन्नवमं तद्गृहं भवेद्भाग्यम्।
अनयोर्यो बलयुक्तो भाग्यगृहं चिन्तयेदस्मात् ॥ २ ॥

लग्न व चन्द्रमा से जो नवम राशि (भाव) होता है उसे भाग्य भाव कहते हैं। इन दोनों में (लग्न, चन्द्रमा) जो बलवान् हो उसके नवम गृह से भाग्य का विचार करना चाहिये ॥ २ ॥

भाग्यर्क्षपतिः कस्मिन्नेको[2] भाग्यर्क्षमाश्रितो विहगः।
बलवान्मन्दबलो वा तस्याधिपतेस्तु कारको ज्ञेयः ॥ ३ ॥

भाग्य भाव का स्वामी किस भाव में है उससे तथा भाग्य भाव में जो ग्रह बली वा निर्बल हो उससे तथा उसके स्वामी को कारक ग्रह जानना चाहिये ॥ ३ ॥

स्वस्वामिदृष्टयुक्तं स्वदेशफलदायकं मुनिभिरुक्तम्।
अन्येन सहितदृष्टं परदेशफलप्रदं भवति भाग्यम् ॥ ४ ॥

यदि भाग्य भाव अपने स्वामी से दृष्ट वा युक्त हो तो अपने देश में ही फल देने वाला होता है। तथा भाग्यभाव स्वामी से दृष्ट व युक्त न होकर अन्य किसी ग्रह से दृष्ट वा युक्त हो तो जातक का भाग्य परदेश में फलीभूत होता है। ऐसा मुनिगणों का कथन है ॥ ४ ॥

दुश्चिक्यगतो भाग्यं पञ्चमभवनस्थितो ग्रहः पश्येत्।
होरागतश्च बलवान् येषां ते मानवाः श्रेष्ठाः ॥ ५ ॥

जिनकी कुण्डली में तृतीय-पञ्चम-लग्नस्थ बलवान् ग्रह भाग्य भाव को देखते हों तो वे जातक उत्तम भाग्यवान् होते हैं ॥ ५ ॥

---

[1] यन्नवमर्क्षं गृहं। [2] कस्मिन् को वा।

भाग्यभाव स्थित गुरु पर ग्रहों की दृष्टि के फल

देवगुरौ भाग्यस्थे मन्त्री रविवीक्षिते नृपतितुल्यः ।
भोगी कान्तः शशिना काञ्चनभा[1]ग्भवति भौमेन ॥ ६ ॥
सौम्येन धनी ज्ञेयः सितेन गोवाहनार्थसंयुक्तः ।
सौरेण स्थावरभाक् दृष्टे खरमहिषसंयुक्तः ॥ ७ ॥

यदि कुण्डली में भाग्यभावस्थित गुरु, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—सचिव या राजा के समान, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो भोगी व सुन्दर, भौम से दृष्ट हो तो सुवर्ण प्राप्त कर्त्ता, बुध से दृष्ट हो तो धनवान्, शुक्र से दृष्ट हो तो गाय-सवारी-धन से युक्त, शनि से दृष्ट हो तो स्थिर भाग्य वाला व गदहा व भैंसा से युक्त होता है ॥ ६–७ ॥

भाग्यभावस्थित गुरु पर सूर्य भौम की दृष्टि का फल

ऐश्वर्यरत्नकाञ्चनसाहसभागुत्तमश्च वीर्येण ।
रविरुधिराभ्यां दृष्टे वाहनपरिवारवान्पुरुषः ॥ ८ ॥

यदि कुण्डली में भाग्यभावस्थित गुरु, सूर्य मङ्गल से दृष्ट हो तो जातक—पराक्रम से ऐश्वर्यवान्, रत्नवान्, सुवर्णवान्, साहसी व श्रेष्ठ एवं वाहन (सवारी) वाला और परिवार से युक्त होता है ॥ ८ ॥

भाग्यस्थ गुरु पर सूर्य चन्द्रमा की दृष्टि का फल

चन्द्रार्काभ्यां दृष्टे सुसमृद्धो वल्लभः पितृजनन्योः ।
ख्यातो नरेन्द्रतुल्यो बहुदारसमन्वितः पुरुषः ॥ ९ ॥

यदि भाग्यस्थ गुरु, सूर्य चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक—सुसम्पन्न, पिता माता का प्रिय, विख्यात, राजा के समान तथा अधिक स्त्रियों से युत होता है ॥ ९ ॥

भाग्यस्थ गुरु पर सूर्य बुध की दृष्टि का फल

ललितः कान्तः सुभगो वरयुवतिविभूषणार्थसम्पन्नः ।
बुधसूर्याभ्यां दृष्टे काव्यकलापण्डितः प्राज्ञः ॥ १० ॥

यदि भाग्यस्थ गुरु, बुध-सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—सुन्दर, प्रिय, सौभाग्यशाली, श्रेष्ठ स्त्री-अलङ्कार व धन से समृद्ध, काव्य कला का विद्वान् व बुद्धिमान् होता है ।१०।

भाग्यस्थ गुरु पर सूर्य-शुक्र की दृष्टि का फल

उत्सवसमाजशीलो गोमहिषाजवरवारणोपेतः ।
रविसितदृष्टे जीवे भाग्यस्थे स्याद्विनीतश्च ॥ ११ ॥

यदि भाग्यस्थ गुरु, सूर्य शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—उत्सव व समुदाय में तत्पर, गाय-भैंस-बकरी व श्रेष्ठ हाथियों से युक्त और विनयी (नम्रता से युक्त) होता है ॥ ११ ॥

---

[1] भाग् ।

भाग्यस्थ गुरू पर सूर्य-शनि की दृष्टि का फल

अर्कार्किभ्यां दृष्टे देशपुरश्रेणिनायकः ख्यातः ।
प्राज्ञो गुणवान्सधनो निधिनाथः संग्रहणशीलः ॥ १२ ॥

यदि भाग्यस्थ गुरू, सूर्य शनि से दृष्ट हो तो जातक—देश-नगर पंक्ति का नेता, प्रसिद्ध, पण्डित, गुणी, धनी, खजाने का स्वामी तथा संग्रही होता है ॥ १२ ॥

भाग्यस्थ गुरू पर चन्द्रमा भौम की दृष्टि का फल

सेनाचार्यः स्फीतो मन्त्री वा जायते गुरौ भाग्ये ।
दृष्टे कुजचन्द्राभ्यां नानाविधसौख्यभाजनं सुभगः ॥ १३ ॥

यदि भाग्यस्थ गुरू, मङ्गल चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक—सेनाध्यक्ष, बड़ा (महान्) वा सचिव, नाना प्रकार के सुखों का पात्र (भोगी) व सुन्दर ऐश्वर्यवान् होता है ॥ १३ ॥

भाग्यस्थ गुरू पर चन्द्रमा बुध की दृष्टि का फल

उत्तमगृहशयनानां भोगी तेजोऽन्वितः क्षमाप्रतिमः ।
चन्द्रबुधाभ्यां दृष्टे जातः पुरुषोऽतिमतियुक्तः ॥ १४ ॥

यदि भाग्यस्थ गुरू, चन्द्रमा बुध से दृष्ट हो तो जातक—श्रेष्ठ मकान व शय्या का भोग करने वाला, तेजस्वी, क्षमा की प्रतिमा अर्थात् क्षमाशील तथा अधिक बुद्धिमान् होता है ॥ १४ ॥

भाग्यस्थ गुरू पर चन्द्रमा शुक्र की दृष्टि का फल

आढ्यः कर्मोद्युक्तः शूरः परदारवान् सुतविहीनः ।
इन्दुसिताभ्यां दृष्टे भाग्यगृहे स्याद्गुरौ जातः ॥ १५ ॥

यदि भाग्यस्थ गुरू, चन्द्रमा शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—धनी, कार्य में उद्यत, वीर, परायी स्त्री वाला व पुत्र रहित होता है ॥ १५ ॥

भाग्यस्थ गुरू पर चन्द्रमा शनि की दृष्टि का फल

मदबहुलः स्थिरजीवी परदेशरतो विवादशीलः स्यात् ।
अनृतवचनो गुणोनः शशियमदृष्टेगुरौ भाग्ये ॥ १६ ॥

यदि भाग्यस्थ गुरू, चन्द्रमा शनि से दृष्ट हो तो जातक—अधिक नशेबाज, दीर्घायु परदेश में लीन, विवादी, असत्यभाषी तथा गुणों से हीन होता है ॥ १६ ॥

भाग्यस्थ गुरू पर भौम बुध की दृष्टि का फल

सुप्राज्ञोऽतिसुशीलः [1]सुगुणो विद्वान्गृहीतवाक्यश्च ।
सुरुचिरवेषो जीवे कुजबुधदृष्टे भवेद्भाग्ये ॥ १७ ॥

यदि भाग्यस्थ गुरू, भौम बुध से दृष्ट हो तो जातक—सुन्दर बुद्धिमान्, अधिक सुशील, सुन्दर गुणी वा सुन्दर ऐश्वर्यवान्, विद्वान्, वचन पालक व सुन्दर वेषधारी होता है ॥ १७ ॥

---

[1] सुभगो ।

भाग्यस्थ गुरू पर भौम शुक्र की दृष्टि का फल

धनवान्विद्यायुक्तो विदेशगः सात्विकोऽतिनिपुणश्च ।
क्षितितनयभार्गवाभ्यां दृष्टे क्रूरो नरो जातः ॥ १८ ॥

यदि भाग्यस्थ गुरू, मङ्गल शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—धनी, विद्वान्, परदेशगामी, सात्विक, अतिचतुर व क्रूर होता है ॥ १८ ॥

भाग्यस्थ गुरू पर भौम शनि की दृष्टि का फल

नीचः पिशुनो द्वेष्यो विदेशगश्चलजनैः समायुक्तः ।
भौमार्किभ्यां दृष्टे भाग्यगृहे सुरगुरौ जातः ॥ १९ ॥

यदि भाग्यस्थ गुरू, भौम शनि से दृष्ट हो तो जातक—दुष्ट, चुगलखोर, द्रोही, विदेशगामी तथा चञ्चल मनुष्यों से युक्त होता है ॥ १६ ॥

भाग्यस्थ गुरू पर बुध शुक्र की दृष्टि का फल

शिल्पज्ञोऽतिसुशीलो विद्वान्सुभगो गृहीतवाक्यश्च ।
सुरुचिरवेषो जीवे बुधसितदृष्टे भवेद्भाग्ये ॥ २० ॥

यदि भाग्यस्थ गुरू, बुध शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—शिल्प शास्त्र का ज्ञाता, अत्यन्त सुशील, विद्वान्, सुन्दर भाग्यशाली, वचन पालक, व सुन्दर वेषधारी होता है ॥ २० ॥

भाग्यस्थ गुरू पर बुध शनि की दृष्टि का फल

सुभगो विद्वान्वक्ता ललितः शूरः सुखी विनीतश्च ।
जीवे भाग्योपगते बुधार्किदृष्टे पुमान्भवति ॥ २१ ॥

यदि भाग्यस्थ गुरू, बुध शनि से दृष्ट हो तो जातक—सुन्दर भाग्यवान्, पण्डित, वक्ता, सुन्दर, वीर, सुखी व विनयी होता है ॥ २१ ॥

भाग्यस्थ गुरू पर शुक्र शनि की दृष्टि का फल

देवगुरौ भाग्यस्थे काव्यार्कजवीक्षिते पुमान्भवति ।
राजेश्वरराष्ट्राणां पुरोगमो धनसमृद्धश्च ॥ २२ ॥

यदि भाग्यस्थ गुरू, शुक्र शनि से दृष्ट हो तो जातक—नृपों का, सामर्थ्य वानों का प्रति राष्ट्रों का अग्रणी व धन से संपन्न होता है ॥ २२ ॥

भाग्यस्थ गुरू पर भाग्येश की दृष्टि का फल

राश्यधिपेन च दृष्टे जीवे भाग्याश्रिते नृपं ज्ञेयम् ।
एभिः कथितैर्दृष्टे फलमिदमन्यैरसन्दृष्टे ॥२३॥

यदि भाग्यस्थ गुरू, भाग्येश से दृष्ट हो तो राजा होता है । इन कथित ग्रहों से दृष्ट फल, अन्य ग्रहों से अदृष्ट होने पर होता है ॥ २३ ॥

भाग्यस्थ गुरू, समस्त ग्रहों से दृष्ट होने पर फल

उत्तमरूपो गुणवान् तेजस्वी पार्थिवो महाविभवः ।
देवगुरौ भाग्यस्थे सर्वग्रहवीक्षिते भवति ॥२४॥

यदि कुण्डली में भाग्य (नवम) भावस्थ गुरू, समस्त ग्रहों से दृष्ट हो तो जातक—श्रेष्ठ स्वरूपवान्, गुणी, तेजस्वी, राजा व अधिक ऐश्वर्यवान् होता है ॥ २४ ॥

भाग्यस्थ शुभ राशि में बली ग्रहों का फल

भाग्ये शुभगगनसदो बलिनो राज्यप्रदास्तु विज्ञेयाः ।
स्थावरधनधान्यकरा धर्मायुर्वर्धनाश्चैव ॥२५॥

यदि कुण्डली में भाग्य भाव में शुभग्रह राशिस्थ बली ग्रह हों तो जातक—को राज्य देने वाले व स्थिर धनधान्य कर्त्ता व धर्म और आयु वृद्धि दायक होते हैं ॥ २५ ॥

भाग्यस्थ नीचादि राशि में पापग्रहों का फल

नीचारिराशिसंस्थाः पापा भाग्ये न सौम्यसंदृष्टाः ।
दुर्बलमधनं कुर्युर्विगतख्यातिं नरं मलिनम् ॥२६॥

यदि कुण्डली में भाग्य भाव में पापग्रह नीच या शत्रु राशि में स्थित हों तथा शुभग्रहों से अदृष्ट हों तो जातक—निर्बल, निर्धन, दूषित व अप्रसिद्ध होता है ॥ २६ ॥

भाग्यस्थभाव में स्वराशिस्थ पापग्रहों का फल

स्वे स्वे भवने पुंसां क्रूरा भाग्यर्क्षसंस्थिता ये स्युः ।
ज्ञेयास्त उत्तमशुभा बहुतरगुणसंयुताः शुभैर्दृष्टाः ॥२७॥

यदि कुण्डली में भाग्यस्थ पापग्रह अपनी-अपनी राशि में शुभग्रहों से दृष्ट हों तो जातक—श्रेष्ठ, शुभचिंतक व अधिक गुणों से युक्त होता है ॥ २७ ॥

भाग्यस्थ प्रधान राज योग का ज्ञान

पूर्णेन्दुयुते भाग्ये वक्रार्किबुधाः प्रधानवीर्याश्च ।
व्यस्ता वाऽथ समस्ताः प्रधाननृपसंभवो ज्ञेयः ॥२८॥

यदि कुण्डली में भाग्यभाव में पूर्ण चन्द्रमा हो तथा मङ्गल-शनि-बुध ये तीनों अधिक बलवान् वा एक वा दो बली हों तो जातक प्रधान राजा होता है ॥ २८ ॥

समस्त ग्रहों से युत वा दृष्ट भाग्यभाव का फल

सकलगगनखेटाः[1] स्वोच्चगा भाग्यराशौ
धनकनकसमृद्धं श्रेष्ठमुत्पादयन्ति ।
अथ शुभविहगेन्द्रैस्तत्र दृष्टे नरेन्द्रं
विनिहतरिपुपक्षं दिव्यकान्तिं सुकीर्तिम् ॥२९॥

यदि कुण्डली में समस्त ग्रह नवम भाव में हों तो जातक—धन-सुवर्ण से सम्पन्न, उत्तम पुरुष, यदि समस्त ग्रहों से दृष्ट भाग्यभाव हों तो जातक—रिपु (शत्रु) पक्ष को मारने वाला, राजा, दिव्य सुन्दरता से युत तथा सुन्दर कीर्तिमान् होता है ॥ २९ ॥

नवम भाव में सूर्य चन्द्र योग का फल

सूर्यश्चन्द्रसहायो भाग्ये स्वल्पायुषं नरं कुरुते ।
नयनव्याधितमाढ्यं सुभगं कलहप्रियं चापि ॥३०॥

यदि कुण्डली में भाग्यभाव में सूर्य चन्द्रमा हों तो जातक—अल्पायु, नेत्ररोगी, धनी, सुन्दर भाग्यवान् व कलह प्रेमी होता है ॥ ३० ॥

---

[1] गेहाः ।

नवम भाव में सूर्य भौम युति का फल

भानुर्वक्रसमेतो नानादुःखान्वितं नरं कुरुते ।
कलहप्रियं प्रचण्डं शूरं नृपवल्लभं निपुणम् ॥३१॥

यदि भाग्यभाव में सूर्य से युत भौम हो तो जातक—अनेक दुःखों से युक्त, कलह प्रेमी, उग्र, वीर, राजा का प्रियपात्र व चतुर होता है ॥ ३१ ॥

नवम भाव में सूर्य बुध युति का फल

रविसहितः शशितनयो निपुणं दुःखान्वितं बहुविपक्षम् ।
जनयति भाग्ये पुरुषं नानारोगैः परिगृहीतम् ॥३२॥

यदि भाग्यभाव में बुध, सूर्य के साथ हो तो जातक—चतुर, दुःखी, अधिक शत्रु वाला व अनेक रोगों से ग्रसित होता है ॥ ३२ ॥

नवम में सूर्य गुरू युति का फल

सुरगुरुसहितः सूर्यो भाग्ये कुर्याद्धनान्वितं पुरुषम् ।
पितरं च धनसमृद्धं दीर्घायुषमार्यमतिशूरम् ॥३३॥

यदि भाग्यभाव में सूर्य, गुरू से युक्त हो तो जातक--धनी और धन से संपन्न माता पिता, दीर्घायु, श्रेष्ठ व अधिक वीर होता है ॥ ३३ ॥

नवम में सूर्य शुक्र युति का फल

शुक्रसहायः सूर्यो व्याधितदेहं नरं कुरुते ।
प्रियगन्धमाल्यभूषणवस्त्रालङ्कारसंयुतं भाग्ये ॥३४॥

यदि भाग्यभाव में सूर्य, शुक्र के साथ हो तो जातक--रोगी, प्रेमी, इत्र-माला-भूषण-वस्त्र-अलंकार से युक्त होता है ॥ ३४ ॥

नवम में सूर्य शनि युति का फल

सूर्यः सौरसहायो धनिनं नेत्रातुरं कलहनिष्ठम् ।
व्याधितपितरं कुरुते भाग्ये स्वल्पायुषं पुरुषम् ॥३५॥

यदि भाग्यभाव में सूर्य, शनि के साथ हो तो जातक—धनी, नेत्ररोगी, कलह प्रेमी पिता माता के लिये रोग कर्ता व अल्पायु होता है ॥ ३५ ॥

नवम में चन्द्र भौम युति का फल

चन्द्रो रुधिरसहायो भाग्यं समुपेत्य मातरं हन्यात् ।
कुर्याच्च विकलगात्रं सव्रणदेहं समृद्धं च ॥३६॥

यदि भाग्यभाव में चन्द्रमा, भौम के साथ हो तो जातक—माता का घातक, अशान्तदेही, घाव युक्त शरीर व सम्पन्न होता है ॥ ३६ ॥

नवम में चन्द्र बुध युति का फल

चन्द्रः स्वसुतसमेतः शास्त्रज्ञं पण्डितं विकलदेहम् ।
जनयत्युत्तमपुरुषं बहुवाचं विश्रुतं चैव ॥३७॥

यदि भाग्यभाव में चन्द्रमा व बुध हो तो जातक—शास्त्र ज्ञाता, विद्वान्, अशान्त देही, श्रेष्ठ पुरुष, बहुभाषी व प्रसिद्ध होता है ॥ ३७ ॥

नवम में चन्द्र गुरू युति का फल

सुरगुरुसहिते चन्द्रे भाग्ये प्रवरः प्रसूयते पुरुषः ।
सौभाग्यधनसमृद्धः सर्वत्र सुखान्वितो धीरः ।।३८।।

यदि भाग्यभाव में चन्द्रमा व गुरू हो तो जातक – श्रेष्ठ पुरुष, सौभाग्य व धन से सम्पन्न, सब जगह सुखी व धैर्यवान् होता है ।। ३८ ।।

नवम में चन्द्र शुक्र युति का फल

चन्द्रो भार्गवसहितो भाग्यगृहे व्याधितं नरं कुरुते ।
कुलटापतिं समृद्धं मातृसपत्नीप्रदं सचिववश्यम् ।।३९।।

यदि भाग्यभाव में चन्द्रमा व शुक्र हो तो जातक––रोगी, वेश्या स्वामी, सम्पन्न, माता को सौतेली देनेवाला तथा मन्त्री के वशीभूत होता है ।। ३९ ।।

नवम में चन्द्र शनि युति का फल

रविसुतसहितश्चन्द्रो नवमे राशौ विकृष्टधर्माणम् ।
जनयति मनुजं पापं माता च कुलच्युता भवति ।।४०।।

यदि भाग्यभाव में चन्द्रमा के साथ शनि हो तो जातक––दूषित धर्माचारी सं० वि० वि० की मातृका में 'राशावनिष्टकर्माणम्' वा अनिष्टकारी, पापी तथा माता को कुल से पृथक् करने वाला होता है ।। ४० ।।

नवम में भौम बुध युति का फल

रुधिरः सोमजसहितो भाग्यर्क्षे जनयति प्रधानं च ।
नित्योद्विग्न सुभगं भोगयुतं शास्त्रकुशलं च ।।४१।।

यदि भाग्यभाव में भौम बुध हों तो जातक––प्रधान, नित्य चिन्तित, सुन्दर भाग्यवान्, भोगी व शास्त्रों में चतुर होता है ।। ४१ ।।

नवम में भौम गुरू युति का फल

भौमः सुरगुरुयुक्तो भाग्ये धनधान्यभागिनं पुरुषम् ।
पूज्यं व्याधितदेहं क्लिष्टं व्रण[१]विक्षतं प्रसवे ।।४२।।

यदि भाग्यभाव में भौम व गुरू हो तो जातक—धन व अन्न का भागी, पूजनीय, रोगी, कठोर व घाव से भग्न देहवाला होता है ।। ४२ ।।

नवम में भौम शुक्र युति का फल

भार्गवसहितः क्षितिजः परदेशरतं विवादिनं क्रूरम् ।
स्त्रीद्वेषिणं कृतघ्नं जनयति मिथ्याप्रधानं च ।।४३।।

यदि भाग्यभाव में भौम व शुक्र हो तो जातक— दूसरे देश में लीन अर्थात् अन्य देशवासी, विवादी, कठोर, स्त्री द्वेषी, कृतघ्न व मिथ्या में अग्रणा होता है ।। ४३ ।।

नवम में भौम शनि युति का फल

पापं मलिनाचारं परदाररतं विनष्टधनसौख्यम् ।
कुजरविजौ भाग्यगृहे स्वजनविहीनं नरं कुरुते ।।४४।।

---

[१] दोषि ।

यदि भाग्यभाव में भौम व शनि हो तो जातक—पापी, दूषित आचरण कर्ता, परस्त्री में लीन, धन व सुख से हीन व अपने मनुष्यों से रहित होता है ।। ४४ ।।

नवम में बुध गुरु युति का फल

सौम्यः सुरगुरुसहितः शास्त्रज्ञं पण्डितं धनसमृद्धम् ।
प्रियवादिनं कलाज्ञं प्रभविष्णुमहत्तरं भाग्ये ।।४५।।

यदि भाग्यभाव में बुध व गुरु हो तो जातक--शास्त्र ज्ञाता, विद्वान्, धनी, प्रियभाषी, कलाओं का ज्ञाता तथा अधिक प्रभाव वाला होता है ।। ४५ ।।

नवम में बुध शुक्र युति का फल

भृगुसुतसहितः सौम्यः ख्यातं च सुपण्डितं धीरम् ।
सुभगं वचनसमर्थं जनयति [1]नीतिप्रियं भाग्ये ।।४६।।

यदि भाग्यभाव में बुध शुक्र हों तो जातक--विख्यात, सुन्दर विद्वान्, धैर्यवान्, सौभाग्यवान्, वचन पालक, नीति वा गान का प्रेमी होता है ।। ४६ ।।

नवम में बुध शनि युति का फल

सूर्यजसहितः सौम्यो व्याधितमाढ्यं प्रियान्वितं निपुणम् ।
जनयति भाग्ये पुरुषं सद्द्वेष्यं बहुकथं चैव ।।४७।।

यदि भाग्यभाव में बुध शनि हों तो जातक--रोगी, धनी, प्रेमी, चतुर, द्वेषी व अधिक भाषी होता है ।। ४७ ।।

नवम में गुरु शुक्र युति का फल

शुक्रः सुरगुरुसहितो भाग्यगृहस्थो नराधिपं कुरुते ।
चिरजीविनं सुवाक्यं नानाविधसौख्यसम्पन्नम् ।।४८।।

यदि भाग्यभाव में गुरु शुक्र हों तो जातक—राजा, दीर्घायु, सुन्दर वाणी वाला तथा अनेक प्रकार के सुखों से युत होता है ।। ४८ ।।

नवम में गुरु शनि युति का फल

जीवः सौरसहायो भाग्ये धनरत्नभागिनं कुरुते ।
पूज्यं व्याधितदेहं स्वजनविहीनं सदा पुरुषम् ।

यदि गुरु शनि भाग्यभाव में हों तो जातक--धन व रत्न का भागी, पूजनीय, रोगी व अपने मनुष्यों से रहित होता है ।। ४९ ।।

ननम में शुक्र शनि युति का फल

सौरसहायः शुक्रो व्याधितदेहं नरं कुरुते ।
बहुपुत्रं[2] नृपतीष्टं यशस्विनं शीलसम्पन्नम् ।।५०।।
एवं स्थानविशेषैर्दृष्टिविशेषैश्च निपुणमधिगम्य ।
ब्रूयात्फलनिर्देशं शास्त्रादनुरूपतः प्राज्ञः ।।५१।।

यदि भाग्यभाव में शुक्र शनि हों तो जातक—रोगी अधिक पुत्र वा धन वाला, राजा का प्रिय, यशस्वी व शीलता से युत होता है। इस प्रकार भाग्य स्थान से व

---

१ गीतप्रियं । २ बहुवित्तं ।

भाग्य स्थान पर दृष्टि से चतुरता पूर्वक ज्ञान करके पण्डितों को शास्त्र की अनुकूलता से फलादेश कहना चाहिए ॥ ५०-५१ ॥

भाग्य राशिस्थ सूर्य चन्द्र भौम युति के फल का ज्ञान

सव्रणगात्रं रूक्षं मृतपितरं मातृवर्जितं कुर्युः ।
बाल्ये क्षुद्रं द्वेष्यं हिंस्रं शशिरुधिरभानवो भाग्ये ॥ ५२ ॥

यदि जन्म के समय भाग्य (नवम) भाव में सूर्य चन्द्रमा मंगल हों तो जातक-- घाव युक्त देहधारी, नोरस, नष्ट पिता वाला अर्थात् पिता से रहित, माता से त्यक्त बाल्यावस्था में, क्षुद्र (हीन), द्वेषी व हिंसक होता है ॥ ५२ ॥

नवम में सूर्य चन्द्रमा बुध युति का फल

रविचन्द्रबुधा भाग्ये क्लीबाकारं सुदुःखितं कुर्युः ।
सर्वजनानां द्वेष्यं विक्रान्तं सत्यवचनं च ॥ ५३ ॥

यदि भाग्यभाव में सूर्य-चन्द्रमा-बुध हों तो जातक नपुसकाकृति, दुःखी, समस्त मनुष्यों का द्वेषी, पराक्रमी तथा सत्य भाषी होता है ॥ ५३ ॥

नवम में सूर्य चन्द्रमा गुरू योग का फल

चन्द्रदिवाकरगुरवो नवमे पुरुषस्य सम्भवे यस्य ।
स भवत्युत्तमपुरुषो वाहनधनसौख्यसम्पन्नः ॥५४॥

जिसके भाग्यभाव में सूर्य-चन्द्रमा गुरू हों तो वह जातक-श्रेष्ठ पुरुष वि सवारी धन-सुख से युत होता है ॥ ५४ ॥

नवम में सूर्य चन्द्रमा शुक्र योग का फल

रविचन्द्रसिता नवमे स्त्रीकलहैर्नष्टसर्वधनसौख्यम् ।
नृपसंमतं नयज्ञं जनयन्ति नरं प्रियालापम् ॥५५॥

यदि भाग्यभाव में सूर्य चन्द्रमा-शुक्र हों तो जातक—स्त्री के कलहों से समस्त धन व सुख का नाशक, राजा का प्रिय, नीति ज्ञाता व प्रियभाषी होता है ॥ ५५ ॥

नवम में सूर्य चन्द्रमा शनि योग का फल

सूर्यनिशाकरसौरा नवमे राशौ नरं सदा कुर्युः ।
प्रबलं चण्डाचारं परभृत्यं लोकविद्विष्टम् ॥५६॥

यदि भाग्यभाव में सूर्य-चन्द्रमा-शनि हों तो जातक—बली, तीक्ष्ण आचरण कर्ता, दूसरे का नौकर तथा संसार द्वेषी होता है ॥ ५६ ॥

नवम में सूर्य भौम बुध योग का फल

रविभौमबुधा नवमे कुर्वन्ति नरं प्रियालापम् ।
[1]भुजगसिवातिक्रुद्धं समरपरं निष्ठुरं [2]प्रवासरतम् ॥५७॥

---

१ सुभगमथा । २ प्रवासार्तम् ।

यदि भाग्यभाव में सूर्य-भौम बुध हों तो जातक—प्रियभाषी, सर्प की तरह अधिक क्रोधी वा सौभाग्यवान् तथा अधिक क्रोधी, युद्ध में तत्पर, कठोर, प्रवास (परदेश) में लीन वा प्रवास से दु:खी होता है ।। ५७ ।।

नवम में सूर्य-भौम-गुरु योग का फल

रविगुरुवक्रा नवमे जनयन्ति नरं सदोद्युक्तम् ।
देवपितृपूजनरतं समृद्धदारं गुणोपेतम् ।।५८।।

यदि भाग्यभाव में सूर्य-भौम-गुरू हों तो जातक—सदा कार्यो में उद्यत, देवता व पिता की पूजा में तत्पर, धनी स्त्री वाला व गुणी होता है ।। ५८ ।।

नवम में सूर्य भौम शुक्र योग का फल

कलहप्रियं कुलीनं कन्यानां दूषकं च चपलं च ।
दिवसकरवक्रशुक्रा नवमे द्वेष्यं नरं कुर्युः ।५९।।

यदि भाग्यभाव में सूर्य-मङ्गल-शुक्र हों तो जातक—लड़ाई का प्रेमी, कुलीन, कन्याओं का दोषी, चञ्चल व द्रोही होता है ।। ५९ ।।

नवम में सूर्य भौम शनि योग का फल

साहसिकमतिक्षुद्रं लोकद्वेष्यं प्रियानृतं क्रूरम् ।
पित्रा रहितं बाल्ये कुर्युर्वक्रार्किभानवो नवमे ।।६०।।

यदि भाग्यभाव में सूर्य-भौम शनि हों तो जातक—साहसी, अति नीच, संसार द्वेषी, मिथ्या प्रेमी, कठोर तथा बाल्यकाल में पिता से हीन होता है ।। ६० ।।

नवम में सूर्य बुध गुरू योग का फल

रविबुधगुरुवो नवमे भाग्यसमेतं धनान्वितं सुभगम् ।
नृपतिप्रियं सुवेषं जनयन्ति नरं सुधीरं च ।।६१।।

यदि भाग्यभाव में सूर्य-बुध-गुरू हों तो जातक—भाग्यवान्, धनी, सुन्दर, ऐश्वर्यवान्, राजा का प्रियपात्र, सुन्दर वेषधारो तथा धैर्यवान् होता है ।। ६१ ।।

नवम में सूर्य बुध शुक्र योग का फल

रविबुधशुक्रा भाग्ये जनयन्ति नरं प्रकाशिनं कान्तम् ।
रिपुपक्षपरिक्षीण नृपतिसमं सारवन्त च ।।६२।।

यदि भाग्यभाव में सूर्य-बुध शुक्र हों तो जातक—तेजस्वी, प्रिय, शत्रुओं से रहित, राजा के समान व बली होता है ।। ६२ ।।

नवम में सूर्य बुध शनि योग का फल

परदाररतं पापं प्रवासशीलं च निपुणमतिधृष्टम् ।
आनृतिकमदैवपरं रविबुधसौरा नरं भाग्ये ।।६३।।

यदि भाग्यभाव में सूर्य बुध-शनि हों तो जातक—दूसरे की स्त्री में लीन, पापी, प्रवासी, चतुर, अधिक ढीठ, असत्यभाषी तथा भाग्यहीन होता है ।। ६३ ।।

नवम में सूर्य गुरू शुक्र योग का फल

भाग्यगृहे रविशुक्रौ जीवश्च नरं सुपण्डितं कान्तम् ।
वहुविषयपतिं वीरं जनयन्ति सुमेधसं प्राज्ञम् ॥६४॥

यदि भाग्य भाव में सूर्य-गुरू शुक्र हों तो जातक—सुन्दर पण्डित, प्रिय वा सुन्दर, अधिक विषयों का स्वामी, वीर तथा सुन्दर बुद्धि व विद्वान् होता है ॥ ६४ ॥

नवम में सूर्य गुरू शनि योग का फल

त्रिदशगुरुसौरसूर्या नवमे यस्येह जायमानस्य ।
स भवेदुत्तमवीर्यो राजा धनवान्गुणैः समृद्धश्च ॥६५॥

जिसके भाग्यभाव में सूर्य-गुरू-शनि हों तो जातक—श्रेष्ठ पराक्रमी, राजा, धनी व गुणी होता है ॥ ६५ ॥

नवम में सूर्य शुक्र शनि योग का फल

कान्तिविहीनं मलिनं भूपतिपरिदण्डित विभवहीनम् ।
जनयन्ति नरं भाग्ये रविशुक्रशनैश्चरा मूर्खम् ॥६६॥

यदि भाग्यभाव में सूर्य-शुक्र-शनि हों तो जातक—चेष्टा से रहित, दूषित, राजा से दण्डित, ऐश्वर्य से हीन तथा मूर्ख होता है ॥ ६६ ॥

नवम में चन्द्रमा भौम बुध योग का फल

धनकनकरत्नभाजं जनयन्ति शशिज्ञभूमिजाः पुरुषम् ।
प्रथमे वयसि च तप्तं भाग्यगृहे सर्वनाशेन[1] ॥६७॥

यदि भाग्यभाव में चन्द्रमा-भौम बुध हों तो जातक—धन-सुवर्ण-रत्नों का भागी तथा प्रथम अवस्था में सर्वनाश होने से दुःखी होता है ॥ ६७ ॥

नवम में चन्द्रमा भौम गुरू योग का फल

भौमनिशाकरजीवाः कुर्वन्ति नरं जितेन्द्रियं प्राज्ञम् ।
गुरुदेवभक्तिनिरतं विद्याधनभागिनं सुभगम् ॥६८॥

यदि भाग्यभाव में चन्द्रमा-भौम गुरू हों तो जातक–जितेन्द्रिय, पण्डित, गुरू व देवता की भक्ति में लीन, विद्या व धन का भागी व सौभाग्यवान् होता है ॥ ६८ ॥

नवम में चन्द्रमा भौम शुक्र योग का फल

व्रणिताङ्गमरूपं वा [2]प्रभेदिनं स्त्रीप्रियं युवतिवश्यम् ।
युवतिविनाशितसारं भृगुशशिवक्रा नरं नवमे ॥६९॥

यदि भाग्यभाव में चन्द्रमा-भौम-शुक्र हों तो जातक—घाव से युक्त देही वा कुरूप, रहस्य ज्ञाता वा अधिक भोजी, स्त्री प्रेमी, स्त्री के वशीभूत व स्त्री से नष्ट बल वाला होता है ॥ ६९ ॥

नवम में चन्द्रमा भौम शनि योग का फल

व्यापन्नमातृवंशं क्षुद्रं बाल्ये निराकृतं मात्रा ।
सौरो भौमश्चन्द्रो जनयन्ति नराधमं नवमे ॥७०॥

---

[1] भावेन । [2] प्रभक्षणं ।

यदि भाग्यभाव में चन्द्रमा-भौम-शनि हों तो जातक—आपत्ति युक्त माता के कुल वाला, नीच, बाल्य काल में माता से पृथक् तथा अधम होता है ।। ७० ।।

नवम में चन्द्रमा बुध गुरू योग का फल

गुरुबुधचन्द्रा नवमे कुलवंशविवर्धनं कुर्युः ।
आचार्यं बहुमित्रं नृपतिं बहुसाधनोपेतम् ।।७१।।

यदि भाग्यभाव में चन्द्रमा-बुध-गुरू हों तो जातक—कुलवंश को बढ़ाने वाला, आचार्य (अध्यक्ष), अधिक मित्रों से युत, राजा व अधिक साधनों से युत होता है ।७१।

नवम में चन्द्रमा बुध शुक्र योग का फल

मातृसपत्नीजनकं प्रमुदितमानान्वितं प्रचुरमित्रम् ।
कुर्वन्ति सामशीलं भृगुबुधचन्द्रा नरं भाग्ये ।।७२।।

यदि भाग्यभाव में चन्द्रमा-बुध-शुक्र हों तो जातक--माता को सौतेली पैदा करने वाला, प्रसन्नता व सम्मान से युक्त अधिक मित्र वाला तथा शान्त स्वभाव का होता है ।। ७२ ।।

नवम में चन्द्रमा बुध शनि योग का फल

शशिबुधसौरा नवमे क्रूराचारं सुविक्रमं मलिनम् ।
जनयन्ति कुत्सितधियं संग्रामपराङ्मुखं दीनम् ।।७३।।

यदि भाग्य भाव में चन्द्रमा-बुध-शनि हों तो जातक—कठोर आचरण कर्ता, पराक्रमी, दूषित, निन्दित बुद्धि, युद्ध से पीछे हटने वाला व दीन होता है ।। ७३ ।।

नवम में चन्द्रमा गुरु शुक्र योग का फल

चन्द्रबृहस्पतिशुक्रा नवमे यस्येह जायमानस्य ।
स भवति महीपतुल्यो नृपतिकुले भूपतिश्चैव ।।७४।।

जिसके भाग्य भाव में चन्द्रमा-गुरु-शुक्र हों तो जातक—राजा के समान व राज कुल में जन्म होने पर राजा होता है ।। ७४ ।।

नवम में चन्द्रमा गुरु शनि योग का फल

शशिगुरुसौरा नवमे कुर्वन्ति नरं प्रियालापम् ।
सत्यव्रतं सुशीलं विख्यातं सर्वशास्त्रकुशलं च ।।७५।।

जिसके भाग्य भाव में चन्द्रमा-गुरु-शनि हों तो जातक—प्रियभाषी, सत्यव्रती, सुशील, प्रसिद्ध तथा समस्त शास्त्रों में चतुर होता है ।। ७५ ।।

नवम में चन्द्रमा शुक्र शनि योग का फल

शुक्रेन्दुयमा नवमे कृषिवृत्तिं योनिपोषणानुरतम् ।
कुर्युर्मनुजम[1]पापं कृतकृत्यं लोकविख्यातम् ।।७६।।

जिसके भाग्यभाव में चन्द्रमा-शुक्र-शनि हों तो जातक – खेती की जीविका वाला, योनि पालन में तत्पर अर्थात् स्त्री के वशीभूत, पापी वा अपापी, कृत-कृत्य (गद्गद) तथा संसार में प्रसिद्ध होता है ।। ७६ ।।

---

[1] मनुजं पापम् ।

नवम में भौम बुध गुरु योग का फल

तेजस्विनं विशोकं विद्वांसं वाक्स्थिरं विशिष्टं वा।
कुजबुधजीवा नवमे कुर्वन्ति च मन्डलाधिपतिम्।७७।

यदि भाग्यभाव में भौम-बुध-गुरू हों तो जातक—तेजस्वी, शोक रहित, पण्डित, स्थिर वचन, विशिष्ट वा जिलाधिकारी वा नगर का प्रधान होता है॥ ७७॥

नवम में भौम बुध शुक्र योग का फल

बहुविषयपतिं ख्यातं नरेन्द्रसत्कारसत्कृतं चण्डम्।
कुजबुधशुक्रा भाग्ये कुर्वन्ति नरं सतां सत्यम्॥ ७८॥

यदि भाग्यभाव में भौम-बुध-शुक्र हों तो जातक—अधिक विषयों का स्वामी, विख्यात, राजा से सम्मानित, उग्र तथा सज्जनों का सत्य स्वरूप होता है॥ ७८॥

नवम में भौम बुध शनि योग का फल

परवञ्चनासु निपुणं तमोधिकं सर्वशास्त्रमतिवाह्यम्।
बुधभौमयमा नवमे कुर्युः परतर्कसमूढम्॥ ७९॥

यदि भाग्यभाव में भौम-बुध-शनि हों तो जातक—दूसरे को ठगने में चतुर, अधिक क्रोधी, समस्त शास्त्र बुद्धि से बहिर्भूत व दूसरे के तर्क से मूर्ख होता है॥ ७९॥

नवम में बुध गुरु शुक्र योग का फल

बुधगुरुशुक्रा भाग्ये जनयन्ति नरं सुरोपमं विशदम्।
विख्यातं नरनाथं विद्वांसं धर्मशीलं च॥ ८०॥

यदि भाग्यभाव में बुध-गुरू-शुक्र हों तो जातक—देव सदृश, विस्तृत, (विशाल) प्रसिद्ध, राजा, पण्डित व धर्मात्मा होता है॥ ८०॥

नवम में बुध शुक्र शनि योग का फल

शुक्रशनैश्चरशशिजा नवमस्था जातकं प्रकुर्वन्ति।
मेधाविनं प्रकाशं सुरुचिरवाक्यं सुखोपेतम्॥ ८१॥

यदि भाग्यभाव में बुध-शुक्र-शनि हों तो जातक—बुद्धिमान्, तेजस्वी, सुन्दरवादी तथा सुखी होता है॥ ८१॥

नवम में गुरु शुक्र शनि योग का फल

शनिशुक्रामरगुरवो भाग्यगृहस्था नरं प्रकुर्वन्ति।
प्रचुरान्नपानविभवं सुभगं सुखितं सुरूपं च॥ ८२॥

यदि भाग्यभाव में गुरू-शुक्र-शनि हों तो जातक—अधिक अन्न-पेय-ऐश्वर्य से युक्त, सौभाग्यवान्, सुखी व स्वरूपवान् होता है॥ ८२॥

The following combinations of ylanets taken four at a time are treated of in Slokas 83-108 to be found onlp, in the OL. MS.

भाग्यभाव में सूर्य चन्द्र भौम बुध योग का फल

रविचन्द्रभौमशशिजा जन्मनि भाग्यर्क्षगा नरं कुर्युः ।
सभवत्युत्तमपुरुषो विदेशगो नित्यसंतुष्टः ॥ ८३ ॥

यदि जन्म के समय भाग्यभाव में सूर्य-चन्द्रमा-मङ्गल-बुध हों तो जातक—श्रेष्ठ पुरुष, विदेशगामी तथा सदा प्रसन्न होता है ॥ ८३ ॥

नवम में सूर्य चन्द्रमा भौम गुरु युति का फल

सूर्यशशिभौमगुरवो भाग्यर्क्षगता नरं कुर्युः ।
धनिनं विद्याकुशलं सुभगं नृपसंमतं चैव ॥ ८४ ॥

यदि भाग्यभाव में सूर्य-चन्द्रमा-भौम-गुरू हों तो जातक—धनी, विद्या में चतुर, सौभाग्यवान् व राजा से सम्मत होता है ॥ ८४ ॥

नवम में सूर्य चन्द्रमा भौम शुक्र युति का फल

शुक्रेन्दुभौमरवयो मायाचतुरं स्वदारसन्तुष्टम् ।
जनयन्ति सदा भाग्ये पुरुषं वहुनीचकर्माणम् ॥ ८५ ॥

यदि भाग्यभाव में सूर्य-चन्द्रमा-भौम-शुक्र हों तो जातक—निपुण मायावी, अपनी स्त्री से संतुष्ट तथा अधिक दुष्ट कर्म करने वाला होता है ॥ ८५—८६ ॥

नवमभाव में सूर्य, चन्द्रमा, भौम, शनि युति का फल

सूर्यारचन्द्ररवयः पिशुनं मायाविनं कुशीलञ्च ।
जनयन्ति सदा भाग्ये पुरुषं वहुनीचकर्माणम् ॥ ८६ ॥

यदि कुण्डली में नवमभाव में सूर्य, चन्द्रमा, भौम शनि का योग हो तो जातक—चुगलखोर, मायावी, दुष्ट स्वभाव वाला और अधिक बुरे कार्य करने वाला होता है ॥ ८६ ॥

नवम में सूर्य चन्द्रमा बुध गुरु युति का फल

शशिसुरगुरुवुधरवयो जन्मनि भाग्यर्क्षमाश्रिताः कुर्युः ।
पुरुषं प्रधानमचलं नरेन्द्रपूज्यं तथा हृष्टम् ॥ ८७ ॥

यदि भाग्यभाव में सूर्य-चन्द्रमा-वुध-गुरू हों तो जातक—प्रधान, स्थिर, राजा से पूजित व प्रसन्न होता है ॥ ८७ ॥

नवम में सूर्य चन्द्रमा बुध शुक्र युति का फल

चन्द्रवुधशुक्ररवयो धनेश्वरं धार्मिकं समृद्धं च ।
जनयन्ति नवमसंस्थाः पुरुषं प्रियवादिनं शान्तम् ॥ ८८ ॥

यदि भाग्यभाव में सूर्य-चन्द्रमा-वुध-शुक्र हों तो जातक—कुवेर के समान धनी, धर्मात्मा, सम्पत्ति शाली, प्रियभाषी व शान्त स्वभावी होता है ॥ ८८ ॥

नवम में सूर्य चन्द्रमा बुध शनि युति का फल

तरणिवुधचन्द्रसौरा जन्मनि नवमाश्रिता नरं कुर्युः ।
नीचानुरतं दीनं परस्वहरणे सदा सक्तम् ॥ ८९ ॥

यदि भाग्यभाव में सूर्य-चन्द्रमा-बुध-शनि हों तो जातक—दुष्ट जनों का सेवी, दीन तथा दूसरे के धन को चुराने में सदा लीन होता है ॥ ८९ ॥

नवम में सूर्य भौम बुध गुरु युति का फल

रविगुरुबुधभूतनया जन्मनि नवमे नरं प्रकुर्वन्ति ।
देवपितृपूजनपरं समृद्धदारं गुणोपेतम् ॥ ९० ॥

यदि भाग्यभाव में सूर्य-भौम-बुध-गुरू हों तो जातक—देवता व पिता की पूजा में तत्पर, सम्पन्न स्त्री वाला व गुणी होता है ॥ ९० ॥

नवम में सूर्य भौम बुध शुक्र युति का फल

शुक्रज्ञभौमसूर्या नवमे जनयन्ति निष्ठुरं सुभगम् ।
साहसनिरतं विधनं रिपुपक्षक्षपितविभवं च ॥ ९१ ॥

यदि भाग्यभाव में सूर्य-भौम-बुध-शुक्र हों तो जातक—निठुर, सौभाग्यवान्, साहसी, निर्धन व शत्रु द्वारा नष्ट ऐश्वर्य वाला होता है ॥ ९१ ॥

नवम में सूर्य भौम बुध शनि युति का फल

रविसौरिचान्द्रिभौमा नवमे यस्येह जायमानस्य ।
स भवति परदाररतो विनष्टकोशः सदा दीनः ॥ ९२ ॥

जिसके भाग्यभाव में सूर्य-भौम-बुध-शनि हों तो जातक—दूसरे की स्त्री में लीन अर्थात् पर स्त्री गामी, निर्धन व दीन होता है ॥ ९२ ॥

नवम में सूर्य भौम गुरु शुक्र युति का फल

शुक्रगुरुभौमरवयो लोके द्वेष्यं पिपासार्तम् ।
जनयन्ति नवमसंस्थाः कन्यानां दूषकं चपलचित्तम् ॥ ९३ ॥

यदि भाग्यभाव में सूर्य-भौम-गुरू-शुक्र हों तो जातक—संसार में द्वेषी, प्यास से पीड़ित, कुमारियों को दूषित करने वाला तथा अस्थिर चित्त होता है ॥ ९३ ॥

नवम में सूर्य, भौम, गुरु शनि युति का फल

गुरुभौमसौरसूर्या नवमे सुखवर्जितं सदोद्युक्तम् ।*
जनयन्ति नरं चण्डं विक्रमयुक्तं महासत्वम् ॥ ९४ ॥

यदि भाग्यभाव में सूर्य-भौम-गुरू-शनि हो तो जातक—सुख से रहित, सदा उद्यत, उग्र, पराक्रमी तथा बड़ा बली होता है ॥ ९४ ॥

नवम में सूर्य, बुध, गुरु, शुक्र युति का फल

रविबुधजीवसिताः स्युर्नवमे यस्येह जायमानस्य ।
स भवत्युत्तमपुरुषो धनकनकैश्वर्यसम्पन्नः ॥ ९५ ॥

जिसके भाग्यभाव में सूर्य-बुध-गुरू-शुक्र हों तो जातक—श्रेष्ठ पुरुष तथा धन-सुवर्ण-ऐश्वर्य से सम्पन्न होता है ॥ ९५ ॥

---

* Sloka 92 is found in P. L. and K. N. MSS.

नवम में सूर्य, बुध, गुरु, शनि युति का फल

भानुजरविबुधगुरवो नवमे जनयन्ति मानवं निधनम् ।
पापं परदाररत विद्विष्टं नीचकर्माणम् ॥ ९६ ॥

यदि भाग्यभाव में सूर्य-बुध-गुरु-शनि हों तो जातक—निर्धन, पापी, पर स्त्री में अनुरक्त, विशेष द्रोही तथा हीन कार्य करने वाला होता है ॥ ९६ ॥

नवम में सूर्य, बुध, शुक्र, शनि युति का फल

बुधरविजरविसिताः स्युर्भाग्यस्थाने नरं सुभगम् ।
जनयन्ति धनसमेतं सत्यरतं लोकविख्यातम् ॥ ९७ ॥

यदि भाग्यभाव में सूर्य-बुध-शुक्र-शनि हों तो जातक—सौभाग्यवान्, धनी, सत्य में लीन तथा संसार में प्रसिद्ध होता है ॥ ९७ ॥

नवम में सूर्य, गुरु, शुक्र, शनि युति का फल

रविगुरुसितभानुसुता जन्मनि नवमर्क्षगा नरं कुर्युः ।
सत्यव्रतं सुवाक्यं गुरुद्विजातिथिषु भक्तम् ॥ ९८ ॥

यदि भाग्यभाव में सूर्य-गुरु-शुक्र-शनि हों तो जातक सत्यव्रती, सुन्दर भाषी तथा गुरु-ब्राह्मण-अतिथियों का भक्त होता है ॥ ९८ ॥

नवम में चन्द्र, भौम, बुध, गुरु युति का फल

चन्द्रज्ञकुजसुरेज्या जनयन्ति नरं परिच्छदसमृद्धम् ।
वाल्ये मातृवियुक्तं धनान्वितं संस्थिता भाग्ये ॥ ९९ ॥

यदि भाग्यभाव में चन्द्रमा भौम बुध गुरु हों तो जातक —वस्त्रों से सम्पन्न, वाल्यावास्था में माता का वियोग तथा धनी होता है ॥ ९९ ॥

नवम में चन्द्र, भौम, बुध, शुक्र युति का फल

भौमसितशशिजचन्द्रा भाग्ये जनयन्ति तापसं ख्यातम् ।
वाग्मिनमतिदातारं परलोकपरं महाप्राज्ञम् ॥ १०० ॥

यदि भाग्यभाव में चन्द्रमा भौम बुध शुक्र हों तो जातक—तपस्वी, विख्यात, वाग्मी, अधिक दानी, स्वर्ग लोक इच्छुक तथा बड़ा पण्डित होता है ॥ १०० ॥

नवम में चन्द्र, भौम, बुध, शनि युति का फल

रविजबुधचन्द्रभौमा जनयन्ति नरं पराङ्मुखं दीनम् ।
क्षुद्रं मायाचतुरं परदाररतं स्थिता भाग्ये ॥ १०१ ॥

यदि भाग्यभाव में चन्द्रमा भौम बुध शनि हों तो जातक—वहिर्मुख, दीन, क्षुद्र (अल्प विचार वाला) माया में निपुण तथा परस्त्री में लीन होता है ॥ १०१ ॥

नवम में चन्द्रमा, भौम, गुरु शनि युति का फल

भौमेन्दुशुक्रजीवा नृपवंशकरं प्रधानमतिशूरम् ।
विद्याधनसुसमृद्धं विख्यातं लोकसंमतं चैव ॥१०२॥**

** Sloka 100 is found in the P. L. M. S.

यदि भाग्यभाव में चन्द्रमा भौम गुरू शुक्र हों तो जातक––राजा की वंश वृद्धि करने वाला, प्रधान, अधिकवीर, विद्या व धन से सम्पन्न, प्रसिद्ध तथा संसार सम्मत होता है ॥ १०२ ॥

नवम में चन्द्र, भौम, गुरु, शनि युति का फल

शशिवक्रार्किसुरेज्या जनयन्ति नरं पिपासार्तम्।
कलहप्रियं च नवमे सौभाग्यपरिच्छदातीतम् ॥ १०३ ॥

यदि भाग्यभाव में चन्द्रमा भौम गुरू शनि हों तो जातक––प्यास से पीडित, कलह प्रेमी तथा सुन्दर भाग्य व वस्त्रों से युक्त होता है ॥ १०३ ॥

नवम में चन्द्र, भौम, शुक्र, शनि युति का फल

चन्द्रारभानुजसिता नवमे जनयन्ति निष्ठुरं पापम्।
मायाविनं च पुरुषं शौचाचारैर्विहीनं च ॥ १०४ ॥

यदि भाग्यभाव में चन्द्रमा भौम शुक्र शनि हों तो जातक––निठुर (निर्मोही) पापी, मायावी व पवित्र आचरणों से रहित होता है ॥ १०४ ॥

नवम में चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र युति का फल

सितगुरुशशिजशशाङ्का जन्मनि भाग्यर्क्षमाश्रिता धनिनम्।
जनयन्ति धर्मसक्तं नरं कलासु प्रसिद्धं च ॥ १०५ ॥
प्राज्ञं नृपतिं कुलजं प्रधानमतिवित्तसंयुतं कान्तम्।
सौम्येन्दुशुक्रजीवा जनयन्ति नरं तु विख्यातम् ॥१०५॥❀

K. N. M. S reads the same s'loka thus.

गुरुसौम्यशुक्रचन्द्रा भाग्ये युक्ताः प्रजायमानस्य।
यस्य स भाग्ये युक्तो लोके पुरुषोत्तमो ज्ञेयः ॥१०५॥

यदि भाग्यभाव में चन्द्रमा बुध गुरू शुक्र हों तो जातक––धनी, धर्मात्मा तथा कलाओं में प्रसिद्ध होता है।

यदि भाग्यभाव में चन्द्रमा बुध गुरू शुक्र हों तो जातक––पण्डित, राजा, कुल (वंश) में प्रधान, अधिक धनी, सुन्दर वा प्रिय तथा विख्यात होता है।

यदि भाग्यभाव में चन्द्रमा-बुध-गुरू-शुक्र हों तो जातक––भाग्यवान् व संसार में पुरुषों में श्रेष्ठ होता है ॥ १०५ ॥

नवम में चन्द्र, बुध, गुरु, शनि युति का फल

भानुजबुधगुरुचन्द्रा जनयन्ति नरं परं सुनयम्।
भाग्यस्थिताः समृद्धं नीतिज्ञं चारुवेषं च ॥१०६॥

यदि भाग्यभाव में चन्द्रमा-बुध-गुरू-शनि हों तो जातक––सुन्दर न्याय में तत्पर, समृद्ध, (धनी) नीति ज्ञाता तथा सुन्दर वेषधारी होता है ॥ १०६ ॥

❀Reading of s'loka 103 in the P. L. M. S.

नवम में चन्द्र, बुध, शुक्र, शनि युति का फल

शनिशुक्रबुधशशाङ्का जन्मनि भाग्यस्थिता नरं कुर्युः ।
मेधाविनं प्रचण्डं जननीतिविशारदं धन्यम् ॥१०७॥

यदि भाग्य स्थान में चन्द्रमा-बुध-शुक्र-शनि हों तो जातक– बुद्धिमान् व उग्र, मनुष्य नीति में चतुर व प्रशंसनीय होता है ॥ १०७ ॥

नवम में चन्द्र, गुरु, शुक्र, शनि युति का फल

चन्द्रशनिशुक्रजीवा जन्मनि नवमस्थिताः प्रकुर्वन्ति ।
मायाविनं प्रचण्डं नरेष्वजेयं नरं धीरम् ॥१०८॥

यदि भाग्यभाव में चन्द्रमा-गुरू-शुक्र-शनि हों तो जातक––मायावी, उग्र, मनुष्यों में अजेय (जीतने योग्य नहीं) तथा धैर्यवान् होता है ॥ १०८ ॥

नवम में भौम, बुध, गुरु, शनि युति का फल

भौमज्ञसूरिशनयो नवमस्थानोपगा नरं कुर्युः ।
रिपुपक्षपरिक्षीणं रणप्रचण्डं सुधीरं च ॥१०९॥

यदि भाग्यभाव में भौम-बुध-गुरू-शनि हों तो जातक––शत्रु से रहित, सङ्ग्राम में उग्र तथा धैर्यवान् होता है ॥ १०९ ॥

नवम में भौम, बुध, शुक्र, शनि युति का फल

भौमज्ञशुक्रशनयः [1]नरं [2]विदेशानुगं सुशीलं च ।
जनयन्ति नवमसंस्था धनयुक्तं भक्तियुक्तं च ॥११०॥

यदि भाग्यभाव में भौम-बुध-शुक्र-शनि हों तो जातक––विदेशगामी, सुशील, धनी व भक्त होता है ॥ ११० ॥

नवम में भौम, गुरु, शुक्र, शनि युति का फल

भौमभृगुजीवरविजा जनयन्ति नरं धनैः परित्यक्तम् ।
क्षुद्रं दयाविरहितं विहीनसत्वं स्थिता भाग्ये ॥१११॥

यदि भाग्यभाव में भौम-गुरू-शुक्र-शनि हों तो जातक––निर्धन, क्षुद्र, निर्दयो तथा निर्बल होता है ॥ १११ ॥

नवम में बुध, गुरु, शुक्र, शनि युति का फल

बुधभृगुभानुजगुरवो जन्मनि नवमे स्थिता नरं कुर्युः ।
परवादविवादरतं परदेशप्राप्तवित्तञ्च ॥११२॥

यदि भाग्यभाव में बुध-गुरू-शुक्र शनि हों तो जातक––शिकायत व विवाद में लीन तथा परदेश में धन प्राप्त करने वाला होता है ॥ ११२ ॥

नवम में बुध के साथ तीन चार पाँच आदि ग्रहों का फल

त्रिचतुःपञ्चखगेन्द्रास्तथा च षट् सप्त संस्थिता भाग्ये ।
प्रात्ययिकं धनवन्तं कुर्युर्नृपतिं च बुधसहिताः ॥११३॥

---

१ कुर्वन्ति । २ दशानुगतं ।

यदि भाग्यभाव में बुध सहित तीन, चार, पांच, ६, सात ग्रह हों तो जातक-- विश्वासी, धनी व राजा होता है ॥११३॥

भाग्य (नवम) भाव में बुध गुरू के अतिरिक्त ग्रहों का फल

जनयन्ति भाग्यसंस्था गुरुसौम्यविवर्जिताः ग्रहाः पुरुषम् ।
व्याधिप्रायमकान्तं जनहीनं बन्धनार्तमतिदीनम् ॥११४॥

यदि भाग्य (नवम) भाव में गुरू व बुध को छोड़कर अन्य ग्रह हों तो जातक— प्रायः रोगी, असुन्दर वा अप्रिय, मनुष्यहीन, बन्धन (जेल) से पीड़ित तथा अधिक दीन होता है ॥ ११४ ॥

उक्तं बहुप्रकारं भाग्यगृहे बादरायणादिकृतम् ।
ग्रहयोगेक्षणभावैर्विचिन्त्य बुद्धया वदेदन्यत् ॥११५॥

मैंने बादरायणोक्त भाग्यस्थ ग्रहों का फल बहुत प्रकार से कहा है । इसके अतिरिक्त ग्रहयोग दृष्टिवश पूर्वक बुद्धि से विचार कर फल कहना चाहिये ॥ ११५ ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां भाग्यचिन्तानाम द्वात्रिंशोऽध्यायः ॥

त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः

लग्नाद्दशमे राशौ कर्मफलं यत्प्रकीर्तितं मुनिभिः ।
राशिग्रहस्वभा[1]वैर्ग्रहदृष्ट्या तदहमपि वक्ष्ये ॥१॥
होरेन्द्वोर्बलयोगाद्यो दशमस्तत्स्वभावजं [2]कर्म ।
तस्याधिपपरिवृद्धया वृद्धिर्ज्ञेयाऽन्यथा हानिः ॥२॥

मुनियों ने लग्न से दशम राशि को जो कर्म का फल कहा है उसको मैं भी दशमस्थ राशि व ग्रह के स्वभाव से फल को कहता हूँ ॥ १ ॥

जन्म के समय में लग्न व चन्द्रमा में जो बली हो उससे दशमस्थ राशि व ग्रह के स्वभाव तुल्य जातक का कर्म (कार्य) का फल होता है । दशमेश की वृद्धि से कर्म फल की वृद्धि तथा ह्रास से हानि कहना चाहिये ॥ २ ॥

फल कथन में विशेषता का ज्ञान

जाङ्गलमथवानूपं तथोभयं वा गृहं परीक्षेत ।
ग्राम्यमथारण्यं वा सौम्यर्क्षं पापभवनं वा ॥३॥
द्विपदचतुष्पदरूपं सरीसृपं वा तथोभयं चैव ।
यद्रूपं तद्भवनं यादृशकं [3]यत्स्वभावं च ॥४॥
प्रवदेत्तत्समदेशे कर्मप्राप्तिं नरस्य तत्सदृशीम् ।
तस्माद्दशमं भवनं प्रसवे बुध्येत यत्नेन ॥५॥
दशमे नक्षत्रपतेर्लग्नात्पुरुषस्य [1]कर्म संभवति ।
सर्वारम्भे [4]वृत्तिं विनिर्दिशेत्तस्य जातस्य ॥६॥

---

१ भागे । २ तत्स्वभावं । ३ यस्य । ४ सिद्धि ।

द्व्यन्तरयोगाध्याये कथितं कर्मस्थितैर्ग्रहैर्लग्नात् ।
चन्द्रादत्र विशेषो ग्रहैः स्थितैर्व्यक्तमिह वक्ष्ये ॥७॥

यदि दशम में जाङ्गल राशि हो जैसे सिंह वा अनूप जैसे मीन वा उभय राशि जैसे वृश्चिक वा ग्राम्य जैसे वृष वा आरण्य जैसे सिंह वा शुभ ग्रह की वा पापग्रह की राशि वा द्विपद वा चतुष्पद वा सरीसृप (वृश्चिक) वा उभय जैसे मकर राशि, या इनके स्वरूप आकृति-स्वभाव तुल्य देश में, राशि के समान कर्म फल की प्राप्ति कहनी चाहिये । इस कारण से जन्म के समय यत्न पूर्वक दशम राशि का विचार करके आदेश करना चाहिये । चन्द्रमा से वा लग्न से दशम राशि कार्य फल की होती है । इसलिये आरम्भ में जातक की जीविका निर्णय दशमस्थ ग्रहों का फल कथन हो गया है । इकतीसवें अध्याय में लग्न से दशमस्थ ग्रहों का फल कथन हो गया है । इस अध्याय में चन्द्रमा से दशमस्थ ग्रहों के विशेष फल को कहता हूँ ॥ ३–७ ॥

चन्द्रमा से दशम राशि में सूर्य के फल का ज्ञान

चन्द्राद्दशमे सूर्यः सिद्धारम्भं धनैः समृद्धं च ।
जनयत्युत्तमसत्त्वं नृपतिमुदग्रं [1]जनाश्रयं पुष्टम् ॥८॥

यदि जन्म के समय चन्द्रमा से दशम भाव में सूर्य हो तो जातक--कार्यों में सिद्धि प्राप्त करने वाला, धन से सम्पन्न, श्रेष्ठ वलवान्, राजा, उदारचित्त तथा बलीजनों का आश्रय होता है ॥ ८ ॥

चन्द्रमा से दशमभाव में भौम का फल

भौमः साहसनिरतं प्रत्यन्तनिवासिनं[2] विषयलुब्धम् ।
क्रूरं निषादचरितं जनयति दशमे स्थितः पुरुषम् ॥९॥

यदि चन्द्रमा से दशम में भौम हो तो जातक—साहसी, म्लेच्छ देश निवासी, विषय लोभी, कठोर व चाण्डाल के समान आचरण करने वाला होता है ॥ ९ ॥

चन्द्रमा से दशमभाव में बुध का फल

विद्वांसं धनवन्तं बहुश्रुतं [3]नृपतिनायकं ख्यातम् ।
जनयति सौम्यो दशमे पुरुषं बहुशिल्पिनं प्राज्ञम् ॥१०॥

यदि दशम में बुध हो तो जातक--विद्वान्, धनी बहुश्रुत (अधिक शास्त्र ज्ञाता) राजा का नेता वा राजा से सम्मत, प्रसिद्ध तथा अधिक चित्रकारी का ज्ञाता पण्डित होता है ॥ १० ॥

चन्द्रमा से दशमभाव में गुरू का फल

गुरुरपि दशमस्थाने सिद्धार्थं धार्मिकं धनसमृद्धम् ।
जनयत्युत्तमचरितं नरेन्द्रसचिवं नरं ख्यातम् ॥११॥

यदि दशम में गुरू हो तो जातक—प्रयोजन की सिद्धि करने वाला, धर्मात्मा, धनी, श्रेष्ठ कर्त्ता, राजा का मन्त्री व प्रसिद्ध, होता है ॥ ११ ॥

---

[1] धनाश्रयं । [2] सितं । [3] नृपतिसंमतं ।

चन्द्रमा से दशमभाव में शुक्र का फल

शशिनो दशमे शुक्रः सुभगं ललितं च वित्तवन्तं च ।
जनयति सिद्धारम्भं धनिनं नृपपूजितं पुरुषम् ॥१२॥

यदि चन्द्रमा से दशम में शुक्र हो तो जातक—सौभाग्यवान्, सुन्दर, धनी, सिद्धारम्भी व राजा से सम्मान पाने वाला होता है ॥ १२ ॥

चन्द्रमा से दशमभाव में शनि का फल

सौरो व्याधितदेहं निःस्वं दुःखान्वितं प्रजाहीनम् ।
कर्मसु नित्योद्विग्नं जनयति दशमे स्थितः पुरुषम् ॥१३॥

यदि दशम में शनि हो तो जातक—रोगी, निर्धन, दुःखी, सन्तान रहित व कार्यों में सदा उद्विग्न होता है ॥ १३ ॥

चन्द्रमा से दशम राशि में सूर्य-भौमयुतिफल ज्ञान

भानुर्भौमसमेतः कर्मकरान्का[1]सशोषगदबहुलान् ।
ज्योतिर्विदः प्रकुर्याल्लाक्षणिकांस्तार्किकांश्चापि ॥१४॥

यदि जन्म के समय चन्द्रमा से दशमभाव में सूर्यभौम हों तो जातक—कार्यकर्त्ता (मजदूर) खासी-सूखा आदि रोगों से युक्त, ज्योतिषी, लक्षणग्रन्थों का ज्ञाता व न्यायविद् होता है ॥ १४ ॥

चन्द्रमा से दशमस्थ सूर्यबुधयुतिफल ज्ञान

सूर्यः सौम्यसमेतो वस्त्रालङ्कारभागिनं वणिजम् ।
जनयति मेषूरणगः पुरुषं जलजीविनं वाऽपि ॥ १५ ॥

यदि दशम में सूर्य, बुध से युक्त हो तो जातक—वस्त्र व भूषणों का भागी, व्यापारी, वा जल से जीविका करने वाला होता है ॥ १५ ॥

चन्द्रमा से दशमस्थ सूर्यगुरुयुतिफल ज्ञान

जीवसहायः सूर्यः सिद्धारम्भान्नरेन्द्रमान्यांश्च ।
जनयति दशमे पुरुषान् [2]धीरान्शूरान्सुविख्यातान् ॥ १६ ॥

यदि दशम में सूर्य, गुरु से युक्त हो तो जातक—सिद्धारम्भी, राजा से सम्मानित, धैर्यवान् व सुप्रसिद्ध होता है ॥ १६ ॥

चन्द्रमा से दशमस्थ सूर्यशुक्रयुतिफल ज्ञान

सूर्यसहायः शुक्रो दशमे स्वजनाश्रितं नरं कुरुते ।
स्त्रीसंश्रयात्समृद्धं सुभगं नृपवल्लभं चापि ॥ १७ ॥

यदि दशम में सूर्य-शुक्र हों तो जातक—अपने मनुष्यों से आश्रित, स्त्री के आश्रय से सम्पन्न सौभाग्यवान् व राजा का प्रिय पात्र होता है ॥ १७ ॥

---

[1] कामशोमदबहुलान् । [2] वीरान् ।

चन्द्रमा से दशमस्थ सूर्यशनियुतिफल ज्ञान

सूर्यः स्वपुत्रसहितो दशमे वधबन्धभागिनं भृतकम् ।
जनयति दीनं कृपणं चोरैर्मुषितं प्रलापकरम् ॥ १८ ॥

यदि दशम राशि में सूर्य-शनि हों तो जातक—मरण (फांसी) व बन्धन (जेल) भागी, नौकर, दीन, लोभी तथा चोरों से चुराने पर हल्ला करने वाला होता है ॥१८॥

चन्द्रमा से दशमस्थ भौमबुधयुतिफल ज्ञान

भौमः सोमजसहितो जनयति दशमे नरं [1]बहुविपक्षम् ।
अस्त्रकलावेत्तारं कौशलमतिजीविनं महाशूरम् ॥ १९ ॥

यदि दशमभाव में भौमबुध हों तो जातक—अधिक शत्रुवाला वा अधिक निन्दनीय, अस्त्रकला का ज्ञाता, चतुरता से युत, दीर्घायु व बड़ा वीर होता है ॥ १९ ॥

चन्द्रमा से दशमस्थ भौमगुरुयुतिफल ज्ञान

भौमः सु गुरुसहितो दशमे कुरुते बलस्य नेतारम् ।
मित्रेभ्यो लब्धधनं तदाश्रयाजीवितं धन्यम् ॥ २० ॥

यदि दशमभाव में भौमगुरु हों तो जातक—बलवानों का नायक, मित्रों से धन प्राप्त कर्त्ता, मित्रों के आश्रय से जीनेवाला तथा प्रशंसनीय होता है ॥ २० ॥

चन्द्रमा से दशमस्थ भौमशुक्रयुतिफल ज्ञान

जनयति विदेशनिरतं काञ्चनमुक्तादिभिर्वणिग्वृत्त्या ।
भौमः शुक्रसमेतो दशमे स्त्रीसंश्रयाद्वाऽपि ॥ २१ ॥

यदि दशमभाव में भौमशुक्र हों तो जातक—सुवर्ण-मोती आदि व्यापार जीविका हेतु वा स्त्री के आश्रय से विदेश में तत्पर होता है ॥ २१ ॥

चन्द्रमा से दशमस्थ भौमशनियुतिफल ज्ञान

भौमः सौरसहायो जनयति दशमे स्थितो नरं प्रसवे ।
साहसशीलं क्षुद्रं [2]कर्मायुक्तं [3]रुजा सहितम् ॥ २२ ॥

यदि दशमभाव में भौमशनि हों तो जातक—साहसी, क्षुद्र (अल्प), कार्यहीन वा कार्यों मे तत्पर तथा रोगयुक्त वा सन्तान से हीन होता है ॥ २२ ॥

चन्द्रमा से दशमस्थ बुधगुरुयुतिफल ज्ञान

[4]सधनं नृपेन्द्रपूज्यं धर्मिष्ठं वृन्दनायकं ख्यातम् ।
जीवः सौम्यसहायो जनयति मेषूरणे पुरुषम् ॥ २३ ॥

यदि दशमभाव में बुधगुरु हों तो जातक—धनी वा नपुंसक, राजा से पूजित, धर्मात्मा, समुदाय का नेता व विख्यात होता है ॥ २३ ॥

चन्द्रमा से दशमस्थ बुधशुक्रयुतिफल ज्ञान

सौम्यः शुक्रसहायो जनयति दशमे सुहृज्जनोपेतम् ।
विद्यास्त्रीधनसौख्यं नृपसचिवं विषयनाथं वा ॥ २४ ॥

---

[1] नृशंसं । [2] कर्मोद्युक्तं । [3] प्रजाहीनम् । [4] षण्ढं ।

यदि दशमभाव में बुधशुक्र हों तो जातक—मित्रों से युक्त, विद्या-धन-स्त्री व सुख से युत व राजा का मन्त्री वा विषय स्वामी होता है ॥ २४ ॥

चन्द्रमा से दशमस्थ बुधशनियुतिफल ज्ञान

सौम्यः सौरसहायो मृद्भाण्डकरं करोति दशमस्थः ।
ख्यातं विद्याचार्यं पुस्तकलिपिलेख्यकारं च ॥ २५ ॥

यदि दशमभाव में बुध-शनि हों तो जातक—मिट्टी के पात्र बनाने वाला, प्रसिद्ध, विद्या में प्रधान व पुस्तक-प्रतिलिपी व लेख लिखने वाला होता है ॥ २५ ॥

चन्द्रमा से दशमस्थ गुरुशुक्रयुतिफल ज्ञान

वचसां पतिः सितयुतः कर्मणि कुरुते नरेन्द्रवरभृत्यम् ।
ब्राह्मणपतिं विशोकं विद्याचार्यं समर्थं च ॥ २६ ॥

यदि दशमभाव में गुरुशुक्र हों तो जातक—राजा का श्रेष्ठ नौकर, ब्राह्मणों का मुखिया, शोकरहित, विद्या में प्रधान व सामर्थ्यवान् होता है ॥ २६ ॥

चन्द्रमा से दशमस्थ गुरुशनियुतिफल ज्ञान

सुरराजगुरुः सार्किर्दशमे नीचं [1]परोपकाररतम् ।
कुरुते प्रवृद्धचेष्ठं स्थिरास्पदं सुस्थिरारम्भम् ॥ २७ ॥

यदि दशम भाव में गुरुशनि हों तो जातक—दुष्ट, परोपकारी, वा पर संतापी, अधिक इच्छा वाला, स्थिर स्थान वाला व सुन्दर स्थिर कार्यकर्त्ता होता है ॥ २७ ॥

चन्द्रमा से दशमस्थ शुक्रशनियुतिफल ज्ञान

शुक्रः सौरसहायश्चित्रकरं गन्धजीविनं वैद्यम् ।
जनयति दशमे पुरुषं नीलकरं चूर्णकारं च ॥ २८ ॥

यदि दशमभाव में शुक्रशनि हों तो जातक—चित्रकर्त्ता, इत्र की जीविका वाला, भिषक्, नीलकारी (रंगरेज) व पीसने वाला होता है ॥ २८ ॥

चन्द्रमा से दशमभावस्थ सूर्यभौमबुधयुति का फल

रविभौमचन्द्रपुत्राश्चन्द्राद्दशमस्थिता नरं धन्यम् ।
जनयन्त्युत्तमपुरुषं नृपतिसमं सर्वजनपूज्यम् ॥ २९ ॥

यदि चन्द्रमा से दशमभाव में सूर्य-भौम-बुध हों तो जातक—प्रशंसनीय, श्रेष्ठ पुरुष, राजा के समान व समस्त मनुष्यों से पूजित होता है ॥ २९ ॥

चन्द्रमा से दशम में सूर्यभौमगुरुयुति का फल

रविभौमदेवपूज्या दशमस्थाने नरं सुभगम् ।
शत्रूणां [2]हन्तारं जनयन्ति समृद्धिसंयुक्तम् ॥ ३० ॥

यदि चन्द्रमा से दशमभाव मे सूर्य-भौम-गुरु हों तो जातक—सौभाग्यवान्, शत्रुओं को मारने वाला वा जीतने वाला व धनधान्यादि से युक्त होता है ॥ ३० ॥

---

[1] तापकरं ।
[2] जेतारं ।

चन्द्रमा से दशम में सूर्य-भौम-शुक्र युति का फल

चन्द्राद्दशमे भानुर्भूपुत्रो भार्गवश्च जनयन्ति ।
क्रूरं साहसनिरतं [१]पुरधनकरणेऽतिनिपुणमतिम् ॥ ३१ ॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा से दशम राशि में सूर्य-मङ्गल शुक्र हों तो जातक—कठोर, साहसी व नगर को धन (सम्पन्न) करने में वा दूसरे के धन चुराने में अति चतुर बुद्धि वाला होता है ॥ ३१ ॥

चन्द्रमा से दशम में सूर्य-भौम-शनियुति का फल

भानुजरविभूपुत्रा दशमस्थाः क्रूरकर्मनिरतं तु ।
उत्पादयन्ति मनुजं मूढं पापं दुराचारम् ॥ ३२ ॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा से दशम राशि में सूर्य-भौम-शनि हों तो जातक—कठोर कार्य करने में तत्पर, मूर्ख, पापी व दुराचारी होता है ॥ ३२ ॥

चन्द्रमा से दशम में सूर्य-बुध-गुरुयुति का फल

रविबुधगुरवो दशमे विद्वांसं रूपसंयुक्तम् ।
उत्पादयन्ति पुरुषं धर्मिष्ठं बन्धुवल्लभं चैव ॥ ३३ ॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा से दशम राशि में सूर्य-बुध गुरु हों तो जातक—विद्वान्, स्वरूपवान्, धर्मात्मा व बन्धुओं का प्रिय होता है ॥ ३३ ॥

चन्द्रमा से दशम में सूर्य-बुध-शुक्रयुति का फल

बुधसूर्यभार्गवसुता यशस्विनं धार्मिक विगतरोषम् ।
जनयन्त्यपराभूतं सौभाग्यपरिच्छदसमृद्धम् ॥ ३४ ॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा से दशम राशि मे सूर्य-बुध-शुक्र हो तो जातक—यशस्वी, धर्मात्मा, क्रोधरहित, अपीड़ित, सौभाग्यवान् व वस्त्रों स सम्पन्न होता है ॥ ३४ ॥

चन्द्रमा से दशम में सूर्य-बुध-शनियुति का फल

रविबुधशनयो दशमे क्रूरं चपलं नरं विशीलं च ।
उत्पादयन्ति नियतं शस्त्राग्निपरिक्षताङ्गं च ॥ ३५ ॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा से दशम राशि में सूर्य-बुध-शनि हो तो जातक—कठोर, चञ्चल, शील से रहित अर्थात् उद्दण्ड तथा शस्त्र व अग्नि से भग्न देहधारी होता है ॥३५॥

चन्द्रमा से दशम में सूर्य-गुरु-शुक्रयुति का फल

रविभृगुजदेवपूज्या दशमस्थानोपगा नरं कुर्युः ।
सुभग विद्याप्तधनं धर्मरतं भोगभागिनं नित्यम् ॥ ३६ ॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा से दशम राशि में सूर्य-गुरु-शुक्र हों तो जातक—सौभाग्यवान्, विद्या से धन प्राप्त करने वाला, धर्मात्मा व प्रतिदिन भोगी होता है ॥ ३६ ॥

चन्द्रमा से दशम में सूर्य-गुरु-शनियुति का फल

त्रिदशगुरुमन्दसूर्या दशमे युक्ता नरं प्रकुर्वन्ति ।
प्रायेण लोकमान्यं चारित्रविलोपिनं धीरम् ॥ ३७ ॥

---

[१] परधनहरणे च निपुणमतिम् ।

यदि कुण्डली में चन्द्रमा से दशम राशि में सूर्य-गुरु-शनि हों तो जातक—प्रायः संसार में पूज्य, चरित्र से हीन व धैर्यवान् होता है ॥ ३७ ॥

चन्द्रमा से दशम में सूर्य-शुक्र-शनियुति का फल

भार्गवरविभानुसुता दशमस्थानोपगा नरं कुर्युः ।
लोभान्वितमतिचपलं समस्तजगविप्रयुक्तं च ॥ ३८ ॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा से दशम राशि में सूर्य-शुक्र-शनि हों तो जातक—लोभी, अधिक चञ्चल व समस्त संसार से पृथक् होता है ॥ ३८ ॥

चन्द्रमा से दशम में भौम-बुध-गुरुयुति का फल

भौमेन्दुजसुरपूज्या धर्मिष्ठं वहुकुटुम्बपरिवारम् ।
जनयन्ति दशमसंस्था विद्याधनभागिनं पुरुषम् ॥ ३९ ॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा से दशम राशि में भौम-बुध-गुरु हों तो जातक—धर्मात्मा, अधिक कुटुम्ब व परिवार वाला, विद्वान् एवं धनवान् होता है ॥ ३९ ॥

चन्द्रमा से दशम में भौम-बुध-शुक्रयुति का फल

शोभनशिल्पाभिरतान्मालाकारान्सुवर्णकारांश्च ।
कुर्युर्बुधभृगुवक्रा दशमस्थाः सर्वलोकदयितांश्च ॥ ४० ॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा से दशम राशि में भौम-बुध-शुक्र हों तो जातक—सुन्दर चित्रकारी में लीन, माली, सुनार एवं समस्त संसार का दयालु होता है ॥ ४० ॥

चन्द्रमा से दशम में भौम-बुध-शनियुति का फल

भौमबुधसूर्यपुत्रा जनयन्ति तथा न[1] धर्मशीलं च ।
निद्रानिरतं प्रखलं दशमस्थानोपगा नरं मलिनम् ॥ ४१ ॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा से दशम राशि में भौम-बुध-शनि हों तो जातक—अधार्मिक या सुन्दर धर्मात्मा, निद्रालु (आलसी), अधिक दुष्ट व दूषित होता है ॥ ४१ ॥

चन्द्रमा से दशम में भौम-गुरु-शुक्रयुति का फल

भार्गवसुरेज्यभौमा दशमस्थानाश्रिता नरान्कुर्युः ।
धनसंयुक्तान्शूरान्देवद्विजपूजनानुरतान् ॥ ४२ ॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा से दशम राशि में भौम-गुरु-शुक्र हों तो जातक—धनवान्, वीर तथा देवता व ब्राह्मण पूजा में लीन होता है ॥ ४२ ॥

चन्द्रमा से दशम में भौम-गुरु-शनियुति का फल

विद्याधनजनहीनान्कापुरुषान्सौख्यवर्जितान्विकलान् ।
जीवाङ्गारकसौरा दशमे कुर्युर्नरान्नीचान् ॥ ४३ ॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा से दशम राशि में भौम गुरु-शनि हों तो जातक—विद्या, धन, मनुष्य से रहित, कुत्सित, सुख से हीन, अशान्त व दुष्ट होता है ॥ ४३ ॥

---

[1] सुधर्मं ।

चन्द्रमा से दशम में भौम-शुक्र-शनियुति का फल

सचिवानुत्तमपुरुषान्परधर्मरतांश्च[1] धनिनश्च ।
भौमभृगुसूर्यपुत्राः कुर्वन्ति नराननेककर्मरतान् ॥ ४४ ॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा से दशम राशि में भौम-शुक्र-शनि हों तो जातक—मन्त्री, अश्रेष्ठ, अन्य धर्मावलम्बी, धनी तथा अनेक कार्य कर्ता अर्थात् बहुधन्धी होता है ॥४४॥

चन्द्रमा से दशम में बुधगुरुशुक्र युति का फल

शुक्रबृहस्पतिसौम्या दशमे पुरुषस्य शुक्रराशिस्थाः ।
बहुविधमिष्टं कुर्युर्व्याधिं चाप्यन्यगृहसंस्थाः ॥ ४५ ॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा से दशम राशि में शुक्र को राशि में बुध-गुरु-शुक्र हों तो जातक—अनेक प्रकार की इच्छा करने वाला, शुक्र राशि के अतिरिक्त राशि में हों तो रोगी होता है ॥ ४५ ॥

चन्द्रमा से दशम में बुध गुरु-शनियुति का फल

लिपिलेख्यकाव्यनिरतं धनवन्तं बहुविधेयभृत्यं च ।
अटनप्रियं सुरूपं बुधगुरुसौरा नरं दशमे ॥ ४६ ॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा से दशम राशि में बुध-गुरु-शनि हों तो जातक—लिपिकर्त्ता, लेखक, काव्य में लीन, धनी, अधिक आज्ञाकारी नौकरों से युत, घूमने का प्रेमी व स्वरूपवान् होता है ॥ ४६ ॥

चन्द्रमा से दशम में बुध-शुक्र-शनियुति का फल

दशमे विज्ञानयुतान्मल्लान्परदेशनिरतांश्च ।
कुर्युर्बुधभृगुरविजाः कर्मोद्युक्तं सदा दान्तम् ॥ ४७ ॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा से दशम राशि में बुध-शुक्र-शनि हों तो जातक—वैज्ञानिक, व्यायामकर्त्ता, परदेशवासी, कार्यों में उद्यत् व तपस्या में क्लेश सहनेवाला होता है ॥४७॥

चन्द्रमा से दशम में गुरु-शुक्र-शनियुति का फल

विद्वांसं धर्मरतं दयान्वितं सत्यवन्तं च ।
भानुजगुरुभृगुपुत्रा दशमस्थानोपगा नरं कुर्युः ॥ ४८ ॥
एवं त्र्यादिषु वाच्यं जन्मनि पुंसां फलं हि कर्मोत्थम् ।
आदिग्रहसंयोगेऽत्र विशेषस्तमपि वक्ष्ये ॥ ४९ ॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा से दशम राशि में गुरु-शुक्र-शनि हों तो जातक—विद्वान्, धर्मात्मा दयालु व सत्यवक्ता होता है। इस प्रकार जन्म के समय मनुष्यों के दशमराशिस्थ एक, दो, तीन ग्रहों का फल कहना चाहिए। इन तीनादि ग्रहों के संयोग से अर्थात् चार ग्रहों के योगों से जो विशेष फल होता है उसे भी मैं कहता हूँ ॥४८–४९॥

चन्द्रमा से दशम में सूर्य भौम-बुध गुरु योग का फल

रविभौमबुधसुरेड्या दशमस्थानोपगा नरं कुर्युः ।
शूरं विक्षतगात्रं दातारं सर्वकर्मरतम् ॥ ५० ॥

---

[1] वनधर्मं ।

यदि कुण्डली में चन्द्रमा से दशम राशि में सूर्य-भौम-बुध-गुरु हों तो जातक—वीर, मग्नदेही, दानी व समस्त कार्यों में लीन होता है ॥ ५० ॥

चन्द्रमा से दशम में सूर्य-भौम-बुध-शुक्र योग का फल

वक्रार्कशुक्रसौम्याश्चन्द्राद्दशमं समाश्रिताः प्रसवे ।
[1]कुर्युर्निर्माल्यकराँल्लेख्यकरांश्चापि चित्रकर्मकरान् ॥ ५१ ॥

यदि कुण्डलो मे चन्द्रमा से दशम राशि में सूर्य-भौम-बुध-शुक्र हों तो जातक—माली का काम करने वाला, लेखक व चित्र (शिल्प) कार होता है ॥५१॥

चन्द्रमा से दशम में सूर्य-भौम-बुध-शनि योग का फल

रविकुजबुधभानुसुता दशमस्थानस्थिताः प्रसवकाले ।
उत्पादयन्ति पुरुषं धनवाहनवारणोपेतम् ॥ ५२ ॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा से दशम राशि में सूर्य-भौम-बुध-शनि हो तो जातक—धन-सवारी व हाथी से युक्त होता है ॥ ५२ ॥

चन्द्रमा से दशम में सूर्य-बुध-गुरु-शुक्र योग का फल

रविजीवशुक्रसौम्या जनयन्ति नभःस्थिता नरान्सौम्यान् ।
कुत्सितवृत्तीनामपि सुतान्वरान्कर्षणोपेतान् ॥ ५३ ॥

यदि कुण्डली मे चन्द्रमा से दशम राशि में सूर्य-बुध-गुरु-शुक्र हों तो जातक—मृदु, खेती में श्रेष्ठ पुत्रों से युक्त व घृणित जीविका वाला भी होता है ॥ ५३ ॥

चन्द्रमा से दशम में सूर्य-बुध-गुरु-शनि योग का फल

रविजीवसौम्यसौरा दशमस्थानस्थिताः कुर्युः ।
पुरुषं मायानिपुणं क्रूरं परवञ्चनानुरतम् ॥ ५४ ॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा से दशम राशि में सूर्य-बुध-गुरु-शनि हों तो जातक—चतुर-मायावी, कठोर व दूसरे को ठगने में अनुरक्त होता है ॥ ५४ ॥

चन्द्रमा से दशम में सूर्य-बुध-शुक्र-शनि योग का फल

रविसितबुधभानुसुताश्चन्द्राद्दशमस्थिता नरं कठिनम् ।
उत्पादयन्ति सुभगं वाग्मिनमथ कर्षणानुरतम् ॥ ५५ ॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा से दशम राशि में सूर्य-बुध-शुक्र-शनि हों तो जातक—कठोर, सुन्दर भाग्यवान्, पण्डित व खेती में अनुरक्त होता है ॥ ५५ ॥

चन्द्रमा से दशम में सूर्य-गुरु-शुक्र-शनि योग का फल

रविगुरुभार्गवशनयो मेपूरणसंस्थिताः प्रसवकाले ।
उत्पादयन्ति मनुजं प्रवासशीलं विविधचेष्टम् ॥ ५६ ॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा से दशम राशि में सूर्य-गुरु-शुक्र-शनि हों तो जातक—प्रवासी व अनेक इच्छाओं वाला होता है ॥ ५६ ॥

---

[1] कुर्युर्मालाकारं लेखकरं चापि वास्तुकर्मरतम्.

चन्द्रमा से दशम में भौम-बुध-गुरु-शुक्र योग का फल

भौमसितबुधसुरेड्या जन्मनि दशमर्क्षगा नरं निपुणम् ।
उत्पादयन्ति चतुरं शूरं समरेष्वधृष्यं च ।। ५७ ।।

यदि कुण्डली में चन्द्रमा से दशम राशि में भौम-बुध-गुरु शुक्र हों तो जातक—चतुर, कुशल, वीर तथा युद्ध में अजेय होता है ।। ५७ ।।

चन्द्रमा से दशम में भौम-बुध-गुरु-शनि योग का फल

भौमबुधमन्दगुरवो जन्मनि दशमस्थिता नरं मलिनम् ।
जनयन्ति [1]नरोद्युक्तं संग्रामे रिपुविनाशकरम् ।। ५८ ।।

यदि कुण्डली में चन्द्रमा से दशम राशि में भौम बुध-गुरु-शनि हों तो जातक—दूषित, सदा उद्योगी व युद्ध में शत्रुओं का नाश करने वाला होता है ।। ५८ ।।

चन्द्रमा से दशम में भौम-बुध-शुक्र-शनि योग का फल

भौमबुधशुक्रसौरा नभःस्थले संश्रिताः प्रसवकाले ।
विद्यावहुलं शूरं जनयन्ति नरं विशालाङ्गम् ।। ५९ ।।

यदि कुण्डली में चन्द्रमा से दशम राशि में भौम-बुध-शुक्र-शनि हों तो जातक—अधिक विद्वान्, वीर व विशालदेहधारी होता है ।। ५९ ।।

चन्द्रमा से दशम में भौम-गुरु-शुक्र-शनि योग का फल

भौमगुरुशुक्रमन्दाश्चन्द्रान्मेषू णर्क्षगाः प्रसवे ।
जनयन्ति नरं धीरं कुटुम्बयुक्तं [2]धनोपेतम् ।। ६० ।।

यदि कुण्डली में चन्द्रमा से दशम राशि मे भौम-गुरु-शुक्र-शनि हों तो जातक—धैर्यवान्, कुटुम्बी व धनवान् होता है ।। ६० ।।

चन्द्रमा से दशम में बुध-गुरु-शुक्र-शनि योग का फल

बुधगुरुभार्गवशनयो जन्मनि दशमस्थिताः कुर्युः ।
पुरुषं शान्तमनस्कं सुमेधसं लोकदयितं च ।। ६१ ।।

यदि कुण्डलो में चन्द्रमा से दशम राशि में बुध-गुरु-शुक्र-शनि हों तो जातक—शान्त मन का, सुन्दर बुद्धिमान् व संसार का प्रेमी होता है ।। ६१ ।।

चन्द्रमा से दशमस्थ सौम्यग्रहों से दृष्ट पापग्रहों का फल

पापैर्नभःस्थलस्थैः सौम्यग्रहवीक्षितैः प्रजायन्ते ।
वैद्यपुरोहितगणकाश्च ग्डाः[3] परवञ्चनानुरताः ।। ६२ ।।
एते समस्तयोगाः सौम्यग्रहवीक्षिताः प्रशस्यन्ते ।
पापग्रहदृष्टियुताः प्रायेण न भद्रकः प्रोक्ताः ।। ६३ ।।

यदि कुण्डली में चन्द्रमा से दशमस्थ पापग्रह, शुभग्रहों से दृष्ट हों तो जातक—वैद्य, पुरोहित, ज्योतिषी व दूसरे को ठगने में अनुरक्त होता है । ये पूर्वोक्त समस्त योग शुभग्रहों से दृष्ट होने पर पूर्णफल प्रदान करते हैं व पापग्रहों से दृष्ट होने पर प्रायः कल्याण प्रद नहीं होते हैं ।। ६२-६३ ।।

---

[1] सदोद्युक्तं । [2] जनोपेतम् । [3] चन्द्रात् ।

लग्न वा चन्द्रमा से शुभप्रद-हानिप्रद पापग्रहों का फल

पापास्तृतीयषष्ठा होरेन्दुस्थानतो नृणामिष्टाः।
नेष्टा निधनान्त्यगता लग्नोपगता विशेषेण ॥ ६४ ॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा वा लग्न से तृतीय व षष्ठभाव मे पापग्रह हों तो जातक को शुभ फल देते हैं। यदि अष्टम द्वादश में पापग्रह हों तो अशुभ फलदायक होते हैं। लग्नस्थ पापग्रह होने पर विशेष अशुभ फल प्रदान करते हैं ॥ ६४ ॥

लग्न व चन्द्रमा में बलवान् से दशमभाव का फल

होराशशिनोर्बलवान्यस्तस्मात्कर्मभेन वा कथयेत्।
यो बलयुक्तो [1]वर्गस्तदधिपतेर्वाऽऽदिशेद्वृत्तिम् ॥ ६५ ॥

यदि कुण्डली में लग्न व चन्द्रमा में से जो बली हो उसके दशम भाव से वा दशमेश से जातक की जीविका का निर्णय करना चाहिए। अथवा लग्न व चन्द्रमा मे से जो बलवान् दशम भाव हो उससे वा दशमेश से जीविका का निर्णय करके फलादेश करना चाहिए ॥ ६५ ॥

दशम में मेषराशि का वर्ग होने पर फल

आरामपुत्र(बुद्धि)सेवाकृषिरसवणिगर्कदूतकार्येण।
जीवन्ति नरा नित्यं मेषगणे दशमराशिस्थे ॥ ६६ ॥

यदि कुण्डली में दशमभाव में मेष राशि का वर्ग हो तो जातक—बगीचा-पुत्र (बुद्धि)-नौकरी-खेती-रस- विक्रय) व्यापार-आसव-वा दूतकार्य से जीविका (भरण-पोषण) करने वाला होता है ॥ ६६ ॥

दशम में वृषराशि का वर्ग होने पर फल

वृषभगणे दशमस्थे शकटचतुष्पदविहङ्गमृगजीवी।
धान्यादिसङ्ग्रहेण च जाङ्गलदेशे फलं प्रायः ॥ ६७ ॥

यदि कुण्डली में दशमभाव में वृषराशि का वर्ग हो तो जातक—गाड़ी-पशु-पक्षी-हिरन व अन्न संग्रह से आजीविका करने वाला होता है तथा जङ्गली देशों में प्रायः यह जीविका फलप्रद होती है ॥ ६७ ॥

दशमस्थ मिथुन राशि का वर्ग होने पर फल

जलवणिजः[2] सुसमृद्ध्या मुक्ताशङ्खप्रवालभाण्डैश्च।
लिपिगणितलेख्यजीवी नृमिथुनवर्गे दशमसंस्थे ॥ ६८ ॥

यदि कुण्डली में दशमभाव में मिथुन राशि का वर्ग हो तो जातक—जल व्यवसाय से, धन से अर्थात् (व्याज से), मोती-शङ्ख-मूंगा-बर्तन के व्यापार से लिपि-गणित (गणना) व लेखक वृत्ति से जीविका (धनोपार्जन) करने वाला होता है ॥ ६८ ॥

---

१. भाव। २ जादि।

दशमस्थ कर्क राशि का वर्ग होने पर फल

शस्त्राग्नियोनिपोषणमुक्तासंख्योपजीवनं[2] चैव ।
[1]आखेटकवृत्त्या वा कर्किणि वर्गे च दशमस्थे ॥ ६९ ॥

यदि कुण्डली में दशमभाव में कर्क राशि वा कर्क राशि का वर्ग हो तो जातक—शस्त्र-अग्नि-योनिपोषण-(चकला घर)-मोती-गणित वृत्ति से वा शिकार की वृत्ति से जीनेवाला होता है ॥ ६९ ॥

दशमस्थ सिंह राशि के वर्ग का फल

[3]सन्नाहका मणीनां पाषाणस्वर्णरूप्यकूटाश्च[4] ।
कर्षणनिरता लेख्ये गोजीवा धान्यवाणिजकाः ॥ ७० ॥

यदि कुण्डली में दशमभाव में सिंह राशि का वर्ग हो तो जातक—मड़ियों के जड़ने (गूँथने) वाला, पत्थर-सुवर्ण-चाँदी के ढेरों से अर्थात् इनके क्रयविक्रय से, खेती से, गाय-बैलों से, अन्न के व्यापार से जीविका (धनोपार्जन) करता है ॥ ७० ॥

दशमस्थ कन्या राशि व वर्ग का फल

शाकटिका मणिकारा हैरण्या गन्धविक्रये निपुणाः ।
गान्धर्वशिल्पलेख्यैः कन्यावर्गे सदा विभवाः ॥ ७१ ॥

यदि कुण्डली में दशम में कन्या राशि वा कन्या का वर्ग हो तो जातक—गाड़ी बनानेवाला, जौहरी, सुनार, इत्र के वेचने में निपुण, गान-चित्रकारो व लेखक की वृत्ति से सर्वदा ऐश्वर्यवान् होता है ॥ ७१ ॥

दशमस्थ तुला राशि व वर्ग का फल

[5]प्रायोज्यानुपदेशाद्धिरण्यपरिवर्तनाच्च [6]मित्राय ।
जायन्ते च मनुष्या नानाव्यवहारभागिनः सततम् ॥ ७२ ॥
वाणिज्यविपणिजीवा[7] गोजीवा [8]महिषजीवाश्च ।
नानापण्यसमृद्धाः सलिलोद्भवपण्यवृत्तयः ख्याताः ॥ ७३ ॥
धनधान्यमूलवणिजः [9]फलमूलकृषीवलाश्चैव ।
जायन्ते घटवर्गे दशमस्थानस्थिते कलावृत्ताः ॥ ७४ ॥

यदि कुण्डली में दशम भाव में तुला राशि वा तुला का वर्ग हो तो जातक—प्रयोजक के विना आदेश से मित्र के लिये सुवर्ण परिवर्तन से व निरन्तर अनेक व्यवहारों से, व्यापार-दूकान-गाय-भैंसादि से अनेक व्यापारों से सम्पन्न तथा जल से उत्पन्न वस्तुओं का विख्यात व्यापारी, धन-अन्न-मूल (कन्दमूलादि) के व्यापार से, फल-मूल-खेती से तथा कलाओं के आचरण से जीवन यापन करता है ॥ ७२-७४ ॥

---

१ शल्यो । २ आहिण्ड । ३ संव्यूहकाः । ४ कुल्यानाम् । स्वर्णकूटकल्पानां ।
५ दुप । ६ मित्राच्च । ७ विपण । ८ भिषज । ९ कृषिबलाच्चैव ।

दशमस्थ वृश्चिक राशि व वर्ग का फल

स्त्रीसम्पर्कजविभवा जायन्ते [1]कर्षणानुनिरताश्च ।
नित्योद्युक्ताश्चौराः पृथिवीपतिसेवकाः पापाः ॥ ७५ ॥
देहचिकित्सानिरता लोहकरा जीविनोऽलिसंज्ञर्क्षे ।
वर्गे नभस्तलगते धान्यानां चोपजीविनो नित्यम् ॥ ७६ ॥

यदि कुण्डली में दशम में वृश्चिक राशि वा वृश्चिक का वर्गाधिक्य हो तो जातक—स्त्री सम्पर्क से ऐश्वर्यवान्, खेती में अनुरक्त, प्रतिदिन कार्यों में उद्यत, चोर, राजा का नौकर, पापी, वैद्य, लोहार तथा नित्य अन्न की जीविका अर्थात् अन्न के व्यापार से जीने वाला होता है ॥ ७५-७६ ॥

दशमस्थ धनु राशि व वर्ग का फल

नृपसचिवदुर्गपालनगोजीवनवाजिकाष्ठशकुनैश्च ।
यन्त्रोपस्करगणितैर्जीवन्ति नराश्चिकित्सया धनुषः ॥ ७७ ॥

यदि कुण्डली में दशमभाव में धनु राशि वा धनु राशि का वर्गाधिक्य हो तो जातक—राजा का मन्त्री, किले का रक्षक, गाय, बैलादि सेवा से, घोड़ा-काठ (लकड़ी) से पक्षी-यन्त्र-वस्त्र-गणित व चिकित्सा कार्य से जीविका करने वाला होता है ॥ ७७ ॥

दशमस्थ मकर राशि व वर्ग का फल

दशमे कुरङ्गवर्गे जलपण्यधनो भवेन्महाविभवः ।
[2]खट्वारामारोपणरसायनैर्वर्तते जातः ॥ ७८ ॥

यदि कुण्डली में दशमभाव में मकर राशि वा मकर राशि का वर्गाधिक्य हो तो जातक—जल के व्यापार से धनी, शय्या-बगीचे में वृक्षारोपण व रसायन से बड़ा ऐश्वर्यवान् होता है ॥ ७८ ॥

दशमस्थ कुम्भराशि व वर्ग का फल

शस्त्रदहनप्रभेदैश्चौर्येण[3] च वर्तते खननवृत्त्या ।
दशमे घटधरवर्गे भारवहस्कन्धबाहुबलात् ॥ ७९ ॥

यदि कुण्डली में दशमभाव में कुम्भ राशि वा कुम्भ राशि का वर्गाधिक्य हो तो जातक—शस्त्र जलाने के भेदों से, चोर कर्म से, खोदने से, कन्धा व बाहुबल से भारवाहक की वृत्ति से जीने वाला होता है ॥ ७९ ॥

दशमस्थ मीन राशि व वर्ग का फल

शस्त्रात्सलिलाद्योनिप्रपोषणादश्वविक्रयाद्वाऽपि ।
वर्गे मीनप्रभवे दशमस्थे जायते वृत्तिः ॥ ८० ॥

यदि कुण्डली में दशम भाव में मीन राशि वा मीन राशि का वर्गाधिक्य हो तो जातक—शस्त्र से, जल से, चकलाघर से वा घोड़ों की विक्री से जीने वाला होता है ॥८०॥

---

[1] रताः । [2] वामा । [3] शौर्येण ।

लग्न व चन्द्रमा से दशमस्थ सूर्यादिग्रहों का फल

दिवसकराद्यैः खस्थैः शशिहोराभ्यां भवन्त्याढ्याः ।
पितृमातृशत्रुहितजनसहजस्त्रीभृत्यवर्गेभ्यः ॥ ८१ ॥
होरागतैर्धनगतैरायगृहस्थैश्च चिन्तयेदर्थम् ।
बलसंयुतैर्ग्रहेन्द्रैरनेकधा [1]दृष्टमाचार्यैः ॥ ८२ ॥

यदि कुण्डली में लग्न वा चन्द्रमा से दशम मे सूर्य हो तो जातक—पिता से, चंद्रमा हो तो माता से, मङ्गल हो तो शत्रु से, बुध हो तो मित्र से, गुरू हो तो भाई से, शुक्र हो तो स्त्री से, शनि हो तो नौकर से धन प्राप्त करता है। लग्न में स्थित ग्रह से, व लाभ में स्थित ग्रह से धन, यदि उक्त स्थानों में अधिक ग्रह हों तो बलवान् ग्रह से धन का विचार करना चाहिए। इस प्रकार आचार्यों ने अनेक प्रकार से धनागम का विचार किया है ॥ ८१–८२ ॥

वृ० जा० में कहा है—

अर्थाप्तिः पितृपितृपत्निशत्रुमित्रभ्रातृस्त्रीभृतकजनाद्दिवाकराद्यैः (१० अ० १ श्लो०) ॥ ८१–८२ ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां कर्मचिन्ताध्यायस्त्रयस्त्रिंशः ॥

चतुस्त्रिंशोऽध्यायः

सूर्य से दृष्ट लग्न का फल

रविदृष्टे प्राग्लग्ने विक्रान्तः स्त्रीषु रोषणः क्रूरः ।
पितृपक्षलब्धविभवो नरेन्द्रसेवी [2]भवेज्जातः ॥ १ ॥

यदि जन्म के समय लग्न, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक—पराक्रमी, स्त्रियों पर क्रोध करने वाला, (सं० वि० वि० मातृका में 'विक्रान्तस्तीव्ररोषणः' यह पाठ प्राप्त होने से उग्र क्रोधी) कठोर, पिता के पक्ष से अर्थात् पिता से ऐश्वर्य प्राप्त करने वाला तथा राजा का सेवन कर्त्ता होता है ॥ १ ॥

वृ० यवनजातक में कहा है—तनुगृहे यदि सूर्यनिरीक्षिते भ्रमति देशविदेशमसौ सदा। सुकृतभाग्यफलं सुकृतक्षयं गृहसुखञ्च करोति निपीडितम् (१ अ० पृ० सं० ९) ॥१॥

चन्द्र से दृष्ट लग्न का फल

स्त्रीणां वश्यः सुभगो दाक्षिण्यमहोदधिः प्रचुरकोशः ।
चन्द्रेक्षिते विलग्ने मार्दवजलपण्यवान्भवति ॥ २ ॥

यदि जन्म के समय लग्न, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक—स्त्रियों के वश में, सौभाग्यवान्, चतुरता का समुद्र अर्थात् परम चतुर, अधिक धनवान्, सरल स्वभाव व जल का व्यापारी होता है ॥ २ ॥

---

[1] पृष्टम् । [2] प्रदूषणख्यातः ।

बृ० य० जा० में कहा है—'तनुगृहे यदि चन्द्रनिरीक्षिते विकलताञ्च करोति नरस्य हि। तदनुमार्गगते च जलं सदा सरलता सुकलाक्रयशोभितः' (१ अ० पृ० स० ९) ॥ २ ॥

भौम से दृष्ट लग्न का फल

साहससङ्ग्रामरुचिश्चण्डस्फुटबान्धवोऽतिधर्मरतः।
उदये कुजसन्दृष्टे भवति नरः स्थूलशेफश्च ॥ ३ ॥

यदि जन्म के समय लग्न, भौम से दृष्ट हो तो जातक—साहसी, युद्धप्रिय, उग्र, स्पष्ट बन्धुओं से युक्त, अधिक धर्मात्मा तथा वृहल्लिङ्गधारी होता है ॥ ३ ॥

बृ० यव० जा० में कहा है- –'आद्यमात्रमदने कुजेक्षिते पित्तकोपग्रहणीरुजः सदा। अङ्घ्रिनेत्रविकलं करं नरं जीवितोऽपि तनयादिनाशनम्' (१ अ० पृ० सं० ९) ॥ ३ ॥

बुध से दृष्ट लग्न का फल

बुधदृष्टे प्राग्लग्ने शिल्पकलाविद्यया समभिपूर्णः।
भवति नरो [1]विपुलमतिः कीर्तिकरो मानसंयुक्तः ॥ ४ ॥

यदि जन्म के समय लग्न, बुध से दृष्ट हो तो जातक—चित्रकारी की विद्या से परिपूर्णं, अधिक बुद्धिमान् वा चतुर बुद्धिमान्, कीर्तिमान् व सम्मान से युक्त होता है ॥ ४ ॥

बृ० यव० जा० में कहा है—तनुगृहे यदि चन्द्रसुतेक्षिते वणिजराजकुले पुरुषोन्नतिः। स्वजनसौख्ययुतः प्रसवः स्त्रियस्तदनु जीवचिरायुकरो भवेत्' (१ अ० पृ० सं० १०) ॥४॥

गुरू से दृष्ट लग्न का फल

इज्याव्रतनियमपरा नृपपूज्याः ख्यातकीर्तयो मनुजाः।
लग्ने सुरगुरुदृष्टे सज्जनगुर्वतिथिसंयुक्ताः ॥ ५ ॥

यदि जन्म के समय लग्न, गुरू से दृष्ट हो तो जातक—यज्ञ व व्रत के नियमों में तत्पर, राजा से पूजित, प्रसिद्ध कीर्तिमान्, सज्जन, गुरू व अतिथियों से युक्त होता है ॥ ५ ॥

बृ० यव० जा० में कहा है—'तनुगृहे यदि देवपुरोहिते गृहसुखं प्रचुरं खलु भाग्यवान्। सकलवित्तगृहे ग्रहसंबले व्ययकरश्च चिरायुयुतो भवेत् (१ अ० पृ० सं० १०) ॥ ५ ॥

शुक्र से दृष्ट लग्न का फल

वेश्यास्त्रीजनबहुलास्तरुणाः[2] सम्पन्नभोगधनसौख्याः।
शुक्रेक्षिते विलग्ने भवन्ति मनुजाः सुरूपाश्च ॥ ६ ॥

यदि जन्म के समय लग्न, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—युवा अवस्था से युक्त अधिक वेश्या स्त्री वाला, भोग-धन-सुख से समृद्ध व स्वरूपवान् होता है ॥ ६ ॥

बृ० य० जा० में कहा है—'सम्पूर्णंदृष्टिर्यदि जन्मलग्ने शुक्रो यदा स्यात्तनुरुत्तमा च। नानार्थसंभोगकलत्रसौख्यं सौन्दर्यरूपं खलु भाग्ययुक्तः' (१अ० पृ० सं० १०) ॥ ६ ॥

शनि से दृष्ट लग्न का फल

भाराध्वरोगतप्ताः क्रुद्धा वृद्धस्त्रिया युता विसुखाः।
मन्देक्षिते विलग्ने मलिना मूर्खाश्च जायन्ते ॥७॥

---

[1] निपुणमतिः। [2] सुभगाः।

यदि जन्म के समय लग्न, शनि से दृष्ट हो तो जातक—वजन से व मार्ग रोग (मिर्गी इत्यादि) से पीड़ित, क्रोधी, बूढ़ी स्त्री से युक्त या रहित, दूषित व मूर्ख होता है ॥ ७ ॥

बृ० य० जा० में कहा है—'तनुगृहे यदि मन्दनिरीक्षिते तनुसुखं न करोति नरः सदा । अनिलपीड़ितवातरुजो भवेन्न च गुणाधिक आलयकृद् भवेत्' (१ अ० पृ० सं० १०) ॥ ७ ॥

लग्नस्थ अपनी राशि को देखने का व पाप शुभग्रह दृष्ट लग्न फल

पश्यन्ग्रहः स्वलग्नं सर्वं विदधाति सौख्यमर्थं च ।
प्रायो नृपप्रियत्वं पापः पापं शुभं च शुभः ॥८॥

यदि जन्म के समय कोई भी ग्रह लग्नस्थ अपनी राशि को देखता हो तो जातक—समस्त सुख को प्राप्त करने वाला व धनी, प्रायः राजा का प्रिय पात्र होता है। यदि लग्न शुभग्रह से दृष्ट हो तो शुभफल, पापग्रह से दृष्ट हो तो अशुभफल प्राप्त होता है ॥८॥

किसी भी ग्रह से अदृष्ट लग्न का फल

एकेनापि न दृष्टं समस्तगुणवर्जितं लग्नम् ।
स्वगृहस्वभावसहितं जनयति खलु केवलं नित्यम् ॥९॥

यदि जन्म के समय लग्न, एक भी ग्रह से दृष्ट न हो तो जातक—समस्त गुणों से हीन तथा लग्नस्थ राशि तुल्य स्वभाव का नित्य होता है ॥ ९ ॥

दो आदि ग्रह से व एक शुभग्रह से दृष्ट लग्न का फल

द्व्यादिग्रहसन्दृष्टं प्रायेण [1]सुखार्थदं भवति लग्नम् ।
एकेनापि शुभेन च न तु पापैरिष्यते सद्भिः ॥१०॥

यदि जन्म के समय लग्न दो तीन चार आदि ग्रहों से दृष्ट हो तो जातक को प्रायकर सुख व धन को देने वाला होता है। यदि एक भी शुभग्रह से दृष्ट हो तो पूर्वोक्त फल होता है, पापग्रहों से दृष्ट लग्न शुभप्रद नहीं होता है ॥ १० ॥

समस्त ग्रहों से दृष्ट लग्न का फल

सर्वैर्गगनभ्रमणैर्दृष्टे लग्ने भवेन्महीपालः ।
बलिभिः समस्तसौख्यो विगतभयो दीर्घजीवी च ॥११॥

यदि जन्म के समय लग्न बलवान् समस्त ग्रहों से दृष्ट हो तो जातक—राजा, समस्त सुखों से युत, निर्भीक, तथा दीर्घायु होता है ॥ ११ ॥

बृ० य० जा० में कहा है—'विलोकिते सर्वखगैर्विलग्ने लीलाविलासैः सहितो बलीयान् । कुले नृपालो विपुलायुरेवाभयेन युक्तोऽरिकुलस्य हन्ता'(१अ० पृ० सं०११)॥११॥

लग्नस्थ तीन शुभ ग्रह व पाप ग्रहों का फल

लग्ने त्रयो विगतशोकविवर्द्धितानां
कुर्वन्ति जन्मशुभदाः पृथिवीपतीनाम् ।

---

[1] सुखावहं ।

पापास्तु रोगभयशोकपरिप्लुतानां
बह्वाशिनां सकललोकतिरस्कृतानाम् ।।१२।।

यदि जन्म के समय लग्न में तीन शुभग्रह हों तो जातक—शोक से रहित व वृद्धि (उन्नति) कर्त्ता, (सं० वि० वि० की मातृका में 'गदशोकविवर्जितानां' यह पाठान्तर होने से रोग व शोक से हीन) राजा होता है ।

यदि लग्न में तीन पापग्रह हों तो जातक—रोगी, डरपोक, शोक से युत, अधिक खाने वाला तथा समस्त संसार से तिरस्कृत (अपमानित) होता है ।। १२ ।।

वृ० य० जा० में कहा है—सौम्यास्त्रयो लग्नगता यदि स्युः कुर्वन्ति जातं नृपतिं विनीतम् । पापास्त्रयों दुःखदरिद्रशोकैर्युतं नितान्तं बहुभक्षकञ्च' (१ अ० पृ० सं० ११) ।। १२ ।।

लग्न से ६,७,८ में पापग्रहों से अदृष्ट व अयुक्त, शुभग्रहों का फल

लग्नात्षष्ठमदाष्टमे यदि शुभाः पापैर्न युक्तेक्षिताः
मन्त्री दण्डपतिः क्षितेरधिपतिः स्त्रीणां बहूनां पतिः ।
दीर्घायुर्गदवर्जितो गतभयो लग्नाधियोगे भवेत्
सच्छीलो यवनाधिराजकथितो जातः पुमान्सौख्यभाक् ।।१३।।

यदि जन्म के समय में लग्न से षष्ठ-सप्तम-अष्टम में पापग्रहों से अदृष्ट व अयुक्त, शुभग्रह हों तो जातक—सचिव, न्यायाधीश, राजा, अधिक स्त्रियों का स्वामी, दीर्घायु, निरोग, निर्भय, सुशील व सुखी इस लग्नाधियोग में होता है ऐसा यवन राजा का कथन है ।। १३ ।।

वृ० य० जा० में कहा है—लग्नाद् द्यूनषडष्टकेऽपि च शुभाः पापैर्न युक्तेक्षिताः, मन्त्री दण्डपतिः क्षितेरधिपतिः स्त्रीणां बहूनां पतिः । दीर्घायुर्गदवर्जितो गतभयः सौन्दर्यं सौख्यान्वितः, सच्छीलो यवनेश्वरैर्निगदितो मर्त्यः प्रसन्नः सदा' (१अ० पृ० सं० १२) ।।१३।।

लग्नस्थ ग्रह के फल में न्यूनाधिक कथन

स्वगृहोच्चसौम्यवर्गे ग्रहः फलं पुष्टमेव विदधाति ।
नीचर्क्षरिपुगृहस्थो विगतफलः कीर्तितो मुनिभिः ।।१४।।

यदि जन्म के समय लग्न में कोई भी ग्रह अपनी राशि में वा उच्च राशि में वा शुभग्रह के वर्ग में स्थित हो तो जातक को अधिक फल देता है । यदि लग्नस्थ ग्रह नीच राशि में वा शत्रु की राशि में हो तो जातक को शुभाशुभफल प्राप्त नहीं होता है । ऐसा ऋषियों का कथन है ।। १४ ।।

।। इति लग्नचिन्ता ।।

आगे के ६ पद्यों में धनभाव का विचार किया जाता है

धनभाव में सूर्य-शनि-भौम का फल

रविरविजभूमितनयाः कुटुम्बसंस्था विलोकनाद्वाऽपि ।
कुर्वन्ति धनविनाशं क्षीणेन्दुनिरीक्षिता विशेषेण ।।१५।।

यदि जन्म के समय धनभाव में सूर्य-शनि-भौम हों या इन तीनों में से एक या दो ग्रहों से, धनभाव दृष्ट हो तो जातक के धन का नाश ये तीनों ग्रह करते हैं एवं क्षीणचन्द्रमा से धनभाव दृष्ट हो तो विशेष करके धन का नाश होता है ॥ १५ ॥

बृ० यव० जा में कहा है—'भानुभूतनयभानुतनूजैश्चेद्धनस्य भवनं युतदृष्टम् । जायते हि मनुजो धनहीनः किं पुनः कृशशशीक्षितयुक्तम्' (२ अ० पृ० सं० २६) ॥ १५ ॥

रविभौमौ धनसंस्थौ त्वग्दोषदरिद्रताकरौ कथितौ ।
मन्दः कुरुते शुद्धो महार्थयुक्तं बुधेक्षितस्तत्र ॥१६॥

यदि जन्म के समय सूर्य व भौम धनभाव में स्थित हों तो जातक—चर्मरोगी व दरिद्री होता है। यदि धन भावस्थ शनि बुध से दृष्ट हो तो जातक महाधनी होता है॥१६॥

इसके कुछ विपरीत बृ० य० जा० में कहा है—'धनालयस्थो किल मङ्गलेन्दू इन्द्वीक्षितो मन्दविलोकितश्च । शनिर्धनस्थानगतःकरोति धनाभिवृद्धिं हि बुधेन दृष्टः' (२ अ० पृ० स० २६) ॥ १६ ॥

विशेष—सं० वि० वि० की मातृका में—'भौमेन्दूधनसंस्थौ' यह पाठान्तर यवन जातक के तुल्य प्राप्त होता है ॥ १६ ॥

रविरपि [1]विधनं जनयति यमेक्षितः शस्यतेऽन्यदृष्टश्च ।
सौम्याः कुटुम्बराशौ बहुप्रकारं धनं दद्युः ॥१७॥

यदि कुण्डली में धनभाव में सूर्य, शनि वा अन्य ग्रह से दृष्ट हो तो जातक—विधनं अर्थात् विशेष धनवान् होता है क्योंकि ग्रन्थान्तर में विशेष धनी का योग प्राप्त होता है, विशेषेण धनमिति विधनम् । धनभाव में शुभग्रह होने पर बहुत प्रकार से धन प्रदान करते हैं ॥ १७ ॥

बृ० यव० जा० में कहा है—'धने दिनेशेऽतिधनानि नूनं करोति मन्देन च वीक्षितो वा । शुभाभिधाना धनभावसंस्था नानाधनाभ्यागमनानि कुर्युः'
(२ अ० पृ० सं० २६) ॥ १७ ॥

धनभाव में गुरु-बुध का फल

बुधदृष्टस्त्रिदशगुरुः कुटुंबराशौ च निस्वतां कुरुते ।
सोमतनयोऽपि शशिना निरीक्षितो हन्ति सर्वधनम् ॥१८॥

यदि जन्म के समय में धनभाव में गुरू, बुध से दृष्ट हो तो जातक के समस्त धन का नाश होता है ॥ १८ ॥

इसके विपरीत बृ० यव० जातक में कहा है—'गीर्वाणवन्द्यो द्रविणोपयातः सौम्येक्षितः स्याद्द्रविणं करोति' (२ अ० पृ० सं० २६) ॥ १८ ॥

चन्द्रोऽपि धनस्थाने क्षीणोऽपि बुधेक्षितः सदा कुरुते ।
पूर्वार्जितार्थनाशं निरोधमपि चान्यवित्तस्य ॥१९॥

यदि जन्म के समय में धनभाव में क्षीण चन्द्रमा भी, बुध से दृष्ट हो तो पहिले प्राप्त किये हुए धन का नाश तथा अन्य धन की अप्राप्ति होती है अर्थात् भविष्य में धनागम नहीं होता है ॥ १९ ॥

---

[1] विविधं ।

वृ० यव० जा० में कहा—'धनस्थितो ज्ञेन विलोकितश्च कृशः शशाङ्कोऽपि धनादिकानाम् । पूर्वार्जितानां कुरुते विनाशं नवीनवित्तप्रतिबन्धनञ्च' (२ अ० पृ० सं २७)॥१९॥

धनभाव में शुक्र का फल

शुक्रः कुटुम्बभवने चन्द्रेण निरीक्षितः प्रधनदाता ।
सौम्यग्रहेण दृष्टो स एव धनदः सदा ज्ञेयः ॥२०॥

यदि जन्म के समय धनभाव में शुक्र, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक अधिक धनी यदि शुक्र, शुभ ग्रह से दृष्ट हो जातक को धन देने वाला होता है ॥ २० ॥

वृ० य० जा० में कहा है—'वित्तस्थितो दैत्यगुरुः करोति वित्तागमं सोमसुतेन दृष्टः । स एव सौम्यग्रहयुक्तदृष्टः प्रकृष्टवित्ताप्तिकरो नराणाम्' (३ अ० पृ० सं० २७) ॥ २० ॥

॥ इति धनचिन्ता ॥

आगे के ४ पद्यों में तृतीय भाव का विचार किया जाता है ।

तृतीय भाव में पापग्रह राशि व पापग्रहोंका फल

पापभवनं तृतीयं समस्तपापैर्युतं सहजहन्तृ[1] ।
विपरीतमितः श्रेष्ठं संख्यां तेषां प्रवक्ष्यामि ॥२१॥

यदि कुण्डली में तृतीय भाव में पाप ग्रहों की राशि व समस्त पापग्रह हों तो जातक के भाईयों विनाश होता है । इसके विपरीत अर्थात् शुभ ग्रह की राशि व शुभ ग्रह हों तो भाईयों का सुख उत्तम होता है । आगे के श्लोक में मैं भाईयों की संख्या को कहता हूँ ॥ २१ ॥

वृ० य० जा० में कहा है—'पापालयं चेत्सहजं समस्तैः पापैः समेतं प्रविलोकितञ्च । भवेदभावः सहजोपलब्धेस्तद् वैपरीत्येन तदाप्तिरेवम्' (३अ० पृ० सं० ३७) ॥२१॥

भ्रातृ सख्या का ज्ञान

यावन्तो नवभागा यदागताः सहजराशौ तु ।
तत्संख्यां कुर्वन्ति च दृष्टास्त्वन्यैस्तथा वहवः ॥२२॥

तृतीय भाव में जितनो संख्या का नवांश हो तो उतने ही भाईयों की प्राप्ति जातक को होती है तथा जितने ग्रहों से दृष्ट तृतोय भाव हो उतने अधिक भाई होते हैं ॥२२॥

वृ० यव० जा० में कहा है—'नवांशका ये सहजालयस्थाः कलानिधिक्षोणिसुतानुदृष्टाः । तावन्मिताः स्युः सहजा भगिन्यश्चान्येक्षिता वै परिकल्पनीयाः
(३ अ० पृ० सं०) ॥ २२ ॥

तृतीयभाव में शनि व शुक्र का फल

तत्र स्थितो रविसुतः कुजेन दृष्टो विनाशयति जातान् ।
शुक्रो गुरुसंदृष्टः पुष्णाति सदैव दायादान् ॥२३॥

यदि तृतीय भाव में शनि, भौम से दृष्ट हो तो जातक के उत्पन्न हुए भाईयों का विनाश होता है । यदि तृतोय भाव में शुक्र, गुरु से दृष्ट हो तो भाईयों को पुष्टि होतो है ॥२३॥

वृ० यव० जा० में कहा है—'कुजेन दृष्टे रविजे तनूजा नश्यन्ति जाताः सहजा हि तस्य' (३ अ० पृ० सं० ३८) ॥ २३ ॥

---

[1] सहजहन्ता ।

तृतीयभाव में बुध का फल

सौम्यो[1] भास्करदृष्टः सुहृदां परिसंक्षयं सदा कुरुते ।
भावाध्याये कथितं शेषं परिकल्पयेदत्र ॥२४॥

यदि तृतीय भाव में बुध, सूर्य वा भौम से दृष्ट हो तो जातक के मित्रों का नाश होता है। शेष अर्थात् अवशिष्ट फल भावाध्याय (३० अ०) में कथित है उसकी कल्पना यहाँ करनी चाहिये ॥ २४ ॥

विशेष—यह २४ वां श्लोक चतुर्थ भाव का प्रतीत होता है क्योंकि मित्रों का विचार प्रायः चतुर्थ भाव से होता है तथा इससे आगे पंचम भाव का फल वर्णित हैं।।२४।।

॥ इति सहजचिन्ता ॥

सन्तान प्राप्ति वा अप्राप्ति का ज्ञान

सुतभवनं[2] शुभयुक्तं शुभदृष्टं वा शुभर्क्षमिह येषाम् ।
तेषां प्रसवः पुंसां भवत्यवश्यं न विपरीते ॥२५॥

यदि कुण्डली में पंचम भाव में शुभ ग्रह हो वा शुभ ग्रह से दृष्ट हो वा शुभ ग्रह की राशि हो तो जातक को सन्तान प्राप्ति अवश्य होती है। इससे विपरीत दशा में प्राप्ति नहीं होती है, अर्थात् पंचम भाव में पाप ग्रह हों वा पापग्रह से दृष्ट वा पाप ग्रह की राशि हो तो सन्तान की अप्राप्ति होती है ॥ २५ ॥

बृ० यव० जातक में कहा है—'सुताभिधानं भवनं शुभानां योगेन दृष्ट्या सहितं विलोक्यम्। सन्तानयोगं प्रवदेन्मनीषी विपर्ययत्वेन विपर्ययञ्च'

(५ अ० पृ० सं० ६०) ॥ २५ ॥

पंचम भावस्थ शुभ राशि में गुरू के षड्वर्ग का फल

एकतमे गुरुवर्गे [3]शुभराशावौरसो भवेत्पुत्रः ।
लग्नाच्चन्द्रादथवा बलयोगाद्वीक्षितेऽपि वा सौम्यैः ॥२६॥

यदि कुण्डली में लग्न वा चन्द्रमा से पंचम भावस्थ शुभग्रह की राशि में एक ही गुरु वर्ग प्राप्त हो वा बली शुभ ग्रह हो वा बली शुभ ग्रह से दृष्ट पंचमस्थ शुभ राशि हो तो जातक को अपनी स्त्री में स्वयं के गर्भाधान से पुत्र होता है ॥ २६ ॥

सन्तान संख्या ज्ञान

संख्या नवांशतुल्या सौम्यांशे तावती सदा दृष्टा ।
शुभदृष्टे तद्द्विगुणा क्लिष्टा पापांशकेऽथवा दृष्टे ॥२७॥

यदि कुण्डली में पंचम भाव में शुभ ग्रह का नवांश हो तो जातक को नवांश संख्या तुल्य सन्तान की प्राप्ति होती है। यदि शुभ ग्रह से दृष्ट हो तो दुगुनी संख्या तुल्य सन्तानोत्पत्ति होती हैं। यदि पाप ग्रह के नवांश में पंचमस्थ राशि शुभ ग्रह से दृष्ट हो तो कठिनता से सन्तान होती हैं ॥ २७ ॥

---

१ अङ्गारक। २ सुतभवनमथ शुभयुत। ३ शुभराशौ सौरसो भवेत्पुरुषः, चौरसो भवेत्पुत्रः।

वृ० यवनजातक में कहा है—'नवांशसङ्ख्याप्यथवाङ्कसंङ्ख्या दृष्ट्या शुभानां द्विगुणा च संख्या। क्लिष्टा च पापग्रहदृष्टियोगान्मिश्रं च मिश्रग्रहदृष्टिरत्र'

(५ अ० पृ० सं० ६०) ॥ २७ ॥

क्षेत्रज पुत्र प्राप्ति योग ज्ञान

[1]सौरर्क्षे सौरगणो बुधदृष्टो [2]गुरुकुजार्कदृग्घीनः।
क्षेत्रजपुत्रं जनयति बोधोऽपि गणो रविजदृष्टः ॥२८॥

यदि कुण्डली में पञ्चमभाव में शनि की राशि हो या शनि का वर्ग हो तथा बुध से दृष्ट हो व गुरू-भौम-सूर्य से अदृष्ट हो तो क्षेत्रज पुत्र जातक को होता है। यदि बुध की राशि वा बुध का वर्ग शनि से दृष्ट हो तो जातक को क्षेत्रज (स्वस्त्री में अन्य से उत्पन्न) पुत्र होता है ॥ २८ ॥

वृ. य. जा. में इसके कुछ विपरीत कहा है—'शनेर्गणे सद्मनि पुत्रभावे बुधेक्षिते वै रविभूमिजाभ्याम्। पुत्रो भवेत्क्षेत्रभवोऽथ बौधे गणेऽपि गेहे रविजेन दृष्टे' (५ अ. पृ. सं० ६३) ॥ २८ ॥

यहाँ यह जिज्ञासा होती हैं कि क्षेत्रज पुत्र किसे कहते है। उत्तर—

यस्तल्पजः प्रमीतस्य क्लीबस्य व्याधितस्य वा।

स्वधर्मेण नियुक्तायां स पुत्रः क्षेत्रजः स्मृत ॥ (मनुस्मृ-९ अ० १६७ श्लो०) ॥ २८ ॥

विशेष—ग्रन्थ में गुरू-भौम-सूर्य से अदृष्ट होने पर योग का कथन है तथा यवन जातक में सूर्य व भौम की दृष्टि होने पर योग का वर्णन है।

दत्तक व क्रीत पुत्र प्राप्ति योग ज्ञान

मान्दं [3]सुतर्क्षमिन्दुर्निरीक्षिते यदि शनैश्चरेण युतम्।
दत्तकपुत्रोत्पत्तिः क्रीतश्च बुधस्य चैवं स्यात् ॥२९॥

यदि कुण्डली में पञ्चमभाव में शनि की राशि शनि से युत व चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक को दत्तक पुत्र की प्राप्ति होती है।

यदि बुध की राशि सुतभाव में बुध से युत व चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक को क्रीत (धन देकर ग्रहण करना) पुत्र की प्राप्ति होती है ॥ २९ ॥

वृ० य० जा० में कहा है—'मन्दस्य राशिः सुतभावसंस्थो मन्देन युक्तः शशिनेक्षितश्च। दत्तात्मजाप्तिः शशिवद्बुधेऽपि क्रीतः सुतस्तस्य नरस्य वाच्यः' (५ अ० पृ० सं० ६२ श्लो० १२) ॥ २९ ॥

विशेष—दत्तक व क्रीत पुत्र का लक्षण

दत्तक—माता पिता वा दद्यातां यमद्भिः पुत्रमापदि।
सदृशं प्रीतिसंयुक्तं स ज्ञेयो दत्त्रिमः सुतः (मनुस्मृ० ९ अ० १६८ श्लो०)

क्रीत—क्रीणीयाद्यस्त्वपत्यर्थं मातापित्रोर्यमन्तिकात् :
स क्रीतकः सुतस्तस्य सदृशोऽसदृशोऽपिवा (म० स्मृ० अ० १७४ श्लो) ।२९।

---

१ सौम्यर्क्षे। २ नगुरुभौम। ३ शुभर्क्षं।

कृत्रिम पुत्र प्राप्ति योग ज्ञान

सप्तमभागे कौजे सौरयुते पञ्चमे सदा भवने ।
कृत्रिमपुत्रं विन्द्याच्छेषग्रहदर्शनान्मुक्ते ॥३०॥

यदि कुण्डली में पञ्चमभाव में भौम का सप्तमांश शनि से युत तथा अन्य ग्रहों से अदृष्ट हो तो जातक को कृत्रिम पुत्र प्राप्ति होती है ॥ ३० ॥

विशेष--कृत्रिम पुत्र का लक्षण

सदृशं तु प्रकुर्याद्यं गुणदोषविचक्षणम् ।
पुत्रं पुत्रगुणैर्युक्तं स विज्ञेयश्च कृत्रिमः (म० स्मृ० ९ अ० १६९ श्लो) ॥३०॥

अधम पुत्र प्राप्ति योग ज्ञान

वर्गे पञ्चमराशौ सौरे सूर्येण वाऽत्र संयुक्ते ।
लोहितदृष्टे [1]वाच्यो जातस्य [2]सुतोधमप्रभवः ॥३१॥

यदि कुण्डली में पञ्चमभाव में शनि का वर्ग हो वा सूर्य सुतभाव में भौम से दृष्ट हो,तो जातक को अधम (नीच) पुत्र की प्राप्ति होती है ॥ ३१ ॥

गूढ पुत्र प्राप्ति योग ज्ञान

चन्द्रे भौमांशगते धीस्थे मन्दावलोकिते भवति ।
गूढोत्पन्नः पुत्रः [3]शेषग्रहदर्शनाभावे ॥३२॥

यदि कुण्डली में पञ्चमभाव में चन्द्रमा, भौम के नवांश में स्थित हो तथा शनि से दृष्ट व अन्य ग्रहों से अदृष्ट हो तो जातक को गूढ पुत्र की प्राप्ति होती है ॥ ३२ ॥

विशेष—गूढ पुत्र का लक्षण

उत्पद्यते गृहे यस्य न च ज्ञायेत कस्य सः ।
स गृहे गूढ उत्पन्नस्तस्य स्याद्यस्य तल्पजः ॥
(म० स्मृ० ९ अ० १७० श्लो०) ॥ ३२ ॥

अपविद्ध पुत्र प्राप्ति योग ज्ञान

तस्मिन्नेव च भौमे शनिवर्गस्थे निरीक्षिते रविणा ।
पुरुषस्य भवति पुत्रोऽपविद्ध इति करुणमुनिवचनात् ॥३३॥

यदि कुण्डली में पञ्चमभाव में शनि के वर्ग में भौम, सूर्य से दृष्ट हो तो जातक को करुण मुनि के वाक्य से अपविद्ध पुत्र की प्राप्ति होती है ॥ ३३ ॥

विशेष--अपविद्ध पुत्र का लक्षण

माता पितृभ्यामुत्सृष्टं तयोरन्यतरेण वा ।
यं पुत्रं परिगृह्णीयादपविद्धः स उच्यते ॥
(म० स्मृ० ९ अ० १७१ श्लो) ॥ ३३ ॥

---

१ वा स्याज्जातस्य । २ हि बीजजः पुत्रः, यतोऽधमः पुत्रः, सुतोधमापुत्रः सुतोधनप्रसवः, सुतोधमप्रसवः । ३ दर्शनायाते ।

पुनर्भू पुत्र योग ज्ञान

शनिवर्गस्थे चन्द्रे शनियुक्ते पञ्चमे सदा भवने।
शुक्ररविभ्यां दृष्टे पुत्रः पौनर्भवो भवति ॥३४॥

यदि कुण्डली में पञ्चमभाव में शनि के वर्ग में चन्द्रमा, शनि से युत हो व शुक्र सूर्य से दृष्ट हो तो जातक को पुनर्भू (जिस स्त्री की दूसरी शादी पति मरने पर उसमें) पुत्र की प्राप्ति होती है ॥३४॥

विशेष--पौनर्भव पुत्र का लक्षण

या पत्या वा परित्यक्ता विधवा वा स्वयेच्छया।
उत्पादयेत्पुनर्भूत्वा स पौनर्भव उच्यते ॥
(म० स्मृ० ९ अ० १७५ श्लो०) ॥ ३४ ॥

कानीन पुत्र योग ज्ञान

चन्द्रो यदार्कसक्तः कलत्रसंस्थस्तथैव पञ्चमे गेहे।
रविदृष्टोऽप्यथ सहितः कानीनः संभवेत्पुत्रः ॥३५॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा, सूर्य के साथ सप्तमभाव में हो वा पञ्चमभावस्थ चन्द्रमा, सूर्य से दृष्ट या युत हो तो जातक को कुमारी से उत्पन्न पुत्र की प्राप्ति होती है ॥३५॥

विशेष—निर्णय सागर से प्रकाशित पुस्तक में यह श्लो० इस प्रकार है 'चूडा यदार्कसत्वात्कलादृतस्यैव पञ्चमे गेहे। रविदृष्टेऽप्यथ सहिते कानीनः संभवति पुत्रः' अर्थ-यदि सूर्य से पञ्चमभाव में चन्द्रमा का ही चूडा अर्थात् द्वादशांश हो या पञ्चम भाव सूर्य से दृष्ट या युक्त हो तो कानीन (कुमारी कन्या में उत्पन्न) पुत्र होता है। यहाँ पर जो मूल में श्लोक दिया है वह होरारत्न में सारावली के नाम से उद्धृत है तथा अर्थ भी ठीक ठीक समझ में आता है। निर्णय सागर से प्रकाशिक पुस्तक में जो श्लोक है उसमें सूर्य से पञ्चम भाव की स्थिति वश योग का वर्णन है किन्तु सूर्य से पञ्चम भाव की स्थितिवश योग पूर्ण उचित नहीं प्रतीत होता है, क्योंकि कारक ग्रह तो गुरू है गुरू से पञ्चमभाव की स्थिति वश योग का विचार होना उचित प्रतोत होता है।

जातक परिजात में तो इस योग (कानीन) का वर्णन इस प्रकार है—'व्यये भास्करसंदृष्टे वर्गे भास्करचन्द्रयोः'। चन्द्रसूर्ययुते वापि कानीनोऽयं भवेन्नरः' (३ अ० ५१ श्लो०) ॥३५॥

विशेष--कानी० पुत्र का लक्षण

पितृवेश्मनि कन्या तु यं पुत्रं जनयेद्रहः।
तं कानीनं वदेन्नाम्ना वोढुः कन्यासमुद्भवः ॥
(म० स्मृ० ९ अ० १७२ श्लो०) ॥ ३५ ॥

सहोढ पुत्रप्राप्ति योग ज्ञान

वर्गे रविचन्द्रमसोः सुतगेहे चन्द्रसूर्यसंयुक्ते[1]।
शुक्रेण [2]दृष्टमात्रे पुत्रः कथितः सहोढश्च ॥ ३६ ॥

---

[1] चन्द्रसूर्ययोर्गेहे। [2] दृष्टि।

यदि कुण्डली में पञ्चम भाव में सूर्य-चन्द्रमा के वर्ग में सूर्य-चन्द्रमा, शुक्र से दृष्ट हों तो जातक को सहोढ़ पुत्र की प्राप्ति होती है ॥ ३६ ॥

विशेष—सहोढ़ पुत्र का लक्षण—या गर्भिणी संस्क्रियते ज्ञाताऽज्ञातापि वा सती। वोढुः सगर्भो भवति सहोढ इति चोच्यते ॥ (म० ९ अ० १७३ श्लोक) ॥ ३६ ॥

पुत्र अप्राप्ति योग ज्ञान

पापैर्बलिभिर्युक्ते पापर्क्षे पञ्चमे सदा राशौ।
जातोऽपुत्रः पुरुषः सौम्यग्रहदर्शनातीते ॥ ३७ ॥

यदि कुण्डली में पञ्चम भाव में पापग्रहों की राशि में बली पापग्रह हों तथा शुभ ग्रह से अदृष्ट हों तो जातक को पुत्र की प्राप्ति नहीं होती है ॥ ३७ ॥

बृ० य० जा० में कहा है—"सुताभिधाने भवने यदि स्यात्खलस्य राशिः खलखेट-युक्तः सौम्यग्रहैकेन न वीक्षितश्च सन्तानहीनो मनुजस्तदानीम्" (५ अ पृ० सं० ६१ श्लोक ८) ॥ ३७ ॥

दासी पुत्रप्राप्ति योग ज्ञान

शुक्रनवांशे तस्मिन्शुक्रेण[1] निरीक्षिते त्वपत्यानि।
दासीप्रभवानि वदेच्चन्द्रादपि केचिदाचार्याः ॥ ३८ ॥

यदि कुण्डली में पञ्चम भाव में शुक्र का नवांश हो तथा शुक्र से दृष्ट हो तो जातक को दासी (नौकरानी) में पुत्र की प्राप्ति होती है। किसी-किसी आचार्य के मत में पञ्चम में चन्द्रमा का नवांश चन्द्रमा से दृष्ट होने पर भी दासीपुत्र होता है।

बृ० य० जा० कहा है—"सुते सितांशे च सितेन दृष्टे बहून्यपत्यानि विधोरपीदम्। दासीभवान्यात्मजभावनाथे यावन्मितेंऽशे शिशुसम्मितिः स्यात्" (५ अ० पृ० सं० ६२ श्लोक १०) ॥ ३८ ॥

कन्या सन्तति योग ज्ञान

सितशशिवर्गे धीस्थे ताभ्यां दृष्टेऽथवाऽपि संयुक्ते।
प्रायेण कन्यकाः स्युः समराशिगणेऽपि चान्यथा पुत्राः ॥ ३९ ॥

यदि कुण्डली में पञ्चम भाव में शुक्र-चन्द्रमा का षड्वर्ग हो तथा शुक्र चन्द्र से दृष्ट या युत पञ्चम भाव हो तो जातक को कन्या सन्तति ही प्रायः होती है। या सम राशि का वर्ग पञ्चम में हो तथा शुक्र चन्द्रमा से दृष्ट युत होने पर भी प्रायः कन्या सन्तान होती है। इसके विपरीत अर्थात् विषम राशि का वर्ग पञ्चम में हो व शुक्र चन्द्रमा से अदृष्ट एवं अयुक्त हो तो पुत्रों की प्राप्ति होती है ॥ ३९ ॥

बृ० य०जा० में कहा है—"शुक्रेन्दुवर्गेण युते सुताख्ये युतेक्षिते वा भृगुचन्द्रमाभ्याम्। भवन्ति कन्याः समराशिवर्गे पुत्राश्च तस्मिन्विषमाभिधाने" (५ अ० पृष्ठ सं० ६२ श्लोक ११) ॥ ३९ ॥

---

[1] शुक्रे दृष्टे, शुक्रसुदृष्टे बहून्यपत्यानि।

सन्तानहीन योग ज्ञान

लग्नाद्दशमे चन्द्रे सप्तमसंस्थे भृगोः पुत्रे।
पापैः पातालस्थैर्वंशच्छेत्ता भवेज्जातः ॥ ४० ॥

यदि कुण्डली में लग्न से दशम भाव में चन्द्रमा, सप्तम में शुक्र एवं चतुर्थ भाव में पापग्रह हों तो जातक वंश को नष्ट करता है अर्थात् सन्तानरहित होता है ॥ ४० ॥

वृ० य० जा० में कहा है—"कविः कलत्रे दशमे मृगाङ्कः पातालयाताश्च खला भवन्ति। प्रसूतिकाले च यदि ग्रहास्तदा सन्तानहीनं जनयन्ति नूनम्" (५ अ० पृष्ठ सं० ६२ श्लोक ९) ॥ ४० ॥

प्रकारान्तर से—

भौमः पञ्चमभवने जातं जातं विनाशयति पुत्रम्।
दृष्टे गुरुणा प्रथमं सितेन न च सर्वसंदृष्टः ॥ ४१ ॥

यदि कुण्डली में पञ्चम भाव में भौम हो तो पुत्र उत्पन्न हो-होकर नष्ट हो जाते हैं। यदि पञ्चमस्थ भौम, गुरू या शुक्र से दृष्ट हो तो प्रथम सन्तान नष्ट होती है, समस्त ग्रहों से दृष्ट होने पर सन्तति नष्ट नहीं होती है ॥ ४१ ॥

वृ० य० जा० में कहा है—"भूनन्दनो नन्दनभावयातो जातञ्च जातं तनयं हि हन्ति। दृष्टो यथा चित्रशिखण्डिजेन भृगोः सुतेन प्रथमश्च जीवेत्" (५ अ० पृ० सं० ६३ श्लोक १६) ॥ ४१ ॥

विशेष—इससे प्रथम सन्तान जीवित रहना कहा है। मेरी दृष्टि में 'प्रथमन्न जीवेत्' यह पाठ होना चाहिए ॥ ४१ ॥

पञ्चमस्थ शुभ-पापग्रह फल

धनजनसुखहीनः पञ्चमस्थैश्च पापै-
र्भवति विकल एव क्ष्मासुते तत्र जातः।
दिवसकरसुते च व्याधिभिस्तप्तदेहः
सुरगुरुबुधशुक्रैः सौख्यसंपद्धनाढ्यः ॥ ४२ ॥

यदि कुण्डली में पञ्चम भाव में पापग्रह हों तो जातक—धन-मनुष्य-सुख से रहित, केवल भौम हो तो अशान्त, शनि हो तो रोगों पीडित देहधारी, यदि गुरु-बुध-शुक्र हों तो सुख-पुत्र-धन से युक्त होता है ॥ ४२ ॥

॥ इति पुत्रचिन्ता ॥

आगे दो श्लोकों में षष्ठभाव का विचार वर्णित है—

रिपुभावे क्षितिसूनुर्मन्देन निरीक्षितो दिशति शत्रून्।
शुभयुक्तः शुभदृष्टः शत्रुभयं चैव नात्यन्तम् ॥ ४३ ॥
क्षेत्रे[1] ग्रहेन्द्रतुल्यां संख्यां तेषां विनिर्दिशेत्प्राज्ञः।
भावाध्यायेऽभिहितं विस्तस्तश्चिन्तयेच्छेषम् ॥ ४४ ॥

---

[1] क्षेत्रगृहेश।

यदि कुण्डली में षष्ठ भाव में भौम, शनि से दृष्ट हो तो जातक को शत्रु होते हैं। यदि षष्ठभाव में शुभग्रह हों वा शुभग्रह से दृष्ट हो तो अधिक शत्रु का भय नहीं होता है। शत्रुभाव में जितने ग्रह हों उतने ही शत्रु होते हैं मैंने विस्तार से भावाध्याय में इस शत्रुभाव का वर्णन किया है। अवशिष्ट का ज्ञान वहीं से करना चाहिए ॥ ४३–४४॥

॥ इति शत्रुचिन्ता ॥

स्त्री लाभ योगज्ञात

शुक्रेन्दुजीवशशिजैः सकलैस्त्रिभिश्च
द्वाभ्यां कलत्रभवने च तथैककेन।
एषां गृहेऽपि च [1]गणेऽपि विलोकिते वा
सन्ति स्त्रियो भवनवर्गखगस्वभावाः ॥ ४५ ॥

यदि कुण्डली में सप्तमभाव में शुक्र-चन्द्र-गुरु-बुध ये समस्त ग्रह हों वा इनमें से तीन या दो वा एक भी ग्रह हो वा सप्तमभाव में शुक्रादि ग्रह की राशि व वर्ग, शुक्रादि ग्रह से दृष्ट हो तो जातक को सप्तमभावस्थ राशि-वर्ग-ग्रह के स्वभाव के समान स्त्री की प्राप्ति होती है ॥ ४५ ॥

बृ० य० जा० में कहा है—'शुक्रेन्दुजीवशशिजैः सकलैस्त्रिभिश्च द्वाभ्यां युतं मदगृहं तु तथैककेन। आलोकितं विषमभैरिदमेव नूनं यद्यङ्गना भवति नुश्च खलस्वभावाः' (७अ० पृ० सं० ८६ श्लो० ८) ॥ ४५ ॥

स्त्री नाश व पुनर्भूस्त्री प्राप्ति योग ज्ञान

एवं क्रूरैर्नाशो लग्नाच्चन्द्राद्भवेच्च बलयोगात्।
शशिरविजयोः कलत्रे भार्या पुंसां पुनर्भूः स्यात् ॥ ४६ ॥

यदि कुण्डली में लग्न व चन्द्रमा इन दोनों में जो बली हो उससे सप्तम भाव में पापग्रह हों तो जातक की स्त्री का नाश होता है। यदि सप्तम भाव में चन्द्रमा व शनि हो तो जातक को पुनर्भू (पति मरने के बाद द्वितीय विवाह अर्थात् विधवा) स्त्री की प्राप्ति होती है ॥ ४६ ॥

बृ० य० जा० में कहा है—'चन्द्राद्विलग्नाच्च खलाः कलत्रे हन्युः कलत्रं बलयोगतस्ते। चन्द्रार्कपुत्रौ च कलत्रसंस्थौ युतश्च तौ स्त्रीपरिलब्धिदौ स्तः' (७अ० ८७ पृ० सं० श्लो०) ॥ ४६ ॥

स्त्री संख्या योग ज्ञान

भवनाधिपांशतुल्या भवन्ति नार्यो निरीक्षणाद्वाऽपि।
एकैव रविकुजांशे गुरुबुधयोश्चापि जामित्रे ॥ ४७ ॥

कुण्डली में सप्तमेश जितनी संख्या के नवांश में हो अथवा सप्तमेश जितने ग्रहों से दृष्ट हो उतनी संख्या तुल्य जातक को स्त्रियाँ होती हैं। यदि सप्तम भाव में सूर्य-मङ्गल-का नवांश हो या गुरु बुध का योग हो तो जातक को एक ही स्त्री प्राप्त होती है ॥४७ ॥

---

[1] गणेऽथ।

बृ० य० जा० में कहा है—'कलत्रभावेशनवांशतुल्या नार्यो ग्रहालोकनतो भवन्ति। एकैव भौमार्कनवांशके च जामित्रभावे च बुधार्कयोर्वा' (७अ० ८७पृ० सं० १० श्लो०) ॥ ४७ ॥

प्रकारान्तर से स्त्री संख्या का ज्ञान

प्रायेण चन्द्रसितयोर्वर्गे[1] युक्तेऽथवापि जामित्रे।
दृष्टे वा वहुपत्न्यो भवन्ति शुक्रे विशेषेण ॥ ४८ ॥

यदि कुण्डली में सप्तम भाव में चन्द्रमा व शुक्र का वर्गाधिक्य हो वा चन्द्रमा शुक्र सप्तम में हों वा सप्तम भाव चन्द्रमा शुक्र से दृष्ट हो तो जातक को प्रायः अधिक स्त्री होती हैं। यदि शुक्र का वर्ग, योग, दृष्टि सप्तम भाव में हो तो विशेष करके अधिक स्त्री होती हैं ॥४८॥

बृ० य० जातक में कहा है—'शुक्रस्य वर्गेण युते कलत्रे बह्वङ्गनाप्तिर्भृगुवीक्षणेन' (७अ० ८७ पृ ११ श्लो०) ॥ ४८ ॥

स्त्रीवर्ण योग ज्ञान

गुरुशुक्रयोः [2]स्ववर्णा रविकुजशशिभानुजैर्भवन्त्यूनाः।
शुक्रे वेश्याप्रायश्चन्द्रेऽपि वदन्ति केतुमालाख्याः ॥ ४९ ॥

यदि कुण्डली में सप्तम भाव में गुरु शुक्र हों तो अपने वर्ण (सजातीय) की, सूर्य भौम-चन्द्रमा-शनि हों तो अपने वर्ण से हीन वर्ण की, शुक्र वा चन्द्रमा सप्तम भवन में हो तो प्रायः वेश्या स्त्री की प्राप्ति जातक को होती है यह केतुमाल आचार्य का मत है॥४९॥

स्त्री विनाश योग ज्ञान

भौमे कलत्रसंस्थे नित्यं[3] वियुतो [4]भवेत् स्त्रिया पुरुषः।
म्रियते[5] वा शनिदृष्टे योषिदवश्यं न दृष्टेऽन्यैः ॥ ५० ॥

यदि कुण्डली में सप्तम भाव में भौम हो तो जातक स्त्री रहित होता है। यदि सप्तमस्थ भौम, शनि से दृष्ट व अन्य ग्रहों से अदृष्ट हो तो विवाह के वाद अवश्य स्त्री का मरण होता है ॥ ५० ॥

बृ० य० जा० में कहा है—'महीसुते सप्तमगेहयाते कान्तावियुक्तः पुरुषस्तदा स्यात्। मन्देन दृष्टे म्रियतेऽपि लब्ध्वा शुभग्रहालोकनवर्जितेऽस्मिन्'

(७ अ० ८७ पृ० १२ श्लोक) ॥ ५० ॥

विकलदार योग ज्ञान

द्यूने कुजभार्गवयोर्जातः पुरुषो भवेद्विकलदारः।
धीधर्मस्थितयोर्वा परिकल्प्यं पण्डितैरेवम् ॥ ५१ ॥

यदि कुण्डली में सप्तम भाव में भौम-शुक्र हों वा पंचम नवम में भौम-शुक्र हों तो जातक को विकल (चिन्तित वा रोगिणी) स्त्री की प्राप्ति होती है ॥ ५१ ॥

---

१ वर्गंयुतेभे, बलयुक्ते वा। २ सवर्णा। ३ नित्यवियुक्तो। ४ तदा। ५ मारयति मन्ददृष्टे।

कानी स्त्री प्राप्ति योग ज्ञान

[1]लग्नाद्व्ययरिपुगतयोः [2]शशाङ्कभान्वोर्वदन्ति पुरुषस्य ।
प्रभवं समस्तमुनयः क्रमेण पत्न्या सहैकननयस्य ॥ ५२ ॥

यदि कुण्डली में लग्न से द्वादश या षष्ठ भाव में सूर्य चन्द्रमा हों तो जातक व उसकी स्त्री दोनों एक आँख के होते हैं ॥ ५२ ॥

इसके विपरीत यवन जातक में कहा है—'लग्नाद्व्यये वा रिपुमन्दिरे वा दिवाकरेन्दू भवतस्तदानीम् । शुभेक्षितौ तौ हि कलत्रगेहे भार्यां तदैकां प्रवदेन्नरस्य' (७ अ० ८५ पृ०) ॥ ५२ ॥

वन्ध्यापति योग ज्ञान

लग्नस्थे रवितनये गण्डान्ते भार्गवे कलत्रगते ।
वन्ध्यापतिस्तदा स्याद्यदि न सुतर्क्षं शुभैर्युक्तम् ॥ ५३ ॥

यदि कुण्डली में लग्न में शनि व गण्डान्तस्थ (राश्यन्तस्थ) शुक्र सप्तम भाव में एवं पंचम भाव शुभ ग्रहों से अयुक्त हो तो जातक वन्ध्या स्त्री का पति होता है ॥५३॥

इसके कुछ विपरीत यवन जातक में कहा है—'गण्डान्तकालेऽपि कलत्रभावे भृगोः सुते लग्नगतेऽर्कजाते । वन्ध्यापतिः स्यान्मनुजस्तदानीं शुभेक्षितं नो भवनं खलेन' (७ अ० ८६ पृ० ४ श्लोक) ॥ ५३ ॥

स्त्री पुत्रहीन योग ज्ञान

[3]लग्नव्ययमदनस्थैः पापैः क्षीणे निशाकरे धीस्थे ।
स्त्रीहीनो भवति नरः पुत्रैश्च विवर्जितो नूनम् ॥ ५४ ॥

यदि कुण्डली में लग्न-द्वादश-सप्तम भाव में पाप ग्रह हों तथा क्षीण चन्द्रमा पंचम भाव में हो तो जातक—स्त्री पुत्र से अवश्य हीन होता है ॥ ५४ ॥

वृ० य० जा० में कहा है—'व्ययालये वा मदनालये वा खलेषु वृद्धचालयगे हिमांशौ । कलत्रहीनो मनुजस्तनूजैर्विवर्जितः स्यादिति वेदितव्यम्' (७ अ० ८६ पृ० ५ श्लोक) ॥ ५४ ॥

स्त्री के साथ व्यभिचार योग ज्ञान

यमभूमिजयोर्वर्गे द्यूनस्थे तदवलोकिते शुक्रे ।
जातो भवत्यवश्यं पत्न्या सह पुंश्चलः पुरुषः ॥ ५५ ॥

यदि कुण्डली में सप्तमभाव में शनि भौम का वर्ग हो तथा सप्तमभाव शुक्र से दृष्ट हो तो जातक अवश्य स्वयं व्यभिचारी व उसकी स्त्री व्यभिचारिणी होती है ॥५५॥

वृ० य० जा० में कहा है—'प्रसूतिकाले च कलत्रभावे यमस्य भूमीतनस्य वर्गे । ताभ्यां प्रदृष्टे व्यभिचारिणी स्याद भर्त्ताऽपि तस्या व्यभिचारकर्त्ता' (७ अ० ८६ पृ० ६ श्लो०) ॥५५॥

---

[1] लग्नव्ययषष्ठगयोः । [2] शनिभार्गवयोः, शशिभास्करयोर्वदन्ति । [3] व्ययदशमस्थैः ।

विशेष—वृहद् यवनजातक में शुक्र की दृष्टि न कहकर शनि भौम की ही दृष्टि का वर्णन है ॥५५॥

पुत्र-स्त्रीहीन व अधिक अवस्था में स्त्रीलाभ योग ज्ञान

बुधभार्गवयोरस्ते स्त्रीहीनो जायते ह्यपुत्रश्च ।
दृष्टे शुभैश्च वाच्याः परिणतवयसः सदा प्रमदाः ॥ ५६ ॥

यदि कुण्डली में सप्तम भाव में बुध-शुक्र हों तो जातक स्त्री व पुत्र से हीन होता है । यदि सप्तमस्थ बुध-शुक्र शुभ ग्रह से दृष्ट हों तो अधिक अवस्था में स्त्री का लाभ होता है ॥ ५६ ॥

वृ० य० जा० में कहा है—"शुक्रेन्दु पुत्रौ च कलत्रसंस्थौ कलत्रहीनं कुरुते मनुष्यम् । शुभेक्षितौ तौ वयसो विरामे कामं च रामां लभते मनुष्यः" (७ अ० ८६ पृष्ठ ७ श्लोक) ॥ ५६ ॥

विशेष—'दृष्टे शुभैश्च' यहाँ यह आशंका होती है कि शुभग्रह तो वास्तव में तीन ही हैं । किन्तु चन्द्रमा की भी गणना कभी-कभी शुभ ग्रहों में होती है अतः दो अवशिष्ट शुभग्रह हुए । बहुवचन का कोई तात्पर्य नहीं है । मेरी दृष्टि में 'दृष्टे शुभेन' यह पाठ उचित प्रतीत होता है ॥ ५६ ॥

अधिक धनाढ्य योग ज्ञान

भार्गववाक्पतिसौम्यैः प्रमदाभवने शशाङ्कयुक्तैश्च ।
एकैकेन हि तेषां पुरुषस्य विभूतयो [1]बहुलाः ॥ ५७ ॥

यदि कुण्डली में सप्तम भाव में शुक्र-गुरू-बुध ये सब या एक-एक चन्द्रमा से युक्त हों तो जातक अधिक ऐश्वर्य से युक्त होता है ॥ ५७ ॥

॥ इति कलत्रचिन्ता ॥

लाभ भाव सूर्य से दृष्ट वा युत होने पर फल

रविदृष्टे युक्ते वाऽप्यायक्षेत्रे भवेत्सदा नृपतेः ।
भवति धनं युद्धाद्यैश्चोरवन[2]चतुष्पदाद्यैश्च ॥५८॥

यदि कुंडली में एकादश भाव में सूर्य हो वा सूर्य से दृष्ट हो तो जातक राजा से, युद्ध से, चोर से, वन से, चार पैर वालों से धन प्राप्त करता है ॥ ५८ ॥

वृ० य० जा० में कहा है—"सूर्येणयुक्तोऽथ विलोकितो वा लाभालयस्तस्य गणोऽत्र चेत्स्यात् । भूपालतश्चौरकुलादथो वा चतुष्पदाद्वा बहुधा धनाप्तिः" (११ अ० १३५ पृष्ठ १ श्लोक) ॥ ५८ ॥

चन्द्रमा से दृष्टयुक्त एकादश भाव का फल

स्त्रीजनहस्तिप्रायं[3] शशाङ्कवर्गे [4]शशीक्षिते युक्ते ।
क्षीणे क्षयोऽथ पूर्णे वृद्धिः स्यादायगे वृत्तेः ॥५९॥

---

१ विपुलाः । २ धन । ३ जल । ४ थ युते ।

यदि कुंडली में एकादश भाव में चन्द्रमा का वर्ग, चन्द्रमा से दृष्ट वा युत हो तो जातक स्त्री जन से वा स्त्री से, जल से, हाथी से प्रायः धनलाभ करता है। किन्तु क्षीण चन्द्रमा होने पर नाश एवं पूर्ण चन्द्रमा हो तो आजीविका की वृद्धि अर्थात् धनवृद्धि होती है ॥ ५९ ॥

वृ० य० जा० में कहा है—"चन्द्रेण युक्तः प्रविलोकितो वा लाभालयश्चन्द्रगणाश्रितश्चेत् । जलाशयस्त्रीगजवाजिवृद्धिः पूर्णे भवेत् क्षीणतरे विनाशः" (११ अ० १३५ पृष्ठ २ श्लोक ॥ ५९ ॥

भौम से दृष्टयुत एकादश भाव का फल

हेमप्रवालभूषणमाणिक्यधनं कुजे भवेदेवम् ।
साहसगमनागमनैः पावकशस्त्रैश्च वक्तव्यम् ॥६०॥

यदि कुंडली में एकादश भाव भौम से दृष्ट या युत हो तो जातक सुवर्ण-मूँगा-अलङ्कार-माणिक्य-मणि के व्यापार से, साहस-यातायात से, अग्नि व शस्त्र से धन प्राप्त करता है ॥ ६० ॥

बृ० य० जा० में कहा है—"लाभालये मङ्गलयुक्तदृष्टे प्रभूतभूषामणिहेमवृद्धिः । विचित्रयात्रा बहुसाहसैः स्यान्नानाकलाकौशलवृद्धियोगैः" (११ अ० १३५ पृष्ठ ३ श्लोक) ॥ ६० ॥

बुध से दृष्टयुत व आयस्थ बुध वर्ग का फल

आये बुधेऽपि वर्गे दृष्टे युक्तेऽथवा भवेद्वि[1]त्तम् ।
शिल्पादिलेख्यकाव्यैर्युक्तिप्रायं तथा सुतराम् ॥६१॥

यदि कुण्डली में एकादश भाव में बुध का वर्ग बुध से दृष्ट वा युत हो तो जातक शिल्पादि (चित्रकारी) से, लेख से, काव्यादि रचना से धन लाभ करता है तथा निरन्तर युक्तिप्राय होता है ॥ ६१ ॥

गुरू के वर्ग में गुरू से दृष्ट वा युत एकादश भाव का फल

नगरजन[2]योगभोगैः क्रतुभिश्च तथा विशिष्टपुण्यैश्च ।
हेमप्रायं वित्तं जीवेऽपि तुरङ्गमाकीर्णम् ॥६२॥

यदि कुण्डली में एकादश भाव में गुरू का वर्ग गुरू से दृष्ट वा युत हो तो जातक—शहर के मनुष्यों से, वाहन से, यज्ञ से, विशेष पुण्यों से, सुवर्ण प्राय धन होता है व घोड़ा अधिक होते हैं ॥६२॥

वृ० य० जा० में कहा है—'यज्ञक्रियासाधुजनानुयातो राजाश्रितोत्कृष्टकृशो नरः स्यात् । द्रव्येण हेमप्रचुरेण युक्ता लाभे गुरोर्वर्गयुतेक्षणं चेत्' (११ अ० १३५ पृ० ४ श्लो०) ॥६२॥

---

[1] नित्यम् । [2] यानयोगैः ।

शुक्र के वर्ग में शनि से दृष्ट वा युत एकादश भाव का फल

वेश्यास्त्रीसंयोगैर्गमनागमनैर्धनं भवति पुंसाम् ।
आये [1]सितेऽपि चैवं मुक्तारजतादि भूयिष्ठम् ।।६३।।

यदि कुण्डली में एकादशभाव में शुक्र का वर्ग शनि से दृष्ट वा युत हो तो जातक—वेश्या स्त्री के सहयोग से यातायात से धन लाभ करने वाला होता है, तथा उस धन में मोती व चाँदी अधिक होता है ।। ६३ ।।

बृ० य० जा० में कहा है -'लाभालये भार्गववर्गजाते युक्तेक्षिते वा यदि भार्गवेण । वेश्याजनैर्वापि गमागमैर्वा सद्रौप्यमुक्ताप्रचुरस्वलब्धिः (११अं० १३६पृ० ५श्लो०) ।।६३।।

शनि के वर्ग में शनि से दृष्ट वा युत एकादशभाव का फल

नगरपुरवृन्दयोगैः स्थावरकर्मक्रियाभिरपि वित्तम् ।
लोहखरवृन्दबहुलं[2] रविजेऽपि तथाऽस्य वर्गे च ।।६४।।

यदि कुण्डली में एकादशभाव में शनि का वर्ग, शनि से दृष्ट या युत हो तो जातक—शहर व ग्राम के जन समुदाय के सहयोग से तथा स्थिर कार्यों से भी धन लाभ करता है तथा उस धन में लोहा गधा व भैंसा अधिक होते हैं ।। ६४ ।।

बृ० य० जा० में कहा है—'लाभवेश्मशनिवीक्षितयुक्तः तद्गणेन सहितं यदि पुंसाम् । नीलगोमहिषहस्तिहयाढ्यो ग्रामवृन्दपुरगौरवमिश्रः' (११अ० १३६पृ० ६ श्लो०) ।।६४।।

एकादश में शुभ-पाप मिश्रग्रह योग का फल

एवं फलनिर्देशः सौम्यैर्दृष्टे विशेषतो वाच्यः ।
क्रूरैश्च समुपघातो मिश्रैर्मिश्रस्तदा पुंसाम् ।।६५।।

इस प्रकार पूर्वोक्त योगों में शुभग्रह की दृष्टि से विशेष शुभफल एवं पापग्रह की दृष्टि से कुछ अल्प व शुभ पाप मिश्रित योग से मिश्र अर्थात् मध्यफल होता है ।। ६५ ।।

एकादश भाव समस्त ग्रहों से दृष्ट युत होने का फल

सर्वग्रहयुतदृष्टे बहुप्रकारेण निर्दिशेद्वित्तम् ।
बलवान्यस्तत्र भवेदतिरिक्तं सम्प्रयच्छति च ।।६६।।

यदि कुण्डली में एकादशभाव समस्त ग्रहों से दृष्ट या युत हो तो जातक—बहुत प्रकार से धन प्राप्त करता है । समस्त ग्रहों में जो ग्रह बली हो वह अधिक रूप से धन दाता होता है ।। ६६ ।।

मित्र-स्वगृहादिस्थ ग्रहों का फल

मित्रस्वगृहगतोर्धं स्वोच्चे पूर्णं तथास्तगः किञ्चित् ।
शत्रुगृहस्थश्चरणं ददाति विहगस्तदाये[3] तु ।।६७।।
आजन्मतो नराणां भवति धनं निश्चितं यवनवृद्धैः ।
क्षितिपतिमाण्डलिकानामपरिमितं प्राह लोकाक्षः ।।६८।।

।। इत्यायचिन्ता ।।

---

१ सुते । २ महिषबहुलं । ३ सदा च भवे, सदाये तु ।

एकादश भाव में स्थित ग्रह मित्र के वा अपने घर में हो तो आधा, उच्च में स्थित ग्रह पूर्ण, अस्तग्रह अल्प व शत्रु राशिस्थ ग्रह लाभ में चतुर्थांश फल देता है ॥६७॥

पूर्वोक्त योगों के आधार पर जन्म से मनुष्यों को निश्चित धन की प्राप्ति होती है ऐसा यवनाचार्यों का कथन है। राजा व मण्डलेश्वरों को असीमित धन का लाभ होता है ऐसा लोकाक्षनामक आचार्य का कथन है ॥ ६८ ॥

व्यय में सूर्य-चन्द्रमा-भौम का फल

भानौ क्षीणे चेन्दौ व्ययभवने भूपतिर्हरति वित्तम्।
भौमे बुधसंदृष्टे बहुप्रकारो भवेन्नाशः ॥६९॥

यदि कुण्डली में सूर्य व क्षीण चन्द्रमा बारहवें भाव में हो तो जातक का धन राजा हरण करता है। यदि बुध से दृष्ट भौम बारहवें भाव में हो तो अधिक प्रकार से जातक के धन का नाश होता है ॥ ६९ ॥

वृ० य० जा० में कहा है—'व्ययालये क्षीणबलः कलावान्सूर्योऽथवा द्वावपि तत्र संस्थौ। द्रव्यं हरेद्भूमिपतिस्तु तस्य व्ययालये वा कुजदृष्टयुक्ते' (१२अ० १४६ पृ० १श्लो) ॥ ६९ ॥

द्वादशस्थ गुरू-चन्द्र-शुक्र का फल

गुरुचन्द्रदानवेज्या व्ययभवने वित्तपोषणं कुर्युः।
भूमितनयेन दृष्टा भावाध्यायोक्तमन्यच्च ॥७०॥

॥ इति व्ययचिन्ता ॥

यदि कुण्डली में बारहवें भाव में गुरू-चन्द्रमा-शुक्र, भौम से दृष्ट हों तो जातक के धन को पुष्ट (वृद्धि) करते हैं ॥७०॥

वृ० य० जा० में कहा है—पूर्णेन्दुसौम्येज्यसिता व्ययस्थाः कुर्वन्ति संस्थां धन-सञ्चयस्य' (१२ अ० १४६ पृ० २ श्लो०) ॥७०॥

विशेष फल का कथन

लग्ने बुधदृक्काणे[1] शशि (नि?) ना दृष्टे चतुष्टयस्थाने।
जातो नृपतिकुलेष्वपि शिल्पी स्यान्निश्चितं मुनिभिः ॥७१॥

यदि कुण्डली में लग्न में बुध का द्रेष्काण केन्द्रस्थ चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक—राजवंश में भी उत्पन्न होकर चित्रकारी का कार्य करता है। ऐसा मुनियों ने निश्चय किया है ॥७१॥

वृ० य० जा० में कहा है—'बुधत्रिभागेन युते विलग्ने केन्द्रस्थचन्द्रेण निरीक्षिते च। राजान्वये यद्यपि जातजन्मा स्यान्नीचकर्मा मनुजः प्रकामम्' (१ अ० १४ पृ० १२ श्लो०) ॥७१॥

प्रकारान्तर से

नीचे सौरनवांशे शुक्रेऽन्त्ये रविशशाङ्कयोर्मदने।
मन्देन विलोकितयोर्माता दासी महाकुलेऽपि स्यात् ॥७२॥

---

[1] द्रेक्का।

यदि कुण्डली में बारहवें भाव में नीच राशिस्थ शुक्र, शनि के नवांश में स्थित हो तथा सप्तमभाव में सूर्य चन्द्रमा शनि से दृष्ट हों तो उच्च कुल में उत्पन्न होकर भी जातक की माता दासी (नौकरानी) होती है ॥७२॥

पुनः प्रकारान्तर से

सूर्याद्द्वितीयराशौ भास्करतनये खमध्यगे चन्द्रे ।
भौमे सप्तमभवने विकलोऽस्मिन्सर्वदा जातः ॥७३॥

यदि कुण्डली में सूर्य से द्वितीय राशि में शनि व दशमभाव में चन्द्रमा और सप्तम में भौम हो तो जातक सर्वदा अशान्त होता है ॥७३॥

वृ० य० जा० में कहा है—'भानोर्द्वितीये भवने शनिश्च निशीथनाथो गगनाश्रितश्च। भूनन्दने चैव मदे तदानीं स्यान्मानवो हीनकलेवरश्च' (१ अ० १४१-१३ श्लो०) ॥७३॥

अन्य प्रकार से

मध्ये पापग्रहयोश्चन्द्रे मदनस्थितेऽर्कजे जन्तोः ।
श्वासक्षयविद्रधिना [1]गुल्मप्लीहातिपीडित[2]स्य भवः ॥७४॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा दो पाप ग्रहों के बीच में हो तथा सप्तमभाव में शनि हो तो जातक—श्वास-क्षय-उदर आदि मुलायम स्थान में फोड़ा-गांठ-जिगर रोगों से अधिक पीड़ित होता है ॥ ७४ ॥

वृ० य० जा० में कहा है—'पापान्तराले च भवेत्कलावान्किलार्कसूनुर्मदनालयस्थः। कलेवरं स्याद्विकलं च तस्य श्वासक्षयप्लीहकगुल्मरोगैः' (१ अ० १४ पृ० १४ श्लो०) ॥७४॥

पुनः अन्य प्रकार से विशेष फल

सूर्यांशे यदि चन्द्रश्चन्द्रांशे भास्करो [3]यदा श्लेष्मी ।
[4]सममेकराशिगतयोर्दुर्बलदेहः सदा पुरुषः ॥७५॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा, सूर्य के नवांश में हो और सूर्य, चन्द्रमा के नवांश में स्थित हो तो जातक—कफ रोगी वा सूखा रोग से पीडित होता है। यदि सूर्य चन्द्रमा दोनों एक ही राशि में स्थित हों तो जातक—कृशकाय होता है ॥७५॥

वृ० य० जा० में कहा है—'शशी दिनेशस्य यदा नवांशे भवेद्दिनेशः शशिनो नवांशे। एकत्र संस्थौ यदि तौ भवेतां लक्ष्मीविहीनो मनुजः स नूनम्' (१ अ० १४ पृ० १५ श्लो०) ॥७५॥

नेत्र विनाश योग ज्ञान

निधनधनारिव्ययगा रविचन्द्रकुजार्कजा [5]नियतम् ।
नयनविघातं कुर्युर्बलवद्ग्रहदोषसंभूतम् ॥७६॥

यदि कुण्डली में अष्टम, द्वितीय, षष्ठ, द्वादश भाव में सूर्य-चन्द्रमा-भौम-शनि हों तो जातक की इनमें से बलवान् ग्रह के दोष से आँख नष्ट होती है ॥७६॥

---

[1] प्लीहादि । [2] स्सु भगः । [3] यदि शोषी । [4] एकतर । [5] यथायोगं ।

बृ० य० जा० में कहा है—'व्ययेऽरिभावे निधने धने च निशाकरारार्कशनैश्चराः स्युः। बलान्वितास्ते त्वनिलाधिकत्वात्तेजो विहीने नयने प्रकुर्युः' (१ अ० १४ पृ० १६ श्लो०) ॥७६॥

कर्ण व दाँत नाश योग ज्ञान

धर्मायसहजसुतगाः पापाः सौम्यैर्न वीक्षिता जन्तोः।
[1]श्रवणविनाशं कुर्युः सप्तमसंस्थाश्च दन्तानाम् ॥७७॥

यदि कुण्डली में नवम, एकादश, तृतीय, पञ्चम भावों में शुभग्रहों से अदृष्ट पाप ग्रह हों तो जातक के कानों को नष्ट करते हैं। यदि पापग्रह सप्तम भाव में हों तो जातक के दाँत नष्ट होते हैं ॥७७॥

बृ० जा० में कहा है।' नवमायतृतीयधीयुता न च सौम्यैरशुभाः निरीक्षिताः। नियमाच्छ्रवणोपघातदा रदवैकृत्यकराश्च सप्तमे' (२३ अ० ११ श्लो०) ॥७७॥

उन्माद (पागल) योग ज्ञान

उदये दिनकरपुत्रे त्रिकोणमदने[2] कुजे च सोन्मादः।
क्षीणे शशिनि ससौरे याते वा व्ययगृहे जातः ॥७८॥

यदि कुण्डली में लग्न में शनि हो व ५, ९, ७ में भौम हो अथवा क्षीण चन्द्रमा शनि के साथ बारहवें भाव में हो तो जातक उन्मादी अर्थात् पागल होता है ॥७८॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां लोकयात्रा नाम चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ॥

पञ्चत्रिंशोऽध्यायः।

राजोपयोगिशास्त्रं यस्मात्प्रभवो विशेषतस्तेषाम्।
सञ्चिन्त्या नृपयोगास्तानेवाहं[3] प्रवक्ष्यामि ॥१॥

विशेषकर यह ज्योतिष शास्त्र राजाओं की उपयोगिता के लिये है। जिन कारणों से राजयोगों उत्पत्ति होती है वे राजयोग यहाँ इस अध्याय में देखने चाहिए इसलिए मैं ग्रन्थकार उन्हीं सब राजायोगों का ही वर्णन करता हूँ ॥१॥

राजकुलोत्पन्न राजयोग व निम्नकुलोत्पन्न राजयोग एवं धनवान् योग ज्ञान

स्वोच्चत्रिकोणगृहगैर्बलसंयुतैश्च
त्र्याद्यैर्नृपो भवति भूपतिवंशजातः।
पञ्चादिभिर्जनपदप्रभवोऽपि[4] सिद्धो
हीनैः क्षितीश्वरसमो न तु भूमिपालः ॥ २ ॥

यदि जन्म के समय में तीन या चार ग्रह अपने उच्च में वा स्वमूलत्रिकोण में अथवा अपने घर में बलवान् हों तो राजकुल में उत्पन्न पुरुष राजा होता है। यदि जन्म के समय पांच या ६ ग्रह पूर्वोक्त स्थिति में हों तो निम्न कुलोत्पन्न भी राजा

---

१ नयन। २ भवने। ३ वातः। ४ जनपदेऽपि वदन्ति।

होता है। यदि दो या एक ग्रह उच्च वा मूलत्रिकोण या स्वगृह में हो तो राजा के समान होता है न कि राजा ॥ २ ॥

वृ० पा० में कहा है—'त्र्यल्पैरुच्चसंस्थितैः खेटैः राजा राजकुलोद्भवः। अन्यवंशभवस्तत्र राजतुल्यो धनैर्युतः ॥ ४४ ॥

चतुर्भिः पञ्चभिर्वापि खेटैः स्वोच्चस्वत्रिकोणगैः हीनवंशभवश्चापि राजा भवति निश्चितः' (३९ अ० ४४-२५ श्लो०)। वृ० जा० में भी 'उच्चस्वत्रिकोणगैर्बलस्थैस्त्र्याद्यैर्भूपतिवंशजा नरेन्द्राः। पञ्चादिभिरन्यवंशजाता हीनैर्वित्तयुता न भूमिपालाः' (११ अ० १३ श्लोक) ॥ २ ॥

क्रूरकर्मा व सत्कृत राजयोग ज्ञान

अशुभगगनवासैः स्वोच्चगैः क्रूरचेष्टं
कथयति यवनेन्द्रो भूपतिं विक्रमोत्थम्।
न तु भवति नरेन्द्रो जीवशर्मोक्तपक्षे
भवति नृपतियोगैः सत्कृतो राष्ट्रपालः ॥ ३ ॥

यदि जन्म के समय में एकमात्र पाप ग्रह ही उच्चादि स्थिति में हों तो जातक क्रूर (कठिन) इच्छा करने वाला राजा होता है यह कथन यवनाचार्य जी का है। जीवशर्मा जी के मत में पापग्रहों की उच्चादि सत्ता में जातक राजा न होकर पराक्रमी होता है। ग्रन्थकार के मत में सम्मानित या राष्ट्र का पालन करने वाला होता है ॥३॥

वृ० जा० में कहा है—'प्राहुर्यवनाः स्वतुङ्गगैः क्रूरैः क्रूरमतिर्महीपतिः। क्रूरैस्तु न जीवशर्मणः पक्षे क्षित्यधिपः प्रजायते' (११ अ० १ श्लोक)

मणित्थ का भी—पापैरुच्चगतैर्जाता न भवन्ति नृपा नराः।
किन्तु वित्तान्वितास्ते स्युः क्रोधिनः कलहप्रियाः ॥ ३ ॥

नीचकुल में उत्पन्न होने वाले राजयोगों का कथन

एष्विह भवन्त्यवश्यं भूपतियोगेषु नीचकुलपुरुषाः।
तानग्रतः प्रवक्ष्ये यथामतं शास्त्रकाराणाम् ॥ ४ ॥

इन आगे कहे जाने वाले राजयोगों में दरिद्रवंशीय पुरुष राजा अवश्य होता है उन राजयोगों का शास्त्रकारों के मत से मैं ग्रन्थकार वर्णन करता हूँ ॥ ४ ॥

नीच कुलोत्पन्न राजयोगों के ३२ भेद

स्वोच्चस्थै रविभौमसौरगुरुभिः सर्वैस्त्रिभिश्चैकगै[1]-
र्लग्ने षोडशवृद्धतापसगणैः सन्दर्शिताः पार्थिवाः।
द्वाभ्यां चैकतमोदये स्वभवने चन्द्रे पुनः षोडशः
सर्वो नीचकुलोद्भवोऽपि वसुधां [2]पात्येव वाटीमिव ॥ ५ ॥

यदि कुण्डली में सूर्य-भौम-शनि-गुरु ये चारों उच्चराशि में हों तथा इन चारों में से एक लग्न में हो तो चार प्रकार के राजयोग होते हैं। यदि इन्हीं भौमादि चारों में से

---

[1] भे। [2] पात्येक।

कोई तीन ग्रह उच्चराशि में हों तथा इन्हीं तीनों में से एक ग्रह लग्न में हो तो बारह प्रकार के राजयोग होते हैं। इस प्रकार सोलह योग होते हैं। पूर्वोक्त भौमादि ग्रहों में से यदि दो ग्रह उच्च में हों और दो में से एक लग्न में एवं चन्द्रमा स्वगृह अर्थात् कर्क राशि में हो तो बारह प्रकार के राजयोग होते हैं। यदि भौमादि दो में से एक ग्रह उच्च राशि में लग्न गत हो तथा कर्क राशि का चन्द्रमा हो तो चार प्रकार के राजयोग इसलिए सोलह + सोलह बत्तीस भेद होते हैं इन सब बत्तीस योगों में नीच कुल में उत्पन्न पुरुष भी राजा होता है तथा एक बगीचे की तरह पृथ्वी का पालन करता ही है ऐसा कथन वृद्ध तपस्वी गण का है अर्थात् वृद्धाचार्यों का है ॥ ५ ॥

बृ० जा० में कहा है—'वक्रार्कजार्कगुरुभिः सकलैस्त्रिभिश्च, स्वोच्चेषु षोडशनृपाः कथितैकलग्ने। द्व्येकाश्रितेषु च तथैकतमे विलग्ने, स्वक्षेत्रगे शशिनि षोडशभूमिपाः स्युः'
(११ अ० १ श्लोक) ॥ ५ ॥

विशेष—पाठकों की सुविधा के लिये ३२ भेदों का वर्णन निम्न है। मेष लग्न में सूर्य, कर्क में गुरू, तुला में शनि, मकर में मङ्गल यह एक भेद हुआ। कर्क लग्न में गुरू की कल्पना से दूसरा। तुला लग्न में शनि की स्थिति से तीसरा एवं मकर लग्न में मङ्गल की सत्तावश चतुर्थ भेद होता है। एवं तीन ग्रहों की कल्पना से—मेष लग्न में सूर्य, कर्क में गुरु, तुला में शनि एक अर्थात् ५ वाँ होता है। इसी प्रकार अन्य भेद भी होते हैं उदाहरणार्थ सारिणी देखें ॥ ५ ॥

स्पष्टभेद ज्ञानार्थ सारिणी चक्र

उच्चस्थ चार ग्रहों से चार भेद

भे. सं.	लग्न राशि व ग्रह	भा. राशि व ग्रह	लग्न राशि व ग्रह	भा. राशि व ग्रह	भे. सं.
१	१०, मं.	१सू., ७श., ४गु.	१, सू,	१०मं. ७श. ४गु.	२
३	७ श.	१सू. १०मं. ४गु.	४ गु.	१सू. ९श. १०मं.	४

उच्चस्थ तीन ग्रहों से १२ भेद

भे. सं.	लग्न राशि व ग्रह	भा. राशि व ग्रह	लग्न राशि व ग्रह	भा. राशि व ग्रह	भे. सं.	ल. रा, व ग्रह	भा. राशि व ग्रह	भे. सं.
१	१० मं.	७ श. १सू.	१० मं.	७श. ४गु.	२	१० मं	१ सू. ४गु.	३
४	७ श.	१० मं. १सू.	७ श.	१०मं. ४गु.	५	७श	१ सू. ४गु	६
७	१ सू.	१० मं. ७श.	१ सू.	१०मं. ४गु.	८	१ सू.	७ श. ४गु.	९
१०	४ गु.	१ सू. ७श.	४ गु.	१सू. १०मं.	११	४ गु.	१० मं. ७श.	१२

कर्कस्थ चन्द्रमा में राजयोग भेद

भे. सं.	ल. रा. व ग्रह	भा.रा व ग्रह	कर्क रा.	भे. सं.	ल. रा. व ग्रह	भा.रा. व ग्रह	कर्क रा.	भे. सं.	ल. रा. व ग्रह	भा.रा. व ग्रह	कर्क रा.	भे. सं.	ल. रा. व ग्रह	कर्क रा.
१	१० मं.	१सू.	चं.	५	७श.	१० मं.	चं.	९	१ सू.	४ गु.	चं.	१३	१० मं,	चं.
२	१० मं.	७श.	चं.	६	७श.	४ गु.	चं.	१०	४ गु.	१ सू.	चं.	१४	७ श	चं.
३	१० मं.	४गु.	चं.	७	१सू.	१० मं.	चं.	११	४ गु.	१० मं.	च.	१५	१ सू	च.
४	७ श.	१सू	चं	८	१सू	७ श	चं.	१२	४ गु.	७श.	च.	१६	४ गु.	चं.

अधमवंशोत्पन्न राज योग ज्ञान

गणोत्तमे लग्ननवांशकोद्गतो[1] निशाकरश्चापि गणोत्तमेऽथवा ।
चतुर्ग्रहैश्चन्द्रविवर्जितैस्तदा निरीक्षितः स्यादधमोद्भवो[2] नृपः ॥ ६ ॥

यदि कुण्डली में लग्नस्थ नवांश वा चन्द्रस्थ नवांश वर्गोत्तम राशि का हो तथा चन्द्रमा को छोड़कर ४ या ५, ६ आदि ग्रहों से दृष्ट हो तो जातक नीचकुल में उत्पन्न होकर राजा होता है ॥ ६ ॥

वृ० पा० में कहा है—'चन्द्रे वर्गोत्तमांशस्थे सबले चतुरादिभिः । ग्रहैर्दृष्टे च यो जातः स राजा भवति ध्रुवम् ॥ ४२ ॥ उत्तमांशगते लग्ने चन्द्रान्यैश्चतुरादिभिः । ग्रहैर्दृष्टेऽपि यो जातः सोऽपि भूमिपतिर्भवेत् ॥ ४३ ॥ (३९अ० ४२-४३श्लो०) ।

वृ० जा० में इसके २२ भेद कथित हैं । यथा—'वर्गोत्तमगते लग्ने चन्द्रे वा चन्द्रवर्जितैः चतुराद्यैर्ग्रहैर्दृष्टे नृपाः द्वाविंशतिः स्मृताः' (११ अ० ३ श्लो०) ॥ ६ ॥

अखिलभूमण्डल पालक योग ज्ञान

उदयगिरिनिविष्टैर्मेषसंस्थैर्ग्रहेन्द्रैः
शशिरुधिरसुरेड्यैर्जायते पार्थिवेन्द्रः ।
जलनिधिरशनायाः पालकः सर्वभूमे-
र्हतरिपुपरिवारः सर्वतः फूत्करोति ॥ ७ ॥

यदि जन्म के समय लग्नस्थ मेष राशि में चन्द्रमा, मङ्गल, गुरू हों तो जातक समुद्र रूपी मेखला से वेष्टित समस्त भूमण्डल का पालन करने वाला राजाधिराज होता है, तथा समस्त शत्रु दल का नाश करके चारों तरफ हुङ्कार करता है ॥ ७ ॥

अन्य राजयोग ज्ञान

स्वोच्चे गुरावविनिजे क्रियगे विलग्ने
मेषोदये च सकुजे वचसामधीशे ।
भूपो भवेदिह स यस्य विपक्षसैन्यं
तिष्ठेन्न[3] जातु पुरतः सचिवा वयस्याः ॥ ८ ॥

---

[1] ग्दभे । [2] भवेन्नृपः । [3] तिष्ठेत ।

यदि कुंडली में मेष लग्न में मङ्गल तथा कर्क राशि में गुरू हो तो अथवा मेष लग्न में मङ्गल व गुरू हों तो जातक राजा होता है तथा जिसके सामने शत्रु की सेना नहीं स्थित हो सकती अर्थात् शत्रु पराजित होता है एवं राजा के मन्त्री अनुकूल होते हैं अर्थात् पूर्ण सहयोगी होते हैं ॥ ८ ॥

विज्ञान कुशल राजयोग ज्ञान

निशाभर्ता चाये भृगुतनयदेवेडयसहितः
कुजः प्राप्तः स्वोच्चे मृगमुखगतः सूर्यतनयः ।
विलग्ने कन्यायां शिशिरकरसूनुर्यदि भवेत्
तदाऽवश्यं राजा भवति बहुविज्ञानकुशलः ॥ ९ ॥

स्पष्टार्थं चक्र

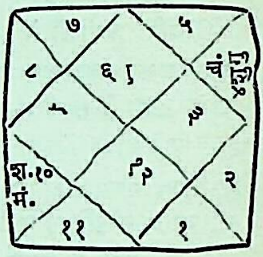

यदि कुंडली में कन्या लग्न में बुध तथा एकादश भाव में चन्द्र, शुक्र-गुरू हों व उच्च राशि में मङ्गल एवं मकर राशि में शनि हो तो जातक अधिक विज्ञान में चतुर राजा अवश्य होता है ॥ ९ ॥

सद्भूपाल राजयोग ज्ञान

स्वर्क्षे नक्षत्रनाथः स्फुटकरनिकरालङ्कृतः प्राप्तलग्नो
द्यूने सोमस्य पुत्रो यदि रिपुभवनं भास्करः संप्रयातः ।
पाताले दानवेड्यो गुरुरपि गगने सौरभौमौ तृतीये
सद्भूपालो भवेद्यः शशिकरधवलं चामरं राजलक्ष्मीम् ॥१०॥
वर्गोत्तमगते चन्द्रे लग्ने वा चन्द्रवर्जिते ।
चतुराद्यैर्ग्रहैर्दृष्टे जातो नरपतिर्भवेत् ॥११॥

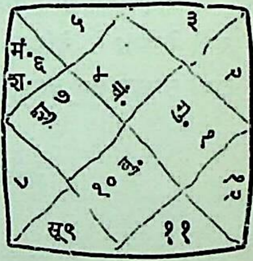

यदि कुंडली में परिपूर्ण चन्द्रमा कर्क लग्न में हो तथा सप्तम में बुध, छठे भाव में सूर्य, चौथे में शुक्र दशम में गुरू, शनि व भौम तृतीय भाव में हों तो जातक चन्द्रमा की किरणों के समान शुभ्र चामर (व्यजन) तथा राजलक्ष्मी से युक्त सज्जन (श्रेष्ठ) राजा होता है ॥१०॥ यह श्लोक छठे श्लोक के अनुरूप ही है ॥ ११ ॥

अधिक लक्ष्मी से युत राजयोग ज्ञान

शिशिरकिरणे स्वोच्चे लग्ने पयोम्बुनिधेः समे
घटधरगते भानोः पुत्रे मृगाधिपतौ रविः ।

अलिगृहगतो वाचां नाथः स्फुरत्कर राजितो
यदि नरपतिः स्फीतश्रीकस्तदा बहुवाहनः ॥१२॥

यदि कुंडली में परिपूर्ण चन्द्रमा वृष लग्न में हो तथा कुम्भ राशि में शनि, सिंह राशि में सूर्य, वृश्चिक राशि में शोभित किरणों से युक्त गुरू हो तो जातक अधिक लक्ष्मी व वाहनों से युत राजा होता है ॥ १२ ॥

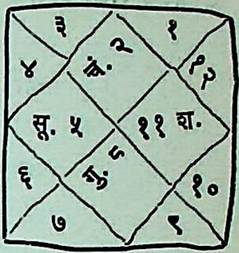

वृ० जा० में कहा है—'वृषे सेन्दौ लग्ने' (११ अ० ६ श्लोक) ॥१२॥

इन्द्र तुल्य राजयोग ज्ञान

मृगे मन्दे लग्ने कुमुदवनबन्धुश्च तिमिग-
स्तथा कन्यां त्यक्त्वा बुधभवनसंस्थः कुतनयः
स्थितो नार्यां सौम्यो धनुषि सुरमन्त्री यदि भवेत्
तदा जातो भूपः सुरपतिसमः प्राप्तमहिमा ॥१३॥

यदि कुंडली में मकर लग्न में शनि, चन्द्रमा मीन राशि में तथा कन्या राशि को छोड़कर बुध के घर में अर्थात् मिथुन में भौम, कन्या में बुध, धनु राशि में गुरू हो तो जातक इन्द्र के समान महिमा (प्रशंसा) पाने वाला राजा होता है ॥ १३ ॥

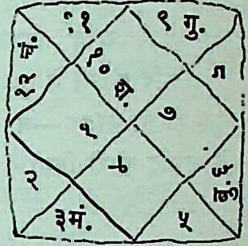

वृ० जा० में कहा है—'मृगे मन्दे लग्ने····' (११ अ० ६२ श्लोक)॥१३॥

सकलकलाढ्य राजयोग ज्ञान

उदयति मीने शशिनि नरेन्द्रः सकलकलाढ्यः क्षितिसुत उच्चे ।
मृगपतिसंस्थे दशशतरश्मौ घटधरगे स्याद्दिनकरपुत्रे ॥१४॥

यदि कुंडली में मीन लग्न में चन्द्रमा व उच्च में अर्थात् मकर राशि में मंगल, सिंह में सूर्य व कुम्भ राशि में शनि हो तो जातक समस्त कलाओं से युत राजा होता है ॥ १४ ॥

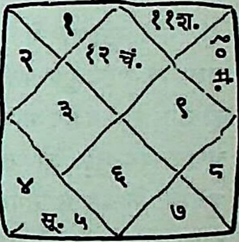

शत्रु से अजेय राजयोग ज्ञान

कुजे विलग्ने च शशी यदाऽस्ते स्फुटांशुसम्भारविराजिताङ्गः ।
राजा तदा शत्रुभिरप्रधृष्यो [1]वेदार्थविद्धेतुशतानुवादैः ॥१५॥

---

[1] सदानुभावैः ।

यदि कुंडली में लग्न में मंगल हो तथा सप्तम भाव में सम्पूर्ण किरणों से युक्त चन्द्रमा हो तो जातक सौ अनुवादरूपी कारण से वेद के अर्थ को जाननेवाला शत्रुओं से अजेय राजा होता है ॥ १५ ॥

शत्रु को पराजित कर्त्ता राजयोग ज्ञान

करोत्युत्कृष्टोद्यद्दिनकृदमृताधीशसहितः
स्थितस्ताद्दग्रूपं सकलनयनानन्दजननः ।
अपूर्वोऽयं स्मृत्या नयनजलसिक्तोऽपि सततं
रिपुस्त्रीशोकाग्निर्ज्वलति हृदयेऽतीव सुतराम् ॥१६॥

यदि कुण्डली में उच्चराशि में सूर्य, चन्द्रमा के साथ लग्नगत हो तो जातक—चन्द्रमा के समान स्वरूप वाला अर्थात् अत्यन्त सुन्दर, समस्त जीवों की आँख का आनन्द दायक राजा होता है। जिसके स्मरण मात्र से शत्रु स्त्रियों की शोकाग्नि नयन जल से सिक्त होने पर भी सदा हृदय में जलती रहती है ॥ १६ ॥

अन्य राजयोग ज्ञान

शुक्रो घटे कुजो मेषे स्वोच्चे देवपुरोहितः ।
यदि राजा भवेन्नूनं स्वयशोधौतदिङ्मुखः ॥१७॥

यदि कुंडली में तुला का शुक्र, मेष राशि का मंगल तथा अपनी उच्च राशि कर्क में गुरू हो तो जातक—अपनी कीर्ति से दिशाओं को शुभ्र करने वाला राजा अवश्य होता है अर्थात् चारों दिशाओं में यश फैलता है ॥ १७ ॥

स्वभुजवल से पृथ्वीपति योग ज्ञान

उदयति गुरुरुच्चे तप्तहेमप्रभावो
हरिततुरगनाथो व्योममध्यावगाही ।
गवि शशिबुधशुक्रा यस्य सूतौ नरस्य
स्वभुजविजितभूमिः सर्वतः पार्थिवेन्द्रः ॥१८॥

स्पष्टार्थ चक्र

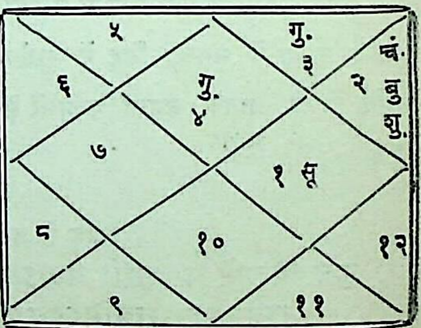

यदि कुंडली में तपे हुए सुवर्ण की आभा के सदृश गुरू कर्क राशि में लग्न गत हो तथा सूर्य दशम भाव में व वृष राशि में चन्द्रमा-बुध-शुक्र हों तो जातक—अपनी भुजाओं के बल से समस्त पृथ्वी को जीतने वाला राजा होता है ॥१८॥

वृ० जा० में कहा है—'कर्किणि लग्ने तत्स्थे जीवे चन्द्रसितज्ञैरायप्राप्तैः । मेषगतेऽर्के जातं (११ अ० ९ श्लोक) ॥ १८ ॥

अन्य राजयोग ज्ञान

धनुषि सुरेड्यः शशभृदुपेतो मृगमुखसंस्थः क्षितितनयश्च।
उदयति तुङ्गे सुररिपुवन्द्यः शशितनयो वा यदि नृपतिः स्यात् ॥१९॥

यदि कुंडली में धनु राशि में गुरु चन्द्रमा के साथ हो तथा मकर राशि में मंगल व अपनी उच्च राशि में शुक्र वा बुध लग्न गत हो तो जातक राजा होता है ॥ १९ ॥

वृ० जातक में कहा है—'हये सेन्दौ जीवे मृगमुखगते भूमितनये, स्वतुङ्गस्थौ लग्ने भृगुजशशिजावत्र नृपती' (११ अ० ७ श्लोक) ॥ १९ ॥

स्पष्टार्थ चक्र

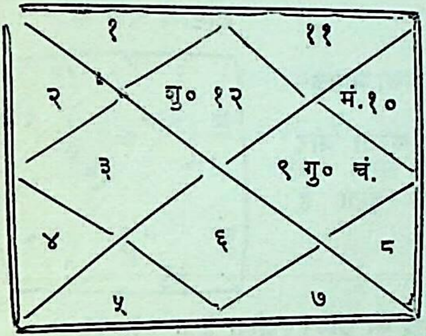

स्पष्टार्थ चक्र

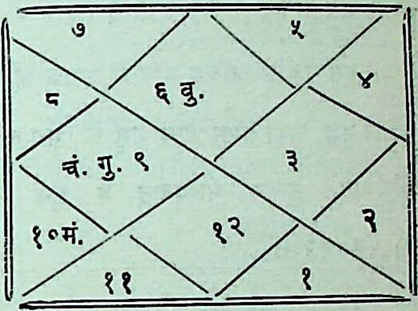

अन्य राजयोग ज्ञान

चापार्धे भगवान्सहस्रकिरणस्तत्रैव ताराधिपो
लग्ने भानुसुतोऽतिवीर्यसहितः स्वोच्चे च भूनन्दनः।
यद्येवं भवति क्षितेरधिपतिः सञ्चिन्त्य शौर्यं भयात्
दूरादेव नमन्ति यस्य रिपवो दग्धाः प्रतापाग्निना ॥२०॥

स्पष्टार्थ चक्र

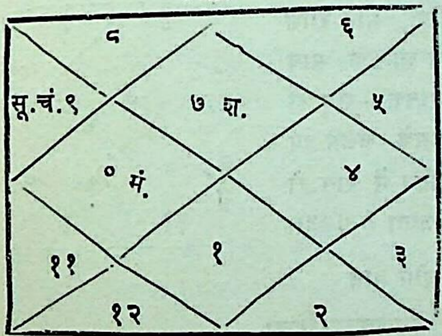

यदि कुंडली में धनु राशि के पूर्वार्ध में सूर्य हो तथा चन्द्रमा भी सूर्य के साथ हो व भौम अपनी उच्चराशि मकर में, लग्न में शनि अतिबली अर्थात् उच्च में हो तो जातक पृथ्वी का स्वामी अर्थात् राजा होता है। जिसके बल को जानकर भय के कारण उस राजा की प्रताप रूपी अग्नि से भस्म होकर शत्रुगण दूर से ही नमस्कार करते हैं ॥२०॥

अधिराज योग ज्ञान

षष्ठं द्यूनमथाष्टमं शिशिरगोः प्राप्ताः समस्ताः शुभाः
क्रूराणां यदि गोचरे न पतिता भान्वालयाद्दूरतः।

भूपालः प्रभवेत्स यस्य जलधेर्वेलावनान्तोद्भवैः
सेनामत्तकरीन्द्रदानसलिलं भृङ्गैर्मुहुः पीयते ॥२१॥
न प्राप्नोति जरामाशु नो भजत्यरितो भयम्।
जातः स्याद्धियोगेऽस्मिन्धृतिसौभाग्यसौख्यभाक् ॥२२॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा से छटे सातवें आठवें भाव में पापग्रहों से अदृष्ट सूर्य की राशि (सिंह) का त्याग कर सब शुभ ग्रह विद्यमान हों तो जातक—राजा होता है। जिसकी सेना के मतवाले हाथियों के मदजल का समुद्र के तट पर्यन्त वन में उत्पन्न हुए भौरे बार-बार पान (पीते) करते हैं।

स्पष्टार्थ चक्र—

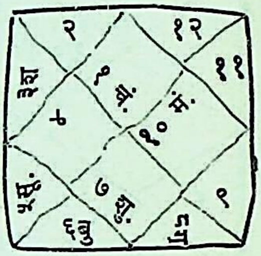

इस पूर्वोक्त अधिक योग में उत्पन्न होने वाला जातक—शीघ्र वृद्ध नहीं होता एवं शत्रु से भय नहीं करता और धैर्यवान्, सुन्दर भाग्यवान् व सुख भोगी होता है ॥ २१–२२ ॥

विशेष—यह योग मकर-कुम्भ-मीनस्थ चन्द्र को छोड़कर होता है ॥ २१–२२ ॥

अन्य राज योग ज्ञान

बुधः स्वोच्चे लग्ने तिमियुगलगावीड्यशशिनौ।
मृगे मन्दः सारो जितुमगृहगो दानवसुहृत्।
य एवं कुर्यात्स क्षितिभृदहितध्वंसनिरतो
निरालोकं लोकं चलितगजसङ्घातरजसा ॥२३॥

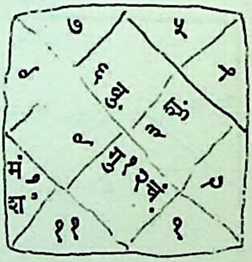

यदि कुण्डली में कन्या लग्न में बुध हो, मीन राशि में चन्द्रमा के साथ गुरू हो, मकर राशि में शनि के साथ भौम व मिथुन (जितुम) में शुक्र हो तो जातक—शत्रु को नाश करने में तत्पर राजा होता है। जिसके चलते हुए हाथियों के पाद सङ्घात से उत्पन्न धूलि से दिन में रात हो जाती है अर्थात् प्रकाश में भी अन्धकार हो जाता है ॥२३॥

अन्यराज योग ज्ञान

केसरिगो महेन्द्रसचिवो दिनकरसहितः
कुम्भगतोऽर्कजः शशधरः खलु भवति वृषे।
वृश्चिकभे क्षितेस्तु तनयो मिथुन इन्दुसुतो
मेषलग्नसमुदयो यदि स तु मनुजपतिः ॥२४॥

यदि कुण्डली में मेष लग्न हो तथा सिंह राशि में गुरू व सूर्य, कुम्भ में शनि, चन्द्रमा वृष में, वृश्चिक में मङ्गल, मिथुन में बुध हो तो जातक मनुष्यों का स्वामी राजा होता है ।। २४ ।।

स्पष्टार्थ चक्र

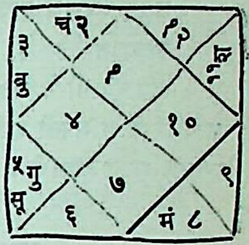

अपारकीर्तियुत राजयोग ज्ञान

कार्मुके त्रिदशनायकमन्त्री भानुजो वणिजि चन्द्रसमेतः ।
मेषगस्तु तपनो यदि लग्ने भूपतिर्भवति सोऽतुलकीर्तिः ।।२५।।

यदि कुण्डली में मेष लग्न में सूर्य हो व धनु राशि में गुरू, शनि चन्द्रमा के साथ तुला में हो तो जातक अपार कीर्तिमान् राजा होता है ।। २५ ।।

स्पष्टार्थ चक्र

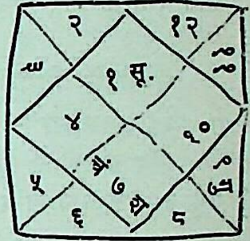

अन्य राजयोग ज्ञान

[1]स्वर्क्षात्केन्द्रेषु यातैर्गुरुबुधभृगुजैर्मन्दभान्वारयुक्तैः
स्वोच्चे चन्द्रोऽधितिष्ठञ्जनयति नृपतिं कीर्तिशुक्लीकृताशम् ।
अत्युच्चे लग्नसंस्थो रविरपि भगवान्पार्थिवं क्रूरचेष्टं
यातायातैः [2]समस्तं चतुरुदधिजलं यस्य सेनाः पिबन्ति ।।२६।।

यदि कुण्डली में अपनी राशियों से केन्द्र राशियों में गुरु-बुध-शुक्र, शनि-सूर्य-भौम के साथ में हों तथा उच्च (वृष) में चन्द्रमा हो तो जातक—अपनी कीर्ति से दिशाओं को शुभ्र (स्वच्छ) करने वाला राजा होता है ।

यदि सूर्य अपने परमोच्च में लग्नस्थ हो तो कठोर कार्य-कारी राजा होता है । जिसकी सेना अपने गमनागमन से चारों ओर समस्त समुद्र के जल का पान करती है अर्थात् आसमुद्र भूमि का राजा होता है ।। २६ ।।

---

१. स्वर्क्षे । २. समन्ताश्च ।

अन्य राजयोग ज्ञान

उदकचरनवांशके सुखस्थः[1] कमलरिपुः सकलाभिराममूर्तिः ।
उदयति विहगे शुभे स्वलग्ने भवति नृपो यदि केन्द्रगा न पापाः ॥२७॥

यदि कुंडली में चन्द्रमा अपनी कलाओं से परिपूर्ण जलचर राशिस्थ नवांश में चतुर्थ भाव में हो व अपनी राशि में शुभग्रह लग्नस्थ हो एवं केन्द्र में पापग्रहों का अभाव हो तो जातक राजा होता है ॥ २७ ॥

अन्य राजयोग ज्ञान

आपूर्णमण्डलकलाकलितं शशाङ्कं
पश्यन्ति शुक्रसुरपूजितसोमपुत्राः ।
लग्नाधिपोऽतिबलवान्पृथिवीश्वरः स्यात्
वर्गोत्तमश्च नवमः खलु चेद्विलग्ने ॥२८॥

यदि कुण्डली में कलाओं से परिपूर्ण चन्द्रमा, शुक्र-गुरू-बुध से दृष्ट हो व लग्नेश अति बली हो और लग्न में वर्गोत्तम नवांश हो तो जातक-राजा होता है ॥ २८ ॥

प्रसन्न राजयोग ज्ञान

वर्गोत्तमे त्रिप्रभृतिग्रहेन्द्राः केन्द्रस्थिता नो शुभसंयुताश्च ।
नो रूक्षधूमा न विवर्णदेहाः कुर्वन्ति राज्ञः प्रसवं प्रसन्नाः ॥२९॥

यदि कुण्डली में तीन या चार शुभ ग्रह वर्गोत्तम नवांश में केन्द्रस्थ हों तथा पाप ग्रहों का असहयोग हो व और अस्त क्षीण न हों तो जातक-प्रसन्न राजा होता है ।२९।

अन्य राजयोग ज्ञान

एक एव [2]खगः स्वोच्चे वर्गोत्तमगतो यदि ।
बलवान्मित्रसंदृष्टः करोति पृथिवीपतिम् ॥३०॥

यदि कुण्डली में एक भी ग्रह उच्चस्थ होकर वर्गोत्तम में बली मित्रग्रह से दृष्ट हो तो जातक राजा होता हे ॥ ३० ॥

शीर्षोदयर्क्षेषु गताः समस्ता नो चारिवर्गे स्वगृहे शशाङ्कः ।
सौम्येक्षि[3]तोऽन्यूनकलो विलग्ने दद्यान्महीं रत्नगजाश्वपूर्णाम् ॥३१॥

यदि कुण्डली में समस्त ग्रह (चन्द्रमा को छोड़कर) शीर्षोदय राशि में हों तथा परिपूर्ण चन्द्रमा शत्रुवर्ग के अतिरिक्त वर्ग में कर्क राशिस्थ लग्न में शुभग्रह से दृष्ट हो तो जातक रत्न-हाथी-घोड़ा से पूर्ण राजा होता है ॥ ३१ ॥

इन्द्रतुल्य बलशाली राजयोग ज्ञान

उपचयगृहसंस्थो जन्मपो यस्य चन्द्रात् ।
शुभगृहमथवांशे केन्द्रयाताश्च सौम्याः ।
सकलबलवियुक्ता ये च पापाभिधानाः
स भवति नरनाथः शक्रतुल्यो बलेन ॥३२॥

---

१. षे षष्ठः । २. ग्रहः । ३. सौम्येक्षितः पूर्णकलो ।

जिसकी कुण्डली में चन्द्रमा से चन्द्र राशीश ग्रह उपचय (३, ६, १०, १०) राशि में हो व शुभग्रह शुभ राशि में वा शुभ नवांश में केन्द्रस्थ हों और पापग्रह निर्बल हों तो जातक इन्द्र के समान बली राजा होता है ॥ ३२ ॥

अन्य राजयोग ज्ञान

अत्युच्चस्था रुचिरवपुषः सर्व एव ग्रहेन्द्रा
मित्रैर्दृष्टा यदि रिपुदृशां गोचरं न प्रयाताः।
कुर्युर्नूनं प्रसभमरिभिर्गर्जितैर्वारणाग्र्यैः
सेनाश्वीयैश्चलति चलितैर्यस्य भूः पार्थिवेन्द्रम् ॥३३॥

यदि कुण्डली में सुन्दर देहधारी समस्त ग्रह परमोच्च में मित्र ग्रहों से दृष्ट व शत्रु ग्रहों से अदृस्ट हों तो जातक राजा होता है। जिसकी शत्रुओं के साथ युद्ध में सेना के श्रेष्ठ हाथियों की गर्जना से व घोड़ों के गमन से पृथ्वी अवश्य डगमगा जाती है ॥३३॥

अखण्ड भूपतियोग ज्ञान

परमोच्चे स्थितश्चन्द्रो यदि शुक्रेण दृश्यते।
कुर्यान्महीपतिं पूर्णं पापैरापोक्लिमोपगैः ॥३४॥

यदि कुंडली में परमोच्चांश (१ रा० ३ अं०) में स्थित चन्द्रमा शुक्र से दृष्ट व आपोक्लिम (३, ६, ९, १२) स्थानों में समस्त पापग्रह हों तो जातक पूर्ण अर्थात् अखंड राजा होता है ॥ ३४ ॥

अन्य राजयोग ज्ञान

दृश्येते शुभदैः स्वकेन्द्रभवने मित्रैश्च पापैस्तथा
युद्धे नो रिपुभिर्जितौ बलयुतौ जन्मोदयर्क्षाधिपौ।
भूपः स्यान्निजराशिनाथनवमे चन्द्रोदये चेद्यशो
यस्येभस्रुतदानलुब्धमधुपैश्चातुर्दिशं गीयते ॥३५॥

यदि कुण्डली में जन्म राशीश व लग्नेश बलवान् होकर केन्द्र में स्थित हों तथा शुभग्रहों से व मित्र ग्रहों से दृष्ट और पापग्रहों से अदृष्ट एवं शत्रुग्रहों से युद्ध में अपराजित हों व अपने राशीश से नवम स्थान में चन्द्रमा लग्नस्थ हो तो जातक राजा होता है। जिसकी सेना के हाथियों के कर्ण दान (मद) के लोभी भौंरे उस राजा के यश का गान चारों दिशाओं में करते हैं ॥ ३५ ॥

अन्य राजयोग ज्ञान

उच्चराशिर्भवेद्धोरा यस्यासौ कुरुते नृपम्।
स्वांशेऽथ सुहृदुच्चांशे दृष्टः केन्द्रोपगैः शुभैः ॥३६॥

यदि कुण्डली में जिस ग्रह की उच्च राशि लग्न में हो वह ग्रह यदि अपने नवांश में वा मित्र के वा उच्च के नवांश में केन्द्रगत शुभग्रहों से दृष्ट हो तो जातक राजा होता है ॥ ३६ ॥

स्थितो भानोः पुत्रो विरचितबलः पश्चिमार्धे मृगस्य
रविः सिंहे शुक्रस्तुलिनि रुधिरो मेषगः कर्किणीन्दुः ।
कुमारीं सम्प्राप्तो यदि भवति वा शर्वरीनाथसूनुः
प्रजातो भूपा[1]लश्छदयति महीमेकशुक्लातपत्राम् ॥३७॥

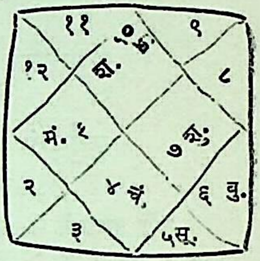

यदि कुण्डली में मकर राशि के उत्तरार्द्ध में प्रबल शनि हो व सिंह में सूर्य, तुला में शुक्र, मेष में मङ्गल, कर्क में चन्द्रमा और कन्या में बुध हो तो जातक—एक शुभ्र कीर्ति रूप छत्र से भूमण्डल का रक्षक राजा होता है ॥ ३७ ॥

प्रकारान्तर

वर्गोत्तमस्वभवनेषु गता ग्रहेन्द्राः
सर्वे यदा रुचिररश्मिशिखाकलापाः ।
उत्पद्यते जगति सीममतीं धरित्रीं
यः पालयेत्क्षितिपतिर्जितशत्रु[2]पक्षः ॥३८॥

यदि कुण्डली में समस्त ग्रह परिपूर्ण होकर वर्गोतम नवांश व स्वगृह में हों तो संसार में उत्पन्न होने वाला अर्थात् जातक–समस्त भूमि का पालक व शत्रुदल को जीतने वाला राजा होता है ॥ ३८ ॥

प्रकारान्तर

केन्द्रे विलग्नाथः सुहृद्भिरभिवीक्षितो [3]विहगैः ।
लग्नस्थिते च सौम्ये भूपतिरिह जायते [4]पुरुषः ॥३९॥

यदि कुण्डली में लग्नेश केन्द्र में स्थित हो तथा मित्र ग्रहों से दृष्ट व लग्न में शुभग्रह हो तो जातक राजा होता है ॥ ३९ ॥

यशस्वी व समस्त शत्रु हन्ता राज योग ज्ञान

सुरपतिगुरुः सेन्दुर्लग्ने वृषे समवस्थितो
यदि बलयुतो लग्नेशश्च त्रिकोणगृहं गतः ।
रविशनिकुजैर्वीर्योपेतैर्न युक्तनिरीक्षितो
भवति स नृपः कीर्त्या युक्तो हताखिलकण्टकः ॥४०॥

यदि कुण्डली में वृष लग्न में गुरू से युत चन्द्रमा व बली लग्नेश त्रिकोण में बलवान् सूर्य-शनि-भौम से अदृष्ट व अयुत हो तो जातक—समस्त शत्रु निहन्ता, कीर्तिमान् राजा होता है ॥ ४० ॥

---

[1] श्चिरमवति गानेक । [2] वर्गः ।
[3] विहगनाथैः । [4] नियतम् ।

अन्य राजयोग ज्ञान

न नीचगृहसंस्थिता न च रिपोर्गृहं संगताः
स्वराशिमथवांशकानुदयगोच्चमंशं यदि ।
कलाभिरतिभूषिते कुमुदषण्डबोधप्रदे
सुहृद्भिरभिवीक्षिताः क्षितिपतिं विदध्युर्ग्रहाः ॥४१॥

यदि कुण्डली में समस्त ग्रह नीच राशि व शत्रु राशियों को छोड़कर अपनी-अपनी राशियों में वा अपने-अपने नवमांश में हों तथा लग्नस्थ उच्चांश में परिपूर्ण चन्द्रमा हो और समस्त ग्रह अपने मित्र ग्रहों से दृष्ट हों तो जातक राजा होता है ॥ ४१ ॥

अन्य राजयोग ज्ञान

यो यः पूर्णं शिशिरकिरणं प्राप्तवर्गोत्तमांशं
सुस्पष्टार्चिर्गगनगमनः पश्यति स्वोच्चसंस्थम्[1] ।
स क्षोणीशं जनयति दशां प्राप्य सौम्यः स्वकीयां
ख्यातं लोके यदि बलयुताः कण्टकस्था न पापाः ॥४२॥

यदि कुण्डली में पूर्ण चन्द्रमा अपने वर्गोत्तम नवांश में स्थित होकर उच्च राशि में हो तथा जिस-जिस पूर्ण शुभग्रह से दृष्ट हो वह शुभग्रह अपनी दशा में जातक को राजा बना देता है। यदि बलवान् पापग्रह केन्द्र में न हों तो यह राजा संसार में प्रसिद्ध होता है ॥ ४२ ॥

प्रकारान्तर

जन्मोदयभवनपती बलसहितौ केन्द्रभेऽथ हिबुके वा ।
इन्दुर्जलगृहगश्चेत्त्रिकोणगो वा महीपालः ॥४३॥

यदि जन्म के समय लग्नेश व राशीश बलवान् होकर केन्द्र में हों तो जातक राजा वा चतुर्थ में अथवा त्रिकोण में जलचरराशिस्थ चन्द्रमा हो तो जातक राजा होता है॥४३॥

सार्वभौम राजयोग ज्ञान

स्वगृहे मित्रभागेषु स्वांशे वा मित्रराशिषु ।
कुर्वन्ति च नरं सूतौ सार्वभौमं नराधिपम् ॥४४॥

यदि कुण्डली में समस्त ग्रह अपनी राशि में या मित्र के नवांश में या अपने नवांश में या मित्र राशि में हों तो जातक सार्वभौम राजा होता है ॥ ४४ ॥

देव-दानवों से वन्दित

परमोच्चगताः सर्वे स्वोच्चांशे यदि सोमजः ।
त्रैलोक्याधिपतिं कुर्युर्देवदानववन्दितम् ॥४५॥

यदि कुण्डली में समस्त ग्रह अपने-अपने परमोच्च में हों व बुध उच्च के नवांश में स्थित हो तो जातक—देव (सुर) दानवों (असुर) से पूजित तीनों लोकों का राजा होता है ॥ ४५ ॥

---

[1] संस्थः । वांशकंत्रय इहोच्चमंशं ।

शत्रुरहित राजयोग ज्ञान

यस्योत्तरस्यां भगवान्वसिष्ठो बृहस्पतिः प्रागपरे च भार्गवः ।
अगस्त्यनामा खलु दक्षिणस्यां स नष्टशत्रुश्च भवेन्नराधिपः ॥४६॥

जिसकी कुण्डली में उत्तर (चतुर्थ) में वसिष्ठ (बुध), पूर्व (लग्न) में गुरू, पश्चिम (सप्तम) में शुक्र, दक्षिण (दशम) में अगस्त्य नक्षत्र (मं०) हो तो जातक—शत्रु से रहित राजा होता है ॥ ४६ ॥

अन्य राजयोग ज्ञान

शशी पूर्णः स्वांशं स्वगृहमथवा स्वोच्चभं वा प्रयातो
दिवः पातुर्मन्त्री दितिजगुरुणा वीक्षितः केन्द्रसंस्थः ।
रविर्लग्ने स्वांशं यदि बलयुतः पश्यति स्यात्स भूपः
प्रभग्नं यस्येभश्चतुरुदधिभूशल्लकीनामरण्यम् ।.४७॥

यदि कुण्डली में परिपूर्ण चन्द्रमा अपने नवांश में वा अपनी राशि में वा उच्च (वृष) राशि में हो तथा केन्द्रस्थ गुरू, शुक्र से दृष्ट हो व बलवान् लग्नस्थ सूर्य अपने नवांश का अवलोकन करता हो तो जातक राजा होता है । जिसके हाथियों द्वारा भूमि के चारों ओर आसमुद्र सनई के वन नष्ट होते हैं अर्थात् शल्लकी पदार्थ गज भक्ष्य होने से वन में सञ्चार होने के नाते नष्ट होते हैं ॥ ४७ ॥

सार्वभौम राजयोग ज्ञान

कुमुदगहनबन्धौ वीक्ष्यमाणे समस्तै-
र्गगनगृहनिवासैर्दीर्घजीवी नरः स्यात् ।
फलमशुभसमुत्थं नैव केमद्रुमोत्थं
भवति मनुजनाथः सार्वभौमो जितारिः ॥४८॥

स्पष्टार्थं चक्र व अन्य भी

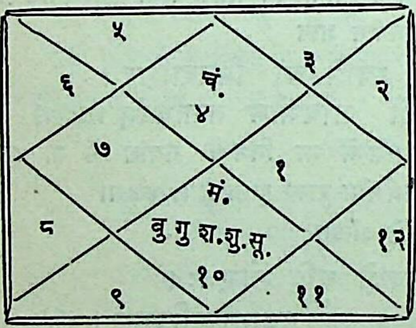

यदि कुण्डली में चन्द्रमा समस्त ग्रहों से दृष्ट हो तो जातक—दीर्घायु, शत्रुहीन सार्वभौम राजा होता है । इस योग में अशुभ योग फल व केमद्रुम विशेष अशुभ योगफल भी नहीं होता है ॥ ४८ ॥

प्रकारान्तर

उच्चाभिलाषी सविता त्रिकोणे स्वर्क्षे शशी जन्मनि यस्य जन्तोः ।
स शास्ति पृथ्वीं बहुरत्नपूर्णां बृहस्पतिः कर्कटके [1]यदि स्यात् ॥४९॥

---

[1] कर्कटकोपगश्चेत् ।

जिसकी कुण्डली में त्रिकोणस्थ सूर्य अपनी उच्च राशि में प्रवेश करने वाला हो व अपनी (कर्क) राशि में चन्द्रमा व गुरू हों तो जातक—अधिक रत्नों से भरपूर पृथ्वी का पालक राजा होता है ॥ ४९ ॥

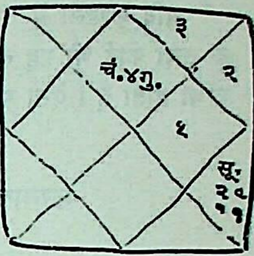

सगरादि तुल्य राजयोग ज्ञान

तुङ्गेषु षड्विबुधमार्गचरा उपेताः
स्वांशे मयूखनिकरैः परिपूरिताङ्गाः[1] ।
उत्पादयन्ति कुलिशाङ्कितपाणिपादं
पृथ्वीपतिं सगरवेनययातितुल्यम् ॥५०॥

यदि कुण्डली में अपनी किरणों से युक्त स्वांशगत ६ मार्गी ग्रह उच्चराशियों में हों तो जातक—वज्र से अङ्कित हाथ पैर वाला सगर-वेन-ययाति के तुल्य राजा होता है ॥५०॥

तपस्वी राजयोग ज्ञान

शुभभवनसमेतैः सौम्यभागेषु सौम्यैः
स्फुटरुचिरकराद्यैः प्रस्फुरद्भिर्विलग्ने ।
रविमुषितमयूखैस्तैश्च पापैरमिश्रै-
र्गिरिगहननिवासी तापसः स्यान्नरेन्द्रः ॥५१॥

यदि कुण्डली में समस्त शुभ ग्रह स्पष्ट सुन्दर किरणों से होकर शुभराशि वा शुभ नवांशस्थ लग्न में हों व सूर्य के साथ अस्त न हों और साथ में पापग्रह न हों तो जातक—पर्वत व वन का निवासी तपस्वी राजा होता है ॥ ५१ ॥

बृहस्पति बुद्धि तुल्य राजयोग ज्ञान

[2]शुभपणफरगाः शुभप्रदा उभयगृहे यदि पापसंचयः ।
स्वभुजहतरिपुर्महीपतिः सुरगुरुतुल्यमतिः प्रकीर्तितः ॥५२॥

यदि कुण्डली में समस्त शुभग्रह शुभ राशियों में पणफर (२, ५, ८, ११) भावगत हों तथा सब पाप ग्रह द्विस्वभाव राशियों में हों तो जातक अपने हाथों से शत्रु को मारने वाला तथा बृहस्पति के समान बुद्धि वाला राजा होता है ॥ ५२ ॥

दुर्वार शत्रु मारक राजयोग ज्ञान

विलग्ननाथः खलु लग्नसंस्थः सुहृद्गृहे मित्रदृशां पथि स्थितः ।
करोति नाथं पृथिवीतलस्य दुर्वारवैरिघ्नमिहोदये शुभे ॥५३॥

यदि कुण्डली में लग्नेश लग्न में या मित्र की राशि में मित्र ग्रह से दृष्ट हो तथा लग्न में शुभग्रह हो तो जातक निवारण के अयोग्य शत्रु को मारने वाला राजा होता है ॥५३॥

अन्य राजयोग ज्ञान

सम्पूर्णमूर्तिर्भगवान्शशाङ्को मेषांशकस्थो गुरुणा च दृष्टः ।
नीचे न कश्चिन्न च वीक्षितोऽन्यैः प्राह क्षितीशं यवनाधिराजः ॥५४॥

---

[1] परिपूरिताग्राः । [2] इह ।

यदि कुण्डली में सकल कला परिपूर्ण चन्द्रमा मेष के नवांश में स्थित गुरू से दृष्ट हो तथा कोई भी ग्रह नीच राशि में न हो और अन्य ग्रहों से अदृष्ट हो तो जातक—राजा होता है। ऐसा कथन यवनाधिराज का है ॥ ५४ ॥

अन्य राजयोग ज्ञान

लग्नाच्छशी त्रिरिपुलाभनभःस्थलेषु
सूतावखण्डितवपुः पृथिवीश्वरः स्यात्।
दृष्टः सुरेन्द्रगुरुणा न च वीक्षितोऽन्यै-
र्जन्माधिपो दशमगः स्मरगोऽथवा स्यात् ॥५५॥

यदि कुण्डली में लग्न से परिपूर्ण चन्द्रमा तृतीय वा षष्ठ वा दशम वा लाभ भाव में गुरू से दृष्ट तथा अन्य ग्रहों से अदृष्ट और जन्मराशीश सप्तम वा दशम भाव में हो तो जातक—राजा होता है ॥ ५५ ॥

यशस्वी राजयोग ज्ञान

बिभ्रद्रश्मिकरालपूर्णपरिधिर्नक्षत्रसम्पालक-
स्तुङ्गांशे समवस्थितैश्च सकलैः प्रोद्वीक्षितो व्योमगैः।
कुर्याद्भूमिपतिं यशस्यचरितं हस्त्यश्वसैन्यं जगत्
योन्याच्छेषफणीन्द्रतुल्यमखिलोर्वीभारखिन्नः श्वसन् ॥५६॥

यदि कुण्डली में किरणों से परिपूर्ण परिधि धारण करने वाला नक्षत्रों पालक चन्द्र अपने उच्चांश (रा० १। अं० ३) में स्थित समस्त ग्रहों से दृष्ट हो तो जातक–यशस्वी, हाथी, घोड़ा, सेना, से युक्त संसार का राजा होता है जो कि श्वास लेती हुई भूमि अपने भार (वजन) से दुःखी की शेषराज तुल्य रक्षा करता है, अर्थात् समस्त भूमि का पालक होता है ॥ ५६ ॥

अधिक हाथी युक्त राजयोग ज्ञान

सुधामृणालोपमबिम्बशोभितः शशी नवांशे नलिनीप्रियस्य।
यदि क्षितीशो बहुहस्तिपूर्णः शुभाश्च केन्द्रेषु न पापयुक्ताः ॥५७॥

यदि कुण्डली में सफेद कमल के समान शोभित चन्द्रमा सूर्य के नवांश में हो तथा पापग्रहों से रहित शुभग्रह केन्द्र में हों तो जातक—अधिक हाथी वाला राजा होता है ॥ ५७ ॥

स्वकीर्ति से दिशाओं का शुभ्र कर्त्ता राजयोग ज्ञान

शशिबुधरुधिराङ्गैः स्वांशकस्थैर्न नीचै-
र्व्ययगृहसहजस्थैर्नापि सूर्यप्रविष्टैः।
तनयभवनसंस्थैर्नापि सूर्यप्रविष्टैः।
भवति मनुजनाथः कीर्तिशुक्लीकृताशः ॥५८॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा-बुध-भौम अपने-अपने नवांश में स्थित होकर द्वादश व तृतीय भाव में हों तथा नीच राशि में व सूर्य के साथ अस्त न हों और पञ्चम भाव में गुरु चन्द्रमा से युक्त हो तो जातक—अपनी कीर्ति से दिशाओं को शुभ्र करने वाला राजा होता है। अर्थात् चारों दिशाओं में प्रसिद्ध राजा होता है ।। ५८ ।।

शत्रुजेता राजयोग ज्ञान

नीचारिवर्गरहितैर्विहगैस्त्रिभिस्तु
स्वांशोपगैर्बलयुतैः शुभदृष्टिदृष्टैः ।
गोक्षीरशङ्खधवलो मृगलाञ्छनश्च
स्याद्यस्य जन्मनि स भूमिपतिर्जितारिः ।।५९।।

जिसकी कुण्डली में कोई भी तीन ग्रह नीच व शत्रु वर्ग के अतिरिक्त अपने नवांश में बली व शुभग्रहों से दृष्ट हों तथा गाय के दूध के व शङ्ख के समान शुभ्र चन्द्रमा हो तो जातक—शत्रुओं को पराजित करने वाला राजा होता है ।। ५९ ।।

सार्वभौम राजयोग ज्ञान

कुमुदगहनबन्धुं श्रेष्ठमंशं प्रपन्नं
यदि बलसमुपेतः पश्यति व्योमचारी ।
उदयभवनसंस्थः पापसंज्ञो न चैवं
भवति मनुजनाथः सार्वभौमः सुदेहः ।।६०।।

यदि कुण्डली में चन्द्रमा वर्गोत्तम नवांश में बली किसी ग्रह से दृष्ट हो तथा लग्न में पाप ग्रहों का अभाव हो तो जातक—सुन्दर देहधारी सार्वभौम राजा होता है ।।६०।।

अधिक हाथी युक्त राजयोग ज्ञान

जलचरराशिनवांशक इन्दौ तनुभवने शुभदः स्वकवर्गे ।
अशुभकरः खलु कण्टकहीनो भवति नृपो बहुवारणनाथः ।।६१।।

यदि कुण्डली में जलचर राशिस्थ नवांश में चन्द्रमा हो व अपने वर्ग में लग्नस्थ शुभग्रह हो और पाप ग्रहों से हीन केन्द्रस्थान हो तो जातक—अधिक हाथियों का स्वामी राजा होता है ।। ६१ ।।

अपूर्व यशस्वी राजयोग ज्ञान

वर्गोत्तमे हिमकरः सकलः स्थितोंऽशे
कुर्यान्महीपतिमपूर्वयशोभिरामम् ।
यस्याश्ववृन्दखुरघातरजोभिभूतो
भानुः प्रभातशशिनोऽनुकरोति रूपम् ।।६२।।

यदि कुण्डली में परिपूर्ण चन्द्रमा वर्गोत्तम नवांश में हो तो जातक—अपूर्व यश से शोभित राजा होता है। जिसके घोड़ा समुदाय के पाद आघात से उत्पन्न धूलि सूर्य को आच्छादित करके प्रातः कालीन चन्द्रमा के स्वरूप समान कर देती है।। ६२ ।।

सर्वग्रहकृते योगे चक्रवर्तीश्वरो भवेत् ।
एकैकेन तथा जाता मण्डलानामधीश्वराः ॥६३॥

यदि कुण्डली में सब ग्रह राजयोग कारक हों तो जातक चक्रवर्ती राजा होता है । एक ग्रह राजयोग कारक हो तो जिले का राजा होता है ॥ ६३ ॥

अन्य राजयोग ज्ञान

एकोऽपि विहगः कुर्यात्पञ्चमांशगतो नृपम् ।
समस्तबलसम्पन्नश्चक्रवर्तिनमेव च ॥६४॥

यदि कोई भी ग्रह कुण्डली में अपने पञ्चमांश में स्थित हो तो जातक राजा होता है । यदि पूर्ण बल से युक्त हो तो चक्रवर्ती राजा होता है ॥ ६४ ॥

यदि पश्यति चन्द्रमसं विबुधगुरुर्वृषभसंस्थितं[1] प्रसवे ।
अवति पृथिवीमुदग्रां स्फुरन्मणिद्योतितदिगन्ताम् ॥६५॥

यदि कुण्डली में वृष राशिस्थ चन्द्रमा, गुरू से दृष्ट हो तो जातक—शोभित मणि की कान्ति के समान दिशाओं को शोभित करने वाला समस्त पृथ्वी का पालक राजा होता है ॥ ६५ ॥

निषाद कुलोत्पन्न राजयोग ज्ञान

कुर्यात्तुङ्गे त्रिकोणे वा स्वराशिस्थो विलोकयन् ।
ग्रहस्तुषारकिरणं निषादमपि पार्थिवम् ॥६६॥

यदि कुण्डली में कोई भी ग्रह अपनी उच्च राशि में वा मूल त्रिकोण में अथवा अपनी राशि में स्थित होकर चन्द्रमा को देखता हो तो नीच कुलोत्पन्न जातक राजा होता है ॥ ६६ ॥

महाराज योग ज्ञान

स्वगृहे तृतीयभागे शशी स्थितः पार्थिवं यदा कुरुते ।
परिपूर्णबलः शुभदो यदि प्रसूतौ महाराजम् ॥६७॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा अपने द्रेष्काण में हो तो जातक राजा तथा इसी योग में यदि पूर्ण बली शुभग्रह हो तो महाराजा अर्थात् बड़ा राजा होता है ॥ ६७ ॥

अन्य राजयोग ज्ञान

स्वांशे दिवाकरो यस्य स्वक्षेत्रे च क्षपाकरः ।
स राजा गजदानौघशीकरोक्षिप्तभूतलः ॥६८॥

जिसकी कुण्डली में सूर्य अपने नवांश में व चन्द्रमा कर्क में हो तो जातक—हाथियों के मददान के कणों से सिक्त पृथ्वी का राजा होता है ॥ ६८ ॥

ग्रामीण राजयोग ज्ञान

लग्ने रवि[2]पुत्रसंयुते देवेज्येऽस्त[3]गते नवोदिते ।
दृष्टेऽसुरराजमन्त्रिणा ग्रामीणो नृपतिर्भवेदिह ॥६९॥

---

१. संस्थितः । २ सितयुक्ते । ३ गृहेन चोदिते ।

यदि कुण्डली में लग्न में शनि व सप्तमभाव में नवोदित गुरू हो और शनि व गुरू शुक्र से दृष्ट हों तो गाँव में उत्पन्न जातक राजा होता है ।। ६९ ।।

अन्य राजयोग ज्ञान

उदयेऽसुरमन्त्रिवरो गुरुभे गुरुदृष्टिपथं च गतः ।
कुरुते नियतं सनृपं यदि तुङ्गगतश्च बुधः ।।७०।।
शुक्रभास्करेन्दवो [1]भावमेकमाश्रिताः ।
जीवदृष्टमात्रकाः स्यात्तदा महीपतिः ।।७१।।

यदि कुण्डली में गुरू की राशि में शुक्र लग्न में गुरू से दृष्ट हो व बुध उच्च राशि में स्थित हो तो जातक अवश्य राजा होता है ।। ७० ।।

यदि कुण्डली में शुक्र-सूर्य-चन्द्रमा एक ही भाव में केवल गुरू से दृष्ट हों तो जातक राजा होता है ।। ७१ ।।

अधिक यशस्वी राजयोग ज्ञान

लग्नगाः सितशशाङ्कजभौमाः सप्तमे शशिनि वाक्पतियुक्ते ।
तिग्मरश्मितनयेन च दृष्टे जायते पृथुयशाः पृथिवीशः ।।७२।।

यदि कुण्डली में लग्न में शुक्र-चन्द्रमा-भौम हों तथा गुरू से युक्त चन्द्रमा सप्तम में शनि से दृष्ट हो तो जातक—अधिक यशवाला राजा होता है ।। ७२ ।।

नीच कुलोत्पन्न राजयोग ज्ञान

विबुधगुरुर्यदि भौमनवांशे रुधिरनिरीक्षितपूर्णबलश्च ।
जनयति कुत्सितजन्ममहीपं क्रियपरिसंस्थितकर्मगतोऽर्कः ।।७३।।
तृतीयगाः शुक्रशशाङ्कभास्कराः कुजोऽस्तसंस्थो नवमे बृहस्पतिः ।
गुणोत्तमो लग्नगृहांशकोद्गमो यदा तदा हीनकुलो महीपतिः ।।७४।।

यदि कुण्डली में गुरू भौम के नवांश में स्थित, पूर्ण बलवान् भौम से दृष्ट व दशमभाव में मेष का सूर्य हो तो जातक नीचकुल में उत्पन्न होने पर भी राजा होता है ।। ७३ ।।

यदि कुण्डली में शुक्र-चन्द्रमा-सूर्य तृतीय भाव में हों व सप्तम में भौम, नवमभाव में गुरू और लग्न में वर्गोत्तम नवांश हो तो जातक—नीचकुल में पैदा होने पर भी राजा होता है ।। ७४ ।।

देव तुल्य राजयोग ज्ञान

जीवो बुधो भृगुसुतोऽथ निशाकरो वा
धर्मे विशुद्धतनवः स्फुटरश्मिजालाः ।
मित्रैर्निरीक्षितयुता यदि सूतिकाले
कुर्वन्ति देवसदृशं नृपतिं महान्तम् ।।७५।।

---

[1] भाग ।

यदि कुण्डली में स्पष्ट किरणों के समूह से युत शुद्ध शरीर धारी गुरू वा बुध वा शुक्र-वा-चन्द्रमा वा ये चारो ग्रह नवमभाव में अपने मित्र ग्रहों से दृष्ट व युत हों तो जातक देवता के समान बड़ा राजा होता है ॥ ७५ ॥

अन्य राजयोग ज्ञान

तपोगृहं यस्य भवेत्तदुच्चकं ग्रहेण तेनाथ युतं निरीक्षितम् ।
ग्रहद्वयं स्वोच्चगतं यदा भवेत्तदा कुटुम्बी नियतं महीपतिः ॥७६॥

यदि कुण्डली में जिस ग्रह की उच्च राशि नवम भाव में हो वह ग्रह भी नवम में हो अथवा नवम राशि अपने उच्च ग्रह से दृष्ट हो तो तथा अन्य दो ग्रह उच्च राशि में हों तो जातक कुटुम्ब (परिवार) से युत अवश्य राजा होता है ॥ ७६ ॥

नीच कुलोत्पन्न राजयोग ज्ञान

सुतभवने [1]शशिदेवनमस्यौ भवनपतिप्रसमीक्षितदेहौ[2] ।
भृगुतनयो यदि मीनसमेतो भवति नृपः खलु कुत्सितवंशः ॥७७॥

यदि कुण्डली में पञ्चम भाव में चन्द्रमा व गुरू पंचमेश से दृष्ट हों तथा मीन राशि में शुक्र हो तो नीचकुलोत्पन्न जातक राजा होता है ॥ ७७ ॥

लक्ष्मीयुत राजयोग ज्ञान

चन्द्रस्त्रिपुष्करस्थः स्वोच्चे वचसां पतिः सलक्ष्मीकम् ।
उत्पादयति [3]स्वामिनमुत्तमपात्रं समग्रभुवः ॥७८॥

यदि कुण्डली में तृतीय या दशम भाव में चन्द्रमा हो तथा अपनी उच्च राशि कर्क में गुरू हो तो जातक—लक्ष्मी से युत समस्त भूमि का उत्तम वा उच्च मन का राजा होता है ॥ ७८ ॥

प्रसिद्ध राजयोग ज्ञान

केन्द्रस्वोच्चमुपेतः सुरमन्त्री दशमगो यदा शुक्रः ।
नूनं स भवति पुरुषः समस्तपृथ्वीश्वरः ख्यातः ॥७९॥

यदि कुण्डली में लग्न वा चतुर्थ वा सप्तम वा दशम भावस्थ गुरू उच्चराशि में हो तथा शुक्र दशम भाव में हो तो जातक अवश्य समस्त पृथ्वी का प्रसिद्ध राजा होता है ॥ ७९ ॥

ब्राह्मण कुलोत्पन्न राजयोग ज्ञान

स्वर्क्षे [4]शशी विपुलरश्मिशिखाकलापाः
स्वांशे स्थिता बुधबृहस्पतिदानवेज्याः ।
पातालगा दिनकरेण निरीक्षिताश्च
संसूचयन्ति नृपतिं [5]द्विजमुख्यजातम् ॥८०॥

---

[1] यदि देवनमस्यो । [2] देहः । [3] न्नतमनसं । [4] शनिः, यदा । [5] नृप ।

यदि कुण्डली में अपनी राशि में परिपूर्ण चन्द्रमा वा शनि हो तथा चतुर्थ भाव में अपने-अपने नवांशों में स्थित बुध-गुरू-शुक्र, सूर्य से दृष्ट हों तो ब्राह्मण कुल में उत्पन्न जातक राजा होता है ॥ ८० ॥

गाय पालक राजयोग ज्ञान

रविर्नभस्थः स्वत्रिकोणगोऽपि वा स्वराशिसंस्थाः सितजीवचन्द्राः ।
तृतीयषष्ठायगताश्च चन्द्रात्कुर्वन्ति गोपालमिह क्षितीशम् ॥८१॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा से अपनी दशमस्थ मूलत्रिकोण राशि में सूर्य हो अथवा तृतीय, षष्ठ, एकादश भावों में अपनी-अपनी राशि में शुक्र-गुरू-चन्द्रमा हों तो जातक गायों का पालन करने वाला राजा होता है ॥ ८१ ॥

सकलनृप पालक उत्तम राजयोग ज्ञान

सप्तमभवने सौम्या मित्रांशगताः सुहृद्भिरिह दृष्टाः ।
उच्चे कुजो यदि नृपः समस्तनृपपालकः श्रेष्ठः ॥८२॥

यदि कुण्डली में अपने मित्र के नवांश में शुभग्रह सप्तम भाव में हों तथा अपने मित्र ग्रहों से दृष्ट हों व उच्चराशि में भौम हो तो जातक समस्त राजाओं का पालन करने वाला उत्तम राजा होता है ॥ ८२ ॥

अन्य राजयोग ज्ञान

रविशशिबुधशुक्रैर्व्योम्नि[1] मित्रांशकस्थै-
र्न च रिपुभवनस्थैर्नाप्यदृश्यैर्न नीचैः ।
स तपसि भृगुपुत्रे भूपतिः स्यात्प्रयाणे
गजमदजलसेकैर्लीयते यस्य रेणुः ॥८३॥

यदि कुण्डली में अपने-अपने मित्र ग्रहों के नवांश में सूर्य-चन्द्रमा-बुध शुक्र, दशम भाव में हों तथा शत्रु के घर में व अस्त एवं नीच राशि में न हों और शुक्र नवम भाव में हो तो जातक राजा होता है। जिसके गमन में हाथियों के मदजल से सिक्त धूलि बन्द हो जाती है अर्थात् भूमि आर्द्र होकर धूलि उड़ना बन्द हो जाता है ॥ ८३ ॥

यशस्वी राजयोग ज्ञान

स्वोच्चे भानुः प्रकटितबलो व्योममध्ये सजीवः
शुक्रो धर्मे यदि [3]बलयुतः स्वं नवांशं प्रपन्नः ।
लग्ने वर्गे शुभगगनगो राजपुत्रेण दृष्टः
पृथ्वीपालो धवलितजगत्स्यात्सितैः स्वैर्यशोभिः ॥८४॥

यदि कुण्डली में बलवान् उच्चराशिस्थ सूर्य दशमभाव में हो व बली शुक्र स्वनवांशस्थ गुरू के साथ नवम भाव में हो एवं शुभ ग्रह का वर्ग लग्न में बुध से दृष्ट हो तो जातक—अपने शुभ्र यश से संसार को चमकाने वाला राजा होता है ॥ ८४ ॥

---

१ वक्त्रैः । २ विध्यते । ३ कुजयुतः ।

अन्यजात राजयोग ज्ञान

वृषे शशी लग्नगतः सुपूर्णः सितेन दृष्टो वणिजि स्थितेन ।
बुधोऽपि पातालगतो यदि स्यात्तदान्यजातो भवति क्षितीशः ।।८५।।

यदि कुण्डली में वृष राशिस्थ-परिपूर्ण चन्द्रमा लग्न में, तुला राशिस्थ शुक्र से दृष्ट हो तथा चतुर्थ भाव में बुध हो तो जातक—अन्य से उत्पन्न राजा होता है ।। ८५ ।।

कुत्सित राजयोग ज्ञान

क्षमासुतः स्वोच्चमुपाश्रितो [1]यदा रवीन्दुवाचस्पतिभिर्निरीक्षितः ।
भवेन्नरेन्द्रो यदि कुत्सितस्तदा समस्तपृथ्वीपरिरक्षणे क्षमः ।।८६।।

यदि कुण्डली में अपनी उच्च (मकर) राशि में भौम, सूर्य-चन्द्रमा-गुरु से दृष्ट हो तो जातक नीच राजा होता है, तब भी समस्त पृथ्वी की रक्षा करने में समर्थ होता है ।।८६।।

नीचकुलोत्पन्न राजयोग ज्ञान

[2]जायतेऽभिजिति यः शुभकर्मा भूपतिर्भवति सोऽतुलवीर्यः ।
नीचवेश्मकुलजोऽपि नरोऽस्मिन् राजयोग इति न [3]व्यपदेशः ।।८७।।

जो मनुष्य अभिजित नक्षत्र में उत्पन्न होता है वह शुभ कर्म करने वाला अगणित बलशाली राजा होता है । इस योग में नीचकुलोत्पन्न मनुष्य भी राजा होता है इसमें सन्देह नहीं है ।। ८७ ।।

शत्रुजेता राजयोग ज्ञान

गण्डान्त[4]विष्टिपरिघव्यतिपातजातस्ताराधिपः समुदये यदि कृत्तिकायाम् ।
क्रीडेत्कृपाणफलकाहितचण्डवेगप्रोत्थापिताहितशिरोगुलिकाभिरीशः ।।८८।।

यदि कुण्डली में लग्न में कृत्तिका नक्षत्रस्थ चन्द्रमा हो तथा गण्डान्त, भद्रा वा वैधृति या परिघ या व्यतिपात में जन्म हो तो जातक राजा होता है । वह राजा शत्रुओं के उग्र वेग से उत्थापित अपने कृपाण के फलक (धार) से शत्रुओं के मस्तकों को गोली बनाकर खेलता है अर्थात् शत्रुओं का संहार करता है ।। ८८ ।।

निराकुल राजयोग ज्ञान

बुधोदये सप्तमगे बृहस्पतौ चन्द्रे कुलीरे सुखराशिगेऽमले ।
वियद्गते भार्गवनन्दने ग्रहे प्रशास्ति पृथ्वीं मनुजो निराकुलः ।।८९।।

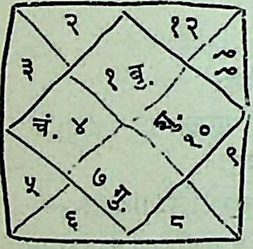

यदि कुण्डली में लग्न में बुध, सप्तमभाव में गुरु, चतुर्थ भाव में परिपूर्ण चन्द्रमा कर्क राशि में और दशमभाव में शुक्र हो तो जातक निर्भय (निश्चिन्त) होकर भूमण्डल का शासक (राजा) होता है ।। ८९ ।।

चक्र व समुद्र राजयोग ज्ञान

एकान्तरगैर्विहगैः षड्भिश्चक्रं क्षितीश्वरं कुर्यात् ।
अत्रैव शुभे लग्ने सकलमहीपालको नृपतिः ।।९०।।

---

१. बली । २. जगति । ३. सव्यपदेशः । ४. वैधृतगृह ।

अयमेव समुद्राख्यो द्वौ लग्ने यदि संस्थितौ।
[१]करोति भूभुजां नाथं सौम्यैः केन्द्रेषु संस्थितैः ॥९१॥

यदि कुण्डली में एक-एक राशि के अन्तर से ६ राशियों में सब ग्रह हों तो चक्र योग होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य राजा होता है। इसी ही योग में दो शुभ ग्रह लग्न में हों तो समस्त भूमि का पालन करने वाला राजा होता है। इसी पूर्वोक्त चक्र योग में ही दो कोई ग्रह लग्न में हो तथा सब शुभ ग्रह केन्द्र में हों तो समुद्र योग होता है। इसमें जातक राजाओं का राजा होता है॥ ९०-९१ ॥

अन्य राजयोग ज्ञान

निरन्तरं यदि भवनेषु षट्सु
ग्रहाः स्थिता उदयगृहात्समस्ताः।
स्वपङ्क्तिदन्नरपतिमेव कुर्यु-
श्चतुष्टयन्नरपतिमन्त्रिणं च ॥९२॥

यदि कुण्डली में लग्न से लगातार ६ राशियों में सब ग्रह हों तो जातक अपनी पंक्ति (राज पंक्ति) को देने वाला राजा होता है। यदि लग्न से लगातार चार राशियों में सब ग्रह हों तो जातक राजा का सचिव होता है॥ ९२ ॥

स्पष्टार्थ चक्र

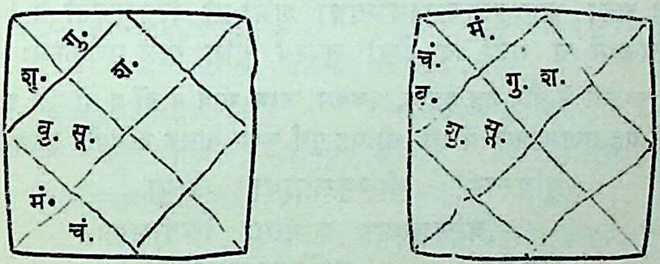

अधिक सम्पत्तिवान् राजयोग ज्ञान

सुतसुखदुश्चिक्यगता यदि कर्मणि कीर्तयन्ति यवनाद्याः।
बन्धुसुतार्थगजाढ्यो बहुभृत्यो जायते क्षितिपः ॥९३॥

यदि कुण्डली में पञ्चम, चतुर्थ, तृतीय व दशम भाव में सब ग्रह हों तो जातक—बन्धु-पुत्र-धन-हाथी-अधिक नौकरों से युक्त राजा होता है ऐसा यवनादि आचार्यों का कथन है॥ ९३ ॥

---

[१] स करोति भुवो।

नगर नामक राजयोग ज्ञान

कर्मास्तजलहोरासु ग्रहाः सर्वे प्रतिष्ठिताः ।
कुर्वन्ति नगरं नाम यत्र स्यात्पृथिवीपतिः ।।९४।।

यदि कुण्डली में दशम, सप्तम, चतुर्थ व लग्न में समस्त ग्रह हों तो नगर नाम का योग होता है । इसमें उत्पन्न मनुष्य राजा होता है ।। ९४ ।।

प्रशान्त राजयोग ज्ञान

सुखतनुमदगाः शुभाः समग्राः कुजरविरविजास्त्रिधर्मलाभसंस्थाः ।
यदि भवति महीपतिः प्रशान्तो यवनपतिकृतो ह्ययं महीपयोगः ।।९५।।

यदि कुण्डली में चतुर्थ, लग्न, सप्तम भाव में सब शुभ ग्रह हों तथा भौम, सूर्य, शनि, तृतीय, नवम व एकादश भाव में हों तो जातक—शान्त चित्त वाला राजा होता है । यह राज योग यवन स्वामी ने कहा है ।। ९५ ।।

कलश संज्ञित राजयोग ज्ञान

लाभधर्मस्थिताः सौम्याः पापाः कर्मणि संस्थिताः ।
नृपतीनामयं योगो भवेत्कलशसंज्ञितः ।।९६।।

यदि कुण्डली में एकादश व नवम भाव में समस्त शुभ ग्रह हों तथा समस्त पापग्रह दशम भाव में हों तो कलश नामक राज योग होता है ।। ९६ ।।

पूर्ण कुम्भ नामक राजयोग ज्ञान

त्रयो ग्रहा भ्रातृसुतायसंस्थास्तथा शुभौ द्वौ रिपुसङ्गतौ च ।
कलत्रलग्नं च गतौ च शेषौ नृपस्य योगः खलु पूर्णकुम्भः ।।९७।।

यदि कुण्डली में तीन ग्रह तृतीय, पञ्चम, लाभ भाव में हों व दो शुभ ग्रह षष्ठ भाव में, शेष दो ग्रह सप्तम भाव में हों तो यह पूर्ण कुम्भ नामक राजयोग होता है ।।९७।।

सुविस्तरं नीचकुलोद्भवा मया
विचित्ररूपाः कथिताः क्षितीश्वराः ।
अतःपरं पार्थिववंशजन्मनां
भवन्ति योगा मुनिभिः प्रकीर्तिताः ।।९८।।

अभी तक मैंने विस्तार पूर्वक नीचकुलोत्पन्न अनेक प्रकार के राजयोगों का वर्णन किया है । अब आगे ऋषियों के कहे हुए राज वंशोत्पन्न राजयोगों का वर्णन करता हूँ ।। ९८ ।।

सब संसार से वन्दित राजयोग ज्ञान

सिंहोदये दिनकरो मृगलाञ्छनोऽजे[१] कुम्भस्थितो रविसुतः स्वगृहे सुरेज्यः ।
स्वोच्चेऽपि भूमितनयः पृथिवीश्वरस्य जन्मप्रदः सकललोकनमस्कृतस्य ।।९९।।

---

[१] वा ।

स्पष्टार्थ चक्र

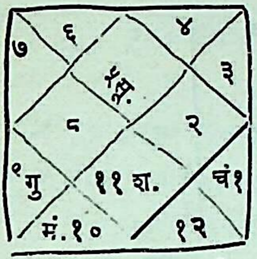

यदि कुण्डली में सिंहराशिस्थ लग्न में सूर्य, मेष राशि में चन्द्रमा, कुम्भ में शनि व अपनी राशि में गुरु, और उच्च (मकर) राशि में भौम हो तो जातक—समस्त संसार से वन्दित राजा होता है ॥ ९९ ॥

वृ० जा० में कहा है—'लेखास्थेऽर्केऽजेन्दौ लग्ने भौमे स्वोच्चे कुम्भे मन्दे ।
चापप्राप्ते जीवं राज्ञः पुत्रं विन्द्यात्पृथ्वीनाथम्' (११ अ० १४ श्लो०) ॥९९॥

स्थिर लक्ष्मीवान् राजयोग ज्ञान

शुभे लग्नं याते बलवति तथा धर्मराशिं क्रमेण
[1]सर्वैः शेषैर्लग्नं धनगृहमथ त्र्यायषट्कर्मगैश्च ।
महीपालः श्रीमान्भवति नियतं यस्य मातङ्गसङ्घाः
प्रयाणे मेघानां स्रुतमदजलैर्भ्रान्तिमुत्पादयन्ति ॥१००॥

यदि कुण्डली में बलवान् एक शुभ ग्रह लग्न में हो तथा अन्य शुभ ग्रह नवम में, और अवशिष्ट ग्रह लग्न, द्वितीय, तृतीय, एकादश, षष्ठ व दशम भाव में हों तो जातक स्थिर लक्ष्मीवान् राजा होता है। जिसके हाथी समुदाय के गमन में उनके कानों की मद जल वृष्टि से लोक में मेघ का भ्रम उत्पन्न हो जाता है ॥ १०० ॥

वृ० जा० में कहा है—'सौम्ये वीर्ययुते तनुयुक्ते वीर्याढ्ये च शुभे शुभयाते ।
धर्मार्थोपचयेस्ववशेषैर्धर्मात्मा नृपजः पृथिवीशः' (११ अ० १६ श्लो०) ॥१००॥

अधिक लक्ष्मीवान् राजयोग ज्ञान

[2]दनुजपगुरुर्बन्धुस्थाने स्ववेश्मगतो यदा
तुहिनकिरणः सम्पूर्णाङ्गस्तपः समवस्थितः ।
त्रितनुभवभप्राप्ताः शेषा ग्रहा यदि भूपतिः
भवति धृतिमान्स्फीतश्रीकस्तया बहुवाहनः ॥१०१॥

यदि कुण्डली में स्वराशिस्थ शुक्र चतुर्थ भाव में तथा परिपूर्ण चन्द्रमा नवम भाव में और अवशिष्ट ग्रह तृतीय, लग्न, एकादश भाव में हों तो जातक—धैर्यवान् अधिक वाहन व लक्ष्मी से युक्त राजा होता है ॥ १०१ ॥

वृ० जा० में कहा है—'स्वर्क्षे शुक्रे पातालस्थे धर्मस्थाने प्राप्ते चन्द्रे ।
दुश्चिक्याङ्गप्राप्तिप्राप्तैः शेषैर्जातः स्वामी भूमेः' (११ अ० १५ श्लो) ॥१०१॥

विशेष—यह योग कुम्भ लग्न व कर्क लग्न में ही हो सकता है ॥ १०१ ॥

चन्द्रांशुतुल्य यशस्वी राजयोग ज्ञान

स्वोच्चोदये कृतपदः कुमुदस्य बन्धुर्जीवोऽर्थगो वणिजि दानवपूजितश्च ।
[3]कन्याजसिंहगृहगा बुधभौमसूर्याश्चन्द्रांशुनिर्मलयशा भवति क्षितीशः ॥१०२॥

---

[1] शुभै । [2] सुरपतिगुरु, [3] शेषाश्च मत्स्युगले यदि चेन्द्रहेन्द्राः ।

यदि कुण्डली में वृष लग्न में चन्द्रमा, धन भाव (मिथुन) में गुरू और तुला राशि में शुक्र, कन्या में बुध, मेष में भौम व सिंह राशि में सूर्य, पाठान्तर से शेष ग्रह मीन राशि में हों तो जातक--चन्द्रमा की किरणों के समान निर्मल (दोष होन) यश वाला राजा होता है ।। १०२ ।।

स्पष्टार्थ चक्र

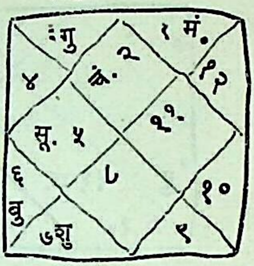

बृ० जा० में इसके कुछ विपरीत कहा है--'वृषोदये मूर्तिधनारिलाभगैः शशाङ्क-जीवार्कसुतापरैर्न्टपः' (११ अ० १७ श्लो) ।।१०२।।

विशेष--बृहज्जातक में षष्ठ भाव में शनि की सत्ता मानी है। इस ग्रन्थ में शुक्र की स्थिति का वर्णन है ।। १०२ ।।

अपने गुणों से विख्यात राजयोग ज्ञान

नक्षत्रनाथसहितः सविता नभःस्थः सौरिर्विलग्नभवने हिबुके सुरेज्यः।
देवारिपूज्यबुधभूमिसुतैः सलाभैः ख्यातो महीपतिरिह स्वगुणैर्नरः स्यात् ।१०३।

यदि कुण्डली में चन्द्रमा के साथ सूर्य दशम भाव में हो तथा लग्न में शनि व चतुर्थ में गुरू एवं एकादश भाव में शुक्र, बुध, भौम हों तो जातक--अपने गुणों से प्रसिद्ध राजा होता है ।।१०३।।

बृ० जा० में कहा है--'सुखे गुरौ खे शशितीक्ष्णदीधिती यमोदये लाभगतैर्न्टपोऽपरैः' (११ अ० १७ श्लो०) ।।१०३।।

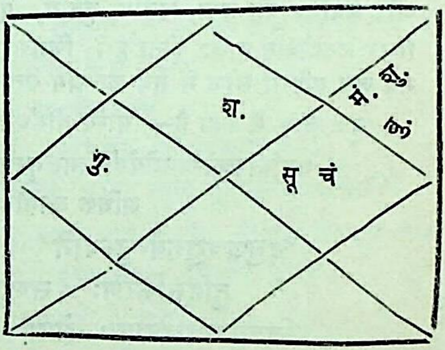

अन्य राजयोग ज्ञान

मृगराशिं परित्यज्य स्थितो लग्ने बृहस्पतिः।
करोत्यवश्यं नृपतिं मत्तेभपरिवारितम् ।।१०४।।

यदि कुण्डली में मकर राशि को छोड़कर लग्न में गुरू हो तो जातक--राजकुल में पैदा होने पर मतवाले हाथियों से युक्त राजा व अन्यकुलों में जायमान धनवान् होता है ।। १०४ ।।

अधिक यशस्वी राजयोग ज्ञान

लग्ने भौमो रविजसहितस्तीक्ष्णरश्मिः खमध्ये
वाचां स्वामी मदनगृहगो भार्गवो धर्मसंस्थः।

आये हेम्नः शिशिरकिरणो बन्धुराशिं प्रपन्नो
यद्येवं स्याद्विपु[1]लयशसो जन्म भूपालकस्य ॥१०५॥

स्पष्टार्थ चक्र

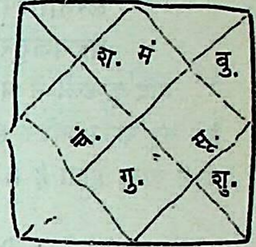

यदि कुण्डली में शनि के साथ भौम लग्न में हो, सूर्य दशम भाव में, गुरू सप्तम भाव में, शुक्र नवम भाव में, बुध एकादश भाव में और चन्द्रमा चतुर्थ भाव में हो तो जातक राजवंश में पैदा होने पर अधिक यशवाला राजा व अन्य कुल में उत्पन्न धनी होता है ॥ १०५ ॥

वृ० जा० में कहा है--'वक्रासितौ शशिसुरेज्यसितार्कसौम्या होरासुखास्तशुभखाप्तिगताः प्रजेशम्' (११ अ० १८ श्लो) ॥ १०५ ॥

अन्य राजयोग ज्ञान

न्यूनोऽपि [2]कुमुदबन्धुः स्वोच्चस्थः[3] पार्थिवं करोति नरम् ।
किं पुनरखण्डमण्डलकरनिकरप्रकटितदिगन्तः ॥१०६॥

यदि कुण्डली में क्षीण भी चन्द्रमा उच्च राशि में हो तो जातक को राजा बना देता है । यदि परिपूर्ण चन्द्रमा उच्चस्थ हो तो कहना हो क्या है ॥१०६॥

पराक्रम धन वाहन से युक्त राजयोग ज्ञान

लग्नं विहाय केन्द्रे सकलकलापूरितो निशानाथः ।
विदधाति महीपालं [4]विक्रमधनवाहनोपेतम् ॥१०७॥

यदि कुण्डली में परिपूर्ण चन्द्रमा लग्न को छोड़कर अन्य केन्द्रों (४।७।१०) में हो तो राजकुलोत्पन्न जातक—पराक्रम-धन-सवारी से युत राजा व अन्यवंशोत्पन्न धनी होता है ॥ १०७ ॥

सर्पराज के तुल्य प्रतापी राजयोग ज्ञान

यदि पश्यति दानवार्चितं वचसामधिपस्तदा भवेत् ।
नृपतिर्बहुनागनायको भुजगेन्द्र इव प्रतापवान् ॥१०८॥

यदि कुण्डली में शुक्र, गुरू से दृष्ट हो तो जातक—सर्पराज के समान प्रतापी व अधिक नागों (सर्पों) का नेता राजा होता है ॥ १०८ ॥

राजराजेश्वर राजयोग ज्ञान

दिवौकसां पतेर्मन्त्री कुर्यात्पश्यन्बुधं [5]नरम् ।
शिरोभिः शासनं तस्य धारयन्ति नृपाः सदा ॥१०९॥

---

१ विमल । २ क्षोणोऽपि । ३ स्वोच्चगतः । ४ वारणो । ५ यदा ।

यदि कुण्डली में बुध, गुरू से दृष्ट हो तो जातक राजा होता है। उसके शासन (आदेश) को राजा लोग मस्तक से धारण करते हैं॥ १०९॥

शत्रुजित राजयोग ज्ञान

लग्नाधिपतिः स्वोच्चे पश्यन्मृगलाञ्छनं नृपं कुरुते।
बहुगजतुरगबलौघैः क्षपितविपक्षं महाविभवम्॥११०॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा, उच्चस्थ लग्न स्वामी से दृष्ट हो तो जातक राजा होता है। वह राजा अधिक हाथी, घोड़ाओं के बलों से सम्पत्ति शाली शत्रुओं को पराजित करने वाला होता है॥ ११०॥

अन्य राजयोग ज्ञान

इन्दुः स्वोच्चे पश्यन्करोति बुधभार्गवौ[1] नरं नृपतिम्।
प्रणतारिपक्षमुच्छ्रितयशसं सौभाग्यवन्तं च॥१११॥

यदि कुण्डली में बुध व शुक्र, उच्चस्थ चन्द्रमा से दृष्ट हों तो जातक--शत्रुओं को जीतने वाला, अधिक यशस्वी व सौभाग्यवान् राजा होता है॥ १११॥

लक्ष्मीपति राजयोग ज्ञान

अधिमित्रांशगश्चन्द्रो दृष्टो दानवमन्त्रिणा।
अनिशं कुरुते लक्ष्मीस्वामिनं भूपतिं नरम्॥११२॥

यदि कुण्डली में अधिमित्रग्रह नवांशस्थ चन्द्रमा, शुक्र से दृष्ट हो तो जातक—निरन्तर लक्ष्मी का पति राजा होता है॥ ११२॥

अन्य राजयोग ज्ञान

स्वांशेऽधिमित्रभागे वा गुरुणा यदि दृश्यते।
शशी महीपतिं कुर्याद्दिवसे नात्र संशयः॥११३॥

यदि कुण्डली में जातक का जन्म दिन में हो व चन्द्रमा अपने नवांश में वा अधिमित्र के नवांश में स्थित होकर गुरू से दृष्ट हो तो जातक राजा होता है॥ ११३॥

ब्राह्मण कुल में राजयोग ज्ञान

जन्माधिपतिः केन्द्रे बलपरिपूर्णः करोति परमर्द्धिम्।
ब्राह्मणकुलेऽपि नृपतिं किं पुनरवनीशसंभूतम्॥११४॥

यदि कुण्डली में बलवान् जन्म राशीश केन्द्र में हो तो जातक ब्राह्मण कुल में भी उत्पन्न होकर अधिक सम्पत्तिशाली राजा होता है फिर राजवंशोत्पन्न की बात ही क्या है॥ ११४॥

अंग देशाधिप योग ज्ञान

रविरप्यधिमित्रस्थो यदि चन्द्रसमीक्षितः।
अङ्गदेशाधिपं कुर्याद्धर्मार्थसहितं नृपम्॥११५॥

---

[1] गुरुभार्गवौ।

यदि कुंडली में अधिमित्र राशिस्थ सूर्य, चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक--धर्म व धन से युक्त अंग (उड़ीसा) देश का राजा होता है ।। ११५ ।।

मगधाधिप योग ज्ञान

उच्चस्थः शशितनयः कुमुदाकरबन्धुना च [1]समधिगतः ।
जनयति मगधाधिपतिं गजमदगन्धेन वासितदिगन्तम् ।।११६।।

यदि कुंडली में चन्द्रमा के साथ बुध उच्चराशि में हो तो जातक—हाथियों के मदजल गन्ध से दिशाओं को व्याप्त करने वाला मगध देश का राजा होता है ।।११६।।

शत्रुदमन राजयोग ज्ञान

प्रधानबलसंयुक्तः सम्पूर्णः शशलाञ्छनः ।
एकोऽपि कुरुते जातं नराधिपमरिंदमम् ।।११७।।

यदि कुण्डली में एक भी सम्पूर्ण (पूर्णिमा) चन्द्रमा प्रधान बल से युक्त अर्थात् उच्चस्थ होकर स्थित हो तो जातक शत्रुओं का विनाश करने वाला राजा होता है ।।११७।।

गोप फुलोत्पन्न राजयोग ज्ञान

केन्द्रे विलग्ननाथः श्रेष्ठबलो मानवाधिपं कुरुते ।
गोपालकुलेऽपि नरं किं पुनरवनीश्वराणां च ।।११८।।

यदि कुण्डली में उत्तम (उच्च) बलस्थ लग्नेश केन्द्र (१।४।७।१०) में हो तो जातक गोपकुल में भी जन्म लेकर राजा होता है, फिर राजकुलोत्पन्न की बात ही क्या है ।।११८।।

समस्त भूमण्डल का स्वामी, राजयोग ज्ञान

कर्कटसंस्थः केन्द्रे बृहस्पतिर्द[2]शमधामगः शशिनः ।
चतुरुदधिमेखलायाः स्वामीभूमेर्भवति जातः ।।११९।।

यदि कुण्डली में चन्द्रमा से दशम केन्द्र में कर्कस्थ गुरू हो तो जातक—चारों ओर समुद्र से बँधी हुई भूमि का राजा होता है ।। ११७ ।।

अन्य राजयोग ज्ञान

मेषे सहस्ररश्मिः सह शशिना संस्थितः करोतीशम् ।
केरलकर्णाटकान्ध्रद्रविडानां चोलकस्यापि ।।१२०।।

यदि कुण्डली में चन्द्रमा के साथ उच्चस्थ सूर्य हो तो जातक—केरल-कर्णाटक-आन्ध्र, द्रविण देशों का तथा चोल प्रदेश का भी राजा होता है ।। १२० ।।

काश्मीर के राजा का योग ज्ञान

उच्चस्थस्त्रिदशगुरुः कैरववनबन्धुसङ्गमं प्राप्तः ।
काश्मीरमण्डलभुवां करोति पुरुषाधिपमवश्यम् ।।१२१।।

यदि कुण्डली में चन्द्रमा के साथ उच्चस्थ गुरू हो तो जातक—काश्मीर मण्डल की भूमि का अवश्य राजा होता है ।। १२१ ।।

---

१ सहितः. २ मृंगगतश्च सितः.

अन्य राजयोग ज्ञान

तुङ्गायस्वगृहोदयकण्टकनवमेषु यस्य शुक्रगुरू ।
सोऽवश्यं भवति नरो राजांश[1]समुद्भवो नृपतिः ॥१२२॥

यदि कुण्डली में शुक्र व गुरू उच्च राशिस्थ होकर एकादश 'धन' लग्न, चतुर्थ, सप्तम, दशम या नवम भाव में हों तो जातक—राजकुलों में उत्पन्न होने पर अवश्य राजा होता है ॥ १२२ ॥

अन्य राजयोग ज्ञान

दिक्स्थानकालादिबलैरुदाराः शुभाः पुनः केन्द्रमुपागताश्च ।
कुर्वन्ति पापैरविमिश्रचाराः पृथ्वीभुजं त्रिप्रभृतिग्रहेन्द्राः ॥१२३॥

यदि कुण्डली में तीन या चार शुभग्रह दिक्-स्थान-काल आदि बलों से युत होकर केन्द्र में स्थित हों तथा पापग्रहों से अयुक्त हों तो जातक राजा होता है ॥ १२३ ॥

तीन ओर समुद्र से वेष्टित भूमि का राजयोग ज्ञान

रवेर्द्वितीये बुधजीवभार्गवा न चाशुभैर्दृष्टयुता न[2] वार्कगाः ।
स्फुरत्करौघस्फुटपिञ्जरीकृता नरं प्रकुर्युस्त्रिसमुद्रपालकम् ॥१२४॥

यदि कुण्डली में शोभित किरण समुदाय से स्फुट बिम्ब वाले बुध-गुरू-शुक्र, सूर्य से द्वितीय राशि में पापग्रहों से अदृष्ट व पृथक् एव अस्त न हों तो जातक—तीन ओर समुद्र से वेष्टित भूमि का राजा होता है ॥ १२४ ॥

प्रसिद्ध कीर्तिमान् राजयोग ज्ञान

कुन्दाब्जकाशधवलः परिपूर्णमूर्ति-
र्जन्माधिपेन [3]बलिना शुभदेन दृष्टः ।
स्त्रीमानभङ्गनिपुणं दयितं क्षपायाः
प्रख्यातकीर्तिसुनयं कुरुते नरेन्द्रम् ॥१२५॥

यदि कुण्डली में कुन्द व शुभ्र कमल के समान सफेद परिपूर्ण चन्द्र, जन्मराशीश एवं बलवान् शुभग्रह से दृष्ट हो तो जातक—स्त्रियों के मानभंग करने में चतुर, प्रख्यात (प्रसिद्ध) कीर्तिमान् व सुन्दर नीति वाला राजा होता है ॥ १२५ ॥

शत्रुजित राजयोग ज्ञान

देवमन्त्री कुटुम्बस्थो भार्गवेण समन्वितः ।
जनयेद्वसुधापालं निर्जितारातिमण्डलम् ॥१२६॥

यदि कुण्डली में द्वितीय भाव में शुक्र से युत गुरू हो तो जातक—शत्रुओं को जीतने वाला राजा होता है ॥ १२६ ॥

कारकयोगे जाता भवन्ति पृथ्वीभुजो नरास्तेषाम् ।
गजतुरगपत्तिविचलितर[4]जोवितानं भवेद्गगनम् ॥१२७॥

---

[1] राजांग. [2] चार्कं. [3] कविना. [4] पांसु ।

पूर्वकथित कारक योगों में जन्म लेने वाले राजवंशोत्पन्न राजा होते है। जिनकी हाथी घोड़ों की सेना के चलने पर आकाश धूलि से आच्छादित हो जाता है ॥१२७॥

अन्य राजयोग ज्ञान

कुजे विलग्ने तरणेश्च नन्दने
रसातले शुक्रबृहस्पतीन्दुजाः।
मृगोदये मन्दनवांशकस्थिते
रसातलेशो भवतीह पार्थिवः ॥१२८॥

यदि कुण्डली में लग्न में भौम व शनि हों व चतुर्थ भाव में शुक्र, गुरु, बुध हों तो जातक राजा होता है। वा शनि नवांशस्थ मकर लग्न में चतुर्थेश हो तो भी राजा होता है ॥ १२८ ॥

स्पष्टार्थ चक्र

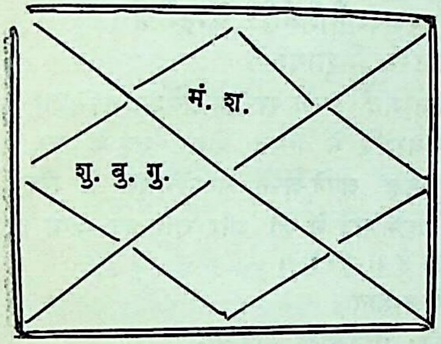

स्पष्टार्थ चक्र

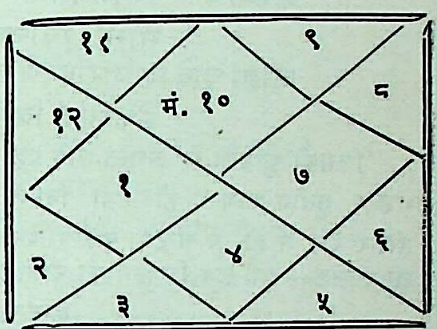

द्वीपाधिप योग ज्ञान

स्वोच्चे गुरुस्तनुगतः स्वगृहे शशाङ्कः
शुक्रो झषे परममुच्चमितोऽसितश्च।
मेषे तथैव भगवान्सविता कुजश्च[1]
द्वीपाधिपो यदि भवेन्नृपतिः प्रजातः ॥१२९॥

स्पष्टार्थ चक्र

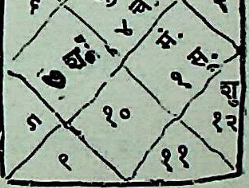

यदि कुण्डली में कर्क लग्नस्थ गुरु चन्द्रमा से युत हो व मीन राशि में शुक्र, परमोच्च (रा० अ० ६।२०) में शनि, मेष राशि में सूर्य व भौम हों तो जातक एक द्वीप का राजा होता है ॥ १२९ ॥

---

[1] च स्वर्गाधिपो; च वर्गाधिपो।

अन्य राजयोग ज्ञान

शक्रेड्यःससितः शुचिस्तिमियुगे स्वोच्चे च पूर्णः शशी
दृष्टस्तीव्रवि[1]लोचनेन दिनकृन्मेषे यदासौ नृपः ।
सेनायाश्चलनेन रेणुपटलैर्यस्य प्रनष्टे रवा-
वस्तभ्रान्तिसमाकुला कमलिनी सङ्कोचमागच्छति ॥१३०॥

यदि कुण्डली में पवित्रात्मा गुरू, शुक्र के साथ मीन में हो व परिपूर्ण चन्द्रमा अपनी उच्च (वृष) राशि में हो एवं मेषस्थ सूर्य पापग्रह से दृष्ट हो तो जातक—राजा होता है। जिसकी सेना के चलने से धूलि उड़कर सूर्य के प्रकाश को नष्ट कर देती है। इसलिए सूर्यास्त भ्रम से व्याकुल होकर कमलिनी संकोच को प्राप्त हो जाती है अर्थात् खिली हुई भ्रम से बन्द हो जाती है ॥ १२० ॥

त्रिभुवनाधिप राजयोग ज्ञान

क्रूरैर्नीचै रिपुभवनगैः षष्ठदुश्चिक्यगैर्वा
सौम्यैः स्वोच्चं परमुपगतैर्निर्मलैः केन्द्रगैश्च ।
आज्ञां याते शिशिरकिरणे कर्कटस्थे निशाया-
मेकच्छत्रं त्रिभुवनमिदं यस्य स क्षत्रियेशः ॥१३१॥

जिसकी कुण्डली में समस्त पाप ग्रह नीचराशि में स्थित होकर शत्रु के घर में षष्ठ व तृतीय भाव में हों तथा निर्मल शुभग्रह अपने-अपने परमोच्चांश में स्थित होकर केन्द्र में हों व चन्द्रमा कर्क राशिस्थ दशमभाव में हो और रात्रि का जन्म हो तो जातक—एक छत्र त्रिभुवन का राजा होता है ॥ १३१ ॥

अन्य राजयोग ज्ञान

होरालेखामुपेतः स्फुटकरनिकरैः पूरिताङ्ग सुरेज्य-
श्चन्द्रः शुक्लार्धदेहो भवभवनगतः स्वेन पुत्रेण दृष्टः ।
चन्द्राद्भानुर्द्वितीये[2] यदि भवति तदा नैव दृष्टः कुजेन
प्रायो[3] जायेत [4]भूभृद्बहुगजतुरगक्षुण्णभूपृष्ठपीठः ॥१३२॥

यदि कुण्डली में स्पष्ट किरण समूहों से परिपूर्ण गुरू लग्न में व अर्द्ध शुल्क देहधारी चन्द्रमा एकादश भाव में बुध से दृष्ट हो तथा चन्द्रमा से द्वितीय भाव में सूर्य, भौम की दृष्टि से रहित हो तो जातक—प्रायः अधिक हाथी घोड़ों से युत भूमि का राजा होता है ॥ १३२ ॥

शत्रुजित राजयोग ज्ञान

रविशशिकुजैर्मेषे लग्ने सितार्किबुधैर्वृषे
धनुषि नवमे देवेज्ये च स्वभांशमुपागते ।
रविरपि यदि स्वोच्चे [5]वर्गे प्रधानबलोदयो
भवति नृपतिः सिद्धाज्ञातो[6] हतारिरणोद्भवः ॥१३३॥

---

१ खगेन चैव । २ भानुस्तृतीये । ३ पाता । ४ भूमे । ५ ६ विद्वान्‌जातो. ।

यदि कुण्डली में मेष लग्न में सूर्य, चन्द्रमा, भौम हों तथा वृष राशि में शुक्र, शनि, बुध हों व अपने नवांश में धनुराशिस्थ गुरू हो एवं सूर्य भी उच्च वर्ग में प्रधान अंश (परमोच्चांश) में हो तो जातक—सिद्ध आज्ञा से युद्ध में शत्रुओं को पराजित करने वाला वा विद्वान् शत्रुजित राजा होता है ॥ १३३ ॥

विमल कीर्तिमान् राजयोग ज्ञान

सितशशिसुतजीवैः पञ्चमस्थैर्नभोगै
रविरपि रिपुराशौ स्वोच्चगे भूमिपुत्रे ।
तपसि च रविपुत्रे जायते पार्थिवेन्द्रः
प्रथितविमलकीर्तिर्दानधर्मप्रतापैः ॥१३४॥

यदि कुण्डली में शुक्र, बुध, गुरू पञ्चमभाव में, सूर्य भी षष्ठ भाव में व अपनी उच्चराशि में भौम ओर नवम में शनि हो तो जातक—दान-धर्म व पराक्रम से प्रसिद्ध, शुभ कीर्तिवाला राजा होता है ॥ १३४ ॥

प्रसिद्ध यशस्वी राजयोग ज्ञान

त्रिदशगुरो रविर्हिमकरस्य भृगोस्तनयो
रवितनयः कुजस्य खलु दृष्टिपथं च गतः ।
भवति विलग्नगो यदि चरोदयराशिगतः
प्रथितयशा भवेत्क्षितिपतिः क्षपितारिगणः ॥१३५॥

यदि कुंडली में चर राशि का लग्न हो तथा गुरू से, सूर्य, चन्द्रमा से शुक्र व भौम से शनि दृष्ट हो तो जातक शत्रुओं को जीतने वाला प्रसिद्ध यशस्वी राजा होता है ॥१३५॥

स्वभुज विजयी राजयोग ज्ञान

वुधः कन्यालग्ने सुरपतिगुरुश्चैव तिमिगः
स्थितः क्षोणीपुत्रः प्रथमभवने[1] वीर्यसहितः ।
शनिः शत्रुस्थाने त्रिदशरिपुपूज्यश्च हिबुके
यदैवं स्यात्सूतौ स्वभुजविजयी भूपतिरिह ॥१३६॥ ।

यदि कंडलो में कन्या लग्न में बुध हो तथा मीन राशि में गुरू व मेष राशि में बली भौम, शनि षष्ठ भाव में, शुक्र चतुर्थ भाव में हो तो जातक अपने भुज (हाथ) बल से विजयी होने वाला राजा होता है ॥ १३६ ॥

स्पष्टार्थचक्र

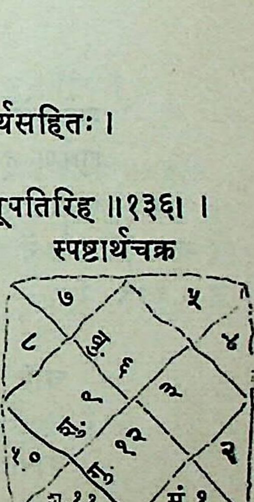

---

[1] प्रसव समये ।

प्रसिद्ध राजयोग ज्ञान

यमे विलग्ने मकरप्रतिष्ठिते
दिवाकरे द्यूनगते सितेऽष्टमे ।
कुजेऽलिगे कर्कटगे निशाकरे
भवेत्प्रसिद्धो जगतीश्वरो नृपः ॥१३७॥

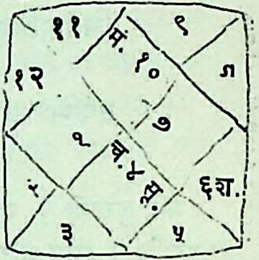

यदि कुंडली में मकर लग्न में शनि, सप्तम भाव में सूर्य, अष्टम भाव में शुक्र, वृश्चिक राशि में भौम, कर्क राशि में चन्द्रमा हो तो जातक जगत् का स्वामी प्रसिद्ध राजा होता है ॥ १३७ ॥

अस्थिर स्वभावी राजयोग ज्ञान

मृगोदये भूमिसुते सुनिर्मले शनैश्चरे धर्मगृहे व्यवस्थिते ।
दिवाकरे सप्तमगे सहेन्दुना चलस्वभावो नृपतिः प्रजायते ॥१३८॥

स्पष्टार्थ चक्र

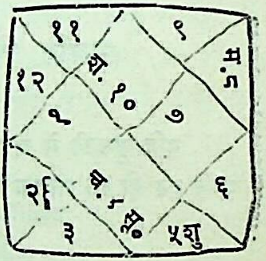

यदि कुंडली में मकर लग्न में निर्मल भौम, नवम भाव में शनि, सप्तम भाव में चन्द्रमा के साथ सूर्य हो तो जातक अस्थिर स्वभाव का राजा होता है ॥ १३८ ॥

अजेय राजयोग ज्ञान

शनैश्चरे लग्नगते सचन्द्रे बृहस्पतौ सप्तमराशिगे च ।
शुक्रेण दृष्टे शशिजे स्वतुङ्गे जायेत पृथ्वीपतिरप्रधृष्यः ॥१३९॥

यदि कुण्डली में लग्न में शनि, सप्तम भाव में चन्द्रमा के साथ गुरू, अपनी उच्चस्थ (कन्या) राशि में बुध शुक्र से दृष्ट हो तो जातक शत्रुओं से अजेय राजा होता है ॥ १३९ ।

द्विजदेवभक्त राजयोग ज्ञान

चापे[1] भवेत्सुरगुरुर्हितदृष्टिशुद्धो
लग्ने सुरारिर्दयितः शशिनि स्वराशौ ।
वापीतडागसुरवेश्मकरो नरोऽत्र
जायेत मानवपतिर्द्विजदेवभक्तः ॥१४०॥

---

[1] पापाभवे सुरपुरोहितदृष्टिशुद्धा ।

यदि कुण्डली में मित्रग्रह से दृष्ट गुरू धनु राशि में, शुक्र लग्न में, चन्द्रमा कर्क राशि में हो तो जातक वापी-तालाब-देवतायतनों का निर्माण करने वाला, ब्राह्मण व देवताओं का भक्त राजा होता हैं ।। १४० ।।

सर्ववन्दित राजयोग ज्ञान

एकः स्वोच्चे शुभगगनगः संस्थितो निर्मलांशुः
केन्द्रे भानुः प्रकटितकरः केवलः पूर्णवीर्यः ।
दृष्टः कुर्यादमरगुरुणा पञ्चमस्थेन जातं
भूमेर्नाथं बहुगजपतिं सर्ववन्द्यं कृतार्थम् ॥१४१॥

यदि कुण्डली में स्वच्छ किरणों से युक्त एक शुभग्रह उच्च में हो व पूर्ण बलवान् प्रत्यक्ष किरणों से युत केन्द्र में केवल सूर्य, पञ्चमस्थ गुरू से दृष्ट हो तो जातक अधिक हाथियों का स्वामी, कृतार्थं व जगत से वन्दित राजा होता है ।। १४१ ।।

अपने बाहुबल से शत्रु को जीतने वाला राजयोग ज्ञान

षष्ठे कुजार्किरवयः सहजेऽथवाऽपि
सिंहे सुरारिसचिवोऽथ भवर्क्षसंस्थः ।
दृष्टः शुभैर्दिनकरेन्दुविहीनदृष्टिः
कुर्यान्नृपं स्वभुजनिर्जितशत्रुपक्षम् ॥१४२॥

यदि कुण्डली में षष्ठ भाव में वा तृतीय भाव में भौम-शनि-सूर्य हों तथा एकादश भाव में सिंहस्थ गुरू शुभग्रहों से दृष्ट हो व सूर्य-चन्द्रमा से अदृष्ट हो तो जातक अपने बाहुबल से शत्रुपक्ष को पराजित करने वाला राजा होता है ।। १४२ ।।

अन्य राजयोग ज्ञान

वहति मृदुसमीरे[1] निर्मलव्योममध्ये
विमलनिरुपसर्गाः खेचरा वृत्तवैराः ।
उदयति सुरवन्द्ये मण्डले मातृकाणां
यदि वृषभगृहस्थो भार्गवः स्यात्क्षितीशः ॥१४३॥

यदि जन्म के समय में सुन्दर वायु चलती हो व आकाश निर्मल हो तथा त्यक्तवैर विमल उत्पात रहित सब ग्रह हों एवं तुला लग्न में गुरू हो और वृष राशिस्थ शुक्र हो तो जातक राजा होता है ।। १४३ ।।

कीर्तिमान् राजयोग ज्ञान

शशिबुधरुधिराख्यैः स्वांशकस्थैर्न नीचै-
र्व्ययगृहसहजस्थैर्नापि सूर्यप्रविष्टैः ।
तनयभवनसंस्थे वाक्पतौ चन्द्रयुक्ते
भवति मनुजनाथः कीर्तिशुक्लीकृताशः ॥१४४॥

---

[1] शरीरे ।

यदि कुण्डली में चन्द्रमा बुध व भौम अपने-अपने नवांशों में स्थित होकर द्वादश व तृतीय भाव में हों तथा नीच राशि में एवं सूर्य के साथ अस्त न हों और पञ्चम भाव में गुरू चन्द्रमा का योग हो तो जातक—अपनी कीर्ति से दिशाओं को शुभ्र करने वाला राजा होता है ॥ १४४ ॥

पुष्कल नामक राजयोग व उसके फल का ज्ञान

अधिमित्रगते[1] केन्द्रे जन्माधिपतिर्विलग्नपतियुक्तः ।
पश्यति बलपरिपूर्णो लग्नं स्यात्पुष्कलो योगः ॥१४५॥
पुष्कलयोगे पुरुषा जायन्ते भूमिपालका नित्यम् ।
सुचिरं भ्रमन्ति हतरिपुगजमदगन्धेन वासितदिगन्ताः ॥१४६॥

यदि कुण्डली में अधिमित्र ग्रह की राशि में जन्म राशीश व लग्नेश पूर्ण बलवान् केन्द्र स्थित होकर लग्न को देखते हों तो पुष्कल योग होता है। इस पुष्कल योग में जायमान पुरुष राजा होता है। वह मारे हुए शत्रुओं के हाथियों के मदजल सुगन्ध से दिशाओं को व्याप्त करता हुआ अधिक समय तक घूँमता है ॥ १४५–१४६ ॥

अन्य राजयोग ज्ञान

राश्यादौ लग्नपतिः करोति जातं[2] नरेन्द्रदण्डपतिम् ।
मध्ये मण्डलनाथं ग्रामपतिं चैव भवनान्ते ॥१४७॥

यदि कुण्डली में लग्नेश राशि की आदि में हो तो जातक—राजाओं को दण्ड देने वाला, राशि के मध्य में लग्नेश हो तो जिले का स्वामी, राश्यन्त में हो तो ग्राम का मुखिया होता है ॥ १४७ ॥

शतयोजन भूमिका का स्वामी राजयोग ज्ञान

पौष्णे फाल्गुन्यां वा मूले पुष्ये च भास्करः कुरुते ।
लग्नगतो नरनाथं योजनशतमात्रके देशे ॥१४८॥

यदि कुण्डली में लग्नस्थ सूर्य, रेवती वा दोनों फाल्गुनी वा मूल वा पुष्य नक्षत्र में हो तो जातक सौ योजन भूमि तक देश का राजा होता है ॥ १४८ ॥

अन्य राजयोग ज्ञान

कृत्तिकारेवतीस्वातीपुष्यस्थायी भृगोः सुतः ।
करोति भूभुजां नाथमश्विन्यामपि संस्थितः ॥१४९॥

यदि कुण्डली में शुक्र, कृत्तिका या रेवती वा स्वाती वा पुष्य वा अश्विनी नक्षत्र में स्थित हो तो जातक—राजाओं का राजा होता है ॥ १४६ ॥

जा० भ० में कहा है—'कृत्तिका रेवती स्वाती पुष्यस्थायी भृगोः सुतः। करोति भूभुजां नाथमश्विन्यामपि संस्थितः' (रा० यो० ६६ श्लो०) ॥ १४९ ॥

---

[1] गृहे । [2] लग्ने ।

सार्वभौम राजयोग ज्ञान

विदधाति सार्वभौमं लग्नांशपतिः स्वतुङ्गगः केन्द्रे ।
नृपतिं लग्नाधिपतिर्जन्माधिपतिर्धनसमृद्धम् ॥१५०॥

यदि कुण्डली में लग्नस्थ नवांश का स्वामी अपनी उच्चस्थ राशि का होकर केन्द्र में हो तो जातक सार्वभौम राजा होता है। यदि लग्नेश व जन्म राशीश केन्द्र में हों तो जातक—धन से सम्पन्न राजा होता है ॥ १५० ॥

अन्य सार्वभौम योग ज्ञान

मीने निशाकरः पूर्णः सुहृद्ग्रहनिरीक्षितः ।
सार्वभौमं नरं कुर्यात्सिद्धाज्ञाकं[1] न संशयः ॥१५१॥

यदि कुण्डली में परिपूर्ण चन्द्रमा मीन राशि में अपने मित्रग्रह से दृष्ट हो तो जातक—सिद्ध आज्ञा वाला निश्चय सार्वभौम राजा होता है ॥ १५१ ॥

अन्य राजयोग ज्ञान

याते भौमे कर्मस्थानं
शिशिरकरभृगुसुतैस्तपः समवस्थितैः ।
आये स्वोच्चे प्राप्तो भानु-
स्त्रिदशपतिसचिवसहितो यदि प्रसवे[2] भवेत् ॥१५२॥
क्षोणीभर्ता याने यस्य प्रविचलिततुरगरजसा दिशः परितो [3]गतः ।
एवं कर्तुर्भूयो भूयो [4]धरणितलपरिमलसुखं प्रयान्ति रवेर्हयाः ॥१५३॥

स्पष्टार्थ चक्र

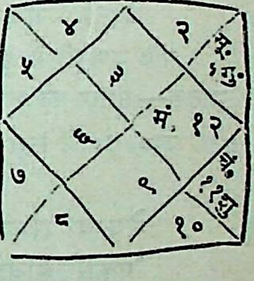

यदि कुण्डली में भौम दशमभाव में व चन्द्रमा शुक्र नवमभाव में और उच्चस्थ सूर्य गुरू के साथ एकादशभाव में हो तो जातक राजा होता है। जिसकी सेना के चलने पर घोड़ों के पादों से उड़ी हुई धूलि दिशाओं में व्याप्त होकर सूर्य के घोड़ों को भूमि के सुगन्ध का सुख अनुभव कराती है ॥ १५२–१५३ ॥

वर्धितश्री राजयोग ज्ञान

शशिसहिते केन्द्रस्थे शनैश्चरे भवति [5]जारजातस्तु ।
राजा भुवि गजतुरगग्रामधनैर्वर्धितश्रीकः ॥१५४॥

यदि कुण्डली में चन्द्रमा के साथ शनि केन्द्र में हो तो अन्य से उत्पन्न होने पर भी जातक—हाथी-घोड़ा-ग्राम व धन से धन को बढ़ाने वाला राजा होता है ॥ १५४ ॥

शत्रु जेता राजयोग ज्ञान

शुक्रवाक्पतिबुधैर्धनसंस्थैर्द्यूनगैः शशिरविक्षितिपुत्रैः ।
जायते क्षितिपतिः पृथुवक्षाः सर्वतः क्षपितशत्रुसमूहः ॥१५५॥

---

१ सिद्धाज्ञाकंन्न । २ प्रभवे । ३. गतैः । ४. परिश्रम । ५. जातोत्र ।

यदि कुण्डली में शुक्र-गुरु-बुध-धन भाव में हों तथा सप्तम भाव में चन्द्रमा-सूर्य-भौम हों तो जातक—विशाल हृदय का; चारों तरफ शत्रु समूह का नाशक राजा होता है ।। ११५ ।।

विशेष—इस पद्य में सप्तम भाव में सूर्य की स्थिति गणित शास्त्र से विरोध उत्पन्न करती है क्योंकि सूर्य व शुक्र बुध का अन्तर तीन राशि के अधिक है जातका भरण में सूर्य के स्थान पर शनि पठित है ।। १५५ ।।

जा० भ० में कहा है 'धनस्थिताः सौम्यसितामरेज्या मन्दारचन्द्रा यदि सप्तमस्थाः । यस्य प्रसूतौ स तु भूपतिः स्यात्' ।। १५५ ।।

अन्य राजयोग ज्ञान

भानुः प्राणी शशिगृहयुतः शीतरश्मिश्च तस्मि-
न्नेकः स्वोच्चे यदि गगनगो निर्मलः पूर्णरश्मिः ।
लग्नं प्राप्तः सुरपतिगुरुः षष्ठगः स्यात्क्षितीश-
श्छन्नो यस्य प्रचलितचमूरेणुभिर्व्योममार्गः ।।१५६।।

यदि कुण्डली में बलवान् रवि, चन्द्रमा की राशि (कर्क) में चन्द्रमा से युत हो व कोई एक ग्रह निर्मल (स्वच्छ) पूर्ण किरणों वाला उच्च राशि में लग्न में हो एवं गुरु षष्ठ भाव में हो तो जातक राजा होता है । जिसकी सेना के चलने पर धूलि से आकाश मार्ग आच्छादित हो जाता है ।। १५६ ।।

संसार का कल्याणकारी राजयोग ज्ञान

कुम्भस्याष्टमभागे त्रिकोणसंस्थे (पि च) निशानाथे ।
जातो भवत्यवश्यं राजा शुभदः समस्तलोकस्य ।।१५७।।

यदि कुण्डली में कुम्भ राशि के अष्टम नवांश में चन्द्रमा त्रिकोणस्थ (५।९) हो तो जातक—संसार का कल्याण करने वाला अवश्य राजा होता है ।। १५७ ।।

जा० भ० में कहा है—'कुम्भाष्टमांशे शशिनि त्रिकोणे' ।। १५७ ।।

अन्य राजयोग ज्ञान

मेषस्य सप्तमांशे करोति पृथ्वीसुतः स्थितो नृपतिम् ।
[1]एकाधिकविंशेऽशे नरमिथुनांशे भवेद्भूपः ।।१५८।।

यदि कुण्डली में मेष राशि के सप्तम अंश में अथवा मिथुन राशि के २१ वें अंश में भौम हो तो जातक—राजा होता है ।। १५८ ।।

जा० भ० में कहा है—'मेषेऽद्रिभागे धरणीसुतोथवा द्वन्द्वैकविंशांशगतेऽथर ज्ञे यस्य प्रसूतौ स तु भूपतिः स्यात्' ।। १५८ ।।

प्रकारान्तर से राजयोग ज्ञान

कुम्भस्य पञ्चदशके भागे चन्द्रः स्थितो महीपालम् ।
कर्कटकस्य च दशमे करोति पुरुषं सदा प्रभवे ।।१५९।।

---

१. सिंहस्य पञ्चमांशे ।

यदि कुण्डली में कुम्भ राशि के १५ वें अंश में अथवा कर्क राशि के दशवें अंश में चन्द्रमा हो तो जातक राजा होता है ॥ १५९ ॥

जा० भ० में कहा है—'कुम्भस्य चेत्पञ्चदशे विभागे कर्के दशांशोपगतो विधुश्चेत्' ॥ १५९ ॥

प्रसिद्ध राजयोग ज्ञान

धनुषि च [1]विंशे जीवः करोति नृपतिं स्थितो जनख्यातम् ।
सिंहस्य पञ्चमांशे तथा च हेलिर्बुधो ज्ञेयः ॥१६०॥

यदि कुण्डली में धनु राशि के बीसवें अंश में गुरू हो वा सिंह राशि की पाँचवें अंश में सूर्य या बुध हो तो जातक—संसार में प्रसिद्ध राजा होता है ॥ १६० ॥

जा० भ० मे कहा है—तृतीयभागे धनुषीन्द्रवन्द्यः सिंहे शशाङ्केऽप्यथवापि भूपः' ॥ १६० ॥

वीर राजयोग ज्ञान

एकस्मिन्पञ्चकृतौ पञ्चदशस्वास्थितश्चन्द्रः ।
भागेषु वीरनृपतिं करोति भुजलब्धपृथ्वीकम् ॥१६१॥

यदि कुण्डली में किसी भी राशि के १५ वें अंश में एक ही राशि के पाँच वर्गों में चन्द्रमा स्थित हो तो जातक—अपनी भुजाओं से भूमि को प्राप्त करने वाला वीर राजा होता है ॥ १६१ ॥

अन्य राजयोग ज्ञान

मकरस्य पञ्चमांशे करोति रविजो[2] नरेश्वरं सुनय[3]म् ।
योगे भूतलतिलकं धर्मज्ञं शास्त्रनिरतं च ॥१६२॥

यदि कुण्डली में शनि मकर राशि के पाँचवें अंश में हो तो जातक—इस योग में सुन्दरनीतिज्ञ वा सौभाग्यवान्, धर्मात्मा, शास्त्र में लीन व भूमि का भूषण राजा होता है ॥ १६२ ॥

अजेय राजयोग ज्ञान

कर्कटके शशिजीवौ पञ्चसु भागेषु संस्थितौ कुरुतः ।
भूमिपतिमप्रधृष्यं रविरिव सर्वग्रहणस्य ॥१६३॥

यदि कुण्डली में कर्क राशि के पाँचवें अंश में चन्द्रमा व गुरू हों तो जातक—अजेय राजा होता है । जैसे समस्त ग्रहों का राजा सूर्य है ॥१६३॥

सार्वभौम राजयोग ज्ञान

चन्द्रः पुष्ये नृपतिं वर्गोत्तमकृत्तिकाश्विनोसंस्थः ।
विदधाति सार्वभौमं त्रिपुष्करे वाऽपि परिपूर्णः ॥१६४॥

---

[1] त्रिंशे । [2] पुरुषं । [3] सुभगम् ।

यदि कुण्डली में पुष्य नक्षत्र में वा वर्गोत्तम नवांश में वा कृतिका वा अश्विनी वा त्रिपुष्कर योग में परिपूर्ण चन्द्रमा हो तो जातक—सार्वभौम राजा होता है ॥१६४॥

जा० भ० के कहा है—'पुष्येऽश्विभे वाप्यथ कृत्तिकासु वर्गोत्तमे पूर्णतनुः कलावान् । करोति जातं खलु सार्वभौमं त्रिपुष्करोत्पन्ननरोऽपि भूपः (रा० यो० ५५ श्लो०) ॥१६४॥

विशेष—त्रिपुष्कर योग का लक्षण—

'तिथिश्च भद्रा विषमाङ्घ्रिभे चेद्वारे गुरुक्ष्मातनयार्कजानाम् ।
त्रिपुष्करो योग इति प्रदिष्टो वृद्धौ च हानौ त्रिगुणाधिकर्ता' ॥१६४॥

अन्य राजयोग ज्ञान

अश्विन्यनुराधास्थः स्थितः श्रविष्ठासु पार्थिवं भौमः ।
कुरुते स्वोच्चमुपगतो वर्गोत्तमगश्च नान्यत्र ॥१६५॥

यदि कुण्डली में अश्विनी वा अनुराधा वा धनिष्ठा वा उच्च, वा वर्गोत्तम में भौम हो तो जातक—राजा होता है । अन्य स्थिति में नहीं होता है ॥ १६५ ॥

जा० भ० में कहा है—मैत्रे च दास्रेऽप्यथवात्मतुङ्गे वर्गोत्तमे भूमिसुतः करोति । महीपतिं पार्थिववंशजातं चान्यं प्रधानं धनिनं समृद्धम् (रा० यो० ५७ श्लो०) ॥ १६५ ॥

अतुल्य बलवान् राजयोग ज्ञान

व्योम्नि शंखधवलो निशाकरो भार्गवस्तपसि संस्थितः शुचिः ।
[1]आयगाश्च यदि सर्व एव ते स्यान्महीपतिरतुल्यपौरुषः ॥१६६॥

यदि कुण्डली में शङ्ख के समान शुभ्र कान्ति वाला चन्द्रमा दशम भाव में, पवित्र शुक्र नवम भाव में और अवशिष्ट समस्त ग्रह लाभ भाव में हों तो जातक—असमान पराक्रमी राजा होता है ॥ १६६ ॥

जा० भ० में कहा है—'चेद्भार्गवो जन्मनि यस्य पुण्ये मेषूरणे पूर्णतनुः शशाङ्कः । अन्ये ग्रहा लाभगता भवेयुः पृथ्वीपतिः पार्थिववंशजातः' (रा० यो० ५८ श्लो०) ॥१६६॥

अहङ्कारी राजयोग ज्ञान

चन्द्रादुपचयसंस्था गगनसदः सर्व एव यदि सूतौ ।
जायेत माननिलयः समस्तपृथ्वीपतिः पुरुषः ॥१६७॥

यदि कुंडली में चन्द्रमा से उपचय (३, ६, १०, ११) भाव में समस्त ग्रह हों तो जातक अहङ्कारी (अभिमानी) समस्त भूमण्डल का राजा होता है ॥ १६७ ॥

जा० भ० में कहा है—'उपचयभवनस्थाः सर्वखेटाः शशांकाद्

(रा० यो० ५९ श्लोक) ॥ १६७ ॥

कुबेर के समान धनी राजयोग ज्ञान

जीवनिशाकरसूर्याः पञ्चमनवमतृतीयगा वक्रात् ।
यदि भवति तदा राजा कुबेरतुल्यो धनैर्वासौ ॥१६८॥

---

[1] सूर्य ।

यदि कुंडली में मंगल से पञ्चम, नवम, तृतीय भावों में गुरु, चन्द्रमा, सूर्य हों तो जातक धन में कुबेर के समान धनी राजा होता है ।। १६८ ।।

जा० भ० में कहा है—'रविगुरुशशिनश्चेद् भूमिसूनोर्भवन्ति । त्रितनयनवमस्थाः कुर्वते ते नरेन्द्रं (रा० यो० ५९ श्लो०) ।।१६८।।

त्रिसमुद्रपारग राजयोग ज्ञान

रविस्तृतीये भृगुनन्दनः सुखे बुधस्य चान्ये यदि पञ्चमे स्थिताः ।
न नीचराशौ न च शत्रुवेश्मगा भवेन्नरेन्द्रस्त्रिसमुद्रपारगः[1] ।।१६९।।

यदि कुण्डली में बुध से तृतीय भाव में सूर्य, चतुर्थ में शुक्र हो तथा पञ्चम भाव में अवशिष्ट ग्रह हों और नीच राशिस्थ व शत्रु राशिस्थ न हों तो जातक तीन समुद्र पर्यन्त पृथ्वी का राजा होता है ।। १६९ ।।

अन्य राजयोग ज्ञान

बृहस्पतेर्भौमदिवाकरेन्दवो गता द्वितीयाम्बुनभःस्थलं क्रमात् ।
विपक्षराशौ परिशेषखेचरा यदा तदा भूमिपतिर्नृपात्मजः ।।१७०।।

यदि कुण्डली में गुरू से द्वितीय, चतुर्थ, दशम भावों में भौम, सूर्य चन्द्रमा स्थित हों और अवशिष्ट ग्रह षष्ठ भाव में हों तो जातक राजकुल में पैदा होने पर राजा होता है ।। १७० ।।

प्रकारान्तर से राजयोग ज्ञान

भृगोरपत्याद्बुधभास्करात्मजौ चतुष्टयस्थौ परिशेषखेचराः ।
तृतीयलाभर्क्षगतास्तु ते यदा महीपतिं कुर्युरसंशयं तदा ।।१७१।।

यदि कुण्डली में शुक्र से केन्द्र में बुध व शनि हों तथा अवशिष्ट ग्रह तृतीय व लाभ भाव में हों तो जातक निश्चय राजा होता है ।। १७१ ।।

सिंहासनाधिशायी राजयोग ज्ञान

शुक्रबुधौ रवितनयात्केन्द्रे वाचस्पतिर्भवेदुच्चे ।
सिंहासनाधिशायी यदि राजा स्वोच्चगाश्च परिशेषाः ।।१७२।।

यदि कुण्डली में शनि से केन्द्र (१, ४, ७, १०) में शुक्र व बुध हों तथा शेष ग्रह उच्च राशि में हों तो जातक—सिंहासन पर शयन करने वाला राजा होता है ।।१७२।।

अन्य राजयोग ज्ञान

सवितुस्तृतीयपञ्चलाभर्क्षसमाश्रिताः सदा यस्य ।
सर्वे ग्रहाः स नृपतिर्मन्त्री सेनापतिर्वाऽपि ।।१७३।।

जिसकी कुण्डली में सूर्य से तृतीय, एकादश, पञ्चम राशि में समस्त ग्रह हों तो जातक राजा वा सचिव वा सेना का स्वामी होता है ।। १७३ ।।

---

[1] पालकः ।

अपने बाहुबल से पृथ्वी को जीतने वाला राजयोग ज्ञान

लग्नपतेः स्फुटरश्मेः पापा लाभे शुभाश्च केन्द्रस्थाः ।
यदि भवति तदा नृपतिः स्वभुजार्जितसर्वभूमितलः ॥१७४॥

यदि कुण्डली में स्पष्ट रश्मि लग्नेश से एकादश भाव में सब पाप ग्रह व केन्द्र (१, ४, ७, १०) में सब शुभ ग्रह हों तो जातक अपने बाहु बल से पृथ्वी को जीतने वाला राजा होता है ॥ १७४ ॥

समस्त नृप वन्दित राजयोग ज्ञान

लाभे तृतीयषष्ठे यदि पापा जन्मपस्य शुभदृष्टाः ।
भवति तदा धरणीशः समस्तनृपवन्दितः साधुः ॥१७५॥

यदि कुण्डली में जन्म राशीश से एकादश, तृतीय, षष्ठ भावों मे समस्त पाप ग्रह, शुभ ग्रहों से दृष्ट हों तो जातक—समस्त राजाओं से वन्दनीय राजा होता है ॥ १७५ ॥

अन्य राजयोग ज्ञान

विचरति सुरपूज्यो मेषभेऽथापि सिंहे
दहनकिरणदृष्टे भूमिपुत्रे [1]स्वराशौ ।
न च गगनविचारी कश्चिदेकोऽपि नीचे
यदि नृपतिसमुत्थो जायते पार्थिवेन्द्रः ॥१७६॥

यदि कुण्डली में मेष राशि में वा सिंह राशि में गुरू हो तथा स्वराशिस्थ भौम, सूर्य से दृष्ट हो और कोई एक भी ग्रह नीच राशिस्थ न हो तो जातक—राजकुल में जन्म लेने पर राजा, अन्य कुल में उत्पन्न होने पर धनवान् होता है ॥ १७६ ॥

सुनफादि योग में भी राजयोग ज्ञान

चन्द्राद्ग्रहैर्निगदिताः सुनफादयश्च
केन्द्रस्थितैर्यदि भवन्ति च तेऽत्र योगाः ।
विश्वम्भराधिपकुलेषु महत्सु जाता
योगेषु तेषु मनुजेश्वरतां लभन्ते ॥१७७॥

चन्द्रमा से सुनफा अनफा दुरुधरा योगों का वर्णन पूर्व में किया गया है। यदि केन्द्र में ये योग कुण्डली में उपलब्ध हों तो बड़े राजकुल में इन योगों (सुनफादि) में उत्पन्न होने पर भी जातक राजा होता है ॥ १७७ ॥

अतुलकीर्तिमान् राजयोग ज्ञान

केन्द्रगौ यदि तु जीवशशाङ्कौ यस्य जन्मनि च भार्गवदृष्टौ ।
भूपतिर्भवति सोऽतुलकीर्तिर्नीचगो यदि न कश्चिदिह स्यात् ॥१९८॥

जिसकी कुण्डली में गुरू व चन्द्रमा केन्द्र में हों तथा शुक्र से दृष्ट हों और कोई भी अन्य ग्रह नीच राशि में न हो तो जातक अतुल कीर्तिमान् राजा होता है ॥ १७८ ॥

---

[1] सुरश्मौ ।

जा० भ० में कहा है—'केन्द्रगः सुरगुरुः शशांको यस्य जन्मनि च भार्गवदृष्टः। भूपतिर्भवति सोऽतुरुकीतिर्नीचगो न यदि कश्चिदिह स्यात्'
(रा० यो० ५१ श्लोक) ॥ १७८ ॥

सार्वभौम राजयोग ज्ञान

उदयशिखरिसंस्थो भार्गवो यत्र तत्र
बुधरविसुतदृष्टः स्वांशकस्थोऽतिवीर्यः।
जनयति नरनाथं वाक्पतौ पञ्चमस्थे
भुजबलहतशत्रुं सार्वभौमं गजाढ्यम् ॥१७९॥

यदि कुण्डली में अधिक बलवान् शुक्र अपने नवांश में स्थित होकर लग्न में हो व बुध, शनि से दृष्ट हो और पंचम भाव में गुरू हो तो जातक—अपने बाहु (हाथ) बल से शत्रु को मारने वाला, हाथियों से युक्त सार्वभौम राजा होता है ॥ १७९ ॥

अन्य राजयोग ज्ञान

सिंहे कमलिनीनाथः कुलीरस्थो निशाकरः।
दृष्टौ द्वावपि जीवेन पार्थिवं कुरुतस्तदा ॥१८०॥

यदि कुण्डली में सिंह राशि में सूर्य हो तथा कर्क राशि में चन्द्रमा हो और दोनों (सूर्य, चन्द्र) गुरू से दृष्ट हों तो जातक राजा होता है ॥ १८० ॥

जा० भ० में कहा है—'सिंहे कमलिनी भर्ता कुलीरस्थो निशाकरः। दृष्टौ द्वावपि जीवेन पार्थिवं कुरुते सदा' (रा० यो० ६१ श्लोक) ॥ १८० ॥

स्फीत महीपति योग ज्ञान

बुधः कर्कटमारूढो वाक्पतिश्च धनुर्धरम्।
सूर्यभूसुतदृष्टौ च यदि स्फीतो महीपतिः ॥१८१॥

यदि कुण्डली में कर्क राशि में बुध हो व धनुराशि में गुरू हो और दोनों सूर्य भौम से दृष्ट हों तो जातक स्थूल देहधारी राजा होता है ॥ १८१ ॥

जा० भ० में कहा—'बुधः कर्कटमारूढो वाक्पतिश्च धनुर्धरे। रविभूसुतदृष्टौ तौ पार्थिवं कुरुते सदा' (रा० यो० ६२ श्लोक) ॥ १८१ ॥

अन्य राजयोग ज्ञान

शफरीयुगले चन्द्रः कर्कटे च बृहस्पतिः।
शुक्रः कुम्भे यदा शक्तस्तदा राजा भवेदिह ॥१८२॥

यदि कुण्डली में मीन राशि में चन्द्रमा हो व कर्क राशि में गुरू हो एवं कुम्भ राशि में शुक्र हो तो जातक राजा होता है ॥ १८२ ॥

जा० भ० में कहा—'शफरीयुगले चन्द्रः कर्कटे च बृहस्पतिः। शुक्र कुम्भेः भवेद् राजा गजवाजिसमृद्धिभाक्' (रा० यो० ६३ श्लोक) ॥ १८२ ॥

अन्य राजयोग ज्ञान

सितदृष्टः शनिः कुम्भे पद्मिनीदयितो भवे[1]।
चंद्रे जलचरे राशौ यदि जातो नृपो भवेत् ॥१८३॥

यदि कुण्डली में कुम्भस्थ शनि शुक्र से दृष्ट हो व सूर्य एकादश भाव में हों तथा जलचर राशि में चन्द्रमा हो तो जातक राजा होता है ॥ १८३ ॥

जा० भ० में कहा है—'सितदृष्टः शनिः कुम्भे पद्मिनीनायकोदये। चन्द्रे जलचरे राशौ यदि राजा तदा भवेत्' (रा० यो० ६४ श्लो०) ॥ १८३ ॥

प्रकारान्तर से राजयोग ज्ञान

कुजोऽलिगोऽथ मेषे वा रविजीवनिरीक्षितः।
वृषे ज्ञो शुक्रसदृष्टस्तदाऽपि[2] पृथिवीपतिः ॥ १८४ ॥

यदि कुण्डली में भौम वृश्चिक राशि में वा मेष राशि में सूर्य गुरू से दृष्ट हो व वृषस्थ बुध शुक्र से दृष्ट हो तो भी जातक राजा होता है ॥ १८४ ॥

अन्य राजयोग ज्ञान

अमलवपुरवक्रः कैरवाणां विकासी
स्वगृहमथ नवांशं स्वोच्चभांशं गतो वा।
हितगगननिवासैः पञ्चभिर्दृश्यमानो
जनयति जगतीशं नीचभे नो यदि स्यात् ॥ १८५ ॥

यदि कुण्डली में निर्मल देह धारी परिपूर्ण चन्द्रमा अपनी राशि (कर्क) में वा अपने नवांश मे वा उच्चराशि (वृष) के नवांश में पाँच मित्र (तात्कालिक) ग्रहों से दृष्ट हो और नीच राशि में कोई ग्रह न हो तो जातक राजा होता है ॥ १८५ ॥

पुनः अन्य राजयोग ज्ञान

लाभे मन्दो गुरुभृगुसुतावुद्गमे खे शशाङ्को
बन्धावर्को बुधकुतनयौ[3] वक्रगौ चेत्स भूपः।
यत्सेनायास्ततमदजलक्षोभतो वारणेन्द्रै-
र्भूयः सेतोः स्मरति सहसा क्षोभितान्तोऽम्बुराशिः ॥१८६॥

यदि कुण्डली में एकादशभाव में शनि हो, व लग्न में गुरू शुक्र हों एवं दशमभाव में चन्द्रमा व चतुर्थ में सूर्य तथा बुध भौम वक्री हों तो जातक राजा होता है। जिसकी सेना के हाथियों से विस्तृत मद जल क्षोभ से क्षुब्धान्तः करण वाला समुद्र झटिति फिर (पुनः) सेतु बन्धन का स्मरण करता है ॥ १८६ ॥

विशेष—पाठान्तर से बुध द्वितीय भाव में वर्णित है किन्तु सूर्य व बुध का व लग्नस्थ शुक्र व सूर्य का अन्तर तृतीय व चतुर्थ राश्यन्तर गणित विरुद्ध प्रतीत होता है।

बृ० जा० में कहा है 'चतुर्थे भवने सूर्यात्, ज्ञसितौ भवतः कथम्' (१२अ० ६२श्लो०) ॥ परम शीघ्राङ्क व मन्दाङ्कों का योग करने से इतना अन्तर कथमपि सिद्ध नहीं हो सकता, मनीषी गण इस का विचार करके अवश्य देखे ॥ १८६ ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां राजयोगाध्यायो नाम पञ्चत्रिंशः ॥

[1] दयितोदये। [2] जीव। [3] तन—यावर्थगौ।

षट्त्रिंशोऽध्यायः

रश्मिप्रधानमेतद्यस्माच्छास्त्रं वदन्ति माणिन्धाः ।
तस्मात्प्रयत्नतोऽहं कथयामि यथामतं तेषाम् ॥ १ ॥

इस ज्योतिष शास्त्र में जिस कारण से ग्रहों की रश्मियों की प्रधानता मणिन्ध नामक आचार्यं कहते हैं उसी कारण से उन रश्मियों के साधन को प्रयत्न पूर्वंक अपनी बुद्धि के अनुसार मैं कहता हूँ ।। १ ।।

ग्रहों की रश्मि संख्या का ज्ञान

स्वोच्चस्थे दश सूर्ये नव चन्द्रे पञ्च भूमितनये च ।
पञ्चेन्दुजे सुरेज्ये सप्ताष्टौ भार्गवे शनौ पञ्च ॥ २ ॥

सूर्यादि ग्रह की अपनी-अपनी उच्च राशि में क्रम से रश्मि संख्या निम्न होती हैं ।।

स्पष्टार्ध चक्र

सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०
१०	९	५	५	७	८	५

अर्थात् सूर्यं की १०, चन्द्रमा की ९, भौम की ५, बुध की ५, गुरू की ७, शुक्र की ८ और शनि की ५ रश्मि संख्या होती है ।।२।।

प्रकारान्तर से रश्मि संख्या का ज्ञान

एवं महेन्द्रशास्त्रे मणिन्धमयवादरायणप्रोक्ते ।
सप्त प्रत्येकस्था निर्दिष्टा रश्मयो ग्रहेन्द्राणाम् ॥ ३ ॥
सर्वे प्रमाणसेंते मुनिवचनात्किन्तु सप्तसंख्यैव ।
बहुवाक्यादस्माकं नीचगतः स्याद्विगतरश्मिः ॥ ४ ॥

इस प्रकार मणिन्ध, मय, बादरायण के कहे हुए महेन्द्र शास्त्र में मुनियों के वचन से प्रत्येक ग्रह की ७,७ रश्मि वर्णित हैं । ये दोनों मत प्रमाण हैं, किन्तु अधिक आचार्यों के मत से ७,७ ही संख्या रश्मियों की हैं । एव नीचस्थ ग्रह की रश्मि संख्या शून्य होती है ।। ३–४ ।।

अभिमुख पराङ्मुख रश्मि का कथन

अभिमुखरश्मिर्नीचाद्भ्रष्टः स्वोच्चात्पराङ्मुखो ज्ञेयः ।
अन्तरगतेऽनुपातो यथा तथा संप्रवक्ष्यामि ॥ ५ ॥

जब अपनी नीच राशि से ग्रह आगे चलता है तो उसकी अभिमुख रश्मि संज्ञा, व अपने उच्च से नीचे उतरता है तो पराङ् मुख रश्मि की संज्ञा होती है । तथा उच्च व नीच के बीच में अनुपात द्वारा रश्मि साधन जैसे होता है वैसे मैं कहता हूँ ।। ५ ।।

स्पष्ट रश्मि का आनयन

नीचविहीनः[1] शोध्यश्चक्रात्षड्भवनतो यदाभ्यधिकः ।
आत्मीयरश्मिगुणितात्षड्भक्ताद्रश्मयस्तस्मात्[2] ॥ ६ ॥

---

[1] न्यूने मण्डल । [2] ताप ।

जिस ग्रह की स्पष्ट रश्मि का आनयन अभीष्ट हो उस स्पष्ट राश्यादि ग्रह में उसी का नीच राश्यंश घटाकर शेष यदि ६ राशि से अधिक हो तो उसे १२ राशि में घटाकर पुनः जो शेष वचे उसको अपनी उच्च रश्मि संख्या से गुना करके गुणन फल में ६ का भाग देने से लब्धि तुल्य ग्रह की रश्मि संख्या होती है ॥ ६ ॥

आनीत रश्मि संख्या में संस्कार विशेष

मित्रद्वादशभागे द्विगुणास्त्रिगुणाः स्वके च दीधितयः।
वक्रे पुनस्तथोच्चे स्वराशिगे तद्भवत्येव ॥ ७ ॥
द्विगुणाः स्युर्दीधितयो वक्रस्थेऽप्येवमेव स्युः।
वैरिद्वादशभागे नीचे च भवन्ति षोडशांशोनाः ॥ ८ ॥

यदि स्पष्ट ग्रह मित्र के द्वादशांश में हो तो रश्मि संख्या को दो से गुना करने पर स्पष्ट रश्मि संख्या होती है। यदि ग्रह अपने द्वादशांश में हो तो आनीत रश्मि संख्या को तीन से गुना करने पर स्पष्ट रश्मि संख्या होती है। यदि वक्री ग्रह मित्र के द्वादशांश में हो तो दो से गुना करने पर स्पष्ट रश्मि संख्या, यदि ग्रह उच्च में वा स्वराशि में हो तो तीन से गुना करने पर स्पष्ट रश्मि संख्या, यदि ग्रह मार्गी हो और मित्र द्वादशांशस्थ ग्रह वक्री हो तो भी दो से गुना करने पर स्पष्ट रश्मि संख्या, यदि ग्रह शत्रु के द्वादशांश में वा नीच में हो तो आनीत रश्मि संख्या में सोलहवाँ भाग घटाने पर स्पष्ट रश्मि संख्या होती है ॥ ७-८ ॥

पुनः संस्कार विशेष का कथन

अस्तं गतो विरश्मिः शनिसितवर्जं ग्रहो ज्ञेयः।
वक्रान्तस्थे द्विगुणा वक्रत्यागेऽष्टभागहीनाश्च।
एवं रश्मिविधानं पूर्वाचार्यैः समुद्दिष्टम् ॥ ९ ॥

शनि शुक्र को छोड़कर अस्त ग्रह की रश्मि शून्य होती है। यदि वक्रान्त में हो तो आनीत रश्मि संख्या को दो से गुना करने पर, वक्रता त्याग करने पर अष्टमांश हीन करने पर स्पष्ट रश्मि संख्या होती है। इस प्रकार रश्मियों का विधान पूर्वाचार्यों ने वर्णित किया है ॥ ९ ॥

ग्रहों की रश्मि योग संख्या से (१–५ तक) फल का ज्ञान

एकादि पञ्च यावद्रश्मिभिरतिदुःखिताः कुलविहीनाः।
परतन्त्रका दरिद्रा नीचरता संभवन्ति नराः ॥ १० ॥

यदि रश्मि योग संख्या एक से पाँच तक हो तो जातक—अत्यन्त दुःखी, कुल से हीन, परतन्त्र, दरिद्री व दुष्ट संसर्गी होता है ॥ १० ॥

६ से १० तक रश्मि योग संख्या का फल

परतो दशकं यावद्भृतकादीनां विदेशगमनरताः।
जायन्तेऽत्र मनुष्याः सौभाग्यपरिच्युता मलिनाः ॥ ११ ॥

यदि ६ से १० तक रश्मि योग संख्या हो तो जातक—सेवकादि कार्य कर्त्ता, विदेश गमन में तत्पर, भाग्यहीन व दूषित होता है ।। ११ ।।

जा० भ० में कहा है--'पश्चादितः खेन्दुमिताश्च यावन्मरीचयस्ते जनयन्त्यवश्यम् । नरान्विदेशेऽभिरतान्सुदीनान्भाग्येन हीनान्प्रतिपालितांश्च' (र० अ० २ श्लो०) ।। ११ ।।

११ से १५ तक का फल

ऊर्ध्वं पञ्चदशाप्तिर्यावत्तावद्बहुश्रुताः सुजनाः ।
धर्माभिरताः सुमुखाः कुलस्य तुल्याः प्रजायन्ते ।। १२ ।।

यदि ११ से १५ तक रश्मि योग संख्या हो तो जातक—अधिक शास्त्रों का ज्ञाता, सज्जन, धर्मात्मा, सुन्दर मुखवाला व अपने वंश के समान होता है ।। १२ ।।

जा० भ० में कहा है--'परं दशभ्यस्तिथयस्तु यावत्ते भानवो मानवमल्पकायंम् । धर्मप्रियं संजनयन्ति नूनं कुलानुरूपं सुखिनं सुवेषम्' (र० अ० ३ श्लो०) ।। १२ ।।

१६ से २० तक का फल

आविंशतेर्भवेयुः कुलाधिका [1]धनयुता [2]जनख्याताः ।
कीर्तिकराश्च मनुष्या यथाक्रमं स्वजनसम्पूज्याः ।। १३ ।।

यदि १६ से २० तक रश्मि योग संख्या हो तो जातक—अपने कुल से अधिक अर्थात् श्रेष्ठ, धनी, संसार में प्रसिद्ध, कीर्तिमान् और अपने मनुष्यों से पूजनीय होता है ।। १३ ।।

जा० भ० में कहा है--'पञ्चेन्दुतो विंशतिरेव यावद् गभस्तयस्ते मनुजं सुशीलम् । कुर्वन्ति सत्कीर्तिकरं सुधीरं वंशावतंसं कुशलं कुलासु' (र० अ० ४ श्लो०) ।। १३ ।।

२१ से २५ तक का फल

पूज्याः सुभगा धीराः कृतिनो भूपास्तु शरकृतिर्यावत् ।
परतो भवन्ति मनुजाः [3]संसाधितसकलकरणीयाः ।। १४ ।।

यदि २१ से २५ तक रश्मि योग हो तो जातक—पूजनीय, सौभाग्यवान् धैर्यवान्, विद्वान्, राजा और समस्त करणीय कार्यों का साधक होता है ।। १४ ।।

जा० भ० में कहा है—यस्य प्रसूतौ च नखा मयूखास्तद्भाग्य रेखा सुहृदां सुखाय । पञ्चाधिका वशतिरत्र यावत्तावत्फलाधिक्यमनुक्रमेण (र० अ० ५ श्लो०) ।। १४ ।।

२६ से ३० तक का कल

अत उत्तरेण चण्डा नृपाश्रिता नृपतिलब्धधनसौख्याः ।
त्रिंशद्यावत्सचिवाः पूज्याश्च भवन्ति भूपानाम् ।। १५ ।।

यदि २६ से ३० तक रश्मि योग हो तो जातक—उग्र, राजा के आश्रित, राजा से धन व सुख पाने वाला, मन्त्री, और राजाओं का पूजनीय अर्थात् राजगुरू होता है ।।१५।।

जा० भ० में कहा है—यावत्त्रिंशत्संमिता पञ्चवर्गाद्येषां सूतौ चेन्मयूखा नराणाम् । भूमीपालात्प्राप्तसौख्याः प्रधाना नाना संपत्संयुतास्ते भवन्ति (र० अ० ६ श्लो०) ।।१५।।

---

१ जन । २ धन । ३ सत्साधित ।

३१ व ३२ का फल

एकत्रिंशद्भिस्तु प्रवराः ख्याता महीभुजामिष्टाः ।
द्वात्रिंशद्भिः पुरुषाः [1]पञ्चाशद्ग्रामपतयः स्युः ॥ १६ ॥

यदि रश्मि योग संख्या ३१ हो तो जातक—श्रेष्ठ, विख्यात तथा राजाओं का प्रिय पात्र होता है। यदि रश्मियोग संख्या ३२ हो तो जातक—पचास ग्रामों का स्वामी होता है ॥ १६ ॥

जा० भ० में कहा है—येषां नूनं मानवानां प्रसूतावेकत्रिंशत्संख्यकाश्चेन्मयूखाः ।
विख्यातास्ते राजतुल्याः प्रधाना नानासेना स्वामिनः संभवन्ति ॥
प्रसूतिकाले किरणा नराणां द्वित्रिप्रमाणा यदि संभवन्ति ।
नानापुराणामथवा गिरीणां ते स्वामिनो ग्रामशताधिपा वा ॥
(र० अ० ७–८ श्लो०) ॥ १६ ॥

३३ व ३४ का फल

ग्रामसहस्राधिपतिं त्रिंशत्र्यधिका करोति रश्मीनाम् ।
त्रिसहस्रग्रामाणां पुरुषं सूतौ चतुस्त्रिंशत् ॥ १७ ॥

यदि रश्मि योग संख्या ३३ हो तो जातक—एक हजार ग्रामों का स्वामी, यदि ३४ हो तो तीन हजार ग्रामों का स्वामी होता है ॥ १७ ॥

जा० भ० में कहा है–रामाग्निभिश्चापि युगाग्निभिर्वा करैर्नरस्य प्रसवो यदि स्यात् । क्रमात्सहस्त्रं त्रिसहस्रकं च ग्रामान्स पातीति वदन्ति केचित्' (र० अ० ९ श्लो) ॥१७॥

३५ का फल

परतो मण्डलभाजो बहुकोशपरिग्रहा महासत्वाः ।
प्रख्यातकान्तियशसो भवन्ति सुभगाश्च लोकानाम् ॥ १८ ॥

यदि रश्मि योग संख्या ३५ हो तो जातक—जिले का स्वामी, अधिक धनी, बड़ा बली, प्रसिद्ध, कान्तिमान् (चेष्टावान् वा तेजस्वी), यशस्वी व संसार में सौभाग्यवान् होता है ॥ १८ ॥

जा० भ० में कहा है––पञ्चत्रिसंख्यैः खलु यो मयूखैर्जातो भवेन्मण्डलनायकश्च । विलाससत्त्वामलशीलशाली यशो विशेषाधिककोशयुक्तः (र० अ० १० श्लो) ॥ १८ ॥

३६ का फल

त्रिंशत्षड्भिः सहिता रश्मीनां यस्य जन्मसमये स्यात् ।
सार्धं भुनक्ति लक्षं स ग्रामाणां पुमान्नियतम् ॥ १९ ॥

जिसके जन्म के समय में ग्रहों की रश्मि योग संख्या ३६ हो तो जातक—डेढ़ लाख ग्रामों का अवश्य सुख भोगता है ॥ १९ ॥

जा० भ० में कहा है—'रसाग्निसंख्यश्च नगाग्निसंख्यै जातो मयूखैः खलु यः क्रमेण । ग्रामान्मनुष्यः स तु सार्धलक्षं लक्षत्रयं पाति महाप्रतापात् (र० अ० ११ श्लो०) ॥१९॥

---

[1] पञ्चदशग्राम ।

३७ व ३८ का फल

त्रिंशन्मण्डलसहिता रश्मीनां सम्भवे भवेद्येषाम्।
लक्षत्रितयपतित्वं ग्रामाणां जायते तेषाम् ॥ २० ॥

जिनकी कुण्डली में ग्रहों की रश्मि संख्या का योग ३७ वा ३८ हो तो वे जातक—तीन लाख गावों के स्वामी होते हैं ॥ २० ॥

जा० भ० में कहा है—'यस्य प्रसूतौ किरणप्रमाणमष्टत्रिसंख्यै स भवेन्महौजाः। भूमीपतिर्लक्षचतुष्टयं हि ग्रामान् प्रशास्तीन्द्रसमानसम्पत्' (र० अ० १२ श्लो०) ॥२०॥

३९ का फल

त्रिंशत्सनवा गावो जन्मनि येषां ग्रहोत्थिताः सन्ति।
ते तोषितसकलजना भवन्ति पृथ्वीश्वराः पुरुषाः ॥ २१ ॥

जिनके जन्म के समय में ग्रहों की रश्मि संख्या का योग ३९ हो तो जातक—समस्त जनों को प्रसन्न करने वाले राजा होते हैं ॥ २१ ॥

जा० भ० में कहा हैं—'नवत्रिसख्या जनने मयूखा विख्यात कीर्तिन्टपतिर्भवेत्सः। प्रौढप्रतापादगरुडस्वरूपो गर्वोद्धतारातिभुजङ्गमेषु' (र० अ० १३ श्लो) ॥ २१ ॥

४० का फल

दशजलधिगुणाया रश्मिसंख्या नराणां दिशति पृथुलभूमेः पालकत्वं च तेषाम्।
हतरिपुवनिताभिर्गीयतेऽतीव कीर्तिः करुणरुदितगर्भैरुद्यदाक्रोशशब्दैः ॥ २२ ॥

यदि ग्रहों की रश्मि संख्या का योग ४० हो तो जातक—अधिक भूमि का पालन करने वाला होता है। जिसके पराक्रम से मारे गये शत्रुओं की गर्भिणी स्त्रियों के गर्भस्थ जीवों के रोदन से उत्पन्न हुए क्रोध भरे शब्दों से उसकी अत्यन्त कीर्ति का गान होता है ॥ २२ ॥

जा० भ० में कहा है—'खाब्धिप्रमाणैः किरणैः प्रसूतः क्षोणीपतिस्तद् विजयप्रयाणे। भवन्ति सेनागजगर्जितानां प्रतिस्वनाः खे घनगर्जितानि' (र० अ० १४ श्लो०) ॥२२॥

४१ व ४२ व ४३ रश्मि योग संख्या का फल

शशिजलनिधिसंख्यै रश्मिभिः श्रूयते यो जलनिधिरशनायाः पार्थिव स्यात्स भूमेः
द्विजलधिरशनाया पक्षवेदाख्यसंख्यैस्त्रिजलधिरशनाया वह्निवेदैस्तथैव ॥२३॥

यदि ग्रहों की रश्मि संख्या ४१ हो तो जातक—एक दिशा के समुद्र पर्यन्त भूमि का, यदि ४२ हो तो दो दिशाओं के समुद्र तक भूमि का, यदि रश्मियोग संख्या ४३ हो तो तीन दिशाओं के समुद्र पर्यन्त भूमि का राजा होता है ॥ २३ ॥

जा० भ० में कहा है—'मयूखजातं परिसूतिकाले यस्यैकवेदाह्वयकं नरस्य।
द्वयम्भोधिवेलामलमेखलाया भवेदिलायाः परिपालकः सः'

'यमलजलधितुल्यो वा गुणाब्धिप्रमाणो भवति किरणयोगश्चेन्नराणां प्रसूतौ। अतुलबलविलासत्रासतारातिवर्गाः, त्रिजलधिवलयायाः पालकास्ते पृथिव्याः'

(र० अ० १५–१६ श्लो०) ॥ २३ ॥

४४ रश्मियोग का फल

वेदाब्धिसंख्यैश्च मयूखजलैर्जाता नरेन्द्राः खलु सार्वभौमाः।
सौम्याः सुरब्राह्मणभक्तिशीला दीर्घायुषः सत्वयुता भवन्ति ॥ २४ ॥
परतः परतः किरणैर्द्वीपान्तरपालका निरुपसर्गाः।
सर्वनमस्याः सुभगा महेन्द्रतुल्यप्रतापाश्च ॥ २५ ॥

यदि ग्रहों की रश्मि योग संख्या ४४ हो तो जातक—सरल स्वभाव, देवता व ब्राह्मण भक्ति में तत्पर, दीर्घायु, बली व सार्वभौम (राजा) होता है ४४ से जैसे-जैसे अधिक रश्मियोग हो वैसे-वैसे अन्य द्वीपों का पालक, संसार वन्दनीय, सौभाग्यवान्, इन्द्रसम प्रतापी जातक होता है ॥ २४–२५ ॥

जा० भ० में कहा है—'सूतौ वेदयुगप्रमाणकिरणाश्चेत्सार्वभौमः स ना, यत्सेनाजलधौ मलन्मदजला दन्ताबलाः शैलताम्। यान्ति च्छत्रविचित्रिताः कमठता मीनध्वजा मीनता नौकात्वं च रथास्तथायुधरुचिः कल्लोलमाला तुलात्' (२अ० १७श्लो०) ॥२४-२५॥

४५,४६,४७,४८ रश्मियोग का फल

[1]चत्वारिंशद्युक्ता पञ्चादिभिरत्र यस्य सूतौ स्यात्।
ज्ञेयं तस्यारिष्टं [2]सर्वक्षितिपालकं मुक्त्वा ॥ २६ ॥

जिसकी कुण्डली में ४५ से ४८ तक यदि रश्मियोग संख्या हो तो समस्त राजयोगों को त्याग कर उसके अरिष्ट का ज्ञान करना चाहिये ॥ २६ ॥

४९ रश्मियोग का फल

भुवनभरसहिष्णोः सर्वतः क्षीणशत्रो-
स्त्रिदशपतिमहिम्नः सर्वलोकस्तुतस्य
विदधति विहगानां रश्मयोऽतीव दीप्ता-
स्तुरगकृतिसमानाश्चक्रवर्तित्वमेव ॥ २७ ॥

यदि ग्रहों की रश्मियोग संख्या ४९ हो तो जातक समस्त पृथ्वी के भार को सहन करने वाला, चारों तरफ शत्रु से रहित, इन्द्रतुल्य महिमा वाला, समस्त लोकों का वन्दनीय चक्रवर्ती राजा होता है ॥ २७ ॥

फल में विशेषता

अभिमुखकरप्रवाहाः फलं प्रयच्छन्ति पुष्टतरमाशु।
तद्विपरीतं पुंसां पराङ्मुखास्तु ग्रहेन्द्राणाम् ॥ २८ ॥
जन्मसमये ग्रहाणां रश्मीनां संक्षये क्षयो भवति।
वृद्धेर्वर्धिष्णूनामधमोत्तमता क्रमेणैव ॥ २९ ॥

अभिमुख रश्मि पूर्ण फल, पराङ्मुख रश्मि अपूर्ण फल प्रदान करती हैं। जन्म के समय यदि ग्रहों की रश्मि संख्या अल्प हो तो हानि, अधिक हो तो वृद्धि होती है। अर्थात् अल्प रश्मि जातक नीच, अधिक रश्मि वाला श्रेष्ठ होता है ॥ २८–२९ ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां रश्मिचिन्ता नाम षट्त्रिंशोऽध्यायः ॥

---

[1] चत्वारिंशद्वित्ता। [2] सर्वक्षितिपालकानुक्ताः।

सप्तत्रिंशोऽध्यायः ।

श्रीदेवकीर्तिराजः पञ्चमहापुरुषलक्षणान्नृपतीन् ।
कथयति यांस्तानहमपि कथयामि निराकुलीकृत्य ॥ १ ॥

श्री देवकीर्ति राज ने जिन पाँच महापुरुष लक्षण वाले राजयोगों का वर्णन किया है उन्हीं योगों का अव्याकुल होकर मैं भी वर्णन करता हूँ ॥ १ ॥

पाँच महापुरुषों के लक्षण

स्वक्षेत्रे च चतुष्टये च वलिभिः स्वोच्चस्थितैर्वा ग्रहैः
शुक्राङ्गारकमन्दजीवशशिजैरेतैर्यथानुक्रमम् ।
मालव्यो रुचकः शशोऽथ कथितो हंसश्च भद्रस्तथा
सर्वेषामपि[1] विस्तरं म[2]तिमतां संक्षिप्यते लक्षणम् ॥ २ ॥

यदि कुण्डली में शुक्र, भौम, शनि, गुरु, बुध, अपनी राशि में वा उच्चराशि में वली होकर केन्द्र (१, ४, ७, १०) स्थित हों तो मालव्य, रुचक, शश, हंस, भद्र, ये पाँच महापुरुष योग क्रम से अर्थात् यदि शुक्र अपनी राशि (तुला, वृष) में वा उच्च राशि (मीन) में स्थित होकर केन्द्र में हो तो मालव्य नाम का योग होता है। यदि भौम अपनी राशि (मेष, वृश्चिक) में वा उच्च राशि (मकर) में स्थित होकर केन्द्र में हो तो रुचक योग होता है। इसी प्रकार शनि, गुरु, बुध केन्द्रस्थ हों तो शनि वश शश योग, गुरु से हंस, बुध से भद्र योग होता हैं। इन पांचों के लक्षण विद्वानों ने विस्तार पूर्वक कहे हैं मैं संक्षेप से कहता हूं ॥ २ ॥

स्पष्टार्थ चक्र
(मालव्य)

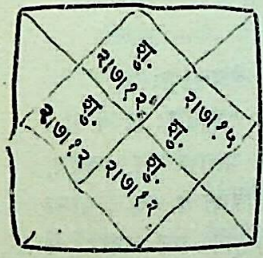

स्पष्टार्थ चक्र
(रुचक)

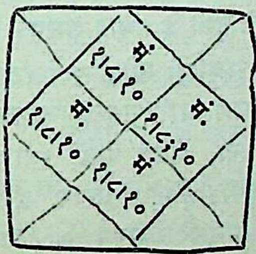

स्पष्टार्थ चक्र
(शश)

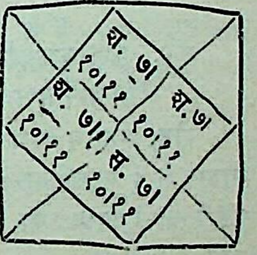

---

१ मति !

२ विस्तरान्मुनिमतात्संकल्प्य ते ।

३ बलैः ।

स्पष्टार्थ चक्र
(हंस)

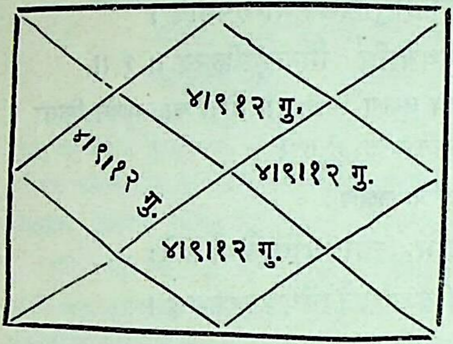

स्पष्टार्थ चक्र
(भद्र)

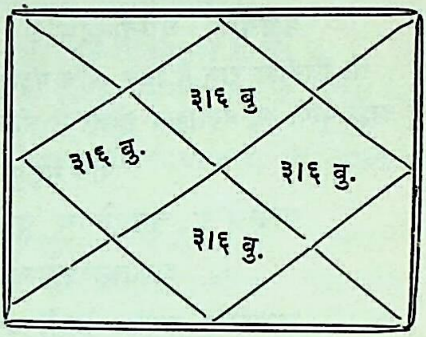

शुक्रादि से फल का ज्ञान

महीसुतात्सत्वमुदाहरन्ति गुरुत्वमिन्दोस्तनयाद्गुरोश्च ।
स्वरं सितात्स्नेहमिनेश्च वर्णं बलाबलं पूर्णलघूनि चैषाम् ॥३॥

भौम से वल, (पराक्रम) बुध से गुरुता, गुरू से स्वर, शुक्र से स्नेह, शनि से वर्ण, का विचार करना चाहिये, अर्थात् भौम वली हो तो पूर्ण बलवान्, निर्वल होतो लघु अल्प वलवान् इसी प्रकार बुध से पूर्ण अल्प गुरुता का, गुरू से पूर्ण, अल्प स्वर का, शुक्र व शनि से स्नेह व वर्ण का विचार करना चाहिये ॥ ३ ॥

सतोगुणी के प्रधान लक्षण

मृदुर्दयालुर्बहुदारभृत्यः[1] स्थिरस्वभावः प्रियसत्यवादी ।
सुरद्विजोपास्तिकरः सहिष्णुर्भवेन्नरः सत्वगुणप्रधानः ॥ ४ ॥

सरल स्वभावी, दयालू, अधिक स्त्री व नौकर वाला, स्थिर स्वभाव, प्रिय सत्यभाषी, देवता व ब्राह्मणों का पूजक, सहनशील, ये सत्व गुण की प्रधानता होने पर मनुष्यों में रहते हैं ॥ ४ ॥

रजो गुणी के प्रधान लक्षण

शूरः कलाकाव्यनिधिः[2] सुबुद्धिः स्त्रीभोगसंसक्तमनाः [3]प्रवीणः ।
अडम्बरी हास्यरतिः[4] प्रगल्भो[5] गेयाक्षविद्राजसिकः [6]प्रदिष्टः ॥ ५ ॥

वीर, कला व काव्य का खजाना, सुन्दर बुद्धि, स्त्री भोग में आसक्त मन, चतुर, आडम्बरी (बहुरूपिया) हास्य अर्थात् हंसने में तत्पर, ढीठ, गानविद्या व अक्ष (पासा फेंकने की) विद्या का ज्ञाता, ये गुण रजोगुण की प्रधानता होने पर मनुष्यों में रहते हैं ॥ ५ ॥

---

[1] दास । [2] विनिष्टबुद्धिः । [3] सक्तचित्तः क्रतुषु । [4] रतः । [5] गोपोक्षविद्रा, वेदार्थविद्रा । [6] प्रसिद्धः ।

तमो गुणी के प्रधान लक्षण

मूर्खोऽलसो वञ्चयिता परेषां क्रोधी विषण्णः पिशुनः क्षुधार्तः ।
आचारहीनो न शुचिर्मदान्धो[1] लुब्धः प्रमादी तमसाभिभूतः ।। ६ ।।

मूर्ख, आलसी, ठग, क्रोधी, विषादी, चुगलखोर, भूख से पीड़ित, आचार से हीन अर्थात् दुराचारी, अपवित्र, नशे में चूर, लोभी, प्रमादी, ये बातें तमोगुण की प्रधानता से होती हैं ।। ६ ।।

समस्त पृथ्वी पालक का ज्ञान

भारो भवति नृपाणां भूम्यर्धं[2] भुञ्जतां मनुष्याणाम् ।
येषां भागे[3] त्वर्धं सकलमहीपालकास्ते स्युः ।। ७ ।।

मनुष्यों की आधी भूमि का भोग करने वाला राजाओं का भार रूप जन होता है । जिन राजाओं के पास आधी भूमि होती है वे समस्त भूमि के पालक होते हैं ।। ७ ।।

शत्रु जेता राज योग

समाः स्वरैः सिंहमृदङ्गदन्तिनां रथौघभेरीवृषतोयदायिनाम् ।
समस्तभूमण्डलरक्षणक्षमा भवन्ति भूपा जितशत्रवो नराः ।। ८ ।।

जिन मनुष्यों के स्वर (शब्द) सिंह, मृदङ्ग (वाद्य विशेष) हाथी, रथ समुदाय, भेरी, वृष वा मेघ के समान होते हैं वे जातक—समस्त भूमि की रक्षा करने में समर्थ, शत्रु जेता राजा होते हैं ।। ८ ।।

विशेष राज योग

स्निग्धैर्भवन्ति भूपा जिह्वात्वग्दन्तनेत्रनखकेशैः ।
रूक्षैरेभिर्निःस्वाः स्वरैश्च ते जातके कथिताः ।। ९ ।।

जिस मनुष्य के जिह्वा (जीभ), त्वचा (खाल), दाँत, नेत्र, नख, केश, चिकने व चमकदार हों तो वह राजा होता है । जिसके जिह्वादि शुष्क व स्वर भी शुष्क हो तो मनुष्य निर्धन होता है ऐसा जातक ग्रन्थ में कहा है ।। ६ ।।

विशेष—सं० वि० वि० की पुस्तक में श्लोक का उत्तरार्द्ध ऐसे हैं— रूक्षैरेतैर्निस्वाः सारस्वतजातके कथिताः) अर्थात् सारस्वत जातक में यह फल उक्त है ।। ९ ।।

राजा का वर्ण ज्ञान

स्निग्धस्तेजोयुक्तः शुद्धो वर्णः प्रकीर्तितो नृपतेः ।
विपरीतः क्लेशभुजां सुतार्थसुखभागिनां मध्यः ।। १० ।।

चीकना व तेज से युक्त शुद्ध वर्ण राजा का कहा है । इसके विपरीत अर्थात् रूक्ष व तेज हीन होने पर क्लेश दायक, व सुत-धन-सुख का भोग मध्यम होता है ।। १० ।।

---

१ र्गदार्तो । २ भूराश्यर्धं, भूत्यर्धं । ३ भाराध्य ।

तत्त्व ज्ञान

व्योमाम्बुवाताग्निमहीस्वभावा जीवासुरेड्यार्किमहीजसौम्यैः ।
छाया मरुत्पित्तकफस्वरूपा[१] मिश्रैस्तु मिश्रा बलिभिर्नरस्य ॥ ११ ॥

जिसकी कुण्डली में गुरु बली हो तो वह आकाश स्वभाव, शुक्र बली हो तो जल तत्त्व की अधिकता, अर्थात् जल स्वभाव, शनि बली हो तो वायु स्वभाव, भौम बली हो तो अग्नि स्वभाव, बुध बली हो तो पृथ्वी स्वभाव, गुरु शुक्र से छाया स्वरूप, शनि से वायु, भौम से पित्त, बुध से कफ स्वरूप होता है । १, २ या अधिक बली हों तो मिश्र स्वभाव व स्वरूप होता है ॥ ११ ॥

आकाश तत्त्व का फल

शब्दार्थविन्न्यायपटुः प्रगल्भो विज्ञानयुक्तो विवृतास्यभागः ।
चित्राङ्गसन्धिः कृशपाणिपादो व्योमप्रकृत्या पुरुषोऽतिदीर्घः ॥१२॥

यदि आकाश प्रकृति जातक की हो तो जातक—शब्दार्थ का ज्ञाता, न्याय में चतुर, ढीठ, विज्ञान से युक्त, खुला हुआ मुख. चित्रित देह की सन्धि, दुबले हाथ पाद (पाँय), व अधिक लम्बा होता है ॥ १२ ॥

जल तत्त्व का फल

जलस्वभावो बहुवारिपायी प्रियाभिभाषी[२] द्रवभोजनश्च ।
चलस्वरूपो बहुमित्रपक्षः क्षोणीपतिर्नातिचिरप्रगल्भः ॥ १३ ॥

यदि जल प्रकृति हो तो जातक—अधिक जल पीने वाला, प्रिय (मधुर) भाषी, स्निग्ध भोजी, चञ्चल स्वरूपी, अधिक मित्र वाला, राजा और अत्यन्त अधिक काल तक ढीठ नहीं होता है ॥ १३ ॥

वायु तत्त्व का फल

सत्त्वेन वायोः पुरुषः कृशाङ्गः क्षिप्रं च कोपस्य वशं प्रयाति ।
कृत्यैकबुद्धिर्भ्रमणे रतश्च दाता सितो भूपतिरप्रधृष्यः ॥ १४ ॥

यदि वायु प्रकृति हो तो जातक—कृश (दुर्बल) काय (शरीर), जल्दी क्रोध के वशीभूत, कार्य में दत्त चित्त, घूमने में तत्पर, दानी, सफेद वर्ण और अजेय राजा होता है ॥ १४ ॥

अग्नि तत्त्व का फल

शूरः क्षुधार्तश्चपलोऽतितीक्ष्णः[३] प्राज्ञः कृशो गौरतनुर्विरोधी ।
विद्वान्सुपाणिर्बहुभक्षणश्च[४] वह्निस्वभावः पुरुषोऽतिकायः ॥ १५ ॥

यदि अग्नि प्रकृति हो तो जातक—वीर, भूख से पीड़ित, चञ्चल, अधिक तीव्र वा अधिक तृष्णा से युक्त अधिक ज्ञाता, दुर्बल, सफेद वर्ण, विरोध कर्त्ता, पण्डित, सुन्दर हाथ वाला वा अभिमानी, अधिक भोजन कर्ता और विशाल देहधारी होता है ॥ १५ ॥

---

[१] कफानु । [२] ध्रुवं । [३] तृष्णाः । [४] सुमानी ।

भूमि (तत्त्व) का फल

कर्पूरजात्युत्पलपुष्पगन्धो भुनक्ति भोगान् स्थिरलब्धसौख्यः ।
सिंहाभ्रघोषः स्थिरचित्तवृत्तिर्महीस्वभावः पुरुषः ससत्वः[1] ॥ १६ ॥

यदि भूमि प्रकृति हो तो जातक—कपूर एवं जाती व कमल के पुष्प के समान गन्ध वाला, भोगी, स्थिर सुखी, सिंह व मेघ के समान शब्द वाला, स्थिर चित्त वृत्ति वाला व बली होता है ॥ १६ ॥

आकाश छाया का फल

स्फटिकोपलसङ्काशा स्वच्छा गगनोत्थिता भवेच्छाया ।
निधिरिव पुंसां धन्या त्रिवर्गफलसाधनी सौम्या ॥ १७ ॥

जिसके आकाश तत्त्व का उदय होता है वह जातक—स्फटिक मणि व कमल के समान निर्मल कान्ति वाला होता है । जैसे खजाने वाले पुरुषों को सर्व सुख की प्राप्ति होती है उसी प्रकार जातक को धर्म, अर्थ, काम की प्राप्ति होती है ॥ १७ ॥

जल छाया का फल

स्निग्धा सिता च हरिता कान्ता मातेव सर्वसुखजननी ।
सौभाग्याभ्युदयशुभान्करोति जलसम्भवा छाया ॥ १८ ॥

जिसके जल तत्त्व का उदय होता है वह जातक—सरस, शुभ्र, हरित वर्ण, माता के समान सर्व सुख भोगी, अर्थात् जैसे माता सब सुख दायिनी होती है उसी प्रकार, सौभाग्यवान् व उन्नति कर्त्ता होता है ॥ १८ ॥

वायु छाया का फल

असितजलदकान्तिः पापगन्धोऽतिमूढो
मलिनपरुषकायः शोकसन्तापतप्तः ।
स [2]वहति वधदैन्यव्याध्यनर्थार्थनाशान्
विचरति पवनोत्था यस्य कान्तिः शरीरे ॥ १९ ॥

जिसके शरीर में वायु तत्त्व (छाया) का उदय होता है वह जातक—काले मेघ के समान कान्ति वाला, दुर्गन्धी, अधिक मूर्ख, दूषित कठोर देही, शोक व सन्ताप से पीड़ित, हिंसक, दरिद्री, रोगी, अनर्थी व धन नाशक होता है ॥ १९ ॥

वह्नि छाया का फल

कमनदहनदीप्तिश्चण्डदण्डोऽतिहृष्टः
प्रणतसकलशत्रुर्विक्रमाक्रान्तभूमिः ।
भजति मणिसुवर्णं सर्वकार्यार्थसिद्धिं
प्रशमितगदशोको[3] वह्निजायां प्रभायाम् ॥ २० ॥

---

[1] सुसत्वः । [2] भवति । [3] गतकोपो ।

जिसके अग्नि छाया का उदय होता है वह जातक—सुन्दर अग्नि के समान कान्ति वाला, उग्र (कठोर) दण्ड दाता, अधिक प्रसन्न, समस्त शत्रुओं से वन्दित, पराक्रम से भूमि को प्राप्त करने वाला, मणि व सुवर्ण से युक्त, समस्त कार्यों का साधक एवं रोग व शोक वा क्रोध से हीन होता है ।। २० ।।

भूमि छाया का फल

आद्याम्बुसिक्तवसुधागरुतुल्यगन्धः
सुस्निग्धदन्तनखरोमशरीरकेशः ।
धर्मार्थतुष्टिसुखभाग्जनसम्प्रियश्च
च्छाया यदा भवति भूमिकृता मनुष्ये ।। २१ ।।

जिसके भूमि छाया का उदय होता है वह जातक—प्रथम जल की बूंद से भूमि में जो गन्ध उत्पन्न होती है उसी गन्ध के समान सुगन्धित, सुन्दर चीकने दाँत, नख, रोम, शरीर, केशवाला, धर्म, धन, सुख का भोगी अर्थात् धर्मात्मा, धनी, सुखी, और जनप्रिय होता है ।। २१ ।।

वात प्रकृति का फल

शीतार्तो बहुभाषको द्रुतगतिर्नावस्थितः कुत्रचित्
शूरो मत्सरवान्रुजाकररुचिर्दौर्भाग्ययुक्तोऽनयः ।
दन्तान्खादति[1] नातिसौहृदमतिर्गान्धर्ववेत्ता कृशो
मित्राणां समुपार्जनेऽतिनिपुणः स्वप्ने च खे गच्छति ।। २२ ।।
अपगतधृतिरूक्षश्मश्रुकेशः कृतघ्नः
स्फुटितचरणहस्तः[2] क्रोधनो नष्टकान्तिः ।
विलपति च[3] निबन्धी वित्तसंक्षारकारी[4]
भवति पुरुष एवं मारुतैकप्रधानः ।। २३ ।।

जिसकी वायु प्रकृति होती है वह जातक—शीत (ठंड) से दुःखी, अधिक बोलने वाला, शीघ्र ग्रामी, कहीं भी रुकने वाला नहीं, वीर, ईर्ष्यालु, रोगी, भाग्यहीन, अन्यायी, दाँतों को चबाने वाला, अर्थात् क्रोधी अधिक मित्रता बुद्धि से रहित, संगीत का ज्ञाता, दुर्बल, मित्रों की प्राप्ति में अधिक चतुर, स्वप्न में आकाश में उड़ने वाला, धैर्यता से रहित, शुष्क मूंछ व बार वाला, कृतघ्नी, फटे पैर व हाथ वाला, क्रोधी, कान्ति से रहित, धन नाशक और निबन्ध (मल मूत्र का अवरोध) रोग से विलाप करने वाला होता है ।। २२–२३ ।।

पित्त प्रकृति का फल

दुर्गन्धी लघुतापनो विपुलधीः क्षिप्रप्रसादः पुनः
पीनो रक्तनखाक्षिपाणिचरणो वृद्धाकृतिर्दाहवान् ।

---

[1] दन्तात्खादति । [2] घटित । [3] न निबन्धं । [4] चित्तसंहारकारी ।

मेधावी युधि निर्भयो हिमरुचिर्ब्रूते निगृह्यापरान्
नो भीतः प्रणयं प्रयाति बहुभिः कुर्यान्नतानां प्रियम् ॥ २४ ॥
स्वप्नेऽभिपश्यति सुवर्णदिनेशदीपान्
दावाग्निकिंशुकजपामणिकर्णिकारान् ।
रक्ताब्जषण्डरुधिरौघतटित्समूहान्
पित्ताधिको निगदितः खलु लक्षणज्ञैः ॥ २५ ॥

जिसकी पित्त प्रकृति होती है वह जातक—दुर्गन्धी, थोड़ा संतापी, विशाल बुद्धि, जल्दी प्रसन्न होने वाला, मोटा, लाल नख व आँख पैर और हाथ वाला, वृद्ध के तुल्य आकार वाला, जलन वाला, बुद्धिमान् संग्राम में निर्भीक, शीत प्रिय, दूसरों को पकड़ कर बोलने वाला, अधिकों से डर कर शरण में नहीं जाने वाला, नम्रता से युक्त मनुष्यों का प्रेमी होता है तथा स्वप्न में सुवर्ण सूर्य, दीपक, दावाग्नि, पलाश पुष्प, मणि, कनहल पुष्प, लाल कमल, नपुंसक, खून के समूह व विजली के समूहों को देखता है ॥ २४–२५ ॥

कफ प्रकृति का फल

श्रीमान् श्लिष्टाङ्गसन्धिर्धृतिबलसहितः स्निग्धकान्तिः सुदेहो
ग्राही सत्वोपपन्नो हतमुरजघनध्वानघोषः सहिष्णुः ।
गौरो रक्तान्तनेत्रो मधुररसरुचिर्बद्धवैरः कृतज्ञः
क्लेशे च स्यादखिन्नः सकलजनसुहृत्पूजको वा[1] गुरूणाम् ॥२६ ॥
सुप्तस्तु पश्यति समुद्रनदीसरांसि
मुक्ताफलप्रकरहंससिताब्जशङ्खान् ।
नक्षत्रकुन्दकुमुदेन्दुतुषारपातान्
श्लेष्माधिको मुनिवरैः कथितः क्रमेण ॥ २७ ॥

जिसकी कफ प्रकृति होती है वह जातक—लक्ष्मीवान्, गठित देह सन्धि, धैर्यवान्, बलवान्, चिकनी कान्तिवाला, सुन्दर देहधारी, ग्रहण कर्त्ता, सतो गुणी, मृदङ्ग व मेघ के शब्द से भी अधिक शब्द वाला, सहन शील, गौर वर्ण, लाल नेत्र प्रान्त वाला, मधुर रस का प्रेमी, शत्रु से शत्रुता करने वाला, कृतज्ञ, अर्थात् उपकार मानने वाला, क्लेश में प्रसन्न, समस्त मनुष्य व मित्र एवं गुरुजनों का पूजक होता है। वह सोता हुआ स्वप्न में समुद्र, नदी, तालाब, मोती के समुदाय, हंस, सफेद कमल, शङ्ख, नक्षत्र, कुन्द, पुष्प, चन्द्रमा और तुषार पात अर्थात् पाला पतन को देखता है ॥ २६–२७ ॥

राज योग में विशेष कथन

बलरहितेन्दुरविभ्यां युक्तैर्भौमादिभिर्ग्रहैर्मिश्राः ।
न भवन्ति महीपाला दशासु तेषां सुतार्थयुताः ॥ २८ ॥

यदि कुण्डली में बली भौमादि ग्रह से राज योग की सत्ता हो तथा सूर्य चन्द्रमा निर्बल हों तो राज योग नहीं होता है किन्तु राज योग कारक ग्रह की दशा, अन्तर्दशा में धन पुत्रादि प्राप्ति होती है ॥ २८ ॥

---

[1] नो।

मालव्य योग का फल

न स्थूलोष्ठो न विषमवपुर्नातिरक्ताङ्गसन्धि-
मध्ये क्षामः शशधररुचिर्हस्तिनादः[1] सुगन्धः ।
सन्दीप्ताक्षः समसितरदो जानुदेशाप्तपाणि-
र्मालव्योऽयं विलसति नृपः[2] सप्ततिर्वत्सराणाम्[3] ॥ २९ ॥
वक्त्रं त्रयोदशमितानि तथाङ्गुलानि[4]
दैर्घ्येण कर्णविवराद्दशविस्तरेण[5] ।
मालव्यसंज्ञमनुजः स भुनक्ति नूनं
लाटान्समालवससिन्धुसपारियात्रान् ॥ ३० ॥

यदि कुण्डली में मालव्य योग हो तो जातक का ओष्ठ न मोटा, न विषम शरीर, न अधिक लाल अङ्ग सन्धि, अर्थात् ये तीनों मध्यम, कमर पतली, चन्द्रमा के समान शुभ कान्ति, हाथी के तुल्य स्वर (शब्द), सुगन्ध से युक्त, चमकदार आँख, समान व सफेद दांत, घुटने तक हाथ, और ७० वर्ष तक जीवन होता है। मुख १३ अँगुल लम्बा व कान के छेद से १० अँगुल चौड़ा होता है। मालव्य योग में उत्पन्न मनुष्य लाट-मालव-सिन्धु (सिन्ध) व पारियात्र देशों का सुख अवश्य भोगता है ॥ २९–३० ॥

॥ इति मालव्ययोगफलम् ॥

रुचक योग का फल

दीर्घास्यः स्वच्छकान्तिर्बहुरुचिरबलः साहसावाप्तकार्य[6]-
श्चारुभ्रूर्नीलकेशश्चरणरणरतो मन्त्रविच्चोरनाथः ।
[7]रक्तश्यामोऽतिशूरो रिपुबलमथनः कम्बुकण्ठः प्रधानः
क्रूरो भर्ता नराणां द्विजगुरुविनतः क्षामसज्जानुजङ्घः ॥ ३१ ॥
खट्वाङ्गपाशवृषकार्मुकवज्रवीणा रेखाङ्कहस्तचरणश्च [8]शताङ्गुलश्च ।
मन्त्राभिचारकुशलस्तुलया सहस्रं मध्ये च तस्य कथितं मुखदैर्घ्यतुल्यम् ॥३२॥
विन्ध्याचलसह्यगिरीन् भुनक्ति सप्ततिसमा नगरदेशान् ।
शस्त्रानलकृतमृत्युः प्रयाति देवालयं रुचकः ॥ ३३ ॥

यदि कुण्डली में रुचक योग हो तो जातक का मुख लम्बा, निर्मल कान्ति, अधिक सुन्दर, बलवान्, साहस से कार्यसिद्ध कर्त्ता, सुन्दर (मनोहर) भौंह, नीले बार व पैर संग्राम में लीन, मन्त्रों का ज्ञाता, चोरों का स्वामी, लाल कृष्ण वर्ण, अधिक वीर, शत्रुओं के बल का मन्थन करने वाला, अर्थात् शत्रुओं को जीतने वाला, शंख के समान कण्ठ (ग्रीवा), अग्रणी, कठोर, मनुष्यों का स्वामी अर्थात् राजा, ब्राह्मण व गुरुजनों का पूँजक, पतले घोटू व जांघ हाथ व पैर में खट्वांग, पाश, वृष, धनुष, वज्र, वीणा की

---

१ हस्तिसार । २ वयः । ३ सप्तति वत्सराणाम् । ४ दशा । ५ विवरं । ६ दाप्त ।
७ मणः ८ । कृत्वङ्गमालांघटैः ।

रेखा वाला, १००० अँगुल लम्बा, मन्त्र व अभिचार कर्म में चतुर, तौल में सहस्र (१०००) तुला व मुख की लम्बाई के बराबर कटि (कमर) भाग वाला होता है। विन्ध्य व सह्य पर्वतस्थ देश एवं नगरों का ७० वर्ष तक सुख भोगकर, शस्त्र वा अग्नि के आघात से मृत्यु प्राप्त करके स्वर्गलोक में जाता है ।। ३१–३३ ।।

।। इति रुचकः ।।

शश योग का फल

तनुद्विजास्यो द्रुतगः शशोऽयं शठोऽतिशूरो निभृतप्रतापः ।
वनाद्रिदुर्गेषु नदीषु सक्तः कृशोदयी नातिलघुः प्रसिद्धः ।। ३४ ।।
सेनानाथो निखिलनिरतो दन्तुरश्चापि किंचित्
धातोर्वादे भवति निरतश्चञ्चलः कोशनेत्रः ।
स्त्रीसंसक्तः परधनगृहो मातृभक्तः सुजङ्घो
मध्ये क्षामो बहुविधमती रन्ध्रवेदी परेषाम् ।। ३५ ।।
पर्यङ्कशङ्खहरिशस्त्रमृदङ्गमाला-
वीणोपमा यदि करे चरणे च रेखाः ।
वर्षाणि सप्ततिमितानि करोति राज्यं
प्रत्यन्तिकः क्षितिपतिः कथितो मुनीन्द्रैः ।। ३६ ।।

यदि कुण्डली में शश योग हो तो जातक—छोटे दांत व मुख वाला, शीघ्रगामी, धूर्त, अधिक वीर, सघन प्रताप वाला, वन-पर्वत-किला व नदियों में आसक्त, कृश, अधिक अल्प (नाटा) कद नहीं, प्रसिद्ध, सेनाध्यक्ष, समस्त कार्यों का तत्परता से संचालक, कुछ ऊँचे दांत वाला, धातु परीक्षा में तत्पर, चंचल कमल के समान नेत्रवाला, स्त्री में आसक्त, दूसरे के धन का ग्रहण कर्त्ता, माता का भक्त, सुन्दर जांघ वाला, पतली कमर वाला, बहु प्रकार की बुद्धि से युक्त, दूसरों के छीद्रों का अन्वेषक, हाथ व पैर में शय्या, शंख, चक्र, मृदंग, माला, वीणा के समान रेखा वाला होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य किसी एक प्रान्त का राजा होकर ७० वर्ष तक राज्य करता है। ऐसा ऋषियों ने कहा है ।। ३४–३६ ।।

।। इति शशः ।।

हंस योग का फल

रक्तास्योन्नतनासिकः सुचरणो हंसः प्रसन्नेन्द्रियो
गौरः [1]पीनकपोलरक्तकरजो हंसस्वरः श्लेष्मलः[1] ।
शङ्खाब्जाङ्कुशदामसत्स्ययुगलः [3]खट्वाङ्गचापाङ्गद-
श्चिह्नैः पादकराङ्कितो मधुनिभे नेत्रे च वृत्तं शिरः ।। ३७ ।।
सलिलाशयेषु रमते स्त्रीषु न तृप्तिं प्रयाति कामार्तः ।
षोडशशतानि तुलितोऽङ्गुलानि दैर्घ्येण षण्णवतिः ।। ३८ ।।

---

१ श्लक्ष्णः श्यामो । २ चक्रासि । ३ पीत ।

पातीह देशान्खलु शूरसेनान्गान्धारगङ्गायमुनान्तरालान् ।
जीवेदनू[1]नां शतवर्षसंख्यां पश्चाद्वनान्ते समुपैति नाशम् ॥३९॥

यदि कुण्डली में हंस योग हो तो जातक का मुख लाल, ऊँची नाक, सुन्दर पैर, प्रसन्नचित्त, सफेद रंग अर्थात् गोरा, मोटे गाल, लाल नख, हंस के तुल्य शब्द, कफाधिक्य, हाथ व पैर में शंख, कमल, अंकुश, रज्जू, दो मछली, शय्या, धनुष की रेखाओं से युक्त, सहत की आभा के तुल्य आँख, गोल मस्तक, जलाशय प्रिय, काम से पीडित होने के कारण स्त्री में अतृप्त, तौल में १६०० तुला, लम्बाई में ९६ अंगुल होता है। हंस योग में जायमान पुरुष शूर सेन, गान्धार और गंगा यमुना के मध्य देशों का पालक होता है तथा १०० वर्ष जीवन प्राप्त करके वनान्त में मृत्यु को प्राप्त होता है ॥ ३७–३९ ॥

भद्रयोग का फल

शार्दूलप्रतिमाननो द्विपगतिः पीनोरुवक्षःस्थलो
लम्बापीनसुवृत्तबाहुयुगलस्तत्तुल्यमानोच्छ्रयः ।
कामी कोमलसूक्ष्मरोमनिकरैः संरुद्धगण्डस्थलः
प्रायः पङ्कजगर्भपाणिचरणः सत्वाधिको योगवित् ॥४०॥
शङ्खासि[2]कुञ्जरगदाकुसुमेषुकेतुचक्राब्जलाङ्गलविचिह्नितपाणिपादः ।
यत्रागुरुद्विपमदप्रथमाम्बुसिक्तभूकुङ्कुमप्रतिमगन्धतनुः सुघोणः ॥४१॥

यदि कुण्डली में भद्रयोग हो तो जातक—सिंह के समान मुख वाला, हाथी के तुल्य गति वाला, मोटी जङ्घा व छाती वाला, लम्बी मोटी गोल भुजा (हाथ) वाला, भुजा के मान से ऊँचा, कामी. कोमल (मुलायम। सूक्ष्म रोम के समुदायों से युक्त दाढ़ी वाला, पण्डित, कमल की नाल के सदृश कोमल हाथ पैर वाला, अधिक बली, योग क्रिया का ज्ञाता, हाथ व पैर में शङ्ख, तलवार, हाथी, गदा, पुष्प, वाण, केतु, (पताका), चक्र, कमल व हल की रेखाओं से युक्त, अगरू, (गूगुल) हाथी मद तथा प्रथम वृष्टि से उत्पन्न भूमि की धूलि के समान सुगन्ध से युक्त शरीर वाला और सुन्दर नाक वाला होता है ॥४०–४१॥

अन्य फल

शास्त्रार्थविद्धृतियुतः समसंगतभ्रूर्नागोपमो भवति [3]चाथ निगूढगुह्यः ।
सत्कुक्षिधर्मनिरतः सुललाटशङ्खो धीरः स्थिरस्त्वसितकुञ्चितकेशभारः ॥४२॥
स्वतन्त्रः सर्वकार्येषु स्वजन[4]प्रीणन[5]क्षमी ।
भुज्यते विभवश्चास्य नित्यं [6]मन्त्रिजनैः परैः ॥४३॥
भारस्तुलायां तुलितो यदि स्याच्छ्री[7]मध्यदेशेष्वधिपस्तदासौ ।
[8]यस्त्र्यादिपुष्टैः सहितः सभद्रः सर्वत्र राजा शरदामशीतिः ॥४४॥

---

१ जीवेन्नवघ्नां दश । २ तोरण । ३ चाति, चापि । ४ स्वजनं प्रति । ५ क्षमः । ६ अथि मित्र । ७ कान्यकुब्जातिपतिः । ८ हस्त्यादिमुख्यैः ।

भद्रयोग में उत्पन्न जातक शास्त्र के अर्थ अर्थात् तत्त्व का ज्ञाता, धैर्यवान्, समान सङ्गत भौंह वाला, सर्प तुल्य उपमा वाला, गूढ गुह्याङ्गधारी, सुन्दर पेटवाला, धर्मात्मा, शङ्ख के समान सुन्दर मस्तक वाला; धीर, स्थिरचित्त, काले घुँघराले केश वाला, समस्त कार्यों में स्वतन्त्र, अपने जनों के पालन में सक्षम होता है। मित्र गण व अन्य लोग इसके ऐश्वर्य का नित्य भोग करते हैं। यदि तौल में १ भार तुल्य हो तो मध्य देशों में राजा या कान्यकुब्ज देश का राजा होता है। जो कि पुष्ट स्त्री आदि से युक्त राजा होकर ८० वर्ष तक जीता है ॥४२–४४॥

॥ इति भद्रः ॥

॥ इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां पञ्चमहापुरुषलक्षणं नाम सप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥

अष्टत्रिंशोऽध्यायः ।

विस्तरतो निर्दिष्टाः क्षितिपतियोगा विचित्रसंस्थानाः ।
भङ्गश्च भवति तेषां यथा तथा सम्प्रवक्ष्यामि ॥१॥

इस अध्याय के पूर्व वाले अध्यायों में मैंने अनेक प्रकार के राजयोगों का वर्णन किया है। अब उन राजयोगों का जैसे भङ्ग होता है, उस राजयोग भङ्ग अध्याय को कहता हूँ ॥१॥

राजयोगभंग ज्ञान

कुजार्कजीवार्किभिरत्र नीचैर्द्वाभ्यां त्रिभिर्वैकतमे विलग्ने ।
निशाकरे वृश्चिकराशिसंस्थे विशीर्यते राजकरो हि योगः ॥२॥

यदि जन्म के समय सूर्य, भौम, गुरु, शनि, ये सब ग्रह या ३ ग्रह, वा २, वा १ ग्रह लग्न में नीच राशि में स्थित हों वा हो और जिस किसी भाव में नीचस्थ चन्द्रमा हो तो राजयोग भङ्ग हो जाता है ॥२॥

पुनः राजयोगभंग ज्ञान

अन्त्याष्टभादिभागे चरराश्यादिषु शशी यदा क्षीणः ।
एकेनापि न दृष्टो ग्रहेण भङ्गस्तदा नृपतेः ॥३॥

यदि जन्म के समय क्षीण चन्द्रमा चरराशि के अन्तिम नवांश में वा स्थिर राशि के अष्टम नवांश में अथवा द्विस्वभाव राशि के प्रथम नवांश में हो और किसी एक भी ग्रह से दृष्ट न हो तो राजयोग भङ्ग हो जाता है ॥३॥

अन्य राजयोगभंग ज्ञान

सर्वे क्रूराः केन्द्रे नीचारिगता न सौम्ययुतदृष्टाः ।
शुभदा व्ययरिपुरन्ध्रे तदाऽपि भङ्गो भवेन्नृपतेः ॥४॥

यदि जन्म के समय समस्त पापग्रह केन्द्र में नीच व शत्रुराशि में स्थित हों व शुभ ग्रहों से अदृष्ट व अयुक्त हों एवं सब शुभग्रह द्वादश, षष्ठ व अष्टम भाव में स्थित हों तो राजयोग का भङ्ग हो जाता है ॥४॥

अन्य भंग योग ज्ञान

लग्नं गणोत्तमोनं न खेचरैर्दृश्यते तदा भङ्गः ।
भवति हि नृपयोगानां दारिद्र्याय प्रजातस्य ॥५॥

यदि जन्म के समय लग्न में वर्गोत्तम नवांश का अभाव हो और अन्य किसी ग्रह से लग्न दृष्ट न हो तो राजयोग का भङ्ग होता है तथा जातक दरिद्री होता है ॥५॥

अन्य राजयोगभंग ज्ञान

घटोदये नीचगतैस्त्रिभिर्ग्रहैर्वृहस्पतौ सूर्ययुते च नीचगे ।
एकोऽपि नोच्चे [१]त्व शुभे च सङ्गते प्रयान्ति नाशं शतशो नृपोद्भवाः ॥६॥

यदि जन्म के समय में कुम्भ लग्न हो व तीन ग्रह नीच राशि में हों और नीचस्थ गुरू सूर्य के साथ हो एवं एक भी ग्रह उच्चस्थ न हो तथा पापग्रह से अयुक्त (लग्न) हो तो सैकड़ों राजयोग नष्ट हो जाते हैं ॥६॥

प्रकारान्तर से भंगयोग ज्ञान

शून्येषु केन्द्रेषु शुभैर्नवेन्दावस्तं गतैर्नीचमथ प्रयातैः ।
चतुर्ग्रहैर्वाऽपि गृहे रिपूणां प्रणश्यति क्ष्माधिपतेस्तु योगः ॥७॥

यदि जन्म के समय में केन्द्र (१, ४, ७, १०) में शुभग्रहों का अभाव हो व चन्द्रमा अस्त न हो वा चार ग्रह नीचराशि में वा शत्रुराशि में स्थित हों तो राजयोग का भङ्ग होता है ॥७॥

अन्य राजयोगभंग ज्ञान

स्वांशे रवौ शीतकरे विनष्टे पापैश्च दृष्टे शुभदृष्टिहीने ।
कृत्वाऽपि राज्यं च वने मनुष्यः पश्चात्सुदुःखं लभते गताशः ॥८॥

यदि जन्म के समय अपने नवांश में सूर्य हो व चन्द्रमा विनष्ट (अस्त) हो तथा पापग्रहों से दृष्ट व शुभग्रहों से अदृष्ट हो तो जातक—कुछ समय तक राज्य सुख प्राप्त करके भी आशाओं का त्याग करके पीछे वन में जाकर दुःख प्राप्त करता है ॥८॥

अन्य राजयोगभंग ज्ञान

शिशिरकिरणशत्रुर्ल[२]ग्नगश्चन्द्रदृष्टः
सहजरिपुमदस्था भानुभूपुत्रमन्दाः ।
शुभविरहितकेन्द्रैरस्तगैर्वाऽपि सौम्यै-
र्नृपतिजननयोगा यान्ति नाशं क्षणेन ॥९॥

---

१ तुशुभेन । २ लग्नवच्चन्द्रदृष्टः लग्नप, सङ्गताः ।

यदि जन्म के समय में शिशिर किरण शत्रु अर्थात् लग्नस्थ राहु चन्द्रमा से दृष्ट हो व तृतोय, षष्ठ, सप्तम भाव में सूर्य, भौम, शनि हों एवं शुभग्रह केन्द्र में न हों अथवा शुभग्रह अस्त हों तो क्षण भर में राजयोग नष्ट हो जाता है ॥९॥

अन्य प्रकार से

पञ्चभिर्निम्नगैः खेटैरस्तं यातैरथापि वा।
प्रयान्ति विलयं योगा भूभुजां ये प्रकीर्तिताः ॥१०॥

यदि जन्म के समय में पाँच ग्रह नीच राशियों में हों अथवा अस्तङ्गत हों तो राजयोग का भङ्ग होता है ॥१०॥

अपशकुन से राजयोगभंग ज्ञान

उल्कायाः पतने चैव निर्घातव्यतिपातयोः।
केतोश्च दर्शने चैव यान्ति नाशं नृपोद्भवाः ॥११॥
अन्यैः क्रूरोत्पातैस्त्रिशङ्कुतारा यदोदयं यान्ति।
सद्यः प्रयान्ति विलयं नृपयोगा भानुजो यदि विलग्ने ॥१२॥

यदि जन्म के समय में उल्कापात, निर्घात, व्यतिपात, केतु का दर्शन हो तो राजयोग का नाश हो जाता है। यदि अन्य क्रूर उत्पात त्रिशङ्कु तारा का उदय हो व लग्न में शनि हो तो शीघ्र राज योग का भङ्ग होता है ॥११–१२॥

अन्यभंग ज्ञान

कर्तारो नृपतीनां गगनसदो युद्धकाङ्क्षिणो मलिनाः।
रूक्षा जर्जरदेहा विघ्नं जनयन्ति राजयोगस्य ॥१३॥

यदि जन्म के समय में योग कारक ग्रहों में युद्ध होने की सम्भावना हो वा ग्रहों के बिम्ब दूषित वा शुष्क वा क्षीण देहधारी हों तो राजयोग में बाधा उपस्थित करते हैं ॥ १३ ॥

अन्यभंग ज्ञान

परनीचं गते चन्द्रे क्षीणो योगो महीपतेः।
नाशमायाति राजेव दैवज्ञप्रतिलोमगः ॥१४॥

यदि जन्म के समय में क्षीण चन्द्रमा अपने परम नीचांश (रा ७।अं० ३) में हो तो राजयोग नष्ट हो जाता है, जैसे ज्योतिषो के विरुद्ध राजा नष्ट होता है ॥१४॥

अन्य भङ्गयोग ज्ञान

तुलायां पद्मिनीबन्धुस्त्रिंशांशे दशमे स्थितः।
हन्ति राज्यं यथा लोभः समस्तगुणसञ्चयम् ॥१५॥

यदि जन्म के समय में सूर्य दशमभाव में तुला के त्रिंशांश में स्थित हो तो राजयोग का भङ्ग होता है जैसे लोभ से सब गुणों के संग्रह का नाश होता है ॥ १५ ॥

अन्यभङ्ग योग ज्ञान

जूकस्य दशमे भागे स्थितः कमलबोधनः ।
सहस्रं राजयोगानां मन्दमेव करोत्यसौ ॥१६॥

यदि जन्म के समय तुला राशि के दशम अंश में सूर्य हो तो हजार राजयोगों का नाश होता है ॥ १६ ॥

अन्य भङ्गयोग ज्ञान

स्वत्रिकोणगृहं केचित्स्वोच्चं याताः स्वमन्दिरम् ।
अतिनीचे रविश्चैको न तेषां फलसंभवः ॥१७॥

यदि जन्म के समय में कोई ग्रह मूलत्रिकोण में, कोई उच्च राशि में, कोई स्वराशि में स्थित हो तथा केवल सूर्य परम नीच में हो तो राजयोग भङ्ग हो जाता है ॥ १७ ॥

अन्य भङ्गयोग ज्ञान

गुरुर्मृगे विलग्नस्थो दुःखैः सन्तापयेन्नरम् ।
कामार्तमधनं वेश्या [१]वश्यमिन्दुर्न चेत्स्वभे ॥१८॥

यदि जन्म के समय में मकर राशि का गुरू लग्न में हो और चन्द्रमा कर्क राशि में न हो तो जातक का राजयोग नष्ट होता है व दुःखों से पीड़ित होता है जैसे कामी पुरुष वेश्या के वश में होकर निर्धन व दुःखी होता है ॥ १८ ॥

अन्य भंगयोग ज्ञान

एकेनापि शशाङ्को ग्रहेण केमद्रुमे यदि न दृष्टः ।
विघ्नयति राजयोगं मलिनाचारः प्रसूतः स्यात् ॥१९॥

यदि कुण्डली में केमद्रुम योग में चन्द्रमा अन्य ग्रह से अदृष्ट हो तो जातक का राजयोग नष्ट होता है व स्वयं दुष्टाचरण करने वाला होता है ॥ १९ ॥

प्रकारान्तर

भिक्षामटति त्र्याद्यैर्नीचर्क्षगतैः सुदुःखितो मलिनः ।
सकलमहीभृत्पुत्रः परिभूतो जायते निःस्वः ॥२०॥

यदि जन्म के समय में ३, ४, आदि ग्रह नीच राशि में हों तो राजकुलोत्पन्न जातक भी दुःखी होकर भीख मांगता है व दूषित आचरण करने वाला एवं निर्धन होता है ॥ २० ॥

पुनः प्रकारान्तर

अत्यरिभवनं प्राप्तैः पञ्चादिभिरस्तगैश्च गगनचरैः ।
नाशं प्रयाति राजा यदि रविचन्द्रौ न तुङ्गस्थौ ॥२१॥

यदि जन्म के समय में ५, ६ आदि ग्रह अधिशत्रु भस्थ या अस्त हों तथा सूर्य चन्द्रमा स्वोच्च राशि में न हों तो राजयोग नष्ट हो जाता है ॥ २१ ॥

---

[१] यद्वदि ।

पुनः प्रकारान्तर

सचिवो दानवेन्द्रस्य नीचांशे समवस्थितः ।
संप्राप्तमतुलं राज्यं नरैर्हापयते ध्रुवम् ।।२२।।

यदि जन्म के समय में शुक्र नीच नवांश में हो तो जातक को असीमित राज्य सुख प्राप्त होने पर भी राजयोग नष्ट हो जाता है ।। २२ ।।

फल में विशेष कथन

राजयोगाः समाख्यातास्तेषां भङ्गश्च दारुणः ।
परीक्ष्य यत्नतः प्राज्ञः फलं ब्रूयाद्बलाबलात् ।।२३।।

मैंने राजयोगों का व उनके भङ्ग का वर्णन किया है मनीषी गण इन दोनों के बलाबल का अच्छी तरह विचार करके ही फलादेश करें ।। २३ ।।

राजयोग ज्ञान

कमलभवनबन्धुः कन्ययालिङ्गिताङ्ग-
स्त्वलिनि कुजसुरेड्यौ चन्द्रमा मेषसंस्थः ।
न च यदि परिशेषैर्दृश्यते स्यात्स भूपः
प्रचलितगजमेघच्छादिताशानभोभ्रः ।।२४।।

यदि कुण्डली में कन्या राशि में सूर्य, वृश्चिक में भौम व गुरु एवं मेष राशि में चन्द्रमा हो तथा ये ग्रह अन्यग्रह से अदृष्ट हों तो जातक राजा होता है। जिसकी सेना के हाथियों के चलने से धूलि उड़कर मेघ की तरह दिशा व आकाश को आच्छादित करती है ।। २४ ।।

।। इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां राजयोगभङ्गो नामाष्टत्रिंशोध्यायः ।।

एकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ।

आयुर्दायाध्याय का कथन

अस्मिन्नायुर्दाये यस्माद्भ्रान्तः समस्तलोकोऽयम् ।
तस्मात्पूर्वागमतः कथयामि निराकुलीकृत्य ।।१।।

इस आयुर्दाय के विषय में समस्त लोग भ्रम में पड़े हैं इसलिये मैं पूर्व शास्त्रों के आधार पर निराकुल होकर आयुर्दाय के आनयन को कहता हूँ ।। १ ।।

तीन प्रकार की (अंश, पिण्ड, निसर्ग) आयु में कब किसका ग्रहण

अंशोद्भवं विलग्नात्पैण्ड्यं भानोर्निसर्गजं चन्द्रात् ।
एतेषां यो बलवानेकतमस्तस्य कल्पयेदायुः ।।२।।
लग्नदिवाकरचन्द्रास्त्रयोऽपि बलरिक्ततां यदा यान्ति ।
परमायुषः स्वरांशं ददति खगा जीवशर्मोक्तम् ।।३।।

लग्न, सूर्य चन्द्रमा इन तीनों में यदि लग्न बली हो तो अंशायु, यदि सूर्य बलवान् हो तो पिण्डायु, यदि चन्द्रमा बली हो तो निसर्गायु ग्रहण करना चाहिए।

यदि ये तीनों (लग्न, सूर्य, चन्द्रमा) निर्बल हों तो जीवशर्मोक्त परमायु १२० वर्ष ५ दिन, के सप्तमांश = १७ वर्ष १ माह २२ दिन ८ घटी ५४ प० के तुल्य प्रत्येक ग्रह की आयु होती है ॥ २–३ ॥

बृहत्पाराशर में कहा है—'विलग्नगे बलोपेते शुभदृष्टेंशसम्भवम् ।
रवौ पिण्डोद्भवं ग्राह्यं चन्द्रे नैसर्गिकं तथा ॥ ३१ ॥
बलसाम्ये द्वयोर्योगःदलमायुः प्रकीर्तितम् ।
त्रयाणां त्रियुतेस्त्र्यंशसमं ज्ञेयं द्विजोत्तम ॥३२॥ (४३ अ० ३१–३२ श्लो) ॥२–३॥

तथा जातक पद्धति में भी—'अंशायुश्च तनाविनेऽधिकबले पैण्डं निसर्गं विधौ, स्याच्चेत्तुल्यबलं द्वयोर्युतिदलं तज्जायुषोश्चेत् त्रयः । त्र्यायूंषि त्रिबलैर्निहत्य च युतिर्वीर्यैक्य, हृद्वा त्रिजायुर्युत्यास्त्रिलवोऽथ जैवमुदितं चेद्धीनवीर्यास्त्रयः' (२५ श्लो) ॥२–३॥

विशेष—यदि लग्न, सूर्य, चन्द्रमा इन तीनों में कोई दो बली हों अर्थात् बल में समता हो तो दोनों आयुर्दाय का योग करके आधा करने पर आयु होती है। यदि तीनों के बल में समता हो तो तीनों प्रकार के आयुर्दाय के योग का तृतीयांश ग्रहण करना चाहिए ॥ २–३ ॥

अंशायु साधन—

विलग्नादिकला भाज्या व्योमशून्ययमैः समाः ।
लभ्यन्तेऽर्क[1]हताः शेषा[2] स्व[3]मानगुणि[4]तांशकाः ॥४॥

लग्न व ग्रह जिसकी आयु साधन करनी हो उसकी (ग्रह व लग्न) कला बनाकर २०० का भाग देने से जो लब्धि उसकी वर्ष संज्ञा होती है। यदि यह लब्धि १२ से अधिक हो तो बारह का भाग देकर ग्रहण करना चाहिये। शेष को १२ से गुना करके २०० से भाग देने पर लब्ध मास होता है। पुनः शेष को ३० से गुना करके २०० से भाग देने पर लब्ध दिन, दिन शेष को ६० से गुना करके २०० से भाग देने पर लब्धि घटी, घटी शेष को ६० से गुना करके २०० से भाग देने पर लब्धि पल होता है ॥४॥

बृहज्जातक में कहा है—'सत्योक्ते ग्रहमिष्टं लिप्तीकृत्वा शतद्वयेनाप्तम् ।
मण्डलभागविशुद्धेऽब्दाः स्युः शेषात्तु मासाद्याः' (७ अ० १० श्लो) ॥ ४ ॥

लग्नायुर्दाय में विशेष संस्कार—

होरा सर्वबलोपेता राशितुल्यानि यच्छति ।
वर्षाण्यन्यानि मासादिभागैस्त्रैराशिकात्पुनः ॥५॥

यदि लग्न समस्त बलों से युक्त हो अर्थात् पूर्ण बली हो (होरा स्वामि गुरुज्ञवीक्षित-युता) तो लग्न के भुक्तराशि समान वर्ष लग्नायु में और जोड़ना चाहिये तथा अंशों से त्रैराशिक द्वारा मासादि का ग्रहण करके जोड़ना चाहिये ॥ ५ ॥

---

[1] हतात्, नताः । [2] शेषं । [3] नाम । [4] ताः स्वकाः ।

बृहत्पाराशर में कहा है—'लग्नराशिसमाश्चाब्दा भागाद्यैरनुपाततः। मासादिका इतीच्छन्ति लग्नायुः केऽपि कोविदाः ॥ १४ ॥ लग्नदायोंऽशतुल्यः स्यादन्तरे चाऽनुपाततः। तत्पतौ बलसंयुक्ते राशितुल्यश्च भाधिपे' (४३ अ० १४–१५ श्लो०) ॥ ५ ॥

बृहज्जातक में भी—'किं त्वत्र भांशप्रतिमं ददाति वीर्यान्विता राशिसमं च होरा।' (७ अ० १२ श्लो०) तथा केशवीय जातक पद्धति में—लग्नायुर्निखिलैस्तदंशकसमं केश्चिद्भतुल्यं स्मृतम्। (२३ श्लो०) ॥ ५ ॥

पुनः विशेष संस्कार

वर्गोत्तमे स्वभवने स्वद्रेक्काणे नवांशके।
द्विगुणं सम्प्रयच्छन्ति त्रिगुणं वक्रतुङ्गयोः ॥६॥

यदि लग्न वा जो ग्रह वर्गोत्तम नवांश में, वा अपनी राशि में, या अपने द्रेष्काण में वा अपने नवांश में स्थित हो तो उसकी साधित आयु को द्विगुणित करना चाहिये। यदि ग्रह वक्री हो वा उच्चस्थ हो तो साधित आयु को तीन से गुणा करके ग्रहण करना चाहिये ॥ ६ ॥

बृहत्पाराशर में कहा है—'साधितायुः खगे स्वोच्चे स्वर्क्षे वा त्रिगुणं स्मृतम्। द्विगुणं स्वनवांशस्थे स्वद्रेष्काणे तथोत्तमे' (४३ अ० २१ श्लो०) ॥ ६ ॥

तथा बृहज्जातक में भी—'स्वतुङ्गवक्रोपगतैस्त्रिसंगुणं द्विरुत्तमस्वांशकभत्रिभागगैः। इयान्विशेषस्तु भदत्तभाषिते समानमन्यत्प्रथमेप्युदीरितम्' (७ अ० ११ श्लो०) ॥ ६ ॥

और भी बृहज्जातक १३ वें श्लो० की भट्टोत्पल टीका में मय का वचन—'वर्गोत्तमे स्वराशौ द्रेष्काणे स्वे नवांशके द्विगुणम्। वक्रोच्चगते त्रिगुणं द्विगुणं कार्यं यथा संख्यम्' ॥ ६ ॥

पुनः विशेष संस्कार—

यदा तूपचयः सर्वः स्वराश्यादिस्थि[१]तैर्ग्रहैः[२]।
समस्तवर्गणा तत्र कर्तव्या शास्त्रचिन्तकैः ॥७॥

यदि ग्रह स्वराशि स्वद्रेष्काणादि अनेक वृद्धि स्थान में हो तो शास्त्र ज्ञाता को समस्त वर्गणा करनी चाहिये। यथा—कोई ग्रह अपने नवांश में स्थित होकर वक्री भी है तो प्रथम द्विगुणित करके पुनः तीन से गुना करके आयु ग्रहण करना चाहिये ॥ ७ ॥

चूडामणि के मत में विशेष संस्कार

केन्द्रादिसंस्थिते खेटे सकलद्विगुणैककाम्[३]।
शंसन्ति वर्गणां केचिन्न[४] च चूडामणेर्मतम् ॥८॥

चूडामणि आचार्य का कथन है कि यदि ग्रह केन्द्र (१, ४, ७, १०) में हो तो जितनी वर्गणा प्राप्त हों वह सब, यदि फणफर में ग्रह हो तो दो वर्णणा ग्रहण करनी चाहिये, यदि आपोक्लिम में ग्रह हो तो जो बड़ी वर्गणा हो उसी एक को ग्रहण करनी चाहिये ॥ ८ ॥

---

१ स्थिते। ३ ग्रहे। २ गाम्, काः। ४ तच्च ननु, तत्तु।

पुनः विशेष संस्कार

बहुताड[1]नसम्प्राप्तौ यां करोत्येकवर्गणाम् ।
वराहमिहिराचार्यः सा न दृष्टा पुरातनैः ॥९॥

यदि बहुत वर्गणा ग्रह की प्राप्त हों तो उनमें से जो बड़ी वर्गणा हो उसे ग्रहण करना चाहिये यह वराहमिहिराचार्य का कथन है, किन्तु यह मत पूर्वाचार्यों से सम्मत नहीं है ॥ ९ ॥

विशेष—वराहमिहिर ने बृ० जा० में कहा है—'सत्योपदेशो वरमत्र किन्तु कुर्वन्त्ययोग्यं बहुवर्गणाभिः । आचार्यकत्वं तु बहुघ्नतायामेकं तु यद्भूरि तदेव कार्यम्' (७ अ० १३ श्लो०) ॥ ९ ॥

आयु में हानि

रिपुराशौ त्रिभागोनमर्धोनं निम्नगास्तगाः ।
दायं ग्रहाः प्रयच्छन्ति नास्तगौ सितभानुजौ ॥१०॥

जो ग्रह शत्रु राशि में स्थित हो उसकी साधित आयु में तृतीयांश घटाकर, एवं नीच राशि में व ग्रह अस्त होने पर साधित आयु में आधा घटाकर ग्रहण करना चाहिये, किन्तु शुक्र व शनि इन दोनों के अस्त होने पर भी आधा नहीं घटाना चाहिये ॥ १० ॥

बृहत्पाराशर में कहा है—'अस्तगस्तु हरेत्स्वार्धं विना शुक्रशनैश्चरौ । वक्रचारं विना त्र्यंशं शत्रुराशौ हरेद् ग्रहः' (४३ अ० ९ श्लो०) ॥ १० ॥

तथा बृहज्जातक में भी—'नीचेऽतोऽर्द्धं ह्रसति हि ततश्चान्तरस्थेऽनुपातो, होरात्वंश प्रतिममपरे राशितुल्यं वदन्ति । हित्वा वक्रं रिपुगृहगतैर्हीयते स्वत्रिभागः, सूर्योच्छिन्नं द्युतिषु च दलं प्रोज्झ्य शुक्रार्कपुत्रौ' (७अ० २श्लो०) ॥ १० ॥

चक्रार्ध हानि ज्ञान

सर्वमर्धं तृतीयांशश्चतुर्थः पञ्चमस्तथा ।
षष्ठश्चांशः क्षयं याति नाशं बहुभिरेकगैः ॥११॥
सौम्ये चार्धमितो याति नाशं बहुभिरेकगैः ।
एक एव बली हन्ति स्वायुषः सर्वदा ग्रहः ॥१२॥

यदि पापग्रह बारहवें भाव में हो तो पूरे वर्ष घटाना, एकादश भाव में पापग्रह रहने पर आधा घटाना, दशमभाव में रहने पर तृतीयांश घटाना, नवम भावस्थ होने पर चतुर्थांश घटाना, अष्टमभाव में होने पर पञ्चमांश घटाना और सप्तमभावस्थ पापग्रह होने पर साधित आयु में षष्ठांश घटाना चाहिये। इन्हीं द्वादशादि स्थानों में शुभग्रह के रहने पर पापग्रह का आधा घटाकर ग्रहण करना चाहिये। यथा १२वें भाव में शुभग्रह के रहने पर साधित आयु में आधा घटाना, ११वें में रहने पर चतुर्थांश १०वें भाव में शुभग्रह के रहने पर षष्ठांश घटाना चाहिये। इसी प्रकार आगे भी समझना चाहिये।

---

[1] वर्गण ।

यदि इन्हीं स्थानों में किसी एक स्थान में अधिक ग्रह हों तो उनमें जो सबसे बली हो उसी एक ग्रह की साधित आयु में उक्त हानि करके ही ग्रहण करना चाहिए। सब ग्रहों में हानि नहीं करनी चाहिये ।। ११–१२

बृहत्पाराशर में कहा है—'सर्वाधत्रिचतुः पञ्चषष्ठभागं क्रमाद् ग्रहः। व्ययाद्वामं स्थितः पापो हरेत्सौम्यम्च तद्दलम् ।। १० ।।

एकभे तु बहुष्वेको हरेत्स्वांशं बली ग्रहः। नात्र क्षीणस्य चन्द्रस्य पापत्वं मुनिभिः स्मृतम् ।। ११ ।।' (४३अ० १०–११ श्लो०) ।। ११–१२ ।।

तथा वृहज्जातक में भी—'सर्वार्धंत्रिचरणपञ्चषष्ठभागाः क्षीयन्ते व्ययभवनादसत्सु वामम्। सत्स्वर्धं ह्रसति तथैकराशिगानामेकोंशं हरति बली तथाह सत्यः' (७अ० ३श्लो०) ।। ११–१२ ।।

और भी भट्टोत्पल टीका में सत्याचार्य का वचन—'एकादशोत्क्रमात्सप्तमादिति प्राह हरणकर्माणि। एकर्क्षगेषु वीर्याधिकः स्वभागं हरेदेकः। अर्धं तृतीयभागं चतुर्थकं पञ्चमच षष्ठञ्च। आयुः पिण्डात्पापा हरन्ति सौम्यास्तथार्धानि। द्वादशसंस्थः पापः स्वादायं शोभनस्ततोऽर्द्धं तु' ।। ११–१२ ।।

ग्रहों की पिण्डायु का कथन

एकोनविंशतिर्भानोः शशिनः पञ्चविंशतिः।
तिथयः क्षितिपुत्रस्य द्वादशैव बुधस्य तु ।।१३।।
गुरोः पञ्चदशाब्दानि शुक्रस्याप्येकविंशतिः।
विंशती रविपुत्रस्य पिण्डायुः स्वोच्चसंस्थिते: ।।१४।।

यदि ग्रह अपनी-अपनी उच्च राशि में हो तो सूर्य का आयु पिण्ड १९ वर्ष, चन्द्रमा का २५ वर्ष, भौम का १५ वर्ष, बुध का १२ वर्ष, गुरू का १५ वर्ष, शुक्र का २१ वर्ष, शनि का २० वर्ष आयु पिण्ड होता है ।। १३–१४ ।।

बृहत्पाराशर में कहा है—'क्रमात् सूर्यादिखेटेषु स्वस्वोच्चस्थानगेष्विह। नन्देन्दवस्तत्त्वमितास्तिथयोऽर्काः शरेन्दवः। प्रकृत्यो विंशतिश्चाब्दाः आयुः पिण्डाः प्रकीर्त्तिताः (४३ अ० ६–७ श्लो०) ।। १३–१४ ।।

और भी बृहज्जातक में—'मययवनमणित्थशक्तिपूर्वैर्दिवसकरादिषु वत्सराः प्रदिष्टाः। नवतिथिविषयाश्विभूतरुद्रदशसहिता दशभिः स्वतुङ्गभेषु' (७ अ० १ श्लो) ।।१३–१४।।

पिण्डायु का साधन

स्वोच्चशुद्धो[1] ग्रहः शोध्यः षड्राश्यूनो भमण्डलात्।
स्वपिण्डगुणितो भक्तो [2]राशिमानेन वत्सराः ।।१५।।

जिस ग्रह की पिण्डायु साधन करनी हो उस स्पष्ट ग्रह में अपने ही उच्च राश्यंश को घटाकर देखना चाहिये कि शेष ६ राशि से अल्प तो नहीं है, यदि शेष ६ राशि से

---

१ सिद्धो। २ भादि।

अल्प हो तो शेष को १२ राशि में से घटाकर अपने उच्च पठित पिण्डमान से गुणा करके विकला से राशि पर्यन्त सवर्णन करके जो हो वही वर्षादि उस ग्रह की पिण्डायु होती है ॥ १५ ॥

बृहत्पाराशर में कहा है—'स्वोच्चशुद्धो ग्रहः शोध्यः षड्भादूनो भमण्डलात् । स्वपिण्डगुणितो भक्तो भादिमानेन वत्सरा:' (४३ अ० ८ श्लो०) ॥ १५ ॥

तथा केशवीय जातक पद्धति में भी—'स्वोच्चोनोद्युचरोऽङ्कभात्समधिको ग्राह्योल्पकोनार्कभं'····(२१ श्लो०) ॥ १५ ॥

पिण्डायु साधन में विशेष कथन

पूर्वोक्तं चिन्तयेत्सर्वं वक्रं मुक्त्वारिराशिषु ।
क्षयस्तत्र प्रकर्तव्यो नीचेऽर्धं वृद्धिरुच्चगे ॥ १६ ॥

इस पिण्डायु साधन में भी अंशायु साधन के समान सब विचार करना चाहिये । वक्री ग्रह को छोड़कर शत्रु गृह स्थित ग्रह की साधित आयु में तृतीयांश घटाकर ग्रहण करना चाहिये । नीच राशिस्थ ग्रह होने पर आधा घटाना चाहिये, तथा उच्चस्थ ग्रह होने पर साधित आयु को तीन से गुणा करके ग्रहण करना चाहिये ॥ १६ ॥

बृहत्पाराशर में कहा है—'वक्रचारं विना अंशं शत्रुराशौ हरेद्ग्रहः'
(४३ अ० ९ श्लो०) ॥१६॥

बृहज्जातक में भी–'हित्वा वक्रंरिपुगृहगतैर्हीयते स्वत्रिभागः' (७ अ २ श्लो) ॥१६॥

तथा जातक पद्धति में भी–'द्युचरोऽरिभे यदि गुणांशोना विना वक्रगम्' (२१श्लो)।१६।

लग्न पिण्डायु साधन में विशेष

लग्नदायोंऽशतुल्यः स्यादन्तरे चानुपाततः ।
तत्पतौ बलसंपन्ने[1] राशितुल्यं स्वभाधिपे ॥ १७ ॥

लग्न पिण्डायु साधन में यदि लग्न राशि से लग्न नवांश पति बलवान् हो तो नवांश संख्या तुल्य वर्ष, राशि बली हो तो राशि तुल्य वर्ष लग्नायु होती है । मध्य में अर्थात् गत नवांश तुल्य वर्ष और वर्तमान नवांश से अनुपात द्वारा (यथा–यदि २०० कला एक नवांश तो इष्ट कला में क्या) मासादि का ग्रहण करना चाहिये ॥ १७ ॥

बृहत्पाराशर में कहा है––'लग्नदायोंशतुल्यः स्यादन्तरे चानुपाततः । तत्पतौ बलसंयुक्ते राशितुल्यश्च भाधिपे' (४३ अ० १५ श्लो०) ॥ १७ ॥

एवं बृहज्जातक में भी––होरात्वंशप्रतिममपरे राशितुल्यं वदन्ति'
(७ अ० २ श्लो०) ॥ १७ ॥

और भी केशवीय जातक पद्धति में––'लग्नायुर्निखिलैस्तदंशकसमं कैश्चिद्भतुल्यं स्मृतम् । यस्येशोऽधिबलस्तदेव हि (२४ श्लो०) ॥ १७ ॥

---

[1] युक्ते, पृक्ते ।

लग्नस्थ पापग्रह होने पर हानि

लग्नांशलिप्तिका हत्वा प्रत्येकं विहगायुषा ।
भक्त्वा मण्डललिप्ताभिर्लब्धं [1]वर्षाद्विशोधयेत् ॥ १८ ॥
स्वायुषो लग्नगे क्रूरे लब्धस्यार्धं शुभेक्षिते ।
एवमेव प्रकर्तव्यं जीवशर्मोक्तचन्द्रजे ॥ १९ ॥

यदि लग्न में कोई पापग्रह हो तो लग्न के अंशों की कला बनाकर उसे उसी ग्रह की आयुर्दाय से गुना करके (यदि अधिक पापग्रह हों तो प्रत्येक की साधित आयु से गुना करके) गुणनफल में २१६०० से भाग देकर वर्षादि लब्धि को साधित आयु में घटाने से स्पष्ट आयु होती है । यदि लग्न शुभग्रह से दृष्ट हो तो लब्ध वर्षादि का आधा घटाकर ग्रहण करना चाहिये । इसी प्रकार जीवशर्मोक्त आयु में भी घटाकर ग्रहण करना चाहिये ॥ १८–१९ ॥

बृहत्पाराशर में कहा है—'लग्नांशलिप्तिका हत्वा प्रत्येकं विहगायुषा । भाज्या मण्डललिप्ताभिर्लब्धं वर्षादि शोधयेत् । स्वायुषो लग्नगे सूर्ये मङ्गले च शनैश्चरे । तदर्धं शुभसन्दृष्टे पातयेद् द्विजसत्तम' (४३ अ० १२–१३ श्लो०) ॥ १८–१९ ॥

एवं बृहज्जातक में भी—'क्रूरे विलग्नसहिते विधिना त्वनेन, सौम्येक्षिते दलमतः प्रलयं प्रयाति' (७ अ० ४ श्लो०) ॥ १८–१९ ॥

ग्रहों की निसर्गायु का कथन

विंशतिरेकं द्वितयं नव धृतिरिह विंशतिश्च पञ्चाशत् ।
वर्षाणामपि संख्याः सूर्यादीनां निसर्गभवाः ॥ २० ॥

सूर्य की २० वर्ष, चन्द्रमा की १ वर्ष, भौम की २ वर्ष, बुध की ९ वर्ष, गुरू की १८ वर्ष, शुक्र की २० वर्ष और शनि की ५० वर्ष की निसर्गायु होती है ॥ २० ॥

बृहत्पाराशर में कहा है—'अथ विप्र निसर्गायुः खेटानां कथयाम्यहम् । चन्द्रारज्ञसितेज्यार्कशनीनां क्रमशोऽब्दकाः । एकद्व्यङ्कनखाधृत्यः कृतिः पञ्चाशदेवहि । जन्मकालात् क्रमाज्ज्ञेया दशाश्चैता निर्गजाः' (४३ अ० १६–१७ श्लो०) ॥ २० ॥

तथा केशवीय जातक पद्धति में भी—'नैसर्गे नखभूद्विगोधृतिनखाः पञ्चाशदर्कादगुणाः' (२३ श्लो०) ॥ २० ॥

परमायु योग ज्ञान

मीनोदयेंऽशे [2]नवमे पञ्चविंशतिलिप्तिके ।
गवि सौम्यैः स्वतुङ्गस्थैं शेषैरायुः परं भवेत् ॥ २१ ॥

यदि कुण्डली में अन्तिम नवांशस्थ मीन लग्न हो व बुध वृष राशि में २५ कला पर हो और शेष समस्त ग्रह अपने-अपने परमोच्चस्थान में हों तो जातक की परमायु होती है ॥ २१ ॥

---

[1] वर्षादि । [2] परमे ।

बृहज्जातक में कहा है---'अनिमिषपरमांशके विलग्ने शशितनये गवि पञ्चवर्गलिप्ते। भवति हि परमायुषः प्रमाणं यदि सकलाः सहिताः स्वतुङ्गभेषु' (७ अ० ६ श्लो०) ॥२१॥

अमितायु योग ज्ञान

कर्किलग्ने गुरुः सेन्दुः केन्द्रगौ बुधभार्गवौ।
[1]शेषैस्त्रिलाभषष्ठस्थैरमितायुर्भवेन्नरः ॥ २२ ॥

यदि कुण्डली में कर्क लग्न में चन्द्रमा के साथ गुरू हो व बुध शुक्र केन्द्र में हों तथा अवशिष्ट ग्रह तृतीय, एकादश, षष्ठ भावों में हों तो जातक की अमितायु होती है ॥२२॥

बृहत्पाराशर में कहा है---'चन्द्रेज्यौ च कुलीराङ्गे ज्ञसितौ केन्द्रसंस्थितौ। अन्ये त्र्यायारिगाः खेटा अमितायुस्तदा भवेत्' (४३ अ० ५५ श्लो०) ॥ २२ ॥

तथा बृहज्जातक में भी—'गुरुशशिसहिते कुलीरलग्ने शशितनये भृगुजे च केन्द्रयाते। भवरिपुसहजोपगैश्च शेषैरमितमिहायुरनुक्रमाद् विना स्याद्' (७ अ० १४ श्लो०) ॥२२॥

मनुष्यादि के परमायु प्रमाण का ज्ञान

द्विघ्नाः षष्टिर्निशाः पञ्च परमं नरदन्तिनाम्।
द्वात्रिंशद्वाजिनामायुश्छागादीनां तु षोडश ॥ २३ ॥
खरोष्ट्रयोः पञ्चवर्ग [2]एकोऽपोह्यं वृषादिषु।
शुनां तु द्वादश प्रोक्तं गणितं परमायुषम्।
तत्तत्परं प्रमाणेन हत्वैषामायुरादिशेत् ॥ २४ ॥

६० वर्ष को २ से गुणा करने पर=१२० वर्ष ५ दिन मनुष्य व हाथियों की परमायु, ३२ वर्ष घोड़े की परमायु, बकरी आदि की १६ वर्ष, गदहा व ऊँट की १६ वर्ष परमायु, बैल भैंसादि की २४ वर्ष की परमायु, कुत्तों की १२ वर्ष की परमायु होती है। मनुष्यों के समान प्रथम इनकी (हाथी आदि की) आयु साधन करके अपने-अपने परमायु प्रमाण से गुना करके १२० का भाग देने से स्पष्टायु होती है ॥ २३–२४ ॥

बृहत्पाराशर में कहा है—'नराणां कुञ्जराणाञ्च विंशोत्तरशतं तथा। द्वात्रिंशद् घोटकानाञ्च पञ्चविंशत् खरोष्ट्रयोः। वृषाणां महिषाणां च चतुर्विंशतिवत्सरम्। विंशत्यायुर्मयूराणां छागादीनाञ्च षोडश' (४३ अ० २६–२८ श्लो०) ॥ २३–२४ ॥

तथा बृहज्जातक में भी—'समाः षष्टिर्द्विघ्ना मनुजकरिणां पञ्च च निशा, हयानां द्वात्रिंशत्खरकरभयोः पञ्चककृतिः। विरूपा साप्यायुर्वृषमहिषयोः द्वादशशुनां, स्मृतं छागादीनां दशकसहिताः षट्च परमम्' (७ अ० ५ श्लो०) ॥ २३–२४ ॥

परमायु प्राप्त करने के अधिकारी

पथ्याशिनां शीलवतां नराणां सद्वृत्तभाजां विजितेन्द्रियाणाम्।
एवं विधानामिदमायुरत्र [3]चिन्त्यं सदा वृद्धमुनिप्रणीतम् ॥ २५ ॥

पथ्य (उचित) भोजन करने वाला, सुशील, सदाचारी, जितेन्द्रिय मनुष्य ही प्राचीन मुनियों की कथित परमायु प्रमाण तक जीवन पाता है ॥ २५ ॥

॥ इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां आयुर्दायो नामैकोनचत्वारिंशोऽध्यायः।

---

[1] भव। [2] एका। [3] वृद्धि समाप्नोति मुनिप्रवादः, नित्यं सदा वृद्धमुनिप्रवादः।

चत्वारिंशोऽध्यायः ।

दशाध्याय का कथन

आयुषो येन यद्दत्तं सा दशा तस्य कीर्तिता ।
स्वदोषगुणयोगेन स्वदशासु फलप्रदाः ॥ १ ॥

जिस ग्रह की जो आयु होती है वही उस ग्रह की दशा होती है । समस्त ग्रह अपनी अपनी दशा में अपने-अपने गुण दोष के आधार पर शुभाशुभ फल प्रदान करते हैं ॥१॥

बृहज्जातक में कहा है—आयुःकृतं येन हि यत्तदेव कल्प्या दशा सा प्रबलस्य पूर्वम्- (८ अ० २ श्लो०) ॥ १ ॥

तथा केशवीय जातक पद्धति में भी—'यस्यायुर्यंदसौ दशास्य च' (२९ श्लो०)॥१॥

दशा विषय में मणित्थ का कथन

दिवारात्रिप्रसूतस्य रविशुक्रपुरःसराः ।
मणित्थस्त्वाह तज्ज्ञानं फलसाम्यं¹ न सा दशा ॥ २ ॥

यदि दिन में जन्मकाल हो तो सूर्यादि ग्रहों की, रात्रि में जन्मकाल हो तो शुक्रादि ग्रहों की दशा होती है ऐसा मणित्थाचार्य का कथन है किन्तु अन्य आचार्यों के मत में इस दशा के कथन में समता नहीं है ॥ २ ॥

दशा के विषय में सत्याचार्य का मत

लग्नार्कशीतरश्मीनां यो बली तस्य चाग्रतः ।
तत्केन्द्रादिस्थितानां च दशाः स्युः सत्यभाषिते ॥ ३ ॥

लग्न, सूर्य, चन्द्रमा इन तीनों में जो बलवान् हो उसकी दशा प्रथम, फिर बली ग्रह से केन्द्रस्थ ग्रह की, पुनः पणफरस्थ की इसके बाद आपोक्लिकमस्थ ग्रह की दशा होती है ऐसा सत्याचार्य जी का कथन है ॥ ३ ॥

स्वकीयमत का कथन

होरादिनेशशशिनां प्रबलो भवेद्यस्तत्कण्टकादिषु गताः कथिता दशेशाः ।
पूर्वा दशाऽतिबलिनः सदृशेऽब्दवृद्धेः साम्ये भवेच्च शरदां प्रथमोदितस्य ॥४॥
लग्नार्कशीतरश्मीनां यदि ²पूर्णबलं भवेत् ।
तदा सत्यमतं श्रेष्ठमन्यदा त्वपरा दशा ॥ ५ ॥

लग्न, सूर्य, चन्द्रमा इन तीनों में जो बलवान् हो उसकी दशा प्रथम होती है, पुनः इस बली ग्रह से जो केन्द्र में ग्रह हो उसकी दशा (यदि केन्द्र में अधिक ग्रह हों तो जो बलवान् हो उसकी तदन्तर उससे अल्प बल वाले ग्रह की इसी क्रम से आगे भी) फिर बली ग्रह से पणफरस्थ ग्रहों की, पुनः इसके बाद आपोक्लिमस्थ ग्रहों की दशा होती है । यहाँ भी अर्थात् पणफर, आपोक्लिम स्थानों में अधिक ग्रह रहने पर सबसे बलवान् की प्रथम, फिर न्यून-न्यून बलवालों की दशा समझनी चाहिये । यदि

---

१ साम्ये न तद् दशाः । २ पूर्णबलो ।

बल में समता हो तो अधिक वर्ष वाले ग्रह की प्रथम, यदि वर्ष में भी समानता हो तो जिस ग्रह का प्रथम उदय हुआ हो उसकी दशा प्रथम होती है। यदि लग्न, सूर्य, चन्द्रमा इन तीनों में एक भी बलवान् हो तो सत्याचार्योक्त दशा क्रम ग्रहण करना चाहिये। यदि तीनो निर्बल हों तो अन्याचार्योक्त दशा क्रम ग्रहण करना चाहिये ॥ ४–५ ॥

बृहत्पाराशर में कहा है—'बली लग्नार्कचन्द्राणां यस्तस्य प्रथमा दशा। तत्केन्द्रादिगतानाञ्च ज्ञेया बलवशात्ततः' (४६ अ० १५१ श्लो०) ॥ ४–५ ॥

एवं बृहज्जातक में भी—'उदयरविशशाङ्कप्राणिकेन्द्रादिसंस्थाः, प्रथमवयसि मध्येऽन्त्ये च दद्युः फलानि' (८ अ० १ श्लो०) ॥ ४–५ ॥

तथा च यवनेश्वरः—'निशाकरादित्यविलग्नमध्ये तत्कालयोगादधिकं बलं यः। बिभर्ति तस्यादिदेष्यते सा शेषास्ततः शेषबलक्रमेण' ॥ ४–५ ॥

और भी केशवीय जातक पद्धति में—'स्यादाद्या हि दशाधिकौजस इहाङ्गर्काऽजकानां ततस्तत्केन्द्रादियुजामय द्विबहवो वीर्यंक्रमेणैव हि। चेदोजः समतायुषोधिकतयायुस्तुल्यता चेद्दशा, मौढ्यात्स्यादुदितक्रमात्क्रमविधौ वीर्यं हि तत्रोच्यते. (३० श्लो०) ॥ ४–५ ॥

शुभ फल देने वाली दशा

स्वोच्चस्वराशिनिजभागसुहृद्गृहस्थाः सम्पूर्णवीर्यरुचिरा बलिनः स्वकाले।
मित्रोच्चभागसहिताः शुभदृष्टियुक्ताः श्रेष्ठां दशां विदधति स्ववयःसु खेटाः ॥६

जो ग्रह जन्म के समय अपनी उच्च राशि में वा स्वराशि में वा अपने नवांश में, वा मित्र की राशि में, परिपूर्ण किरण, पूर्ण बली, दशारम्भ में बलवान्, मित्र के नवांश में व उच्च नवांश में शुभग्रह से दृष्ट होता है वह ग्रह अपनी दशा में शुभ फल देता है ॥ ६ ॥

अशुभ फल देने वाली दशा

नीचशत्रुगृहं प्राप्ताः शत्रुनिम्नांशसूर्यगाः।
विवर्णाः पापसंबन्धा दशां कुर्युरशोभनाम् ॥ ७ ॥

जन्म के समय में जो ग्रह नीच वा शत्रु राशि में, शत्रु ग्रह राशि के नवांश में, नीचांश में, सूर्य के सान्निध्य में (अस्त), रश्मिहीन, पापग्रह से दृष्ट युत होता है उसकी दशा अशुभ फल देने वाली होती है ॥ ७ ॥

बृहज्जातक में कहा है—'नीचांशगतस्य शत्रुभागे ज्ञेयानिष्टफला दशा प्रसूतौ' (८ अ० ५ श्लो०) ॥ ७ ॥

अवरोहिणी व आरोहिणी दशा का ज्ञान

तुङ्गाच्च्युतस्य हि दशा सुहृदुच्चांशेऽवरोहिणी मध्या।
नीचाद्रिपुनीचांशे ग्रहस्य चारोहिणी कष्टा ॥ ८ ॥

जन्म के समय जो ग्रह अपनी उच्च राशि से आगे हो उसकी अवरोहिणी नाम की दशा होती है। यदि उच्च राशि से आगे की राशि वाला ग्रह अपने मित्र ग्रह के नवांश में या उच्च राशि के नवांश में हो तो इसकी दशा मध्यम फल देती है। जो ग्रह नीच

राशि से आगे हो उसको अवरोहिणी नाम की दशा होती है। यदि नीच राशि से आगे वाला ग्रह शत्रु वा नीच राशि के नवांश में हो तो दशा कष्ट दायिनी होती है ॥ ८ ॥

बृहज्जातक में कहा है--'भ्रष्टस्य तुङ्गादवरोहिसंज्ञा मध्या भवेत्सा सुहृदुच्चभागे। आरोहिणी निम्नपरिच्युतस्य नीचारिभांशेष्वधमा भवेत्।' (८ अ० ६ श्लो०) ॥ ८ ॥

तथा भट्टोत्पली टीका में भगवान् गार्गि का वचन--'उच्चनीचान्तरस्थस्य दशा स्यादवरोहिणी। तस्यामल्पमवाप्नोति फलं क्लेशाच्छुभंनरः। मित्रोच्चात्मांशकस्थस्य मध्या मध्यफला तु सा। नीचोच्चमध्यगस्योक्ता श्रेष्ठा चारोहिणी दशा। सैवाधमाख्या भवति नीचराश्यंशगस्य तु। अवरोहिणी चेदधमा भवेत्कष्टफला तदा। आरोहिणी मध्यफला संपूर्णा परिकीर्त्तिता' ॥ ८ ॥

और भी केशवीय जातक पद्धति में--'शुभेष्टोच्चस्वभांशे तथाऽरोहा नीचपरिच्युतस्य यदि सा कष्टारिनीचांशभे। त्यक्तोच्चे त्ववरोहिणी भवति सा मध्योच्चमित्रस्वभांशे सद्दृष्टयुतस्फुरत्करबलिष्ठेष्टाधिके स्याच्छुभा' (२९ श्लो०) ॥ ८ ॥

दशा कथन में विशेष

सविता दशाफलानां पाचयिता चन्द्रमाः प्रपोषयिता।
राशिविषेणेन्दोरतः फलोक्तिर्दशारम्भे ॥ ९ ॥

प्रत्येक ग्रह की दशा के फल (शुभाशुभ) को सूर्य भोग कराने वाला, अर्थात् देने वाला, चन्द्रमा पोषण करने वाला होता है। इसीलिये प्रत्येक ग्रह की दशारम्भकाल में चन्द्रमा की राशि स्थिति वश दशा का फल कहना चाहिये ॥ ९ ॥

चन्द्र की महादशा में चन्द्र राशिवश फल

मूलदशायामिन्दोः कन्यासु प्रेक्षिते चन्द्रे।
पण्याङ्गनाभिरनिशं समागमं प्राहुरिह यवनाः ॥ १० ॥

यदि चन्द्रमा की मूल दशारम्भ काल में चन्द्रमा कन्या राशि में हो वा देखता हो तो वेश्याओं से समागम होता है ऐसा यवनाचार्यो का कथन है ॥ १० ॥

विशेष—यह पद्य सं० वि० वि० की मातृका में अनुपलब्ध है ॥ १० ॥

समस्त ग्रहों की दशारम्भ काल में चन्द्र राशिवश फल

सौम्यस्त्रीधनलाभः कुलीरगेन्दौ भवेद्दशारम्भे।
कन्यां दूषयति नरः कुजभवने हन्ति वा युवतिम् ॥ ११ ॥
विद्याशास्त्रज्ञानं मित्रप्राप्तिं करोति बुधराशौ।
शौक्रेऽन्नपानमतुलं सौख्यं [1]चन्द्रेऽरिनाशं च ॥ १२ ॥
सुखधनमानाज्ञाप्तिं जीवगृहे दिशति शीतांशुः।
परिणतवयसमरूपां सौरगृहे [2]वर्धकीं वाऽपि ॥ १३ ॥
दुर्गारण्यनिवासं कर्षणगृहकर्मसेतुकर्मान्तम्।
सिंहे शशी प्रकुरुते स्त्रीपुत्रविवादमरतिं च ॥१४॥

---

[1] चन्द्रेविनाशं। [2] वञ्चकीं।

यदि ग्रहों की दशारम्भ काल में चन्द्रमा कर्क राशि में हो तो सरल स्वभाव वाली स्त्री व जन का लाभ होता है। यदि दशारम्भकाल में चन्द्रमा मेष वा वृश्चिक राशि का हो तो कुमारी से समागम वा पत्नी का नाश होता है। यदि चन्द्रमा बुध की राशि में अर्थात् मिथुन वा कन्या राशि में हो तो विद्या व शास्त्रों का ज्ञान और मित्र की प्राप्ति वा मित्र से सहायता प्राप्त होती है। यदि शुक्र की राशि (२, ७) में चन्द्रमा हो तो अधिक अन्न, पान व सुख की प्राप्ति और शत्रु का नाश होता है। यदि गुरू को राशि (धनु, मीन) में चन्द्रमा हो तो सुख-धन-सम्मान-आज्ञा की प्राप्ति होती हैं। यदि शनि की राशि (मकर, कुम्भ) में चन्द्रमा हो तो परिणत (वयस्क) अवस्था के समान स्त्री की प्राप्ति वा वृद्धा स्त्री की या धूर्ता स्त्री की प्राप्ति होती है। यदि दशारम्भ काल में चन्द्रमा सिंह राशि में हो तो किला वा वन में निवास, खेती का कार्य व घर का पुल पर्यन्त कार्य, स्त्री-पुत्र से विवाद व प्रेम का अभाव होता है ॥११-१४॥

बृहज्जातक मे कहा है—'प्रारब्धा हिमगौ दशा स्वगृहगे मानार्थसौख्यावहा, कौजे दूषयति स्त्रियं बुधगृहे विद्यासुहृद्वित्तदा। दुर्गारण्यपथालये कृषिकरी सिंहे सितर्क्षेऽन्नदा, कुस्त्रीदा मृगकुम्भयोर्गुरुगृहे मानार्थसौख्यावहा' (८ अ० ११ श्लोक) ॥११–१४॥

दशारम्भ काल में चन्द्रमा पर ग्रहों की दृष्टि का फल

बन्ध्वर्थक्षयरोगाः कुजसौराभ्यां बुधेन पाण्डित्यम्।
दृष्टे तद्योनिसमैः शेषैश्चन्द्रे दशाफलैर्योगः ॥१५॥

यदि दशारम्भ काल में चन्द्रमा भौम व शनि से दृष्ट हो तो बन्धु (बान्धव) व धन का नाश और रोग की प्राप्ति होती है। यदि चन्द्रमा बुध से दृष्ट हो तो पाण्डित्य, अवशिष्ट ग्रहों से दृष्ट होने पर ग्रहों के स्वभावानुसार ही फल होता है ॥१५॥

दशा स्वामी का लग्नस्थ व लग्न से उपचयस्थ होने पर फल

पाकस्वामिनि लग्ने सुहृदां वर्गेऽथवाऽपि सौम्यानाम्।
श्रेष्ठदशायां सू[1]तिर्लग्नादुपचय[2]गृहस्थैर्वा ॥१६॥

यदि दशारम्भ में दशा का स्वामी लग्न में हो वा मित्रग्रह के वर्ग में हो वा शुभग्रह के ग्रह के वर्ग में हो या जन्म लग्न से उपचय (३, ६, १०, ११) स्थान में हो तो दशा का फल श्रेष्ठ अर्थात् शुभ होता है ॥१६॥

बृहज्जातक में कहा है—'पाकस्वामिनि लग्नगे सुहृदि वा वर्गस्य सौम्येऽपि वा, प्रारब्धा शुभदा दशा त्रिदशषड्लाभेषु वा पाकपे' (८ अ० १० श्लो०) ॥१६॥

दशास्वामी से चन्द्रस्थिति वश फल

मित्रोच्चोपचयस्थाने त्रिकोणे सप्तमे तथा।
पाकेश्वरात्स्थितश्चन्द्रः कुरुते [3]स्वफलां दशाम् ॥१७॥
[4]विपरीते स्थिते चन्द्रे दशादौ पर्यवस्थिते।
स्वोच्चगस्यापि खेटस्य दशा न प्रतिपूजिता ॥१८॥

---

[1] स्फूर्तिः। [2] गृहस्थो, गृहस्थे। [3] सुफलां, सफलां। [4] विपरीतमतश्चन्द्रे

यदि दशारम्भ काल में दशापति से चन्द्रमा दशापति की मित्र राशि में हो वा उसकी उच्चराशि में हो वा दशापति से उपचय (३, ६, १०, ११) स्थान में हो अथवा दशापति से पञ्चम, नवम, सप्तम राशि में चन्द्रमा हो तो दशा का फल शुभ होता है। यदि इनसे विपरीत स्थानों में चन्द्रमा हो तो उच्चस्थित ग्रह की भी दशा अशुभ फल प्रदान करती है ॥१७-१८॥

बृहज्जातक में कहा है—'मित्रोच्चोपचयत्रिकोणमदने पाकेश्वरस्य स्थितश्चन्द्रः सत्फलबोधनानि कुरुते पापानि चातोऽन्यथा ।' (८ अ० १०श्लो०) ॥१७-१८॥

शत्रु-नीचांश स्थित ग्रह की दशा का फल

शत्रुनीचनवांशेषु शस्ते राशौ ग्रहस्य च ।
दशा मिश्रफला रिक्ता विबलस्य दशा मता ॥१९॥

यदि प्रशस्त राशि में ग्रह अर्थात् स्वोच्च-मूल त्रिकोण-स्वराशि आदि में ग्रह, शत्रु ग्रह राशि के नवांश में वा नीच राशि के नवांश में हो तो दशा का फल मिश्र अर्थात् शुभा-शुभ दोनों होता है। निर्बल ग्रह की दशा का फल शून्य होता है ॥१९॥

बृहज्जातक में कहा है—'नीचारिभांशे समवस्थितस्य शस्ते गृहे मिश्रफला प्रदिष्टा' (८ अ० ७ श्लोक) ॥१९॥

लग्न दशा का शुभाशुभ फलज्ञान

[1]द्रेक्काणे च दशा मूर्तेः पूजिता मध्यमाधमाः ।
चरे [2]मिश्रप्रतीपा च स्थिरे पापेष्टमध्यमाः ॥२०॥

यदि चरराशिस्थ लग्न में प्रथम द्रेष्काण हो तो दशा का फल उत्तम, द्वितीय द्रेष्काण में मध्यम, तृतीय द्रेष्काण में अधम होता है।

यदि द्विस्वभाव राशिस्थ लग्न में प्रथम द्रेष्काण हो तो दशा का फल अधम, द्वितीय द्रेष्काण में मध्यम और तृतीय द्रेष्काण में उत्तम फल होता है। यदि स्थिरराशिस्थ लग्न में प्रथम द्रेष्काण हो तो दशा का फल अशुभ, द्वितीय द्रेष्काण में शुभ, तृतीय द्रेष्काण में मध्यम फल होता है ॥ २० ॥

बृहज्जातक में कहा है—'उभयेऽधममध्यपूजिता द्रेष्काणैश्चरभेषु चोत्क्रमात् । अशुभेष्टसमाः स्थिरे क्रमाद्धोरायाः परिकल्पिता दशाः' (८ अ० ८ श्लोक) ॥२०॥

ग्रहों की नैसर्गिक दशा का क्रम

चन्द्रावनेयसोमजसितजीवादिवाकरार्किहोराणाम् ।
क्रमशो दशापरिग्रह इष्टो नैसर्गिकश्चैव ॥२१॥

चन्द्रमा, भौम, बुध, शुक्र, गुरु, सूर्य, शनि, लग्न इनकी क्रम से नैसर्गिक दशा होती है ॥२१॥

विशेष—यहाँ यह जिज्ञासा होती है कि किस ग्रह की कितने वर्ष की दशा होती है। उत्तर—बृहज्जातक में कहा है—'एकं द्वौ नवविंशतिर्धृतिकृती पञ्चाशदेषां क्रमा-

---

[1] द्रेक्काणैश्च, द्रेक्काणस्य । [2] मिश्रे ।

च्चन्द्रारेन्दुजशुक्रजीवदिनकृद्दैवाकरीणां समा:' (८ अ० श्लोक)। १ वर्ष चन्द्रमा, २ भौम, ९ बुध, २० शुक्र, १८ गुरू, २० सूर्य ५० वर्ष शनि की दशा अर्थात् नैसर्गिक दशा होती है : यदि इसके अनन्तर भी किसी का जीवन होता है तो लग्न की दशा समझनी चाहिये ॥२१॥

नैसर्गिक दशा का फल

स्वोच्चस्वकालवलिनः सम्पूर्णबलस्य वा निसर्गभवा।
[1]उत्तमशुभफलदासौ[2] ग्रहस्य नित्यं दशा भवति ॥२२॥
स्वराशौ स्वत्रिकोणे च स्वांशे च शुभमध्यमा।
स्वोच्चाभिलाषिणश्चैव मित्रराश्यादिसंस्थिते ॥२३॥
शुभाधमदशा ज्ञेया विपरीतमतस्थिते।
अनेनैव विधानेन विज्ञेया पापदा दशा ॥२४॥

जो ग्रह उच्चराशि में काल बल से युक्त हो वा संपूर्ण बल से संपन्न हो उस ग्रह की नैसर्गिक दशा नित्य शुभ फल प्रदान करती है।

जो ग्रह अपनी राशि में हो वा अपनी मूलत्रिकोण राशि में, वा अपने नवांश में स्थित हो उस ग्रह की नैसर्गिक दशा मध्यममान से शुभ फल प्रदान करती है।

जो ग्रह उच्चराशि में जाने वाला हो अथवा मित्र की राशि में हो तो उस ग्रह की दशा अल्प शुभ फल देती है। इससे विपरीत स्थानों में अर्थात् नीच, शत्रु आदि स्थानों में ग्रह हो तो इसी प्रकार अधिक, मध्यम अल्प पाप फल देने वाली ग्रहों की दशा होती है ॥२२-२४॥

सूर्य की शुभ दशा का फल

भानुदशायां लभते [3]नवोषधाद्ध्वविषदौर्जनैरर्थ्यान्।
गिरिदन्तचर्मवह्निक्रौर्यनरेन्द्राहवाद्यैश्च ॥२५॥
नृपतेरर्था[4]वाप्तिं धैर्यं भूयस्तथोद्यमं तैक्ष्ण्यम्।
ख्यातिं प्रतापवृद्धिं श्रेष्ठत्वं भूपतित्वं च ॥२६॥

सूर्य की शुभदशा में मनुष्य नवीन औषधि व मार्ग निर्माण वा मार्ग में विष (जहर) विक्रय, दुष्टजन, पर्वत, दांत, व्याघ्र वा मृग चर्म, अग्नि, क्रूरता, नृपसंग्राम से धन लाभ करता है तथा राजा से विशेषकर धन लाभ होता है एवं धैर्यता, निरन्तर उद्योग, तीक्ष्णता, प्रसिद्धि व प्रताप की वृद्धि, उत्तमता और राजा वा राजा के समान सुख की प्राप्ति होती है ॥२५-२६॥

बृहज्जातक में कहा है—'सौर्यां स्वं नखदन्तचर्मकनकक्रौर्याध्वभूपाहवैस्तैक्ष्ण्यं धैर्यमजस्रमुद्यमरतिः ख्यातिः प्रतापोन्नतिः' (८ अ० १२ श्लो०) ॥२५-२६॥

---

[1] अनुपम। [2] स्याद्व। [3] पौरुषमेधाध्वविषयकालनैरर्थान् दौस्थ्यनैरर्थ्यात्। [4] द्वैरंभूयो।

सूर्य की अशुभ दशा का फल

भृत्यार्थचोरचक्षुःशस्त्राग्न्युदकक्षितीश्वराद्बाधाः ।
सुतपत्नीबन्धुजनैर्निपीडितः स्याच्च पापरतिः ॥२७॥
क्षुत्तृष्णार्तिः शोको हृत्पीडा पैत्तिकास्तथा रोगाः ।
गात्रच्छेदो भवति हि सूर्यदशायामनिष्टायाम् ॥२८॥

सूर्य की अशुभ दशा में नौकर, धन, चोर, नेत्र, शस्त्र, अग्नि जल व राजा इनसे कठिनाई, पुत्र, स्त्री, बान्धवों से दुःख, पाप में बुद्धि, भूख व तृष्णा से पीड़ा, शोक हृदय रोग, पित्त रोग और शरीर भङ्ग होता है ॥ २७–२८ ॥

बृहज्जातक में कहा है—'भार्या पुत्रधनारिशस्त्रहुतभुग्भूपोद्भवा व्यापदस्त्यागी पापरतिः स्वभृत्यकलहो हृत्क्रोडपीडामयाः' (८अ० १२श्लो०) ॥ २७–२८ ॥

चन्द्रमा की शुभ दशा का फल

चन्द्रदशायां वित्तं स्त्रीसंगममार्दवात्पथि विहारात् ।
जलतुहिनक्षीररसैरिक्षुविकारैस्तथा क्रीडा ॥२९॥
द्विजमन्त्राणां लब्धिः पुष्पाम्बरसेवनं मधुरता च ।
अर्थविनाशमकस्मात्सुसंपदास्त्विष्टतां लभते ॥३०॥
तैक्ष्ण्यादवाप्तसिद्धिः पूजां प्राप्नोति गुरुनृपाभ्यां च ।
मेधाधृतिपुष्टिकरी चन्द्रदशा शोभना नित्यम् ॥३१॥

चन्द्रमा की शुभदशा में जातक को स्त्री सङ्गम, सरलता, मार्ग विचरण, जल, वर्फ, दूध, रस, गुड़ चीनी सीरादि तथा खेलकूद से धन लाभ, ब्राह्मणों से मन्त्रों की प्राप्ति (सं० वि० वि० की मातृका में 'द्विजमित्राणां' यह पाठ उपलब्ध होने से ब्राह्मण मित्रों की प्राप्ति) सुन्दर पुष्प व वस्त्रों का सेंवन, मीठापन, अकस्मात् धन नष्ट होने पर भी पुनः इच्छित संपत्ति की प्राप्ति, उग्रता से अभीष्ट सिद्धि, गुरू व राजा से सत्कार, बुद्धि और धैर्य व पुष्टि की प्राप्ति होती है ॥ २९–३१ ॥

बृहज्जातक में कहा है—'इन्दोः प्राप्तदशां फलानि लभते मन्त्रद्विजात्युद्भवा 'नीक्षु क्षीरविकारवस्त्रकुसुमक्रीडातिलान्नश्रमैः' (८अ० १३श्लो०) २९–३१ ॥

चन्द्रमा की अशुभ दशा का फल

कुरुते भयं कुलस्य च चन्द्रदशा स्वकुलविग्रहं कष्टम् ।
निद्रालस्यं स्त्रीणां भयजननी शोकदा रतिदा ॥३२॥

चन्द्रमा की अशुभ दशा में कुल (वंश) में भय, अपने परिवार में कलह व कष्ट, निद्रा, आलस्य की वृद्धि, स्त्रियों को भय, शोक व रति की प्राप्ति होती है ॥ ३२ ॥

बृहज्जातक में कहा है—'निद्रालस्य मृदुद्विजामररतिः स्त्रीजन्ममेधाविता कीर्त्यर्थोपचयक्षयौ च बलिभिर्वैरं स्वपक्षेण च' (८अ० १३श्लो०) ॥ ३२ ॥

मङ्गल की शुभ दशा का फल

भौमदशायां लभते नृपाग्निचोरप्रयोगरिपुमदः।
व्यालविषशस्त्रबन्धनसुतैक्ष्ण्यकूटैश्च धनलाभम् ॥३३॥
क्षित्याजाविक[1]ताम्रकसुवर्णपण्यादिभिस्तथा द्यूतैः।
आसवकषायकटुकै रसैश्च धनधान्यभाग्भवति ॥३४॥

मङ्गल की शुभ दशा में राजा, अग्नि, चोर, युद्ध में शत्रु मर्दन करने, सर्प, विष, शस्त्र, बन्धन, तोखापन व कूट (नकली वस्तु) से धन का लाभ होता है। भूमि, बकरी, भेंड़, तन्त्र वा तामा, सुवर्ण के व्यापार, जूआ, आसव, कसैले पदार्थ, कटु वस्तु व रसों से जातक को धन धान्य का लाभ होता है ॥ ३३–३४ ॥

बृहज्जातक में कहा है—'भौमस्यारिविमर्दभूपसहजक्षित्याविकाजैर्धनं' (८अ०-१४श्लो०) ॥ ३३–३४ ॥

मङ्गल की अशुभ दशा का फल

मित्रकलत्रविरोधी भ्रातृसुतैर्विग्रहश्च तृष्णा च।
मूर्च्छा शोणितदोषः शाखाच्छेदो व्रणश्चापि ॥३५॥
परदाररतिर्द्वेष्यो गुरुसत्यानामधर्मनिरतश्च।
पित्तकृतैरपि दोषैरभि[2]भूतो मानवो भवति ॥३६॥

मङ्गल की अशुभ दशा में मित्र व स्त्री से विरोध, भाई व पुत्रों से लड़ाई, तृष्णा की वृद्धि, मूर्च्छा का रोग, खून में खराबी, वंशच्छेद, घाव, पर स्त्री से प्रेम, गुरू व सत्यता से द्रोह, अधर्म में प्रीति और पित्त प्रकोप से शरीर कष्ट होता है ॥ ३५–३६ ॥

बृहज्जातक में कहा है—'प्रद्वेषः सुतमित्रदारसहजैर्विद्वद्गुरुद्वेष्टता तृष्णासृग्ज्वरपित्तभङ्गजनिता रोगाः परस्त्रीकृताः प्रीतिः पापरतैरधर्मनिरतिः पारुष्यतैक्ष्ण्यानि च'

(८ अ० १४ श्लोक) ॥ ३५–३६ ॥

बुध की शुभ दशा का फल

सौम्यदशायां [3]पुत्रान् मित्रादाढ्याद्धनस्य सम्प्राप्तिः।
दीक्षितनृपतेर्द्यूताद्वणिग्जनाच्चापि सम्भवति ॥३७॥
वेसरमहीसुवर्णं शुक्तिद्रव्यं यशः प्रशंसा च।
दूत्यं सौख्यमतुल्यं सौभाग्यं मतिचयख्यातिः ॥३८॥
धर्मक्रियासु सिद्धिर्हास्यरतिः शत्रुसंक्षयो भवति।
गणितालेख्यलिपीनां कौतुकभागी सदा पुरुषः ॥३९॥

बुध की शुभ दशा में पुत्र, मित्र, धनी, दीक्षित राजा, जुआ और वैश्य जन से धन की प्राप्ति होती है। घोड़ा, भूमि, सुवर्ण, मोती, यश, प्रशंसा की वृद्धि, दूतकर्मत्व, अनुपम सुख व सौभाग्य की प्राप्ति, बुद्धि की वृद्धि, प्रसिद्धि, धर्म कार्यों में सिद्धि, हँसने में प्रीति, शत्रु का नाश, गणित-आलेख्य व लिपियों के ज्ञान में कुतूहल सदा होता है ॥ ३७–३९ ॥

---

१ तान्त्रिकस्वर्णविश्या। २ ताक्षी। ३ प्राहे।

बृहज्जातक में कहा है—'बोध्यां दौत्यसुहृद्गुरुद्विजधनं विद्वत्प्रशंसायशो युक्तिद्रव्यसुवर्णवेसरमही सौभाग्यसौख्याशयः। हास्योपासनकौशलं मतिचयो धर्मक्रियासिद्धयः' (८ अ० १५ श्लोक) ॥ ३७–३९ ॥

बुध की अशुभ दशा का फल

पीडां धातुत्रितयात्पारुष्यं बन्धनं तथोद्वेगम्।
मानसशोकं वाऽपि बुधस्य कष्टा दशा कुरुते ॥ ४० ॥

बुध की अशुभ दशा में त्रिदोष से शरीर कष्ट (पीड़ा), कठोर वचन, बन्धन, उद्वेग तथा मानसिक चिन्ता होती है ॥ ४० ॥

बृहज्जातक में कहा है—'पारुष्यं श्रमबन्धमानसशुचः पीड़ा च धातुत्रयात्'
(८ अ० १५ श्लोक) ॥ ४० ॥

गुरु की शुभ दशा का फल

त्रिदशपतिगुरुदशायां मन्त्री नृपनृत्यनीतिभिर्वित्तम्।
मानगुणानां लब्धिरतिप्रतापः सुहृद्विवृद्धिश्च ॥ ४१ ॥
कान्तासुवर्णवेसरगजादिभोगी सदा पुरुषः।
माङ्गल्यपौष्टिकानां लाभो[1] द्विषतां विनाशश्च ॥ ४२ ॥
लाभो भवति नराणां प्रीतिः सद्भूमिपैः सार्धम्।
जनताया नृपवकूत्रात्पण्याग्राद्गुरुजनाच्च धनलाभः ॥ ४३ ॥

गुरु की शुभदशा में मन्त्री (सचिव) होने से, राजा, नाचने व नीति (न्याय) से धनागम, सम्मान व गुणों की प्राप्ति, अधिक प्रताप व मित्रों की वृद्धि, स्त्री-सुवर्ण-घोड़ा--हाथियों के सुख का भोग, माङ्गल्य व पौष्टिक वस्तुओं का लाभ, शत्रुओं का नाश, अच्छे राजाओं से प्रेम अर्थात् मैत्री, जनता, राजा, अग्रगण्य व्यापारी और गुरूजनों से धन का लाभ होता है ॥ ४१–४३ ॥

बृहज्जातक में कहा है—'जैव्यां मानगुणोदयो मतिचयः कान्तिप्रतापोन्नतिर्माहात्म्योद्यममन्त्रनीतिन्टपतिस्वाध्यायममन्त्रैर्धनम्। हेमाश्वात्मजकुञ्जराम्बरचयः प्रीतिश्च सद्भूमिपैः' (८ अ० १६ श्लोक) ॥ ४१–४३ ॥

गुरु की अशुभ दशा का फल

व्यजनातपत्रसुमनोवस्त्रध्वजपेयभ[2]क्षणादीनाम्।
गात्रश्वथपृथुशोकं पङ्गुत्वं गुल्मकर्णरोगांश्च।
पुंस्त्वविनाशं मेदःक्षयं नृपतितो भयं समाप्नोति ॥ ४४ ॥

गुरु की अशुभ दशा में पंखा, छाता, पुष्प, वस्त्र, ध्वजा व पीने-खाने का अभाव, शरीर में सूजन, अधिक शोक, पंगुता (लंगड़ापन), गठिया व कान रोग, वीर्य व मेदा का क्षय और राजा से भय होता है ॥ ४४ ॥

बृहज्जातक में कहा है—'सूक्ष्मोहा गहनाश्रमः श्रवणरुग्वैरं विधर्माश्रितैः'
(८ अ० १६ श्लोक) ॥ ४४ ॥

---

[1] भोगो। [2] विशेषतः क्षीणः।

शुक्र की शुभ दशा का फल

शुक्रदशायां विजयः क्ष्माभवनविलासशयनपत्नीनाम् ।
माल्याच्छादनभोजनयशःप्रमोदो निधिप्राप्तिः ॥ ४५ ॥
गेयरतिः स्त्रीसङ्गो नृपतेः कृषितो धनस्य सम्प्राप्तिः ।
ज्ञानेष्टसौख्यसुहृदां मन्मथयोग्योपकरणानाम् ॥ ४६ ॥

शुक्र की शुभ दशा में विजय, भूमि, घर, विलास शय्या, स्त्री, माला, वस्त्र, भोजन, यश, हर्ष व खजाने की प्राप्ति होती है । गान में प्रीति, स्त्रीसंसर्ग, राजा व खेती से धन लाभ, ज्ञान, अभीष्ट. सुख, मित्र व कामोपयोगी वस्तुओं की प्राप्ति होती है ॥ ४५–४६ ॥

बृहज्जातक में कहा है—'शौक्र्यां गीतरतिप्रमोदसुरभिद्रव्यांन्नयानाम्बर स्त्रीरत्नद्युति मन्मथोपकरणज्ञानेष्टमित्रागमाः । कौशल्यं क्रयविक्रये कृषिनिधिप्राप्तिर्धनस्यागमो" (८ अ० १७ श्लो०) ॥ ४५–४६ ॥

शुक्र की अशुभ दशा का फल

कुलगुणवृद्धैर्वादो यानासनसंभवानि पापानि ।
स्त्रीनृपतिकृतावश्यं लोकविरुद्धैः सह प्रीतिः ॥ ४७ ॥

शुक्र की अशुभ दशा में कुल व गुण में बड़े जनों से विवाद, वाहन व आसन जन्य तथा स्त्री व राजा कृत पाप और संसार विरोधियों से प्रेम होता है ॥ ४७ ॥

बृहज्जातक में कहा हैं—'वृन्दोर्वीशनिषादधर्मरहितैर्वैरंशुचः स्नेहतः"
(८ अ० १७ श्लो०) ॥ ४७ ॥

शनि की शुभ दशा का फल

सौरेर्दशां प्रपन्नः प्राप्नोति पुमान्खरोष्ट्रमहिषाद्यान् ।
कुलटां जरदङ्गीं वा कुलित्थतिलकोद्रवादींश्च ॥ ४८ ॥
वृन्दग्रामपुराणामधिकारभवं च[1] सत्कारम् ।
लोहत्रपुकादीनां स्वकीयपक्षस्थिरास्पदं चैव ॥ ४९ ॥

शनि की शुभ दशा में मनुष्य को गदहा, ऊँट, भैंसा आदि पशुओं का लाभ, वेश्या स्त्री अथवा वृद्धा स्त्री का संसर्ग, कुलथी, तिल, कोदों आदि कदन्न की प्राप्ति, समुदाय-ग्राम वा नगर का अधिकार प्राप्त होता है, तथा जनता द्वारा सत्कार भी होता है । लोहा शीशा आदि धातु का लाभ और अपने पक्ष के मनुष्यों में स्थिर स्थान प्राप्त होता है ॥ ४८–४९ ॥

बृहज्जातक में कहा है—'सौरीं प्राप्य खरोष्ट्रपक्षिमहिषो वृद्धाङ्गनावाप्तयः, श्रेणीग्रामपुराधिकारजनिता पूजा कुधान्यागमः' (८ अ० १८ श्लो०) ॥ ४८–४९ ॥

---

[1] चमत्कारं ।

शनि की अशुभ दशा का फल

वाहननाशोद्वेगस्त्वरतिः स्त्रीस्वजनविप्रयोगश्च ।
युद्धेष्वपजयदोषो मद्यद्यूतोद्भवो मरुत्कोपः ॥ ५० ॥
पुण्येष्वसिद्धिकलहं[1] बन्धनतन्द्रीश्रमं तथा व्यङ्गम् ।
भृत्यापत्यविरोधो भवति च कष्टा यदा दशा सौरेः ॥ ५१ ॥

शनि की अशुभ दशा में वाहन (सवारी) सुख का विनाश, उद्वेग, अप्रीति, स्त्री व अपने मनुष्यों से वियोग, युद्ध में पराजित होने पर अपयश, शराब व जूआ से कीर्ति का नाश, वायु जन्य व्याधि, पुण्य कार्यों में सिद्धि का अभाव, बन्धन, तन्द्रा, परिश्रम, अङ्गक्षत, नौकर और सन्तान से विरोध होता है ॥ ५०–५१ ॥

वृहज्जातक में कहा है—'भृत्यापत्यकलत्रभर्त्सनमपि प्राप्नोति च व्यङ्गताम्'
(८ अ० १८ श्लोक) ॥ ४९–५१ ॥

दशा कथन में विशेष

सौम्यपापफलं प्रोक्तं सामान्यं स्वदशास्विदम् ।
विशेषेण प्रवक्ष्यामि प्रत्येकं फलभेदतः ॥ ५२ ॥

अभी तक ग्रहों की शुभाशुभ दशा का सामान्य रूप से वर्णन किया गया है । अब मैं प्रत्येक ग्रहों की दशा के फल को विशेष रूप से कहता हूँ ॥ ५२ ॥

पाँच प्रकार की सूर्य दशा का कथन

स्वोच्चनीचत्रिकोणर्क्षं केन्द्रं शत्रुगृहं तथा ।
पञ्चप्रकारसंयुक्ता दशा भानोः प्रकीर्तिताः ॥ ५३ ॥

१ उच्च, २ नीच, ३ मूल त्रिकोण, ४ केन्द्र, ५ शत्रुराशि इन पांच स्थानों के योग से सूर्य की दशा पाँच प्रकार को होती है ॥ ५३ ॥

लग्नस्थ, केन्द्रस्थ सूर्य दशा का फल

राज्यं ददाति विपुलं दशा रवेर्लग्नसंस्थितस्य नृणाम् ।
केन्द्रस्थितस्य दद्यात्कटिगलनेत्रप्रकोपमरिगस्य ॥ ५४ ॥

यदि लग्नस्थ रवि की दशा हो तो जातक विशाल राज्य की प्राप्ति करता है । यदि शत्रुराशिस्थ केन्द्रगत सूर्य हो तो सूर्य की दशा में कमर-गला व नेत्र में रोग होता है ।५४।

नीचस्थ सूर्य दशा का फल

नीचस्य दशा भानोरक्ष्णोर्नाशं ज्वरं शिरोरोगम् ।
बन्धनमन्याश्च रुजः कुष्ठामयदर्शनं चिह्नम् ॥ ५५ ॥

यदि नीचस्थ सूर्य की दशा हो तो जातक की आँखों का नाश वा कष्ट, ज्वर, शिर में रोग, बन्धन, अन्य रोग, कोढ व आँव जन्य रोग होता है ॥ ५५ ॥

---

[1] सिद्ध ।

उच्चस्थ सूर्य की दशा का फल

स्वोच्चप्राप्तस्य दशा ददाति राज्यं सहस्रकिरणस्य ।
तुरगातपत्रचामरकरीन्द्रसंवर्धितं सम्यक् ॥ ५६ ॥

उच्चस्थ सूर्य की दशा में घोड़ा, छत्र, चामर, हाथियों से संवधित राज्य की प्राप्ति होती है ॥ ५६ ॥

मूलत्रिकोणस्थित सूर्य की दशा का फल

सवितुर्दशा च पुंसो विदधाति पुरा[1] त्रिकोणसंस्थस्य ।
उत्तमविषयपतित्वं विध्वस्ताशेषदुःखस्य ॥ ५७ ॥

मूलत्रिकोण सूर्य की दशा में उत्तम देशों का स्वामित्व और समस्त दुःखों का नाश होता है ॥ ५७ ॥

शत्रुगृहस्थित सूर्य की दशा का फल

शत्रुगृहेऽर्कदशायां नयनविनाशो भवेच्च कुब्जत्वम् ।
ज्वालाषक्त्रजरोगा भवन्ति क्रमयः[2] परिभवाश्च ॥ ५८ ॥

शत्रु राशिस्थ सूर्य की दशा में नेत्र विनाश, कुबड़ापन, जलन व मुखजन्य रोग, कीड़ा का रोग वा कुत्सित नीति और तिरस्कार होता है ॥ ५८ ॥

अष्टमस्थ सूर्य की दशा का फल

अष्टमगतस्य भानोर्दशा क्षयं नयति सर्वगात्रं च ।
भ्रमयति देशाद्देशं प्रमापयत्यपि च विक्लिष्टम् ॥ ५९ ॥

अष्टमभावस्थ सूर्य की दशा में विनाश, समस्त शरीर में रोग, देश देशान्तर का भ्रमण तथा अधिक कष्ट होता है ॥ ५९ ॥

विशेषता से चन्द्रदशा का फल

सामान्यतश्च षोढा चन्द्रदशा भिद्यते समासेन ।
स्वोच्चसुहृच्छत्रुगृहे नीचे क्षीणे प्रपूर्णे च ॥ ६० ॥

साधारण रूप से चन्द्रमा की दशा १ उच्च, २ नीच, ३ मित्र राशि, ४ शत्रु राशि, ५ क्षीणता, ६ पूर्णता इन भेदों से ६ प्रकार की होती है ॥ ६० ॥

उच्च-नीच-मित्र-शत्रु राशिस्थ चन्द्रदशा का फल

तत्रोच्चदशा राज्यं नीचदशा मरणमरिदशा बन्धम् ।
कथयति नलिनीशत्रोर्मित्रदशा स्वजनसम्प्राप्तिम् ॥ ६१ ॥

उच्चस्थ चन्द्रमा की दशा में राज्य लाभ, नीचस्थ चन्द्रमा की दशा में मरण, शत्रु राशिस्थ चन्द्रमा की दशा में बन्धन और मित्र राशिस्थ चन्द्रमा की दशा में अपने मनुष्यों से सुख की प्राप्ति होती है ॥ ६१ ॥

क्षीण चन्द्रदशा का फल

क्षीणेन्दुदशायोगे चिह्नान्येतानि लक्षयेद्विद्वान् ।
उदरामयज्वरशिरोनयनोत्कोपः प्रतिश्यायान्[3] ॥ ६२ ॥

---

[1] स्वरा । [2] कुनयः । [3] प्रतिश्रयाच्चापि ।

क्षीण चन्द्रमा की दशा में पेट में रोग, ज्वर, मस्तक व नेत्र पीड़ा और सर्दी जुकाम होता है ॥ ६२ ॥

पूर्ण व बली चन्द्रदशा का फल

बलिनः परिपूर्णस्य च शशिनः कुरुते सदा दशा पुंसाम् ।
दयितासहस्रपरिवृतमन्तःपुरमुत्तमस्त्रीकम् ॥ ६३ ॥

बली परिपूर्ण चन्द्रमा की दशा में अन्तःपुर उत्तम सहस्त्रस्त्रियों से युक्त होता है अर्थात् स्त्री सुख श्रेष्ठ होता है ॥ ६३ ॥

अष्टमस्थ चन्द्रमा की दशा का फल

भवति नरस्य भ्रंशो विषयस्यान्तःपुरस्य भृत्यानाम् ।
अष्टमचन्द्रदशायां म्रियते च स्वजनपरिभूतः ॥ ६४ ॥

अष्टमस्थ चन्द्रमा की दशा में अन्त पुर (जनाना गृह) के नौकरों का विनाश और अपने मनुष्यों से पीडित होकर स्वयं का मरण होता है ॥ ६४ ॥

शत्रु राशिस्थ चन्द्र दशा का फल

यन्त्रतृणकाष्ठमयवंशकरञ्जीफलोदकाजीवी ।
भवति कदन्नकुचेली नृपोऽपि भृतकोऽरिगृहदशायाम् ॥ ६५ ॥

शत्रु राशिस्थ ग्रह की दशा में, यन्त्र, तृण, काष्ठ, गोबर, बांस, करंजी फल (कन्जा) और जल से जीविका होती है। कुत्सित अन्न खाने को मिलता है। मलिन वस्त्र धारण करने को प्राप्त होते हैं और राजा भी नौकरी करके जीवन यापन करता है ॥ ६५ ॥

लग्नस्थ व उच्चस्थ एवं केन्द्रस्थ ग्रहों की दशा का फल

लग्नगृहगस्य हि दशा मण्डललाभं तथोच्चगस्यापि ।
केन्द्रस्थितस्य कुरुते धनवाहनदेशसम्प्राप्तिम् ॥ ६६ ॥

लग्नस्थ व उच्चस्थ ग्रह की दशा में जातक मण्डलाधीश होता है। केन्द्रस्थ ग्रह की दशा में धन, सवारी व देश प्राप्ति होती है ॥ ६६ ॥

षष्ठस्थ अष्टम व ग्रह की दशा का फल

[1]षष्ठदशा व्यसनकरी मरणं च करोति नैधनस्थदशा ।
अस्तमितग्रहपाको बन्धनमात्रेण पीडयति ॥ ६७ ॥

षष्ठभावस्थ ग्रह की दशा में व्यसनों की वृद्धि, अष्टमस्थ ग्रह की दशा में मरण और अस्त ग्रह की दशा में बन्धन से पीड़ा होती है ॥ ६७ ॥

वक्री ग्रह की दशा का फल

वक्रोपगस्य हि दशा भ्रमयति च कुलालचक्रवत्पुरुषम् ।
व्यसनानि[2] रिपुविरोधं करोति पापस्य न शुभस्य ॥ ६८ ॥

वक्री ग्रह की दशा में कुलालचक्र (चाक) की तरह देश देशान्तरों का भ्रमण, दुर्व्यसनों की वृद्धि और शत्रु से विरोध (लड़ाई) होता है। यह फल पापग्रह के वक्री होने पर होता है न कि शुभ ग्रह के वक्री होने पर उक्त फल होता है ॥ ६८ ॥

---

१ कष्टदशा । २ व्यसनानि ।

ग्रहों की स्थिति से दशा का फल

[1]रिक्तातिरिक्तनिम्नातिनिम्नरिपुप्रतिरिपुगृहदशासु ।
पृथ्वीपतिरपि भूत्वा स्वभृत्यभृत्यो भवेत्पुरुषः ॥ ६९ ॥

रिक्त (निर्बलो) शून्यबली, नीचस्थ, परमनीचस्थ, शत्रुराशिस्थ, अधिशत्रुस्थ ग्रह की दशा में जातक राजा होकर भी नौकरों का नौकर होता है ॥ ६९ ॥

शत्रु राशिस्थ ग्रहों का फल

देशत्यागो व्याधिर्भ्रंशोत्थानं मुहर्मुहुः कलहः ।
बन्धनमरातिजनितं रिपुराशिगतस्य हि दशायाम् ॥ ७० ॥

शत्रु राशिस्थ ग्रहों की दशा में अपने देश (स्थान) का त्याग, रोग, बार-बार पतन और उत्थान, कलह और शत्रुजन्य बन्धन (जेल) होता है ॥ ७० ॥

निर्बल ग्रह की दशा का फल

महितकरिगलितमदजलसेकक्ष्मापीठवारितरजस्कः ।
राजा कष्टसहायी रिक्तदशायां ध्रुवं भ्रमति ॥ ७१ ॥

निर्बल ग्रह की दशा में राजा भी अपने मतवाले हाथियों के मद जल से सिक्त भूमि पृष्ठ पर कीचड़ हो जाने से इधर-उधर कष्ट सहन करके निश्चय घूमता है अर्थात् कष्ट होता है ॥ ७१ ॥

षष्ठस्थ-कोणद्यूनस्थ-निधनस्थ शत्रुगृहगतग्रह दशा का फल

अङ्गप्रत्यङ्गानां छेदं विदधाति षष्ठशत्रुदशा ।
कोणद्यूनारिदशा निधनारिदशा शिरश्छेदम् ॥ ७२ ॥

षष्ठस्थ व ५, ९ सप्तमस्थ शत्रु गृहगत ग्रह को दशा में शरीर के अङ्ग व प्रत्यङ्ग भग्न होते हैं। अष्टमस्थ शत्रु गृहगत की दशा में मस्तक पर चोट लगती है ॥ ७२ ॥

नीचस्थ ग्रह दशा का फल

रिपुभयविदेशगमनं बन्धनरोगादिपीडनं भवति ।
नीचस्थग्रहपाके राजाभिभवो ध्रुवं पुंसाम् ॥ ७३ ॥

नीचस्थ ग्रह की दशा में, शत्रुभय, विदेश (परदेश) गमन, बन्धन, रोगादि पीड़ा, तथा राजा का भी सचमुच पराजय होता है ॥ ७२ ॥

शून्य बली ग्रहों की दशा का फल

चिन्ता स्वाप्नानुभवैः परिणमति फलं विहीनवीर्यस्य ।
पञ्चमहापुरुषोक्ताध्यायांस्तांस्तान्नियोजयेदत्र ॥ ७४ ॥

बलहीन ग्रह की दशा में स्वप्न के अनुभवों से चिन्ता होती है। पञ्चमहापुरुषाध्याय में जो फल कथित हैं वे ग्रहों की दशा में कहने चाहिये ॥ ७४ ॥

---

१ तुच्छातितुच्छ ।

दशाफल प्राप्ति कथन

आदौ दशासु फलदः शीर्षोदयराशिसंस्थितो विहगः।
उभयोदये च मध्ये स्वान्त्ये पृष्ठोदये च नीचर्क्षे॥ ७५॥

शीर्षोदय राशिस्थ ग्रह दशा की आदि में, उभयोदय राशिस्थ ग्रह दशा के मध्य में, पृष्ठोदय व नीच राशिस्थ ग्रह दशा के अन्त में फल को देता है॥ ७५॥

जातक पारिजातक में कहा है—'शीर्षोदयगतः खेटः पाकादौ फलदो भवेत्॥ ७५॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां मूलदशाफलं नाम चत्वारिंशोऽध्यायः।

एकचत्वारिंशोऽध्यायः।

अन्तर्दशा पाक ज्ञान

अर्धमेकस्थितो भागं त्रिभागं सुतधर्मयोः।
सप्तमे सप्तमं भागं चतुर्थं चतुरश्रयोः[1]॥ १॥

मूलदशापति के साथ में रहने वाले ग्रह की अन्तर्दशा ½ अर्थात् आधा, दशापति से त्रिकोण (५, ९) में स्थित ग्रह तृतीयांश, दशाधीश से सप्तमस्थ ग्रह सप्तमांश और दशास्वामी से चतुर्थ व अष्टमस्थ ग्रह की अन्तर्दशा चतुर्थांश फलदा होती है॥ १॥

बृहत्पाराशर में कहा है—'पूर्णं दशापतिर्दद्यात् तदर्धं तेन संयुतः। त्रिकोणगस्तृतीयांशं तुर्यांशश्चतुरस्रगः। स्मरगः सप्तमं भागं बहुष्वेको बली ग्रहः' (५१ अ० १३–१४ श्लो)॥१॥

एवं बृहज्जातक में भी—'एकर्क्षगोऽर्द्धमपहृत्य ददाति तु स्वं त्र्यंशं त्रिकोणगृहगः स्मरगः स्वरांशम्। पादं फलस्य चतुरस्रगतः सहोरास्त्वेवं परस्परगताः परिपाचयन्ति' (८ अ० ३ श्लो०)॥ १॥

अन्तर्दशा साधन में विशेष

मूलं दशाधिनाथस्य कृत्वांशं स्वगुणैर्ग्रहः।
करोत्यन्तर्दशां सत्यां बली हरति भागशः[2]॥ २॥
शुभस्य शुभदः पूर्णः क्रूरस्याशुभदो भवेत्।
केन्द्रादिविधिना चान्ये केचित्पाकक्रमेण तु॥ ३॥

मूल महादशा के उक्त प्रकार से भाग कर अपने-अपने गुणों से ग्रह अन्तर्दशा का पाचक होता है।

यदि त्रिकोणादि उक्त स्थान में अधिक ग्रह हों तो उनमें से बलवान् ग्रह की अन्तर्दशा प्रथम होती है। शुभ ग्रह की अन्तर्दशा पूर्ण शुभ फलद और पापग्रह की अशुभ प्रद होती है। किसी-किसी आचार्य का कथन है कि प्रथम अन्तर्दशा दशापति की इसके बाद दशाधीश से केन्द्रस्थ ग्रह, फिर पणफरस्थ ग्रह की, इसके बाद आपोक्लिम में रहने वाले ग्रह की अन्तर्दशा होती है। कोई-कोई आचार्य पाकक्रम से अन्तर्दशा का वर्णन करते हैं॥ २–३॥

---

[1] चतुरश्रये। [2] भगभ।

सत्याचार्य का मत

सत्योक्तं तूच्यते कश्चिद्ददाति बलवान्ग्रहः ।
नित्यं पाकक्रमात्कार्यः शेषास्तु परिपाकदाः ॥ ४ ॥

सत्याचार्य का कथन है कि एक स्थान में अधिक ग्रह हों तो बल क्रम से अन्तर्दशा होती है । किन्तु अन्तर्दशा का भाग दशा क्रम के अनुसार होता है ॥ ४ ॥

अन्तर्दशा साधन

भागाः सदृशाः सहिता दशाब्दपिण्डस्य भागहारोऽयम् ।
प्रत्यंशताडितः स्यात्पृथक्पृथक्त्वन्तरदशाः[1] स्युः ॥ ५ ॥

पूर्व कथित अर्द्धादिक भाग का समच्छेद करके फिर समच्छेद को जोड़ दे और नवीन अंश जो उत्पन्न हुए हैं उनकी गुण संज्ञा और उन गुणकारों के योग को भाग हार समझना चाहिये । दशा के वर्षादि पृथक् गुणकारों से गुणा कर भाग हार से भाग देने पर जो वर्षादि प्राप्त हों वह अन्तर्दशा होती है ॥ ५ ॥

बृहत्पाराशर में कहा है—'समच्छेदीकृताः प्राप्ता अंशाश्छेदविवर्जिताः । दशाब्दाः पृथगंशघ्ना अंशयोगविभाजिताः । अन्तर्दशा भवत्येवं' (५१ अ० १५½–१६ श्लो) ॥५॥

दशास्वामी के साथ रहने वाले ग्रह की अन्तर्दशा का फल

एकर्क्षसंस्थितदशा प्रदिशति बन्धं स्वनाशं वा ।
जनयति कण्टकसहिता त्रिकोणसंस्थस्य सुखमतुलम् ॥ ६ ॥

यदि दशास्वामी के साथ रहने वाले ग्रह की अन्तर्दशा हो तो जातक का बन्धन (जेल) व धन का विनाश होता है । यदि दशास्वामी केन्द्र में वा त्रिकोण में स्थित हो तो साथ में रहने वाले ग्रह की अन्तर्दशा में अधिक सुख होता है ॥ ६ ॥

केन्द्र व त्रिकोण में एकस्थानस्थ २–४ ग्रहों के बीच में शत्रुगृहस्थ की अन्तर्दशा का फल

एकद्वित्रिचतुर्था नक्षत्रे रिपुदशा ग्रहाणां स्यात् ।
व्याधिक्लेशविवादान्नृपतेश्च भयं यदा[2] जनयेत् ॥ ७ ॥

यदि एकस्थानस्थ २, ३ या ४ ग्रहों के बीच में शत्रुगृहगत ग्रह की अन्तर्दशा हो तो जातक को रोग, क्लेश, विवाद और राजा से भय होता है ॥ ७ ॥

दशाधीश से सप्तमस्थ ग्रह की अन्तर्दशा का फल

दारमरणं च जनयति सप्तमगान्तर्दशा प्रणाशं वा ।
शत्रोर्दासीकरणं परपुरुषेणोपभोगं वा ॥ ८ ॥

यदि दशाधीश से सप्तमस्थ ग्रह की अन्तर्दशा हो तो जातक की स्त्री का मरण वा अपना मरण, शत्रु का सेवकत्व वा दूसरे पुरुष का संसर्ग होता है ॥ ८ ॥

दशाधीश से अष्टमस्थ ग्रह की अन्तर्दशा का फल

अन्तर्दशा ग्रहाणामष्टमधाम्नि प्रतापयेत्पुरुषम् ।
कुरुते च धनविनाशं शत्रुगता बन्धनं च विध्वंसम् ॥ ९ ॥

---

[1] चान्तर । [2] तथा ।

यदि दशाधीश से अष्टमस्थ ग्रह की अन्तर्दशा हो तो जातक संतप्त (पीड़ित) व उसके धन का नाश होता है। यदि शत्रुगृहगत अष्टमस्थ ग्रह की अन्तर्दशा हो तो बन्धन (जेल) और विध्वंस होता है ॥ ९ ॥

केन्द्रत्रिकोण के विना एकस्थ २, ३, ४ पाप ग्रहों की अन्तर्दशा फल

अन्तर्दशा यदा (स्यात्) द्वित्रिचतुर्णामेकराशिसंस्थानाम् ।
बन्धनविनाशदै[1]न्यं विदधात्यशुभग्रहाणां तु ॥ १० ॥

यदि केन्द्र व त्रिकोण के अतिरिक्त अन्य भावस्थ २, ३, ४ पापग्रह हों तो उनकी अन्तर्दशा में बन्धन, (जेल) विनाश और दैन्यता होती है ॥ १० ॥

दशाधीश से चतुर्थस्थ ग्रह की अन्तर्दशा का फल

चतुर्थस्थानसंस्थस्य ग्रहस्यान्तर्दशा भवेत् ।
मित्रारोग्यकरी[2] नित्यं सौख्यमानविव[3]र्धनम् ॥ ११ ॥

दशाधीश से चतुर्थस्थ ग्रह की अन्तर्दशा में मित्रों को शरीर सुख, सुख व सम्मान की वृद्धि होती है ॥ ११ ॥

सूर्य की महादशा में चन्द्रमा की अन्तर्दशा का फल

शमयति रिपुप्रतापं नीरोगत्वं करोति धनलाभम् ।
भानुदशायां चन्द्रः प्रविशंस्तन्नास्ति यन्न शुभम् ॥ ११ ॥

यदि सूर्य की महादशा में चन्द्रमा की अन्तर्दशा हो तो जातक शत्रुओं के प्रताप का शमनकर्ता अर्थात् शत्रुनाशक नीरोग धन लाभ करने वाला होता है जो अशुभ होता है वह नहीं होता है ॥ १२ ॥

सूर्य की महादशा में मंगल की अन्तर्दशा का फल

विद्रुमसुवर्णमणयः सङ्ग्रामजयः प्रचण्डता पुंसः ।
असृजो दशाप्रवेशे सूर्यदशायां भवति सौख्यम् ॥ १३ ॥

यदि सूर्य की महादशा में भौम की अन्तर्दशा हो तो जातक को, मूंगा, सुवर्ण, मणि की प्राप्ति, युद्ध में विजय, प्रखरता और सुख होता है ॥ १३ ॥

सूर्य की महादशा में बुध की अन्तर्दशा का फल

दद्रूविचर्चिकाद्यैः [4]पापैः कुष्ठैश्च गर्हितशरीरैः ।
तरणिदशायां प्रविशति बुधो यदा स्यादरेर्वृद्धिः ॥ १४ ॥

यदि सूर्य की महादशा में बुध की अन्तर्दशा हो तो जातक के पापों से दाद, खुजली कोढ़ से निन्दित देह होता है तथा शत्रुओं की वृद्धि होती है ॥ १४ ॥

सूर्य की महादशा में गुरू की अन्तर्दशा का फल

व्याधिभिररिभिर्व्यसनैः पापैश्च विमुच्यते तथाऽलक्ष्म्या ।
अनुयाति धर्मपदवीं जीवस्यान्तर्दशा यदा भानोः ॥ १५ ॥

---

१ दैन्ये । २ करं । ३ वर्धनीम् । ४ पाग्ना ।

यदि सूर्य की महादशा में गुरू की अन्तर्दशा हो तो जातक का रोग, शत्रु, व्यसन, पाप व निर्धनत्व नष्ट होता है तथा धर्मात्माओं की गणना में गिनती होती है ॥ १५ ॥

सूर्य की महादशा में शुक्र की अन्तर्दशा का फल

शिरसो रुग्गलरोगश्चित्रं[1] सहसा ज्वरः शूलम् ।
तपनदशायां शुक्रे देशत्यागो भवेदरिभिः ॥ १६ ॥

यदि सूर्य महादशा में शुक्र की अन्तर्दशा हो तो जातक के शिर (मस्तक) व कण्ठ में रोग अकस्मात् ज्वर, शूल (दर्द) और शत्रुओं के कारण अपने देश का त्याग यह विचित्र फल होता है ॥ १६ ॥

सूर्य की महादशा में शनि की अन्तर्दशा का फल

आदित्यस्य दशायां शनैश्चरान्तर्दशा यदा भवति ।
नृपपरिभूतो दीनो विपक्षसार्थेन हृतशक्तिः ॥ १७ ॥

यदि सूर्य की महादशा में शनि की अन्तर्दशा हो तो जातक—राजा से पीडित, दीनता और शत्रुओं के कारण शक्तिहीन होता है ॥ १७ ॥

चन्द्रमा की महादशा में सूर्य की अन्तर्दशा का फल

क्षयरोगभयं शौर्यं नृपप्रभावं सदा विभवम् ।
चन्द्रदशायां पुंसो भानुः कुरुतेऽर्थलाभं च ॥१८॥

चन्द्रमा की महादशा में सूर्य की अन्तर्दशा में क्षय रोग का भय, वीरत्व, राजा के तुल्य प्रभाव, सदा ऐश्वर्य सुख और धन लाभ होता है ॥ १८ ॥

चन्द्रमा की महादशा में मंगल की अन्तर्दशा का फल

पित्तासृग्वह्निभयं क्लेशं रोगं करोति वक्रदशा ।
चन्द्रदशायां च भयं [2]प्रमोषणं चैव चौरैश्च ॥१९॥

चन्द्रमा की महादशा में मङ्गल की अन्तर्दशा हो तो पित्त-रुधिर-अग्नि का भय, क्लेश, रोग और चोरों से चोरी का भय होता है ॥ १९ ॥

चन्द्रमा की महादशा में बुध की अन्तर्दशा का फल

चन्द्रदशायां ज्ञदशाप्रवेशने चिह्नमुत्तमो लाभः ।
गजवाजिनां धनानां सम्प्राप्तिः सौख्यमतुलं च ॥२०॥

चन्द्रमा की महादशा में बुध की अन्तर्दशा हो तो श्रेष्ठ लाभ, हाथी, घोड़ा, धन की प्राप्ति और असीमित सुख प्राप्त होता है ॥ २० ॥

चन्द्रमा की महादशा में गुरू की अन्तर्दशा का फल

चन्द्रदशायां प्राप्ता विदशेड्यदशा करोति धनलाभम् ।
यत्नोपात्तमकस्माद्वस्त्रालङ्कारविविधहस्त्यश्वम् ॥२१॥

---

१ छिद्रं । २ प्रमापणम् ।

चन्द्रमा की महादशा में गुरू की अन्तर्दशा हो तो यत्न से उपार्जित अकस्मात् वस्त्र, भूषण, अनेक हाथी, घोड़ा और धन का लाभ होता है ॥ २१ ॥

चन्द्रमा की महादशा में शुक्र की अन्तर्दशा का फल

तुहिनकरस्य दशायां प्रविशत्यन्तर्दशा यदाऽऽस्फुजितः ।
जलयानहारभूषणवहुपत्नीभिः समागमं कुरुते ॥२२॥

चन्द्रमा की महादशा में शुक्र की अन्तर्दशा हो तो नौका या जल जहाज में गमन, हार, भूषण की प्राप्ति और अनेक स्त्रियों के साथ समागम होता है ॥ २२ ॥

चन्द्रमा की महादशा में शनि की अन्तर्दशा का फल

स्वजनायासवियोगं रोगाभिभवं तथा महाव्यसनम् ।
चन्द्रदशायां सौरिः करोति निःसंशयं पुंसाम् ॥२३॥

चन्द्रमा की महादशा में यदि शनि की अन्तर्दशा हो तो अपने मनुष्यों के परिश्रम में वियोग अर्थात् विफलता, रोग से पीड़ा और अधिक व्यसन होता है ॥ २३ ॥

मंगल की महादशा में सूर्य की अन्तर्दशा का फल

चण्डं साहसनिरतं नरेन्द्रसंग्रामपूजितं [1]धन्यम् ।
विविधधनागमयुक्तं भौमदशायां करोति रविः ॥२४॥

मङ्गल की महादशा में यदि सूर्य की अन्तर्दशा हो तो तीक्ष्णता, साहस में तत्परता, राजा से संग्राम (विवाद) में पूज्यता, धन्यता, (प्रशंसा) और अनेक प्रकार से धनागम होता है ॥ २४ ॥

भौम की महादशा में चन्द्रमा की अन्तर्दशा का फल

विविधधनागमलाभं सौख्यं बहुमित्रसम्प्राप्तिम् ।
वक्रदशायां चन्द्रः करोति मुक्तामणिप्रभृतीन् ॥२५॥

मङ्गल की महादशा में यदि चन्द्रमा की अन्तर्दशा हो तो अनेक प्रकार से धनागम सौख्यलाभ, अनेक मित्रों की प्राप्ति और मोती, मणि आदि की प्राप्ति होती है ॥ २५ ॥

भौम की महादशा में बुध की अन्तर्दशा का फल

दिशति भयं शत्रुभ्यो वाजिगजानां प्रमोषणं चोरैः ।
दाहं च यदा प्रविशति भौमदशायां बुधस्य दशा ॥२६॥

मङ्गल की महादशा में यदि बुध की अन्तर्दशा हो तो शत्रु से भय, घोड़ा, हाथियों की चोरों द्वारा चोरी (हरण) और हृदय में जलन होती है ॥ २६ ॥

भौम की महादशा में गुरू की अन्तर्दशा का फल

वक्रदशायां च गुरोः सुचरितकरणेन शुभधर्मा ।
नृपतिर्विशुद्धचेताः पुण्यानि करोत्यनन्तानि ॥२७॥

मङ्गल की महादशा में यदि गुरू की अन्तर्दशा हो तो, सुकर्म से शुभ धर्मात्मा, राजा और शुद्ध अन्तःकरण होने से अगणित पुण्य करने वाला होता है ॥ २७ ॥

---

[1] धात्र्याम् ।

भौम की महादशा में शुक्र की अन्तर्दशा का फल

रुधिरदशायां शुक्रप्रवेशने भवति सङ्गरभयार्तिः ।
व्याधिव्यसनायासैर्धनापहारः प्रवासैश्च ॥२८॥

मङ्गल की महादशा में यदि शुक्र की अन्तर्दशा हो तो युद्ध भय से पीड़ा व्यसन के परिश्रमों से और प्रवास से रोग एवं धननाश होता है ॥ २८ ॥

भौम की महादशा में शनि की अन्तर्दशा का फल

व्यसनानि व्यसनानां भवन्त्युपर्युपरि जनविनाशश्च ।
वक्रदशायां रविजे प्रविशति चान्तर्दशायां हि ॥२९॥

मङ्गल की महादशा में यदि शनि की अन्तर्दशा हो तो व्यसनी मनुष्यों के व्यसनों की वृद्धि होती है और अपने वृद्ध मनुष्यों का विनाश होता है ॥ २९ ॥

बुध की महादशाा में सूर्य की अन्तर्दशा का फल

इन्दुसुतस्य दशायां प्रविशति सूर्यो यदा तदा चिह्नम् ।
कनकाश्वविद्रुमगजान् विदधाति श्रियमकस्माच्च ॥३०॥

बुध की महादशा में यदि सूर्य की अन्तर्दशा हो तो सुवर्ण, घोड़ा, मूँगा, हाथी और अकस्मात् लक्ष्मी की प्राप्ति होती है ॥ ३० ॥

बुध की महादशा में चन्द्रमा की अन्तर्दशा का फल

प्रविशन्ती चन्द्रदशा बुधस्य कण्डूं करोति कुष्ठं च ।
क्षयरोगमङ्गभङ्गं गजाद्भयं वाहनविनाशम् ॥३१॥

बुध की महादशा में यदि चन्द्रमा की अन्तर्दशा हो तो खुजली, कोढ़, क्षय रोग, शरीर घात, (अङ्ग-भङ्ग), हाथी से भय और सवारी का नाश होता है ॥ ३१ ॥

बुध की महादशा में भौम की अन्तर्दशा का फल

मस्तकशूल[1]निरोधैर्नानाक्लेशैश्च युज्यते जन्तुः ।
इन्दुसुतस्य दशायां भौमस्यान्तर्दशा यदा भवति ॥३२॥

बुध की महादशा में यदि भौम की अन्तर्दशा हो तो शिर (मस्तक) में पीड़ा (दर्द) निरोध (प्रतिबन्ध) और अनेक प्रकार के क्लेशों से युक्त मनुष्य होता है ॥ ३२ ॥

बुध की महादशा में गुरू की अन्तर्दशा का फल

रिपुरोगपापमुक्तः पुण्यानि करोति भूपतेर्मन्त्री ।
जीवे चरति दशायां बुधस्य पुरुषो भवेन्नियतम् ॥३३॥

बुध की महादशा में यदि गुरू की अन्तर्दशा हो तो जातक शत्रु-रोग व पापों से छुटकारा पाकर पुण्य करता है एवं राजा का सचिव अवश्य होता है ॥ ३३ ॥

बुध की महादशा में शुक्र की अन्तर्दशा का फल

गुरुविबुधातिथिभक्तो वस्त्रालङ्कारपुष्पगन्धरुचिः ।
इन्दुसुतस्य दशायां शुक्रस्यान्तर्दशा यदा भवति ॥३४॥

बुध की महादशा में यदि शुक्र की अन्तर्दशा हो तो गुरु-देवता व अतिथियों में भक्ति, वस्त्र, अलङ्कार की प्राप्ति व पुष्प की सुगन्ध में रुचि होती है ॥ ३४ ॥

बुध की महादशा में शनि की अन्तर्दशा का फल

खण्डसुखकामसेवी विलुप्तधर्मार्थभोगसुतवित्तः ।
भवति नरोऽत्र दशायां बुधस्य मन्दो यदा चरति ॥३५॥

बुध की महादशा में यदि शनि की अन्तर्दशा हो तो अपूर्ण सुख व काम (इच्छा), धर्म-धन-भोग व पुत्र का लोप होता है ॥ ३५ ॥

गुरु की महादशा में सूर्य की अन्तर्दशा का फल

रिपुभयकलहैर्मुक्तः प्रयाति गुरुतां नरेन्द्रस्य ।
विक्रमसाहससौख्यैर्जीवदशायां रवौ चरति ॥३६॥

गुरु की महादशा में यदि सूर्य की अन्तर्दशा हो तो शत्रु-भय-कलह से छुटकारा होता है तथा राजा से गौरव प्राप्त होता है और पराक्रम-साहस-सुख से सम्पन्न मनुष्य होता है ॥ ३६ ॥

गुरु की महादशा में चन्द्रमा की अन्तर्दशा का फल

पत्नीसहस्रभर्ता जितरोगरिपुः परोन्नतिं लभते ।
प्रकटयति राजचिह्नं चन्द्रदशा गुरुदशायां हि ॥३७॥

गुरु की महादशा में यदि चन्द्रमा की अन्तर्दशा हो तो एक हजार स्त्रियों का स्वामी, रोग व शत्रु का विजेता, राजपद प्राप्ति व परमोन्नति होती है ॥ ३७ ॥

गुरु की महादशा में भौम की अन्तर्दशा का फल

तीक्ष्णः परोपतापी शूरो रणलब्धकीर्तिधनः ।
सौख्यमनन्तं लभते जीवदशायां कुजे चरति ॥३८॥

गुरु की महादशा में यदि भौम की अन्तर्दशा हो तो तीक्ष्णता, परसंताप, वीरत्व, युद्ध में कीर्ति व धन का लाभ और अनन्त सुख की प्राप्ति होती है ॥ ३८ ॥

गुरु की महादशा में बुध की अन्तर्दशा का फल

वेश्यामद्यव्यसनैः परिभूतो [2]भवति निर्धनः सोऽपि ।
सौम्ये जीवदशायां विलुप्तधर्मो भवेत्पुरुषः ॥३९॥

गुरु की महादशा में यदि बुध की अन्तर्दशा हो तो निर्धन होकर भी वेश्या व मद्य (शराब) के सेवन से पीड़ित (दुःखी) होकर अपने धर्म का विनाश होता है ॥ ३९ ॥

विशेष—यह श्लो० सं० वि० वि० मातृका में नहीं प्राप्त होता है तथा इसका फल भी उचित प्रतीत नहीं होता है ॥ ३९ ॥

गुरु की महादशा में बुध की अन्तर्दशा का फल

व्याधिविनाशं सौख्यं मित्रैः सह सङ्गतिं तथापूजाम् ।
मातापित्रोर्भक्तिं जीवदशायां [3]बुधो लभते ॥४०॥

---

१ विरोधैः. २ निर्धनो भवति. ३ बुधे.

गुरू की महादशा में यदि बुध की अन्तर्दशा हो तो रोग का नाश, सुख की प्राप्ति, मित्रों से संगति व पूजा और माता-पिता की भक्ति होती है ।। ४० ।।

गुरू की महादशा में शुक्र की अन्तर्दशा का फल

रिपुभयविनाशदुःखैरभिभूतो ब्राह्मणोपजीवी च ।
जीवदशायां शुक्रे प्रविशति नित्यं भवेत्पुरुषः ।। ४१ ।।

गुरू की महादशा में यदि शुक्र की अन्तर्दशा हो तो शत्रु से भय, विनाश, दुःखों से पीड़ा और ब्राह्मणों से जीविका नित्य प्राप्त होती है ।। ४१ ।।

गुरू की महादशा में शनि की अन्तर्दशा का फल

वेश्यामद्यद्यूतैरभिभूतो महिषखरयुक्तः ।
सौरे जीवदशायां विलुप्तधर्मो भवेत्पुरुषः ।। ४२ ।।

गुरू की महादशा में यदि शनि की अन्तर्दशा हो तो वेश्या-शराब-जुआ से पराभूत होता है तथा भैंसा व गदहा से युक्त होकर अपने धर्म का त्याग करता है ।। ४२ ।।

शुक्र की महादशा में सूर्य की अन्तर्दशा का फल

गण्डोदराक्षिरोगैः क्षितिपतितो बन्धनादिभिस्तप्तः ।
शुक्रदशायां सूर्ये विचरति नूनं भवेत्पुरुषः ।। ४३ ।।

शुक्र की महादशा में यदि सूर्य की अन्तर्दशा हो तो गाल-पेट-आँख के रोगों से भूमि पर गिर जाता है तथा बन्धनादि (जेल) से निश्चय दुःख होता है ।। ४३ ।।

शुक्र की महादशा में चन्द्रमा की अन्तर्दशा का फल

अन्तर्दशा दशायां सितस्य शशिनो यदा भवति चिह्नम् ।
नखदशनशिरोरोगैः सह भवति च कामिलरोगः ।। ४४ ।।

शुक्र की महादशा में यदि चन्द्रमा की अन्तर्दशा प्राप्त हो तो नाखून, दाँत, शिर (मस्तक) रोगों के साथ कमला (पीलिया) रोग होता है ।। ४४ ।।

शुक्र की महादशा में भौम की अन्तर्दशा का फल

पित्तासृक्कृतरोगो भूलाभः संश्रयो नृपतितश्च ।
शुक्रदशायां भौमे मन्दोत्साहः पुमान्भवति ।। ४५ ।।

शुक्र की महादशा में यदि भौम की अन्तर्दशा प्राप्त हो तो पित्त व खून जन्य रोग, भूमि का लाभ, राजा से आश्रय और अल्प उत्साह होता है ।। ४५ ।।

शुक्र की महादशा में बुध की अन्तर्दशा का फल

शुक्रदशायां पुंसां बुधस्य चान्तर्दशा यदा भवति ।
युवतिकृतं धनलाभं सौख्यं च मनोरथं[1] लभते ।। ४६ ।।

शुक्र की महादशा में यदि बुध की अन्तर्दशा प्राप्त हो तो स्त्री द्वारा धन लाभ व सुख की प्राप्ति और मनोरथ (अभीष्ट) सिद्ध होता है ।। ४६ ।।

---

[1] मनोरमं ।

शुक्र की महादशा में गुरू की अन्तर्दशा का फल

अन्तर्दशा दशायां भृगोर्गुरोर्धर्मशीलसम्पत्तिम् ।
विदधाति विषयराज्यं पुंसां धनरत्नमतिसौख्यम् ॥ ४७ ॥

शुक्र की महादशा में यदि गुरू की अन्तर्दशा प्राप्त हो तो धर्म, शील (नम्रता) सम्पत्ति की प्राप्ति, किसी देश का राज्य प्राप्त और धन, रत्न, बुद्धि, सुख प्राप्त होता है ॥ ४७ ॥

शुक्र की महादशा में शनि की अन्तर्दशा का फल

वृद्धस्त्रीभिः क्रीडां पुरनगरगणाधिपत्यमरिनाशम् ।
शुक्रदशायां सौरिः करोति बहुमित्रसंयोगम् ॥ ४८ ॥

शुक्र की महादशा में यदि शनि की अन्तर्दशा प्राप्त हो तो बूढ़ी स्त्रियों के साथ क्रीड़ा, गाँव व नगर में आधिपत्य (मुखिया), शत्रुओं का नाश और अधिक मित्रों का संयोग होता है ॥ ४८ ॥

शनि की महादशा में सूर्य की अन्तर्दशा का फल

धनपुत्रदारनाशं भयमतुलं संदधाति पुरुषस्य ।
रविपुत्रस्य दशायां सूर्यस्यान्तर्दशा न सन्देहः ॥ ४९ ॥

शनि की महादशा में यदि सूर्य की अन्तर्दशा प्राप्त हो तो धन, पुत्र, स्त्री का विनाश और असीमित भय होता है इसमें सन्देह नहीं है ॥ ४९ ॥

शनि की महादशा में चन्द्रमा की अन्तर्दशा का फल

स्त्रीमरणं हरणं वा बन्धुवियोगं पुनः पुनः कलहम् ।
अन्तर्दशा दशायां शनेः शशाङ्कस्य विदधाति ॥ ५० ॥

शनि की महादशा में यदि चन्द्रमा की अन्तर्दशा प्राप्त हो तो स्त्री का मरण अथवा हरण (चुराना) बन्धु वियोग और बार-बार कलह होता है ॥ ५० ॥

शनि की महादशा में भौम की अन्तर्दशा का फल

देशभ्रंशं व्याधिं दुःखानि करोत्यनेकरूपाणि ।
अन्तर्दशा दशायां रविजस्य महीसुतस्य यदा ॥ ५१ ॥

शनि की महादशा में यदि भौम की अन्तर्दशा प्राप्त हो तो अपने देश (स्थान) का त्याग, रोग और अनेक प्रकार के दुःख होते हैं ॥ ५१ ॥

शनि की महादशा में बुध की अन्तर्दशा का फल

सौभाग्यसौख्यविजयप्रमोदसत्कारमानधनलाभम् ।
सौरिदशायां सौम्यो विदधात्यन्तर्दशाप्राप्तः ॥ ५२ ॥

शनि की महादशा में यदि बुध की अन्तर्दशा प्राप्त हो तो सौभाग्य, सुख, विजय, आनन्द, सत्कार, आदर व धन का लाभ होता है ॥ ५२ ॥

शनि की महादशा में गुरू की अन्तर्दशा का फल

अनुयाति शिष्टपदवीं ग्रामादिकलत्रसौख्यसंपन्नः[1] ।
रवितनयस्य दशायां प्रविशति जीवे सदा पुरुषः ॥ ५३ ॥

शनि की महादशा में यदि गुरू की अन्तर्दशा प्राप्त हो तो सम्मानित स्थान की प्राप्ति, गांव, स्त्री आदि के सुख से सम्पन्नता होती है ॥ ५३ ॥

शनि को महादशा में शुक्र की अन्तर्दशा का फल

वर्धयति मित्रपक्षं छिनत्ति शोकान्यशः प्रकाशयति ।
सौरदशायां शुक्रः पत्नीधनविजयलाभकरः ॥ ५४ ॥

शनि की महादशा में यदि शुक्र की अन्तर्दशा प्राप्त हो तो मित्रों की वृद्धि, शोक का नाश, यश का प्रकाश, स्त्री, धन और विजय की प्राप्ति होती है ॥ ५४ ॥

दशाफलादेश में विशेष कथन

नीचोच्चादिविभेदेन शत्रुमित्रबलाबलम् ।
अन्तर्दशासु मतिमांश्चिन्तयेच्च प्रयत्नतः ॥ ५५ ॥
अन्तर्दशासु शुभायां मूलदशायां शुभा यदा भवति ।
भवति तदा बहुसौख्यं धनलब्धिरतीव पुरुषाणाम् ॥ ५६ ॥

इसी अध्याय में पूर्वोक्त फलों में दशाशीध व अन्तर्दशाधीश के नीच, उच्च स्थानादि के भेद से व शत्रु मित्रादि राशि स्थिति से ग्रहों के बलावल को प्रयत्नपूर्वक समझ कर ही फलादेश बुद्धिमान् को कहना चाहिये । शुभग्रह की महादशा में यदि शुभग्रह की अन्तर्दशा प्राप्त हो तो अधिक सुख व धन की प्राप्ति होती है ॥ ५५-५६ ॥

अस्तग्रह की दशा का फल

रविकिरणमुषितदीप्तेर्दशा ग्रहस्य मलिनां तनुं कृत्वा ।
मानयशोर्थविलासप्रतापरूपोद्यमान्हन्ति ॥ ५७ ॥

सूर्य की किरणों से अस्तग्रह की दशा में शरीर में मलिनता, मान, यश, धन, विलास, प्रताप, रूप व उद्योग का विनाश होता है ॥ ५७ ॥

लग्नेश व राशीश के शत्रुग्रह की दशा का फल

होराजन्माधिपयोः[2] शत्रुदशायां नरोऽतिमूढमतिः[3] ।
राज्याच्च्युतो विपक्षैरभिभूतोऽन्यं समाश्रयति । ५८ ॥

जन्मलग्नाधीश व जन्मराशीश के शत्रुग्रह की दशा में जातक बुद्धिशून्य, राज्य से पृथक् और शत्रुओं से पीड़ित (पराजित) होकर अन्य का आश्रय लेता है ॥ ५८ ॥

राज्यप्रद दशा का कथन

व्योमलग्नप्रपन्नस्य दशायां राज्यमाप्नुयात् ।
नरेन्द्राणां समायोगे सुवीर्यस्याथवा पुनः ॥ ५९ ॥

---

[1] संपत्तिम् । [2] धिपतेः । [3] विमूढ ।

यदि कुण्डली में राजयोग हो व दशमभाव में ग्रह हो तो दशम में स्थित ग्रह की दशा में राज्य की प्राप्ति होती है। यदि दशम में ग्रहाभाव हो तो सबसे बलवान् ग्रह की दशा में राज्य प्राप्ति होती है ॥ ५९ ॥

भोगी व शबराधिप योगज्ञान

लग्ने जीवः सितबुधयुतः सप्तमस्थोऽर्कपुत्रः
कर्मप्राप्तो दहनकिरणो भोगिनां जन्म कुर्युः।
केन्द्रे सौम्या न शुभगृहगा यत्र पापाभिधाना
यद्येवं स्याच्छबरनृपतिर्जायते वित्तवांश्च ॥ ६० ॥

यदि कुण्डली में लग्न में गुरु, शुक्र व बुध के साथ हो व सप्तमभाव में शनि, दशम में सूर्य हो तो जातकभोगी होता है। यदि केन्द्र में शुभग्रह हों व पापग्रहों की राशि में पापग्रह हों तो जातक शबर (कोलभिल्ल) जाति का राजा तथा धनवान् होता है ॥ ६० ॥

बृहज्जातक में कहा है—'गुरुसितबुधलग्ने सप्तमस्थेऽर्कपुत्रे वियति दिवसनाथे भोगिनां जन्म विन्द्यात्। शुभबलयुतकेन्द्रैः क्रूरभस्थैश्च पापैर्व्रजति शबरदस्यु स्वामितामर्थभाक् च' (११ अ० २० श्लो०) ॥ ६० ॥

और भी बृहज्जातकोक्त इसी श्लोक की भट्टोत्पल टीका में भगवान् गार्गि का वचन-जोवज्ञभार्गवैर्लग्ने सप्तमस्थेऽर्कनन्दने। दशमस्थे रवौ जातो भोगवान्पुरुषो भवेत्। पापक्षेत्रगतैः पापैः केन्द्रस्थैः सौम्यराशिभिः। सबलैर्यस्य जन्म स्यात् स्यादसौ दस्युनायकः ॥ ६० ॥

विशेष—भगवान् गार्गि के वचन में केन्द्र में शुभग्रहों की राशियों का कथनरूपी भेद प्रतीत होता है ॥ ६० ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां अन्तर्दशाफलो नामैकचत्वारिंशोऽध्यायः ॥

द्विचत्वारिंशोऽध्यायः।

पापग्रह की महादशा में पापग्रह की अन्तर्दशा का फल

क्रूरदशायां क्रूरः प्रविश्य चान्तर्दशां यदा कुरुते।
पुसः[1] स्यात्सन्देहस्तदाऽरियोगः सदैव महान् ॥ १ ॥

पापग्रह को महादशा में यदि पापग्रह को अन्तर्दशा हो ता मन में सन्देह को भावना और शत्रुओं का योग अर्थात् भय होता है ॥ १ ॥

---

[1] पुंसां।

भौम की महा दशा में शनि की अन्तर्दशा का फल

क्षितितनयस्य दशायां रविजस्यान्तर्दशा यदा विशति ।
बहुकालजीविनामपि मरणं निःसंशयं कुरुते ॥ २ ॥

मङ्गल की महादशा में यदि शनि की अन्तर्दशा प्राप्त हो तो अधिक जीवन वाले का भी अर्थात् दीर्घायु पुरुष का भी निःसन्देह मरण होता है ॥ २ ॥

क्रूर राशिस्थ पापग्रह षष्ठ में वा अष्टम में होने पर दशा का फल

क्रूरराशौ स्थितः पापः षष्ठे स्यान्निधनेऽपि वा ।
तत्स्थितेनारिणा दृष्टः स्वपाके मृत्युदो ग्रहः ॥ ३ ॥

पापग्रह की राशि में षष्ठभाव वा अष्टम भाव में पापग्रह, पापग्रह राशिस्थ पापग्रह से दृष्ट हो तो इसकी दशा में वा अन्तर्दशा में मरण होता है ॥ ३ ॥

लग्नाधीश के शत्रु की दशा में लग्नेश की अन्तर्दशा का फल

विलग्नाधिपतेः शत्रुर्लग्नस्यान्तर्दशां गतः ।
करोत्यकस्मान्मरणं सत्याचार्यः[1] प्रभाषते ॥ ४ ॥

यदि लग्न स्वामी के शत्रु की महादशा में लग्नेश की अन्तर्दशा हो तो अकस्मात् मरण होता है । यह सत्याचार्य का कथन है ॥ ४ ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां दशारिष्टफलं नाम द्विचत्वारिंशोऽध्यायः ॥

त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ।

दशारिष्टभङ्ग ज्ञान

प्रवेशे बलवान्खेटः शुभैर्वा[2] सुनिरीक्षितः ।
सौम्याधिमित्रवर्गस्थो मृत्यवे न भवेत्तदा ॥ १ ॥
मूलं[3] दशाधिनाथस्य विबलस्य दशा यदा ।
बलिनः स्यात्तदा भङ्गो दशारिष्टस्य तद्ध्रुवम् ॥ २ ॥
युद्धे च विजयी तस्मिन्ग्रहयोगे शुभे[4] यदि ।
दशायां न भवेत्कष्टं स्वोच्चादिषु च संस्थितः ॥ ३ ॥

यदि दशा प्रवेश के समय एक भी बलवान् ग्रह, शुभग्रह व अधिमित्र के वर्ग में शुभग्रह से दृष्ट हो तो मृत्यु (मरण) नहीं होती है। दशारिष्टप्रद ग्रह यदि निर्बल हो तथा अरिष्टभङ्ग ग्रह बली हो तो निश्चय अरिष्ट का नाश होता है। यदि दशा प्रवेश समय में स्वोच्च, मूल त्रिकोणादि में स्थित तथा युद्ध में विजयी ग्रह हो तो उसकी दशा में कष्ट नहीं होता अर्थात् अरिष्ट दूर हो जाता है ॥ १–३ ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां दशारिष्टभङ्गो नाम त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ॥

---

[1] चार्यप्रभाषिते । [2] र्वा सं । [3] मूला । [4] शुभो ।

चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ।

उच्चस्थ सूर्य व चन्द्रमा का फल

अत्युग्रमतिद्रव्यं महान्तमपि भास्करः स्वतुङ्गस्थः ।
मृष्टाशनाम्बराढ्यं सुभूषणं शीतगुः कुरुते ॥ १ ॥

यदि जन्म के समय में सूर्य उच्च राशि में हो तो अधिक उग्र, अधिक धनवान् और श्रेष्ठ भी जातक होता है ।

यदि चन्द्रमा उच्च राशि में हो तो जातक—शोधित भोजन करने वाला, अच्छे वस्त्र और अलङ्कारों से युक्त होता है ॥ १ ॥

उच्चस्थ भौम व बुध का फल

तेजस्विनं कुतनयो दुष्प्रसहं गर्वितं प्रवासरतम् ।
मेधाविनं कुलाढ्यं सुनिपुणवाक्यं बुधः स्वोच्चे ॥ २ ॥

यदि जन्म के समय में मङ्गल उच्च राशि में हो तो जातक - तेजस्वी, कुत्सित (निन्दित) पुत्र वाला, दुःसाहसी, अभिमानी और प्रावसी होता है । यदि बुध उच्च राशि में हो तो जातक मेधावी बुद्धिमान्) कुल में धनी और सुन्दर चतुरता से युक्त वचन वाला होता है ॥ २ ॥

उच्चस्थ गुरु व शुक्र का फल

विख्यातं गुरुराढ्यं विद्वांसं[1] सत्कृतं कुशलम् ।
स्वोच्चे भृगोश्च तनयो विलासहास्यप्रगीतनृत्तरतम् ॥ ३ ॥

यदि जन्म के समय में गुरू उच्च राशि में हो तो जातक—प्रसिद्ध, धनी, विद्वान्, सम्मान्य और चतुर होता है ।

यदि शुक्र उच्च राशि में हो तो जातक—विलासी (भोगी) हँसने वाला, गान और नाच में लीन होता है ॥ ३ ॥

उच्चस्थ शनि का फल

स्वोच्चे रवितनयो नृपलब्धनियोगमभिजनयेत् ।
ग्रामपुराधिपतित्वमरण्यकधान्यं कुनारिलाभं च ॥ ४ ॥

यदि जन्म के समय में शनि उच्चराशि में हो तो जातक—राजा से प्राप्त नियोग (गर्भाधान) को करने वाला, गाँव व नगर का स्वामी, जङ्गली अन्न वाला व कुत्सित (निन्दनीय) स्त्री वाला होता है ॥ ४ ॥

मूलत्रिकोणस्थ सूर्य व चन्द्रमा का फल

भानुस्त्रिकोणसंस्थो धनवन्तं मुख्यमतिनिपुणम् ।
भोक्तारं [2]गुणवन्तं शशी प्रसूतौ त्रिकोणगः पुरुषम् ॥ ५ ॥

---

[1] विद्वांसं भूपसत्कृतं प्रसवे । [2] धनवन्तं ।

यदि जन्म के समय में सूर्य अपनी मूलत्रिकोण राशि में हो तो जातक—धनवान्, प्रधान और अधिक चतुर होता है।

यदि चन्द्रमा मूलत्रिकोण में हो तो जातक—भोगी व गुणी पाठान्तर से धनी होता है ॥ ५ ॥

मूलत्रिकोणस्थ भौम व बुध का फल

वक्रोऽपि तस्करपतिं शूरं खलु निर्दयं चापि।
सौम्यो विनोदशीलं जयिनं च स्वत्रिकोणगः कुरुते ॥ ६ ॥

यदि जन्म के समय में भौम अपनो मूलत्रिकोण राशि में हो तो जातक—चोरों का स्वामी, वीर और निर्दयी (दया शून्य) होता है।

यदि बुध मूलत्रिकोण राशि में हो तो जातक—हँसने वाला, और विजयी होता है ॥ ६ ॥

मूलत्रिकोणस्थ गुरू व शुक्र का फल

जीवः पुनर्हितकरं महत्तरं नयविदं सुखोपेतम्।
दानवपूज्यो जनयेद्ग्रामपुरवरिष्ठमाढ्यमतिसुभगम् ॥ ७ ॥

यदि जन्म के समय में गुरू अपनी मूलत्रिकोण राशि में हो तो जातक—अच्छा कार्य करने वाला; सबसे बड़ा, नीति को जानने वाला और सुखी होता है।

यदि शुक्र मूलत्रिकोण राशि में हो तो जातक—गाँव व नगर (शहर) में श्रेष्ठ, धनी और अधिक भाग्यवान् होता है ॥ ७ ॥

मूलत्रिकोणस्थ शनि का फल

आत्मत्रिकोण आर्किर्धनतृप्तं कुलयुतं शूरम्।

यदि जन्म के समय में शनि अपनी मूलत्रिकोण राशि में हो तो जातक—धन से तृप्त अर्थात् अधिक धनवान्, कुल से युत, और वीर होता है ॥ ७½ ॥

स्वराशिस्थ सूर्य, चन्द्रमा व भौम का फल

तीक्ष्णमयूखः कुरुते महोग्रमत्युच्चकर्माणम् ॥ ८ ॥
धर्मरतं हिमरश्मिर्मनस्विनं रूपवन्तमात्मर्क्षे।
आढयं प्रचण्डमचलं भौमः कुरुते स्वराशिगः पुरुषम् ॥ ९ ॥

यदि जन्म के समय में सूर्य अपनो राशि (सिंह) में हो तो जातक—बड़ा उग्र अधिक और ऊँचे (श्रेष्ठ) कार्य करने वाला होता है।

यदि चन्द्रमा अपनी राशि (कर्क) में हो तो जातक—धर्मात्मा, मनस्वी और रूपवान् होता है।

यदि भौम अपनी राशि (१।८) में हो तो जातक—धनी, तीक्ष्ण और स्थिर स्वभाव वाला होता है ॥ ७½–९ ॥

स्वराशिस्थ बुध व गुरू का फल

शशितनयोऽपि विधत्ते वल्गुकथं पण्डितं वाऽपि।
काव्यश्रुतिज्ञमाढ्यं गुरुचेष्टं[1] वाक्पतिः स्वराशिस्थः॥ १० ॥

यदि जन्म के समय में बुध अपनी राशि (मिथुन, कन्या) में हो तो जातक—मनोहर वाणी वाला अथवा पण्डित होता है।

यदि गुरू अपनी राशि (धनु, मीन) में हो तो जातक--काव्य व वेद का ज्ञाता, धनी, बड़ी इच्छा वाला वा शुभ इच्छा वाला होता है॥ १० ॥

स्वराशिस्थ शुक्र व शनि का फल

दानवपूज्यः कुरुते कृषीवलं स्फीतवित्तं च।
कुरुते शनैश्चरोऽपि च मान्यमदुःखं स्वराशिगः पुरुषम्॥ ११ ॥

यदि जन्म के समय में शुक्र अपनी राशि (वृष, तुला) में हो तो जातक--खेती करने वाला और बड़ा धनवान् होता है।

यदि शनि अपनी राशि (मकर, कुम्भ) में हो तो जातक--माननीय और दुःखों से हीन होता है॥ ११ ॥

मित्रगृहस्थ सूर्य व चन्द्रमा का फल

मित्रगृहेऽर्कः ख्यातं स्थिरसौहृदयमर्थदातारम्।
मित्रर्क्षगः शशाङ्को यतस्ततो लब्धसौख्यबहुमानम्॥ १२ ॥

यदि जन्म के समय में सूर्य अपने मित्र ग्रहों की राशि में हो तो जातक--स्थिर मैत्री वाला और धन दाता होता है।

यदि चन्द्रमा अपने मित्र ग्रहों को राशि में हो तो जातक--सर्वत्र सुख को पाने वाला व अधिक सम्मान पाने वाला होता है॥ १२ ॥

मित्रगृहस्थ भौम व बुध का फल

अङ्गारकोऽपि कुरुते सुहृद्धनारक्षणासक्तम्।
शशिजः सुहृद्गृहगतः करोति चातुर्यहास्यधनवन्तम्॥ १३ ॥

यदि जन्म के समय में मङ्गल अपने मित्रों की राशि में हो तो जातक--मित्रों के धन की रक्षा करने वाला होता है। यदि बुध अपने मित्र ग्रहों की राशि में हो तो जातक--चतुर, हँसने वाला और धनवान् होता है॥ १३ ॥

मित्रगृहस्थ गुरू व शुक्र का फल

वचसामधिपः पूज्यं सतां च सुविशिष्टकर्माणम्।
मित्रगृहे भृगुतनयः सुहृत्प्रियं [2]दयितवित्तमतिशूरम्॥ १४ ॥

यदि जन्म के समय में गुरू अपने मित्र ग्रहों की राशि में हो तो जातक--सज्जनों के मध्य में पूजनीय और सुन्दर विशेष कार्य करने वाला होता है।

---

[1] शुभचेष्टं। [2] दयितमिह सूतम्।

यदि शुक्र अपने मित्र ग्रहों की राशि में हो तो जातक--मित्रों का प्रेमी, स्त्री धन वाला और अधिक वीर होता है ॥ १४ ॥

मित्रगृहस्थ शनि का फल

भास्करसूनुः कुरुते परान्नभोजिनमधर्मकर्मरतम् ।

यदि जन्म के समय में शनि अपने मित्र ग्रहों की राशि में हो तो जातक--दूसरे के अन्न को खाने वाला और अधर्म के कार्यों में लीन होता है ॥ १४½ ॥

नीचस्थ सूर्य, चन्द्रमा भौम का फल

नीचे सविता कुरुते प्रेष्यं बान्धवजनावधूतं च ॥ १५ ॥
हिमरश्मिरल्पपुण्यं रोगिणमपि दुर्भगं लोके ।
नीचस्थः क्षितितनयोऽनर्थव्यसनोपतप्तमतिनीचम् ॥ १६ ॥

यदि जन्म के समय में सूर्य अपनी नीच राशि (तुला) में हो तो जातक--सेवक, और बन्धुजनों से तिरस्कृत होता है ।

यदि चन्द्रमा अपनी नीच राशि (वृश्चिक) में हो तो जातक--थोड़े पुण्य वाला, रोगी और संसार में भाग्यहीन भी होता है ।

यदि मङ्गल अपनी नीच राशि (कर्क) में हो तो जातक--अनर्थ रूपी व्यसनों से पीडित और अत्यन्त दुष्ट होता है ॥ १४½–१६ ॥

नीचस्थ बुध व गुरू का फल

कुरुते हिमकरपुत्रः क्षुद्रं स्वज्ञातिबन्धु[1]वैरं च ।
नीचे गुरुः प्रकुरुते मलिनं प्राप्तावमानमतिदीनम् ॥ १७ ॥

यदि जन्म के समय में बुध अपनी नीच राशि (मीन) में हो तो जातक—क्षुद्र (अल्प) और अपनी जाति के बन्धुओं से शत्रुता करने वाला होता है ।

यदि गुरू अपनी नीच राशि (मकर) में हो तो जातक—मलिन (दूषित) अपमानित और अधिक दरिद्री होता है ॥ १७ ॥

नीचस्थ शुक्र व शनि का फल

असुरदयितोऽस्वतन्त्रं प्रणष्टदारं विषमशीलम् ।
कोणो विपन्नशीलं विगर्हिताचारमर्थरहितं च ॥ १८ ॥

यदि जन्म के समय में शुक्र अपनी नीच राशि (कन्या) में हो तो जातक—परतन्त्र, स्त्री रहित और विषम स्वभाव का होता है ।

यदि शनि अपनी नीच राशि (मेष) में हो तो जातक—विपत्तियों से ग्रसित, निन्दित आचरण वाला व धनहीन होता है ॥१८॥

शत्रुराशिस्थ सूर्य व चन्द्रमा का फल

कुरुते शत्रुगृहेऽर्को निःस्वं विषयप्रपीडितं चापि ।
तुहिनमयूखः कुरुते हृद्रोगिणमरिगृहे नरं सततम् ॥ १९ ॥

---

[1] बद्धवैरं च ।

यदि जन्म के समय में सूर्य अपने शत्रु ग्रहों की राशि में हो तो जातक—निर्धन और विषय (काम) से पीडित होता है ।

यदि चन्द्रमा शत्रुग्रह की राशि में हो तो जातक—हृदय रोगी होता है ॥ १९ ॥

विशेष—चन्द्रमा के शत्रु ग्रह होते ही नहीं है फिर ग्रन्थकार ने इस फल का कथन किस आशय से किया है विद्वान् लोग इसका विचार करने का कष्ट करें ॥ १९ ॥

शत्रुराशिस्थ भौम व बुध का फल

[1]बन्धारिभङ्गभाजं दीनं विकलं च दुर्भगं भौमः ।
[2]अज्ञानमतिविहीनं बुधोऽरिभे नैकदुःखमतिदीनम् ॥ २० ॥

यदि जन्म के समय में मङ्गल अपने शत्रु ग्रह की राशि में हो तो जातक—बन्धन, शत्रु से आघात का भागी, दरिद्री, विकल (अशान्त) और भाग्यहीन होता है । वा बान्धवों को शत्रु द्वारा आघात (क्षति) होता है ।

यदि बुध अपने शत्रु ग्रह की राशि में हो तो जातक—अज्ञानी, अत्यन्य हीन, अनेक दुःखों से युक्त व अधिक दरिद्री होता है ॥ २० ॥

शत्रुराशिस्थ गुरू व शुक्र एवं शनि का फल

क्लीबं गुरुर्विधत्ते [3]नयहीनं धनविहीनं च ।
शुक्रोऽरिगृहे भृतकं कुतन्त्रमतिदुःखितं जनयेत् ॥ २१ ॥
भास्करसुतोऽपि कुरुते मलिनं व्याध्यादिशोकसन्तप्तम् ।

यदि जन्म के समय में गुरू अपने शत्रु ग्रह की राशि में हो तो जातक—नपुंसक, नीति रहित वा बहिरा और धन हीन होता है ।

यदि शुक्र अपने शत्रु ग्रह की राशि में हो तो जातक—नौकर, कुचाली व अधिक दुःखी होता है ।

यदि शनि अपने शत्रु ग्रह की राशि में हो तो जातक—मलिन (दूषित), रोग आदि से तथा शोक से संतप्त होता है ॥ २१ ॥

उच्च नीचादि नवांश में फल का न्यूनाधिक्य

स्वेपूच्चभागेषु फलं समग्रं स्वक्षेत्रतुल्यं भवनांशकेषु ।
नीचारिभागेषु जघन्यमेव मध्यं फलं मित्रगृहांशकेषु ॥ २२ ॥

अपनी-अपनी उच्च राशि के नवांश में स्थित ग्रह पूर्ण फल प्रदान करता है और अपने नवांश में स्थित ग्रह अपनी राशि के तुल्य ही फल (पूर्ण) देता है । स्वनीचांश व शत्रु ग्रह राशि के नवांश में स्थित ग्रह बुरा फल देता है । मित्र ग्रह राशि के नवांश में स्थित ग्रह मध्यम फल देता है ॥ २२ ॥

उच्चस्थ दो तीन ग्रहों का फल

द्वावुच्चगौ जनयतो धनिनं कीर्त्यान्वितं सदा पुरुषम् ।
नगरारक्षकमाढ्यं चमूपतिं च त्रयः प्रथितम् ॥ २३ ॥

---

[1] बन्ध्वरिभङ्गै भौमो विकलं वा दुर्भगं लोके । [2] आज्ञामात्र । [3] बधिरनरं ।

यदि जन्म के समय में दो ग्रह उच्च राशि में हों तो जातक—धनी व कीर्तिमान् होता है। यदि तीन ग्रह उच्च राशि में हो तो जातक—शहर का रक्षक अर्थात् कोतवाल धनी, सेनानायक व प्रसिद्ध होता है ॥ २३ ॥

उच्चस्थ चार पाँच ग्रहों का फल

[1]आढयं नृपात्तकीर्तिं चत्वारो राजधर्मसंयुक्तम् ।
ख्यातं नृपती[2]ष्टतमं पञ्चानेकविधवृद्धकोशं च ॥ २४ ॥

यदि जन्म के समय में चार ग्रह उच्च राशि में हों तो जातक—धनी, राजा से कीर्ति प्राप्त करने वाला और राजधर्म से युक्त होता है। यदि पाँच ग्रह उच्च राशि में हों तो जातक प्रसिद्ध, राजा का परम प्रिय और नाना प्रकार से धन वृद्धि करने वाला होता है ॥ २५ ॥

उच्चस्थ ६ ग्रहों का फल

षड् ग्रहाः स्वोच्चगाः कुर्युर्नृपतिं पुरुषं सदा ।
प्रदानमा[3]नसम्पन्नं वहुवाहनमण्डितम् ॥ २४ ॥

यदि जन्म के समय में ६ ग्रह उच्च राशि में हों तो जातक—दान-सम्मान-अधिक वाहनों (सवारी) से युत राजा होता है ॥ २५ ॥

समस्त ग्रह उच्चस्थ होने से फल

स्वोच्चं याताः सर्वे ससुद्रपर्यन्तमेदिनीनाथम् ।
जनयन्ति चक्रवर्तिनमवनीशं जातकं चिन्त्यम् ॥ २६ ॥

यदि कुण्डली में सब ग्रह उच्च राशि में हों तो जातक—समुद्र पर्यन्त भूमि का पालन करने वाला चक्रवर्ती राजा होता है ॥ २६ ॥

विशेष—यहाँ ६ व सब ग्रहों के उच्च होने का फल दिया है जो कि कुण्डली में कथमपि सम्भव नहीं है क्योंकि समस्त ग्रहों में सूर्य भी है सूर्य की उच्च राशि मेष है और बुध की कन्या व शुक्र की मीन है। इसलिए सूर्य से ६ राशि अन्तर पर बुध की स्थिति नहीं हो सकती, तथा ६ ग्रहों में अर्थात् सूर्य को छोड़कर चन्द्रादि ग्रहों में बुध की उच्च राशि से शुक्र की उच्च राशि का अन्तर भी ३ राशि से अधिक होने के नाते यह भी होना असम्भव व गणित विरुद्ध है। ग्रन्थकार का क्या आशय है यह स्पष्ट नहीं है। मेरी दृष्टि में कुछ ग्रहों में उच्चनवांश हों और कुछ उच्चस्थ हों तो फल घट सकता है ॥२६॥

स्वमूलत्रिकोण राशिस्थ दो ग्रहों का फल

द्वाभ्यां त्रिकोणसंस्थाभ्यां कुटुम्बी कुलवर्धनः ।
श्रेष्ठः प्रख्यातकीर्तिश्च ग्रहाभ्यां भुवि जायते ॥ २७ ॥

यदि जन्म के समय में दो ग्रह स्वमूल त्रिकोण राशि में हों तो जातक—परिवार वाला, कुल की वृद्धि करने वाला, श्रेष्ठ व प्रसिद्ध कीर्तिमान् होता है ॥ २७ ॥

---

[1] आढचो। [2] समं। [3] गुण।

स्वमूलत्रिकोण राशिस्थ तीन व चार ग्रहों का फल

महाधनस्त्रिभिश्चैव गणग्रामाधिनायकः ।
आढयो नृपाप्तसत्कारश्चतुर्भिर्लोकसंमतः ॥ २८ ॥

यदि जन्म के समय में तीन ग्रह अपनी मूलत्रिकोण राशि में हों तो जातक—अधिक धनवान्, समुदाय व ग्राम का मुखिया होता है । यदि चार ग्रह अपनी मूलत्रिकोण राशि में हों तो जातक—धनी, राजा से सम्मानित और संसार का प्रिय होता है ॥ २८ ॥

स्वमूलत्रिकोण राशिस्थ पाँच ग्रह का फल

आरक्षकः प्रधानः सेनापुरनगरभूपकोशानाम् ।
पञ्चग्रहैस्त्रिकोणे भवति कुटुम्बी सुबहुसौख्यः ॥ २९ ॥

यदि जन्म के समय में पाँच ग्रह अपनी मूलत्रिकोण राशि में हों तो जातक—सेना-गाँव-शहर-राजकीय कोश (खजाना) का प्रधान रक्षक, कुटुम्बी और सुन्दर अधिक सुखों से युक्त होता है ॥ २९ ॥

स्वमूलत्रिकोण राशिस्थ ६ ग्रहों का फल

विद्यादानधनौघैः समन्वितो भवति षड्भिरेव पुमान् ।
राज्यं प्रशास्ति नियतं गोपालकुलेऽपि संजातः ॥ ३० ॥

यदि जन्म के समय में ६ ग्रह अपनी मूलत्रिकोण राशि में हों तो जातक—विद्वान् दानी, धनी और गोप वंश में जन्म होने पर भी निश्चय राज्य का शासक होता है ॥ ३० ॥

समस्तग्रह स्वमूल त्रिकोण राशिस्थ होने पर फल

स्वत्रिकोणगतैः सर्वैर्भवेज्जातो महीपतिः ।
वसुस्त्रीबलसम्पन्नो विद्याशास्त्रविशारदः ॥ ३१ ॥

यदि जन्म के समय में समस्त ग्रह अपनी मूल त्रिकोण राशि में हों तो जातक—धन-स्त्री व बल से युक्त, विद्या-शास्त्र में चतुर राजा होता है ॥ ३१ ॥

स्वराशिस्थ दो व तीन ग्रहों का फल

द्वौ स्वगृहस्थौ कुरुतः कुलाधिकं बन्धुपूजितं धन्यम् ।
वंशकरमर्थसहितं स्थानयशोभिस्त्रयो विहगाः ॥ ३२ ॥

यदि जन्म के समय में दो ग्रह अपनी राशि में हों तो जातक—वंश में श्रेष्ठ, बन्धुओं से सम्मानित व प्रशंसनीय होता है ।

यदि तीन ग्रह अपनी राशि में हों तो जातक—वंश वृद्धि कर्त्ता अर्थात् पुत्र पौत्रादि से युत, धनवान् और पद व यश से युक्त होता है ॥ ३२ ॥

स्वराशिस्थ चार व पाँच ग्रहों का फल

ख्यातं विशिष्टचेष्टं श्रेणीपुरनगरपं च चत्वारः ।
पञ्चावनीश्वरसमं प्रभूतगोभूमियुवतिसम्पन्नम् ॥ ३३ ॥

यदि जन्म के समय में चार ग्रह अपनी राशि में हों तो जातक—विख्यात, उच्च विचार धारा वाला व पंक्ति गाँव-नगर (शहर) का पालक होता है।

यदि पांच ग्रह अपनी राशि में हों तो जातक—गाय-भूमि-व स्त्रियों से युक्त राजा के तुल्य होता है ।। ३३ ।।

स्वराशिस्थ ६ ग्रहों का फल

षड्भिः प्रवृद्धशब्दो द्युतिकोशस्वजनवाजिमानाढयः ।
भवति नृपवंशजातो नियतं पृथिवीपतिः स्वर्क्षें ।। ३४ ।।
राजाधिनृप स्वर्क्षे जनयन्ति जितारिपक्षमिह सप्त ।

यदि जन्म के समय में ६ ग्रह अपनी राशि में हों तो जातक--विख्यात नाम वाला, कान्ति-धन-स्वजन-घोड़ा-सम्मान से युक्त, राज कुलोत्पन्न राजा होता है।

यदि सात ग्रह स्वराशि में हों तो जातक---शत्रु पक्ष को जीतने वाला राजाधिराज होता है ।। ३४–३४½ ।।

मित्र राशिस्थ दो, तीन, चार ग्रहों का फल

मित्राश्रयं सुवृत्तं द्वौ मित्रगृहसमाश्रितौ कुरुतः ।। ३५ ।।
बान्धवसुहृदुपकर्ता त्रिभिर्विशिष्टो भवेद्गुणैः ख्यातः ।
ब्राह्मणदेवाराधनपरश्चतुर्भिर्धुरन्धरः ख्यातः ।। ३६ ।।

यदि जन्म के समय में दो ग्रह स्वमित्र राशि में हों तो जातक---मित्र का आश्रय कर्ता और सुन्दर चरित्र वाला होता है।

यदि तीन ग्रह अपने मित्र की राशि में हों तो जातक---बाधन्व व मित्रों का उपकार करने वाला, विशिष्ट और गुणों से विख्यात होता है।

यदि चार ग्रह अपने मित्र की राशि में हों तो जातक---ब्राह्मण व देव आराधना में तत्पर, धुरन्धर और विख्यात होता है ।। ३४½–३६ ।।

स्वमित्र राशिस्थ ५ व ६, ७ ग्रहों का फल

राजोपसेवकः स्यात्पञ्चभि[1]राढयो नरेश्वरः कर्ता ।
विस्तीर्णभोगवाहनवसुमान्षड्भिर्नरेन्द्रतुल्यः स्यात् ।। ३७ ।।
सर्वैर्मित्रर्क्षगतैर्बहुवाहनभृत्यसाधनो राजा ।

यदि जन्म के समय में पांच ग्रह अपने मित्र की राशि में हों तो जातक—राजा का उपसेवक व कार्यकर्त्ता और धनी होता है।

यदि ६ ग्रह अपने मित्र की राशि में हों तो जातक विस्तृत भोगी, सवारी व धन से युक्त राजा के समान होता है।

यदि सब ग्रह अपने मित्र की राशि में हों तो जातक---अधिक सवारी व नौकर व साधनों से युक्त राजा होता है ।। ३७-३७½ ।।

---

[1] राढ्यं ।

स्वनीच राशिस्थ दो, तीन-चार ग्रहों का फल

द्वाभ्यां नीचे नीचश्चिन्ताबह्वाग्रहसमेतः ॥ ३८ ॥
मूर्खोऽ[1]धर्मरतोऽस्वस्त्रिभिर्ग्रहैर[2]ध्वगो नरः प्रेष्यः ।
आलस्यनष्टचेष्टश्चतुर्भिरिह नीचगैर्भृतकः ॥ ३९ ॥

यदि जन्म के समय में दो ग्रह अपनी नीच राशि में हों तो जातक—दुष्ट, अधिक चिन्ताओं से युक्त और आग्रह से युक्त होता है।

यदि तीन ग्रह स्वनीच राशि में हों तो जातक—मूर्ख, अधार्मिक वा धर्मात्मा, निर्धन, घूमने वाला व नौकर होता है।

यदि चार ग्रह अपनी नीच राशि में हों तो जातक—आलसी, बिना इच्छा वाला और नौकर होता है ॥ ३७$\frac{१}{२}$-३९ ॥

स्वनीच राशिस्थ पाँच ६ ग्रहों का फल

[3]अगृहः प्रभिन्नदारः पञ्चभिरिह कथ्यते नरो दासः ।
[4]घातभयश्रमतप्तः षड्भिर्नीचो भवेत्क्षामः ॥ ४० ॥

यदि जन्म के समय में पाँच ग्रह अपनो नीच राशि में हों तो जातक—घर व स्त्री से रहित और सेवक होता है।

यदि ६ ग्रह अपनी नीच राशि में हों तो जातक—घात भय से युक्त, परिश्रम से दुःखी, दुष्ट व दुःखी होता है ॥ ४० ॥

स्वनीच राशिस्थ सात ग्रहों का फल

भिक्षुस्त्यक्ताशितभुग्भवति पुमान्विगतसर्वस्वः ।
नीचैः सप्तभिरखिलैर्दिक्चिरविधृताम्बरः सूतः ॥ ४१ ॥

यदि जन्म के समय में सात ग्रह अपनी नीच राशि में हों तो जातक—भिक्षुक जूठिन खाने वाला, नङ्गा या पुराने वस्त्र धारण करने वाला निर्धन होता है ॥ ४१ ॥

स्वशत्रु राशिस्थ दो ग्रहों का फल

द्वावरिभवनसमेतौ क्लेशवतां नित्यविग्रहरुचीनाम् ।
अतिपरिभूतानामपि नृणां जन्मप्रदौ कथितौ ॥ ४२ ॥

यदि जन्म के समय में दो ग्रह अपने शत्रु ग्रह की राशि में हों तो जातक—कष्ट से युक्त, प्रतिदिन लड़ाई की इच्छा करने वाला और अपमानित होता है ॥ ४२ ॥

स्वशत्रु राशिस्थ तीन व चार ग्रहों का फल

विविधव्ययदुःखभुजां त्रयः श्रमोत्पन्ननष्टवित्तानाम् ।
चत्वार इष्टयोषित्पुत्रार्थविनाशजाधितप्तानाम्[5] ॥ ४३ ॥

यदि जन्म के समय में तीन ग्रह अपने शत्रु ग्रह की राशि में हों तो जातक—अनेक व्ययों से दुःखों का भोगी व परिश्रम से पैदा किये हुए धन का नाशक होता है।

---

[1] धर्माभिरतः । [2] नीचगैरध्वगः । [3] अमृतः । [4] खास । [5] रोग ।

यदि चार ग्रह अपने शत्रु ग्रह की राशि में हों तो जातक—मित्र-स्त्री-पुत्र-धन के नाश से तप्त अन्तःकरण वाला होता है ॥ ४३ ॥

स्वशत्रु राशिस्थ पाँच, ६ ग्रहों का फल

पञ्चारिगृहे विहगा इष्टव्यसनाभिघाततप्तानाम् ।
षड्रोगाङ्कितवपुषां[1] दुःखवतां चैव जन्मकराः ॥ ४४ ॥

यदि जन्म के समय में पाँच ग्रह अपने शत्रु ग्रह की राशि में हों तो जातक—मित्र-व्यसन व अभिघात से संतप्त होता है। यदि ६ ग्रह अपने शत्रु की राशि में हों तो जातक—रोगी व दुःखो होता है ॥ ४४ ॥

स्वशत्रु राशिस्थ सात ग्रहों का फल

सप्तारिभे ग्रहेन्द्रा बीभत्सकुले प्रसूतानाम् ।
[2]शय्याच्छादनभोजन[3]वञ्चितकानां भवन्ति सदा ॥ ४५ ॥

यदि जन्म के समय सात ग्रह अपने शत्रु ग्रह की राशि में हों तो जातक का दुष्ट कुल में जन्म, शय्या-वस्त्र व भोजन से हीन होता है ॥ ४५ ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां उच्चादिचिन्तनं नाम
चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥

पञ्चचत्वारिंशोऽध्यायः ।

स्त्रीजातकाध्याय का कथन

स्त्रीणां जन्मफलं तुल्यं पुंभिः सार्धं तदुच्यते ।
विशेषस्तत्र यो दृष्टः कथ्यते विस्तरेण सः ॥ १ ॥

पुरुषों के जन्म लग्न से जिन फलों का कथन किया है वे फल स्त्री कुण्डली में भी जानना चाहिये। इस अध्याय में स्त्रियों की कुण्डली के विशेष फल को अब मैं ग्रन्थकार विस्तार से कहता हूँ ॥ १ ॥

भाव विशेषों से विशेष फल ज्ञान

वैधव्यं निधने चिन्त्यं शरीरं जन्मलग्नतः[4] ।
सप्तमे पतिसौभाग्यं पञ्चमे प्रसवस्तथा ॥ २ ॥

स्त्री की कुण्डली में अष्टम भाव से वैधव्य, लग्न से शरीर, सप्तम भाव से पति सुख वा सौभाग्य और पञ्चम से सन्तति का विचार करना चाहिये ॥ २ ॥

बृहज्जातक में कहा है— तासां तु भर्तृमरणं निधने वपुस्तु लग्नेन्दुगं सुभगतास्तमये पतिश्च' (२४ अ० १ श्लो०) ॥ २ ॥

---

[1] गपीडितानां । [2] अल्पा । [3] वाञ्छि । [4] भाक् ।

पतिव्रता, सुशीला, रूपवती योग ज्ञान

प्रकृतिस्था लग्नेन्द्वोः समभे सच्छीलरूपाढ्या ।
भूषणगुणैरुपेता शुभवीक्षितयोश्च युवतिः स्यात् ।। ३ ।।

यदि स्त्री की कुण्डली में लग्न व चन्द्रमा समराशि में हों तो स्त्री पतिव्रता सुन्दर चरित्र व रूप से युक्त होती है । यदि समराशिस्थ लग्न व चन्द्रमा शुभग्रहों से दृष्ट हों तो स्त्री अलङ्कार व गुणों से सुशोभित होती है ।। ३ ।।

वृहज्जातक में कहा है—'युग्मेषु लग्नशशिनोः प्रकृतिस्थिता स्त्रीसच्छीलभूषणयुता शुभदृष्टयोश्च' (२४ अ० २ श्लो०) ।। ३ ।।

पुरुषाकृति योग ज्ञान

पुरुषाकृतिशीलयुता दुःशीला दुःखिता विषमराशौ ।
क्रूरैर्वीक्षितयुतयोः पापा स्त्री स्याद्गुणैर्हीना ।। ४ ।।

यदि स्त्री की कुण्डली में लग्न व चन्द्रमा विषम राशि में हों तो स्त्री, पुरुष की आकृति के समान आकृति वाली व पुरुष स्वभाव से युक्त, दुष्ट स्वभाव व दुःख भोगने वाली होती है । यदि विषम राशिस्थ लग्न व चन्द्रमा पाप ग्रहों से युक्त वा दृष्ट हों तो हों तो स्त्री पापिन व गुणों से रहित होती है ।। ४ ।।

वृहज्जातक में कहा है––'ओजस्थयोश्च मनुजाकृतिशीलयुक्ता पापा च पापयुतवीक्षितयोर्गुणोना' (२४ अ० २ श्लो०) ।। ४ ।।

बली त्रिंशांशवश फल कथन

लग्नेन्द्वोर्यो वलवांस्त्रिंशांशेऽधिष्ठितोऽधिपैः फलं क्रमशः ।
भूसुतभार्गवबोधनसुरगुरुमार्तण्डदेहभवैः ।। ५ ।।

लग्न व चन्द्रमा इन दोनों में जो बलवान् हो वह यदि मङ्गल वा शुक्र वा वुध वा गुरु वा शनि के त्रिशांश में हो तो क्रम से आगे कथित फल समझना चाहिये ।। ५ ।।

भौम राशिस्थ त्रिंशांशों का फल

कन्यैवारगृहे दुष्टा भौमत्रिंशांश के भवेत् ।
कुचरित्रा तथा शौक्रे समाया बोधनेऽबला ।। ६ ।।

यदि स्त्री कुण्डली में बली लग्न वा चन्द्रमा भौम राशि (१, ८) में भौम के त्रिशांश में हो तो स्त्री, कन्या ही दुष्टा ।

यदि भौम राशि में शुक्र के त्रिशांश में लग्न वा चन्द्रमा हो तो दूषित आचरण करने वाली, यदि भौम राशि में वुध के त्रिंशांश में लग्न या चन्द्रमा हों तो स्त्री मायाविनी होती है ।। ६ ।।

जैवे साध्व्यर्कजे दासी

यदि स्त्री कुण्डली में लग्न व चन्द्रमा इन दोनों में बलवान् भौम की राशि में गुरु के त्रिशांश में हो तो स्त्री साध्वी अर्थात् सच्चरित्रा होती है । यदि भौम राशिस्थ शनि का त्रिशांश हो तो स्त्री दासी (नौकरानो) होती है ।। ६$\frac{१}{४}$ ।।

बृहज्जातक में कहा है--'कन्यैव दुष्टा व्रजतीह दास्यं साध्वी समाया कुचरित्रयुक्ता। भूम्यात्मजर्क्षे क्रमशोंऽशकेषु वक्रार्किजीवेन्दुजभार्गवानाम्' (२४ अ० ३ श्लो०) ॥ ६$\frac{१}{४}$ ॥

बुध की राशि में त्रिंशांशों का फल

ज्ञर्क्षे कौजे तु कापटी।
शौक्रे प्रकीर्णकामा च बौधे गुणवती भवेत् ॥ ७ ॥
जैवे सती शनौ क्लीबा

यदि स्त्री की कुण्डली में बलवान् लग्न या चन्द्रमा बुध की राशि (३, ६) में भौम के त्रिंशांश में हो तो स्त्री कपटिनी, शुक्र के त्रिंशांश में अधिक काम की इच्छा करने वाली, यदि बुध का त्रिंशांश हो तो गुणवती, यदि गुरू का त्रिंशांश हो तो सती अर्थात् पतिव्रता, यदि बुध की राशि में बली लग्न या चन्द्रमा शनि के त्रिंशांश में हो तो स्त्री क्लीबा (हिजरिनी) होती है ॥ ६$\frac{३}{४}$-७$\frac{१}{४}$ ॥

बृहज्जातक में कहा है--'स्यात्कापटी क्लीबसमा सती च बौधे गुणाढ्या प्रविकीर्णकामा' (२४ अ० ४ श्लो०) ॥ ६$\frac{३}{४}$-७$\frac{१}{४}$ ॥

शुक्र की राशि में त्रिंशांशों का फल

दुष्टा कौजे सितर्क्षगे।
शौक्रे ख्यातगुणा बौधे कलासु निपुणा मता ॥ ८ ॥
जैवे गुणान्विता मन्दे पुनर्भू

यदि स्त्री की कुण्डली में बलवान् लग्न या चन्द्रमा शुक्र की राशि (२, ७) में भौम के त्रिंशांश में हो तो स्त्री दुष्टा, यदि शुक्र के त्रिंशांश में हो तो प्रसिद्ध गुणवती, बुध का त्रिंशांश हो तो कलाओं में चतुर, गुरू का त्रिंशांश हो तो गुणों से युक्त, यदि शुक्र की राशि में शनि का त्रिंशांश हो तो पुनर्विवाहिता अर्थात् एक पति के मरने पर द्वितीय शादी वाली होती है ॥ ७$\frac{३}{४}$-८$\frac{१}{२}$ ॥

बृहज्जातक में कहा है—'दुष्टा पुनर्भूः सगुणा कलाज्ञा ख्याता गुणैश्चासुरपूजितर्क्षे' (२४ अ० ४ श्लो०) ॥ ७$\frac{१}{४}$-८$\frac{१}{२}$ ॥

कर्क व सिंह राशि में त्रिंशांशों का फल

चन्द्रभे ततः।
स्वच्छन्दा कथिता कौजे शौक्रे च कुलपांसना ॥ ९ ॥
बौधे शिल्पान्विता नारी जैवे बहुगुणा स्मृता।
पतिघ्नी चार्कभे कौजे वाचाला भार्गवे सती ॥ १० ॥
बौधे पुंश्चेष्टिता जैवे राज्ञी मन्दे कुलच्युता।

यदि स्त्री की कुण्डली में बली लग्न या चन्द्रमा कर्क राशि में भौम के त्रिंशांश में हो तो स्त्री स्वैरिणी अर्थात् अपनी इच्छा से चलने वाली, शुक्र के त्रिंशांश में कुल-

कलंकिनी, बुध के त्रिशांश में चित्रकला से युक्ता, गुरू के त्रिशांश में अधिक गुणवती और कर्क राशि में लग्न चन्द्रमा के रहने पर यदि शनि का त्रिशांश हो तो स्त्री पति घातिनी अर्थात् पति को मारने वाली होती है।

यदि सिंह राशि में बली लग्न या चन्द्रमा या दोनों भौम के त्रिशांश में हों तो स्त्री अधिक बोलने वाली, शुक्र के त्रिशांश में सती अर्थात् पतिव्रता, बुध के त्रिशांश में पुरुष के समान इच्छा वाली, गुरू के त्रिशांश में रानी और सिंह राशि में शनि का त्रिशांश हो तो अपने वंश से स्त्री पृथक् होती है ।। ८½-१०½ ।।

बृहज्जातक में कहा है—'स्वच्छन्दा पतिघातिनी बहुगुणा शिल्पिन्यसाध्वीन्दुभे, न्याचारा कुलटार्कभे नृपवधूः पुंचेष्टितागम्यगा' (२४ अ० ५ श्लो०) ।। ८½-१०½ ।।

गुरू व शनि की राशि में त्रिशांशों का फल

कौजे बहुगुणार्यर्क्षे शौक्रे वाग्व्यसनीं तथा ।। ११ ।।
बौधे विज्ञानसंयुक्ता जैवे नैकगुणा स्मृता ।
मन्दे चाल्परतिः प्रोक्ता दासी कौजे तथार्किभे ।। १२ ।।
सुप्रज्ञा च भवेच्छौक्रे बुधे दुःस्था खला तथा ।
जैवे पतिव्रता नित्यं मन्दे नीचानुसेविनी ।। १३ ।।

यदि स्त्री की कुण्डली में गुरू की राशि में बली लग्न या चन्द्रमा भौम के त्रिशांश में हो तो स्त्री अधिक गुणवती, शुक्र के त्रिशांश में बोलने का व्यसन वाली वा असाध्वी, बुध के त्रिशाश में विज्ञान की ज्ञाता, गुरू के त्रिशांश में अनेक गुणवाली और शनि के त्रिशांश में अल्प काम सुख वाली होती है।

यदि शनि की राशि (१०, ११) में बली लग्न या चन्द्रमा भौम के त्रिशांश में हो तो स्त्री दासी (नौकरानी), शुक्र के त्रिशांश में अच्छी बुद्धिवाली, बुध के त्रिशांश में दुष्टा व पापिन, गुरू के त्रिशाश में पतिव्रता और शनि के त्रिशांश में दुष्टों का सेवन करने वाली होती है ।। १०½–१३ ।।

बृहज्जातक में कहा है 'जैवे नैकगुणाल्परत्यतिगुणा विज्ञानयुक्ता सती, दासी नीचरतार्किभे पतिरता दुष्टाऽप्रजा स्वांशकैः' (२४ अ० ५ श्लोक) ।। १०½–१३ ।।

स्त्री स्त्री संभोग ज्ञान

शुक्रासितौ यदि परस्परभागसंस्थौ
शौक्रे च दृष्टिपथगावुदये घटांशे ।
स्त्रीणामतीव मदनाग्निमदः[2] प्रवृद्धः[1]
स्त्रीभिः समं[4] च पुरुषाकृतिभिर्लभन्ते[5] ।। १४ ।।

यदि स्त्री की कुण्डली में शुक्र, शनि के नवांश में हो और शनि, शुक्र के नवमांश में हो तथा शुक्र शनि में परस्पर दृष्ट सम्बन्ध हो, अथवा लग्न में शुक्र की राशि

---

[१] चाप्यसती. [२] वह्निगदः. [३] वृद्धिः. [४] शमं. [५] र्यभेत.

(२, ७) व शनि का नवमांश हो तो वह स्त्री अत्यन्त कामातुर होकर दूसरी स्त्री के भग के ऊपर चमड़े या रवड़ का लिंग बाँधकर उस के साथ प्रसङ्ग से अपनी बढ़ी हुई कामाग्नि का शमन करती है ॥ १४ ॥

वृहज्जातक में कहा है—'दृक् संस्थावसितसितौ परस्परांशे शौक्रे वा यदि घटराशि संभवोंऽशः । स्त्रीभिः स्त्रीमदनविषानलं प्रदीप्तं संशान्ति नयति नराकृतिस्थिताभिः' (२४ अ० ७ श्लोक) ॥ १४ ॥

सप्तम भाव का फल

शून्येऽस्ते कापुरुषो बलहीनः सौम्यदर्शनविहीने ।
चरभे प्रवासशीलो भर्ता क्लीबो ज्ञमन्दयोश्च भवेत् ॥ १५ ॥

यदि स्त्री कुण्डली में लग्न या चन्द्रमा से सप्तम भाव में कोई ग्रह न हो तो स्त्री का पति कापुरुष अर्थात् निन्दित होता है । यदि सप्तम भाव शुभ ग्रहों से अदृष्ट हो तो पति निर्बल होता है । यदि सप्तम भाव में चर राशि हो तो पति प्रवासी और सप्तम भाव में बुध, वा शनि हो तो पति नपुंसक होता है ॥ १५ ॥

वृहज्जातक में कहा है—'शून्ये कापुरुषो बलेऽस्तभवने सौम्यग्रहावीक्षिते, क्लीबोऽस्ते बुधमन्दयोश्चरगृहे नित्यं प्रवासान्वितः ।' (२४ अ० ८ श्लोक) ॥ १५ ॥

सप्तम भाव का फल

उत्सृष्टा सूर्येऽस्ते कुजे च विधवा नवोढैव ।
कन्यैवाशुभदृष्टे शनैश्चरे वृद्धतां याति ॥ १६ ॥
अशुभे क्षीणेऽस्तगते त्यक्ता पत्या भवेदशुभदृष्टे ।
क्रूरैर्विधवास्तगतैर्भवति पुनर्भूस्तथा मिश्रैः ॥ १७ ॥

यदि स्त्री कुण्डली में लग्न या चन्द्रमा से सप्तम भाव में सूर्य हो तो स्त्री को पति त्याग देता है । यदि सप्तम भाव में मङ्गल हो तो नव विवाहिता ही विधवा होती है । यदि सप्तम भाव में शनि, पाप ग्रह से दृष्ट हो तो कुमारी ही वृद्धा हो जाती है । अर्थात् विवाह नहीं करती है । यदि सप्तम भाव में निर्बल पाप ग्रह, पाप ग्रह से दृष्ट हो तो पति त्याग कर देता है । यदि सप्तम भाव में पाप ग्रह हो तो स्त्री विधवा होती है । यदि सप्तम भाव में शुभ ग्रह व पाप ग्रह दोनों हों तो स्त्री का दूसरा विवाह प्रथम पति के मरने पर होता है ॥ १६–१७ ॥

वृहज्जातक में कहा है—उत्सृष्टा रविणा कुजेन विधवा बाल्येऽस्तराशिस्थिते, कन्यैवाशुभवीक्षितेऽर्कतनये द्यूने जरां गच्छति ॥ आग्नेयैर्विधवास्तराशिसहितैर्मिश्रैः पुनर्भूर्भवेत् क्रूरे हीनबलेऽस्तगे स्वपतिना सौम्येक्षिते प्रोज्झिता ।' (२४ अ० ८–९ श्लोक) ॥ १६–१७ ॥

परपुरुषासक्त योग ज्ञान

अन्योन्यभागगतयोः सितकुजयोरन्यपुरुषसक्ता स्यात् ।
द्यूने शिशिरकरे वा [1]स्याद्युवतिरनुज्ञया भर्तुः ॥ १८ ॥

---

[1] गुतनये ।

यदि स्त्री कुण्डली में शुक्र भौम के नवांश में हो व भौम शुक्र के नवांश में स्थित हो तो स्त्री दूसरे पुरुष में आसक्त होती है। यदि इसी योग में सप्तम भाव में चन्द्रमा हो तो पति की आज्ञा से परपुरुष से प्रेम करती है ॥ १८ ॥

वृहज्जातक में कहा है—'अन्योन्यांशगयोः सितावनिजयोरन्यप्रसक्ताङ्गना, द्यूने वा यदि शीतरश्मिसहितौ भर्तुस्तदानुज्ञया' (२४ अ० ९ श्लो०) ॥ १८ ॥

माता के साथ कुलटा योग ज्ञान

सौरारगृहे तद्वच्छशिनि सशुक्रे विलग्नगे जाता।
मात्रा साकं कुलटा क्रूरग्रहवीक्षिते भवति ॥ १९ ॥

यदि स्त्री की कुण्डली में मेष वा वृश्चिक वा मकर वा कुम्भ लग्न में शुक्र के साथ चन्द्रमा, पापग्रह से दृष्ट हो तो स्त्री माता के साथ कुलटा (व्यभिचारिणी) होती है ॥ १९ ॥

वृहज्जातक में कहा है—'सौरारर्क्षे लग्नगे सेन्दुशुक्रे मात्रा सार्धं बन्धकी पापदृष्टे' (२४ अ० १० श्लो०) ॥ १९ ॥

सरोग; नीरोग भग ज्ञान

द्यूने तु कुजनवांशे शनिना दृष्टे सरोगयोनिः स्त्री।
सद्भृगुभागे चारुश्रोणी पतिवल्लभा भवति ॥ २० ॥

यदि स्त्री की कुण्डली में सप्तम भाव में भौम का नवांश, शनि से दृष्ट हो तो स्त्री की योनि रोग से युक्त होती है। यदि सप्तम भाव में शुक्र का नवांश उदित हो तो स्त्री की योनि सुन्दर व पति की प्रिया होती है ॥ २० ॥

वृहज्जातक में कहा है—'कौजेऽस्तांशे सौरिणा व्याधयोनिश्चारुश्रोणी वल्लभा सद्ग्रहांशे' (२४ अ० १० श्लो०) ॥ २० ॥

सप्तमभावस्थ शनि, भौम राशि व नवांश का फल

द्यूने वृद्धो मूर्खः सौरगृहे स्यान्नवांशके वाऽथ।
स्त्रीलोलः क्रोधपरः कुजभेऽथ नवांशके भर्ता ॥ २१ ॥

यदि स्त्री की कुण्डली में सप्तम भाव में शनि की राशि (१०, ११) वा नवांश हो तो स्त्री का पति वृद्ध व मूर्ख होता है अथवा भौम की राशि (१, ८), वा नवांश हो तो स्त्री का पति स्त्रैण व क्रोधी होता है ॥ २१ ॥

बृहज्जातक में कहा है—'वृद्धो मूर्खः सूर्यजर्क्षेऽशके वा स्त्रीलोलः स्यात्क्रोधनश्चावनेये (२४ अ० ११ श्लो०) ॥ २१ ॥

सप्तम भावस्थ शुक्र, बुध राशि व नवांश का फल

शुक्रगृहेऽथ नवांशेऽतिरूपसौभाग्यसंयुतो भर्ता।
नैपुणविज्ञानयुतस्तथैव बौधेऽथवा नवांशे वा ॥ २२ ॥

यदि स्त्री की कुण्डली में सप्तम भाव में शुक्र की राशि (२, ७) व नवांश हो

तो स्त्री का पति अधिक रूपवान् व सौभाग्यवान् होता है। यदि सप्तम भाव में बुध की राशि (३, ६) व नवांश हो तो स्त्री का पति चतुर वैज्ञानिक होता है ॥ २२ ॥

बृहज्जातक में कहा है—'शौक्रे कान्तोऽतीव सौभाग्ययुक्तो विद्वान् भर्ता नैपुणज्ञश्च बौधे (२४ अ० ११ श्लो०) ॥ २२ ॥

सप्तमभावस्थ चन्द्र गुरु राशि व नवांश का फल

मदनार्तो मृदुचित्तः शशिभे ऽथनवांशके भर्ता ।
गुरुसितभागेऽप्यथवा गुणवान्विजितेन्द्रियो भवति ॥ २३ ॥

यदि स्त्री की कुण्डली में सप्तमभाव में चन्द्रमा की राशि (४) वा नवांश हो तो स्त्री का पति काम से पीडित व सरल स्वभाव का होता है। यदि गुरु की राशि (९,१२) वा नवांश सप्तम भाव में हो तो स्त्री का पति गुणवान् व जितेन्द्रिय होता है ॥ २३ ॥

बृहज्जातक में कहा है—मदनवशगतो मृदुश्च चान्द्रे त्रिदशगुरौ गुणवान् जितेन्द्रियश्च (२४ अ० १२ श्लो०) ॥ २३ ॥

सप्तमभावस्थ सूर्य राशि व नवांश का फल

अतिकर्मकृदतितीक्ष्णो रविभेऽप्यथवांशके भवति भर्ता ।
सप्तमभवनोपेतैर्नित्यं स्त्रीणां समवधार्यम्[1] ॥ २४ ॥

यदि स्त्री की कुण्डली में सप्तमभाव में सूर्य की राशि (५) वा नवांश हो तो स्त्री का पति अधिक कार्य करने वाला व अधिक तीखा होता है। उक्त फलानुसार सप्तम भाव की स्थिति वश फलादेश करना चाहिये ॥ २४ ॥

बृहज्जातक में कहा है—अतिमृदुरतिकर्मकृच्च सौर्ये भवति गृहेऽस्तमयस्थितेंऽशके वा (२४ अ० १२ श्लो०) ॥ २४ ॥

लग्नस्थ ग्रहों का फल

ईर्ष्यान्विता सुखपरा लग्ने सितचन्द्रयोर्बुधेन्द्वोश्च ।
सुखिता कलासु कुशला गुणशतसहिता विनीता स्यात् ॥ २४ ॥
शुक्रबुधयोर्विलग्ने रुचिरा सुभगा कलासु निपुणा च ।
दास्यम्बरसौख्ययुता शुभेषु पापेषु विपरीता ॥ २६ ॥

यदि स्त्री की कुण्डली में लग्न में शुक्र व चन्द्रमा हों तो स्त्री ईर्ष्यावती अर्थात् दूसरे की उन्नति वा भलाई देख कर जलने वाली और सुख से युक्त होती है।

यदि लग्न में बुध व चन्द्रमा हों तो स्त्री सुखी, कलाओं में चतुर, सौ गुणों से युक्त व विनीता अर्थात् नम्र स्वभाव वाली होती है। यदि बुध, शुक्र लग्न में हों तो स्त्री सुन्दरी, सुभगा व कलाओं में चतुरा होती है।

---

[1] धार्यः ।

यदि सब शुभग्रह लग्न में हों तो स्त्री नौकरानी—वस्त्र व सुख से युक्त होती है। यदि लग्न में पापग्रह हों तो स्त्री दुर्भगा, कुशीला, कुरूपा होती है ॥ २५–२६ ॥

बृहज्जातक में कहा है—ईर्ष्यान्विता सुखपरा शशिशुक्रलग्ने, ज्ञेन्द्वोः कलासु निपुणा सुखिता गुणाढ्या। शुक्रज्ञयोस्तु रुचिरा सुभगा कलाज्ञा, त्रिष्वप्यनेकवसुसौख्यगुणा शुभेषु (२४ अ० १३ श्लो०) ॥ २५–२६ ॥

लग्नस्थ ग्रहों का फम

पापेऽष्टमे तु विधवा निधनाधिपतिर्नवांशके यस्य।
तस्य दशायां मरणं वाच्यं तस्याः शुभैर्द्वितीयस्थैः ॥ २७ ॥

यदि स्त्री की कुण्डली में अष्टम भाव में पाप ग्रह हो तो स्त्री विधवा होती है। कब विधवा होती है। उत्तर। अष्टमेश जिस ग्रह के नवांश में हो उस ग्रह की दशा अन्तर्दशा विवाह के बाद आने पर स्त्री को वैधव्यता प्राप्त होती है।

यदि पाप ग्रह अष्टमभाव में हो और शुभग्रह द्वितीय भाव में हो तो पति से पूर्व स्त्री का मरण होता है ॥ २७ ॥

बृहज्जातक में कहा है—क्रूरेऽष्टमे विधवता निधनेश्वरोंशे, यस्य स्थितो वयसि तस्य समे प्रदिष्टा। सत्स्वर्थगेषु मरणं स्वयमेव तस्याः (२४ अ० १४ श्लो०) ॥ २७ ॥

अल्पपुत्र योग ज्ञान

कन्यालिवृषभसिंहे शिशिरमयूखेऽल्पपुत्रा[1] स्यात्।
पुत्रभवने शुभयुते निरीक्षिते वा तथैव स्यात् ॥ २८ ॥

यदि स्त्री की कुण्डली में पञ्चमभाव में शुभग्रह से युक्त चन्द्रमा कन्या वा वृश्चिक वा वृष वा सिंह राशि में हो तो स्त्री अल्पपुत्रवती होती है तथा शुभ ग्रह से दृष्ट चन्द्रमा पूर्वोक्त योग में हो तो भी स्त्री अल्प पुत्रवती होती है ॥ २८ ॥

बृहज्जातक में कहा है—कन्यालिगोहरिषु चाल्पसुतत्वमिन्दौ (२४ अ० १४ श्लो०) ॥ २८ ॥

पुरुषाकृति योग ज्ञान

रिक्ते[2] बुधेन्दुभृगुजैं रविजे च मध्ये
शेषैर्बलेन सहितैर्विषमर्क्षलग्ने।
जाता भवेत्पुरुषिणी युवती सदैव
पुंश्चेष्टिता विचरति प्रथिता च लोके ॥ २९ ॥

यदि स्त्री की कुण्डली में बुध-चन्द्रमा-शुक्र निर्बल हों व शनि मध्यबली हो तथा शेष ग्रह बलवान् हों और विषम राशि का लग्न हो तो स्त्री पुरुषाकृतिवाली व पुरुष से आचरण करने वाली एवं संसार में प्रसिद्धा होती है ॥ २९ ॥

बृहज्जातक में कहा है—सौरे मध्यबले बलेन रहितैः शीतांशुशुक्रेन्दुजैः, शेषैर्वीर्यसमन्वितैः पुरुषिणी यद्योजराश्युद्गमः (२४ अ० १५ श्लो०) ॥ २९ ॥

---

१ पुत्रता तस्याः। २ रिक्तैर्बु।

संन्यासिनी योग ज्ञान

क्रूरे जामित्रगते नवमे यदि खेचरो भवति नूनम् ।
[१]आप्नोति प्रव्रज्यां पापग्रहसम्भवामबला ॥ ३० ॥

यदि स्त्री की कुण्डली में सप्तमभाव में पाप ग्रह हो तथा नवम भाव में कोई भी ग्रह हो तो स्त्री को सप्तमस्थ पापग्रह जनित प्रव्रज्या होती है ॥ ३० ॥

बृहज्जातक में कहा है—पापेऽस्ते नवमगतग्रहस्य तुल्यां प्रव्रज्यां ' (२४ अ० १६ श्लो०) ॥ ३० ॥

ब्रह्मवादिनी योग ज्ञान

बलिभिर्बुधगुरुशुक्रैः शशाङ्कसहितैर्विलग्नगैः समभे ।
स्त्री ब्रह्मवादिनी स्यादनेकशास्त्रार्थकुशला च ॥ ३१ ॥
जन्मकाले विवाहे च चिन्तायां वरणे तथा ।
चिन्त्यं स्त्रीणां तु यत्प्रोक्तं घटते तत्पतिष्वपि ॥ ३२ ॥

यदि स्त्री की कुण्डली में बलवान् बुध, गुरु, शुक्र, चन्द्रमा के साथ समराशिस्थ लग्न में हों तो स्त्री ब्रह्म वादिनी अर्थात् मुक्ति मार्ग जाननेवाली व अनेक शास्त्रों के अर्थ में चतुरा होती है । अध्यायोक्त फल जन्म के समय में विवाह में प्रश्नादि में, वरण समय में, विचार करना चाहिये तथा स्त्री के पति में भी फल घटित होता है ॥ ३१-३२॥

बृहज्जातक में कहा है - 'जीवारास्फुजिदैन्दवेपु बलिपु प्राग्लग्नराशौ समे ।
विख्याता भुवि नैकशास्त्रनिपुणा स्त्री ब्रह्मवादिन्यपि ॥ (२४ अ० १५ श्लोक)
उद्वाहे वरणविधौ प्रदानकाले चिन्तायामपि सकलं विधेयमेतत्'
(२४ अ० १६ श्लोक) ॥ ३१-३२ ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां स्त्रीजातकफलो नाम पञ्चचत्वारिंशोऽध्यायः ॥

षट्चत्वारिंशोऽध्यायः ।

अष्टमभावस्थितिवश मृत्यु ज्ञान

शिखिजलशस्त्रज्वरजरत्वामयतृट् क्षुत्कृतो भवेन्मृत्युः ।
सूर्यादिभिर्निधनगैः परदेशे पथि स्वके चराद्यैश्च ॥ १ ॥
यो बलयुक्तो निधनं पश्यति तद्धातुकोपजो मृत्युः ।
तत्संयुक्तभगात्रे बहुभिर्बलिभिर्बहुप्रकारः स्यात् ॥ २ ॥

यदि जन्म के समय में अष्टम भाव में सूर्य हो तो जातक की मृत्यु अग्नि से होती है । यदि अष्टम भाव में चन्द्रमा हो तो जल से, भौम हो तो शस्त्र से, बुध हो तो ज्वर से,

---

[१] प्रव्रज्य मावमे ग्रहसंभवे नैव नोप्नाति ।

गुरू हो तो आँव रोग से, शुक्र हो तो प्यास से, शनि हो तो भूख से जातक की मृत्यु होती है।

यदि अष्टम भाव में चर राशि हो तो परदेश में, स्थिर राशि हो तो अपने घर में, द्विस्वभाव राशि हो तो मार्ग में जातक की मृत्यु होती है।

यदि अष्टम भाव में कोई ग्रह न हो तो जो बलवान् ग्रह अष्टम भाव को देखता हो उसी ग्रह की धातु कोप से जातक का मरण होता है, अर्थात् यदि बली सूर्य से अष्टम भाव दृष्ट हो तो पित्त के प्रकोप से, बली चन्द्रमा से दृष्ट अष्टम भाव हो तो वायु वा कफ के प्रकोप से, बली भौम से दृष्ट हो तो पित्त प्रकोप से, इसी प्रकार अन्य ग्रहों की धातु प्रकोप से मरण होता है।

अन्य ग्रहों की धातु यथा बुध कफ, पित्त वायु, गुरू की वात, शनि की वात धातु वर्णित है। जो राशि अष्टम भाव में हो वह राशि कालाङ्ग के अनुसार जिस शरीर स्थान में हो उसी स्थान में उक्त धातु विकार से मरण होता है। यदि बली अधिक ग्रहों से दृष्ट अष्टम भाव हो तो अनेक प्रकार के प्रकोप से जातक का निर्याण होता है॥ १–२॥

वृहज्जातक में कहा है—'मृत्युर्मृत्युगृहे क्षणेन वलिभिस्तद्धातुकोपोद्भवस्तत्संयुक्तभगात्रजो वहुभवो वीर्यान्वितैर्भूरिभिः। अग्न्यंब्वायुधजो ज्वरामयकृतस्तृट्क्षुत्कृतश्चाष्टमे, सूर्याद्यैर्निधने चरादिषु परस्वाध्वप्रदेशेष्विति' (२५ अ० १ श्लोक)॥ १–२॥

पर्वत वा पत्थर व कूपादि पतन से मृत्यु ज्ञान

सूर्याङ्गारकयोः खबन्धुगतयोः शैलाग्रपातोद्भवो
मृत्युर्भूतनयेन्दुभानुतनयैः कूपे खसप्ताम्बुगैः।
पापालोकितयोर्हिमोष्णकरयोः कन्यास्थयोर्बन्धतो
लग्ने सूर्यशशाङ्कयोस्तिमियुगे तोये [1]सदा [2]मज्जतः॥ ३॥

यदि जन्म के समय में सूर्य व भौम, चतुर्थ व दशम भाव में हों अर्थात् १ चतुर्थ में, १ दशम में हो तो जातक का पर्वत से गिर कर या पत्थर पर गिर कर मरण होता है।

यदि भौम, चन्द्रमा, शनि, दशम, सप्तम, चतुर्थ भाव में हों तो कुएँ (कूप) में गिर कर जातक की मृत्यु होती है।

यदि कन्या राशिस्थ सूर्य व चन्द्रमा पाप ग्रह से दृष्ट हों तो जातक की मृत्यु हो बन्धन (जेल) से होती है।

यदि मीन लग्नस्थ सूर्य, चन्द्रमा हों तो जल में डूब कर जातक की मृत्यु होती है।३।

वृहज्जातक में कहा है—'शैलाग्राभिहतस्य सूर्यकुजयोर्मृत्युः खबन्धुस्थयोः, कूपे मन्दशशांकभूमितनयैर्बन्धवस्तकर्मस्थितैः। कन्यायां स्वजनाद्धिमोष्णकरयोः पापग्रहैर्दृष्टयोः, स्यातां यद्युभयोदयेऽर्कशशिनौ तोये सदा मज्जितः' (२५ अ० २ श्लोक)॥ ३॥

---

१ यदा। २ मज्जति।

जलोदर रोग व शस्त्र व अग्नि से मृत्यु योग ज्ञान

कर्किणि मन्दे मकरे चन्द्रे मृत्यु[1]र्जलोदरकृतः स्यात् ।
[2]पापान्तःस्थे चन्द्रे कुजभवने शस्त्रवह्निभवः ॥ ४ ॥

यदि जन्म के समय में कर्क राशि में शनि व मकर राशि में चन्द्रमा हो तो जातक की मृत्यु जलोदर रोग से होती है । यदि दो पाप ग्रहों के मध्य में चन्द्रमा भौम की राशि (१, ८,) में स्थित हो तो जातक की मृत्यु शस्त्र वा अग्नि से होती है ॥ ४ ॥

बृहज्जातक में कहा है—'मन्दे कर्कटगे जलोदरकृतो मृत्युर्मृगाङ्के मृगे, शस्त्राग्निप्रभवः शशिन्यशुभयोर्मध्ये कुजर्क्षे स्थिते' (२५ अ० ३ श्लोक) ॥ ४ ॥

रक्तजन्य रोग व सूखा रोग से मृत्यु ज्ञान

कन्यायां पद्मिनीशत्रुः पापमध्यगतः [3]सदा ।
रक्तोत्थशोषजं मृत्युं करोति ध्रुवमेव हि ॥ ५ ॥

यदि जन्म के समय में कन्याराशिस्थ चन्द्रमा दो पाप ग्रहों के मध्य में हो तो जातक की मृत्यु रक्त (खून) दोष से वा सूखा रोग से होती है ॥ ५ ॥

बृहज्जातक में कहा है—'कन्यायां रुधिरोत्थशोषजनितस्तद्वत्स्थिते शीतगौ' (२५ अ० ३ श्लोक) ॥ ५ ॥

फाँसी लगाकर वा अग्नि या कूदने से मृत्युयोग ज्ञान

सौरर्क्षे शुभयोर्मध्ये [4]शशी रज्ज्वग्निपातजम् ।
कुर्यान्मृत्युं न सन्देहश्चाणक्यवचनं तथा ॥ ६ ॥

यदि जन्म के समय में शनि राशिस्थ (मकर, कुम्भ) चन्द्रमा दो शुभ ग्रहों के बीच में हो तो जातक गले में रस्सी बांधकर अर्थात् फाँसी लगाकर या अग्नि से या कूद कर मरता है इसमें सन्देह नहीं है । ऐसा चाणक्य का कथन है ॥ ६ ॥

बृहज्जातक में कहा है—'सौरर्क्षे यदि तद्वदेव हिमगौ रज्ज्वग्निपातैः कृतः' (२५ अ० ३ श्लोक) ॥ ६ ॥

तथा जातकाभरण में भी—'शुभान्तरे शीतकरेऽष्टमस्थे पातेन पाशेन हुताशनेन' (नि० २२ श्लोक) ॥ ६ ॥

प्रकारान्तर से मृत्यु ज्ञान

नवमसुतयोरशुभयोः पापग्रहदृष्टयोर्भवेन्मृत्युः ।
द्रेक्काणैः पाशभुजगनिगडैश्छिद्रेऽथवा गुप्त्याम् ॥ ७ ॥

यदि जन्म के समय में नवम व पञ्चम भाव में पाप ग्रह, पाप ग्रह से दृष्ट हो तो जातक फांसी लगाकर या अग्नि से या उच्च स्थान से कूद कर मर जाता है ।

यदि अष्टम भाव में पाश या निगड या भुजग द्रेष्काण हो तो जातक फाँसी लगा कर या बन्धन से वा जेल में मरता है ॥ ७ ॥

---

१ दरोदर । २ पापांशस्थे । ३ स्वदा । ४ रज्वग्न्युत्पातजं शशी ।

बृ० जा० में कहा है—'बन्धाद्धीनवमस्थयोरशुभयोः सौम्यग्रहादृष्टयोर्द्रेकाणैश्च सपाशसर्पनिगडैश्छिद्रस्थितैर्बन्धतः' (२५ अ० ४ श्लोक) ॥ ७ ॥

एवं जा० भ० में भी—'पापेक्षितौ पापखगौ त्रिकोणे यद्वाष्टमे बन्धभुजङ्गपाशात् । दृक्काणकाः स्युर्जनने हि यस्य कारागृहे स्यान्मरणं हि तस्य' (नि० अ० २३ श्लोक) ॥७॥

स्त्री हेतु से मरण ज्ञान

मीनोदये दिनकरे शशिनि सपापेऽस्तगे सिते मेषे ।
स्त्रीहेतुकं हि मरणं स्वमन्दिरे स्याद्वदन्त्येके ॥ ८ ॥

यदि जन्म के समय में मीन लग्न में सूर्य हो तथा चन्द्रमा पाप ग्रह से युक्त होकर सप्तम भाव में व शुक्र मेष राशि में हो तो जातक स्त्री के हेतु अपने घर में मरता है । यह मत किसी-किसी का है ॥ ८ ॥

बृ० जा० में कहा है—'कन्यायामशुभान्वितेऽस्तमयगे चन्द्रे सिते मेषगे, सूर्ये लग्नगते च विद्धि मरणं स्त्री हेतुकं मन्दिरे' (२५ अ० ४ श्लोक) ॥ ८ ॥

तथा जा० भ० में भी—मीनोदयेऽर्केऽस्तगते मृगाङ्के सपापके चास्फुजिति क्रियस्थे । भार्याकृतं स्यान्मरणं स्वगेहे वदन्ति सर्वे मुनयः पुराणाः'

(२५ अ० २४ श्लोक ॥ ८ ॥

विशेष—प्रकाशित पुस्तकों में 'मीनोदये दिनकरे चन्द्रे पापान्वितेऽस्तगेमेषे'

यह पाठ प्रामादिक उपलब्ध होता है । यहाँ जो पाठ दिया गया है वह सं वि० वि० की मातृका में प्राप्त है तथा इस प्राप्तांश का ही ग्रन्थान्तर से सामञ्जस्य होता है ॥ ८ ॥

शूल रोग से मरण ज्ञान

रुधिरे [1]सुखेऽथवार्के वियति यमे [2]क्षीणचन्द्रसंयुक्तैः ।
पापैस्त्रिकोणलग्ने शूलप्रोतस्य निर्दिशेन्मरणम् ॥ ९ ॥

यदि जन्म के समय में चतुर्थ भाव में भौम वा सूर्य हो तथा दशम भाव में शनि, क्षीण चन्द्रमा से युक्त व पापग्रह पञ्चम नवम लग्न में हो तो जातक का शूल रोग से मरण होता है ॥ ९ ॥

बृ० जा० में कहा है—'शूलोद्भिन्नतनुः सुखेऽवनिसुते सूर्येऽपि वा खे यमे, स प्रक्षीण-हिमांशुभिश्च युगपत् पापैस्त्रिकोणाद्यगैः' (२५ अ० ५ श्लो०) ॥ ९ ॥

तथा जा० भ० में भी—'क्षीणेन्दुमन्दौ गगने चतुर्थे दिनाधिराजोऽवनिजोऽथवा स्यात् । मूर्तित्रिकोणोपगताः खलाख्याः शूलस्य मौलौ प्रलयं प्रयान्ति' (नि० अ० २५ श्लो०) ॥ ९ ॥

---

[1] सुते । [2] युक्ते ।

काष्ठ के आघात से मृत्यु योग ज्ञान

हिबुकेऽर्के वियति कुजे क्षीणेन्दुयुतेऽर्कजेन संदृष्टे।
काष्ठेनाभिहतः सन्म्रियते जातो न सन्देहः ॥ १० ॥

यदि जन्म के समय में चतुर्थ भाव में सूर्य हो व दशम भाव में भौम, क्षीण चन्द्रमा से युत एवं शनि से दृष्ट हो तो जातक का काष्ठ के आघात से मरण होता इसमें सन्देह नहीं है ॥ १० ॥

वृ० जा० में कहा है—बन्धुस्थे च रवौ वियत्यवनिजे क्षीणेन्दुसंवीक्षिते काष्ठेनाभिहतः प्रयाति मरणं सूर्यात्मजेनेक्षिते' (२५ अ० ५ श्लो०) ॥ १० ॥

तथा जा० भ० में भी – 'मेषूरणस्थे धरणीतनूजे दिवामणी भूतलभावसंस्थे क्षीणेन्दुमन्दप्रविलोक्यमाने काष्ठाभिघातेन वदन्ति मृत्युम्' (नि० अ० २६ श्लो०) ॥ १० ॥

लाठी से वा धूम, अग्नि बन्धनादि से मरण ज्ञान

क्षीणेन्दुभौमरविनन्दनसूर्ययुक्तैः छिद्रास्पदोदयसुखैर्लगुडाहतस्य।
मृत्युर्वियन्नवमलग्नसुतस्थितैस्तैर्धूमाग्निबन्धनशरीरनिकुट्टनैः स्यात् ॥११॥

यदि जन्म के समय में क्षीण चन्द्रमा, भौम, शनि, सूर्य, अष्टम, दशम, लग्न व चतुर्थ भाव में स्थित हों तो जातक का मरण लाठी के प्रहार से होता है।

यदि क्षीण चन्द्रमा; भौम; शनि, सूर्य ये ग्रह; दशम, नवम, लग्न व पञ्चम भाव में स्थित हों तो जातक का धुआँ वा अग्नि वा बन्धन वा शरीर पर मुष्टिकादि प्रहार से मरण होता है ॥ ११ ॥

बृ० जा० में कहा है—'रन्ध्रास्पदाङ्गहिबुकैर्लगुडाहताङ्गः प्रक्षीणचन्द्ररुधिरार्किदिनेशयुक्तैः। तैरेव कर्मनवमोदयपुत्रसंस्थैर्धूमाग्निबन्धनशरीरनिकुट्टनान्तः' (२५ अ० ६ श्लो०) ॥ ११ ॥

तथा जा० भ० में भी—'क्षीणेन्दुभौमार्किदिवाकरैः स्यादायुः खलग्नाम्बुगतैर्गदादेः। मृत्युः खपुण्योदयपञ्चमस्थैस्तैरेव नानाविधकुट्टनेन' (नि० अ० २७ श्लो०) ॥ ११ ॥

विशेष—प्रकाशित पुस्तकों में 'क्षीणेन्दुभौमरविचन्द्रजसूर्यपुत्रैः' यह पाठ उपलब्ध होता है। यहाँ पर जो पाठ पठित किया गया है वह सं० वि० वि० की मातृका में प्राप्त है। इसी पाठ की ग्रन्थान्तर से समानता भी मिलती है। प्रकाशित पुस्तकों में जो पाठ है वह प्रामादिक प्रतीत होता है क्योंकि भाव तो चार हैं और ग्रह पाँच हैं एवं ग्रन्थान्तर में बुध का नाम वर्णित न होने से असमानता प्राप्त होती है। मनीषी पाठकगण स्वतः इसका विचार करने की कृपा करें ॥ ११ ॥

शस्त्र, अग्नि, राजा के प्रकोप से मृत्यु ज्ञान

हिबुकास्तकर्मसहितैः कुजभानुशनैश्चरैर्भवति मृत्युः।
[1]आयुधहुतभुग्भूपतिकोपप्रभवः सदा पुंसाम् ॥ १२ ॥

---

[1] सायुध।

यदि जन्म के समय में चतुर्थ, सप्तम, दशम भाव में भौम, सूर्य, शनि हों तो जातक का शस्त्र, अग्नि वा राजा के प्रकोप से मरण होता है ॥ १२ ॥

बृ० जा० में कहा है—'बन्ध्वस्तकर्मसहितैः कुजसूर्यमन्दैर्निर्याणमायुधशिखिक्षितिपालकोपैः' (२५ अ० ७ श्लो०) ॥ १२ ॥

तथा जा० भ० में भी—'भूसूनुसूर्यार्किसुता यदि स्युश्चतुर्थजामित्रनभोगृहस्थाः । कुर्वन्ति ते शस्त्रहुताशभूपप्रकोपजातं नियमेन मृत्युम्' (नि० अ० २८ श्लो०) ॥ १२ ॥

कीड़ा रोग वा आघात, मदिरा पान से मरण ज्ञान

कर्माम्बुवित्तसंस्थैः कुजेन्दुमन्दैः क्षतः क्रिमिकृतोऽन्तः ।
खस्थेऽर्केन्दुकुजे वा सुराप्रपान[१]प्रतापकृतः ॥ १३ ॥

यदि जन्म के समय में दशम, चतुर्थ, द्वितीय भावों में भौम, चन्द्रमा, शनि हों तो जातक का कीड़ा के रोग से वा कीड़ा के आघात से मरण होता है ।

यदि दशम भाव में सूर्य, चन्द्रमा, भौम हों तो जातक का मदिरा पान से मरण होता है ॥ १३ ॥

बृ० जा० में कहा है—सौरेन्दुभूमितनयैः स्वसुखास्पदस्थैर्ज्ञेयः क्षतक्रिमिकृतश्च शरीरघातः । ७ ॥ खस्थेऽर्केऽवनिजे रसातलगते यानप्रपाताद्वधो' (२५ अ० ७–८) ॥ १३ ॥

तथा जा० भ० में भी—'कुजेन्दुमन्दाः खजलद्विसंस्थाः क्रमिक्षतैस्ते मरणं प्रकुर्युः । मेषूरणस्थै रविभौमसोमैर्भवेत्प्रवासेऽनलवाहनाद्यैः' (नि० अ० २९) ॥ १३ ॥

विशेष—सं० वि० वि० की मातृका में 'खस्थेऽर्केऽम्बुनि कुजे' यह पाठ बृहज्जातक के अनुरूप ही प्राप्त होता है ॥ १३ ॥

यन्त्र पीड़ा से मृत्यु ज्ञान

सप्तमभवने भौमे क्षीणेन्दुदिवाकरार्किभिर्लग्ने ।
मरणं जातस्य वदेद्यन्त्रोत्पीडनभवमवश्यम् ॥ १४ ॥

यदि जन्म के समय में सप्तम भाव में भौम हो व लग्न में क्षीण चन्द्रमा, सूर्य, शनि हों तो जातक का मरण यन्त्र (मशीनरी) की पीड़ा से अवश्य होता है ॥ १४ ॥

बृ० जा० में कहा है—'यन्त्रोत्पीडनजः कुजेऽस्तमयगे सौरेंद्विनाभ्युद्गमे' (२५ अ० ८ श्लो०) ॥ १४ ॥

तथा जा० भ० में भी—'क्षीणेन्दुमन्दार्कयुते विलग्ने भूमीसुते सप्तमभावयाते । विनाशनं यन्त्रनिपीडनेन भवेदवश्यं परिवेदितव्यम्' (नि० अ० ३० श्लो०) ॥ १४ ॥

विष्ठा में मरण योग ज्ञान

तुलायां रुधिरे याते कुजर्क्षे भास्करे स्थिते ।
चन्द्रे मन्दगृहं प्राप्ते विण्मध्ये मरणं भवेत् ॥ १५ ॥

---

[१] प्रपात ।

यदि जन्म के समय में तुला राशि में भौम हो व भौम की राशि (१, ८) में सूर्य हो एवं शनि की राशि में (१०, ११) में चन्द्रमा हो तो जातक का विष्ठा के मध्य में मरण होता है ॥ १५ ॥

बृ० जा० में कहा है—'विण्मध्ये रुधिरार्किशीतकिरणैर्जूकाजसौरर्क्षगैः' (२५ अ० ८ श्लो०) ॥ १५ ॥

तथा जा० भ० में भी—'भौमे तुलायां च यमे च कर्कें प्रालेयरश्मौ रविजालयस्थे । विण्मूत्रितासंकुलितप्रदेशेऽवश्यं विनाशः परिवेदितव्यः' (नि० अ० ३१ श्लो०) ॥ १५ ॥

पुनः विष्ठा में मरण योग ज्ञान

गलितेन्द्वर्कभूपुत्रैर्गतै[1]र्व्योमास्तबन्धुषु ।
विण्मध्ये तु भवेन्मृत्युः सिद्धसेनः प्रभाषते ॥ १६ ॥

यदि जन्म के समय में क्षीण चन्द्रमा दशम भाव में व सूर्य सप्तम भाव में और भौम चतुर्थ भाव में हो तो जातक का विष्ठा के मध्य में मरण होता है । ऐसा सिद्धसेन का कथन है ॥ १६ ॥

बृ० जा० में कहा है—'यातैर्वा गलितेन्दुसूर्यरुधिरैर्व्योमास्तबन्ध्वाह्वयान्' (२५ अ० ८ श्लो० ॥ १६ ॥

गुल्मादि रोग से मरण योग ज्ञान

बलिना कुजेन दृष्टे क्षीणेन्दौ रन्ध्रगेऽर्कजे मृत्युः ।
गुल्ममहावेदनया क्रिमिदाहायुधकृतो भवति ॥ १७ ॥

यदि जन्म के समय में अष्टम भावस्थ शनि व क्षीण चन्द्रमा, बलवान् भौम से दृष्ट हों तो जातक का वायुगोला की वेदना (पीड़ा) से या कोड़ा, अग्नि वा शस्त्र (आपरेशन) से मरण होता है ॥ १७ ॥

बृ० जा० में कहा है—'वीर्यान्वितवक्रवीक्षिते क्षीणेन्दौ निधनस्थितेऽर्कजे । गुह्योद्भवरोगपीडया मृत्युः स्यात्क्रमिशस्त्रदाहजः' (२५ अ० ६ श्लो०) ॥ १७ ॥

तथा जा० भ० में भी—'बलोपपन्नावनिसूनुदृष्टे क्षीणे विधौ रन्ध्रगतेऽर्कपुत्रे । गुह्यामयाद् वा कृमिहेतुतो वा भवेदवश्यं मरणं रणाद् वा' (नि० अ० ३३ श्लो०) ॥ १७ ॥

पक्षियों के आघात से मृत्यु योग ज्ञान

रवौ सरुधिरे द्यूने निधने रविसंभवे ।
रसातलस्थे हिमगौ मृत्युः पक्षिकृतो भवेत् ॥ १८ ॥

यदि जन्म के समय में भौम के साथ सूर्य सप्तम भाव में व अष्टम भाव में शनि तथा चतुर्थ भाव में चन्द्रमा हो तो जातक का पक्षियों के आघात से मरण होता है ॥ १८ ॥

---

[1] व्योमष्टनवबबन्युषु, व्योमाष्टबन्धुयु ।

वृ० जा० में कहा है—अस्ते रवौ सरुधिरे निधनेऽर्कपुत्रे क्षीणे रसातलगते हिमगौ खगान्त : (२५ अ० १० श्लो०) ।।१८ ।।

तथा जा० भ० में भी—मित्रे कलत्रोपगते सभौमे मन्देऽष्टमस्थे च विधौ चतुर्थे । विहङ्गमस्त्रापदकारणेन निर्याणमाहुर्मुनयः पुराणाः (नि० अ० ३४ श्लो०) ।। १८ ।।

पर्वतादि पतन से मृत्यु योग ज्ञान

लग्नच्छि[1]द्रत्रिकोणेषु रव्यारार्किनिशाकरैः ।
मृत्युः स्याच्छैलपातेन [2]शस्त्रकुड्यादिपातजः ।। १९ ।।

यदि जन्म के समय में लग्न, अष्टम, पञ्चम, नवम भावों में सूर्य, भौम, शनि' चन्द्रमा हों तो जातक का पर्वत से गिर कर, या शस्त्र से या भीत (दीवाल) आदि उच्च स्थान से गिर कर मरण होता है ।। १९ ।।

वृ० जा० में कहा है—लग्नात्मजाष्टमतपःस्विनभौममन्दचन्द्रैस्तु शैलशिखराशनिकुड्यपातैः (२५ अ० १० श्लो०) ।। १९ ।।

तथा जा० भ० में भी—लग्नाष्टमत्रिकोणेषु भानुभौमार्कजेन्दुभिः । पार्वतीयो भवेन्मृत्यु भित्तिपातभवोऽथवा (नि० अ० ३५ श्जो०) ।। १९ ।।

मृत्युस्थान का ज्ञान

उदयनवांशाधिपतेः समानभूमौ वदन्ति यवनेन्द्राः ।
ग्रहयोगेक्षणकाद्यैः परिकल्प्यं चान्यदपि तज्ज्ञैः ।। २० ।।
उदितांशसमो मोहः [3]स्वेशेन निरीक्षिते द्विगुणितः स्यात् ।
त्रिगुणः शुभैश्च दृष्टे समस्तमुनयो व्यवस्यन्ति ।। २१ ।।

जन्मकालीन लग्न में जिस राशि का नवांश हो उस राशि का जो स्वामी ग्रह हो उसका जो स्थान हो उस स्थान के समान भूमि में जातक का मरण होता है, और भी ग्रहों के योग व दृष्टि के अनुसार फल जानना चाहिये ऐसा यवनाचार्यों का कथन है । जन्म लग्न के जितने नवांशभुक्त हों उतने समय के समान मरण समय में मोह (बेहोशी) होता है । यदि उस नवांश पर उवके स्वामी की दृष्टि हो तो उससे द्विगुणित, और शुभग्रहों की दृष्टि हो तो त्रिगुणित काल समान मरण समय में मोह जातक को होता है । ऐसा समस्त मुनि लोग कहते हैं ।। २०-२१ ।।

वृ० जा० में कहा है—होरानवांशकपयुक्तसमानभूमौ योगेक्षणादिभिरतः परिकल्पमेतत् । मोहस्तु मृत्युसमयेऽनुदितांशतुल्यः स्वेशेक्षिते द्विगुणितस्त्रिगुणः शुभैश्च (२५ अ० १२ श्लो०) ।। २०-२१ ।।

मरण कारण योग ज्ञान

उदयाद्द्वाविंशतिमद्रेक्काणो भवति कारणं मृत्योः ।
[4]तस्याधिपतिभवो वा निर्याणं सूचयेत्स्वगुणैः ।। २२ ।।

---

१ मित्र । २ वक्र । ३ शेषेण । ४ अधिपोद्भवो ।

लग्नस्थ द्रेष्काण से २२ वाँ द्रेष्काण मृत्यु का कारण होता है अर्थात् लग्नगत प्रथम द्रेष्काण हो तो अष्टमभाव का प्रथम द्रेष्काण, यदि लग्नगत द्वितीय द्रेष्काण हो तो अष्टमस्थ द्वितीय द्रेष्काण, यदि लग्नगत तृतीय द्रेष्काण, हो तो अष्टमभावस्थित तृतीय द्रेष्काण मृत्यु का कारण होता है। अथवा २२ वें द्रेष्काण का स्वामो अपने उक्त दोषों से जातक का मरण करता है ॥ २२ ॥

बृ० जा० में कहा है—द्वाविंशः कथितस्तु कारणं द्रेष्काणो निधनस्य सूरिभिः। तस्याधिपतिर्भवोऽपि वा निर्याणं स्वगुणैः प्रयच्छति (२५ अ० ११ श्लो०) ॥ २२ ॥

मेषस्थ प्रथम द्रेष्काण का फल

मेषाद्ये द्रेक्काणे क्रूरग्रहवीक्षिते च संयुक्ते।
अम्ब्वहिविषपित्तकृतं मरणं नृणां समादेश्यम् ॥ २३ ॥

यदि कुण्डली में २२ वाँ द्रेष्काण, मेष राशि का प्रथम द्रेष्काण हो तथा पापग्रह से दृष्ट या युक्त हो तो जातक का जल, सर्प, विष (जहर) वा पित्त के प्रकोप से मरण होता है ॥ २३ ॥

मेषस्थ द्वितीय व तृतीय द्रेष्काण का फल

विद्याद्द्वितीयभागे मरणं जलकृमिहिमारण्यैः।
एवं तृतीयभागे तटाककूपप्रपाताद्वा ॥ २४ ॥

यदि कुण्डली में २२वाँ द्रेष्काण, मेष राशि का द्वितीय द्रेष्काण हो तो जातक की जल या कीड़ा या पाला या जङ्गली जन्तुओं से मृत्यु होती है।

यदि मेषस्थ तृतीय द्रेष्काण हो तो जातक की तालाब या कुए में गिर कर मृत्यु होती है ॥२४॥

जा० भ० में कहा है—'मेषे द्वितीये जलजो वनान्ते तृतीयके कूपतडागजातः' (नि० अ० ८ श्लो०) ॥२४॥

वृषस्थ प्रथम व द्वितीय द्रेष्काण का फल

करभाश्वखरोष्ट्रेभ्यो मृत्युर्ज्ञेयो वृषस्याद्ये।
पित्ताग्निवातचोराद्द्वितीयभागे वृषस्यैव ॥ २५ ॥

यदि कुण्डली में २२वां द्रेष्काण, वृष राशि का प्रथम द्रेष्काण हो तो जातक की ऊँट या ऊँट के बच्चे से वा घोड़े वा गधा से मृत्यु होती होती है।

यदि वृषस्थ द्वितीय द्रेष्काण हो तो जातक की पित्त, अग्नि, वायु वा चोर से मृत्यु होती है ॥२५॥

जा० भ० में कहा है—'वृषस्य पूर्वे त्रिलवे खराश्वक्रमेलकादि प्रभवो हि मृत्युः। द्वितीयके पित्तहुताशचौरैः' (नि० अ० ८ श्लो०) ॥२५॥

वृषस्थ तृतीय द्रेष्काण का फल

विद्यात्तृतीयभागे यानासनवाजिपातकृतम्।
पुंसां भवति हि मरणं रणशिरसि महास्त्रकृतमेव ॥ २६ ॥

यदि कुण्डली में २२वां द्रेष्काण वृष राशि का तृतीय द्रेष्काण हो तो जातक की सवारी के स्थान से या घोड़े से गिरकर या युद्ध में मस्तक पर बड़े शस्त्र के प्रहार से मृत्यु होती है ॥२६॥

जा० भ० में कहा है—'उच्चस्थलाश्वादिभवस्तृतीये ।' (नि० अ० ८½ श्लो०॥२६॥

मिथुन राशिस्थ प्रथम व द्वितीय द्रेष्काण का फल

आद्ये मिथुनत्र्यंशे कासश्वासोद्भवो भवति ।
[1]मृत्युर्महिषविषाद्याद्द्वितीयभागे च संनिपाताद्वा ॥ २७ ॥

यदि कुण्डली में २२वां द्रेष्काण, मिथुन राशि का प्रथम द्रेष्काण हो तो जातक की खांसी या श्वास की बीमारी से मृत्यु होती है ।

यदि मिथुनस्थ द्वितोय द्रेष्काण हो तो जातक की भैंसा या विष (जहर) से या सन्निपात रोग से मृत्यु होती है ॥२७॥

जा० भ० में कहा है—'आद्ये दृकाणे मिथुने च वातश्वासैर्द्वितीये मिथुने त्रिदोषैः' (नि० अ० ९ श्लो०) ॥२७॥

मिथुन राशिस्थ तृतीय द्रेष्काण का फल

वनवासिचतुश्चरणात्पर्वतप[2]तनाद्गजात्तथा[3]रण्यात् ।
भवति हि मृत्युः [4]पुंसामन्ते भागे तु जुतुमस्य ॥ २८ ॥

यदि कुण्डली में २२वां द्रेष्काण, मिथुन राशि का तृतीय द्रेष्काण हो तो जातक की वनवासियों से या चतुष्पदों (जानवरों) से या पहाड़ से गिरकर या जङ्गली हाथियों से मृत्यु होती है ॥२८॥

जा० भ० में कहा है—'गजादितो पर्वतपाततो वा भवेदरण्ये मिथुनान्तदृक्के' (नि० अ० १० श्लो०) ॥२८॥

कर्क राशिस्थ प्रथम द्रेष्काण का फल

ग्राहेण मद्यपानात्कण्टकदोषेण वा तथा स्वप्नात् ।
भवति हि कर्कटकाद्ये मृत्युर्नृणां तृतीयभागे तु ॥ २९ ॥

यदि कुण्डली में २२वां द्रेष्काण, कर्क राशि का प्रथम द्रेष्काण हो तो जातक की मगर से या शराब पीने से या कांटे से या स्वप्न दोष से मृत्यु होती है ॥२९॥

जा० भ० में कहा है-—अपेयपानादपि कण्टकाच्च स्वप्नाच्च कर्कप्रथमे दृकाणे' । (नि० अ० १० श्लो०) ॥२९॥

कर्क राशिस्थ द्वितीय तृतीय द्रेष्काण का फल

अभि[5]घाताद्विषपानान्मध्ये त्र्यंशे भयं समादिष्टम् ।
[6]विहगप्रमेहगुल्मा[7]सृकतन्द्रीदोषेण च तथान्त्ये ॥ ३० ॥

---

[1] मृत्युर्विषवृकमहिषा । [2] नागादगणा । [3] रण्यैः । [4] मन्त्ये । [5] अभिशापा । [6] प्लीह । [7] त्मस्त्रंसनदोषेण च तथान्त्ये।

यदि कुण्डली में २२वाँ द्रेष्काण, कर्कराशि का द्वितीय द्रेष्काण हो तो जातक को आघात से या शाप से या विष पान से मृत्यु का भय होता है।

यदि कर्क राशिस्थ तृतीय द्रेष्काण हो तो जातक की पक्षि से वा प्लीहा रोग से या प्रमेह से या गुल्म रोग (गोला रोग) से या रक्त विकार से या तन्द्रा के दोष से मृत्यु होती है ॥३०॥

जा० भा० में कहा है—'विषादि दोषादतिसारतो वा कर्कस्य मध्यत्रिलवे मृतिः स्यात् । महाभ्रमप्लीहकगुल्मदोषैः कर्कांशदृक्के निधनं निरुक्तम्' (नि० अ० ११ श्लो०) ॥३०॥

सिंहराशिस्थ प्रथम, द्वितीय व तृतीय द्रेष्काण का फल

सलिलविषपादरोगात्सिंहाद्ये त्र्यंशके भवेत्पुंसाम् ।
मध्ये तृतीयभागे जलामयकृतो वनोद्देशे ॥ ३१ ॥
विषशस्त्रयोगदोषैरभिशापाद्वा तथा च पाताद्वा ।
अन्त्ये सिंहत्र्यंशे भवति हि मृत्युर्न सन्देहः ॥ ३२ ॥

युदि कुण्डली में २२वाँ द्रेष्काण, सिंह राशि का प्रथम द्रेष्काण हो तो जातक की जल से या विष से या पैर के रोग से मृत्यु होती है।

यदि सिंह राशिस्थ द्वितीय द्रेष्काण हो तो जातक की जलोदर रोग से वन के उद्देश में मृत्यु होती है।

यदि सिंह राशिस्थ तृतीय द्रेष्काण हो तो जातक की विष से या शस्त्र से या अभिशाप से या पतन से मृत्यु होती है इसमें सन्देह नहीं है ॥ ३१–३२ ॥

जा० भ० में कहा है—'विषाम्बुरोगैः श्वसनाम्बुरोगैरपानपीड़ा विषशस्त्रकैश्च । क्रमेण सिंहस्थदृकाणकेषु नूनं मुनीन्द्रैर्मरणं प्रदिष्टम्' (नि० अ० १२ श्लोक) ॥३१-३२॥

कन्या राशिस्थ प्रथम, द्वितीय, तृतीय द्रेष्काण का फल

आद्ये कन्यात्र्यंशे मस्तकरोगात्तथानि[1]लान्मृत्युः ।
व्यालगिरिदुर्ग[2]वनजो मध्ये भूपात्मजादथवा ॥ ३३ ॥
करभखरशस्त्रतोयादतिखातात्स्त्रीकृतान्नपानाद्वा ।
अन्त्ये कन्यात्र्यंशे नृणां मृत्युः सदा दृष्टः ॥ ३४ ॥

यदि कुण्डली में २२वाँ द्रेष्काण, कन्या राशि का प्रथम द्रेष्काण हो तो जातक की मस्तक रोग या वायुरोग से वा अग्नि से मृत्यु होती है।

यदि कन्या राशिस्थ द्वितीय द्रेष्काण हो तो जातक की सर्प से या पर्वत से या किले से गिरकर वा राजपुत्र से मृत्यु होती है।

यदि कन्या राशिस्थ तृतीय द्रेष्काण हो तो जातक को ऊँट के बच्चे से या गधा से या शस्त्र से या जल से या गड्ढे में गिरकर या स्त्री-सेवा, अन्न, पान से मृत्यु होती है ॥ ३३-३४ ॥

---

१ श्वसन । २ न्मृत्युः । ३ ऽनलात् । ४ वनदुर्गवक्षो ।

जा० भ० में कहा है—'कन्याद्यदृक्केऽनिलमौलिरुग्जो दुर्गाद्रिपाताच्च नृपैर्द्वितीये । खरोंष्ट्रशस्त्राम्बुनिपातकान्तानिमित्तजातं निधनं तृतीये' (नि०अ० १३ श्लोक) ॥३३-३४॥

तुला राशिस्थ प्रथम, द्वितीय, तृतीय द्रेष्काण का फल

आद्ये वणिक्त्रिभागे युवति[1]चतुष्पान्निपातदोषेण ।
मध्ये तु जठररोगैरन्त्ये व्यालाम्बुजातेभ्यः ॥ ३५ ॥

यदि कुण्डली में २२वाँ द्रेष्काण, तुला राशि का प्रथम द्रेष्काण हो तो जातक की स्त्री से या चतुष्पद (जानवर) से या गिरकर मृत्यु होती है ।

यदि तुला राशिस्थ द्वितीय द्रेष्काण हो तो जातक की पेट के रोग से, यदि तुला राशिस्थ तृतीय द्रेष्काण हो तो सर्प या जलजीव से मृत्यु होती है ॥ २५ ॥

जा० भ० में कहा है—'तुला दृकाणे प्रथमे निपातात्कलत्रतो वा पशुतोऽपि मृत्युः । नूनं द्वितीये जठरामयैश्च व्यालाज्जलाच्चापि भवेत्तृतीये' (नि० अ० १४ श्लोक) ॥२५॥

वृश्चिक राशिस्थ प्रथम, द्वितीय, तृतीय द्रेष्काण का फल

आद्येऽलिनस्त्रिभागे विषशस्त्रस्त्री[2]कृतान्नपानभवः ।
मध्ये तु वस्त्रभारस्रंसनरोगैर्भवति मृत्युः ॥ ३६ ॥
अन्त्ये तृतीयभागे लोष्टकपाषाण[3]जनितवेदनया ।
भवति हि मरणं ह्यथवा नृणां जङ्घास्थिभङ्गकृतम् ॥ ३७ ॥

यदि कुण्डली में २२वाँ द्रेष्काण, वृश्चिक राशि का प्रथम द्रेष्काण हो तो जातक की विष से या शस्त्र से या स्त्री द्वारा अन्न-पान से मृत्यु होती है ।

यदि वृश्चिक राशिस्थ द्वितीय द्रेष्काण हो तो वस्त्र के भार से या कम्प रोग से क्रमशः क्षीण होकर मृत्यु होती है ।

यदि वृश्चिक राशिस्थ तृतीय द्रेष्काण हो तो जातक की लोहा व पत्थर के आघात की पीड़ा से अथवा जाँघ की हड्डी टूटने से मृत्यु होती है ॥ ३६-३७ ॥

जा० भ० में कहा है—'पूर्वे दृकाणे खलु वृश्चिकस्य मृत्युर्विषान्नास्त्रभवोऽवगम्यः । भारश्रमाद्वा कटिवस्तिरोगैर्भवेद् द्वितीये त्रिलवे तु मार्गे । जङ्घास्थिभङ्गाश्मकलोष्ठकाष्ठैर्भवेत्तृतीये त्रिलवेऽलिराशौ' (नि० अ० १५ श्लोक) ॥ ३६–३७ ॥

धनुराशिस्थ प्रथम, द्वितीय, तृतीय द्रेष्काण का फल

चापस्याद्ये त्र्यंशे गुदानिलसमुद्भवैर्विविधरोगैः ।
मध्ये विषगुरुदोषैरनिलकृतैर्वा भवेन्मृत्युः ॥ ३८ ॥
अन्त्ये तृतीयभागे जलमध्ये तत्समुत्थितैर्वाऽपि ।
मृत्युर्नृणां दृष्टो जठरामयदोषसंभूतः ॥ ३९ ॥

यदि कुण्डली में २२ वाँ द्रेष्काण, धनु राशिका प्रथम द्रेष्काण हो तो जातक की गुदा वा वायु रोग से वा अनेक रोगों से, यदि धनु राशिस्थ द्वितीय द्रेष्काण हो तो विष

---

१ चतुष्पदनिपान । २ रसा । ३ घातेन ।

से या गुरु दोष से वा वायु रोग से, यदि धनु राशिस्थ तृतीय द्रेष्काण हो तो जल में डूब कर या जल जीवों से या उदर रोग से मृत्यु होती है ॥ ३८–३९ ॥

जा० भ० में कहा है—आद्ये द्दकाणे धनुषो मृतिः स्याद् गुदामयैश्चापि मरुद्विकारैः विदाहतो वा विषतः शराद्वा नाशो द्दकाणे धनुषो द्वितीये। भवेज् जलाद् वा जलचारिणो वा क्रोडामयाद् वा धनुषस्तृतीये (नि० अ० १५½ १९ श्लो०) ॥ ३८–३९ ॥

मकर राशिस्थ प्रथम, द्वितीय, तृतीय द्रेष्काण का फल

मकराद्ये द्रेक्काणे नृपहिंसाव्याघ्रकारणान्मृत्युः।
ऊरुविनाशादथवा जलचरसत्वाद्विषैकशफसर्पात् ॥ ४० ॥
दहनास्त्रतस्करेभ्यो ज्वरादमानुषविभेदनान्मध्ये।
अन्त्ये मकरत्र्यंशे स्त्रीणां मृत्युः सदा दृष्टः ॥ ४१ ॥

यदि कुण्डली में २२ वाँ द्रेष्काण, मकर राशि का प्रथम द्रेष्काण हो तो जातक की राजा से या हिंसा (कत्ल) से या सिंह से वा जाँघ टूटने से या जलचर जीव से, या विष से या घोड़ा या सर्प से, यदि मकर राशिस्थ द्वितीय द्रेष्काण हो तो अग्नि से या शस्त्र से या चोर से या ज्वर रोग से वा मनुष्येतर से वा विभेदन से, यदि मकर राशिस्थ तृतीय द्रेष्काण हो तो स्त्री के कारण मृत्यु होती है ॥ ४० ४१ ॥

जा० भ० में कहा है—पूर्वे द्दकाणे मकरस्य सिंहाद् व्याघ्राद् वराहाद्ध्वटकतो द्वितीये। पादैर्भुजङ्गैश्च तथा तृतीये चोराग्निशस्त्रज्वरतो हि मृत्युः (नि० अ० १८ श्लो०) ॥ ४०-४१ ॥

कुम्भराशिस्थ प्रथम, द्वितीय, तृतीय द्रेष्काण का फल

कुम्भे प्रथमत्र्यंशे स्त्रीभ्यस्तोयैस्तथा जठररोगैः।
ज्ञेयो मृत्युर्नृणां पर्वतगहनाद्द्विपादेर्वा ॥ ४२ ॥
मध्ये स्त्रीकृतदुःखैर्गुह्यजरोगैर्भवति मृत्युः।
अन्त्ये मिथुनचतुष्पदमुखरोगकृतैर्भवेत्पुंसाम् ॥ ४३ ॥

यदि कुण्डली में २२ वाँ द्रेष्काण, कुम्भराशि का प्रथम द्रेष्काण हो तो जातक की स्त्री से या जल से या उदर रोग से वा पर्वत, वन में सिंहादि से, यदि कुम्भ राशिस्थ द्वितीय द्रेष्काण हो तो स्त्री द्वारा किये हुए दुःखों से वा गुह्य रोगों से, यदि कुम्भराशिस्थ तृतीय द्रेष्काण हो तो मैथुन से या पशुओं से या मुख रोग से मृत्यु होती है ॥४२–४३॥

जा० भ० में कहा है—कुम्भस्य पूर्वे त्रिलवे तु पत्नीसुतोदरव्याधिकृतो द्वितीये। गुह्यामयात्पर्वतयातनाद्वा विषात्तृतीये मुखरुक् पशुभ्यः (नि० अ० १९ श्लो०) ॥४१–४३॥

मीनराशिस्थ प्रथम, द्वितीय, तृतीय द्रेष्काण का फल

अंशे मीनयुगाद्ये गुल्मग्रहणीप्रमेहयुवतीभ्यः।
जङ्घाजठरज[१]रोगैर्गजग्रहकृतैः समादिशेन्मृत्युम् ॥ ४४ ॥

---

[१] लजै।

नौभेदाज्जलमध्ये झषे दृगाणद्वितीयजातानाम् ।
अन्त्ये भवति हि मरणं कुत्सितरोगैर्न सन्देहः ॥ ४५ ॥

यदि कुण्डली में २२ वाँ द्रेष्काण, मीनराशि का प्रथम द्रेष्काण हो तो जातक की गुल्म वा संग्रहणी वा प्रमेह रोग से या स्त्री से, या जंघा या उदर रोग से या हाथी से, यदि मीन राशिस्थ द्वितीय द्रेष्काण हो तो जल में नौका के डूबने से, यदि मीन राशिस्थ तृतीय द्रेष्काण हो तो निन्दित रोगों से मृत्यु होती है। इसमें सन्देह नहीं है ॥ ४४–४५ ॥

जा० भ० में कहा है—मीनाद्यदृक्के ग्रहणीप्रमेहगुल्माङ्गनाभ्यश्च भवेद् द्वितीये । जलोदराद्यैश्च गजग्रहैर्वा जलस्य मध्येऽपि च नौप्रभेदात् । प्रान्त्ये दृकाणे पृथुरोमसँस्थे मृत्युः कुरोगैः परिवेदितव्य : (नि० अ० २० २०½ श्लो०) ॥ ४४–४५ ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां निर्याणफलं नाम षट्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥

सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ।

नष्टजातकाध्याय का कथन

जन्मविधावज्ञाते [1]प्रश्नोत्थविलग्नतो भवेत्स्पष्टम् ।
जन्मसमयो[2] नराणामतिप्रयत्नेन [3]संचिन्त्यम् ॥ १ ॥
दशविध[4]चिह्नैर्ज्ञात्वा जातं पुरुषं प्रसाधयेल्लग्नम् ।
अत एव प्रथमतरं तानि समस्तान्यहं वक्ष्ये ॥ २ ॥

जिस पुरुष (जातक) का जन्म समय वा गर्भाधान काल अज्ञात हो तो प्रश्नलग्न से आगे कहे हुए प्रकार से अधिक प्रयत्न पूर्वक अर्थात् सावधानी से उनके जन्म समय का ज्ञान करना चाहिये। पैदा हुए पुरुष को दस प्रकार से जानकर प्रथम लग्न का निर्णय करना चाहिये। इस लिये प्रथम मैं उन्हीं दश भेदों को कहता हूँ ॥ १–२ ॥

विशेष—आगे दश भेदों में से एक लग्न के भेद का वर्णन ग्रन्थकार कर रहा है, अर्थात् १२ लग्नों में जन्म लेने वाले व्यक्ति के स्वभाव और स्वरूप के जो चिन्ह होते हैं उनका पृथक्-पृथक् वर्णन है। इसी के आधार पर लग्न का निर्णय करना चाहिये ॥ १–२॥

मेष लग्न में जन्म लेनेवाले के स्वभावादि का ज्ञान

मेषविलग्ने जातः प्रचण्डरोषो विदेशगमनरतः ।
लुब्धः कृशोऽल्पसौख्यः सेर्ष्यः स्खलिताभिधायी च ॥ ३ ॥
पित्ता[5]निलोष्ठरोगैरभितप्ततनुः क्रियापटुर्भीरुः ।
मेषाक्षिधर्मपरश्चलोऽल्पमेधाः परार्थना[6]शकरः ॥ ४ ॥

---

१ श्नोऽथ । २ समये । ३ संचिन्त्य । ४ विधि । ५ पित्तानिलोष्ण । ६ रतः ।

भोक्ता ख्यातः कुनखो भ्रातृविहीनस्तथा पितृत्यक्तः ।
शीघ्रगतिर्मन्दसुतो विविधार्थयुतः सुशीलश्च ॥ ५ ॥
कुकुलोद्गतां [1]विशीलां [2]स्वजनेऽपि च निर्घृणां स्त्रियं लभते ।
अपकृष्टोदयसौख्यः कुधर्मसंवर्धितार्थश्च ॥ ६ ॥

जिसका मेष लग्न में जन्म होता है वह जातक—अधिक क्रोधी, विदेश व परदेश जाने में लीन, लोभी, दुर्बल, अल्पसुखी, ईर्ष्यालु, रुक रुक के बोलनेवाला अर्थात् हकला, पित्त, वात व ओष्ठ (अधर) वा गर्मी के रोग से पीड़ित शरीरधारी, कार्य-कुशल, डरपोक, बकरा या भेड़ा की आँख के समान नेत्रवाला, धर्मात्मा, चञ्चल, अल्प-बुद्धिवाला, दूसरे के धन का नाशक, भोगी, प्रसिद्ध, दूषितनाखून वाला, भाईयों से रहित, पिता से त्यक्त, जल्दी-जल्दी चलने वाला, अल्प पुत्रों से युक्त, अनेक प्रकार के धन से युत, सुशील, कुत्सित वंश में उत्पन्न व शीलता से रहित, अपने मनुष्यों में भी ग्लानि से हीन स्त्री को प्राप्त करनेवाला, अनुचित प्रकार से सुखी और कुत्सित धर्म से (कुकर्म) धन की वृद्धि करने वाला होता है ॥ ३–६ ॥

वृष लग्न में उत्पन्न के स्वभावादि का ज्ञान

वृषभविलग्ने शूरः क्लेशसहिष्णुः सुखी रिपुनिहन्ता ।
बाल्ये संचययुक्तः पृथुपीनललाटघोणगण्डोष्ठः ॥ ७ ॥
उद्युक्तकर्मसुभगः पितुर्जनन्याः सुशर्मकृद्दाता ।
विविधव्ययोऽतिरौद्रः कफानिलात्मा पिता कुमारीणाम् ॥ ८ ॥
स्वजनावमर्दनपरो [3]धर्मनिवृत्तोऽबलाप्रियश्चपलः ।
भोजनपाननिगृध्नुर्नानाम्बरभूषणैकमतिः ॥ ९ ॥

जिसका वृष लग्न में जन्म होता है वह जातक—वीर, क्लेश सहने वाला, सुखी, शत्रुओं का नाशक, बाल्यावस्था में सङ्ग्रही, विस्तृत व स्थूल मस्तक व नासिका व कपोल एवं ओष्ठ (अधर) वाला, कार्यों में उद्यत (संलग्न) वा कार्य पालक, सौभाग्यवान्, पिता तथा माता की आज्ञा का पालक अर्थात् अनुयायी, दानी, अनेक व्ययी, अधिक भयानक, कफ तथा वायु प्रकृति वाला, कन्याओं का पिता अर्थात् अधिक कन्या सन्तान-वाला, अपने मनुष्यों के तिरस्कार करने में तत्पर, अधार्मिक वा धर्मात्मा, स्त्रियों का प्रिय, चञ्चल, खाने पीने का शौकीन व अनेक प्रकार के वस्त्र व आभूषणों से युक्त व एक बुद्धिवाला होता है । ॥ ७–९ ॥

मिथुन लग्न में उत्पन्न के स्वभावादि का ज्ञान

मिथुनविलग्ने जातः प्रियदारो भूषणप्रदानरतिः ।
[4]पूज्यवचः सुवर्चस्वी द्विमातृको रिपुविनीतः स्यात् ॥ १० ॥
गान्धर्वशिल्पकुशलः श्रुतिशास्त्रार्थग्रहा[5]स्यकाव्यमतिः ।
सौम्योऽथ मण्डनरुचिर्मदवश्यः स्यात्सतां सत्यः ॥ ११ ॥

---

[1] सुशीलां । [2] व्यङ्गां स्वजनेऽघृणां । [3] नियुक्तो । [4] पूज्यतमः । [5] भास्य ।

असहिष्णुरनिष्टसुतः शठोऽल्पबन्धुश्च संस्थितो भवति।
हीनाधिकाङ्गपादो विनीतवृत्ताक्षिपक्ष्मा च ॥ १२ ॥
चण्डाकारो वश्यो दारुणरिपुपक्षसंहरणशीलः।
भूरत्नकाञ्चनोर्मि[1]कजलार्थभागी भवेत्पुरुषः ॥ १३ ॥

जिसका मिथुन लग्न में जन्म होता है वह जातक—स्त्री प्रिय, अलङ्कार दान का प्रेमी [सं० वि० वि० पुस्तक में 'प्रियादरादभाषणप्रदानरतिः' यह पाठ होने से मधुर आदरपूर्वक भाषण देने का प्रेमी] सम्मान्यवाणी वाला वा सम्मानित, सुन्दर तेजस्वी, दो माता वाला, शत्रु से नम्रता का व्यवहार करनेवाला, सङ्गीत व चित्रकारी में चतुर, वेदशास्त्र के अर्थ का ज्ञाता; हास्य व काव्य बुद्धिवाला, सौम्य (सरल), समर्थन की इच्छा वाला, अहङ्कार के वशीभूत, सज्जनों में सत्यता का व्यवहार करनेवाला, असहनशील, दूषित पुत्रवाला, धूर्त, अल्प बान्धवों वाला, न्यूनाधिक शरीर व चरण वाला, विनीत, गोल आँख व पलक वाला, प्रचण्डाकृति, वशीभूत, कठिन शत्रुपक्ष के नाश करने में समर्थ, भूमि-रत्न-सुवर्ण एवं जलोत्पन्नधन का भागी होता है ॥ १०–१३ ॥

कर्कलग्न में उत्पन्न के स्वभावादि का ज्ञान

कर्किणि लग्ने भीरुर्नैकनिवासश्चलप्रज्ञः।
मेधान्वितोऽतिधुर्यो गुह्यरुगार्तो निहन्ति रिपून् ॥ १४ ॥
अन्तर्विषमः कामी द्विजदेवात्यर्चनप्रदानरतः।
धर्मरतः कफबहुलो युवतितनु[2]संस्थितो गुणैर्नियतम् ॥ १५ ॥
कन्यानुजो न बन्धुर्दृष्टाल्पसुतो विगर्हितकुटुम्बः।
बहुमतकुत्सितयुवतिः परार्थभागी दृढग्राही ॥ १६ ॥
परदेशगः सुधीरः साहसकर्मा जलाधिगतवित्तः।
स्त्रीभूषणाम्बरसुखैर्भोगैश्च समन्वितो भवति ॥ १७ ॥

जिसका कर्क लग्न में जन्म होता है वह जातक—डरपोक, अनेक स्थानों में रहने वाला, अस्थिर बुद्धिवाला, बुद्धिमान्, अधिक भार वहन करने में समर्थ, गुप्तरोग से पीड़ित, शत्रु का नाशक, अन्तःकरण का कुटिल, कामी, ब्राह्मण व देवताओं की अधिक पूजा करने में लीन, धर्मात्मा, कफ की अधिकता अर्थात् शीत प्रकृति, स्त्री के समान देहधारी, गुणों से युक्त, बहिन से छोटा, भाई (बन्धु) से हीन, अल्प पुत्र वाला, निन्दित परिवार वाला, अधिक मत से युक्त, निन्दित स्त्री वाला, दूसरे के धन को प्राप्त करने वाला, दृढ़ प्रतिज्ञ, प्रवासी धैर्यवान्, साहसी, जल से धन प्राप्त करने वाला, स्त्री-वस्त्र-भूषण-सुख व भोग से युत होता है ॥ १४–१७ ॥

सिंह लग्न में उत्पन्न के स्वभावादि का ज्ञान

सिंहोदये प्रसूतो मांसरुचिर्नृपतिलब्धमानधनः।
धर्माच्च्युतोऽप्य[3]संस्थः कुटुम्बकार्येषु रतवामः ॥ १८ ॥

---

[1] नेप्सित। [2] तनुः संस्तुतो गणैर्नियतम्। [3] ह्यसंस्थ।

सिंहस्य समानमुखः स्थितिमान्गाम्भीर्यसत्वसंयुक्तः ।
धृष्टोऽल्पवचा लुब्धः परघातकरो बुभुक्षावान् ॥ १९ ॥
पर्वतवनानुसारी सुरोषणो दृढसुहृत्प्रमादी च ।
दुष्प्रसहो हतशत्रुः ख्यातसुतः प्रणतसाधुजनः ॥ २० ॥
कृष्यादिकर्मधनवान्व्यापाररतो बहुव्ययो भवति ।
वेश्या-नटी-नियमनाद्भार्यातश्चातिदन्तरोगाच्च ॥ २१ ॥

जिसका सिंहलग्न में जन्म होता है वह जातक—मांसप्रेमी, राजा से सम्मान व धन प्राप्त करने वाला, धर्म से रहित, कुटुम्ब कार्यों में अस्थिर, स्त्री में लीन, सिंह के समान मुख वाला, स्थिर, गम्भीर, बलवान्, ढीठ, अल्पभाषी, लोभी, दूसरे की हिंसा करने वाला भूखा, अर्थात् खाने की इच्छा करने वाला, पहाड़ व वन में घूमने वाला, सुन्दरक्रोधी, स्थिर मित्रता वाला, प्रमादी, दुःसह, शत्रु का नाशक, प्रसिद्ध पुत्रवान्, सज्जनों को नमस्कार (पूजा) करने वाला, कृषी आदि कार्य से धनी, व्यवसाय में तत्पर. वेश्या, नटी के प्रेम से व अपनी स्त्री के कारण तथा अधिक दाँत के रोग से धन व्यय करने वाला होता है ॥ १८-२१ ॥

कन्या लग्न में उत्पन्न के स्वभावादि का ज्ञान

षष्ठे साधुत्वयुतः शिक्षागान्धर्वकाव्यशिल्पपटुः ।
प्रियवल्गुकथाभाषी प्रणयी दानोपचाररतः ॥ २२ ॥
कन्याविलाससत्वस्थितिर्दयावान्परस्वभोक्ता च ।
भोक्ता देशभ्रमणः स्त्रीप्रकृतिर्विनयवाक् कितवः ॥ २३ ॥
भूमण्डलवर्धनभाक् सुभगः कामी यशोच्छ्रयं लभते ।
ऋजुधर्मवान्सुरूपः सुरुचिः कान्तो गुरूणां च ॥ २४ ॥
पापैरहार्यवृत्तैः सहजैश्च समं विरुद्धश्च ।
कन्याप्रजोऽनिलकफो नीचारिविवर्जितकथश्च ॥ २५ ॥

जिसका कन्या लग्न में जन्म होता है वह जातक—सज्जनता से युक्त, शिक्षा-सङ्गीत-काव्य-चित्रकारी में चतुर, प्रिय विपरीत कथा भाषी अर्थात् सुन्दर उल्टा-पुल्टा वाचक, विनयी, दान व उपचार में लीन, कन्याओं के साथ विलास करने वाला, सतो गुणी, दयालु, परधन भोगी, स्वयं भी रोगी, देशाटन कर्त्ता, स्त्री प्रकृति अर्थात् स्त्री के समान स्वभाव वाला, नम्रवाणी वाला, धूर्त, अपनी भूमि को बढ़ाने वाला, सौभाग्यवान्, कामी, उच्च यश को पाने वाला, विपरीत धर्म वाला, स्वरूपवान्, सुन्दर इच्छा वाला, गुरुजनों का प्रेमी, पापाचारी, सहोदरों से विपरीत, कन्या सन्तति वाला, वायु व कफ प्रकृति वाला, नीच (दुष्ट) व शत्रु से बात नहीं करने वाला होता है ॥ २१--२५ ॥

तुला लग्न में उत्पन्न के स्वभावादि का कथन

सप्तमलग्ने जातो विषमाङ्गः शीलवर्जितश्चपलः ।
उपचितहीनद्रविणः [1]सुखहृद्देहानुसारी[2] स्यात् ॥ २६ ॥
[3]कफवातिककलिरुचिको दीर्घमुखशरीरधर्ममतिवेत्ता ।
बहुदुःखभाक्सुमेधाः परावमर्दी सुचारुकृष्णाक्षः ॥ २७ ॥
अतिथिद्विजदेवरतिः [4]क्रतुक्रियावान्गुरुषु भक्तः ।
पूज्यः पितान्यभाजां जातः सत्यश्च मृदुशुक्लः ॥ २८ ॥
भ्रातृप्रियोऽर्थमुख्यः शुचिश्च पापोपचारबन्धुश्च ।
[5]कान्तः कुत्सितवृत्तो धर्मव्यवसायनीचमतिः ॥ २९ ॥

जिसका तुला लग्न में जन्म होता है वह जातक—विषमदेही, शालीनता से हीन, चञ्चल, धन की वृद्धि व ह्रास करने वाला सुख से हीन वा युत देहधारी, कफ-वायु प्रकृति वाला, कलह प्रेमी, लम्बा मुख शरीर वाला, धर्मात्मा, ज्ञाता, अधिक दुःख भोगी. सुन्दर बुद्धिमान्, दूसरे के मान का मर्दन करने वाला, सुन्दर काले नेत्र वाला, अतिथि-ब्राह्मण-देवता का भक्त, यज्ञ करने वाला, गुरुजनों का भक्त, पूजनीय, असहायों का पालक, सत्याचारो, कोमल सफेद देहधारी, भाइयों का स्नेही, प्रधान धनी, पवित्र, पापी बन्धुवाला, सुन्दर वा दानी, निन्दित आचरण वाला, धर्म व्यवसायी और दुष्ट बुद्धि वाला होता है ॥ २६–२९ ॥

वृश्चिकलग्न में उत्पन्न के स्वभावादि का ज्ञान

वृश्चिकलग्ने पुरुषः [6]पीनपृथुव्यायताङ्गतीक्ष्णश्च ।
अन्तर्विषमः शूरो मातुरभीष्टो [7]रणोद्यतस्त्यागी ॥ ३० ॥
गम्भीरपिङ्गलोद्धतदृक्सुमहाहृन्निमग्नजठरश्च ।
अन्तर्विलग्नघोणः साहसनिरतः स्थिरश्चण्डः ॥ ३१ ॥
विश्वासहासवश्यः पित्तरुगार्तः कुटुम्बसम्पन्नः ।
गुरुसुहृदां द्रोहरतः [8]पराङ्गनाकर्षणानुरतः ॥ ३२ ॥
बन्धोल्बणवक्त्रः स्याद्भूपतिसेवी सशत्रुपक्षः स्यात् ।
प्रयतोऽर्थदः सुयुवतिर्धर्मं प्रति वत्सलः क्षुद्रः ॥ ३३ ॥

जिसका वृश्चिक लग्न में जन्म होता है वह जातक—मोटा, लम्बा, चौड़ा शरीर वाला, तीखा, अन्तःकरण का कुटिल, बीर, माता का प्रिय, संग्राम प्रेमो, त्यागी (दान) गम्भीर पिङ्गल उद्धत नेत्रवाला, विशाल सुन्दर वक्षस्थल वाला, निमग्न पेट वाला अर्थात् अल्प उदर वाला, चपटी नासिका वाला, साहसी, स्थिर, उग्र, विश्वास व हास्य के वशीभूत, पित्त रोग से पीड़ित, कुटुम्ब से युक्त अर्थात् परिपूर्ण परिवार वाला, गुरू व मित्रों से द्वेष करने में लीन दूसरों की स्त्रियों के आकर्षण करने में तत्पर, स्पष्टभाषी

---

[1] सुखकृद्देहा । [2] कारी । [3] कक्षाधिकः खलरुचिः । [4] तनुः । [5] दाता । [6] तनुर्व्यां । [7] रतोद्य । [8] वरा ।

राजा का सेवक, शत्रु पक्ष से युक्त, संयमी, धनी, सुन्दर स्त्री वाला, धर्म का प्रेमी और क्षुद्र (अल्प) होता है ॥ ३०–३३ ॥

धनु लग्न में उत्पन्न के स्वाभावादि का ज्ञान

कार्मुकलग्ने जातः स्थूलरदस्तुङ्गपृथुलमूर्धा च ।
प्रणतानां प्रियकारी धृतिसत्वसमन्वितः सुनयः ॥ ३४ ॥
मलिनासिकोष्ठकुनखी ह्रीमानतिपीवरोरुजठरश्च ।
विज्ञानशास्त्रकुशलः प्रत्यग्रमतिः प्रकोपश्च ॥ ३५ ॥
बलिनाममर्षणपरः कुलमुख्यो नाशितारिपक्षश्च ।
संग्रामपदश्रेष्ठश्छलबहुलच्छिद्रबन्धुगुणः ॥ ३६ ॥
शिल्पादिकर्मनिरतः स्वकर्मवान्[1] बन्धुवर्गशुभदश्च ।
कान्तो [2]वदनाक्षिगदो नृपाद्धृतार्थः सुधर्मरतः ॥ ३७ ॥

जिसका धनु लग्न में जन्म होता है वह जातक—मोटे दाँत वाला, उच्च व विशाल मस्तक वाला, विनम्रों का हितकारी, धैर्य व बल से युक्त, सुन्दर न्याय वाला, दूषित नाक एवं ओठ वाला, बुरे नाखून वाला, लज्जा से युक्त, अधिक स्थूल जाँघ व पेट वाला, विज्ञान शास्त्र में चतुर, अग्रिम बुद्धि वाला, क्रोधी, बलवानों के मध्य में क्रोधी, कुल में प्रधान, शत्रुओं का नाशक, संग्राम (लड़ाई) में उच्च पद (स्थान) प्राप्त करने वाला, अधिक छलिया (कपटी), बान्धवों के गुणों में छिन्द्रान्वेषक, शिल्पादि (चित्रकारी) कार्यों में तत्पर, अपने कार्य में लीन, बन्धुवर्ग का शुभ (अच्छा) करने वाला, सुन्दर, मुख व नेत्र रोगी, राजा से अपहृत धन वाला और धर्म में लीन होता है ॥ ३४–३७ ॥

मकर लग्न में उत्पन्न के स्वभावादि का ज्ञान

मृगवदने लग्नस्थे कृशगात्रो भीरुरेणवक्त्रश्च ।
वातव्याधिभिरार्तः प्रदीप्ततुङ्गोग्रनासः स्यात् ॥ ३८ ॥
लघुसत्वोऽमिततनयो रोमचितः पाणिपादविस्तीर्णः ।
आचारगुणैर्हीनस्तृषार्तरामाभिराममतिः ॥ ३९ ॥
गिरिवनचारी शूरः शास्त्रश्रुतिशिल्पगेयवाद्यज्ञः ।
क्षुद्रबलः सकुटुम्बो द्विष्टो दुष्टश्च बन्धुशठः ॥ ४० ॥
कुत्सितशीलः कान्तः कुत्सितदारोऽनसूयको धनवान् ।
धर्मरतो नृपसेवी न चातिदाता सुखी सुभगः ॥ ४१ ॥

जिसका मकर लग्न में जन्म होता है वह जातक—दुर्बल देहधारी, डरपोक, हिरन के समान नेत्र वाला, वायु जन्य व्याधि (रोग) से दुःखी, चमकीली ऊँची उग्र नाक वाला, अल्प बलवान्, अमित (अधिक) पुत्र वाला, रोम से युत, विस्तृत हाथ पैर वाला सदाचार व गुणों से हीन, प्यास से व्याकुल, स्त्रियों में रमण करने की बुद्धि वाला,

---

[1] वाग्बन्धुः । [2] वदनाजिपदो ।

पर्वत व वन में घूँमने वाला, वीर, शास्त्र-वेद-शिल्प-गान व वाद्य का ज्ञाता, अल्प बली परिवार से युक्त, द्रोही, दुष्ट (नीच), बन्धुओं से धूर्तता करने वाला, कुपित स्वभाव वाला, सुन्दर, निन्दित स्त्री वाला, निन्दा नहीं करने वाला, धनवान्, धर्मात्मा, राजा का आश्रय करने वाला, अधिक दानी नहीं, सुखी और सौभाग्यवान् होता है ॥३८-४१॥

कुम्भ लग्न में उत्पन्न के स्वभावादि का ज्ञान

कुम्भविलग्ने पुरुषः सुनीचकर्मा कुलाधिको मूर्खः ।
स्फुटिताग्रनसो नीचः सक्रोधपरोऽलसात्मा च ॥ ४२ ॥
वैरप्रियोऽप्रहृष्टः पारुष्यद्यूतनीचदासीष्टः ।
उपहृतबन्धुः क्षुब्धः क्षयोदयो प्राप्तवित्तश्च ॥ ४३ ॥
पिशुनः शठो दरिद्रो विनष्टबन्धुर्बहिष्कृतो लोके ।
नो संमतः परेषां प्रकृष्टसम्पद्गुरुरतिश्च ॥ ४४ ॥
कुम्भोदयो न शस्तो लग्नविधौ सर्वथैव सत्यमते ।
यवनैर्वर्गोऽपि तथा चाणक्यो वदति नो वर्गम् ॥ ४५ ॥

जिसका कुम्भ लग्न में जन्म होता है वह जातक—नीच कार्य करने वाला, कुल में प्रधान, मूर्ख. आगे से फटी नाक वाला, नीच, क्रोधी, आलसी, कलहप्रेमी, अप्रसन्न, कठोर, जुआ और नीच दासी का प्रेमी, बन्धु द्रोही. क्षुब्ध, ह्रास बुद्धि वाला, धनागम कर्त्ता, चुगुल खोर, धूर्त, दरिद्री, बन्धुओं से रहित, संसार में बहिष्कृत, दूसरों से असंमत, उत्कृष्ट सम्पत्ति वाला व गुरुजनों का भक्त होता है ।

सत्याचार्यजी के मत में कुम्भ लग्न में जन्म सर्वथा प्रशस्त नहीं होता है । यवनाचार्यों के मत में किसी भी लग्न में कुम्भ राशि का वर्ग प्रशस्त नहीं होता है, किन्तु चाणक्य ऋषि के मत में कुम्भ राशि के वर्ग में दोष नहीं होता है ॥ ४२–४५ ॥

बृ० जा० में कहा है—'न कुम्भलग्नं शुभमाह सत्यो न भागभेदाद्यवना वदन्ति । कस्यांशभेदो न तथास्ति राशेरतिप्रसङ्गस्त्विति विष्णुगुप्तः'
(२१ अ० ३ श्लोक) ॥ ४२–४५ ॥

मीन लग्न में उत्पन्न के स्वभावादि का ज्ञान

मीनविलग्ने जातो धन्यः स्फुटनासिकोऽस्फुटाक्षश्च ।
विज्ञानकाव्यबुद्धिर्मानादरलब्धकीर्तिश्च ॥ ४६ ॥
विवृतोष्ठरदः कुष्ठी विदारितास्यो वृषादिसंलुब्धः ।
दाक्षिण्यप्रत्ययवान् मेषच्छागादिसम्पन्नः ॥ ४७ ॥
शौचाचारश्रुतिवाग्धृतिमान्[1] कन्याप्रजो विनीतश्च ।
सौम्यमतिः सत्वयुतो गान्धर्वस्त्रीरतिज्ञश्च ॥ ४८ ॥
बहुशीलोदारमतिर्भ्रातृधनोऽमर्षणः सुबन्धुश्च ।
बलवति राशावेतत्तदधिपतौ वा बलं [2]सर्वम् ॥ ४९ ॥

---

[1] श्रुत । [2] वक्षे ।

जिसका मीन लग्न में जन्म होता है वह जातक—प्रशंसनीय, स्पष्ट नाक वाला, अस्पष्ट नेत्रधारी, विज्ञान व काव्य में बुद्धिमान्, मानी, आदर व कीर्ति प्राप्त करने वाला, खुले हुए ओष्ठ व दाँत वाला, कोढ़ी, फटे हुए मुख वाला, बैल आदि का लोभी, चतुर, विश्वासी, भेड़-बकरी आदि से सम्पन्न, पवित्र, आचारवान्, वेदवादी, धैर्यवान्, कन्या सन्तान वाला, विनम्र, सरल बुद्धि वाला, बली, सङ्गीत व स्त्री-रति का ज्ञाता, अधिक शीलवान्, उदारचेता, भाई से धनलाभ करने वाला, अमर्षी व सुन्दर बन्धु वाला होता है। लग्नराशि वा लग्नेश बलवान् हो तो उक्त फल पूर्ण होता है ॥ ४६-४९ ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां नष्टजातकाध्याये लग्नगुणो
नाम सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ॥

अष्टचत्वारिंशोऽध्यायः ।

मेष राशिस्थ प्रथम व द्वितीय होरा का फल

रिक्तोत्कटदृक् क्रूरो धनपः शुक्लाधिकोग्रदाररतः ।
पीनोन्नतः प्रचण्डस्तस्करनाथः क्रियादिहोरायाम् ॥ १ ॥
चोरः प्रमादबहुलः खराग्रपादाङ्गुलिर्द्वितीयायाम् ।
स्निग्धायताक्षचतुरः पृथुपीनतनुः सुमेधाश्च ॥ २ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में मेष राशि हो व मेष राशि की प्रथम होरा हो तो जातक—अकारण ही नेत्रों को टेढ़ा करने वाला, क्रूर, धनी, अधिक शुभ्र, क्रूरा स्त्री में अनुरक्त, मोटा व उन्नत (ऊँचा) कद वाला, क्रोधी और चोरों का स्वामी होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में मेष राशि हो व मेष राशि की द्वितीय होरा हो तो जातक—चोर; अधिक प्रमादी, गधा के समान पैर की अंगुली का अग्रभाग, चिक्कण, बड़े-बड़े नेत्र वाला, चतुर, लम्बा व मोटा शरीरधारी और सुन्दर बुद्धिमान् होता है ॥ १-२ ॥

वृष राशिस्थ प्रथम व द्वितीय होरा का फल

श्यामो विशालचक्षुर्ललाटवक्षाः[1] प्रगल्भरतिवश्यः ।
स्थूलास्थितनुर्वृषभप्रथमार्धे स्याद्वपुष्मांश्च ॥ ३ ॥
पृथ्वायतवृत्ततनुमुदारसत्वं सुमूर्धजं जनयेत् ।
व्यस्तकटिं वृषभाक्षं वृषभे होराद्वितीयायाम् ॥ ४ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में वृष राशि हो व वृष राशि की प्रथम होरा हो तो जातक—कृष्णवर्ण, विशाल नेत्र व मस्तक और वक्षस्थल वाला, प्रगल्भ, रति के वशीभूत और मोटी हड्डी से युक्त देहधारी होता है।

---

[1] पक्षा।

यदि जन्म के समय लग्न में वृष राशि हो व वृष राशि की द्वितीय होरा हो तो जातक—मोटा, लम्बा व गोल शरीरधारी, उदार, बल से युक्त, सुन्दर केशधारी, दुर्बल कमर वाला और बैल के समान आंख वाला होता है ॥ ३-४ ॥

मिथुन राशिस्थ प्रथम व द्वितीय होरा का फल

मध्यायतोऽतिदक्षो मध्यतनुर्मृदुशिरोरुहांघ्रिश्च ।
मिथुनाद्यर्धे शूरः सुरतेप्सुः स्याद्धनी प्राज्ञः ॥ ५ ॥
मधुरायताक्षकामी शूरो मृदुकर्मठो वचस्वी च ।
परदारदत्तदेहो भवेन्नृमिथुनद्वितीयहोरायाम् ॥ ६ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में मिथुन राशि हो व मिथुन राशि की प्रथम होरा हो तो जातक—मध्यम विस्तृत शरीरधारी, अधिक चतुर, कोमल केश और चरण वाला, वीर, सुन्दर, रति का इच्छुक, धनी और विद्वान् होता है ।

यदि जन्म के समय लग्न में मिथुन राशि हो व मिथुन राशि की द्वितीय होरा हो तो जातक—सुन्दर दीर्घ नेत्र वाला, कामी, वीर, कोमल, कर्मठ, वक्ता, दूसरे की स्त्री में आसक्त होता है ॥ ५-६ ॥

कर्क राशिस्थ प्रथम व द्वितीय होरा का फल

उद्धतमूर्तिः सुशिराः प्रगल्भधीर्मन्ददृक्चलाङ्गशठः ।
श्यामतनुः सुकृतघ्नो भग्नाग्ररदः कुलीरहोरायाम् ॥ ७ ॥
द्यूते रतोऽध्वनिरतः पृथुवक्षाः सत्प्रमाणसम्पन्नः ।
कठिनशरीरः क्रोधी जायेत कुलीरभद्वितीयायम् ॥ ८ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में कर्क राशि हो व कर्क राशि की प्रथम होरा हो तो जातक—उद्दण्ड स्वरूप, सुन्दर मस्तक वाला, डीठ बुद्धि बाला, अल्पदृष्टि, चञ्चल देही, धूर्त, कृष्णवर्ण, कृतघ्न और आगे के टूटे हुए दांत वाला होता है ।

यदि जन्म के समय लग्न में कर्क राशि हो व कर्क राशि की द्वितीय होरा हो तो जातक—जुआ खेलने में अनुरक्त, पर्यटन करने वाला अर्थात् घुमक्कड़, विशाल वक्षस्थल वाला, सत्प्रमाणों से संयुक्त, कठिन देहधारी और क्रोधी होता है ॥ ७-८ ॥

सिंह राशिस्थ प्रथम व द्वितीय होरा का फल

रक्तान्तदृक्प्रगल्भो गुरुरायतविग्रहश्च सिंहाद्ये ।
जिह्मस्वभावसुखभागन्तःस्थिरकार्यसत्वश्च ॥ ९ ॥
स्त्रीमृष्टपानभोजनस्वत्रेप्सुर्बहुविचेष्टकठिनाङ्गः ।
दाताध्वरतोऽल्पसुतो भोगी स्थिरसौहृदोऽन्त्यार्धे ॥ १० ॥

यदि जन्म के समय लग्न में सिंह राशि व सिंह राशि की प्रथम होरा हो तो जातक—पूर्ण लाल नेत्र वाला, प्रगल्भ, श्रेष्ठ लम्बा देहधारी, कुटिल स्वभावी, सुखी, अन्तःकरण से स्थिर कार्य करने वाला और बलवान् होता है ।

यदि जन्म के समय लग्न में सिंह राशि हो व सिंह राशि की द्वितीय होरा हो तो जातक—स्त्री-मिठाई-पेय-भोजन व वस्त्र की इच्छा करने वाला, अधिक विशेष इच्छा करने वाला, कठोर देहधारी, दानी, मार्ग में अनुरक्त, अल्प पुत्र वाला, भोगी और स्थिर मित्रता वाला होता है ॥९-१०॥

कन्या राशिस्थ प्रथम व द्वितीय होरा का फल

सुकुमारमूर्तिकान्तः सुवाक्यगीताङ्गनारतिर्मधुरः ।
गान्धर्वविद्युवत्याः सुभगः पूर्वार्धजः श्रेष्ठः ।। ११ ।।
ह्रस्वो हठश्रुतार्थः स्थूलशिराः सम्मतो विवादी च ।
सेवालेख्यलिपिज्ञः क्षयवृद्धियुतः सुखी द्वितीयार्धे ।। १२ ।।

यदि जन्म के समय में लग्न में कन्या राशि हो व कन्या राशि की प्रथम होरा हो तो जातक—सुन्दर कोमल प्रिय शरीरधारी, सुन्दरवादी, संगीत व स्त्री का प्रेमी, मनोहर, संगीत जानने वाली स्त्री का सुभग, (प्यारा) और उत्तम होता है ।

यदि जन्म के समय लग्न में कन्याराशि हो व कन्या राशि की प्रथम होरा हो तो जातक—छोटा कद वाला, हठी, शास्त्रज्ञ, स्थूल (विशाल) मस्तक वाला, जन मान्य, विवादी, सेवा-चित्र व लिपि का ज्ञाता, ह्रास वृद्धि से युक्त और सुखी होता है ॥११-१२॥

तुला राशिस्थ प्रथम व द्वितीय होरा का फल

वृत्तानन उच्चनसस्त्वसितायतसुनयनो विलासी स्यात् ।
पीनायतोऽस्थिसारो धनवान्स्वजनप्रियस्तुलाद्यर्धे ।। १३ ।।
बह्वर्थभाक् स्थिरार्थः श्यामाकुञ्चितशिरोरुहश्च शठः ।
वृत्ताक्षस्त्वपरार्धे सुत्वग्घीनाग्रपादश्च ।। १४ ।।

यदि जन्म के समय लग्न में तुला राशि हो व तुला राशि की प्रथम होरा हो तो जातक—गोल मुख वाला, उन्नत नाक वाला, विशाल काले सुन्दर नेत्र वाला, विलासी, स्थूल व लम्बा देहधारी, पुष्ट हड्डी वाला, धनी और अपने मनुष्यों का प्रिय होता है ।

यदि जन्म के समय लग्न में तुला राशि हो व तुला राशि की द्वितीय होरा हो तो जातक—अनेक प्रकार के धन प्राप्त करने वाला, स्थिर धनी, काले घुंघराले केशवाला, धूर्त, गोल आंख वाला, सुन्दर त्वचा (खाल) वाला और पैर के अग्रभाग से हीन होता है ॥१३-१४॥

वृश्चिक राशिस्थ प्रथम व द्वितीय होरा का फल

रक्तान्तपिङ्गदृष्टिः साहसकर्मान्वितो रणे शूरः ।
दुष्टस्वभावरामाप्रियोऽर्थभाग्वृश्चिकाद्यर्धे ।। १५ ।।
विस्तीर्णोपचितायतपीनाङ्गः क्ष्माधिपोपसेवी स्यात् ।
बह्वृणमित्रसमेतः स्फुटिताक्षो वृश्चिकापरार्धे स्यात् ।। १६ ।।

यदि जन्म के समय लग्न में वृश्चिक राशि हो व वृश्चिक राशि की प्रथम होरा हो तो जातक—प्रान्त में लालिमा से युक्त पिङ्गल वर्ण के नेत्र वाला, साहसी, कार्य में तत्पर, युद्ध में वीर, दुष्ट स्वभाव वाला, स्त्री प्रेमी और धनी होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में वृश्चिक राशि हो व वृश्चिक राशि की द्वितीय होरा हो तो जातक—विशाल बढ़ी हुई लम्बी चौड़ी पुष्ट देह वाला, राजा का सेवन करने वाला अर्थात् राजकीय नौकर, अधिक कर्ज व मित्रों से युक्त और आँख में विकृति वाला होता है ॥१५-१६॥

धनु राशिस्थ प्रथम व द्वितीय होरा का फल

दारितपृथुमुखवक्षाः परिकुञ्चितनेत्रगण्डः स्यात्।
बाल्ये त्यक्तात्मगुरुश्चापाद्यर्धे तपस्वी च ॥ १७ ॥
पद्माक्षो दीर्घमहाबाहुः शास्त्रार्थवित्सुमूर्तिः स्यात्।
वाक्सुभगो धन्योऽपि च धनुरपरे निर्वृतो यशस्वी च ॥ १८ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में धनुराशि हो व धनु राशि की प्रथम होरा हो तो जातक—फटे (खुले) हुए मुख वाला, विशाल वक्ष स्थल वाला, टेढे नेत्र व कपोल (गाल) वाला, बाल्यावस्था में आत्मगुरु से अर्थात् पिता माता से त्यक्त और तपस्वी होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में धनुराशि हो व धनुराशि की द्वितीय होरा हो तो जातक—कमल के समान नेत्र वाला, लम्बे मोटे हाथ वाला, शास्त्रार्थ ज्ञाता, सुन्दर देहधारी, प्रिय वक्ता, प्रशंसनीय और यशस्वी होता है ॥ १७-१८ ॥

मकरराशिस्थ प्रथम व द्वितीय होरा का फल

श्यामो मृगाक्षधन्यः स्त्रीष्वजितः सौम्यमूर्तिशठ आढयः।
मृष्टाशनः [१]सुचेष्टो मृगाद्यभागे तनूच्चघोणः स्यात् ॥ १९ ॥
रक्तान्तदृष्टिरलसो गुरुदीर्घाटनपरो भवति मूर्खः।
श्यामो रोमचिताङ्गस्तीक्ष्णः सहसः सुरौद्रकर्मा च ॥ २० ॥

यदि जन्म के समय लग्न में मकर राशि हो व मकर राशि की प्रथम होरा हो तो जातक—कृष्ण वर्ण, हिरन के समान नेत्र वाला, धन्य (प्रशंसनीय) स्त्रियों के बीच में विजयी, कोमल स्वरूप, धूर्त, धनी, मीठा भोजन करने बाला, सुन्दर इच्छा वाला और कृश व ऊँची नाक वाला होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में मकर राशि हो व मकर राशि की द्वितीय होरा हो तो जातक—लाल प्रान्त आँख वाला, आलसी, लम्बी यात्रा करने वाला, मूर्ख, काले वर्ण का, रोम से युक्त देहधारी, तीखा (उग्र) साहसी और कठिन कार्य करने वाला होता है ॥ १९-२० ॥

---

[१] सुवेषो।

कुम्भ राशिस्थ प्रथम व द्वितीय होरा का फल

स्त्रीमित्रभागरसविन्मृदुलोऽल्पसुतश्च सद्गुणः शूरः ।
ताम्रो भास्वरवर्णो यानमतिः कुम्भपूर्वार्धे ॥ २१ ॥
आताम्रदारिताक्षः कृशः स्थिरोऽस्त्यल्पमूर्तिरलसः स्यात् ।
नैकृतिकः सुविषादी कृपणः कुम्भापरे सुशठः ॥ २२ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में कुम्भ राशि हो व कुम्भराशि की प्रथम होरा हो तो जातक—स्त्री व मित्र से युक्त, रस वेत्ता, कोमल, अल्प पुत्र वाला, अच्छे गुणों से युक्त, वीर, तेजस्वी, लाल वर्ण और घूँमने वाला होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में कुम्भ राशि हो व कुम्भराशि की द्वितीय होरा हो तो जातक—चारों तरफ से लाल व खुले हुए नेत्र वाला, दुर्बल, स्थिर, अल्पकद, कपटी, विषादी, लोभी और सुन्दर धूर्त होता है ॥ २१–२२ ॥

मीन राशिस्थ प्रथम व द्वितीय होरा का फल

ह्रस्वः पृथुचारुतनुर्महाल्ललाटो बृहद्वदनवक्षाः ।
स्त्रीदयितो मीनार्धे प्रथमे सुयशाः क्रियापटुः शूरः ॥ २३ ॥
दाता सुतुङ्गनासो निपुणो मेधान्वितः शुभदनेत्रः ।
नृपदयितः स्त्रीसुभगश्चारुर्मीनापरे सुवाक्यः स्यात् ॥ २४ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में मीन राशि हो व मीन राशि की प्रथम होरा हो तो जातक—छोटा कद, पुष्ट व सुन्दर शरीर धारी, विशाल मस्तक वाला, बड़ा मुख व छाती वाला, स्त्रियों का प्रेमी, सुन्दर यशस्वी, क्रिया (कार्य) कुशल और वीर होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में मीन राशि हो व मीन राशि की द्वितीय होरा हो तो जातक—दानी, सुन्दर ऊँची नाक वाला, चतुर, मेधावी, सुन्दर नेत्र वाला, राजा का प्रियपात्र, स्त्रियों का सौभाग्यवान् और सुन्दर वाणी का होता है ॥ २३–२४ ॥

होरा फल प्राप्ति ज्ञान

चन्द्रार्कयोरेकतरे बलस्थे होरापतिः पश्यति केन्द्रगो वा ।
होरा यथोद्दिष्टफलप्रदा स्याद्गर्भस्थसत्वस्य समुद्भवेषु ॥ २५ ॥

यदि कुण्डली में सूर्य व चन्द्रमा में एक बलवान् हो और उसको लग्नेश देखता हो वा लग्नेश केन्द्र में हो तो जातक को कथित होरा फल पूर्ण होता है ॥ २५ ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां होरागुणो नाम
अष्टचत्वारिंशोऽध्यायः ॥

एकोनपञ्चाशोऽध्यायः ।

मेष राशि लग्नस्थ प्रथम द्वितीय व तृतीय द्रेष्काण का फल

दाता हर्ता दीप्तः क्षयोदयी सङ्गरप्रचण्डः स्यात् ।
प्रियविग्रहस्त्रिभागे मेषाद्ये बन्धुपूग्रदण्डश्च ॥ १ ॥
स्त्रीचञ्चलो विहारी रतिमान्गीतप्रियो मनस्वी स्यात् ।
मित्रार्थभाक्सुरूपः स्त्रीवित्तरुचिर्द्वितीये च ॥ २ ॥
गुणवान्परदोषकरश्चलसत्वयुतो नरेन्द्रसेवी स्यात् ।
स्वजनप्रियोऽतिधर्मस्तृतीयभागे प्रियादरोऽज्ञश्च ॥ ३ ॥

यदि जन्म लग्न में मेष राशि हो तथा मेष राशि का प्रथम द्रेष्काण हो तो जातक—दानी, गिरकर उठने वाला हरण करने वाला, तेजस्वी, युद्ध में शूर; कलह प्रेमी व बन्धुओं को कठोर दण्ड देने वाला होता है ।

यदि मेष राशि का द्वितीय द्रेष्काण हो तो जातक—स्त्रियों में चञ्चल, बिहार करने वाला, रतिमान्, गान प्रिय, मनस्वी, मित्र से धन प्राप्त करने वाला, स्वरूपवान् तथा स्त्री के धन में इच्छा करने वाला होता है ।

यदि जन्म लग्न में मेष राशि हो और मेष राशि का तृतीय द्रेष्काण हो तो जातक—गुणी, दूसरों के दोष का प्रकाशक; अस्थिर बली, राज सेवी, अपने जनों (परिवार) का प्रेमी, अत्यन्त धार्मिक, आदर का प्रेमी व मूर्ख होता है ॥ १–३ ॥

वृष राशिस्थ तीनों द्रेष्काणों का फल

प्रियपानभोज्यनारीवियोगतप्तो वृषस्य पूर्वांशे ।
वस्त्रालङ्कारयुतो युवतिप्रकृतानुसारी स्यात् ॥ ४ ॥
सौम्यवपुस्त्रीसुभगो महाधरो रूपधनयुक्तः ।
बलवान्स्थिरो मनस्वी लुब्धस्त्रीणां प्रियो द्वितीये स्यात् ॥ ५ ॥
चतुरोऽल्पभाग्यवीरो मलीमसः स्याद्धनान्युपादाय ।
सन्तप्यते तु पश्चाद्वृषस्य भागे तृतीये च ॥ ६ ॥

यदि जन्म लग्न में वृष राशि हो व वृष राशि का प्रथम द्रेष्काण हो तो जातक—खाने पीने का शौकीन, नारी (स्त्री) के वियोग से पीड़ित, वस्त्र व भूषणों से युक्त तथा स्त्री की प्रकृति (स्वभाव) के अनुरूप कार्य करने वाला होता है ।

यदि लग्न में वृष राशि व वृष का दूसरा द्रेष्काण हो तो जातक—सुन्दर सरल शरीरधारी, स्त्रियों का प्रेमी, मोटे औष्ठ वाला, रूपवान्, धनवान्, बलनान्, स्थिर स्वभाव का, मनस्वी, लोभी और स्त्रियों का प्यारा होता है ।

यदि जन्म लग्न में वृष राशि एवं वृष राशि का तीसरा द्रेष्काण हो तो जातक—चतुर, अल्प भाग्य वाला, वीर, मलिन (दूषित) और धन का उपयोग करके पीछे दुःख करने वाला होता है ॥ ४–६ ॥

मिथुन राशिस्थ तीनों द्रेष्काणों का फल

मिथुनादिमे दृगाणे पृथूत्तमाङ्गो धनान्वितः प्रांशुः ।
कितवो गुणी विलासी नृपाप्तमानो वचस्वी स्यात् ।। ७ ।।
ह्रस्वाननस्वरूपः सौम्यवपुः सूक्ष्ममूर्धजतनुः स्यात् ।
धन्यो मृदुर्महाधीर्द्वितीयभागे प्रतापवान्सुयशाः ।। ८ ।।
स्त्रीद्वेषणो वपुष्मान्महाशिराः शत्रुसंयुतः प्रांशुः ।
रूक्षनखाङ्घ्रिकरतलश्चलार्थविभृतो दृढस्तृतीये स्यात् ।। ९ ।।

यदि जन्म लग्न में मिथुन राशि तथा मिथुन राशि का पहिला द्रेष्काण हो तो जातक—मोटे मस्तक वाला, धनी, ऊँचा, धूर्त, गुणी, विलासी, राजा से सम्मान प्राप्त करने वाला और अच्छा वक्ता होता है ।

यदि लग्न में मिथुन राशि व मिथुन राशि का दूसरा द्रेष्काण हो तो जातक—सुन्दर छोटा मुख वाला, सरल शरीरधारी, छोटे केश वाला, प्रशंसनीय, सौम्य स्वभावी, बड़ा बुद्धिमान्, प्रतापी और सुन्दर यशस्वी होता है ।

यदि लग्न में मिथुन राशि व मिथुन राशि का तीसरा द्रेष्काण हो तो जातक—स्त्री द्रोही, विशाल ललाट वाला, शत्रु से युक्त, लम्बा देहधारी, रूखे नख-पैर और हाथ वाला, अस्थिर धनी और दृढ़प्रतिज्ञ होता है ।। ७--९ ।।

कर्क राशिस्थ तीनों द्रेष्काणों का फल

कर्कटकादिमभागे देवब्राह्मणरतश्चलो गौरः ।
कृत्यकरश्च परेषां सुधीः सुमूर्तिः शुभाङ्गनः सुभगः ।। १० ।।
लुब्धः स्वाद्वदनपरः स्वप्नरतः स्त्रीजितोऽभिमानी स्यात् ।
सहजान्वितो विलासी चपलो बहुरुग्द्वितीये च ।। ११ ।।
स्त्रीचञ्चलोऽर्थभागी विदेशनिरतः प्रियासवः साधुः ।
काननतोयानुरतो दुर्दृष्टिर्माल्यवांस्तृतीये स्यात् ।। १२ ।।

यदि जन्म लग्न में कर्क राशि व कर्क राशि का पहिला द्रेष्काण हो तो जातक—देवता व ब्राह्मणों में लीन अर्थात् भक्त, चञ्चल, गौरवर्ण, दूसरों के कार्य करने वाला व परोपकारी, सुन्दर बुद्धिमान् वा पण्डित, सुन्दर शरीरधारी, अच्छी स्त्री वाला और सौभाग्यवान् होता है ।

यदि लग्न में कर्क राशि व कर्क राशि का दूसरा द्रेष्काण हो तो जातक—लोभी, मधुर खाने का प्रेमी, शयन करने में लीन, स्त्री से पराजित, अभिमानी, भाइयों से युक्त, विलासी चपल और अधिक रोगों से युक्त होता है ।

यदि लग्न में कर्क राशि व कर्क राशि का तीसरा द्रेष्काण हो तो जातक—स्त्रियों में अस्थिर, धनवान्, परदेशी, मदिरा का प्रेमी, सज्जन, वन व जल में अनुरक्त, बुरी दृष्टि वाला और पुष्पप्रिय होता है ।। १०–१२ ।।

सिंह राशिस्थ तीनों द्रेष्काणों का फल

सिंहादिद्रेष्काणे दाता भर्तारिनिर्जिगीषुः स्यात् ।
बहुधनयोषित्सुसुहृद्बहुनृपजनसेवकः सुसत्वश्च ॥ १३ ॥
सुरुचिरकारी दाता स्थिरो वपुष्मान्रणेप्सुः स्यात् ।
सुखभाक् श्रुतिधर्मरुचिर्विस्तीर्णमतिर्द्वितीये च ॥ १४ ॥
लुब्धः परस्वहरणे कल्यः स्तब्धो महामतिः कितवः ।
नायततनुमूर्तिः स्यान्नैकापत्यः प्रगल्भोऽन्त्ये ॥ १५ ॥

यदि जन्म लग्न में सिंह राशि व सिंह राशि का पहिला द्रेष्काण हो तो जातक—दानी, भर्ता अर्थात् भरण (पालन) करने वाला, शत्रु को जीतने वाला, अधिक धनवान्, अधिक स्त्री वाला, सुन्दर मित्रों से युक्त, अधिक राजाओं का सेवक और अच्छा बलवान् होता है ।

यदि लग्न में सिंहराशि व सिंहराशि का द्वितीय द्रेष्काण हो तो जातक––सुन्दर सत्कार्य कर्ता, दानी, स्थिर शरीरधारी, संग्राम (लड़ाई) की इच्छा करने वाला, सुखभोगी, वैदिक धर्म में प्रेम करने वाला और विशाल बुद्धि वाला होता है ।

यदि लग्न में सिंहराशि व सिंहराशि का तीसरा द्रेष्काण हो तो जातक––दूसरे के धन चुराने का लोभी, नीरोग, चकित, बड़ा बुद्धिमान्, धूर्त, अधिक चौड़ी देह का नहीं, अनेक पुत्र वाला और ढीठ होता है ॥ १३–१५ ॥

कन्या राशिस्थ तीनों द्रेष्काणों का फल

श्यामः सुवाग्विनीतः प्रांशुः सुकुमारमूर्तिरबलाद्ये ।
स्त्रीभ्योऽर्थभागनिष्ठो दीर्घशिरा मधुसमाक्षश्च ॥ १६ ॥
धीरो विदेशभागी शिल्पकथापण्डितः समरशौण्डः ।
वाचाटः श्रुतवाक्यो वनौकसां संमतो द्वितीये स्यात् ॥ १७ ॥
गीतापरार्धभागी सङ्गीतरतिर्नरेन्द्रदयितः स्यात् ।
ह्रस्वस्वरूपवेषश्चान्ते पृथुदृक्शिरस्कश्च ॥ १८ ॥.

यदि जन्म लग्न में कन्या राशि व कन्या राशि का पहिला द्रेष्काण हो तो जातक—काले वर्ण का, सुन्दर वाणी वाला, विनीत (नम्र) लम्बा कद, सुन्दर स्वरूप, स्त्रियों के द्वारा धन प्राप्त करने वाला, लम्बा ललाट वाला और सहद के समान नेत्र वाला होता है ।

यदि लग्न में कन्या राशि व कन्या राशि का दूसरा द्रेष्काण हो तो जातक—धैर्यवान्, परदेशवासी, चित्रकारी का पण्डित, युद्ध में वीर (क्रूर) वक्ता, शास्त्रयुक्त वाणी वाला और वनवासियों से सहमत होता है ।

यदि लग्न में कन्या राशि व कन्या राशि का तीसरा द्रेष्काण हो तो जातक—संगीत का प्रेमी व सङ्गीत का पूर्ण ज्ञाता, राजा का कृपा पात्र, छोटा कद वाला और अन्त में विशाल दृष्टि व मस्तक वाला होता है ॥ १६–१८ ॥

तुलाराशिस्थ तीनों द्रेष्काणों का फल

कन्दर्परूपनिपुणस्तुलादिभागेऽध्वसेवज्ञः ।
श्यामकला पण्यरतो नियोगधीरः सुमेधावी ॥ १९ ॥
पङ्कजविशालनेत्रः सुरूपवाक्साहसः[1] विलापी स्यात् ।
ख्यातः स्ववंशवर्धितवृद्धानुचरो द्वितीये च ॥ २० ॥
चपलः शठः कृतघ्नो विरूपजिह्मोपचितमूर्तिः ।
नष्टसुहृद्द्रविणयशाः स्वल्पमतिर्भागके तृतीये स्यात् ॥ २१ ॥

यदि जन्म लग्न में तुला राशि व तुला राशि का पहिला द्रेष्काण हो तो जातक—कामदेव के तुल्य स्वरूपवान्, चतुर, मार्ग सेवन की विधि का ज्ञाता, कृष्ण वर्ण, व्यापार में लीन, नियोग में धैर्यवान् और सुन्दर मेधावी होता है ।

यदि लग्न में तुला राशि व तुला राशि का दूसरा द्रेष्काण हो तो जातक––कमल के समान विशाल नेत्र वाला, सुन्दर वाणी वाला, साहसी, विलापी या कलाओं का ज्ञाता, विख्यात व अपने कुल मे उत्पन्न श्रेष्ठ वयो वृद्धों का अनुचर (सेवक) होता है ।

यदि लग्न में तुला राशि व तुला राशि का तीसरा द्रेष्काण हो तो जातक––चपल (चञ्चल) धूर्त, कृतघ्न, कुरूप, कुटिल, स्त्री-धन और यश का नाशक एवं लघुबुद्धि होता है ॥ १९-२१ ॥

वृश्चिक राशिस्थ तीनों द्रेष्काणों का फल

गौरः स्थिरः प्रचण्डो रणोत्कटः स्यान्नरो विशालाक्षः ।
स्थूलविशालशरीरः कलिप्रियो वृश्चिकाद्यांशे ॥ २२ ॥
मृष्टान्नपानचतुरश्चलेक्षणो हेमगौरमूर्तिः स्यात् ।
कान्तः परवित्तयुतः शीलकलावाग्द्वितीयेंऽशे ॥ २३ ॥
निःश्मश्रुरोमहिंस्रः पिङ्गाक्षमहोदरः प्रहर्ता च ।
सहजच्युतस्तृतीये पीवरबाहुः सुधीरहृदयश्च ॥ २४ ॥

यदि जन्म लग्न में वृश्चिक राशि व वृश्चिक राशि का पहिला द्रेष्काण हो तो जातक—शुभ्रवर्ण, स्थिर, उग्र, संग्राम प्रेमी, विशाल नेत्र वाला, मोटा व विशाल शरीर वाला और कलह प्रेमी होता है ।

यदि लग्न में वृश्चिक राशि व वृश्चिक का दूसरा द्रेष्काण हो तो जातक--मीठा भोजन व पान प्रिय, चतुर, चञ्चल नेत्र वाला, सुवर्ण के समान चमकदार शुभ्र शरीरधारी, सुन्दर, दूसरे के धन से युक्त, सुशील, और कलात्मक वाणी वाला होता है ।

यदि लग्न में वृश्चिक राशि व वृश्चिक राशि का तीसरा द्रेष्काण हो तो जातक––दाढ़ी मूँछ से रहित, हिंसा करने वाला, पिङ्गल नेत्र वाला, बड़ा पेट वाला, हरण कर्ता, भाईयों से हीन, मोटे हाथ वाला और सुन्दर धीरता से युक्त हृदय वाला होता है ॥ २२-२४ ॥

---

[1] किलापी ।

धनुराशिस्थ तीनों द्रेष्काणों का फल

परिमण्डलाक्षवक्त्रो गणेषु मुख्यो धनुर्दृगाणाद्ये।
स्वोपचितस्वाचारस्तथा मृदुर्भवति संजातः ॥ २५ ॥
शास्त्रार्थवित्प्रवक्ता क्रतुशतहर्ता द्वितीये च।
मन्त्रभृतां श्रेष्ठतमस्त्वनेकतीर्थायतनचारी ॥ २६ ॥
बन्धुप्रधानचतुरः सतां गतिर्धर्मभाक् तृतीयेऽपि।
[1]कामी पराङ्गनाभाक्रूपयशोभाजनो विजिष्णुश्च ॥ २७ ॥

यदि जन्म लग्न में धनुराशि व धनुराशि का प्रथम द्रेष्काण हो तो जातक—गोल नेत्र व मुख वाला, समुदाय में प्रधान, स्वयं वृद्धि करने वाला, सुन्दर आचरण कर्ता व कोमल हृदयवाला होता है।

यदि लग्न में धनुराशि व धनुराशि का द्वितीय द्रेष्काण हो तो जातक –शास्त्रार्थ का ज्ञाता, प्रवक्ता, अनेक यज्ञ कर्ता, मन्त्र वेत्ताओं में सर्वश्रेष्ठ और अनेक तीर्थ स्थलों में घूँमने वाला होता है।

यदि लग्न में धनुराशि व धनुराशि का तृतीय द्रेष्काण हो तो जातक—बन्धुओं में प्रधान, चतुर, सज्जन, धर्मात्मा, कामी वा अभिमानी, दूसरे की स्त्री का भोगी, रूपवान्, यशस्वी और विजयी होता है ॥२५–२७॥

मकर राशिस्थ तीनों द्रेष्काणों का फल

व्यालम्बभुजः श्यामः प्रथितयशोरूपकान्तिशठः।
स्मितभाषी मकराद्ये स्त्रीषु जितो वल्गुचेष्टधनयुक्तः ॥ २८ ॥
अल्पवदनश्च मध्ये चलः परस्त्रीधनापहर्ता स्यात्।
चतुरः सतां गतिज्ञः प्रदानशीलो दुरन्तपादः स्यात् ॥ २९ ॥
[2]वाचालः कलुषकृशो दीर्घाङ्गः पितृवियुक्तश्च।
लभते विदेशगमनाद्व्यसनान्यपि मृगमुखस्यान्ते ॥ ३० ॥

यदि जन्म लग्न में मकर राशि व मकर राशि का पहिला द्रेष्काण हो तो जातक—लम्बे हाथ वाला, कृष्ण वर्ण, विस्तृत यशवाला, सुन्दर रूपवान्, धूर्त, हस मुख, स्त्रियों में पराजित, सुन्दर इच्छा वाला और धन से युक्त होता है।

यदि लग्न में मकर राशि व मकर राशि का दूसरा द्रेष्काण हो तो जातक—छोटा मुख वाला, मध्य में चञ्चल, दूसरे की स्त्री व दूसरे के धन का अपहरण करने वाला, चतुर, सज्जनों की गति का ज्ञाता, दान में तत्पर और पैर में कष्ट से युत होता है।

यदि लग्न में मकर राशि व मकर राशि का तीसरा द्रेष्काण हो तो जातक—वाचाल, कलुषित, दुर्बल व विशाल देही, पिता से रहित और विदेश-गमन से व्यसनों को भी पाने वाला होता है ॥२८-३०॥

---

[1] मानी। [2] वाचाटः।

कुम्भ राशिस्थ तीनों द्रेष्काणों का फल

स्त्रीमानयशोभूतिः स्फीतप्रभवो घटस्याद्ये ।
प्रांशुः कर्मसु निष्ठो धनवान्नृपसेवको जातः ॥ ३१ ॥
लुब्धः समर्थमधुरो गौरः पिङ्गोद्धताक्षहास्यधनः ।
उद्धृष्टवचा मतिमान्बहुमित्रः स्याद्द्वितीये तु ॥ ३२ ॥
दीर्घः शठः प्रतापी कृशोऽल्पबाहुः सुतार्थभाक्स्तब्धः ।
वह्वनृतोऽन्तर्विषमो विदारिताक्षो रतिविदन्त्ये ॥ ३३ ॥

यदि जन्म लग्न में कुम्भ राशि व कुम्भराशि का प्रथम द्रेष्काण हो तो जातक—स्त्री-सम्मान-यश-ऐश्वर्य-पराक्रम से युक्त, उन्नत, कर्मठी, धनी और राजसेवक होता है।

यदि लग्न में कुम्भराशि व कुम्भराशि का द्वितीय द्रेष्काण हो तो जातक—लोभी, सामर्थ्यवान्, मनोहर, गौर (सफेद) वर्ण, पिङ्गल क्रूर (उद्धत) नेत्र वाला, हास्य-प्रिय, धनी, निःसंकोच बोलने वाला, बुद्धिमान् और अधिक मित्रों से युक्त होता है।

यदि लग्न में कुम्भ राशि व कुम्भ राशि का तृतीय द्रेष्काण हो तो जातक—लम्बा, धूर्त, प्रतापी, दुर्बल, छोटे हाथ वाला, पुत्र व धन से युक्त, चकित, अत्यन्त झूठा, अन्तःकरण का कुटिल, विशाल नेत्र वाला और कामशास्त्र का ज्ञाता होता है ॥ ३१-३३ ॥

मीन राशिस्थ तीनों द्रेष्काणों का फल

मधुपिङ्गाक्षो गौरो मेधावी सत्क्रियारतिज्ञश्च ।
सुखभागी मीनाद्ये [1]जलचरयुगले विनीतश्च ॥ ३४ ॥
नार्युपचारप्रवरो मृष्टान्नरतिः[2] परार्थभुक् [3]कामी ।
स्त्रीसज्जनातिदयितो वदतां श्रेष्ठो द्वितीये तु ॥ ३५ ॥
श्यामः कलासु निपुणः [4]पृथुपादसुहृत्प्रदानश्च ।
मृष्टान्नपानहास्यो मीनयुगान्त्ये भवेत्पुरुषः ॥ ३६ ॥

यदि जन्म लग्न में मीन राशि व मीन राशि का पहिला द्रेष्काण हो तो जातक—सहृद के समान पिङ्गल नेत्र वाला, गौरवर्ण, मेधावी, शुभ कार्य कर्त्ता, रति (काम) ज्ञाता, सुखी और नम्र होता है।

यदि लग्न में मीन राशि व मीन राशि का दूसरा द्रेकाण हो तो जातक—स्त्रियों के उपचार में श्रेष्ठ, मधुर भोजन प्रिय, दूसरे के धन का भक्षक, कामी, स्त्री व सज्जनों का पात्र और बोलने वालों में श्रेष्ठ वादी होता है।

यदि लग्न में मीन राशि व मीन राशि का तीसरा द्रेष्काण हो तो जातक—कृष्ण-वर्ण, कलाओं में चतुर, मोटे पैर वाला, मित्रों की सहायता करने वाला, मीठा भोजन-पान और हास्य प्रिय होता है ॥३४-३६॥

इतीरितोऽयं स्वगुणस्वभावो द्रेकाणजानां [5]गुणविद्विकल्पैः ।
द्रेकाणभे[6] वीर्यवति स्वदृष्टे द्रेकाणकल्पं तु फलं विदध्यात् ॥ ३७ ॥

---

[1] चारयुतो । [2] रुचिः । [3] कारी । [4] दान । [5] गुणचिह्नकल्पैः । [6] णगे ।

इस प्रकार द्रेष्काणजन्य गुणवेत्ता आचार्यों ने १२ राशिस्थ द्रेष्काणों के भेद से गुण और स्वभाव कथित किये हैं। यदि द्रेष्काण की राशि बलवान् हो व अपने स्वामी से दृष्ट हो तो द्रेष्काण का फल पूर्ण होता है ॥ ३७ ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां नष्टजातकाध्याये द्रेष्काणाध्यायो
नामैकोनपञ्चाशोऽध्यायः ॥

पञ्चाशोऽध्यायः ।

अतोंशके [1]लग्नगते तु वक्ष्ये वर्णस्वभावाकृतिलक्षणानि ।
प्रधानवीर्येंऽशपतौ शशीव तत्स्वामिराशिक्रमशो विधत्ते ॥ १ ॥

अव इस अध्याय में लग्नस्थ नवांश से जातक के वर्ण-स्वभाव-आकार के लक्षणों को कहता हूँ। यदि चन्द्रमा के तुल्य ही लग्नगत नवाँश पति बलवान् हो तो उस स्वामी ग्रह की राशि के समान क्रम से जातक फल पाता है ॥ १ ॥

मेष राशिस्थ प्रथम, द्वितीय, तृतीय नवांश का फल

अजसंस्थानमुखः स्यान्मेषाद्यांशेऽल्पनासिकाङ्गभुजः[2] ।
चण्डध्वनिर्विरूपः संकुचिताक्षः कृशोऽक्षताङ्गश्च ॥ २ ॥
श्यामगुरुस्कन्धभुजो ह्रस्वललाटः सुजत्रुकः स्फुटदृक् ।
दीर्घास्यनसो मृदुवाक्तृतीयभागे कृशाङ्घ्रिसन्धिश्च ॥ ३ ॥
व्यालुप्तकेशगौरो व्यस्तभुजश्चारुनयननासश्च ।
वाक्पण्डितस्तृतीये जातस्तु कृशोरुजानुजङ्घश्च ॥ ४ ॥

यदि जन्म या प्रश्न के समय लग्न में मेष राशि व मेष राशि का पहला नवांश हो तो जातक—भेड़ के समान मुख वाला, छोटी नाक व छोटे हाथ वाला, कठोर शब्द वाला, कुरूप, संकुचित नेत्र वाला, दुर्बल और अक्षत (अभङ्ग) देहधारी होता है।

यदि लग्न में मेष राशि व मेष राशि का दूसरा नवांश हो तो जातक—कृष्णवर्ण, मोटे कन्धा व मोटे हाथ वाला, छोटा ललाट (मस्तक) वाला, सुन्दर जत्रु (कन्धा व बाहु का जोड़) वाला, स्पष्ट दृष्टि का, लम्बा मुख व लम्बी नाक वाला, कोमल वाणी और दुर्बल पैर की सन्धि वाला होता है।

यदि लग्न में मेष राशि व मेष राशि का तीसरा नवांश हो तो जातक—लुप्त केशधारी, गौरवर्ण, शिथिल हाथ वाला, सुन्दर नेत्र व नासिका वाला, वाणी का पण्डित अर्थात् बोलने में चतुर और दुर्बल ऊरू-जानु-जंघा वाला होता है ॥ २-४ ॥

मेष राशिस्थ चतुर्थ, पञ्चम, षष्ठ नवांश का फक

विभ्रान्तदृक्प्रचण्डो ह्रस्वनसोऽटनखराङ्घ्रिरोमा च ।
अभ्रातृकः कृशः स्याच्चतुर्थनवभागजः पुरुषः ॥ ५ ॥

---

[1] गतेति । [2] रुहः ।

दृप्तो गजेन्द्रनयनः पृथुनासा भ्रूललाटको मध्ये।
पीनोपचिताग्रतनुः [1]खरतररोमाङ्घ्रितनुकेशः ॥ ६ ॥
श्यामो मृदुर्मृगाक्षो गुरुः कृशास्फिक्कठोरुचरणः स्यात्।
व्यस्तोदरकभुजांसः षष्ठे भीरुः सुबहुभाषी ॥ ७ ॥

यदि जन्म के समय में लग्न में मेष राशि व मेष राशि का चतुर्थ नवांश हो तो जातक--विशेष भ्रान्त दृष्टि वाला, उग्र, छोटी नाक वाला, घूमने वाला, गधे के समान कठोर पैर व रोम वाला, भाई से हीन तथा दुर्बल होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में मेष राशि व मेष राशि का पञ्चम नवांश हो तो जातक अभिमानी, हाथी के समान नेत्र वाला, मोटी नाक व सुन्दर भौंह व विशाल मस्तक वाला, मोटा व वर्धनशील शरीरधारी, अधिक कठिन रोम एवं पैर और अल्प केश वाला होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में मेष राशि व मेष राशि का छठा नवांश हो तो जातक--- काले रङ्ग का, कोमल हृदय, हिरन के समान नेत्रधारी, गुरुता से युक्त, पीछे का भाग दुर्बल, कठिन पैर वाला, विपरीत (शिथिल) पेट और हाथ वाला, डरपोक और सुन्दर अधिक बोलने वाला होता है ॥ ५-७ ॥

मेष राशिस्थ सप्तम, अष्टम, नवम नवांश का फल

दूर्वाङ्कुराभचपलः सितनेत्रः सप्तमे भवेत्पुरुषः।
कुलटापतिर्नृशंसो विशालविस्तीर्णमूर्तिः स्यात् ॥ ८ ॥
वानरमुखप्रवक्ता खरपिङ्गतनुश्च गुह्यगदः।
हिंस्रोऽनृतपापरतः सुहृत्प्रियोग्रः सदाष्टमजः ॥ ९ ॥
दीर्घः कृशो विहारी व्यस्तललाटश्रवोऽश्ववदनश्च।
बह्वभिधानाभिरतस्त्वनृजुर्नवमांशजो भवति ॥ १० ॥

यदि जन्म के समय लग्न में मेष राशि व मेष राशि का सप्तम नवमांश हो तो जातक -- घास के अङ्कुर के समान आभा वाला, चञ्चल, काले नेत्र वाला, वेश्या का पति, निन्दित और लम्बा-चौड़ा देह वाला होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में मेष राशि व मेष राशि का अष्टम नवमांश हो तो जातक—बन्दर के समान मुख वाला, प्रवक्ता, कठोर और पिङ्गल शरीरधारी, गुप्त रोगी, हिंसक, असत्य व पाप में लीन, मित्रों का प्रिय और उग्र स्वभावी होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में मेष राशि व मेष राशि का नवम नवांश हो तो जातक—लम्बा, दुर्बल, पर्यटन शील, विपरीत मस्तक व कान वाला, घोड़े के समान मुख वाला, अधिक नाम के पीछे लीन और टेढ़ा अर्थात् कुटिल होता है ॥ ८-१० ॥

इति मेषे ॥

---

[1] ततो।

वृष राशिस्थ प्रथम, द्वितीय, तृतीय नवांश का फल

समकृष्णतनुः स्तब्धः पूर्वमघान्त्येऽन्त्यकर्मा स्यात् ।
नीचः प्रकृतिविरुद्धो विषमाक्षिनिरीक्षणो वृषस्याद्ये ॥ ११ ॥
गम्भीरदृगलसात्मा विनतशिरावक्त्रकश्च लघुमेधाः ।
प्रतिकूलकर्ममिथ्याबहुप्रलापी द्वितीये स्यात् ॥ १२ ॥
मृद्वङ्गवान्वपुष्मान्सुनसस्पष्टायताक्षबृहदङ्गः ।
यज्ञादिकर्मनिरतः स्थिरपार्ष्णिकरस्तृतीयनवमांशे ॥ १३ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में वृष राशि व वृष राशि का पहिला नवांश हो तो जातक—समान कद, काला वर्ण, चकित, प्रथमावस्था में पाप व अन्त्यावस्था में दुष्ट कर्म करने वाला, नीच, प्रकृति के विपरीत आचरण कर्ता और कुटिल दृष्टि वाला होता है ।

यदि जन्म के समय लग्न में वृष राशि व वृष राशि का दूसरा नवमांश हो तो जातक—गम्भीर दृष्टि वाला, आलसी, नत मस्तक व अधोमुख वाला, अल्पबुद्धि, विपरीत कार्य कर्ता व अधिक झूठ बोलने वाला होता है ।

यदि जन्म के समय लग्न में वृष राशि व वृष राशि का तीसरा नवांश हो तो जातक—कोमल शरीरधारी, सुन्दर नाक वाला, स्पष्ट विस्तृत नेत्रधारी, लम्बा शरीर वाला, यज्ञादि कार्य में लीन, स्थिर पैर व स्थिर हाथ वाला होता है ॥ ११–१३ ॥

वृष राशिस्थ चतुर्थ, पञ्चम, षष्ठ नवांश का फल

ह्रस्वोदरः सुरोषो मेषाक्षः पिङ्गलस्त्वधनयुक्तः ।
परधनहरणाभिरतश्चतुर्थभागे वृषस्य नरः ॥ १४ ॥
व्यालः सुतुङ्गघोणो महर्षभाकारवक्त्रघनकेशः ।
स्यात्पञ्चमे विलासी बृहद्भुजस्कन्धकटिगौरः ॥ १५ ॥
स्वक्षः स्थिरः सुकेशः स्निग्धतनुर्वल्गुवाक्प्रगल्भः स्यात् ।
माधुर्यहास्यनिरतः कृशः सुनिपुणो भवेत्षष्ठे ॥ १६ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में वृष राशि व वृष राशि का चौथा नवमांश हो तो जातक—छोटा पेट वाला, क्रोधी, भेड़ के समान नेत्र वाला, पिङ्गल वर्ण, निर्धन और दूसरे के धन चुराने में लीन होता है ।

यदि जन्म के समय लग्न में वृष राशि और वृष राशि का पाँचवा नवांश हो तो जातक—जहरी, सुन्दर ऊँची नाक वाला, बड़े बैल के समान आकृति वाला, घुंघराले सघन केश वाला, विलासी, स्थूल हाथ कन्धा व कमर वाला और सफेद वर्ण का होता है ।

यदि जन्म के समय लग्न में वृष राशि व वृष राशि का छटा नवांश हो तो जातक—सुन्दर नेत्रधारी, स्थिर, सुन्दर केशवाला, चिक्कण शरीरधारी, मनोहर वाणी वाला, प्रौढ़ वा धृष्ट, मधुर हास्य में लीन, दुर्बल और सुन्दर चतुर होता है ॥१४–१६॥

वृष राशिस्थ सप्तम, अष्टम, नवम नवांश का फल

मृतसुतयुवतीषु रतो मनाक्प्रलम्बाग्रनासिकाक्षः स्यात् ।
उद्बद्धाङ्गः स्वजनद्वेषी गुरुपादसूक्ष्मकेशश्च ॥ १७ ॥
व्याघ्रेक्षणः सुदशनस्त्वजितस्फुटनासिकोऽल्पकर्मा स्यात् ।
उद्वृत्तनील केशोग्रनखो मुखरस्तथाष्टमजः ॥ १८ ॥
मान्योऽल्पसत्वभीरुः क्रोधी समरुचिरमूर्तिकितवः स्यात् ।
सञ्चितधनः प्रसिद्धः कृशस्त्वधस्तात्प्रलाप्यन्ते ॥ १९ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में वृष राशि व वृष राशि का सप्तम नवांश हो तो जातक—मरे हुए पुत्र व स्त्री में लीन, थोड़ी लम्बी नासिका व आँख का अग्रभाग वाला, दृढ़ शरीरधारी, अपने मनुष्यों का शत्रु, मोटा पैर और सूक्ष्म केशवाला होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में वृष राशि व वृष राशि का अष्टम नवांश हो तो जातक—वाघ के समान दृष्टि वाला सुन्दर दांत वाला, अजेय, फटी हुई नाक वाला, लघु कार्य कर्त्ता, घुँघराले नीले केश वाला, तीक्ष्ण नख (नाखून) धारी और प्रधान होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में वृष राशि व वृष राशि का नवाँ नवाँश हो तो जातक—पूजनीय, अल्प बली, डरपोक, क्रोधी, समान सुन्दर शरीरधारी, धूर्त, धन का संग्रह करने वाला, प्रसिद्ध, दुर्बल और पीछे प्रलाप करने वाला होता है ॥ १७-१९ ॥

॥ इति वृषभे ॥

मिथुन राशिस्थ प्रथम, द्वितीय, तृतीय नवांश का फल

रोमोपचितांसभुजो घनासितापाङ्गदृक्तथोच्चनसः ।
दूर्वाकाण्डश्यामः कृशाङ्घ्रिपाणिस्तृतीयभवनाद्ये ॥ २० ॥
घटशीर्षोऽशुचिकर्मा घातरुचिर्मध्यलग्नघोणः स्यात् ।
बहुभाषी बहुचेष्टो द्वितीयभागे तु विग्रहाधिपतिः ॥ २१ ॥
गौरोऽतिरक्तनयनः सुनासिकः समतनुः सुमेधा स्यात् ।
दीर्घाननोऽसितभ्रूर्वाचा चतुरस्तृतीयेंऽशे ॥ २२ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में मिथुन राशि व मिथुन राशि का पहिला नवांश हो तो जातक-रोम से युक्त कन्धा व हाथ वाला, सघन कृष्ण नेत्र प्रान्तों से युत आँख वाला, ऊँची नाक वाला, दूर्वा (घास) के समान कृष्ण वर्ण वाला और दुर्बल पैर व हाथ वाला होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में मिथुन राशि व मिथुन राशि का दूसरा नवांश हो तो जातक-घड़े के समान मस्तक वाला, अपवित्र कार्य कर्त्ता, हिंसा में प्रीति रखने वाला, मध्य नासिकावाला, अधिक बोलने वाला, अधिक इच्छा कर्त्ता और लड़ाई का मुखिया होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में मिथुन राशि व मिथुन राशि का तीसरा नवांश हो तो जातक–सफेद वर्णं, अधिक लाल आँख वाला, सुन्दर नाक वाला, समान शरीरधारी, सुबुद्धि, लम्बा मुख वाला, काली भौंह वाला और बोलने में निपुण होता है ।।२०-२२।।

मिथुन राशिस्थ चतुर्थं, पञ्चम, षष्ठ नवांश का फल

सुभ्रूललाटकामी नीलोत्पलमूर्तिविपुलवक्षाः स्यात् ।
सितदन्तो[1] मृदुवक्त्रः[2] प्रशस्तरोमाचितश्चतुर्थेंऽशे ।। २३ ।।
पृथ्वाननो बृहत्स्फिक्पीवरवक्षो भुजश्च खलः ।
स्थूलशिरा मायावी सितानुकूलेक्षणस्तु पञ्चमजः ।। २४ ।।
मध्वीक्षणः प्रलापी व्यस्तललाटः समस्सुतनुः ।
कितवश्चलश्च रुचिरोष्ठरदः षष्ठे तु सत्त्वयुतः ।। २५ ।।

यदि जन्म के समय लग्न में मिथुन राशि व मिथुन राशि का चौथा नवांश हो तो जातक–सुन्दर भृकुटी व मस्तक वाला, कामी, नीलकमल के समान देहधारी, विशाल छाती वाला, सफेद दांत वाला, कोमल मुखवाला और प्रशस्त रोमों से युक्त होता है ।

यदि जन्म के समय लग्न में मिथुन राशि व मिथुन राशि का पाँचवाँ नवांश हो तो जातक-मोटा मुख वाला, बड़े नितम्ब वाला, पुष्ट छाती व पुष्ट हाथ वाला, दुष्ट, स्थूल मस्तक वाला, मायावी, स्वच्छ और अनुकूल दृष्टि वाला होता है ।

यदि जन्म के समय लग्न में मिथुन राशि व मिथुन राशि का छटा नवांश हो तो जातक–सहद के समान दृष्टि वाला, प्रलापी, व्यस्त मस्तक वाला, समान सुन्दर देहधारी, धूर्त, चञ्चल (अस्थिर) सुन्दर ओष्ठ व दांतवाला और बलवान् होता है ।। २३-२५ ।।

मिथुन राशिस्थ सप्तम, अष्टम नवम नवांश का फल

ताम्रारुणाभवर्णः समुन्नताक्षो विशालवक्षाः स्यात् ।
शिक्षास्त्रशिल्पनिपुणो हास्यरतिः सप्तमे जातः ।। २६ ।।
श्यामो गुरुर्मनस्वी ललितो मधुराभिधानश्च ।
व्यस्तविवृद्धशरीरो दीर्घासितदृक्कलाविदष्टमजः ।। २७ ।।
वृत्तासितदृक्सुतनुः सिद्धो मेधाबलो रतिज्ञः स्यात् ।
विज्ञानकाव्यनिरतो नवमे जायेत मिथुनस्य ।। २८ ।।

यदि जन्म के समय लग्न में मिथुन राशि व मिथुन राशि का सातवाँ नवांश हो तो जातक–ताँबे के समान लाल शरीर वाला, ऊँची नाक वाला, विशाल वृक्षस्थल वाला, शिक्षा-अस्त्र-शिल्प (चित्रकारी) में चतुर और हँसने में प्रीति करनेवाला होता है ।

यदि जन्म के समय लग्न में मिथुन राशि का आठवाँ नवांश हो तो जातक–कृष्णवर्णं, श्रेष्ठ, मनस्वी, सुन्दर, मीठा वक्ता, विपरीत विशाल देहधारी, लम्बे काले नेत्र वाला और कलाओं का जानने वाला होता है ।

---

१. वक्त्रो । २. वक्रं ।

यदि जन्म के समय लग्न में मिथुन राशि व मिथुन राशि का नवाँ नवांश हो तो जातक–गोल काले नेत्र वाला, सुन्दर देहधारी, सिद्ध, मेधावी, रति ज्ञाता और विज्ञान व काव्य में तत्पर होता है ॥ २६-२८ ॥

॥ इति मिथुने ॥

कर्क राशिस्थ प्रथम, द्वितीय, तृतीय, नवांश का फल

निर्मलचारुसुगौरः सुमूर्धजः स्याद्विशालकुक्षिश्च ।
मङ्गलमुखोन्नताक्षस्तन्वङ्गभुजः कुलीराद्ये ॥ २९ ॥
[1]रक्तच्छवी रणोग्रः कलाप्रियः स्याद्विडालमुखनेत्रः ।
कर्किद्वितीयभागे त्यागी कृशजानुजङ्घश्च ॥ ३० ॥
गौरः सुनेत्रवाग्मी सुकुमारस्थूलयोषिदङ्गश्च ।
धीमान्मृदुकर्मरतस्तृतीयभागे भवेदलसः ॥ ३१ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में कर्क राशि व कर्क राशि का पहिला नवांश हो तो जातक–स्वच्छ व सुन्दर सफेद वर्ण का, सुन्दर केशधारी, विशाल पेट वाला, मङ्गल (सुन्दर) मुख वाला, ऊँची आँख वाला, कृश देह और दुर्बल हाथ वाला होता है ।

यदि जन्म के समय लग्न में कर्क राशि व कर्क राशि का दूसरा नवांश हो तो जातक–लालवर्ण, संग्राम में उग्र, कलाओं का प्रेमी, विडाल (विलाव) के समान मुख व नेत्र वाला, त्यागी और दुर्बल घेंटू व जाँघवाला होता है ।

यदि जन्म के समय लग्न में कर्क राशि व कर्क राशि का तीसरा नवांश हो तो जातक--गौरवर्ण, सुन्दर नेत्रधारी, वाग्मी, स्त्री देह के समान कोमल स्थूल देहधारी, बुद्धिमान्, कोमल कार्यकर्ता और आलसी होता है ॥ २९-३१ ॥

कर्क राशिस्थ चतुर्थ, पञ्चम, षष्ठ नवांश का फल

श्यामच्छविर्नतभ्रूर्विशालपीनोन्नतः सुनासाक्षः ।
क्षीणः पुरुषो दाता स्वजातिकार्यश्चतुर्थे स्यात् ॥ ३२ ॥
घण्टास्वरो नतास्यः सुसंहतभ्रूः सुदीर्घबाहुः स्यात् ।
सेवारतो विकर्मा मध्ये दुर्मर्षणोऽल्पमेधाश्च ॥ ३३ ॥
दीर्घविशालशरीरः प्रशस्तनयनो बहुप्रतापः स्यात् ।
गौरः सुवंशघोणो वक्ता षष्ठे च पृथुदन्तः ॥ ३४ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में कर्क राशि व कर्क राशि का चौथा नवांश हो तो जातक--काले वर्ण का, नीची भौंह वाला, विशाल मोटी व ऊँची देहवाला, सुन्दर नाक व नेत्र वाला, हीन, दानी और अपनी जाति का कार्य करने वाला होता है ।

यदि जन्म के समय लग्न में कर्क राशि व कर्क राशि का पाँचवां नवांश हो तो जातक--घण्टा के समान शब्द वाला, नम्र मुख, सुन्दर मिली हुई भौंह वाला, सुन्दर

---

१ छविश्चरणोढः । २ कृष्णश्च ।

लम्बी भुजा (हाथ) वाला, सेवा कार्य में तत्पर, निन्दित कार्यकर्ता, दुर्धर्ष और छोटी बुद्धि का होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में कर्क राशि व कर्क राशि का छटा नवांश हो तो जातक– लम्बा विस्तृत शरीर वाला, सुन्दर नेत्रधारी, अधिक प्रतापी, सफेद वर्ण, सुन्दर नासिका वाला, वक्ता और मोटे दांतवाला होता है ॥ ३२-३४ ॥

कर्क राशिस्थ सप्तम, अष्टम, नवम नवांश का फल

भिन्नशिरोरुहरोमा बृहत्तनुः स्यात्सिरालजङ्घश्च ।
परगृहरक्षणशीलः काकाकारश्च सप्तमजः ॥ ३५ ॥
घण्टाशिराः कुशिल्पी सुमुखभुजाङ्गश्च कूर्मगतिः ।
मध्यविलग्ननसः स्यादष्टमभागे तु कुष्ठश्च ॥ ३६ ॥
गौरो झषनेत्रगुरुर्मृदूदरोऽथ पृथुपीनवक्षाः स्यात् ।
दीर्घहनुर्लम्बोष्ठो महोरुकृशजानुगुल्फोऽन्त्ये ॥ ३७ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में कर्क राशि व कर्क राशि का सप्तम नवांश हो तो जातक––भिन्न (पृथक्-पृथक्) केश व रोम वाला, विशाल देहधारी, नसों से युक्त जांघ वाला, दूसरे के घर की रक्षा करने में तत्पर और कौआ के समान आकृति वाला होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में कर्क राशि व कर्क राशि का आठवां नवांश हो तो जातक – घण्टा के समान मस्तक वाला, निन्दित शिल्पकार, सुन्दर मुख व हाथ और शरीर वाला, कछुए की चाल के समान चलने वाला, बीच में नत नाक वाला और कोढ़ी होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में कर्क राशि व कर्क राशि का नवाँ नवांश हो तो जातक– गौर वर्ण, मछली के समान नेत्रधारी, श्रेष्ठ, कोमल पेट वाला, विशाल मोटा वक्षस्थल वाला, लम्बा ओठ व ठोड़ी वाला, स्थूल जंघा वाला और दुर्बल घुटना व पींड़री वाला होता है ॥ ३५–३७ ॥

॥ इति कर्कटके ॥

सिंह राशिस्थ प्रथम, द्वितीय, तृतीय नवांश का फल

मन्दोदरः प्रचण्डो रक्ताग्रनसो बृहच्छिराः शूरः ।
उन्नतमांसलवक्षाः सिंहे प्रथमे भवेद्भागे ॥ ३८ ॥
उन्नतविततललाटश्चतुरस्रतनुर्विलोमनेत्रश्च ।
दीर्घभुजोन्नतवक्षाः पृथूग्रघोणो द्वितीयेंऽशे ॥ ३९ ॥
रोमान्वितायतभुजश्चकोरनयनस्तलस्त्यागी ।
उन्नासिकस्तृतीये स्निग्धतनुर्बाहुवृत्तगलः ॥ ४० ॥

यदि जन्म के समय लग्न में सिंह राशि व सिंह राशि का प्रथम नवांश हो तो जातक—अल्प पेट वाला, प्रचण्ड (तीक्ष्ण), लालिमा से युक्त नाक का अग्रभाग, विशाल मस्तक वाला, वीर, ऊँचा व मांस से युक्त वक्षस्थल (छाती) वाला होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में सिंह राशि व सिंह राशि का दूसरा नवांश हो तो जातक—ऊँचा व विशाल मस्तक वाला, चौकोर देहधारी, टेढे नेत्र वाला, लम्वे हाथ वाला, ऊँची छाती वाला और स्थूल व उग्र नासिका वाला होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में सिंह राशि व सिंह राशि का तीसरा नवांश हो तो जातक—रोम से युत विस्तृत हाथ वाला, चकोर के समान नेत्रतल वाला, त्यागी, ऊँची नाक वाला, चिक्कण देहधारी और गोल हाथ व गला वाला होता है ॥ ३८-४० ॥

सिंह राशिस्थ चतुर्थ, पञ्चम, षष्ठ नवांश का फल

घृतमण्डगौरगात्रो दीर्घासितलोचनो मृदुशिरोजः।
भिन्नध्वनिश्चतुर्थे पृथुकरचरणश्च भेककुक्षिः स्यात् ॥ ४१ ॥
घण्टाशिरोऽल्पकेशो सितघोणाक्षश्च लोमशाङ्गतनुः।
लम्बोदरप्रचण्डो दंष्ट्रोत्कटपीनहृन्मध्ये ॥ ४२ ॥
स्रस्तालपरोमसूर्तिः स्निग्धसमासितविलोचनो दीर्घः।
श्यामः स्त्रीणां चतुरो विकत्थनो वाक्यपण्डितः षष्ठे ॥ ४३ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में सिंह राशि व सिंह राशि का चौथा नवांश हो तो जातक—मक्खन के समान सफेद शरीर वाला, लम्वी व काली आँख वाला, कोमल केश वाला, भिन्न (पृथक्) शब्द वाला, स्थूल हाथ व पैर वाला और मेढ़क के समान पेट वाला होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में सिंह राशि व सिंह राशि का पाँचवाँ नवांश हो तो जातक—घण्टा के समान मस्तक वाला, छोटे केश वाला, सुन्दर वा स्वच्छ नाक व आँख वाला, रोम से युक्त देहधारी, लम्वा पेट वाला, उग्र प्रकृति, विकार से युक्त दांत वाला और मोटी छाती वाला होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में सिंह राशि व सिंह राशि का छटा नवांश हो तो जातक—प्रशस्त व थोड़े रोम से युक्त शरीरधारी, चीकने व समान काले नेत्र वाला, लम्बा कद वाला, काला वर्ण, स्त्रियों के मध्य में चतुर, बकवादी और वाणी से पण्डित होता है ॥ ४१-४३ ॥

सिंह राशिस्थ सप्तम अष्टम नवम नवांश का फल

दीर्घाननः सिरालः पीनतनुः स्त्रीषु दुर्भगः कृष्णः।
स्यात्सप्तमे सुचण्डो रोमचितः कूटनिष्ठुराभाषी ॥ ४४ ॥
उत्कृष्टवाक्स्थिराङ्गः [1]सुभगो गम्भीरदृग्विकर्मा च।
निःस्वः कूटकरः स्यादष्टमभागे प्रसूतश्च ॥ ४५ ॥

---

१ सुभ्रूगं।

रासभमुखोऽसिताक्षो व्यालम्बभुजः सुपार्ष्णिजङ्घश्च ।
श्वासनिपीडितवक्षा नवमांशे जायते मनुजः ॥ ४६ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में सिंह राशि व सिंह राशि का सातवां नवांश हो तो जातक—लम्बा मुख वाला, नसों से युक्त, मोटा शरीर वाला, स्त्रियों का द्रोही, काला वर्णं, उग्र प्रकृति वाला, रोम से युक्त शरीर और कपटता से युत कठोर बोलने वाला होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में सिंह राशि व सिंह राशि का आठवां नवांश हो तो जातक—अच्छी वाणो वाला, स्थिर देहधारी, सौभाग्यवान्, गम्भीर दृष्टि वाला, दूषित कार्यकर्ता और नकली वस्तु बनाने वाला होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में सिंह राशि व सिंह राशि का नवां नवांश हो तो जातक गधा के समान मुख वाला, काले नेत्र वाला, लम्बे हाथ वाला, सुन्दर एढ़ी व जांघ वाला और श्वास रोग से पोड़ित छाती वाला होता है ॥ ४४–४६ ॥

॥ इति सिंहेः ॥

कन्या राशिस्थ प्रथम, द्वितीय, तृतीय नवांश का फल

सारङ्गाक्षो वक्ता प्रदानसम्भोगवान्धनाढ्यश्च ।
श्यामोन्नतहृदयः स्यात्षष्ठे प्रथमांशके जातः ॥ ४७ ॥
पूर्णाननः [1]सुचक्षुः [2]स्निग्धो मृदुवादशीलश्च ।
लम्बोदरश्चलः स्याद्द्वितीयभागे महोरुश्च ॥ ४८ ॥
स्फुटनासिकापुटः स्यात्प्रशस्तपादश्च पीनतनुभुजः[3] ।
विस्पष्टवाक्च गौरः कन्यासु सुहृत्तृतीयेंशे ॥ ४९ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में कन्या राशि व कन्या राशि का पहिला नवांश हो तो जातक—हिरन के समान नेत्र वाला, वक्ता, दानी, भोगी, धनवान्, कृष्णवर्णं और ऊँची छाती वाला होता है ।

यदि जन्म के समय लग्न में कन्या राशि व कन्या राशि का दूसरा नवांश हो तो जातक पूर्ण अर्थात् सुन्दर मुख वाला, सुन्दर नेत्रधारी, कान्तिमान् वा चुगल खोर वा कलह प्रेमी, सुन्दर बोलने में तत्पर, लम्बा पेट वाला, चञ्चल और मोटी जांघ वाला होता है।

यदि जन्म के समय कन्या लग्न में कन्या राशि का तीसरा नवांश हो तो जातक—फटी हुई नाक के पुट वाला, सुन्दर पैर वाला, मोटे हाथ वाला, अस्पष्ट वाणी वाला, गौर वर्णं और सुन्दर हृदय वाला होता है ॥ ४७–४९ ॥

कन्या राशिस्थ चतुर्थं, पञ्चम, षष्ठ नवांश का फल

श्रुतवान्स्त्रीषु च रमते सुकुमारो मधुररक्तगौरश्च ।
तीक्ष्णश्चतुर्थभागे प्रबोधनोधःकृशो द्विमूर्धा च ॥ ५० ॥

---

[1] वक्षा । [2] पिशुनः कलहप्रियः सुगूढवया । [3] पाणि ।

स्थूलोष्ठबाहुरुन्नततनुः पृथुशिरोरुहांसः स्यात् ।
पञ्चमजः पृथुवक्षा पराश्रयोद्बुद्धजङ्घश्च ॥ ५१ ॥
स्निग्धच्छविः सुवाक्यःशस्ततनुः शास्त्रकृतमतिप्रचुरः ।
लिपिलेख्यकलाभिज्ञः सुमनाः षष्ठांशजो विहारी च ॥ ५२ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में कन्या राशि व कन्या राशि का चौथा नवांश हो तो जातक—शास्त्र का ज्ञाता, स्त्रियों में अनुरक्त, कोमलाङ्ग, सुन्दर लालिमा से युक्त सफेद वर्ण वाला उग्र बुद्धिमान्, नीचे का भाग दुर्बल और दो मस्तक वाला होता है ।

यदि जन्म के समय लग्न में कन्या राशि व कन्या राशि का पाँचवाँ नवांश हो तो जातक—मोटे ओष्ठ व हाथ वाला, ऊँचा शरीर वाला, मोटे केश व कन्धा वाला, विशाल वक्षस्थल, दूसरे के अधीन और पुष्ट जांघ वाला होता है ।

यदि जन्म के समय लग्न में कन्या राशि व कन्या राशि का छटा नवांश हो तो जातक स्वरूपवान्, सुन्दर वाणी का, प्रशस्त देहधारी, शास्त्र कर्ता, अधिक बुद्धिमान्, लिपि-लेख्य-कला का जानकार, प्रसन्नचित्त और घूमने वाला होता है ॥ ५०–५२ ॥

कन्या राशिस्थ सप्तम, अष्टम, नवम नवांश का फल

ह्रस्ववदनोन्नतांसः स्निग्धभुजोऽन्ते च केशगौरः स्यात् ।
सप्तमजः पृथुजठरः पृथुतरचरणोऽम्बुभीरुश्च ॥ ५३ ॥
सुकुमारगौरदीर्घश्चित्रोन्नतदृक्प्रचण्डमानी स्यात् ।
व्यालम्बपीनबाहुः पिङ्गलरोमाष्टमे जातः ॥ ५४ ॥
ख्यातो मृदुसुखमूर्तिर्विशालनेत्रो बलासदृशसत्वः ।
चतुरो नवमेंऽशे स्यान्नतांसलेख्यादिविद्वांश्च ॥ ५५ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में कन्या राशि व कन्या राशि का सप्तम नवांश हो तो जातक—छोटा मुख वाला, ऊँचे कन्धा वाला, स्वस्थ हाथ वाला, अन्त समय में सफेद केशवाला, विशाल पेट वाला, अधिक मोटे पैर वाला और जल से भय करने वाला होता है ।

यदि जन्म के समय लग्न में कन्या राशि व कन्या राशि का आठवां नवांश हो तो जातक—सुन्दर कोमल सफेद वर्ण विशाल देहधारी, विचित्र ऊँची आंख वाला, उग्र, अभिमानी, लम्बी मोटी भुजा (हाथ) वाला और मधु के समान पिङ्गल रोम वाला होता है ।

यदि जन्म के समय लग्न में कन्या राशि व कन्या राशि का नवाँ नवांश हो तो जातक—प्रसिद्ध, कोमल सुख स्वरूप, विशाल नेत्रधारी, अतुल्य बलवान्, चतुर, नत कन्धा वाला व लेखादि का विद्वान् होता है ॥५३-५५॥

॥ इति कन्यायाम् ॥

तुला राशिस्थ प्रथम, द्वितीय, तृतीय नवांश का फल

गौरो विशालनेत्रः श्लाघी दीर्घाननोऽर्थगोप्ता स्यात् ।
नवपण्यकर्मकुशलस्तुलाधराद्यंशजः सुविख्यातः ॥ ५६ ॥
प्लुतमण्डलनेत्रः स्यात्करालदन्तो निमग्नमध्यस्तु ।
युगले विस्मृतहृदयः कुतनुर्घनसंहतभ्रूश्च ॥ ५७ ॥
गौरोऽश्वमुखः सुरदो महोन्नताक्षः कृशोऽपि लब्धयशाः ।
दीर्घकरोरुहघोणस्तृतीयजः स्यात्सुचरणश्च ॥ ५८ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में तुला राशि व तुला राशि का पहिला नवांश हो तो जातक—सफेद वर्ण, विशाल नेत्र वाला, अपनी प्रशंसा सुनने व कहने वाला, लम्बा मुख वाला, धन को छिपाने वाला अर्थात् धन रक्षक, नवीन व्यवसाय के कार्य में चतुर और प्रसिद्ध होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में तुला राशि व तुला राशि का दूसरा नवांश हो तो जातक—अधिक विशाल गोल आँख वाला, विकराल (उच्च) दाँत वाला, पतली या टेढ़ी कमर वाला, विस्तृत हृदय वाला, कुत्सित देहधारी और सघन मिली हुई भौंह वाला होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में तुला राशि व तुला राशि का तीसरा नवमांश हो तो जातक—सफेद वर्ण वाला, घोड़े के समान मुख वाला, सुन्दर दाँत वाला, बड़ी व ऊँची आँख वाला, दुर्बल, यश प्राप्त कर्त्ता, लम्बे नख व लम्बी नाक वाला व सुन्दर पैर वाला होता है ॥५६–५८॥

तुला राशिस्थ चतुर्थ, पञ्चम, षष्ठ, नवांश का फल

तन्वंसबाहुभीरुस्तून्नतदन्तः कृशो मृगतरलदृक् ।
ह्रस्वनसः सुविषादी श्यामो शीलश्चतुर्थजो भवति ॥ ५९ ॥
गम्भीरदृक्स्थिरात्मा सुहृत्प्रियः पंचमे ह्यमानी स्यात् ।
खरकेशः समनेत्रो मध्यप्रतिलग्नघोणदृप्तश्च ॥ ६० ॥
पीनाङ्गो गौरः स्याद्विशालनेत्रः सुनासिकावंशः ।
स्निग्धनखः सुनयज्ञः षष्ठेंऽशे शास्त्रविज्जातः ॥ ६१ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में तुला राशि व तुला राशि का चौथा नवांश हो तो जातक—दुर्बल कन्धा व हाथ वाला, डरपोक, ऊंचे दांत वाला, दुर्बल, हिरन के समान चञ्चल नेत्रधारी, छोटी नाक वाला, सुन्दर विषाद (क्षोभ) से युक्त, कृष्ण वर्ण व सुशील होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में तुला राशि व तुला राशि का पाँचवाँ नवांश हो तो जातक—गम्भीर दृष्टि वाला, स्थिर आत्मा, मित्रों का प्रेमी, अहङ्कार से रहित, रूक्ष केशधारी, समान आँख वाला और गर्व से युक्त चपटी नाक वाला होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में तुला राशि व तुला राशि का छटा नवांश हो तो जातक—मोटी देह वाला, सफेद वर्ण, विशाल नेत्रधारी, सुन्दर नाक वाला, चोकने नख वाला, सुन्दर नीति (न्याय) का ज्ञाता व शास्त्रज्ञ होता है ॥५९-६१॥

तुला राशिस्थ सप्तम, अष्टम, नवम नवांश का फल

रक्तावदातम[१]तिमान्गुरुह्रस्वतनुः कृशो ललाटे स्यात् ।
लुब्धः प्रचण्डदुर्गः सप्तमभागे मनस्वी च ॥ ६२ ॥
तुङ्गांसगण्डभोक्ता कठिनतनुर्दीर्घकृष्णभ्रूः ।
निर्णिक्तवाक्प्रशान्तः सद्वक्षस्त्वर्धमस्तकोऽष्टमजः ॥ ६३ ॥
स्वक्षः प्रसन्नगौरः समचारुतनुः पटुः कलाभिरतः ।
दाक्षिण्यहास्यनिरतो विटस्वभावो भवेन्नवमे ॥ ६४ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में तुला राशि व तुला राशि का सप्तम नवांश हो तो जातक—लालिमा से युक्त सफेद वर्ण वाला, बुद्धिमान्, मोटा व लघु कद शरीर, छोटा मस्तक, लोभी, उग्र स्वभावी और मनस्वी होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में तुला राशि व तुला राशि का आठवाँ नवांश हो तो जातक—ऊँचे कन्धा व कपोल वाला, भोगी, कठोर देहधारी, लम्बी व काली भोंह वाला, निश्चित वाणी वाला, शान्त स्वभाव, सुन्दर वक्ष स्थल (छाती) वाला व खण्डित मस्तक वाला होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में तुला राशि व तुला राशि का नवां नवांश हो तो जातक—सुन्दर नेत्रधारी, प्रसन्नचित्त, सफेद वर्ण, समान सुन्दर शरीरधारी, चतुर, कलाओं में लीन, चतुरता से युक्त व हँसने में तत्पर और क्षुद्र स्वभावी होता है ॥ ६२–६४ ॥

॥ इति तुलायाम् ॥

वृश्चिक राशिस्थ प्रथम, द्वितीय, तृतीय नवांश का फल

ह्रस्वोन्नतोष्ठघोणः सुललाटः स्याद्दढाङ्गगौरश्च ।
दर्दुरकुक्षिर्घटकोऽष्टमराशौ प्रथमनवभागे ॥ ६५ ॥
गौरः पृथ्वायतहृद्बाहुस्ताम्रोग्रदृग्द्वितीये स्यात् ।
उद्वृत्तबलनिहन्ता साहसकृदनल्पकेशश्च ॥ ६६ ॥
प्राज्ञो दृढांसबाहुः प्रयत्नकोशो विशुद्धवाक्यः स्यात् ।
कानीनको वपुष्मान्गौरो रुचिराधरस्तृतीयेंऽशे ॥ ६७ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में वृश्चिक राशि व वृश्चिक राशि का पहिला नवांश हो तो जातक—लघु व उच्च ओठ व नाकवाला, सुन्दर मस्तकधारी, पुष्ट व सफेद देहधारी, मेढक के समान पेट वाला और दलाल होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में वृश्चिक राशि व वृश्चिक राशि का दूसरा नवांश हो तो जातक—गौर वर्ण, पुष्ट व विशाल हृदय एवं हाथ वाला, लाल व क्रोध युक्त नेत्रधारी, शत्रु सेना के बल का नाशक, साहसी और अधिक केश वाला होता है।

---

[१] रति।

यदि जन्म के समय लग्न में वृश्चिक राशि व वृश्चिक राशि का तीसरा नवांश हो तो जातक—विद्वान्, मजबूत कन्धा व हाथ वाला, प्रयत्न से धनी, विशुद्ध वाणी वाला होता है ॥६५–६७॥

वृश्चिक राशिस्थ चतुर्थं, पञ्चम, षष्ठ नवांश का फल

परदारद्रोहरतिः क्षेप्ता धीरश्चतुर्थजो दीर्घः।
श्यामोऽसितकेशाक्षो नटप्रगल्भश्च पीनरोमांसः ॥ ६८ ॥
गम्भीरस्ताम्राक्षो मग्ननसः पञ्चमे धीरः।
मृष्टोदरोग्रकर्मा व्यस्तदृढाङ्गो यशस्वी स्यात् ॥ ६९ ॥
धृष्टो वरिष्ठबुद्धिः पृष्ठोच्चनसो गम्भीरसत्वः स्यात्।
सुनयः प्रचण्डकर्मा षष्ठे दक्षोऽल्पकचघनभ्रूश्च ॥ ७० ॥

यदि जन्म के समय लग्न में वृश्चिक राशि व वृश्चिक राशि का चौथा नवांश हो तो जातक—दूसरे की स्त्री व विद्रोह में तत्पर, कार्यं प्रेरक या कार्यं में नियुक्ति कर्त्ता, धैर्यवान्, दीर्घ देहधारी, कृष्ण वर्णं, काले केश व काले नेत्र वाला, नट (नाचने वाला) धृष्ट, मोटे रोम व कन्धा वाला होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में वृश्चिक राशि व वृश्चिक राशि का पाँचवा नवांश हो तो जातक—गम्भीर, लाल नेत्र वाला, चपटी नाक वाला, धैर्यवान्, शुद्ध उदर (पेट) वाला, कठिन कार्यं कर्ता, विपरीत मजबूत शरीरधारी व यशस्वी होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में वृश्चिक राशि व वृश्चिक राशि का छटा नवांश हो तो जातक—ढीठ, उत्तम बुद्धि वाला, ऊँची पीठ व ऊँची नाक वाला, अधिक बली, सुन्दर न्याय वाला, उग्र कार्यं कर्त्ता, चतुर, बड़े केश वाला और सघन भौंह वाला होता है ॥६८–७०॥

वृश्चिक राशिस्थ सप्तम, अष्टम, नवम नवांश का फल

दारितमुखः स्थिराङ्गः प्रविकीर्णरदः शिरावनद्धाङ्गः।
निम्नोदरः प्लुताक्षः स्रस्ततनुः सप्तमे भवेदंशे ॥ ७१ ॥
स्फुटिताग्रनसः कालो विपन्नशीलो मलीमसाङ्गः स्यात्।
भिन्नोत्कटैः शिरोजैः सन्त्यक्तमतिस्तथाष्टमजः ॥ ७२ ॥
गौरो मृगाकृतिमृदुः प्रशान्तपिङ्गाक्षरोमदृढपीनः।
सुसमेतश्च गुरूणां मतः प्रजातो नवमभागे ॥ ७३ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में वृश्चिक राशि व वृश्चिक राशि का सातवाँ नवांश हो तो जातक—खुले हुए मुख वाला, स्थिर देहधारी, छोटे-बड़े लघु वृहत् दांत वाला, नसों से युक्त शरीर वाला, संकुचित पेट वाला उत्तेजित नेत्र वाला और सुन्दर देहधारी होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में वृश्चिक राशि व वृश्चिक राशि का आठवां नवांश हो तो जातक—आगे से फटे हुई नाक वाला, काल स्वरूप अर्थात् कृष्ण वर्णं, विपत्ति से युक्त, दूषित देहधारी, विभिन्न उत्कट केश वाला और बुद्धिहीन होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में वृश्चिक राशि व वृश्चिक राशि का नवां नवांश हो तो जातक सफेद वर्ण, हिरन के समान कोमल, शान्तचित्त, पिङ्गल नेत्र वाला, मोटे मजबूत रोम वाला, सुन्दरता से युक्त और गुरुजनों से सम्मत होता है ॥७१–७३॥

॥ इति वृश्चिके ॥

धनु राशिस्थ प्रथम, द्वितीय, तृतीय नवांश का फल

सुबृहन्नसोजदृष्टिः स्फुटाग्रभाषी सुदन्तरोमा च ।
गौरः सुबद्धवृषणश्चापाद्यांशे प्रचण्डः स्यात् ॥ ७४ ॥
प्रोत्तुङ्गशिराः स्थिरविद्विस्तीर्णाक्षो गुरुस्फिगूरुश्च ।
विकृताग्रनसो दीर्घो महाहनुः स्याद्द्वितीयेंऽशे ॥ ७५ ॥
शिक्षाशास्त्रमतिज्ञः प्रगल्भगम्भीरमूर्तिसुनयश्च ।
स्त्रीवल्लभो मनस्वी तृतीयजो हास्यशिल्पज्ञः ॥ ७६ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में धनु राशि व धनु राशि का पहिला नवांश हो तो जातक सुन्दर बड़ी नाक वाला, विषम दृष्टि, स्पष्ट व आगे बोलने वाला, सुन्दर दाँत व रोम से युक्त, गौरवर्ण सुन्दर दृढ अण्डकोश वाला और उग्र होता है ।

यदि जन्म के समय लग्न में धनु राशि व धनु राशि का दूसरा नवांश हो तो जातक––उन्नत मस्तक वाला, स्थिर ज्ञाता, विशाल नेत्रधारी, मोटी कमर व मोटी जाँघ वाला नाक का आगे का भाग विकार से युक्त, लम्बी आकृति और स्थूल ठोड़ी वाला होता है ।

यदि जन्म के समय लग्न में धनु राशि व धनु राशि का तीसरा नवांश हो तो जातक––शिक्षा व शास्त्र में उत्तम मति (बुद्धि) वाला अर्थात् ज्ञाता, प्रौढ़, गम्भीर स्वरूप, सुन्दर न्याय का जानकार, स्त्री का प्यारा, मनस्वी और हास्य व चित्रकारी का ज्ञाता होता है ॥७४–७६॥

धनु राशिस्थ चतुर्थ, पञ्चम, षष्ठ नवांश का फल

दक्षो मधुमण्डलदृक्गौरः कच्छपविवृद्धकुक्षिश्च ।
प्राज्ञो नटः सुकेशः पृथुशुभमूर्तिश्चतुर्थे स्यात् ॥ ७७ ॥
पृथुकर्णनेत्रवदनः प्रबद्धहरिविग्रहो महाभ्रूः स्यात् ।
पीनोन्नतांसहन्ता पञ्चमजो गूढरोमदृढबुद्धिः ॥ ७८ ॥
स्निग्धासितान्तपृथुदृक् महाललाटः सुमूर्तिकाव्यरतः ।
पृथुपीनमुखो हीनः षष्ठे विद्वत्कथः सुधनः ॥ ७९ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में धनु राशि व धनु राशि का चौथा नवांश हो तो जातक—चतुर, सहद के रङ्ग के समान गोल आँख वाला, सफेद वर्ण, कछुए के समान पेट वाला, बुद्धिमान्, नाचने वाला, सुन्दर केशधारी और विशाल सुन्दर शरीरधारी होता है ।

यदि जन्म के समय लग्न में धनु राशि व धनुराशि का पाँचवां नवांश हो तो जातक—विशाल कान आँख व मुख वाला, सुगठित सिंह के समान शरीरधारी, बड़ी भौंह वाला, मोटे कन्धे वाला, हिंसक, रोम रहित और स्थिर बुद्धि वाला होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में धनु राशि व धनु राशि का छटा नवांश हो तो जातक—स्निग्ध काले प्रान्तों से युक्त विशाल नेत्र वाला, बड़ा मस्तक वाला, सुन्दर स्वरूप, काव्य में तत्पर, मोटा व विशाल मुख वाला, असहाय, विद्वत्ता पूर्ण वाणी वाला और सुन्दर धनी होता है ॥७७–७९॥

धनुराशिस्थ सप्तम, अष्टम, नवम नवांश का फल

श्यामो मृदुर्वचस्वी तुङ्गशिराः सङ्ग्रहानुसन्धिरतः।
दीर्घो विशालनयनो दाक्षिण्यचण्डश्च सप्तमजः ॥ ८० ॥
चिपिटाग्रनासिकः स्याद्विस्तीर्णशिराः सुबद्धवैरश्च।
विभ्रान्तदृक्प्रलापी[1] गुरुष्वभिमतोऽष्टमांशभवः ॥ ८१ ॥
गौरो हयाकृतिमुखो दीर्घासितदृक् तथाल्पवाक्यः स्यात्।
सत्यः सतां विषादी नवमे कुटिलोरुजङ्घश्च ॥ ८२ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में धनु राशि व धनुराशि का सातवाँ नवांश हो तो जातक—काले वर्ण का, सरल स्वभाव, वाणी का पालक, उन्नत मस्तक वाला, संग्रह करने में व अनुसन्धि तत्पर, लम्बा कद, विशाल नेत्रधारी, चतुर व उग्र होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में धनुराशि व धनुराशि का आठवां नवांश हो तो जातक—आगे से चपटी नाक वाला, विशाल मस्तक वाला, शत्रुता करने वाला, भ्रान्त दृष्टि, प्रलापी और गुरुजनों का प्रिय पात्र होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में धनु राशि व धनु राशि का नवां नवांश हो तो जातक—गौर वर्ण, घोड़े के समान मुख वाला, विशाल काले नेत्र वाला, मितभाषी, सज्जनों में सत्य बोलने वाला, विषादी, टेढ़े घुटना व जाँघ वाला होता है ॥८०–८२॥

॥ इति धनुषि ॥

मकर राशिस्थ प्रथम, द्वितीय, तृतीय नवांश का फल

विरलाग्ररदः श्यामः प्रभिन्नवाक्यजरशिरोजवरनासः।
गीताध्यहास्यनिरतो मकराद्ये चलधनः कृशाङ्गः स्यात् ॥ ८३ ॥
अलसशठः कुटिलनसो गीताभिरतिर्विशालदेहश्च।
प्रचुराङ्गनासु निरतो बहुभाषी स्याद्द्वितीयजः कल्प्यः ॥ ८४ ॥
गान्धर्वकलाकामः ख्याताङ्गो गौरदृक्सुमनसः।
बहुमित्रबन्धुरतिमांस्तृतीयजः स्विष्टकर्मा च ॥ ८५ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में मकर राशि व मकर राशि का पहिला नवांश हो तो जातक—आगे के पतले दाँत वाला, कृष्ण वर्ण, अल्पभाषी, केशहीन, सुन्दर

---

[1] भाषी।

नासिका वाला, सङ्गीत-हास्य व मार्ग में लीन, अस्थिर, धनी और दुर्बल शरीरधारी होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में मकर राशि व मकर राशि का दूसरा नवांश हो तो जातक—आलसी, धूर्त, टेढ़ी नाक वाला, सङ्गीत का प्रेमी, विशाल देहधारी, अधिक स्त्रियों में लीन, अधिक बोलने वाला और चतुर होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में मकर राशि व मकर राशि का तीसरा नवांश हो तो जातक—सङ्गीत का प्रेमी, प्रसिद्ध देहधारी, सफेद आँख वाला, सुन्दर मन वाला, अधिक मित्रों से युक्त, बान्धव प्रिय और इच्छित कार्य का साधक होता है ॥ ८३–८५ ॥

मकर राशिस्थ चतुर्थ, पञ्चम, षष्ठ नवांश का फल

रक्तासितवृत्ताक्षो महाललाटभुजदुर्बलाङ्गकरः ।
भवति हि विकीर्णकेशश्चतुर्थजो विरलदन्तवाक्यः स्यात् ॥ ८६ ॥
उद्गण्डघोणकुक्षिर्भवति हि भोक्ता सुनासिकावंशः ।
श्यामो वृत्तोरुभुजः पञ्चमभागे स्थिरारम्भः ॥ ८७ ॥
स्निग्धच्छविः सुवेषः कामरतः सूक्ष्मसमरदसुवक्ता ।
षष्ठांशजः पृथुहनुर्महाललाटः पुमान्भवति ॥ ८८ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में मकर राशि व मकर राशि का चौथा नवांश हो तो जातक—लाल व काले गोल नेत्र वाला, बड़े मस्तक वाला, दुर्बल हाथ व शरीर वाला, फैले हुए केश वाला, पतले दाँत वाला और अल्पभाषी होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में मकर राशि व मकर राशि का पाँचवां नवांश हो तो जातक—उच्च कपोल नासिका व पेट वाला, भोगी, सुन्दर नासिका के छिद्रों से युक्त, कृष्ण वर्ण, गोल जाँघ व हाथ वाला और स्थिर कार्यारम्भी होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में मकर राशि व मकर राशि का छटा नवांश हो तो जातक कान्तिमान्, सुन्दर वेषधारी, कामी, छोटे समान दांत वाला, सुन्दर वक्ता, मोटी ठोड़ी वाला और विशाल मस्तक वाला होता है ॥ ८६–८८ ॥

मकर राशिस्थ सप्तम, अष्टम, नवम नवांश का फल

श्यामोऽलसः सुभाषी कुं[1]चितकेशो बृहत्तनुः कठिनः ।
मृदुपादपाणिमतिमान्सप्तमजः शीलसम्पन्नः ॥ ८९ ॥
गम्भीरदृक्सुघोणो रक्तास्यो भिन्ननखशिरोजः स्यात् ।
उद्बद्धतनुः शक्तोऽष्टमजो घटपृथुललाटश्च ॥ ९० ॥
विपुलाक्षिहृत्सुमेधाः पूर्णमुखो गीतवाद्यनिरतश्च ।
माधुर्यसत्वयुक्तः साधुर्नवमे भवेत्सुजनः ॥ ९१ ॥

---

[1] रूक्षितदेहो।

यदि जन्म के समय लग्न में मकर राशि व मकर राशि का सातवाँ नवांश हो तो जातक—कृष्ण वर्ण, आलसी, सुन्दर बोलने वाला, घुँघराले केश वाला, विशाल देहधारी, कठोर, कोमल पैर व हाथ वाला, बुद्धिमान् और सुशील होता है ।

यदि जन्म के समय लग्न में मकर राशि व मकर राशि का आठवाँ नवांश हो तो जातक—गम्भीर दृष्टि वाला, सुन्दर नाक वाला, लाल मुख, छिन्न नख व केश वाला, उद्‌बद्ध देहधारी, सामर्थ्यवान् और घड़े के समान विशाल मस्तक वाला होता है ।

यदि जन्म के समय लग्न में मकर राशि व मकर राशि का नवाँ नवांश हो तो जातक—विस्तृत नेत्र और हृदय वाला, सुन्दर बुद्धिमान्, सुन्दर मुख वाला, गाने व बजाने में लीन, मधुर (मीठा), बलवान्, सज्जन और अच्छे मनुष्यों से युक्त होता है ।। ८९-९१ ।।

।। इति मकरे ।।

कुम्भ राशिस्थ प्रथम, द्वितीय, तृतीय नवांश का फल

श्यामो मृदुः कृशाङ्गः पीनहनुः शास्त्रकाव्यमतिः ।
कामी रतिमान्कान्तः कुम्भस्याद्यांशके भवेज्जातः ।। ९२ ।।
त्वङ्नखदृष्टिशिरोजैः खरैश्च सुविपन्नवत्सलः साधुः ।
दीर्घो विशिरा मूर्खो द्वितीयभागे भवेज्जातः ।। ९३ ।।
संसक्ततनुः प्रमदाप्रियश्च वैदूर्यकान्तिधरः ।
शास्त्रार्थवित्प्रवक्ता तृतीयनवभागसंजातः ।। ९४ ।।

यदि जन्म के समय लग्न में कुम्भ राशि व कुम्भ राशि का पहिला नवांश हो तो जातक—काले रङ्ग का, सरल स्वभाव, दुर्बल देहधारी, मोटी ठोड़ी वाला, शास्त्र व काव्य में दत्त बुद्धि वाला, कामी, प्रेमी और सुन्दर स्वरूप होता है ।

यदि जन्म के समय लग्न में कुम्भ राशि व कुम्भ राशि का दूसरा नवांश हो तो जातक—कठोर खाल-नख-दृष्टि व केश वाला, दुःखियों का प्रेमी, सज्जन, लम्बा कद, विशिष्ट मस्तक वाला और मूर्ख होता है ।

यदि जन्म के समय लग्न में कुम्भ राशि व कुम्भ राशि का तीसरा नवांश हो तो जातक—अव्यवहित देहधारी, स्त्रियों का प्रेमो, वैदूर्य मणि के समान स्वरूप वाला, शास्त्र के अर्थ का ज्ञाता व प्रवक्ता होता है ।। ९२-९४ ।।

कुम्भ राशिस्थ चतुर्थ, पञ्चम, षष्ठ नवांश का फल

कान्तानुरतो गौरो विदारितास्यो रिपुप्रणाशकरः ।
गम्भीरधीरसत्वश्चतुर्थजो भोगरतियुक्तः ।। ९५ ।।
स्पष्टार्थवित्कलाज्ञः खररोमधराङ्घ्रिरुग्रः स्यात् ।
संरुद्धगण्डकर्णः पञ्चमजः कृष्णवर्णश्च ।। ९६ ।।

व्याघ्राननः प्रगल्भः कुञ्चितकेशः सुनिश्चितार्थश्च ।
व्यालमृगोरगहन्ता षष्ठेंऽशे वल्लभो नृपतेः ॥ ९७ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में कुम्भ राशि व कुम्भ राशि का चौथा नवांश हो तो जातक स्त्री का अनुगामी, गौरवर्ण, फटे हुए मुख वाला, शत्रुओं का नाशक, गम्भीर, धैर्यवान्, बलवान्, भोगी व रतिमान् अर्थात् प्रेमी होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में कुम्भ राशि व कुम्भ राशि का पाचवाँ नवांश हो तो जातक—स्पष्ट अर्थ का ज्ञाता, कलावित्, कठोर रोमयुत पैरवाला, उग्र स्वभाव, संकुचित कपोल व कान वाला और काले वर्ण का होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में कुम्भ राशि व कुम्भ राशि का छटा नवांश हो तो जातक—सिंह के समान मुख वाला, प्रगल्भ (प्रौढ़) घुंघराले केशवाला, दृढ़ संकल्प, दुष्ट हाथी, हिरन व सर्प को मारने वाला और राजा का प्रिय होता है ॥ ९५–९७ ॥

कुम्भ राशिस्थ सप्तम, अष्टम, नवम नवांश का फल

मेषाक्षिमुखस्तीक्ष्णो ग्राम्यरतिः स्त्रीषु परिभूतः ।
पित्तरुगर्दितदेहः सप्तमजः सत्वधृतियुक्तः ॥ ९८ ॥
स्थिरसत्वबुद्धिरतिमान्नरेन्द्रयोधो नरेश्वरः सुभगः ।
स्थूलरदो विपुलाक्षः कुम्भे स्यादष्टमेंऽशके पुरुषः ॥ ९९ ॥
श्यामः सम[1]ग्रदशनो विशेषितः सुधनदारपुत्रश्च ।
नवमांशजः सुवाक्यः प्रथितः शक्तो भवेत्पुरुषः ॥ १०० ॥

यदि जन्म के समय लग्न में कुम्भ राशि व कुम्भ राशि का सप्तम नवांश हो तो जातक—मेष (बकरा) के समान नेत्र व मुख वाला, उग्र स्वभाव, गाँव में प्रेम करने वाला, स्त्रियों में अपमानित, पित्त रोग से पीड़ित देहवाला, बलवान् और धैर्यवान् होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में कुम्भ राशि व कुम्भ राशि का आठवाँ नवांश हो तो जातक—स्थिर बल-बुद्धि व प्रेम से युक्त, राजसैनिक या राजा, सुन्दर ऐश्वर्य से युक्त, मोटे दाँत वाला और विशाल नेत्र वाला होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में कुम्भ राशि व कुम्भ राशि का नवाँ नवांश हो तो जातक—श्यामवर्ण, विशेषता से युक्त समस्त दाँत वाला, सुन्दर धन, पुत्र, स्त्री से युक्त, सुन्दर वाणी वाला, प्रसिद्ध और सामर्थ्यवान् होता है ॥ ९८–१०० ॥

॥ इति कुम्भे ॥

मीन राशिस्थ प्रथम, द्वितीय, तृतीय नवांश का फल

गौरोऽपि रक्तदेहः प्रभामृदुस्त्रीमतिप्रचलचित्तः ।
ह्रस्वगलः कृशमध्यो मीनस्याद्यांशके पुरुषः ॥ १०१ ॥

---

[1] वदना ।

[1]पृथुपीनभुग्ननासः क्रियापटुर्मांसभुग्रु चिरदेहः ।
काननपर्वतचारी बृहच्छिराः स्याद्वितीयांशे ॥ १०२ ॥
गौरः शठः सुचक्षुः शस्ततनुर्धर्मवान्सु विद्वांश्च ।
दाक्षिण्यवान्विनीतस्तृतीयजो रूपवांश्चतुरः ॥ १०३ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में मीन राशि व मीन राशि का पहिला नवांश हो तो जातक–सफेद वर्णं भी लालिमा से युक्त देहधारी, कान्तिमान्, सरल स्वभाव, स्त्री बुद्धि, चञ्चल चित्त, छोटा गला और दुर्बल कमर वाला होता है ।

यदि जन्म के समय लग्न में मीन राशि व मीन राशि का दूसरा नवांश हो तो जातक––मोटी विशाल टेढ़ी नाक वाला व क्रोधयुक्त नाक वाला, कार्यकुशल, मांस भोजी, सुन्दर शरीर वाला, वन व पर्वत में घूमने वाला और बड़े मस्तक वाला होता है ।

यदि जन्म के समय लग्न में मीन राशि व मीन राशि का तीसरा नवांश हो तो जातक—गौर वर्णं, धूर्तं, सुन्दर नेत्र वाला, प्रशस्त देहधारी, धर्मात्मा, सुन्दर विद्वान्, चतुरता से युक्त, नम्र स्वभाव और चतुर (सुन्दर) स्वरूपवान् होता है ॥ १०१–१०३ ॥

मीन राशिस्थ चतुर्थ, पञ्चम, षष्ठ नवांश का फल

गुणवान्विपन्नशीलः प्रवृद्धसेवी क्रियापटु[2]र्विद्वान् ।
सत्त्वाधिको नयज्ञस्तुङ्गनसः स्याच्चतुर्थे तु ॥ १०४ ॥
दीर्घोऽसितः प्रतापी तुङ्गाङ्गः स्वल्पनासिकः स्वक्षः ।
हिंसारतिः शुभरदो दुष्प्रसहः पञ्चमे प्रलापी स्यात् ॥ १०५ ॥
कान्तः प्रतापगुणवान्प्रसन्नवंशोऽल्पनासिको मानी ।
तिर्यग्वदनः ख्यातः षष्ठेंऽशे स्यात्तथा निपुणः ॥ १०६ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में मीन राशि व मीन राशि का चौथा नवांश हो तो जातक—गुणी, विपत्तिग्रस्त, वृद्धों का सेवक, कार्यकुशल, विद्वान्, बड़ा बलवान्, नीति ज्ञाता और ऊँची नाक वाला होता है ।

यदि जन्म के समय लग्न में मीन राशि व मीन राशि का पाचवाँ नवांश हो तो जातक—अधिक कृष्णवर्णं, प्रतापी, उच्च देहधारी, छोटी नाक वाला, सुन्दर नेत्रधारी, हिंसा का प्रेमी, सुन्दर दांत वाला, असह्य और व्यर्थं बोलने वाला होता है ।

यदि जन्म के समय लग्न में मीन राशि व मीन राशि का छटा नवांश हो तो जातक—सुन्दर प्रतापी, गुणी, प्रसन्न कुल वाला, छोटी नाक वाला, अभिमानी, टेढ़ा मुख, प्रसिद्ध और चतुर होता है ॥ १०४–१०६ ॥

---

१ पृतुपीनमुग्रनासः । २ पटुर्वीरः ।

मीन राशिस्थ सप्तम, अष्टम, नवम नवांश का फल

पुरुषाभिमानपरकृद्धर्मरुचिः श्रेष्ठकश्च सचिवः स्यात् ।
प्रबलो विषादशीलः [1]शठोऽस्थिरः सप्तमे भागे ॥ १०७ ॥
दीर्घो बृहच्छिराः स्यात्कृशोऽलसो रूक्षनेत्रकेशश्च ।
मन्दात्मजोऽर्थनिरतो रणकुशलो ह्यष्टमे भागे ॥ १०८ ॥
ह्रस्वो मृदुः सुधीरो विशालवक्षोऽक्षिनासिकः स्निग्धः ।
[2]विहिताङ्गबुद्धिगुणवान्नवमेंऽशे स्यात्पुमान्ख्यातः ॥ १०९ ॥

यदि जन्म के समय लग्न में मीन राशि व मीन राशि का सातवाँ नवांश हो तो जातक—अभिमानी; दूसरे के धर्म में प्रेम करने वाला, श्रेष्ठ, मन्त्री, बलवान्, विषादी, धूर्त और चञ्चल होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में मीन राशि व मीन राशि का आठवाँ नवांश हो तो जातक—लम्बा कद, बड़े मस्तक वाला, दुर्बल, आलसी, शुष्क नेत्र व केश वाला, अल्प पुत्र वाला, धनलोलुप और युद्ध में निपुण होता है।

यदि जन्म के समय लग्न में मीन राशि व मीन राशि का नवाँ नवांश हो तो जातक—वामन काय, सरल स्वभाव, सुन्दर धैर्यवान्, विशाल छाती नेत्र व नाक वाला, कान्तिमान्, विशाल देह और बुद्धि वाला, गुणी और विख्यात होता है ॥ १०७–१०९ ॥

॥ इति मीने ॥

द्वादशांश फल कथन

यत्प्रो[3]क्तं राशिफलं द्वादशभागेऽपि तत्फलं वाच्यम् ।
सप्तमभागसमानं शेषेषु विनिर्दिशेत्प्राज्ञः ॥ ११० ॥

यहाँ जो राशि फल का कथन किया है वह फल द्वादशांश में भी कहना चाहिये। तथा शेष वर्गों में सप्तमांश के समान विद्वान् व्यक्ति को फल कहना चाहिये ॥ ११० ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां नष्टजातकाध्याये नववर्गगुणचिन्ता नाम पञ्चाशोऽध्यायः ॥

एकपञ्चाशोऽध्यायः ।

प्रश्न लग्न से जन्म के अयन का ज्ञान

प्रश्नकाले विलग्नस्य पूर्वार्धेऽप्युत्तरायणे ।
अपरे दक्षिणे ब्रूयाज्जन्मसम्पृच्छतो बुधः ॥ १ ॥

---

[1] शठः । [2] वित । [3] प्रोक्तांशादि ।

यदि प्रश्नकालिक लग्न १ से १५ अंश के भीतर हो तो प्रश्नकर्ता का जन्म उत्तरायण में होता है। यदि प्रश्नकालिक लग्न १६ से ३० अंश के भीतर हो तो प्रश्नकर्ता का जन्म दक्षिणायन में होता है ॥ १ ॥

बृ० जा० में कहा है—'आधानजन्मापरिबोधकाले संपृच्छतो जन्म वदेद् विलग्नात्। पूर्वापरार्धे भवनस्य विन्द्याद् भानावुदग्दक्षिणगे प्रसूतिम्' (१६ अ० १ श्लो०) ॥१॥

विशेष—इस अध्याय में नष्ट जातक की कुण्डली का विधान वर्णित है। जिस मनुष्य का आधान काल व जन्मकाल अज्ञात हो तो उसका जन्मकाल प्रश्न लग्न से ज्ञात करके फलादेश कहना चाहिये। जन्मकाल ज्ञात होने पर ही शुभाशुभ फल का ज्ञान होता है। जन्म काल अज्ञात होने पर जिस प्रकार से उसका ज्ञान होता है उसको 'नष्ट जातक' कहते हैं। कहा है—'तस्मिन् प्रनष्टे सति जन्म कालो येनोच्यते नष्टकजातकं तत्' ॥ १ ॥

ऋतु व मास का ज्ञान

ऋतुर्वाच्यो दृगाणांशे लग्नसंस्थेऽपि वा[1] ग्रहैः।
अयनस्य विलोमे तु परिवर्तः परस्परम् ॥ २ ॥
शशिज्ञगुरुभिः सार्धं सितलोहितसूर्यजैः।
द्रेक्काणेऽर्धे भवेत्पूर्वे मासः पूर्व[2]ः परे परः ॥ ३ ॥

प्रश्न लग्न में जो ग्रह हो उस ग्रह की ऋतु में जन्म समझना चाहिये। यथा

यदि प्रश्न लग्न में सूर्य हो तो ग्रीष्म ऋतु, चन्द्रमा हो तो वर्षा, मङ्गल हो तो ग्रीष्म ऋतु, बुध हो तो शरद ऋतु, गुरु हो तो हेमन्त, शुक्र हो तो वसन्त और शनि हो तो शिशिर ऋतु समझना चाहिये।

यदि अधिक ग्रह हों तो जो सब से बली हो उसकी ऋतु समझना चाहिये।

यदि लग्न में कोई ग्रह न हो तो प्रश्न कालिक लग्न में द्रेष्काण राशि स्वामी ग्रह की ऋतु कहना चाहिये।

यदि अयन और ऋतु में भेद हो जैसे लग्न का पूर्वार्द्ध होने से उत्तरायण की प्राप्ति और लग्न में चन्द्रमा होने से वर्षा ऋतु होती है इस लिये भेद होता है क्योंकि उत्तरायण में वर्षा ऋतु नहीं होती है यह असम्भव है। अतः परस्पर परिवर्तन से ऋतु का ज्ञान करना चाहिये। अथवा यदि अयन व ऋतु में भेद हो तो चन्द्रमा, बुध, गुरु को क्रम से शुक्र, मङ्गल शनि के साथ परस्पर परिवर्तन कर ऋतु का ज्ञान करना चाहिये।

यदि द्रेष्काण का पूर्वार्ध हो तो ऋतु का पूर्वमास, उत्तरार्ध हो तो ऋतु का दूसरा मास जन्म का मास होता है क्योंकि १ ऋतु में दो मास होते हैं ॥२-३॥

बृ० जा० में कहा है—'ग्रीष्मोऽर्कलग्ने कथितास्तु शेषैरन्यायनर्तावृतुरर्कचारात्। चन्द्रज्ञजीवापरिवर्तनीयाः शुक्रारमन्दैरयने विलोमे। द्रेष्काणभागे प्रथमे तु पूर्वो मासो (२६ अ० २-३ श्लो०) ॥

---

[1] गृहे। [2] पूर्वः।

तिथि व जन्म काल का ज्ञान

अनुपातात्तिथिः कल्प्या केचिदाहुरिनांशजाम् ।

द्रेष्काण के गतांश से अनुपात द्वारा तिथि का ज्ञान करना चाहिये । कोई-कोई आचार्य अनुपात द्वारा सूर्य के गतांश मानते हैं । ३½॥

बृ० जा० में कहा है—'अनुपाताच्च तिथिर्विकल्प्य०' (२६ अ० ३ श्लो०)॥३½॥

विशेष—द्रेष्काण के पूर्वार्ध में ऋतु का पूर्व मास जन्म का मास होता है इसलिये ५ अंश में ३० तिथि, या ३० सूर्य के अंश, तो द्रेष्काण के गत अंश में क्या इस प्रकार अनुपात द्वारा मास की तिथि का ज्ञान करना चाहिये । अर्थात् द्रेष्काण के गतांश को ३० से गुना करके गुणन फल में ५ का भाग देने से लब्धि गत तिथि, या सूर्य के भुक्तांश होते हैं । शेष को १२ से गुना करने पर घट्यादि या सूर्य की भुक्त कलादि समझना चाहिये । इस घट्यादि या भुक्त कलादि से इष्ट घटी का ज्ञान करना चाहिये ॥ ३½ ॥

बृ० जा० में कहा है—अत्रापि होरापटवो द्विजेन्द्राः सूर्यांशतुल्यां तिथिमुद्दिशन्ति (२६ अ० ४ श्लो०) ॥३½॥

जन्म संवत् का ज्ञान

लग्नभागैर्द्विरभ्यस्तैः पञ्चभिर्लभ्यते गुरुः ॥ ४ ॥
वयोनुमानाद्वर्षाणि द्वादश द्वादश क्षिपेत् ।

प्रश्न कालिक लग्न के भुक्तांशादि को दो से गुना कर के पाँच का भाग देने से लब्धि राश्यादि गुरू होता है । उस गुरू के द्वारा प्रश्न कालिक गुरू से प्रश्न कर्त्ता की आयु का अनुमान करके संवत्सर का ज्ञान करना चाहिये । गुरू एक राशि में १ वर्ष मध्यम मान से रहता है । इसलिये १२,१२ वर्ष के बाद उसी राशि में पुनः आता है । इसी कारण से प्रश्न कर्ता को देखकर अनुमान द्वारा १२,१२ वर्ष जोड़कर जन्म संवत् स्थिर करना चाहिये ॥ ४½ ॥

प्रकारान्तर से जन्मेष्ट ज्ञान—

द्युरात्रिनामधेयेषु विलोमाज्जन्मसम्भवः ॥ ५ ॥
लग्नभागैः क्रमेणैव वेला मृग्याऽनुपाततः

यदि प्रश्न कालिक लग्न दिन संज्ञक (सिंह० क० तु० वृ० कुं० मी०) हो तो रात्रि में जन्म और रात्रि संज्ञक (मे० वृ० मि० क० ध० म०) प्रश्न लग्न हो तो दिन में जन्म जानना चाहिये । एवं लग्न के भुक्तांशों से दिनगत या रात्रिगत इष्ट घटी का ज्ञान करना चाहिये ॥ ५½ ॥

बृ० जा० में कहा है—'रात्रिद्युसंज्ञेषु विलोमजन्म भागैश्च वेला क्रमशो: विकल्पाः' (२६ अ० ४ श्लो०) ॥ ५½ ॥

मतान्तर से जन्म राशि का ज्ञान

लग्नत्रिभागराशीनां यो बली जन्मकृद्भवेत् ॥ ६ ॥
शीर्षादि संस्पृशन् प्रष्टा पृच्छेत्तद्राशिमादिशेत् ।
यावद्गतः शशी लग्नाच्चन्द्रात्तावति जन्मभः ॥ ७ ॥

मीनोदये वदेन्मीनं लग्नांशसदृशोदयम् ।

प्रश्नलग्न राशि, पञ्चमस्थ राशि, नवमस्थ राशि इन तीनों में जो राशि बली हो वही प्रश्न कर्ता की जन्म राशि होती है ।

अथवा प्रश्न कर्ता अपने शरीर के मस्तकादि अङ्ग का स्पर्श करके प्रश्न करे तो वह जिस अङ्ग का प्रश्न काल में स्पर्श करे उस अङ्ग की कालपुरुष के आधार पर जो राशि हो वह उसकी जन्म राशि समझना चाहिये ।

अथवा प्रश्नकालिक लग्न से चन्द्रमा जितनी राशि आगे हो उतनी ही राशि आगे चन्द्रमा से जो राशि हो वही जन्म राशि जानना चाहिये । यहाँ विशेषता यह है कि यदि प्रश्न कालिक लग्न में मीन राशि हो तो मीन ही जन्म राशि होती है ।

प्रश्नकालिक लग्न में जिस राशि का नवांश हो वही राशि प्रश्न कर्ता की जन्म के समय लग्न राशि होती है ॥५$\frac{१}{२}$–७$\frac{१}{२}$॥

वृ० जा० में कहा है–'लग्नत्रिकोणोत्तमवीर्ययुक्तं संप्रोच्यतेऽङ्गालभनादिभिर्वा' (२६ अ० ५ श्लोक)

'यावान् गतः शीतकरो विलग्नाच्चन्द्राद् वदेत्तावति जन्म राशिः । मीनोदये मीनयुगं प्रदिष्टम्' (२६ अ० ६ श्लो०) ॥५$\frac{१}{२}$–७$\frac{१}{२}$॥

जन्म लग्न ज्ञान

लग्नाद्भानुदृगाणे च यावत्यर्काच्च तावति ॥ ८ ॥
विलग्नं कथयेत्प्राज्ञ इति शास्त्रस्य निश्चयः ।

प्रश्न कालिक लग्नस्थ द्रेष्काण से सूर्य जितनी संख्या के द्रेष्काण में हो उतनी ही संख्या में सूर्य से जो राशि हो उसी को जन्म लग्न समझना चाहिये, यह शास्त्रों का सिद्धान्त है ॥७$\frac{१}{२}$–८$\frac{१}{२}$ ॥

वृ० जा० में कहा है–होरानवांशप्रतिमं विलग्नं लग्नाद्रविर्यावति च दृकाणे । तस्माद् वदेत्तावति वा विलग्ने प्रष्टुः प्रसूताविति शास्त्रमाह' (२६ अ० ७२ श्लो०) ॥ ७$\frac{३}{४}$–८$\frac{१}{२}$ ॥

प्रकारान्तर से जन्म लग्न ज्ञान

लग्नगे वीर्यगे वाऽपि च्छायाङ्गुलहते हृते ॥ ९ ॥
रविभिर्जन्म शिष्टं हि कथयेदविशङ्कितः ।
तिष्ठतः शयनस्थस्य निविष्टस्योत्थितस्य च ॥ १० ॥
लग्नादिकेन्द्रवेश्मानि वदेज्जन्मविधौ क्रमात् ।
भावं विचार्य सकलं यद्यत्तुल्यं तु तत्तथा ॥ ११ ॥

यदि प्रश्न कालिक लग्न में ग्रह हो तो उस ग्रह की राश्यादि की कला बनाकर, यदि अधिक ग्रह हों तो उन में जो सब से बली हो उस राश्यादि की कला बनाकर प्रश्न कालिक पलभा से गुना करके बारह का भाग देने से जो शेष हो वही जन्म लग्न राशि प्रश्नकर्ता की होती है ऐसा निःशङ्क कहना चाहिये ।

यदि प्रश्न कर्ता खड़ा होकर प्रश्न करे तो प्रश्न लग्न को, यदि शय्या या विछोने पर पड़ा हुआ प्रश्न करे तो प्रश्न लग्न से चतुर्थभाव में जो राशि हो उसको, यदि बैठा हुआ पूछें तो सप्तमभाव राशिको, यदि उठकर प्रश्न करे तो प्रश्न लग्न से दशम भाव में जो राशि हो उसको जन्म लग्न समझना चाहिये। इस प्रकार लग्नादि समस्त केन्द्र भावों का विचार करके तदनुसार फलादेश करना चाहिये ॥ ८½–११ ॥

बृ० जा० में कहा है—'जन्मादिशेल्लग्नगे वीर्यगे वा छायाङ्गुलघ्नोऽर्कहृतेऽवशिष्टम् । आसीनसुप्तोत्थिततिष्ठताभं जायासुखाज्ञोदयगं प्रदिष्टम्' (२६ अ० ८ श्लो०) ॥८½–११॥

नक्षत्र ज्ञान

संस्कारनाममात्रा द्विगुणा च्छायाङ्गलैः समायुक्ताः ।
त्रिघनविभक्ताच्छेषं नक्षत्रं तद्धनिष्ठादि ॥ १२ ॥

प्रश्नकर्ता का नामकरण संस्कार द्वारा जो नाम हो उस नाम की मात्राओं की संख्या को २ से गुना करके प्रश्नकालिक पलभा को जोड़कर २७ से भाग देने पर जो शेष बचे वह धनिष्ठादि से नक्षत्र जानना चाहिये ॥ १२ ॥

बृ० जा० में कहा है—'संस्कारनाममात्रा द्विगुणा छायाङ्गुलैः समायुक्ताः। शेषं त्रिनवकभक्तान्नक्षत्रं तद्धनिष्ठादि' (२६ अ० १५ श्लोक) ॥ १२ ॥

समस्त नष्ट जातक ज्ञान प्रकार

वृषसिंहौ दशगुणितौ वसुभिर्मिथुनालिकौ वणिङ्मेषौ ।
मुनिभिः कन्यामकरौ बाणैः शेषाः स्वसंमितैरेव ॥ १३ ॥
गुरुणा कुजेन भृगुणा बुधेन्दुभान्वार्किभिः क्रमशः ।
वर्षर्तुमासतिथयो द्युनिशाभनवांशवेलाश्च ॥ १४ ॥
एवं क्रमेण हत्वा स्वविकल्पविभाजिताच्छेषम् ।
एवं भवन्ति सर्वे नवदानविशोधने च पुनः ॥ १५ ॥

प्रथम प्रश्न लग्न का कला पिण्ड बनाकर राशिस्थ गुणकों से गुना करना चाहिये। यदि वृष या सिंह राशि प्रश्न लग्न में हो तो लग्न कला पिण्ड को १० से गुना करना, मिथुन व वृश्चिक हो तो ८ से, तुला व मेष हो तो ७ से, कन्या व मकर राशि प्रश्न लग्न में हो तो ५ से शेष राशि होने पर अपनी राशि संख्या से अर्थात् कर्क राशि हो तो ४ से, धनु राशि हो तो ९ से, कुम्भ हो तो ११ से, मीन हो तो १२ से गुना करना चाहिए।

यदि प्रश्नकालिक लग्न में कोई ग्रह हो तो राशि गुणित पिण्ड को ग्रह के गुणक से गुना करना चाहिये। ग्रहों के गुणक ये हैं सू० चं० बु० श० का ५, मङ्गल का ८, गुरू का १० और शुक्र का ७ गुणक होता है। इस प्रकार पिण्ड बनता है इसको एक स्थान में स्थापित करना चाहिये।

यदि वर्ष-ऋतु-मास का ज्ञान अभीष्ट हो तो पुनः पिण्ड को १० से गुना करे, पक्ष या तिथि ज्ञान अभीष्ट हो तो ७ से गुना करे तथा लग्न नवांश व इष्ट काल के लिए ५ से गुना करके अपने-अपने विकल्प से भाग देकर शेष तुल्य वर्ष मास आदि जानना चाहिए।

विकल्प इस प्रकार समझना चाहिये वर्ष का विकल्प १२०, ऋतु का ६, मास व पक्ष का २, तिथि का १५, नक्षत्र २७, लग्न का १२, नवांश का ९ और दिन रात्रि ज्ञान के लिए विकल्प २ होता है।

इस प्रकार असंभव संख्या में ९ जोड़ने वा घटाने से जिस प्रकार अभीष्ट की सिद्धि हो वैसा ही करना चाहिए।। १३–१५ ।।

वृ० जा० में कहा है—'गोसिंहौ जितुमाष्टमौ क्रियतुले कन्यामृगौ च क्रमात्, संवर्ग्या दशकाष्टसप्तविषयैः शेषाः स्वसंख्यागुणाः। जीवारास्फुजिदैन्दवाः प्रथमवच्छेषाः ग्रहाः सौम्यवद्राशीनां नियतो विधिर्ग्रहयुतैः कार्या च तद्वर्गणा' (२६ अ० ९ श्लोक) ।। १३–१५ ।।

उपसंहार

यवनेन्द्रदर्शनाद्यैः कथितं तदिहात्र सर्वमेव मया।
किन्तु स्फुटं न सर्वं स्पष्टं सारस्वतं चिन्त्यम् ।। १६ ।।

यवन, इन्द्रदर्शन आदि प्राचीनाचार्यों ने जिस प्रकार से नष्ट जातक का वर्णन किया है उन सब प्रकारों का मैंने इस अध्याय में वर्णन किया है। किन्तु सब प्रकार स्पष्ट नहीं है। इनमें जो प्रकार श्रेष्ठ हो उसको अपनी बुद्धि द्वारा विचार करना चाहिए ।। १६ ।।

चन्द्र राशि से कालादि का ज्ञान

पाद्त्रितयं विदलं दिनरजनीमानयोः क्रमोत्क्रमशः।
पृच्छकराशिसमानैर्दिवसनिशासंज्ञितं पिण्डम् ।। १७ ।।
वारघ्नभवि[1]हृताग्रं प्रोद्गच्छति तावदेव नक्षत्रम्।
अश्विमघामूलाद्यं वि[2]नवं सनवं क्रमादृक्षम् ।। १८ ।।
तल्लिप्तासप्तहृताच्छेषांद्वारो भवेच्च ऋ[3]क्षादि।
शेषं प्राग्वत्कार्यं पृच्छकसूर्यादिभिर्दायम् ।। १९ ।।
उद्गतदशा व्यतीता गम्याथ विलोमतो भवेन्नित्यम्।
तावत्संख्या योज्या नष्टविधौ कालपरिमाणे ।। २० ।।

यदि प्रश्नकाल में प्रश्न कालिक चन्द्र राशि दिन बली हो तो रात्रिमान, यदि रात्रिबली हो तो दिनमान का चतुर्थांश या तृतीयांश वा आधा भाग व्यतीत हुआ ऐसा समझना चाहिये। चन्द्र राशि जितनी व्यतीत हुई हो उसी के आधार पर चतुर्थांशादि का ज्ञान करके राशि के कला पिण्ड को राशिस्थ पूर्वोक्त 'वृषसिंहौ' इत्यादि के गुणक से गुणा करके ७ से पुनः गुणा कर २७ का भाग देने से जो शेष बचे वह अश्विन्यादि से जन्म नक्षत्र होता है।

यदि ९ घटाने से अभीष्ट की सिद्धि होती हो तो मघा से शेष तक गिनने पर, यदि ९ जोड़ने से अभीष्ट की सिद्धि हो तो मूल नक्षत्र से गणना करनी चाहिए।

---

[1] निभृताग्रं। [2] नवकं नवकं। [3] पृच्छादि।

पुनः कला पिण्ड को ७ से भाग देने पर जो शेष हो उसे प्रश्न दिन के वार से गिनकर जन्म का वार समझना चाहिए । शेष समस्त क्रिया पूर्ववत् करनी चाहिए ।

इस प्रकार नष्ट समय का ज्ञान करके सूर्यादि स्पष्ट ग्रह साधन कर महादशादि के गत गम्य का ज्ञान करना चाहिए । तथा विलोम क्रिया से अर्थात् लग्न से रवि का या इष्ट का ज्ञान करना चाहिए । जब तक काल ज्ञान न हो तब तक नौ संख्या जोड़कर अभीष्ट की सिद्धि करनी चाहिए ।। १७–२० ।।

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां नष्टजातकाध्यायो नामैकञ्पशोऽध्यायः ।।

द्विपञ्चाशोऽध्यायः ।

अष्टकवर्गाध्याय का कथन

उक्तो हि यवनवृद्धैरष्टकवर्गो निवेदयति पुंसाम् ।
हेतुं शुभाशुभं वा प्रतिदिवसं संभवन्तमिह ।। १ ।।

ग्रहों के चार वश-प्राणियों के प्रत्येक दिन में होने वाले शुभ व अशुभ फल का जो स्पष्ट रूप से ज्ञान कराता है, ऐसे अष्टकवर्ग का प्राचीन यवनाचार्यों ने कथन किया है ।। १ ।।

सूर्याष्टकवर्ग का ज्ञान

स्वात्केन्द्रायनवाष्टवित्तगृहगो भौमार्कसून्वोरवि-
र्जीवादायनवात्मजारिषु सितात् षड्द्वादशास्तस्थितः ।
चन्द्राद्वृद्धिषु बोधनात्सनवधीरिःफेषु लग्नाच्छुभः
साम्बुद्वादशगोऽष्टवर्गविधिना संशोधितो भास्करः ।। २ ।।

जन्म कुण्डली में सूर्य अपने स्थान से अर्थात् स्वस्थित राशि से १।४।७।१०।११।९।८।२ इन स्थानों में शुभ फल कारक होता है, तथा मङ्गल व शनि से भी १।४।७।१०।११।९।८।२ इन स्थानों में शुभ फल देता है । गुरू से ११।९।५।६ में, शुक्र से ६।१२।७ में, चन्द्रमा से ३।६।१०।११ में, बुध से ३।६।१०।११।९।५।१२ में, लग्न से ३।६।१०।११।४।१२ स्थानों में सूर्य फलद होता है । इन कथित स्थानों से भिन्न स्थानों में अशुभ फल देता है ।। २ ।।

चन्द्राष्टकवर्ग ज्ञान

लग्नाद्भ्रातृदशायशत्रुषु शशी सास्तादिषु स्वाच्छुभः
भौमात्सार्थनवात्मजेषु रवितःसाष्टाङ्गनास्थो गुरोः ।
केन्द्रायाष्टव्ययेषु धर्मसुखधीत्र्यायास्तखस्थः सितात्
केन्द्रायत्रिसुताष्टगः शशिसुताद्धीत्र्यायषट्स्वर्कजात् ।। ३ ।।

लग्न से ३।१०।११।६। स्थानों में चन्द्रमा, चन्द्रराशि स्थान से अर्थात् अपने स्थान से ३।६।१०।११।७।१। स्थानों में, भौम से ३।६।१०।११।२।९।५। में, सूर्य से ३।६।१०।११।८।३। में, गुरू से १।४।७।१०।११।८।१२। स्थानों में, शुक्र से ९।४।५।३।११।७।१०। में, बुध से १।४।७।१०।११।३।५।८। में और शनि से ५।३।११।६। स्थानों में चन्द्रमा शुभ फलद होता है ॥ ३ ॥

विशेष—श्लोक के तृतीय पाद में गुरू के अष्टक विचार में 'केन्द्रायाष्टधनेषु' यह पाठ ग्रन्थान्तरों से भिन्न होने के कारण ग्रन्थान्तर सम्मत पाठ ही दिया गया है ॥३॥

स्पष्टार्थं सूर्याष्टक वर्गं चक्र

सू.	चं.	मं.	बु	गु	शु.	श.	ल.
१	३	१	३	५	६	१	३
२	६	२	५	६	७	२	४
४	१०	४	६	९	१२	४	६
७	११	७	९	११		७	१०
८		८	१०			८	११
९		९	११			९	१२
१०		१०	१२			१०	
११		११				११	

स्पष्टार्थं चन्द्राष्टक वर्गं चक्र

सू.	चं.	मं.	बु.	गु.	शु	श.	ल.
३	१	२	१	१	३	३	३
६	३	३	३	४	४	५	६
७	६	५	४	७	५	६	१०
८	७	६	५	८	७	११	११
१०	१०	९	७	१०	९		
११	११	१०	८	११	१०		
		११	१०	१२	११		
			११				

भौमाष्टकवर्ग ज्ञान

भौमो वृद्धिषु सात्मजासु रवितः साद्यासु लग्नाच्छुभः
चन्द्रात्कर्मविना च केन्द्रविवरस्वा[1]प्तिस्थितः स्वाद्गृहात् ।
धर्मायाष्टमकण्टकेषु रविजाज्ज्ञात्र्यायधीशत्रुषु
शुक्रादन्त्यभवारिमृत्युषु गुरोः षड्लाभकर्मान्त्यगः ॥ ४ ॥

रवि से ३।६।१०।११।५। स्थानों में, लग्न से ३।६।१०।११।१। में, चन्द्रमा से ३।६।११ में, अपने स्थान से अर्थात् भौम से १।४।७।१०।८।२।११। में, शनि से ९।११।८।१।४।७।१०। में, बुध से ३।११।५।६। में, शुक्र से १२।११।६।८। में और गुरू से ६।११।१०।१२। स्थानों में मङ्गल शुभ फल देने वाला होता है ॥ ४ ॥

बुधाष्टक वर्ग ज्ञान

ज्ञोऽष्टायादिशुभार्थबन्धुषु सुतभ्रातृस्थितो भार्गवात्
भौमार्क्योः सदशास्तगो रिपुभवच्छिद्रान्त्यसंस्थो गुरोः ।
प्राप्त्यन्त्यारितपःसुतेषु तपनात्स्वात्स[2]त्रिकर्मादिषु ।
स्वाज्ञायारिजलाष्टमेषु शशिनो लग्नात्सपूर्वाच्छुभः ॥ ५ ॥

शुक्र से ८।११।१।९।२।४।५।३। में, भौम और शनि से ८।११।१।६।२।४।१०।७। में, गुरू से ६।११।८।१२। में, सूर्य से ११।१२।६।९।५। में, बुध से ११।१२।६।३।५।३।१०।१

---

१ प्राप्ति । २ त्सायकमंत्रिगः ।

में, चन्द्रमा से २।१०।११।६।४।८। में और लग्न से २।१०।११।६।४।८।१। में बुध शुभ फल देने वाला होता है ॥ ५ ॥

स्पष्टार्थ भौमाष्टक वर्ग चक्र

सू.	चं.	मं.	बु	गु.	शु	श.	ल.
३	३	१	३	६	६	१	१
५	६	२	५	८	१०	४	३
६	११	४	६	११	११	७	६
१०		७	११	१२	१२	८	१०
११		८				९	११
		१०				१०	
		११				११	

स्पष्टार्थ वुधाष्टक वर्ग चक्र

सू.	चं.	मं.	वु	गु.	शु	श.	ल.
५	२	१	१	६	१	१	१
६	४	२	३	८	२	२	२
९	६	४	५	११	३	४	४
११	८	७	६	१२	४	७	६
१२	१०	८	९		५	८	८
	११	९	१०		८	९	१०
		१०	११		९	१०	११
		११	१२		११	११	

जीवाष्टकवर्ग ज्ञान

केन्द्रायाष्टधनेषु भूमितनयात्स्वात्सत्रिषु ब्राह्मणो
भानोः सत्रिनवेषु धर्मदशधीस्वा[1]यारिगो भार्गवात् ।
धर्मायास्तधनात्मजेषु शशिनः कोणात्त्रिषड्धीऽव्यये
स्वाज्ञा[2]याम्बुनवारिपुत्रतनुषु ज्ञात्सास्तगस्तूदयात् ॥ ६ ॥

भौम से गुरू १।४।७।१०।११।८।२ इन स्थानों में अपने स्थान से अर्थात् गुरू से १।४।७।१०।११।८।२।३ में, सूर्य से १।४।७।१०।११।८।२।३।९ में, शुक्र से ९।१०।५।२।११।६ में, चन्द्रमा से ९।११।७।२।५ में, शनि से ३।८।५।१२ में, बुध से २।१०।११।४।९।६।५।१ में और लग्न से २।१०।११।४।९।६।५।१।७ इन स्थानों गुरू शुभ होता है ॥६॥

शुक्राष्टकवर्ग ज्ञान

लग्नादातनयायरन्ध्रनवगश्चन्द्रात्सितः सऽव्ययः
स्वात्साज्ञेषु शुभो यमान्नवदशत्र्यायाष्टपञ्चाम्बुषु ।
त्र्यन्त्यायारिसुहृन्नवेषु रुधिराद्रिः फायरन्ध्रेष्विनात्
ज्ञात्र्यायारिनवात्मजेष्वथ गुरोर्धीखाष्टधर्मायगः ॥ ७ ॥

लग्न से १।२।३।४।५।११।८।९ इन स्थानों में, शुक्र, चन्द्रमा से १।२।३।४।५।११।८।९।१२ में, अपने स्थान से अर्थात् शुक्र से १।२।३।४।५।११।८।९।१० में, शनि से ९।१०।३।११।८।१।४ में, भौम से ३।१२।११।६।४।९ में सूर्य से १२।११।८ में, बुध से ३।११।६।९।५ में और गुरू से ५।१०।८।९।११ में शुक्र शुभ होता है ॥ ७ ॥

---

[1] लाभा । [2] नवरिः फपुत्र ।

स्पष्टार्थ जीवाष्टकवर्ग चक्र

सू.	चं.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.	ल.
१	२	१	१	१	२	३	१
२	५	२	२	२	५	५	२
३	७	४	४	३	६	६	४
४	९	७	५	४	९	१२	५
७	११	८	६	७	१०		६
८		१०	९	८	११		७
९		११	१०	१०			९
१०			११	११			१०
११							११

स्पष्टार्थ शुक्राष्टकवर्ग चक्र

सू.	चं.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.	ल
८	१	३	३	५	१	३	१
११	२	४	५	८	२	४	२
१२	३	६	६	९	३	५	३
	४	९	९	१०	४	८	४
	५	११	११	११	५	९	५
	८	१२			८	१०	८
	९				९	११	९
	११				१०		११
	१२				११		

मन्दाष्टकवर्ग ज्ञान

[1]स्वादायात्मजषट्त्रिकेषु रविजः सान्त्याम्बरस्थः कुजात्
भानोः केन्द्रधनायमृत्युषु तनोस्त्र्यायारिखाद्याम्बुगः ।
आज्ञायाष्टनवान्त्यशत्रुषु बुधादिन्दोर्भवारित्रिषु
शुक्रादन्त्यभवारिषु द्विजवरात्प्रा[2]प्त्यान्त्यधीशत्रुगः ॥ ८ ॥

शनि अपने स्थान से ११।५।६।३ स्थानों में, भौम से ११।५।६।३।१२।१० में, सूर्य से १।४।७।१०।२।११।८ में, लग्न से ३।११।६।१०।१।४ में, बुध से १०।११।८।९।१२।६ में, चन्द्रमा से ११।६।३ में, शुक्र से १२।११।६ में और गुरू से ११।१२।५।६ इन स्थानों शनि शुभ होता है ।। ८ ।।

फल कथन में विशेष

इत्युक्तं शुभमन्यदेवमशुभं चारक्रमेण ग्रहाः
शस्ताशस्तविशेषितं विदधति प्रोत्कृष्टमेतत्फलम् ।
स्वर्क्षस्वोच्चसुहृद्गृहेषु सुतरां शस्तं त्वनिष्टं समं
[3]स्वस्वस्वामिगतं दशापतिबलाद्धन्त्यष्टवर्गोद्भवम् ॥ ९ ॥
रविरुधिरौ भवनं प्रविशन्तौ गुरुभृगुजौ गृहमध्यसमेतौ ।
शनिशशिनौ खलु निर्गमकाले शशितनयः फलदस्तु सदैव ॥ १० ॥

स्पष्टार्थ मन्दाष्टकवर्ग चक्र

सू.	चं.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.	ल.
१	३	३	६	५	६	३	१
२	६	५	८	६	११	५	३
४	११	६	९	११	१२	६	४
७		१०	१०	१२		११	६
८		११	११				१०
१०		१२	१२				११
११							

पूर्वोक्त कथित इन स्थानों में सूर्यादि ग्रह शुभ होते हैं, तथा इन से भिन्न स्थानों में चार वश ग्रह अशुभ होते हैं । प्रत्येक ग्रह के अष्टकवर्ग में प्रति राशि में शुभाशुभ चिह्न जानकर जिस राशि में शुभ चिह्न अधिक हों उस राशि में चार वश उस ग्रह के जाने पर शुभफल तथा अशुभ चिह्न राशि में ग्रह के संचार वश अशुभ फल ही ग्रह प्रदान करता है ।

---

[1] स्वात्र्यायात्मज । [2] स्वाध्याय । [3] स्वोच्चस्वामिगता ।

यदि शुभाशुभ चिह्नस्थ राशि ग्रह की उच्च या स्वराशि या मित्र की राशि हो तो ग्रह विशेष रूप से फल देता है और अनिष्ट फल सामान्य रूप से होता है। दशाधीश के बल से यदि ग्रह बली हो तो अष्टकवर्ग से उत्पन्न शुभाशुभ फल का नाशक होता है।

सूर्य व भौम प्रारम्भ में, गुरू व शुक्र राशि के मध्य में, शनि चन्द्रमा राशि के अन्त में और बुध समस्त राशि में फल देने वाला होता है ॥ ९–१० ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां अष्टकवर्गाध्यायो नाम द्विपञ्चाशोऽध्यायः ॥

त्रिपञ्चाशोऽध्यायः ।

वियोनि जन्माध्याय का कथन

दैवविदां [1]प्रीतिकरं विश्वसनीयं समस्तलोकस्य ।
कनकाचार्यस्य मताद्वियोनिसंज्ञं प्रवक्ष्यामि ॥ १ ॥

इस अध्याय में समस्त संसार के विश्वसनीय और ज्योतिषियों के लिए आनन्ददायक कनकाचार्य के मत से मैं ग्रन्थकार वियोनिजन्म संज्ञक अध्याय को कहता हूँ ॥ १ ॥

सृष्टि के समय योग ज्ञान

लग्ने कर्कटके सशीतकिरणे वा सद्ग्रहैः सङ्गते
स्वर्क्षस्थैर्जगतोऽस्य सृष्टिमकरोद्विश्वेश्वरः शाश्वतीम् ।
यस्यैवं भवति प्रसूतिसमये पुंसः स सम्पालयेत्
त्रैलोक्यं सुरसुन्दरीजनवृतः क्रीडां [2]समासेवते ॥ २ ॥

जिस समय कर्कलग्न में चन्द्रमा वा शुभ ग्रह अपनी-अपनी राशि में थे तब ब्रह्माजी ने इस भूमि की रचना की थी इसलिए इस प्रकार का योग जिसके जन्म समय में हो वह जातक देवताओं की स्त्रियों के साथ खेल (क्रीडा) करता हुआ तीनों लोकों का पालन करता है ॥ २ ॥

स्थावर जङ्गम की अभिव्यक्ति

समभिव्यनक्ति होरा सस्थावरजङ्गमं यथा लोके ।
कालनिमित्ताकारैर्देशैन च तत्प्रवक्ष्येऽहम् ॥ ३ ॥

समय-कारण (हेतु) आकृति व देश भेद से जैसे संसार में होरा शास्त्र स्थावर (वृक्षादि) एवं जङ्गम (पशु, पक्षी, कीटादि) पदार्थों का जन्म ज्ञान जिस प्रकार अच्छी रीति से कराता है, उसका मैं वर्णन करता हूँ ॥ ३ ॥

मनुष्येतर जन्म ज्ञान

क्रूरैः सुबलसमेतैः सौम्यैर्विबलैर्वियोनिलग्ने वा ।
सौम्यार्किभ्यां केन्द्रे [3]तदीक्षिते वा वियोनिः स्यात् ॥ ४ ॥

---

१ नीतिकरं । २ समासेवते । ३ तद्वीक्षिते चोदये ।

आधाने जन्मनि वा प्रश्ने वा द्वादशांशगे चन्द्रः।
यस्मिन्व्यवस्थितः स्याल्लग्ने वा तत्समं सत्वम् ॥ ५ ॥

यदि कुण्डली में समस्त पाप ग्रह बली हों व शुभ ग्रह निर्बल हों और वियोनि संज्ञक लग्न हो अथवा शनि व बुध केन्द्र में हों या लग्न को देखते हों तो मनुष्य से भिन्न का जन्म समझना चाहिये। वियोनि जन्म का निर्णय उक्त प्रकार से करके मनुष्येतर कौन सी योनि है इस का विचार इस प्रकार से करना चाहिये।

आधान वा जन्म वा प्रश्न समय में चन्द्रमा या लग्न में जिस राशि का द्वादशांश हो उस राशि के समान जन्तु का जन्म जानना चाहिये ॥ ४–८ ॥

वृ० जा० में कहा है–'क्रूरग्रहैः सुबलिभिर्विबलैश्च सौम्यैः क्लीबे चतुष्टयगते तदवेक्षणाद् वा। चन्द्रोपगद्विरसभागसमानरूप सत्वं वदेद् यदि भवेत्स वियोनिसंज्ञः' (३ अ० १ श्लो०) ॥ ४–५ ॥

वर्णाकृति भेद ज्ञान कथन

वर्णाकृतिप्रभेदाद्ग्रहयोगनिरीक्षणैर्मुनिभिरुक्ताः।
तानहमपि प्रवक्ष्ये विशेषतः सारमादाय ॥ ६ ॥

ग्रहों के योग वा दृष्टि से जन्तुओं के वर्ण व आकार के भेद ऋषियों ने जो वर्णन किये हैं उन से सारभूत अंश को लेकर विशेषता पूर्वक उन को मैं भी कहता हूँ ॥ ६ ॥

पशु शरीर में राशि विभाग का ज्ञान

मेषवृषौ मुखगलयोरंसकपादेषु मिथुनमीनौ स्तः।
पृष्ठोदयपार्श्वेषु च निवेशितौ कर्किकुम्भधरौ ॥ ७ ॥
सिंहमृगौ जघनस्थौ पश्चिमचरणे स्थितौ युवतिचापौ।
गुह्यवृषणप्रदेशस्फिक्पुच्छौ जूककीटक्षौं ॥ ८ ॥
मिथुनादयस्तुलान्ताः सव्ये भागे चतुष्पदानां च।
वामे झषघटधरमृगकार्मुकभृद्वृश्चिकाश्चिन्त्याः ॥ ९ ॥

चार पैर वाले पशुओं के मुख में मेष, गले में वृष, कन्धा और आगे के पैर में मिथुन व मीन राशि, पीठ के दोनों भाग में कर्क और कुम्भ, सिंह व मकर जंघा; कन्या और धनु पिछले पैर में, तुला गुदा व लिङ्ग में और वृश्चिक राशि पेट के दोनों तरफ व पुच्छ में समझना चाहिये। चार पैर वालों के दक्षिण भाग में मिथुन से तुला पर्यन्त और वृश्चिक से मीन पर्यन्त वाम भाग में राशियों को जानना चाहिये ॥ ७–९॥

वृ० जा० में कहा है–'क्रियः शिरो वक्त्रगलो वृषोऽन्यं पादांसकपृष्ठमुरोऽथ पार्श्वे। कुक्षिस्त्वपानांत्यथ मेढ्रमुष्कौ स्फिक्पुच्छमित्याह चतुष्पदाङ्गे' (३ अ० ३ श्लो०) ॥७–९॥

वियोनि का वर्ण व चिह्न ज्ञान

मेषादिभिरुदयस्थैरंशैर्वा ग्रहयुतैश्च दृष्टैर्वा।
स्वं स्वं वर्णं ब्रूयाद्गात्रे चिह्नं व्रणं वाऽपि ॥ १० ॥

स्वगृहांशकसंयोगाद्विद्याद्वर्णान्परांशके रुक्षान् ।
सप्तमसंस्थाः कुर्युः पृष्ठे रेखां स्ववर्णसमाम् ॥ ११ ॥
वीक्षन्ते यावन्तो वियोनिवर्णाश्च तावन्तः ।
बलदीप्तो गगनचरः करोति वर्णं वियोनीनाम् ॥ १२ ॥

यदि वियोनि कुण्डली में लग्नस्थ मेषादि राशि वा लग्नस्थ नवांश सदृश वर्ण अर्थात् लग्नस्थ राशि व नवांश में जो बलवान् हो उसके समान वियोनि का वर्ण (रङ्ग) समझना चाहिये ।

यदि लग्न में ग्रह हो, या किसो ग्रह से दृष्ट तो ग्रह के समान वर्ण ।

यदि अधिक ग्रह हों तो बली ग्रह के समान वर्ण या वियोनि के शरीर में चिह्न (लहसनादि) वा घाव कहना चाहिये ।

यदि ग्रह अपने घर में या अपने नवांश में हो तो स्पष्ट वर्ण कहना चाहिये ।

यदि दूसरे ग्रह की राशि या नवांश में ग्रह हो तो रूक्ष अर्थात् अस्निग्ध वर्ण समझना चाहिये ।

यदि लग्न से सप्तम भाव में ग्रह हो तो उस ग्रह के वर्ण समान वियोनि की पीठ पर चिह्न कहना चाहिये । जितने ग्रह लग्न को देखते हों उतने वर्ण वियोनि के होते हैं । उन ग्रहों में जो बली ग्रह होता है उसी का वर्ण प्रधान रूप से होता है ॥ १०–१२ ॥

बृ० जा० में कहा ? है–'लग्नांशकाद् ग्रहयोगेक्षणाद्वा वर्णान्वदेदथ युक्ताद् वियोनौ । दृष्टया समानान्प्रवदेत्स्वसंख्यया रेखां वदेत्स्मरसंस्थैश्च पृष्ठे' (३अ० ४ श्लो०) ॥१०-१२॥

ग्रहों के वर्णों का ज्ञान

पीतं करोति जीवः शशी सितं भार्गवो विचित्रं च ।
रक्तौ दिनकररुधिरौ रविजः कृष्णं बुधः शवलम् ॥ १३ ॥
स्वे राशौ परभागे परराशौ स्वांशके तिष्ठन् ।
पश्यन् ग्रहोऽपि लग्नं सुवर्णवर्णं तदा कुरुते ॥ १४ ॥

यदि वियोनि कुण्डली में लग्नस्थ बली गुरू हो तो वियोनि का पीला रङ्ग, चन्द्रमा हो तो सफेद, शुक्रबली हो तो अनेक रङ्ग, सूर्य व भौम हो तो लाल, शनि हो तो काला और बुध हो तो दूर्वा के समान वर्ण होता है ।

यदि ग्रह अपनी राशि में व दूसरे के नवांश में स्थित होकर वा अपने नवांश में व दूसरे की राशि में स्थित होकर लग्न को देखें तो सोने (सुवर्ण) के समान वियोनि का वर्ण होता है ॥ १३–१४ ॥

प्रकारान्तर से वर्ण का ज्ञान

परिघपरिवेषजलदैः शङ्कुकवेधैर्ध्वजैश्च वृक्षैश्च ।
वृषमृगदण्डैः सर्पैः शक्रधनुः पांसुभिर्वापि ॥ १५ ॥
यद्वर्णेन वृतः स्याद्ग्रहस्तमिह वर्णमादिशेन्मतिमान् ।
स्वाभाविकैर्ग्रहाणां वर्णैर्वर्णा भवन्ति जातानाम् ॥ १६ ॥

यदि वियोनि जन्म लग्नस्थ ग्रह परिघ-मण्डल-मेघ-शंकुवेध-ध्वज-वृक्ष-वृष-दण्ड-सूर्य-इन्द्रधनुष या धूलि से आच्छादित हो तो उसी प्रकार का बुद्धिमान् को वर्ण समझना चाहिये। यदि इनसे ग्रह आच्छादित न हो तो ग्रह के स्वाभाविक वर्ण के समान वर्ण जानना चहिये ॥१५–१६॥

पक्षी जन्म ज्ञान

विहगोदितदृक्काणे ग्रहेण बलिना युते च चरभांशे।
बौधेंऽशे वा विहगाः स्थलाम्बुजाः [1]शशिनिरीक्षिताः क्रमशः ॥१७॥
लग्ने जलजे बन्धौ [2]पक्तिः स्याद्वीक्षितेऽपि वा जलजाः[3]।
स्थलजे वा तद्दृष्टे ग्रहवर्णसमस्थलप्रभवः ॥ १८ ॥

यदि वियोनि लग्नस्थ पक्षी द्रेष्काण (पक्षी द्रेष्काण = मिथुन का दूसरा, सिंह का पहिला, तुला का दूसरा व कुम्भ का प्रथम) या चर राशि नवांश, या बुध का नवांश हो और किसी बलवान् ग्रह से युत हो व शनि से दृष्ट या युक्त हो तो भूमि स्थल के पक्षी का, यदि उक्त स्थितिस्थ ग्रह चन्द्रमा से दृष्ट या युक्त हो तो जलचारी पक्षी का जन्म कहना चाहिये।

अथवा यदि वियोनि लग्न में जलचर राशि हो और किसी बलवान् ग्रह से युत या दृष्ट हो तो जलचरपक्षी का, स्थल राशि लग्न हो तथा बली ग्रह से दृष्ट युत हो तो स्थल के पक्षी का ग्रह के समान वर्ण की भूमि में जन्म कहना चाहिये ॥ १७-१८ ॥

बृ० जा० में कहा है—'खगे दृकाणे बलसंयुतेन वा ग्रहेण युक्ते चरभांश—कोदये। बुधांशके वा विहगाः स्थलाम्बुजाः शनैश्चरेंद्वीक्षणयोगसंभवाः' (३ अ० ५ श्लो०) ॥ १७-१८ ॥

वृक्ष जन्म योग ज्ञान

[4]लग्नार्कजीवचन्द्रैरबलैः शेषैश्च मूलयोनिः स्यात्।
स्थलजलभवनविभागा वृक्षादीनां प्रभेदकराः ॥ १९ ॥

यदि वियोनि जन्म लग्न, सूर्य, गुरू व चन्द्रमा बलरहित हों तथा शेष ग्रह भी पूर्ण बलवान् न हों तो वृक्षादि का जन्म कहना चाहिये। यदि लग्न में स्थल राशि का नवांश हो तो स्थल के वृक्ष का जन्म, यदि जलचर राशि का नवांश हो तो जल के वृक्ष का जन्म सयझना चाहिये ॥ १९ ॥

बृ० जा० में कहा है—'होरेन्दुसूरिरविभिर्विबलैस्तरूणां तोयस्थले तरुभवोंऽशकृतः प्रभेदः' (३ अ० ६ श्लो०) ॥ १९ ॥

लग्नांश पति से वृक्षों के भेद का ज्ञान

अन्तः सारान्वृक्षान्भानुर्दुर्गान्करोति तद्रूपान्।
क्षीरस्नेहसमेतान् शशी गुरुः फलसमेतांश्च ॥ २० ॥
कटुकण्टकिनो रुधिरः सुदुर्भगांस्तरणिजस्तथा शुक्रः।
कुसुमफलस्नेहयुतान्बुधश्च बलवर्जितं जनयेत् ॥ २१ ॥

---

[1] शनिशशीक्षणाद्योगात्. [2] पक्षी. [3] जलजः. [4] लग्ने.

यदि वियोनि लग्नांशपति सूर्य हो तो भीतर की पुष्ट लकड़ी वाले अर्थात् शीशम साखू आदि किले के उपयोगी वृक्ष, यदि लग्नांशपति चन्द्रमा हो तो दूधवाले वा स्निग्ध देवदारु आदि वृक्ष, गुरू हो तो फलवाले आम आदि वृक्ष, यदि भौम लग्नांश पति हो तो कडुवे व कांटे वाले वृक्ष, शनि हो तो दुर्भग अर्थात् देखने में अप्रिय लगने वाले वृक्ष, शुक्र हो तो फल पुष्प वाले चीकने वृक्ष का और बुध लग्नांशपति हो तो फल से रहित वृक्ष का जन्म समझना चाहिये ॥ २०–२१ ॥

बृ० जा० में कहा है––'अन्तः सारान् जनयति रविदुर्भगान् सूर्यसूनुः, क्षीरोपेतांस्तुहिनकिरणः कण्टकाढ्यांश्च भौमः। वागीशज्ञौ सफलविफलान् पुष्पवृक्षांश्च शुक्रः, स्निग्धानिन्दुः कटुकविटपान् भूमिपुत्रश्च भूयः' (३ अ० ७ श्लो०) ॥ २०–२१ ॥

वृक्ष के शुभाशुभ फल का ज्ञान

क्रूरः सौम्यगृहस्थो वृक्षमनिष्टं करोति शुभदेशे।
सौम्यश्च पापभवने कुत्सितदेशे शुभं चापि ॥ २२ ॥
व्यामिश्रैः शुभभूमौ भवन्ति मिश्राः सदा वृक्षाः।
स्थलजलपतयस्तेषां स्थलजलजानां तु संभवे दक्षाः ॥ २३ ॥

यदि लग्नांशपति पापग्रह हो तथा शुभग्रह की राशि में स्थित हो तो अच्छे स्थान पर खराब वृक्ष का जन्म जानना चाहिये।

यदि नवांशपति शुभग्रह हो और पापग्रह की राशि में स्थित हो तो बुरी (खराब) भूमि में अच्छे वृक्ष का जन्म समझना चाहिये।

यदि अंशपति पाप शुभ मिश्रित हो तो सुन्दर भूमि में बुरे अच्छे वृक्षों का जन्म कहना चाहिये। उनमें जो स्थल राशिपति हो उससे स्थल का वृक्ष, जो जल राशिपति हो उससे जल का वृक्ष समझना चाहिये ॥ २२–२३ ॥

बृ० जा० में कहा है––'शुभो शुभर्क्षे रुचिरं कुभूमिजं करोति वृक्षं विपरीतमन्यथा' (३ अ० ८ श्लो०) ॥ २२–२३ ॥

वृक्षों की संख्या का ज्ञान

स्थलजलखगौ विलग्नाद्यावति राशौ तु तेऽपि तावन्तः।
स्वांशात्परांशगामिषु यावत्संख्या भवन्ति तावन्तः ॥ २४ ॥

वियोनि कुण्डली में लग्नस्थ नवांशपति लग्न से जितनी राशि संख्या आगे हो उतनी संख्या वृक्षों की समझना चाहिये। अथवा नवांशपति अपने नवांश से जितनी संख्या आगे हो उतनी संख्या वृक्षों की होती है ॥ २४ ॥

बृ० जा० में कहा है––'लग्नाद् ग्रहः स्थलजलर्क्षपतिस्तु यावांस्तावन्त एव तरवः स्थलतोयजाताः' (३ अ० ६ श्लो०)।

(परांशके यावति विच्युतस्स्वका भवन्ति तुल्यास्तरवस्तथाविधाः' (३ अ० ८ श्लो०) ॥ २४ ॥

प्रकारान्तर से वियोनि जन्म ज्ञान

स्वांशे सौम्यैरबलैर्वियोनिलग्ने वियोनिजातं च।
तद्वद्बलिभिः पापैः स्वराशिसदृशांशसंयुक्तैः ॥ २५ ॥
अबलग्रहराशिगता अस्तं याताः पराजिता भिन्नाः।
क्रूरयुता दृष्टा वा सद्यो निघ्नन्ति ते नित्यम् ॥ २६ ॥

यदि वियोनि लग्न में शुभग्रह निर्बल होकर अपने नवांश में स्थित हों तथा पाप ग्रह बलवान् होकर अपने नवांश में स्थित हों तो वियोनि का जन्म होता है। यदि लग्नांश पति निर्बल ग्रह की राशि में या अस्त या युद्ध में पराजित या भेदित या पाप ग्रह से दृष्ट या युत हो तो उत्पन्न वियोनि का शीघ्र नाश करते हैं ॥ २५–२६ ॥

वृ० जा० में इस २५वें श्लोक के कुछ विपरीत कहा है—'पापा बलिनः स्वभागगा पारक्ये विबलाश्च शोभनाः। लग्नं च वियोनिसंज्ञकं (३ अ० २ श्लो०) ॥ २५–२६ ॥

वियोनि ज्ञान में विशेष कथन

उद्भिज्जरायुजानां तथैव सस्वेदजाण्डजानां च।
प्रसवं व्यस्तसमस्तं ग्रहयोगैर्लक्षणैर्वक्ष्ये ॥ २७ ॥

उद्भिद् (वृक्ष तृण लतादि) जरायुज, (गर्भाशय से उत्पन्न मनुष्य, गोयादि) स्वेदज (कृमि दंशादि) अण्डज (अण्डा से उत्पन्न पक्षि सर्पादि) इन चारों प्रकार के जीवों के जन्म को ग्रहों के योगादि लक्षण सहित पृथक्-पृथक् वर्णन करता हूँ ॥ २७ ॥

चतुष्पद जन्म ज्ञान

दुर्बलगृहे ग्रहेन्द्रा मेषो राशिर्यदोदयं याति।
भानुश्चतुष्पदगृहे चतुष्प[1]दस्तत्र भवति सामान्ये ॥ २८ ॥
सामान्येनाभिहितो वियोनिसंज्ञो मया समासेन।
अधुना कौतुकजननं विशेषतः संप्रवक्ष्यामि ॥ २९ ॥

यदि निर्बल राशि में निर्बल ग्रह हों और सूर्य चतुष्पद राशि में हो व मेष लग्न हो तो सामान्य रूप से चार पैर वाले का जन्म होता है। मैंने अभी तक सामान्य रीति से वियोनि जन्म ज्ञान का वर्णन किया है। अब आश्चर्यजनक विशेषतापूर्वक वियोनि जन्म ज्ञान का वर्णन करता हूँ ॥ २८–२९ ॥

विशेष रीति से वियोनि जन्म ज्ञान

इह तु द्वादशभागो राशौ राशौ प्रचोदितः पूर्वम्।
जनयन्ति ते वियोनिं याता बलिभिः शशाङ्करविलग्ने ॥ ३० ॥

---

[1] सम्भवति तत्र।

मेषे [1]शशी तदंशे छागादिप्रसवमाहुराचार्याः ।
गोमहिषाणां गोंऽशे नररूपाणां तृतीयेंऽशे ॥ ३१ ॥
तत्र चतुर्थे भागे कूर्मादीनां भवेदुदकजानाम् ।
व्याघ्रादीनां परतः परतो ज्ञेयं नराणां च ॥ ३२ ॥
वणिगंशे नररूपा वृश्चिकभागे तथा भुजङ्गाद्याः ।
खरतुरगाद्या नवमे मृग[2]शिखिनां स्यात्तथा दशमे ॥ ३३ ॥
ज्ञेयाश्च तत्र विविधा[3] वृक्षास्तृणजातयश्चित्राः ।
एकादशे च पुरुषा जलजा नानाविधाश्चान्त्ये ॥ ३४ ॥
मेषे द्वादशभागे जायन्ते जातयो विविधरूपाः ।
शेषेष्वपि चैवं स्याद्भवनेषु यथाक्रमं नियतम् ॥ ३५ ॥

इस ग्रन्थ में पहिले प्रत्येक राशि में जो द्वादशांशों का वर्णन किया गया है, वे द्वादशांश बलवान् यदि सूर्य, चन्द्रमा, लग्न में हों तो वियोनि संज्ञक द्वादशांश में वियोनि का जन्म होता है ।

यदि मेष राशि व मेष के द्वादशांश में चन्द्रमा हो तो बकरा, भेड़ा आदि का जन्म कहना चाहिये ।

यदि वृष के द्वादशांश में हो तो गाय, भैंसा आदि मिथुन के द्वादशांश में मनुष्य रूप (वानर आदि) का, कर्क के द्वादशांश में कछुवा आदि, जल में पैदा होनेवालों का, सिंह के द्वादशांश में सिंह व्याघ्र आदि का, कन्या के द्वादशांश में मनुष्यों का, तुला के द्वादशांश में मनुष्याकार का, वृश्चिक के द्वादशांश में सर्प, बिच्छू आदि का, धनु के द्वादशांश में गधा, घोड़ा आदि का, मकर के द्वादशांश में हिरन, मयूर आदि का तथा अनेक प्रकार के वृक्ष तृणादि का, कुम्भ के द्वादशांश में मनुष्य का और मीन के द्वादशांश में अनेक प्रकार के जल जीवों का जन्म समझना चाहिये । जिस प्रकार मेष के द्वादशांश में अनेक प्रकार के जन्तुओं के जन्म का वर्णन किया गया है उसी प्रकार शेष राशियों में भी जानना चाहिये ॥ ३०–३५ ॥

जन्तुओं की आकृति व यमलादि का ज्ञान

यो यत्र भवेदाद्यस्तस्याकृतिमादिशेत्कृते तत्र ।
ब्रूयात्क्रमेण मतिमान्द्वादशभागात्मके नवमे ॥ ३६ ॥
ज्ञेयादेवं पुंग्रहनवांशकैर्लग्नगैर्द्विमूर्तिभ्यः ।
आद्यांशे योगैरपि जायन्ते बहुविधाः सत्वाः ॥ ३७ ॥

जिस राशि में जिस राशि का प्रथम द्वादशांश वियोनि लग्न में हो तो उसी के समान जन्तु की आकृति जानना चाहिये । बुद्धिमान् को लग्नस्थ द्वादशांश के आधार पर उत्पन्न जीव की आकृति का ज्ञान करना चाहिये । जैसे पूर्व में लग्नस्थ पुरुष ग्रह के नवांश व द्विस्वभाव राशि से यमल जन्म का वर्णन किया है उसी प्रकार प्रथम

---

[1] शशिनि । [2] मृगाः समीनास्तथा । [3] वृक्षा गुल्मा ।

द्वादशांश में पुरुष, स्त्री ग्रह राशि के द्वादशांश को द्विस्वभावादि राशि जानकर एक या दो वा अनेक का जन्म कहना चाहिये ॥ ३६–३७ ॥

एक से अधिक वियोनि जन्म ज्ञान

श्वप्रभृतीनां प्रसवे यावन्तो द्वादशांशका लग्ने।
तावन्ति वदेत्प्राज्ञः पुंस्त्रीसंज्ञान्यपत्यानि ॥ ३८ ॥
लग्ने जीवोऽथवा सौरश्चन्द्रो वाऽपि स्थितो भवेत्।
कूर्मादीनां तथा संख्या द्वादशांशेषु यावती ॥ ३९ ॥
शुक्रो भौमो बुधो वाऽपि चन्द्रो वापि शनैश्चरः।
कुर्वन्ति बलयुक्तानि भागेष्वङ्गानि पूर्ववत् ॥ ४० ॥

कुत्ता आदि जन्तुओं के जन्म के समय लग्न में द्वादशांश की संख्या जितनी हो उतनी पुरुष या स्त्री सन्तति होती है।

यदि वियोनि लग्न में गुरु वा शनि वा चन्द्रमा हो तो लग्नस्थ द्वादशांश संख्या तुल्य कछुए आदि जन्म कहना चाहिये।

यदि वियोनि कुण्डली में शुक्र, भौम, बुध या चन्द्रमा अथवा शनि बलवान् हों तो पूर्ववत् अपने-अपने द्वादशांश के समान जीव के शरीर को करते हैं ॥ ३८–४० ॥

लोक विपरीत प्रसव ज्ञान

स्वांशात्परस्य भागे यस्मिन्काले ग्रहाः समुपयान्ति।
तत्र विकारा ज्ञेया लोकविरुद्धा ध्रुवं प्राज्ञैः ॥ ४१ ॥

यदि कुण्डली में प्रसव के समय ग्रह अपने नवांश से दूसरे ग्रह के नवांश में जायें तो संसार के विरुद्ध उत्पन्न होनेवाले की आकृति विकारयुक्त अवश्य होती है ॥ ४१ ॥

वृश्चिक लग्नस्थ द्विपद वा नवम नवांश का फल

वृश्चिकलग्ने भवने तन्नवभागेऽथवा द्विपदसंज्ञे।
बिलवासिनां प्रसूतिर्घोराणां निर्दिशेत्तत्र ॥ ४२ ॥
गोधानां सर्पाणां लोमशानां च शल्यकानां च।
मूषकबिलेशयानां राशिसतां चापि कीटानाम् ॥ ४२ ॥
लूतानां नकुलानां वृश्चिकषड्बिन्दुजातकानां च।
अविषाणां सर्पाणां श्वभ्राश्मनिवासिनां चैव ॥ ४४ ॥

यदि वियोनि कुण्डली में वृश्चिक लग्नस्थ नवम वा द्विपद नवांश हो तो बिल में रहने वाले गोह, सर्प, रोमवाले, शाही, चूहा, क्रीड़ा यूथ, मकड़ी, न्यौला, बिच्छू, गोजर, विषहीन सर्प और सफेद पत्थर पर निवास करनेवाले भयानक जीवों का जन्म समझना चाहिये ॥ ४२–४४ ॥

धनु लग्न धनु नवांश वा धनु द्वादशांश का फल

हयनरविदेहलग्ने द्वादशभागे नवांशके वापि ।
पश्यति नरेन्द्रसचिवस्तत्रोत्पत्तिर्भवेदेषाम् ॥ ४५ ॥
वाजिखराश्वतराणां गोमहिषाणां तथोष्ट्राणाम् ।
गुरुवर्णतुल्यरूपान्प्रवदेन्मतिमान्वलेनैव ॥ ४६ ॥

यदि वियोनि कुण्डली में धनु लग्न में धनु राशि का नवांश वा द्वादशांश हो और उसपर गुरू की दृष्टि हो तो घोड़ा, गधा, खच्चर, गाय, भैंसा, ऊँट का जन्म समझना चाहिये । बुद्धिमान् व्यक्ति को गुरू के वलानुसार ही उत्पन्न के वर्ण और आकृति को कहना चाहिये ॥ ४५–४६ ॥

मकर लग्नस्थ मकर नवांश वा मकर द्वादशांश का फल

मृगवदने लग्नस्थे तन्नवभागे तथापि सूर्यांशे ।
आरण्यानां सूतिं सत्वानां निर्दिशेत्क्रमशः ॥ ४७ ॥
नागानां खड्गानां वृकशरभवराहवानराणां च ।
ऋक्षोग्रसृगालानां व्याघ्रादीनां भवेत्सूतिः ॥ ४८ ॥

यदि वियोनि कुण्डली में मकर लग्नस्थ मकर का नवांश वा मकर का द्वादशांश हो तो हाथी, गैंड़ा, ईहा मृग, हिरन, सूकर, वन्दर, रीछ, श्यार, व्याघ्र आदि बलवान् जङ्गली जीवों का जन्म जानना चाहिये ॥ ४७–४८ ॥

मीन लग्नस्थ मीन नवांश वा मीन द्वादशांश का फल

मीने मीनांशे वा तज्जे सूक्ष्मांशकेऽपि वा लग्ने ।
गुरुदृष्टे विज्ञेयो वहूदकोत्थः सदा सत्वः ॥ ४९ ॥

यदि वियोनि कुण्ड़ली में मीन लग्नस्थ मीन का नवांश या मीन का द्वादशांश हो और उस पर गुरू की दृष्टि हो तो अधिक जल में रहने वाले जीव का जन्म समझना चाहिये ॥ ४९ ॥

मेष वा वृष लग्नस्थ मेष वा वृष नवांश का फल

मेषे मेषांशे वा भौमेन निरीक्षिते सदाजावी ।
वृषभे तु वदेत्तद्वद्गोमहिषाद्यान्सदा भृगुणा ॥ ५० ॥

यदि वियोनि कुण्डली में मेष लग्नस्थ मेष का नवांश हो और उस पर भौम की दृष्टि हो तो बकरा, भेड़ आदि का जन्म कहना चाहिये ।

यदि वृष लग्नस्थ वृष नवांश शुक्र से दृष्ट हो तो गाय, भैंसा आदि का जन्म समझना चाहिये ॥ ५० ॥

स्वं स्वं पूर्वविलग्नं स्वैः स्वैर्दृष्टं यदेह पतिभिस्तु ।
स्वभवनसदृशान्विद्वान्प्रवदेदविशङ्कितं तत्र ॥ ५१ ॥

जो राशि लग्न में हो और अपने नवांश से युक्त होकर अपने स्वामी ग्रह से दृष्ट हो तो उस राशि के समान जन्तु का जन्म अवश्म कहना चाहिये ॥ ५१ ॥

ग्राम्यगृहेषु नवांशाः पञ्च[1]मनवमांशसंयुक्ताः ।
आरण्यानां सूतिं ग्रामेषु सुनिश्चितां कुर्युः ॥ ५२ ॥

यदि ग्राम्य राशि लग्न में सिंह वृश्चिक, या मकर का नवांश हो तो गाँव में पाले हुए वनवासी जीव का अवश्य जन्म समझना चाहिये ॥ ५२ ॥

स्थलजलराशिविभागा नागरभवनेषु लग्नसंस्थेषु ।
स्थलजलचरसत्वानां जनयन्ति भवं हि विटपानाम् ॥ ५३ ॥

यदि ग्राम्य राशि लग्न में स्थल वा जल राशि का नवांश हो तो भूमिचारी वा जलचारी जीव का जन्म जानना चाहिये ॥ ५३ ॥

उदयति वणिग्विलग्ने तद्द्रेक्काणे सितेन संदृष्टे ।
शुकसारिकान्यपुष्टाश्चकोरभासाश्च जायन्ते ॥ ५४ ॥

यदि तुला लग्न में तुला का द्रेष्काण शुक्र से दृष्ट हो तो तोता, मैना, कोयल, अन्य पुष्ट, चकोर वा प्रभावशाली अर्थात् कान्तिमान् पक्षी का जन्म जानना चाहिये ॥ ५४ ॥

सिंहोदये तथाद्ये सूक्ष्मांशे रविनिरीक्षिते सूतिः ।
कुक्कुटमयूरतित्तिरिपारावतवञ्जुलादीनान् (?) ॥ ५५ ॥

यदि सिंह लग्न में सिंह का द्वादशांश सूर्य से दृष्ट हो तो मुर्गा, मोर, तित्तिर, कबूतर और वञ्जुलादि (अशोक आदि) का जन्म कहना चाहिये ॥ ५५ ॥

स्थिरभोदये तदंशे सौरग्रहसंयुते च दृष्टे च ।
प्रासादगृहादीनामुत्पत्तिः पूर्ववज्ज्ञेया ॥ ५६ ॥

यदि स्थिर राशि लग्न में स्थिर राशि का द्वादशांश शनि से दृष्ट हो तो मन्दिर मकान आदि की उत्पत्ति कहना चाहिये ॥ ५६ ॥

इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां वियोनिजन्माध्यायो नाम
त्रिपञ्चाशोऽध्यायः ॥

चतुःपञ्चाशोऽध्यायः ।

प्रस्तार चक्र का ज्ञान

तिर्यग्विश्वोर्ध्वनन्दं गिरिगिरिशपदं न्यस्य चक्रं तदूर्ध्वं
मेषाद्याः राशयः स्युर्ग्रहगणसहिता शिष्टिमिष्टस्य सद्म ।
तस्याधः सोऽपि मुख्यं ग्रहगणमुदयं चाप्यधः क्ष्माक्रमेण
न्यस्याधः स्वीयचक्रे स्वपदसहितभाक् खाष्टके बिन्दुरेखा ॥ १ ॥

---

[1] पञ्चमदशमाष्टराशि ।

तेरह तिरछी रेखा व ९ खड़ी रेखा खींच कर इसके अतिरिक्त एक खड़ी रेखा व एक तिरछी रेखा खींचने पर ११७ कोष्ठ का चक्र बनता है। ग्रन्थकार ने 'तदूर्ध्वं' कहकर सिद्ध किया है कि १४ तिरछी व १० खड़ी रेखा खींचने पर ही ११७ कोष्ठ का चक्र बनता है न कि १३ तिरछी व ९ खड़ी रेखाओं से ११७ कोष्ठ का चक्र बन सकता है। इन १३ व ९ खड़ी रेखाओं से तो ९६ कोष्ठ का चक्र सिद्ध होता है। इस ११७ कोष्ठक के चक्र में प्रथम एक कोष्ठक का त्याग करके बायीं ओर से प्रथम पक्ति में १२ राशियों को ग्रहों के साथ लिखना चाहिये। तथा प्रथम एक कोष्ठक को छोड़ कर ऊर्ध्वं प्रथम पक्तिं में सूर्यादि सात ग्रह व लग्न को लिखना चाहिये। पुनः अपने-अपने अष्टक वर्गं में समागत द्वादश राशियों में शुभ अशुभ बिन्दु व रेखाओं को लिखना चाहिये ॥ १ ॥

प्रस्तार से फल ज्ञान

पूर्णैबिन्दुभिरष्टभिः पदगतैर्हीनोऽपि भूपो भवेत्
एकैकोनतया क्रमात् फलविधिः सर्वेप्सितामिर्यशः।
वित्ताप्तिश्च सुखैः सह प्रियसुहृत् प्राप्तिर्विपच्छून्यता
वित्तानामपि हानिराधिकृशता शून्यक्रमे संक्षयः ॥ २ ॥

जन्म के सयय जो ग्रह जिस राशि में हो यदि उस राशि के आठों पद (स्थान) में बिन्दु हों तो जातक नीच कुल में जन्म लेकर भी राजा होता है यदि सातों पद में बिन्दु हों तो समस्त अभीष्ट की सिद्धि, ६ में बिन्दु हों तो लोक में यश व धन की प्राप्ति, ५ में बिन्दु हों तो सुख के साथ प्रेमी मित्र की प्राप्ति, ४ में बिन्दु हों तो विपत्ति का विनाश, ३ में बिन्दु हों तो धन का भी नाश, २ में बिन्दु हों तो चिन्ता, १ में बिन्दु हो तो शरीर में दुर्बलता और आठों पदों में बिन्दु का अभाव हो तो हानि होती है ॥ २ ॥

सूर्य के अष्टकवर्ग का फल

सूर्यस्याष्टसु विन्दुषु क्षितिपतेराप्ता विभूतिर्धनं
सप्तस्वद्भुतकान्तिसौख्यविभवः षट्सु प्रतापोन्नतिः।
पञ्चस्वर्थसमागमः सदसतो साम्यं चतुष्के त्रिके
त्वध्वश्रान्तिरथ द्विके गदभयं रूपेऽथ शून्ये मृतिः ॥ ३ ॥

जिसकी जन्म कुण्डली में सूर्य के अष्टक वर्ग में जिस राशि व भाव में ८ बिन्दु हों तो उस राशि में सूर्य के संचार से जातक को राजा से ऐश्वर्य व धन को प्राप्ति होती है। जिसमें ७ बिन्दु हों तो सूर्य संचार वश शरीर हृदय पुष्ट व सुख तथा धनागम, ६ बिन्दु हों तो प्रताप और उन्नति, ५ बिन्दु हों तो धन का आगमन, ४ बिन्दु हों तो शुभ व अशुभ फल समान, ३ बिन्दु में मार्ग जनित परिश्रम, २ बिन्दु में रोग का भय, १ बिन्दु व शून्य बिन्दुस्थ राशि में सूर्य का संचार होने से जातक को प्रायः क्लेश वा मरण भय होता है ॥ ३ ॥

चन्द्रमा के अष्टकवर्ग का फल

इन्दोर्भोगविभूतयोऽथ विभवाः वस्त्रान्नगन्धोद्भवाः
सन्मैत्री द्विजसङ्गमाद्धृतिमती दुःखाढयसौख्यस्थितिः ।
द्वेषो बन्धुजनैः प्रियार्थविरहोऽकस्माद् विपद्दुस्तरा
शोकोद्वेगजकष्टमत्र नियतं प्रोक्तं फलानामिदम् ॥ ४ ॥

चन्द्रमा के अष्टकवर्ग में जिस राशि में ८ बिन्दु हों उसमें चन्द्रमा के जाने पर भोग व ऐश्वर्य लाभ, ७ बिन्दुस्थ राशि में जाने पर वस्त्र-अन्न व सुगन्धित वस्तुओं से धनलाभ, ६ बिन्दुस्थ में सज्जनों से मित्रता, ५ बिन्दुस्थ राशि में जाने पर ब्राह्मणों की सङ्गति से धैर्य व सुन्दर मति का लाभ, ४ बिन्दुस्थ राशि में सुख व दुःख की समानता, ३ बिन्दुस्थ राशि में बन्धु-बान्धवों से कलह, २ बिन्दुस्थ राशि में प्रेमीजन का विरह व धनहीनता, १ बिन्दुस्थ राशि में अचानक कठिन विपत्ति प्राप्ति और शून्य बिन्दुस्थ राशि में चन्द्रमा के जाने पर शोक व उद्वेग जन्य कष्ट होता है ॥ ४ ॥

मङ्गल के अष्टक वर्ग का फल

आरस्यार्थमहीसपत्नविजयाः सौभाग्यकान्तिप्रदाः
राज्ञां बल्लभता प्रसिद्धगुणता साम्यं विपत्संपदोः ।
भ्रातृस्त्रीविरहो विपत्परिभवो राजाग्निपित्तज्वरैः
स्फोटैर्दूषित - गात्रता जठररुङ्मूर्च्छाक्षिरुङ्मृत्यवः ॥ ५ ॥

भौम के अष्टक वर्ग में जिस राशि में ८ बिन्दु हों उस राशि में भौम के संचार से जातक को धन व भूमिलाभ और शत्रु से विजय, ७ बिन्दुस्थ राशि में जाने पर सौभाग्य व सुन्दरता की वृद्धि, ६ बिन्दुस्थ राशि में राजा की प्रियता, ५ बिन्दुस्थ राशि में विख्यात गुणता, ४ बिन्दुस्थ राशि में सुख व दुःख की समता, ३ बिन्दुस्थ राशि में भाई और स्त्री का वियोग, २ बिन्दुस्थ राशि में जाने पर राजा, अग्नि तथा पित्तज्वर से कष्ट, १ बिन्दुस्थ राशि में घाव व पेट रोग से शरीर में अस्वस्थता और शून्य बिन्दुस्थ राशि में भौम की सत्ता वश मूर्च्छा (मिर्गी) नेत्र पीड़ा, व मृत्यु वा मृत्यु तुल्य शरीर कष्ट होता है ॥ ५ ॥

बुध के अष्टक वर्ग का फल

ज्ञस्य क्ष्मापतिमान्यता द्रविणतो विज्ञानसौख्याप्तयः
सर्वोद्योगफलोदयो नवसुहृत्प्राप्तिर्निरुद्योगता ।
चित्तव्याकुलताऽर्थहानिवशतः स्त्रीपुत्रमित्रादिभि—
वैराद् धैर्यमतिक्षयोऽथ सततं सर्वस्वहानिर्मृतिः ॥ ६ ॥

बुध के अष्टक वर्ग में जिस राशि में ८ बिन्दु हों उस में बुध के गमन से जातक को राजा से सत्कार ७ बिन्दुस्थ राशि में धन से विज्ञान व सुख की प्राप्ति, ६ बिन्दुस्थ राशि में समस्तकृत कार्यों में सफलता, ५ बिन्दुस्थ राशि में जाने पर नवीन मित्रों की प्राप्ति, ४ बिन्दुस्थ राशि में उद्योग करने में गतिरोध, ३ बिन्दुस्थ राशि में धन की

हानि से चित्त में व्याकुलता, २ बिन्दुस्थ राशि में स्त्री-पुत्रादि के द्वेष से धैर्य व मति का क्षय और शून्य बिन्दुस्थ राशि में बुध के संचारवश निरन्तर सर्वस्व को हानि तथा मरण भय होता है ।।६ ।।

गुरू के अष्टक वर्ग का फल

जीवस्याच्छयशः सुखार्थनिचयः सौभाग्यसौख्याप्तयो
वासो वाहनहेमलब्धिरहितध्वंसक्रियासिद्धयः ।
लाभच्छेदविहीनता श्रवणदृक्-पुंस्त्व प्रणाशादयो
भूभृत्कोपभयं गदैर्विकलता बन्ध्वर्थपुत्रक्षयः ।। ७ ।।

गुरू के अष्टक वर्ग में जिस राशि में ८ बिन्दु हों उस राशि में गुरू के संचार से जातक का सुन्दर यश-सुख व धन बढ़ता है । ७ बिन्दुस्थ राशि में सौभाग्य व सुख की प्राप्ति, ६ बिन्दुस्थ राशि में वस्त्र-वाहन व सुवर्ण का लाभ, ५ बिन्दुस्थ राशि में गुरू के जाने पर शत्रुओं का विनाश, और कार्यों को सिद्धि, ४ बिन्दुस्थ राशि में लाभ व हानि समान, ३ बिन्दुस्थ राशि में कान-आँख व उपस्थ में पीड़ा वा इनका नाश, २ बिन्दुस्थ राशि में राजा का कोप (क्रोध) डर, १ बिन्दुस्थ राशि में रोगों से बैचैनी और शून्य बिन्दुस्थ राशि में गुरू के जाने पर बन्धु-धन-पुत्र का विनाश होता है ।। ७ ।।

शुक्र के अष्टक वर्ग का फल

शुक्रस्याखिलभोगवस्त्रवनितापुष्पान्नपानाप्तयो
भूषामौक्तिकपौष्टयः प्रियवधूलाभः सुहृत्सङ्गमः ।
मध्यत्वं शुभपापयोर्जनपद्ग्रामोच्चविद्वेषिता
स्थानभ्रंशरुजः कफश्च विषमः सर्वापदां सङ्गमः ।।८।।

शुक्र के अष्टक वर्ग में जिस राशि में ८ बिन्दु हों उसमें संचार वश शुक्र के जाने पर जातक को समस्त प्रकार के भोग सुख, वस्त्र, स्त्री पुष्प, (सुगन्ध) अन्न, पान की प्राप्ति, बिन्दुस्थ राशि में जाने पर अलङ्कार व मोती का पुष्ट लाभ, ६ बिन्दुस्थ राशि में प्रिय स्त्री का लाभ ५ बिन्दुस्थ राशि में मित्रों का मिलाप, ४ बिन्दुस्थ राशि में शुभ (सुख) व पाप (दु:ख) की समता ३ बिन्दुस्थ राशि में नगर व ग्राम के लोगों से गहन शत्रुता, २ बिन्दुस्थ राशि में कठिन कफ जन्य व्याधि और शून्य बिन्दुस्थ राशि में समस्त विपत्तियों का सङ्गम होता है ।। ८ ।।

शनि के अष्टक वर्ग का फल

सौरेर्ग्रामपुरप्रजाद्यधिपता दासी खरोष्ट्राप्तयः
पूजाचोरनिषादसैन्य पतिभिर्धान्यार्थ सौख्यागमः ।
अन्योपाश्रितसौख्यता सुतवधूभृत्यार्थविध्वंसनं
बन्धोद्वेगरुजः महाऽधनतया भार्यादिसर्वक्षयः ।। ९ ।।

शनि के अष्टक वर्ग में जिस राँशि में ८ बिन्दु हों उसमें संचार वश शनि के जाने पर जातक को ग्राम या नगर वा प्रजा का स्वामित्व प्राप्त होता है ।

७ बिन्दुस्थ राशि में दासी, गधा तथा ऊँट की प्राप्ति, ६ बिन्दुस्थ राशि में चोर व निषाद के स्वामी से सत्कार, ५ बिन्दुस्थ राशि में धन, धान्य व सुख की प्राप्ति, ४ बिन्दुस्थ राशि में दूसरे के आश्रित रहने पर सुख, ३ बिन्दुस्थ राशि में पुत्र-स्त्री-नौकर व धन का नाश, २ बिन्दुस्थ राशि में बन्धन (जेल) उद्वेग (आवेश) व रोग, १ बिन्दुस्थ राशि में अधिक निर्धनता और शून्य बिन्दुस्थ राशि में शनि के जाने पर स्त्री आदि समस्त वस्तुओं का नाश होता है ॥ ९ ॥

उपसंहार

इत्थं होराशास्त्रं रचितं कल्याणकोविदेनैव ।
पूर्वाचार्यैर्निर्मितमवलोक्य मुदं प्रयातु दैवज्ञः ॥ १० ॥
पौलिस-वसिष्ठ-रोमश-यवन-बादरायणाः शक्तिः ।
अत्रिश्च भरद्वाजो विश्वामित्रो गुणाग्नि केशौ च ॥ ११ ॥
गर्ग-पराशर-जीवा एतैरन्यैश्च विस्तरं रचितम् ।
कथयति शास्त्रेषूक्तं जातकमितिं चित्रगुप्तकृतम् ॥ १२ ॥

इस प्रकार पूर्वाचार्यों द्वारा रचित होरा शास्त्र का विद्वान् कल्याण वर्मा ने भी सारावली नाम से निर्माण किया, इसको देखकर ज्योतिषी जन प्रसन्नता का अनुभव करें। पहिले पौलिस-वसिष्ठ-रोमश-यवन-बादरायण-शक्ति-अत्रि-भरद्वाज-विश्वामित्र-गुणाकेश-अग्निकेश-गर्ग-पराशर-जीवशर्मा इन आचार्यों नें तथा अन्याचार्यों ने भी जातक शास्त्र का निर्माण विस्तार से किया है, जो कि होराशास्त्र चित्रगुप्त के लिखे हुए प्राणियों के सुख व दुःख का ज्ञान कराता है ॥ १०–१२ ॥

॥ इति कल्याणवर्मविरचितायां सारावल्यां चतुः पञ्चाशोऽध्यायः ॥

इति मथुरावास्तव्य श्रीमद्भागवताभिनवशुक पं० केशवदेवचतुर्वेदात्मजमुरलीधर चतुर्वेदकृतायां कान्तिमती हिन्दीव्याख्यायां सारावल्याः चतुः पञ्चाशोऽध्यायः ॥

श्लोकानुक्रमणिका

अ० श्लो०

अ.

अकलत्रं सुखरहितं २५-५८
अकुलीनो विकलाङ्गः १६-२७
अकुशलकर्मा द्वेष्यः ३०-३४
अगृहः प्रभिन्नदारः ४४-४०
अग्नीनां परिचारका २०-३०
अङ्गप्रत्यङ्गानां छेदं ४०-७२
अङ्गारकोऽपि कुरुते ४४-१३
अचतुरममृष्टवाक्यं २३-५४
अजवृषकर्किविलग्ने १२-१०
अजसंस्थानमुखः ५०-२
अजादितः क्रूरशुभौ ३-२०
अटनप्रियाः सुरूपा २१-४३
अटनप्रियोऽल्पसत्वः २२-५७
अटनमसुखं दरिद्रं २३-२९
अत उत्तरेण चण्डाः ३६-१५
अत एव विस्तरेभ्यो १-४
अतस्तृतीये नक्षत्रे १०-७५
अतिकर्मंकृदतितीक्ष्णो ४५-२४
अतिकामं कुजदृष्टो २३-१०
अतिकृष्णतनुं शूरं २५-६१
अतिचपलमतिविरूपं २०-३०
अतितप्तो वाचाटो १६-११
अतिथिद्विजदेवरतिः ४७-२८
अतिदुष्टदारशत्रुः २६-२२
अतिधनमतीव मधुरं २७-३२
अतिपरिभूतः कृपणः ३०-५२
अतिमतिरतितेजस्वी ३०-२१
अतिमतिरतिविभवबलो ३०-११
अतिमदमतीव सुभगं २३-५६
अतिमधुरगमनमधनं २५-६३
अतिमलिनमति च शूरं २३-७३

अ० श्लो०

अतिमलिनमलसमटन २८-३०
अतिरूपदारसौख्यं ३०-६८
अतिरौद्रमति च शूरं २८-५५
अतिललितमति च धनिनं २७-३५
अतिविभवमत्युदारं २३-६८
अतिशयधनो नयज्ञो १५-१८
अतिशयवलयुक्तः २०-२७
अतिशयरूपं ललितं २६-५३
अतिशूरमतिप्राज्ञं २३-१८
अतिशूरं विक्रान्तं २९-६३
अतिसुभगमति च मलिनं २७-६०
अतोंशके लग्नगते तु ५०-१
अत्यरिभवनं प्राप्तैः ३८-२१
अत्यर्थं द्युतिमन्तं २७-४४
अत्युग्रतरो नृपतिः २३-२
अत्युग्रमतिद्रव्यं महान्तं ४४-१
अत्युच्चस्था रुचिरवपुषः ३५-३३
अथवा निषेककाले ८-६३
अथवाप्यन्यतरयुते १०-५९
अथ होरागतो भौमः १०-९१
अथ होरागतः सूर्यो १०-८५
अदृढस्मृतिं दरिद्रं २३-४३
अधनः कदशनतुष्टः ३०-२७
अधनः परोपकारी २९-१९
अधनं दुःखितमटनं २३-६६
अधनं व्याधितमटनं २३-४५
अधिकद्वेष्यं स्त्रीणां २८-५७
अधिकमनिष्टं स्त्रीणां ३०-६७
अधिमित्रगते केन्द्रे ३५-१४५
अधिमित्रांशगश्चन्द्रो ३५-११२
अधियोगादयोऽन्येऽपि १३१-३३
अध्वनिरतः सुपुण्यप्रसक्त २५-१३

अ० श्लो०

अनुपचयराशिसंस्थे ८-२
अनिवारितरणवेगः २२-४६
अनुदितचक्रार्धयुतैः ९-२२
अनुपमदेहं कुरुते २३-६२
अनुपमधैर्यं कुरुते २३-५३
अनुपमविद्यावृत्तं २७-६६
अनुपहतदेहबुद्धिः ३०-३८
अनुपातात्तिथिः कल्प्या ५१-४
अनुयाति शिष्टपदवीं ४१-५३
अनृतप्रियं सुवाक्यं २६-२७
अनृतं वञ्चनपापं २७-२८
अन्तर्दशा ग्रहाणां ४१-९
अन्तर्दशा दशायां भृगोः ४१-४७
अन्तर्दशा दशायां सितस्य ४१-४४
अन्तर्दशा यदा (स्यात्) ४१-१०
अन्तर्दशा शुभायां ४१-५६
अन्तर्विषमः कामी ४७-१५
अन्तःसारान् वृक्षान् ५३-२०
अन्त्याष्टमादिभागे ३८-३
अन्त्ये तृतीयभागे जल ४६-३६
अन्त्ये तृतीयभागे लोष्टक ४६-३७
अन्त्ये वयसि च लक्ष्मी २९-१८
अन्यैः क्रूरोत्पातैः ३८-१२
अन्योन्यभागगतयोः ४५-१८
अन्योन्यं रविचन्द्रौ ८-१८
अपगतधृतिरूक्षश्मश्रु ३७-२३
अपरिमितायद्वारो ३०-६०
अबलग्रहराशिगताः ५३-२६
अब्दाधिपाश्चतुर्थाः ७-२
अभिघाताद्विषपानात् ४६-३०
अभिजातं कुलपुत्रं २३-३४
अभिमुखकरप्रवाहः ३६-२८
अयनक्षणदिवसर्तुक ४-१७
अयमेव समुद्राख्यो ३५-९१
अर्कः कलिङ्गविषये ७-१४

अ० श्लो०

अर्कार्किभ्यां दृष्टे २२-१२
अर्कादिग्रहदैवतमन्त्रैः ४-१३
अपरश्चारुवचा २९-१३
अर्थविहीनः प्रेष्यो न २९-३
अर्थार्जने सहायः २-५
अर्थोत्पादनकुशलं २३-१९
अर्धमेकस्थितो भागं ४१-१
अलसं मलिनं सधनं २३-७१
अलसशठः कुटिलनसो ५०-८४
अलसं सुखिनं स्थूलं ३०-७३
अललितसुखमित्रयुतो ३०-१५
अलसो लोकद्वेष्यो ३०-६१
अलिनि त्रिविंशयुक्ते १०-११२
अल्पवदनश्च मध्ये ४९-२९
अल्पायुर्बन्धनभाग्दीनो १८-३
अविकलमतिं नयज्ञं २३-३६
अवितथकथनं मधुरं २६-३७
अविरूपं मन्दगृहे २५-६४
अविषादी कर्मपरः ३०-२३
अंशपतेश्चन्द्रस्य २४-२४
अंशाधिपजन्मपती १०-१७
अशुचिः परान्नकांक्षी २२-५५
अशुभगगनवासैः ३५-३
अशुभशुभैः सन्दृष्टे १०-५२
अशुभे क्षीणेऽस्तगते ४५-१७
अंशे मीनयुगाद्ये ४६-४४
अंशोद्भवं विलग्नात् ३९-२
अश्विन्यनुराधास्यः ३५-१६५
अष्टमगतस्य भानोः ४०-५९
असदृशकायः पूज्यः १६-१४
असहः प्रचण्डशूरः २५-९
असहिष्णुरनिष्टसुतः ४७-१२
असितजलदकान्तिः ३७-१९
असुरदयितोऽस्वतन्त्रं ४४-१८
अस्तंगतो विरश्मिः ३६-९

अ० श्लो०

अस्तेऽशुभयुतदृष्टे ८-९
अस्त्राचार्यो मतिमान् ३१-५८
अस्मिन्नायुर्दाये ३९-१
अस्वस्थो विकलाङ्गः १६-२२
अहितेभ्योऽर्जनभीरुः २५-१२

आ.

आकरगिरिदुर्गरतं २५-४२
आग्नेयसौम्यदृष्टौ ८-५४
अचारशौचनिरतो २६-२३
आचारसत्यशुभशौच ५=४५
आचार्यो व्रतदीक्षा २७-१७
आजन्मतो नराणां ३४-६८
आजीविनां कुहकिनां २०-३३
आढ्यः कर्मोद्युक्तः ३२-१५
आढ्यं नृपात्तकीर्ति ४४-२४
आढ्यस्त्वनेकविद्यो २८-४
आढ्यो रुचिरसुपुण्यो २८-१४
आताम्रदारिताक्षः ४८-२२
आत्मत्रिकोण आर्किः ४४-८
आत्मनि रक्षानिरतः २१-३७
आत्मादयो गगनगैः ४-२
आत्मा रविः शीतकरः ४-१
आत्मीयनाथदृष्टः ३-२५
आदित्यगुर्वार्किशशाङ्कपुत्राः २०-४
आदित्यस्य दशायां शनै; ४१-१७
आदित्ये हिबुकस्थे ३१-१९
आदौ दशासु फलदः ४०-७५
आद्यन्तवयसि सुखिताः २१-२६
आद्यन्तवर्णलोपात् २-२
आद्याम्बुसिक्तवसुधागरु ३७-२१
आद्ये कन्यात्र्यंशे ४६-३३

अ० श्लो०

आद्ये मिथुनत्र्यंशे ४६-२७
आद्येऽलिनस्त्रिभागे ४६-३६
आद्ये वणिक्त्रिभागे ४६-३५
आधाने जन्मनि वा ५३-५
आधाने हि मयोक्त ९-१
आधानोदयशशिनोः ८-४७
आनृतिककितवबन्धन २१-२२
आनृतिकमधर्मपरं २९-२८
आनृतिकगुप्तिपालाः २१-२४
आनृतिको बहुवित्तो १३-२०
आपूर्णमण्डलकलाकलितं ३५-२८
आपूर्यमाणमूर्तिर्द्वादश ११-९
आभरणभूषणानां २८-५८
आयतकुञ्जातानां २९-४८
आयनबलसमुपेतो ५-३७
आयुर्ज्ञानाभावे सर्वं १०-१
आयुषो येन यद्दत्तं ४०-१
आये बुधेऽपि वर्गे ३४-६१
आरक्षकः प्रधानः ४४-२९
आरण्यभवनलग्ने ९-१०
आरस्यार्थमहीसपत्नविजयाः ५४-५
आरामपुत्र (बुद्धि) सेवा ३३-६६
आर्योचितवाग्वृत्तिः १७-३
आर्यं ग्रामश्रेष्ठं कुटुम्बिनं २७-३७
आर्यः कुलटाद्वेषी २८-१६
आविंशतेर्भवेयुः ३६-१३
आशाबलसमुपेतो ५-३६
आश्रययोगे जाता २१-७
आहितकलासमूहः ५-१७
आहितधनः सुमेधाः २७-५

इ.

इज्याव्रतनियमपराः ३४-५

अ० श्लो०
इतिहासकाव्यकुशलं २७-२६
इतीरितोऽयं स्वगुण ४९-२७
इत्याकृतिजा एते विंशति २१-१७
इत्याधानविधानं ८-६२
इत्याधानं प्रथमं ८-५२
इत्युक्तं शुभमन्यदेवमशुभं ५२-९
इत्थं होराशास्त्रं ५४-१०
इन्दुर्जलं कुजोऽग्निर्जलम् ८-३
इन्दुसुतस्य दशाया ४१-३०
इन्दुः स्वोच्चे पश्यन् ३५-१११
इन्दोर्भागविभूतिकाञ्चन ५४-४
इषुकरणदस्युबन्धन २१-३८
इह तु द्वादशभागो ५३-३०

ई.

ईड्येज्यावङ्गिरा जीवः ४-११
ईर्ष्यान्विता सुखपरा ४५-२५
ईश्वरभृतको मूर्खः ३१-७३
ईषत्पिङ्गललोचनश्रुति ४-२५

उ.

उक्तं बहुप्रकारं ३२-११५
उक्तं फलं गगननगा १५-२३
उक्तो हि यवनवृद्धैः ५२-१
उच्चबलेन समेतः परां ५-२८
उच्चबलं कन्यायां बुधस्य ५-२१
उच्चं भागत्रितयं वृष ५-२२
उच्चराशिभंवेद्धोरा ३५-३६
उच्चराशौ विलोमे च ५-१४
उच्चस्थः शशितनयः ३५-११६
उच्चस्थस्त्रिदशगुरुः ३५-१२१
उच्चाभिलाषी सविता ३५-४९
उडुपतिकृतरिष्टानां ११-२
उत्कृष्टवाक् स्थिराङ्गः ५०-४५
उत्तमरूपो गुणवान् ३२-२४
उत्तरमयनं प्राप्ताः ४-२७
उत्तमगृहशयनानां ३२-१४
उत्तमरामः सुभगो १३-२२
उत्पातक्रूरहते तस्मात् ८-३२
उत्सवसमाजशीलो ३२-११
उत्सृष्टवचाः स्मृतिमान् १४-६
उत्सृष्टा सूर्येऽस्ते ४५-१६
उदकचरनवांशकेषु ३५-२७
उदयगिरिनिविष्टैः ३५-७
उदयति गुरुरुच्चे ३५-१८
उदयति मीने शशिनि ३५-१४
उदयति वणिग्विलग्ने ५३-५४
उदयनवांशाधिपतेः ४६-२०
उदयशिखरिसंस्थो ३५-१७९
उदयाद्द्वाविंशतिम० ४६-२२
उदयास्तगतैः पापैः ८-३६
उदितांशसमो मोहः ४६-२१
उदये दिनकरपुत्रे ३४-७८
उदयेऽन्त्यागस्त्यमुनेः १२-९
उदयस्सुरमन्त्रिवरो ३५-७०
उद्गतदशा व्यतीता ५१-२०
उद्घोणो रूक्षदेहः पृथुक २३-७२
उद्दण्डघोणकुक्षिः ५०-८७
उद्धतमूर्तिः सुशिराः ४८-७
उद्बन्धनमतिचपलं २८-२६
उद्भिज्जरायुजानां तथैव ५३-२७
उद्यानसुभवा ३०-७१
उद्युक्तकर्मसुभगः ४७-८
उन्नतविततललाटः ५०-३९
उन्नासश्यामचक्षुः सुरत २३-१६
उन्नासो व्यायताक्षः २३-४४
उद्वेगरोगतप्तः २८-२१
उपकारी च परेषां ३८-१०
उपचयगृहसंस्थो जन्मपो ३५-३२
उपचयभवने शशभृद्दृष्टो ८-५
उपचयगौ रविशुक्रौ ८-११
उपासका बुद्धसमाश्रयं २०-३२
उभयस्थिरचरसंस्थैः २१-१८
उल्कायाः पतने चैव ३८-११

अ० श्लो०

ऊ
ऊनातिरिक्तदेहा २१-४५
ऊर्ध्वं पञ्चदशाप्तिः ३६-१२

ऋ
ऋक्षं भवननामानि ३-८
ऋग्वेदाधिपतिर्जीवो ४-१९
ऋणवान् डम्भप्रायः १५-१९
ऋतुवाच्यो दृगाणांशे ५१-२

ए
एक एव खगः स्वोच्चे ३५-३०
एकतमे गुरुवर्गे ३४-२६
एकत्रिंशद्भिस्तु प्रवरा। ३६-१६
एकं त्रीनथवा वहन्ति २०-३४
एकद्वित्रिचतुर्थां ४१-७
एकभवनादिसंस्थैः २१-१९
एकर्क्षगतैः सर्वैः २०-२९
एकर्क्षसंस्थितदशा ४१-६
एकस्मिन् पञ्चकृतौ पञ्चकृतौ ३५-१६१
एकस्त्रिशद्भागैर्युक्तः ७-४
एकान्तरगैर्विहगैः ३५-९०
एकादशगे धनवान् ३०-३६
एकादशे तृतीये होरायां १०-६८
एकादि पञ्च यावत् ३६-१०
एकांशस्थितयोर्वा ६-४०
एकेनापि न दृष्टं ३४-६
एकेनापि शशाङ्को ३८-१९
एकैकेन फलं स्यात् ८-७
एको जन्माधिपतिः ११-१७
एकोनविंशतिर्भानोः ३९-१३
एकोऽपि विहगः कुर्यात् ३५-६४
एकः पापोऽष्टमगः शुक्र १०-८
एकः स्वोच्चे शुभगगनगः ३५-१४१
एते न यदा योगाः १३-२
एतेनैव तु विधिना १०-६७
एतेषां गुणदोषान् ३-१९

अ० श्लो०
एतेषां फलयोगं कथयामि २१-२०
एते समस्तयोगाः ३६-६३
एते सर्वे भङ्गा मया १२-१५
एभिर्लग्नाधिगतैः ३-३८
एवं क्रमेण हृत्वा ५१-१५
एवं क्रूरैर्नांशो ३४-४६
एवं त्रिभिश्चतुर्भिः ३१-८७
एवं त्र्यादिषु वाच्यं ३३-८९
एवं फलनिर्देशः ३४-६५
एवं महेन्द्रशास्त्रे ३६-३
एवं यद्भवति रजो गर्भस्य ८-४
एवं सर्वप्रयत्नेन जायमानस्य १०-११५
एवं स्थानविशेषैः ३८-५१
एष्विह भवन्त्यवश्यं ३५-४

ऐ.
ऐन्द्राद्यं परिवर्तैस्त्रितयं ३-२२
ऐश्वर्यरत्नकाञ्चन ३२-८

ओ.
ओजर्क्षे गुरुसूर्यौ ८-१५
ओजसमराशिसंस्थौ ८-२०
ओजस्विनमतिशूरं २८-६२
ओजस्वी बहुशत्रुः २७-२
ओजस्वी साहसिको १५-३
ओजे स्थिताः पुमांसः १०-२

औ.
औत्पातिकः कृशतनुर्निशि २१-३१
औत्पातिकाः सवितृलुप्त ५-२७

क.
कटुकण्टकिनो रुधिरः ५३-७१
कटुलवणतिक्तमिश्रित ४-१५
कन्दर्परूपनिपुणः ४९-१९
कन्दर्पसदृशरूपं २६-४७
कन्याकुमारकाणां २६-५६
कन्यानामतिदयितं २५-५९
कन्यानुजो न बन्धुः ४७-१६

	अ० श्लो०
कन्यापुररक्षकरं	२५–३८
कन्यामीनांशस्थान्	८–२६
कन्यायां पद्मिनीशत्रुः	४६–५
कन्यायां प्रथमेंशे	१०–११३
कन्यायां बहुदारं	२३–४२
कन्यालिवृषभर्सिंहे	४५–२८
कन्याविलाससत्वस्थितिः	४७–२३
कन्याविलाससत्वस्थितिः	४७–२३
कन्यैव स्वगृहे दुष्टा	४५–६
कफमारुतरोगार्तः	२२–३३
कफवातिकक्लिरुचिको	४७–२७
कमलदहनदीप्तिः	३७–२०
कमलभवनबन्धुः	३८–२४
करभखरशस्त्रतोयात्	४६–३४
करभाश्वखरोष्ट्रेभ्यो	४६–२५
करोत्युत्कृष्टोद्यद्दिनकृद०	३५–१६
कर्कटकादिमभागे	४९–१०
कर्कटके शशिजीवौ	३५–१६३
कर्कटधामनि सौम्यः	१०–१०
कर्कटसंस्थः केन्द्रे	३५–१९
कर्किणि मन्दे मकरे	४६–४
कर्किणि लग्ने भीरुः	४७–१४
कर्किलग्ने गुरुः सेन्दुः	३९–२२
कर्तारो नृपतीनां	३८–१३
कर्पूरजात्युत्पलपुष्पगन्धो	३७–१६
कर्मणि दिनकरसितयोः	३१–२१
कर्मणि सुरेज्यशशिनोः	३१–३७
कर्मपरां शुद्धांगीं	२८–४३
कर्मफललाभहेतुम्	२–३
कर्मसु चपलः ख्यातो	२२–२६
कर्माम्बुवित्तसंस्थैः	४६–१३
कर्मासक्तं कुरुते	२३–५५
कर्मास्तजलहोरासु	३५–९४
कर्मोद्युक्तो दशमे	३०–३५
कर्षकमतिकर्मकरं	२३–६

	अ० श्लो०
कर्षकमधनं कुरुते	२३–३६
कर्षणनिरतमथाढ्यं	२९–२५
कलहप्रियो मृदुवचाः	२५–३३
कलहप्रियं कुलीनं	३२–५९
कलहरुचिर्निद्रालुः	१७–२२
कविकुसुमभोज्यमणि	७–८
कष्टदशा व्यसनकरी	४०–६७
कान्तः क्लेशसहिष्णुः	२५–५
कान्तः प्रतापगुणवान्	५०–१०६
कान्तः श्रुताभिनिरतो	२७–१४
कान्तं मधुरं सुभगं	२८–३४
कान्तानुरतो गौरो	५०–९५
कान्तान्नपानगृहवस्त्र	१३–७
कान्तासुवर्णवेसर	४०–४२
कान्तिविहीनं मलिनं	३२–६६
कामपरमति च सुभगं	२८–३९
कामरतिं गणमुख्यं	२७–६४
कामी बहुतुरगनरः	१८–११
कामे विवादकुशलो	१६–५
कारकयोगे जाता	३५–१२७
कारकवेधो बलवान्	६–६
कार्मुके त्रिदशनायकमन्त्री	३५–२५
कार्यविनाशनदक्षः षण्डो	२२–४१
कालनरस्यावयवान्	३–६
काव्यकथास्वतिनिपुणः	१५–६
कीर्तिसुखमानविभवैः	३१–१७
कुकुलोद्गतां सुशीलां	४७–६
कुजज्ञवागीशसितार्कि	२०–११
कुजभृगुबुधेन्दुरविशशि	३–११
कुजसौरयोस्त्रिकोणे	९–३७
कुजार्कजीवार्किभिरत्र	३८–२
कुजार्किदेवेड्यसितेन्दुपुत्रैः	२०–१८
कुजार्किसोमात्मजदेव	२०–६
कुजेन्दुसूर्यज्ञपुरोहितैश्च	२०–३
कुजे विलग्ने च शशी	३५–१५

	अ० श्लो०
कुजे विलग्ने तरणेश्च	३५–१३८
कुजोऽलिगोऽथ मेषे	३५–१८४
कुत्सितयोषिद्रमणो	१३–२३
कुत्सितरामाभर्ता	२:–८
कुत्सितशील: कान्त:	४७–४१
कुन्दाब्जकाशधवल:	३५–१२५
कुब्जाङ्गो वृत्तनेत्र: पृथु	२३–५८
कुमुदगहनबन्धुं	३५–६०
कुमुदगहनबन्धौ	३५–४८
कुमुदवनसुबन्धुं	२०–२६
कुम्भ: कुम्भधरो नरोऽय	३–४
कुम्भविलग्ने पुरुष:	४७–४२
कुम्भस्य पञ्चदशके	३५–१५९
कुम्भस्याष्टमभागे	३५–१:७
कुम्भेऽतिसत्यवाक्यं	२३–७४
कुम्भे दिशति शशाङ्को	१०–१११
कुम्भे प्रथमत्र्यंशे	४६–२
कुम्भोदयो न शस्तो	४७–४५
कुरुते ज्योतिषकुशलं	२७–४०
कुरुते द्विमातृपितृकं	२९–६०
कुरुते बान्धवरहितं	२२–२२
कुरुते भयं कुलस्य	४०–३२
कुरुते लोकद्वेष्यं	२३–५२
कुरुते शत्रुगृहेऽर्को	४४–१९
कुरुते शशी धनाढ्यं	२३–५०
कुरुते शशी सुशीलं	२३–८४
कुरुते हिमकरपुत्र:	४४–१७
कुर्यात्तुङ्गे त्रिकोणे वा	३५–६६
कुलगुणवृद्धैर्वादो	४०–४७
कुलटापति: प्रगल्भ:	१७–२६
कुष्टभगन्दररोगै:	३०–८१
कूटकरो बह्वाशी	२६–२
कृतकोपचारकुशल:	२६–१४
कृतधर्मकीर्तिरम्यस्तेजस्वी	१७–२८
कृत्तिकारेवतीस्वाती	३५–१४९
कृष्णनयनं सुकेशं	२८–३८
कृष्णारबुधगुरुसिता:	४–४०
कृष्यादिकर्मधनवान्	४७–२१
केतुर्यस्मिन्नृक्षेऽभ्युदित:	१०–१२
केतोरुदयं पूर्वं	१०–१०९
केन्द्रगौ यदि तु जीव	३५–१७८
केन्द्रस्वोच्चमुपेत:	३५–७९
केन्द्रात्परं पणफरमापो	३–३२
केन्द्रादिसंस्थिते खेटे	३१–८
केन्द्रादिस्थैर्ग्रहैर्योग:	१३–८
केन्द्रायास्तधनेषु	५२–६
केन्द्रे रविमुषिततनु:	१०–१०३
केन्द्रे विलग्नाथ: सुहृद्भि:	३५–३९
केन्द्रे विलग्नाथ: श्रेष्ठ	३५–११८
केसरिगो महेन्द्रसचिवो	३५–२४
कौमारदारमाढ्यं	२७–४५
क्रुद्धो मायानिपुण:	१६–३
क्रूरदशायां क्रूर:	४२–१
क्रूरभवने शशाङ्को	११–११
क्रूरराशौ स्थित: पाप:	४२–३
क्रूर: साहसनिरत:	३०–२६
क्रूर: सौम्यकृहस्थो	५३–२२
क्रूरान्तस्थ: सूर्य:	८–३५
क्रूराहत:	४–४२
क्रूरे जामित्रगते नवमे	४५–३०
क्रूरेषु राशिसन्धिषु	८–५७
क्रूरैर्गृहसन्धिगतै:	८–५६
क्रूरैर्नीचै रिपुभवनगै:	३५–१३१
क्रूरैर्विरूपदेहा लक्षण०	९–२३
क्रूरै: सुबलसमेतै: सौम्यै:	५३–४
क्रोधापरोऽसद्वृत्तो	२२–४७
क्लीबं गुरुर्विधत्ते	४४–२१
क्लीबाचारो द्वेष्य:	१६–१२
क्लीबाचारो मानी	१७–१८
क्लीबो विपन्नचेष्ट:	२८–२०

	अ० श्लो०
क्लेशो मातुः क्रूरैर्वन्ध्व०	९—३४
क्वचिद्राज्यं क्वचित्पूजां	५—३८
क्वचित् स्वभाग्यैः क्वचिदेव	२१—१०
क्षमासुतः स्वोच्चमुपाश्रितो	३५—८६
क्षयरोगभयं शौर्यं	४१—१८
क्षितितनयस्य दशायां	४२—२
क्षित्याजाविकतान्त्रिक०	४०—३४
क्षीणशरीरश्चन्द्रो	१०—२०
क्षीणेन्दुदशायोगे	४०—६२
क्षीणेन्दुभौमरविचन्द्र	४६—११
क्षीणे शशिनि विलग्ने कण्टक	१०—३८
क्षीणे शशिनि विलग्ने पापैः	१०—३२
क्षीणे शशिनि सपापे	९—४९
क्षीणं यदा शशाङ्कं	१२—११०
क्षुत्तृष्णार्तिः शोको	४०—२८
क्षुद्रः कठारचोरः	२८—२
क्षुद्रः परधनलुब्धो	३१—२८
क्षेत्रगृहाणां सुहृदां	२९—४७
क्षेत्रे ग्रहेन्द्रतुल्यां	३४—४४
क्षोणीभर्ता याने यस्य	३५—१५३

ख.

खट्वाङ्गपाशवृषकार्मुक०	३७—३२
खट्वास्थितिर्भवनव०	९—१८
खरोष्ट्रयोः पञ्चवर्गः	३९—२४
ख्याता मृदुसुखमूर्तिः	५०—५५
ख्यातं नरेन्द्रपुरुषं	२८—५६
ख्यातं विशिष्टचेष्टं	४४—३३
ख्यातः कर्मसु विभवी	१३—२१

ग.

गगनस्थो दिवसकरः	१०— ३
गगनस्थौ गुरुशुक्रौ	२१—३८
गजतुरगगोधनाढ्यं	२८—४९
गणोत्तमे लग्नवांशकोद्गतो	३५—६
गण्डान्तविष्टिपरिघ०	३५—८८
गण्डोदराक्षिरोगैः	४१—४३

	अ० श्लो०
गन्धर्वलेख्यपटुः कविः	१३—१६
गम्भीरदृक्सुघोणो	५०—२०
गम्भीरदृक् स्थिरात्मा	५०—३०
गम्भीरदृगलसात्मा	५०—१२
गम्भीरपिङ्गलोद्धतदृक्	४७—३१
गम्भीरस्ताम्राणो	५०—६९
गम्भीरः स्थिरसत्वो	२८—३५
गर्ग…पराशर	५४—१२
गर्भप्रसवविधानं	८—४६
गर्भाधाने चरे राशौ	८—४५
गलितेन्द्वर्कभूपुत्रैः	४५—१६
गान्धर्वकलाकामः	५०—८५
गान्धर्वशिल्पकुशल	४७—११
गम्भीरर्यसत्वमेधास्यान	१३—१७
गिरिदुर्गतोयकानन	३१—५३
गिरिवनचारी शूरः	४७—४०
गीतज्ञः शीतभीरुः	२३—६४
गीतापरार्धभागी	४९—१८
गुणवान् परदोषकरः	४९—३
गुणवान् विपन्नशीलः	५०—१०४
गुरुचन्द्रदानवेज्याः	३४—३०
गुरुणा कविप्रधानं	२४—५
गुरुणा कुजेन भृगुणा	५१—१४
गुरुदृष्टो मीनस्थो	२३—८३
गुरुबुधचन्द्रा नवमे	३२—७१
गुरुबुधशुक्राः सौम्याः	४—९
गुरुभागे गुरुदृष्टो	२४—१६
गुरुभेऽसृक् शनिदृष्टः	२५—६०
गुरुभौमसौरसूर्याः	३२—२४
गुरुरपि दशमस्थाने	३३—११
गुरुर्मृगे विलग्नस्थो	३८—१८
गुरुविबुधातिथिभक्तो	४१—३४
गुरुशशिरवयो नीचे	९—३३
गुरुशुक्रयोः स्ववर्णाः	३४—४९
गुरुशुक्रौ च केन्द्रस्थौ	१२—१३

अ० श्लो०
गुरुसौम्यशुक्रचन्द्राः ३२-१०५
गुरुस्त्रिकोणे होरायां १०-९२
गुरुहिमगुरवीणामेकः २०-२५
गुरोः पञ्चदशाब्दानि ३९-१४
गृहवास्तुज्ञानरतं २७-५२
गृहशयनवसनगन्धैः २७-२९
गेयरतिः स्त्रीसङ्गो ४०-४६
गोधानां सर्पाणां ५३-४३
गोलयुगशूलपाशाः २१-५
गौरो झषनेत्रगुरुः ५०-३७
गौरोऽतिरक्तनयनः ५०-२२
गौरोऽपि रक्तदेहः ५०-१०१
गौरो मृगाकृतिमृदुः ५०-७३
गौरो विशालनेत्रः ५०-५६
गौरोऽश्वमुखः सुरदो ५०-५८
गौरो हयाकृतिमुखो ५०-८२
गौरः पृथ्वायतहृत् ५०-६६
गौरः शठः सुचक्षुः ५०-१०३
गौरः सुनेत्रवाग्मी ५०-३१
गौरः स्थिरः प्रचण्डो ४९-२२
ग्रहणोपगते चन्द्रे १०-३७
ग्रहयुक्तं वा नियतं ९-२०
ग्रहाणां स्वोच्चसंस्थानां ५-४८
ग्रहाः समेयुर्बहवो १०-८७
ग्रामक्षेत्रतरूणां २३-३६
ग्रामपुरश्रेणीनां पुरोग २९-५३
ग्रामसहस्राधिपतिं ३६-१७
ग्राम्यगृहेषु नवांशाः ५३-५२
ग्राहेण मद्यपानात् ४६-२९

घ.

घटशीर्षो शुचिकर्मा ५०-२१
घटसिंहवृश्चिकोदय १०-१०८
घटोदये नीचगतैः ३८-६
घण्टाशिराः कुशिल्पी ५०-३६
घण्टाशिरो नतास्यः ५०-३३

अ० श्लो०
घण्टाशिरोऽल्पकेशो ५०-४२
घृतमण्डगौरगात्रो ५०-४१

च.

चक्रस्य पूर्वभागे पापाः १०-३१
चण्डाकारो वश्यो ४७-१३
चण्डं साहसनिरतं ४१-२४
चतुरश्रस्थिताः पापाः १०-७७
चतुरोऽल्पभाग्यवीरो ४९-६
चतुर्थस्थानसस्थस्य ४१-११
चत्वारिंशद्युक्ताः पञ्चा० ३६-२६
चन्द्रः कुजरवियुक्तः १०-२७
चन्द्रः पुष्ये नृपतिं ३५-१६४
चन्द्रः शुभवर्गस्थः ११-६
चन्द्रः संपूर्णतनुः ११-४
चन्द्रः स्वसुतसमेतः ३२-३७
चन्द्रचतुर्थैः क्रूरैः ८-३८
चन्द्रज्ञकुजसुरेज्याः ३२-९९
चन्द्रदशायां ज्ञदशा ४१-२०
चन्द्रदशायां प्राप्ता ४१-२१
चन्द्रदशायां वित्तं ४०-२९
चन्द्रदिवाकरगुरवो ३२-५८
चन्द्रबुधशुक्ररवयो ३२-८८
चन्द्रबृहस्पतिशुक्राः ३२-७४
चन्द्रशनिशुक्रजीवाः ३२-१०८
चन्द्रस्त्रिपुष्करस्थः ३५-७८
चन्द्रात्त्रिकोणराशौ ९-३६
चन्द्रादष्टमराशौ १०-५०
चन्द्रादित्यौ तृतीयस्थौ १०-७४
चन्द्रादुपचयसंस्था ३५-१६७
चन्द्राद्ग्रहैर्निगदिताः ३५-१७७
चन्द्राद्दशमे भानुभूपुत्रो ३३-३१
चन्द्राद्दशमे भानुर्मातुः ९-३५
चन्द्राद्दशमे सूर्यः ३३-८
चन्द्राध्यासितराशेर्नाथो ५-१८
चन्द्रारभानुजसिताः ३२-१०४

अ० श्लो०
चन्द्रार्कभार्गवशशाङ्कसुताः २०–१५
चन्द्रार्कयोरेकतरे ४८–२५
चन्द्रार्काभ्यां दृष्टे ३२–६
चन्द्रावनेयसोमजसित० ४०–२१
चन्द्रे कुजेन दृष्टे पुष्पवती ८–६
चन्द्रेक्षितस्तु कुरुते २७–३८
चन्द्रेन्दुपुत्रासुरेड्यभास्करैः २०–८
चन्द्रे भवति न शूरो ३०–१८
चन्द्रे भौमांशगते ३४–३२
चन्द्रोऽपि धनस्थाने ३४–१९
चन्द्रो भार्गवसहितो ३२–१९
चन्द्रो रुधिरसहायो ३२–३६
चपलं नीचप्रकृतिं २९–२६
चपलः शठः कृतघ्नो ४९–२१
चपलमसत्यं पापं २९–६२
चपलमहितं जनन्या २५–६२
चरराशिगते सूर्ये १०–५१
चरराशिगतं सौरं १०–५२
चापस्याद्ये त्र्यंशे ४६–३८
चापार्धे भगवान् ३५–२०
चापे भवेत्सुरगुरुः ३५–१४०
चारित्रविहीनायाः पुत्रो १६–३१
चारुर्दीर्घभुजः पृथूरु ४–२६
चित्रं नवं भृगुसुते ९–१५
चिन्तयेज्जायमानस्य १०–११६
चिन्ता स्वप्नानुभवैः ४०–७४
चिपिटाग्रनासिकः स्यात् ५०–८१
चूडा यदार्कसक्त ३४–३५
चोरः परदाररतः कुष्ठी १९–३
चोरः प्रमादबहुलः ४८–२
चोरविघाते शूरं २५–३०
चोरस्वामी धृष्टः स्ववशो १३–१५

छ.
छलकृच्च मन्युदुष्टः २९–६

अ० श्लो०

ज.
जनयति गुरुभवनस्थो २९–५८
जनयति बुधेन दृष्टो २३–८२
जनयति विदेशनिरतं ३३–२१
जनयन्ति भाग्यसंस्थाः ३२–११४
जन्मकाले विवाहे च ४५–३२
जन्मनि मातुरनिष्टं २९–४४
जन्मपतिर्विकलाङ्गः २०–२४
जन्मविधावज्ञाते ४७–१
जन्मसमये ग्रहाणां ३६–२९
जन्माधिपः सूर्यसुतेन दृष्टः २०–२३
जन्माधिपतिः केन्द्रे ३५–११४
जन्माधिपतिः पापः १०–१३क
जन्माधिपतिर्बलवान् ११–१२
जन्माधिपतिर्लग्ने दृष्टः ११–१३
जन्माधिपतिः सूर्यः १०–२९
जन्माष्टसप्तषष्ठद्वादश १०–५५
जन्मोदयगृहवर्णा ३–४१
जन्मोदयभवनपती ३५–४३
जलचरराशिनवांशक ३५–६१
जलजीविनं समृद्धं २६–६२
जलमुक्तामणिपोतैः ३१–४३
जलयन्त्रधातुपारदरसा १८–१६
जलवणिजः सुसमृध्द्या ३३–६८
जलसंयानो विधनः २५–४८
जाङ्गलमथवानूपं ३३–३
जातकमिति प्रसिद्धं २–४
जातो न जीवति नरो ३–२१
जात्यन्धो बहुदुःखी १८–४
जामित्रे रवियुक्ते लग्न ८–४१
जामित्रे सितशशिनोः ३१–४०
जायतेऽभिजिति यः ३५–८७
जायात्रिकोणसंस्थैः ६–३१
जायाभवने कुरुतः ३१–३६
जायाविनाशकारणं २८–६३
जायासुखसुतहीनो ३१–१६

अ० श्लो०
जिह्वोऽतितीक्ष्णशोको २५–२४
जीर्णवधूजनरमणो १५–१२
जीवः पुनर्हितकरं ४४–७
जीवः सौरसहायो ३२–४९
जीवति माता म्रियते १०–५६
जीवति विद्यावादैर्विशिष्ट० १५–२०
जीवनिशाकरसूर्याः ३५–१६८
जीवसहायः सूर्यः ३३–१६
जीवसितयोविलग्ने ३१–१५
जीवार्कयोर्गुणयुतो ३१–१४
जीवार्कयोर्युवत्यां ३१–१६
जीवार्कास्फुजितोऽह्नि त्रिच्च ४–३६
जीवेक्षितस्तुलायां २३–४८
जीवे साध्वी नटी ४५–७
जीवोबुधो भृगुसुतोऽथ ३५–७५
जूकस्य दशमे भागे ३८–१६
जैवे गुणान्विता मन्दे ४५–९
जैवे सती शनौ ४५–८
ज्ञस्य क्ष्मापतिमान्यता ५४–६
ज्ञानकथास्मृतिबाह्यः २९–२२
ज्ञानकलापरिहीनो २६–९
ज्ञेयादेवं पुंग्रहनवांशकैः ५३–३७
ज्ञेयाच्च तत्र विविधाः ५३–३४
ज्ञो नीचं रविभवने २६–५१
ज्ञोऽष्टायादिशुभार्थबन्धषु ५२–५
ज्येष्ठः पूज्यः सुहृदां २६–१२
ज्योतिषकाव्यविधिज्ञं २३–४०

त.

तत्कर्मग्रहदिवसे तदेव ७–६
तत्कालसुहृदरित्वं बलं ९–४८
तत्काले यदि विजयी १२–६
तत्तत्परं प्रमाणेन ३९–२५
तत्र चतुर्थे भागे ५३–३२
तत्र शुभाशुभमिश्रैः ८–१०
तत्र स्थितो रविसुतः ३४–३

अ० श्लो०
तत्रोच्चदशा राज्यं ४०–३१
तनुद्विजास्यो द्रुतगः ३७–३४
तन्वर्थसहजबान्धव० ३–२६
तन्वंसबाहुभोरुः ५०–५९
तपोगृहं यस्य भवेत् ३५–७६
तमसावृते समन्तात् ३–१
तरणिबुधचन्द्रसौराः ३२–८९
तल्लिप्तासप्तहृतात् ५१–१९
तस्मिन्नेव च भौमे ३४–३३
तात्कालिकदिवसनिशा ८–५०
तामसनेत्रस्तीक्ष्णो १७–९
ताम्रसिताऽरुणहरित० ४–१२
ताम्राऽरुणाक्षवर्णः ५०–२६
तिमिरामयी दरिद्रः १८–१९
तिर्यग्विश्वोर्ध्वमन्दं ५४–१
तीक्ष्णं चोरं क्षुद्रं २३–४६
तीक्ष्णः परोपतापी ४१–३८
तीक्ष्णाऽलसधनरहिता: २१–४८
तीर्थेषु सदा रमते १९–६
तीव्रफलराजयोगा १०–१९
तीव्रमदनं प्रकाशं २३–८०
तुङ्गसुहृत्स्वगृहांशे ६–३
तुङ्गाच्च्युतस्य हि दशा ४०–८
तुङ्गायस्वगृहोदय ३५–१२२
तुङ्गांसगण्डभोक्ता ५८–५३
तुङ्गेषु षड्विबुधमार्गचराः ३५–५०
तुरगगजपत्तिसंपत् ३१–२९
तुलायां पद्मिनीबन्धुः ३८–१५
तुलायां रुधिरे याते ४६–१५
तुहिनकरस्य दशायां ४१–२२
तृतीयगाः शुक्रशशाङ्कभास्कराः ३५–७४
तेजस्विनं कृतनयो ४४–२
तेजस्विनमतिसुभगं ५–३०
तेजस्विनं विशोकं ३२–७७
तेजस्वी निपुणमतिः १६–२

अ० श्लो०
तेजस्वी वित्तयुतः १७–३४
तेजस्वी सत्ययुतः २५–१
तैष्ण्यादवाप्तसिद्धिः ४०–३१
त्रपुसीसकाललोहक० ८–१३
त्रयो ग्रहा भ्रातृसुतायसंस्थाः ३५–९७
त्रिकोणस्थो यदा चन्द्रः १०–७९
त्रिकोणे दक्षिणे सूर्यः १०–७८
त्रिचतुःपञ्चखगेन्द्राः ३२–११३
त्रिदशगुरुभूमिसुतयोः ३१–१४
त्रिदशगुरुमन्दसूर्याः ३३–३
त्रिदशगुरुसौरसूर्याः ३२–६
त्रिदशगुरो रविर्हिमकरस्य ३ –१३५
त्रिदशगुरौ सिंहस्थे २७–१०
त्रिदशपतिगुरुदशायां ४०–४१
त्रिविधमिह शास्त्रकाराः १०–
त्रिशङ्कागे भानुर्ग्रहस्य ६–४७
त्रिशत्षड्भिः सहिता ३६–१९
त्रिशत्सनवा गावो ३६–२१
त्रिशन्मण्डलसहिता ३६–२०
त्रिशांशबलेन तथा ५–३३
त्रिषु लोकेषु ख्यातो ३१–१३
त्वङ्नखदृष्टिशिरोजैः ५०–७३

द.

दक्षः प्रगल्भदाता २६–३
दक्षिणमष्टमसंस्थः सव्यं १०–६४
दक्षो मधुमण्डलदृक् ५०–७७
दद्रूविचर्चिकाद्यैः ४१–१४
दन्ताक्षिरोगतप्तः २३–३
दम्भरुचिं पापरतं २१–४८
दयितं बालस्त्रीणां २९–२३
दयितं स्त्रीणां सुभगं २७–५३
दशजलधिगुणाया० ३६–२२
दशभागा ईडचस्य च ५–२३
दशमे कुरङ्गवर्गे ३२–७८

अ० श्लो०
दशमे नक्षत्रपति(ते) ३३–६
दशमे बुधहिमकरयोः ३१–३३
दशमे भास्करिजीवौ ३१–८२
दशमे त्रिज्ञानयुतान् ३३–४७
दशांनभागे सौम्याः १०– ०६
दशविधचिह्नैर्ज्ञात्वा ४७–२
दहनास्त्रतस्करेभ्यो ४६–४१
दाक्षिण्यदानगुणवान् २८–२३
दाक्षिण्यरूपधनभोगगुणैः ३०–१४
दाता परकार्यकरः १९–२
दातासुतुङ्गनासो ४८–२४
दाता हर्ता दीप्तः ४९–१
दानरतो बहुभृत्यो २८–४
दानवपूज्यः कुरुते ४४–५१
दामिन्यासुपकारी २१–५१
दारमरणं च जनयति ४१–८
दारितपृथुमुखवक्षाः ४८–१७
दारितमुखः स्थिराङ्गः ५०–७१
दारिद्र्यदुःखतप्तं २१–४६
दारिद्र्यालस्ययुता० २६–३१
दारुविदारणदक्षः क्षुर० १५–२२
दासाः खलाः सुरौद्राः ३१–४२
दिक्स्थानकालचेष्टाकृतं ४–३४
दिक्स्थानकालादिबलैः ३५–१२३
दिक्स्थानचेष्टा ४–४१
दिग्भागराशिमण्डल ९–१४
दिग्वह्न्यष्टाविंशतितिथि० ३–३६
दिनकरदृष्टः शुक्रो ५८–३१
दिनकरसुतेन दृष्टो २८–४२
दिनकरसुतेन सहितो १०–६५
दिवसकराद्यैः खस्थैः ३३–८१
दिवसे मातापितरौ ८–२७
दिवारात्रिप्रसूतस्य ४०–२
दिवौकसां पतेर्मन्त्री ३५–१०९
दिव्यस्त्रीभोगयुतः २२–५४
दिशति भयं शत्रुभ्यो ४१–२६

	अ० श्लो०
दीप्तं विचरति पुरुषः	५–५
दीप्तः स्वस्थो मुदितः	५–२
दीर्घविशालशरीरः	५०–३४
दीर्घः कृशो विहारी	५०–१०
दीर्घः शठः प्रतापी	४९–३३
दीर्घाननः सिरालः	५०–४४
दीर्घायुरनुपमसुखः	३०–६९
दीर्घास्यः स्वच्छकान्तिः	३७–३१
दीर्घो बृहच्छिराः स्यात्	५०–१०८
दीर्घो रोमशगात्रो	१८–६
दीर्घोऽसितः प्रतापी	५०– ०५
दुःखपरिप्लुतदेहः	२२–९
दुःखप्रायोऽल्पधनः	२२–६५
दुःखी बहुप्रपञ्चो	१८–१
दुःखैर्व्याधिभिररिभिः	५–१०
दुःशीलाभर्तारं	२८–३३
दुःशीलायाः पुत्रः पतिश्च	१६–१८
दुर्गन्धी लघुतापनो	३७–२४
दुर्गारण्यनिवासं	४०–१४
दुर्गारण्याभिरतं	२६–६०
दुर्नामकुष्ठरोगैरभिभूतो	२२–४०
दुर्बलचक्षुः शूरः	१६–१३
दुर्बलगृहे ग्रहेन्द्रा मेषो	५३–२८
दुश्चिक्यगतो भाग्यं	३२–५
दूर्वाङ्कुराभचपलः	५०–८
दृढवैरसत्वधीरः	२७–९
दृढसौहृदो विनीतः	१५–१०
दृप्तो गजेन्द्रनयनः	५०–६
दृश्येते शुभदैः स्वकेन्द्र	३५–१५
दृष्टो बुधेन चन्द्रः	२३–४७
देवगुरौ भाग्यस्थे मन्त्री	३२–६
देवगुरौ भाग्यस्थे काव्याकंज०	३२–२२
देवग्रामपुरप्रपोषण०	१–५
देवप्रासादानां कृत्यकरं	२७–४१
देवमन्त्री कुटुम्बस्थो	३५–१२६
देवारामतटाकान्करोति	२२–३९
देवालयाम्बुपावक	९–१७
देशत्यागो व्याधिः	४०–७०
देशभ्रंशं व्याधि	४१–५१
देशाद्देशं गच्छति	१३–२६
देहचिकित्सानिरताः	३३–७६
दैवतपितृकार्यपरः	३०–२२
दैवतपितृकार्यरतो	३०–५८
दैवविदां नीतिकरं	५३–१
दोषैर्विविधैः ख्यातं	२४–१८
द्युनिशोरर्कासितयोः	९–२९
द्यूते रतोऽध्वनिरतः	४८–८
द्यूनगतेऽर्के लग्ने	१०–३९
द्यूनचतुरश्रसंस्थे	१०–३४
द्यूनाष्टमगैः पापै०	१०–३ ;
द्यूने कुजभार्गवयोः	३४–५१
द्यूने तु कुजनवांश	४५–२०
द्यूने बुधसंयुक्तो	३१–३२
द्यूने वृद्धो मूर्खः	४५–२१
द्रव्यान्वितो नृपेष्टो	२२–४८
द्रेक्काणजामित्रगतो	१०–८६
द्रेक्काणे च दशामूर्तेः	४०–७०
द्रोहवधाहितबुद्धिः	२५–१६
द्वादशभागच्छन्ने	९–२४
द्वादशमण्डलभगणं	३–९
द्वाभ्यां त्रिकोणसंस्थाभ्यां	४४–२७
द्वावरिभवनसमेतौ	४४–४२
द्वावुच्चगौ जनयतो	४४–२३
द्विगुणा द्विगुणं दद्युः	५–४२
द्विगुणाः स्युर्दीधितियो	३६–८
द्विघ्नाः षष्टिनिशा पञ्च	३९–२३
द्विजमन्त्राणां लब्धिः	४०,३०
द्विपदचतुष्पदभागिन०	२७–३१

अ० श्लो
द्विपदचतुष्पदभागी ३०-४
द्विपदचतुष्पदरूपं ३३-३
द्विपदादयो विलग्नात् ८-८
द्विशरीरांशकयुक्तान् ८-२३
द्विशरीरांशकयुक्तान् ८-२४
द्वे चार्धयोगसंज्ञे २१-६
द्वेषपरो विषमो वा २९-१५
द्वेष्यः पतितः क्षुद्रो ३८-२५
द्वेष्यः परकर्मरतः २२-४५
द्वौ द्वौ राशी मेषात् ९-१३
द्वौ स्वगृहस्थौ कुरुतः ४४-३२
द्व्यन्तरयोगाध्याये ३३-७
द्व्यादिग्रहसंदृष्टं ३४-१०

ध.

धनकनकरत्नभाजं ३२-६७
धनकनकवस्त्रयोषित् २३-२८
धनजनसुखहीनः ३४-८२
धनदारपुत्रवन्तं २५-२५
धनदारपुत्रसुखितो २२-२४
धनधान्यमूलवणिजः ३३-७४
धनपुत्रदारनाशं ४१-४९
धनपुत्रमित्रभागी ३०-१०
धनरहितविकलदुःखित० २१-३९
धनराशौ द्वादशभे चन्द्रः १०-६५
धनवान् कल्यो वाग्मी १६-२०
धनवान् प्राज्ञः शूरो ३०-८३
धनवान् बहुसुतभागी ३०-२४
धनवान् भोजनसारो ३०-५१
धनवान् वनितानिन्द्यः १७-२
धनवान् विद्यायुक्तो ३२-१८
धनवान् विधेयभृत्यः ३०-४८
धनवान् सुखप्रधानः १७-१७
धनसौख्यमानरहितं २८-२७
धनहीनमनिष्टकरं २३-१४
धनिनं नियुद्धकुशलं २९-४०

अ० श्लो०
धनिनं परदाररतं २९-६६
धनुषि च विंशे जीवः ३५-१६०
धनुषि सुरेड्यः शशभृत् ३५-१९
धन्यो वित्ताहर्ता सुख० २५-१९
धर्मक्रियासु सिद्धिः ४०-३९
धर्मपरः शास्त्रज्ञो १३-२४
धर्मपरो निपुणमतिः २५-६
धर्मप्रियोऽतिवाग्मी २६-११
धर्मरतं हिमरश्मिः ४४-९
धर्मरहितोऽल्पधनिकः ३०-८२
धर्मव्यवहारतो विनीत० २९-२४
धर्मसुतयोस्त्रिकोणं ६-३०
धर्मायसहजसुतगा ३४-७७
धर्मिष्ठमनृतभीरुं २८-२५
धातुज्ञो धर्ममयः स्वधर्म० १५-७
धात्विन्द्रजालकुशलः १५-१६
धीरो विदेशभागी ४६-१७
धृतगीतनृत्तविभवः २८-६
धृतिमेधाशौर्ययुतो १३-२७
धृतिसत्त्वबुद्धियुक्तो १४-७
धृष्टो वरिष्ठबुद्धिः ५०-३०
ध्वंसयति शत्रुपक्षं २२-६३

न

न केन्द्रे कश्चिदाग्नेयो १०-९४
नक्तं बला मिथुनकर्कि० ३-२४
नक्षत्रनाथसहितः ३५-१०३
नखरोमधरं मलिनं २३-७८
नगरग्रामपुराणां ३१-४४
नगरजनयोगभोगैः ३४-६२
नगरपुरवृन्दयोगैः ३४-६४
न च केन्द्रगता पापाः १०-९७
न नीचगृहसंस्थिताः ३५-४१
न नैधने ग्रहः कश्चित् १०-९३
नन्दन्ति स्वैर्भाग्यैः २१-८
न प्राप्नोति जरामाशु ३५-२२

	अ० श्लो०
नयनविकारी पतितो	३०–३७
नयनातुरः कुलीनः	१६–८
नरपतिपुरुषमधन्यं	२३–२४
नरपशुवृश्चिकजलजाः	८–२३
नवमगते भवति पुमान्	३०–४६
नवमसुतयोरशुभयोः	४६–७
नवमे दक्षिणकर्णं	१०–७०
नवमे पश्चमराशौ	१०–६९
न स्थूलोष्ठो न विषमवपुः	३७–२९
नागानां खङ्गानां	५३–४८
नानारत्नधनानां	२९–५०
नानाविद्याचार्यः	२३–४
नानाविधसौख्ययुतं	२७–५६
नामानि चतुर्थस्य तु	३–२९
नारीषु दुष्टरतियु	२८–१२
नार्युपचारप्रवरो	४९–३५
नित्यं च धनप्रायं सुखिनं	२८–६०
नित्यं विहसनशीलं	२९–३४
नित्यं शुचिः प्रतापी	१९–७
नित्यं सुखप्रधानाः	२१–४१
नित्योद्विग्नो रोगी	१८–१२
निधनधनारिव्ययगाः	३४–७६
निधनास्तव्ययलग्न०	१०–९८
निधने दक्षिणनयनं	१०–६६
निधिकरणे निपुणधियः	२१–२९
निन्दितजननीपुत्रः	३०–२२
निपुणमतिर्ग्रामपुरैर्नित्यं	१३–१४
निपुणो ज्योतिषवेत्ता	२२–१९
निरन्तरं यदि भवनेषु	३५–९२
निर्मलचारुसुगौरः	५०–२९
निर्लज्जः पापरतो	२६–१
निशाभर्ता चाये	३५–९
निःश्मश्रुरोमहिंस्रः	४९–२४
निःश्रीकः परिभूतः	३०–८
निषेककाले चरराशिगेऽर्के	८–४४

	अ० श्लो०
निष्ठुरमतिप्रवाचं	२९–४६
नीचकुले संभूतः	६–८
नीचक्रियासु निरतो	२९–१०
नीचगानां ग्रहाणां च	५–४९
नीचः परकर्मरतः	१९–४
नीचः पिशुनो द्वेष्यो	३२–१९
नीचमपुत्रममित्रं	२३–७७
नीचर्क्षगः सकलमेव	५–२६
नीचशत्रुगृहं प्राप्ताः	४८–७
नीचस्य दशा भानोः	४०–५५
नीचस्थे भूशयनं चन्द्रे	९–२१
नीचापतिं विरूपं	२६–६५
नीचापत्यं कृपणं	२३–५७
नीचारिराशिसंस्थाः	३२–२६
नीचारिवर्गरहितैः	३[illegible]–५६
नीचे सौरनवांशे	३४–७२
नीचोच्चादिविभेदेन	४१–५५
नीचो मूर्खः षण्ढः	२६–१६
नीचोऽलसो दरिद्रो	२२–१७
नृत्तविधेर्विज्ञाता प्राज्ञो	१५–१७
नृपकृत्यकरं सुभगं	२६–२९
नृपकोशकरं ख्यातं	२३–३८
नृपजननीपत्नीनां	२८–३७
नृपतिं नृपगुणयुक्तं	२३–२७
नृपतिं नृपतिप्रतिमं	२८–५४
नृपतिं नृपतुल्यं वा	२९–५९
नृपतिमतिवित्तवन्तं	२५–६६
नृपतिमथाढ्यं कुरुते	२३–५९
नृपतिर्नृपमन्त्री वा	२२–१६
नृपतिविरुद्धं जनयति	२७–५५
नृपतिसपत्नं कुरुते	२३–३१
नृपतिसमर्पितविभवं	२९–४५
नृपतिसमो विख्यातो	३१–११
नृपतीष्टः सत्सुतवान्	१६–२९
नृपतुल्यं स्निग्धतनुं	२९–३८

अ० श्लो०
नृपतेरर्थावाप्तिं धैर्यं ४०–२६
नृपपुरुषं विख्यातं २८–५१
नृपपुरुषशूरमुग्रं २७–२७
नृपमन्त्रिणं गुणाढ्यं २४–८
नृपमन्त्रिणं नृपं वा ०४–१२
नृपमन्त्री नृपतिसमो २८–२१
नृपमन्त्री नृपदयितः २५–३५
नृपसचिवदुर्गपालन- ३३–७७
नृपसचिवो निरुजतनुः ३१–८०
नृपसंमतः क्षताङ्गो १६–२०
नेत्रातुरोऽतिधनवान् १६–१०
नैकृतिकमलसमधनं २९–५२
नैशान्धो बहुदोषो २८–१
नौच्छत्रकूटकार्मुक० २१–२
नौभेदाज्जलमध्ये ४६–४५
न्यूने कुलेऽपि जातो १६–३५
न्यूने मण्डलशोध्य- ३६–६
न्यूनोपि कुमुदबन्धुः ३५–१०६

प

पक्षबलाद्रिपुनाशं ५–४३
पक्षे सिते भवति ११–१८
पङ्कजविशालनेत्रः ४९–१०
पञ्चदशषट्समेतः १०–११७
पञ्चभिर्निम्नगैः खेटैः ३८–१०
पञ्चमनवमद्यूने ९–३०
पञ्चारिगृहे विहगाः ४४–४४
पण्डितभार्यापतिकं २८–४६
पण्डितमाहुः सुभगो ३०–४१
पत्नीसहस्रभर्ता ४१–३७
पद्माक्षो दीर्घमहाबाहुः ४८–१८
परकर्मरतो नित्यं १८–२
परगृहनिवासशीलो २५–७
परतो दशकं यावत् ३६–११
परतो मण्डलभाजो ३६–१८
परतः परतः किरणैः ३६–२५
परदारगमनशीलः १७–२९

अ० श्लो०
परदारद्रोहरतिः ५०–६८
परदाररतश्चण्डो १४–५
परदाररतश्चोरो १७–१२
परदाररतं पापं ३२–६३
परदाररतः शूरः २२–३७
परदाररतिर्द्वेष्यो ४०–३६
परदेशगः सुधीरः ४७–१७
परधनहरणे निपुणं २५–२७
परधनहरणे निपुणः १६–४
परनीचं गते चन्द्रे ३८–१४
परपुत्राणां पितरं २९–५५
परबाधको विशिष्टो २९–८
परभाग्यलब्धसौख्याः २१–६
परमकुलीनापुत्रं २८–३२
परमोच्चगताः सर्वे ३५–४५
परमोच्चे शिशिरतनुः ११–५
परमोच्चे स्थितश्चन्द्रो ३५–३४
(प) वरयुवतिधनविभूषण० २३–७०
परयोषित्क्षेत्राणां प्रभुः २६–१९
परवञ्चनासु निपुणः ३२–६९
परविषयदुःखसुखिनं २९–३५
परिकर्मको दरिद्रो मृदुः १४–४
परिघपरिवेषजलदैः ५३–१५
परिभूतो दीर्घायुर्क्रो ३०–१७
परिभूतं सुखरहितं २३–८१
परिमण्डलाक्षवक्रो ४९–२५
परिविष्टो गगनचरः १२–५
पर्यङ्कशङ्खहरिशस्त्रमृदङ्ग० ३७–३
पर्वतवनानुसारी ४७–२
पश्यति न गुरुः शशिनं ९–३
पश्यति वक्रः समभे ८–१
पश्यति सौम्यो बलवान् ९–
पश्यन् ग्रहः स्वलग्नं ३४
पाकस्वामिनि लग्ने ४०–६
पाताले शशिशुक्रौ ३१–९

अ० श्लोक
पातीह देशान् खलु ३७–३९
पादत्रितयं विदलं ५१–१७
पानान्नबन्धुरहितः ३१–७२
पानान्नसौख्यरहितः ३१–६०
पापकरं सुदरिद्रं २६–६६
पापकरा जायन्ते १६–१६
पापग्रहमध्यगतो १०–४७
पापग्रहसंयुक्तश्चर १०–४९
पापद्वयमध्यगते १०–३५
पापभवनं तृतीयं ३४–२१
पापा निघ्नन्ति मूर्त्यादीन् ३०–८६
पापा यदि शुभवर्गे १२–३
पापा व्रणं लाञ्छनमेषु ४–६
पापास्तृतीयषष्ठाः ३३–६४
पापास्त्रयोऽपि मिलिताः १६–३८
पापास्त्रिकोणकेन्द्रे १०–१६
पापेऽष्टमे तु विधवा ४५–२७
पापैर्नभःस्थलस्थैः ३३–६२
पापैर्बलिभिर्युक्ते ३४–३७
पापैरहार्यवृत्तैः ४७–२५
पापैर्युक्ते चन्द्रे मातुः १६–३६
पापं मलिनाचारं ३२–४४
पारुष्यदण्डनिरतः २६–१६
र्थिवमन्त्रिणमग्र्यं २६–४०
पशुपतयज्ञदीक्षा २०–३५
पाशे बन्धनभाजः २१–५०
पाण्डभागिनो वा २१–४७
पाषण्डव्रतनिरता २०–३६
ङ्गो निम्नविलोचनः ४–२७
तृमातृभक्तमार्यं २७–६२
त्तरुगर्दितदेहः २५–४३
तानिलोष्टरोगैः ४७–४
सृक्कृतरोगो ४१–४५
सृग्वह्निभयं ४१–१९
रहितं बाल्ये २६–४३

अ० श्लोक
पिशुनः शठो दरिद्रो ४७–४४
पिशुनस्त्वसत्यचेष्टो २६–२०
पिशुनो न साधुशीलः २७–२१
पीडां धातुत्रितयात् ४०–४०
पीडितहृदयो हिबुके ३०–७७
पीतं करोति जीवः ५३–१३
पीनाङ्गो गौरः स्यात् ५०–६१
पीनो विशालदेहः २७–३
पुण्येष्वसिद्धिकलहं ४०–५१
पुंराशिगैः शुभखगैः ५–५१
पुरुषाकृतिशीलयुता ४५–४
पुरुषाभिमानपरकृत् ५०–१०७
पुष्कलयोगे पुरुषाः ३५–१४६
पुंस्त्रीभवनबलेन च ५–३४
पूज्यः सतां प्रशान्तो २२–४६
पूज्यः सतामतिधनो २५–११
पूज्याः सुभगा धीराः ३६–१४
पूज्यो गणप्रधानो १५–१५
पूर्णाननः सुचक्षुः ५०–४८
पूर्णेन्दुयुते भाग्ये ३२–२८
पूर्णैर्बिन्दुभिरष्टभिः ५४–२
पूर्णं पश्यति रविजः ४–३३
पूर्वार्धे संभूतो जननी २३–१५
पूर्वोक्तं चिन्तयेत्सर्वं ३९–१६
पृथुकण्ठनेत्रवदनः ५०–७८
पृथुपीनभुग्ननासः ५०–१०२
पृथ्वाननो वृहत्स्फिक् ५०–२४
पृथ्वायतवृत्ततनुं ४८–४
पौलिशरोमशवासिष्ठ० ५४–११
पौष्णे फाल्गुन्यां वा ३५–१४८
प्रकथितमुनियोगे २०–३७
प्रकृतिस्था लग्नेन्दोः ४५–३
प्रचुरतुरगमदलितारातिः ३१–४५
प्रचुरान्नपानविभवा ३०–६३
प्रचुरामित्रस्तीव्री ३०–१९

अ० श्लोक
प्रज्ञाधनं प्रकाशं मिथुने २३–१७
प्रज्ञां सुचारुवेषां ३०–४४
प्रणतानां हितकारी २५–४९
प्रणताशेषनराधिप० २१–३५
प्रतिदिनमटनमधन्यं २९–५१
प्रतिरूपदारभृत्यं ३०–७२
प्रत्ययितं धनवन्तं २६–३२
प्रधानबलसंयुक्तः ३५–११७
प्रबलमदनं सुदेहं ३०–७९
प्रबलमदनोदराग्निर्बल ३०–७
प्रवलमदनोदराग्निः सुश० ३०–३१
प्रमदापुत्रगृहाणां २८–३५
प्रमदाविभवैर्युक्तं २३–३५
प्रवदेत्तत्समदेशे ३३–५
प्रवरमतिकर्मचेष्टः ३०–४७
प्रविशन्ती चन्द्रदशा ४१–३१
प्रवेशे बलवान् खेटः ४३–१
प्रव्रज्यायाः स्वामी रवि० २०–२१
प्रव्रज्येशे दिनकरगते २०–२०
प्रशमितसमस्तशत्रुः ३१–७४
प्रशमितसमस्तशत्रुः ३१–७६
प्रश्नकाले विलग्नस्य ५१–१
प्रश्रयशौचविहीनो २५–२१
प्राकारतरुनदीषु च ९–५
प्राग्रात्त्रिभागेऽतिबलः ४–३९
प्राच्यादिगृहद्वितयं ९–१९
प्राज्ञं गृहीतवाक्यं २६–३४
प्राज्ञं चतुरं मधुरं २७–३४
प्राज्ञं धनचयनिरतं २८–६४
प्राज्ञं नरेन्द्रभृत्यं दूतं २६–४१
प्राज्ञं नृपतिं कुलजं ३२–१०५
प्राज्ञं पृथिवीपालं २७–६१
प्राज्ञं बहुधनधान्यं २७–३६
प्राज्ञं मधुरं धनिनं २८–४०
प्राज्ञं मधुरं सुभगं २५–२८

अ० श्लो०
प्राज्ञं वाक्यविधिज्ञं २३–११
प्राज्ञो दृढांसबाहुः ५०–६७
प्राज्ञो बहुप्रलापी ३१–१०
प्राज्ञो विदेशनिरतः २६–७
प्राणिवधपरं क्षुद्रं २९–२७
प्रात्ययिकं राजकुले २९–४१
प्राज्योनुपदेशात् ३३–७२
प्रायेण चन्द्रसितयोः ३४–४८
प्रायो दरिद्रदुःखी १९–८
प्रायः शुभाः समेताः १६–३७
प्रियकलहसमरसाहस० २१–३३
प्रियकलहस्त्वविनीतो ३१–१८
प्रियपानभोज्यनारी ४९–४
प्रियभाषी रुचिरतनुः १४–८
प्रिययज्ञशिल्पविद्यः २९–२३
प्रियवस्त्रमाल्यगन्धं २८–६५
प्रियवाक् सुभगः कान्तः १३–२५
प्रियवादिनं सुवाक्यं २३–६४
प्रियविग्रहस्तु वेत्ताचार्यो २६–१
प्रेष्यो मूर्खः क्लीबः १८–१५
प्रेष्यः परकर्मरतो २२–६
प्रेष्यः श्यामलनेत्रः १६–२८
प्रोत्तुङ्गशिराः स्थिरवित् ५०–७५
प्रोद्धतवेषक्रीडो २५–४
प्लुतमण्डलनेत्रः स्यात् ५०–५७

ब.

बधिरो धनवान् शूरः १८–२५
बन्धारिभङ्गभाजं ४४–२०
बन्धुजनवित्तहीनः ३१–७
बन्धुजनाढ्यं सुखिनं २३–४१
बन्धुपरिच्छदरहितो ३०–२९
बन्धुपरिच्छदवाहन० ३०–१७
बन्धुप्रधानचतुरः ४९–२७
बन्धुसुतमित्रहीनो ३१–५६
बन्धुसुहृत्तनयसुख० ३१–३१

	अ० श्लो०
बन्धुसुहृत्संपन्नः	३२–५२
बन्धुसुहृत्सुखसहितः	३१–६४
बन्धुसुहृत्सुखसहितं	३०–६५
बन्धोल्वणवक्त्रः स्यात्	४७–३३
बन्ध्वर्थक्षयरोगाः	४०–१५
बन्ध्वास्पदोदयविलग्न०	१२–१४
बलरहितेन्दुरविभ्यां	३७–२८
बलवति सूर्ये दृष्टे	९–२६
बलिनः परिपूर्णस्य च	४०–६३
बलिना कुजेन दृष्टे	४६–१७
बलिनाममर्षणपरः	४७–३६
बलिभिर्बुधगुरुशुक्रैर्दृष्टे	८–४२
बलिभिर्बुधगुरुशुक्रैः शशाङ्क०	४५–३१
बहवो यदि बलयुक्ता	९–४६
बहवो यदि शुभफलदाः	१२–१२
बहुकथनमधुरवचनं	२७–५४
बहुताडनसंप्राप्तौ	३९–९
बहुदारं बहुविभवं	२७–४७
बहुधनधान्यसमृद्धं	२६–६४
बहुधनरत्नाः क्षितिपाः	२१–३६
बहुधर्मो नृपसचिवः	१५–५
बहुभिः क्षतैः कृशाङ्गो	२५–१७
बहुभिर्व्याधिभिरार्तो	२५–४४
बहुभृत्यधनसमृद्धो	२३-५
बहुभृत्यं त्वक्सारं	२३–६१
बहुभृत्योद्विग्नमनाः	२२–२५
बहुयुवतिरत्नसहितः	२८–३
बहुविषयपतिं ख्यातं	३२–७८
बहुशत्रुमित्रपक्षो	२२–१५
बहुशत्रुमित्रपक्षः	१८–२०
बहुशास्त्रज्ञानपटुः	१८–१७
बहुशास्त्रदारितमुखो	२२–२३
बहुशास्त्राणां कुशलो	२७–१५
बहुशिल्पज्ञो लुब्धः	२५–५१
बहुशीलोदारमतिः	४७–४६

	अ० श्लो०
बहुसाधनोऽपि राजा	५–११
बह्वनृतः सुमहान् स्यात्	२९–२१
बह्वर्थभाक् स्थिरार्धः	४८–१४
बह्वायुः स्थिरविभवः	३०–८४
बह्वाशिनो दरिद्राः	२१–३४
बह्वृणवन्धनतप्तः	२९–५
बान्धवमात्रनिमित्तं	२७–४६
बान्धवरहितः सहितो	३१–४८
बान्धवसुतसुखहीनो	३१–३
बान्धवसुहृदुपकर्ता	४४–३६
बालैः सुखी सुशीलश्च	५–५०
बाल्ये मृतजननीकः	१६–१९
बाह्यो मङ्गलवाद्यैः	२९–१६
विभ्रद्रश्मिकरालपूर्णं	३५–५६
बुधः कन्यालग्ने	३५–१३६
बुधः कर्कटमारूढो	३५–१८१
घुधः स्वोच्चे लग्ने	३५–२३
बुधगुरुभार्गवशनयो	३३–६१
बुधगुरुशुक्रा भाग्ये	३२–८०
बुधदृष्ट त्रिदशगुरुः	३४–१८
बुधदृष्टे प्राग्लग्ने	३४–४
बुधदृष्टो हास्यकरं	२४–१७
बुधभवनगतः शुक्रः	२८–४१
बुधभागे बुधदृष्टः	२४–७
बुधभार्गवयोरस्ते	३४–५६
बुधभृगुभानुजगुरवो	३२–११२
बुधरविजरविसिताः	३२–९७
बुधशुक्रयोर्युवत्यां	३१–६९
बुधशुक्रयोर्विलग्ने	३१–६७
बुधशुक्रौ हिबुकस्थौ	३१–६८
बुधसूर्यभार्गवसुताः	३३–३४
बुधोदये सप्तमगे	३५–८९
बुध्योपार्जितविभवो	३०–३९
बृन्दग्रामपुराणां	४०–४९
बृहस्पतिर्भौमगृहेष्टमस्थः	१०–४
बृहस्पतेर्भौमदिवाकरे	३५–१७०

अ० श्लो०
बोधनगुर्वोर्दशमे ३१–६६
बोधनसितयोः कर्मणि ३१–७०
बौधे पुंश्चेष्टिता जैवे ४५–११
बौधे विज्ञानसंयुक्ता ४५–१२
बौधे शिल्पान्विता नारी ४५–१०

भ.

भङ्गक्षयव्ययार्तौ २२–४४
भवति ख्यातो मल्लः १६–६
भवति नरस्य भ्रंशो ४०–६४
भवनाधिपदिङ्नाम ३–३९
भवनाधिपांशतुल्याः ३४–४७
भवनाधिपैः समस्तं ३–१२
भवनांशसदृशदेशे ९–३
भागाः सदृशाः सहिताः ४१–५
भाग्यगृहे रविशुक्रौ ३२–६४
भाग्यर्क्षपतिः कस्मिन् ३२–३
भाग्ये शुभगमनसदो ३२–२५
भानुजबुधगुरुचन्द्राः ३२–१०६
भानुजरविबुधगुरवो ३२–९६
भानुजरविभूपुत्राः ३३–३२
भानुदशायां लभते ४०–२५
भानुः प्राणी शशिगृहः ३५–१५६
भानुर्भौमसमेतः ३३–१४
भानुर्वक्रसमेतो ३२–३१
भानुः शुक्रः क्षमापुत्रः ४–८
भानुस्त्रिकोणसंस्थो ४४–५
भानुः स्वपुत्रसहितो ३१–२५
भानोरर्धे विहगैः शूराः ३–१०
भानौ क्षीणे चेन्दौ ३४–६९
भान्वर्कजयोर्मदने ३१–२४
भान्विन्दुजेन्दुकुजजीव० २०–१९
भारसहं तामसिकं २९–६४
भारस्तुलायां तुलितो ३७–४४
भाराध्वरोगतप्ताः ३४–७
भारोभवति नृपाणां ३७–७

अ० श्लो०
भार्गवरविभानुसुताः ३३–३८
भार्गववाक्पतिसौम्यैः ३४–५७
भार्गवसहितः क्षितिजः ३२–४३
भार्गवसुरेज्यभौमाः ३३–४२
भास्करसुतोऽपि कुरुते ४४–२२
भास्करसूनुः कुरुते ४४–१५
भास्करहिमकरसहितः १०–६
भिक्षामटति त्र्याद्यैः ३८–२०
भिक्षुस्त्यक्ताशितभुक् ४४–४१
भिन्नशिरोरुहरोमा ५०–३५
भीरुः प्रियसन्त्यक्तः १८–८
भुवनभरसहिष्णोः ३६–२७
भूपतिचरितः ख्यातो २२–२२
भूपतिमनुपमवीर्यं २३–६९
भूपतिसमीपवर्ती २५–५२
भूमण्डलवर्धनभाक् ४७–२४
भूरिद्रविणो दाता २२–७
भूषणयानगृहाणां २३–१३
भृगुसुतसहितः सौम्यः ३२–४६
भृगोरपत्याद्बुधभास्करात्मजौ ३१–१७१
भृत्यार्थचोरचक्षुः ४०–२७
भृत्यैर्धनैश्च पुत्रैर्वाहन० २८–४७
भोक्ता ख्यातः कुनखो ४७–५
भोजनमाल्याच्छादन २२–११
भोज्यान्नपानविभवं २७–६५
भौमगुरुशुक्रमन्दाः ३३–६०
भौमज्ञशुक्रशनयो ३२–११०
भौमज्ञसूरिशनयो ३२–१०९
भौमदशायां लभते ४०–३३
भौमदिवाकरसौराश्छिद्रे १०–७
भौमनिशाकरजीवाः ३२–६८
भौमबुधमन्दगुरवो ३३–५८
भौमबुधशुक्रसौराः ३३–५९
भौमबुधसूर्यपुत्राः ३३–४१
भौमभृगुजीवरविजाः ३२–१११
भौमयुताद्रेष्काणा ८–६१

अ० श्लो०
भौमशनिद्रेक्काणे पापे ९–४३
भौमसितबुधसुरेड्याः ३३–५७
भौमसितशशिजचन्द्राः ३२–१००
भौमः साहसनिरतं ३३–९
भौमः सुरगुरुसहितो ३३–२०
भौमः सोमजसहितो ३३–१९
भौमः सौरसहायो ३३–२२
भौमादीनां बलं देशं १३–९
भौमेंशे कुजदृष्टो २४–१
भौमे कलत्रसंस्थे ३४–५०
भौमेन नरपतिसमं २४–२०
भौमेन सुवर्णधनं २४–१४
भौमेन्दुजसुरपूज्याः ३३–३९
भौमेन्दुशुक्रजीवाः ३२–१०२
भौमो वृद्धिषु सात्मजासु ५२–४
भौमः पञ्चमभवने ३४–४१
भौमः सुरगुरुयुक्तो ३२–४२
भ्रमणरुचयो निकृष्टा २१–३१
भ्रमति च देशाद्देशं ३१–४९
भ्रातृजनाश्रयणीयो ३०–१६
भ्रातृप्रियोऽर्थमुख्यः ४७–२९

स.

मकरस्य पञ्चमांशे ३५–१६२
मकराद्ये द्रेक्काणे नृप० ४६–४०
मगधेषु बुधो जातः ७–१५
माङ्गल्यदयाशौचस्व० २७–२०
मदनार्तो मृदुच्चित्तः ४१–२३
मदबहुलः स्थिरजीवी ३२–१६
मद्यरुचिः समधर्मा मानी २२–२७
मद्यस्त्रीकृतसौख्यं २९–३६
मधुपिङ्गाक्षो गौरो ४९–३४
मधुरवचनो लिपिज्ञः २२–५२
मधुरायताक्षकामी ४८–६
मध्यायतोऽतिदक्षो ४८–५
मध्ये पापग्रहयोः ३४–७४

अ० श्लो०
मध्ये स्त्रीकृतदुःखैः ४६–४३
मध्वीक्षणः प्रलापी ५०–२५
मन्त्राभिचारकुशलो ३०–४२
मन्त्रिणमथ नृपतिं वा २७–५८
मन्त्री गुणप्रधानो ३१–५१
मन्त्री नृपस्य सुभगः १६–५
मन्त्री राजप्रतिमः ३१–३५
मन्ददृशं स्थिरवचनं १४–२
मन्दोदरः प्रचण्डो ५०–३८
मलिनः संस्कृतदेहो ३०–७६
मलिनः पापाचारः २५–४५
मलिनमतीव च सुभगं २७–६०
मलिनं लुब्धं तीक्ष्णं २७–३०
मलिनशरीरः पापी ३१–७१
मलिनासिकोष्ठकुनखी ४७–३५
मल्लमतिसारयुक्तं २६–६१
मस्तकशूलनिरोधैः ४१–३३
महाधनस्त्रिभिश्चैव ४४–२८
महितकरिगलित० ४०–७१
महीसुतात्सत्वमुदाहरन्ति ३७–३
माङ्गल्यधर्मपौष्टिक० ७–११
माण्डलिको मन्त्री वा २७–१८
मातुरपथ्यो विषमो २५–३२
मातुर्नं शुभो मतिमान् २५–१०
मातृपितृदुःखतप्तः ३१–२
मातृपितृविप्रयुक्तो १७–७
मातृरहितं सुशीलं २९–५६
मातृरहितं क्षताङ्गं २५–२६
मातृसपत्नीजनकं ३२–७२
मातृसपत्नीजननं कन्या २८–४४
मातृसपत्नीजननं युवति० २८–५०
मात्रा रहितः सुभगस्त्वग्दोषी १७–३०
मानधनज्ञानयुताः २१–४४
मानाज्ञाविभवयुतः ३१–४१
मानार्थविभवहीनो १८–६

अ० श्लो०
मान्दं सुतर्क्षमिन्दुः ३४-२९
मान्यो गुरुबन्धूनां २७-६
मान्योऽल्पसत्वभीरुः ५०-१९
मायापटुश्चलमतिः २२-५८
मारयति षोडशाहाच्छनैश्चरः १०-१९
माला सर्पार्धेन्दू २१-३
मासास्त्रिंशद्गुणिता ७-३
मासि तृतीये स्त्रीणां ८-४३
मासेष्वाधानादिषु गर्भस्य ८-२९
मासेऽष्टमे च तृष्णा ८-३०
मित्रकलत्रविरोधो ४०-३५
मित्रगृहेऽर्कः ख्यातं ४४-१२
मित्रद्वादशभागे ३६-७
मित्रस्वगृहगतोऽर्धं ३४-६७
मित्राणि सूर्याद्गुरुभौमचन्द्राः ४-२८
मित्रान्विताः सुवचसः २१-५२
मित्रेभ्यो धनलाभं ३१-८४
मित्रैः सुतैश्च हीनः ३१-४
मित्रोच्चोपचयस्थाने ४०-१७
मिथुनविलग्ने जातः ४१-१०
मिथुनस्य मनोभावो ८-१३
मिथुनादयस्तुलान्ताः ५३-९
मिथुनादिमे दृगाणे ४९-७
मिथुने चापेऽर्कगुरू ८-१६
मिथुने धनुरंशगतान् ८-२५
मीनविलग्ने जातो ४७-४६
मीने निशाकरः पूर्णः ३५-१५१
मीने मीनांशे वा ५३-४९
मीनोदये च दृष्टे ८-६०
मीनोदये दिनकरे ४६-८
मीनोदये वदेन्मीनं ५१-८
मीनोदयेंशे नवमे ३९-२१
मुखरः सुभगः प्राज्ञो १७-१९
मुखरो धूर्तोऽनृतवाक् १६-३४
मुदिते विलसित मुदितो ५-७

अ० श्लो०
मुनिभागे दिवसनिशोः ८-५१
मूर्खं धृष्टमनार्यं २८-२८
मूर्खं प्रवासशीलं २३-६८
मूर्खोऽधर्मरतोऽस्वः ४४-३९
मूर्खोऽलसो वञ्चयिता ३७-६
मूर्त्यादयः पदार्थाः ३०-१
मूर्धालोचनकर्णगन्धवहनं ४-५
मूलदशायामिन्दोः ४०-१०
मूलं दशाधिनाथस्य कृत्वांशं ४१-२
मूलं दशाधिनाथस्य विबलस्य ४३-१
मृगवदने लग्नस्थे कृशगात्रो ४७-३८
मृगवदने लग्नस्थे तन्नवभागे ५३-४७
मृगराशिं परित्यज्य ३५-१०४
मृगे मन्दे लग्ने ३५-१३
मृगोदये भूमिसुते ३५-१३८
मृतदारो रोगार्तो ३०-३२
मृतसुतयुवतीषु रतो ५०-१७
मृदुर्दयालुर्बहुदारभृत्यः ३७-४
मृद्वङ्गवान्वपुष्मान् ५०-१३
मृष्टान्नपानचतुरः ४९-२३
मेधाविनमतिदयितं २६-४६
मेधाविनं सुनिपुणं ३५-५७
मेधावी धर्मपरः २७-११
मेधावी बहुपुत्रो २८-१३
मेधावी वाङ्मधुरो २२-१८
मेधावी श्राद्धरतो १७-३५
मेधावी सुकलत्रः २२-३६
मेषविलग्ने जातः ४७-३
मेषवृषमिथुनकर्कटसिंहाः ३-३
मेषवृषौ मुखगलयोः ५३-७
मेषस्य सप्तमांशे ३५-१५८
मेषाक्षिमुखस्तीक्ष्णो ५०-९८
मेषादिभिरुदयस्थैः ५३-१०
मेषादीनां क्रियतावुरु० ३-७
मेषाद्ये द्रेक्काणे ४६-२३

अ० श्लो०
मेषालिमिथुनमृगहरि० ३-१६
मेषे द्वादशभागे जायन्ते ५३-३५
मेषे मेषांशे वा ५३-५०
मेषेऽर्कजे सुरोषो २९-२
मेषे शशी तदंशे ५३-३१
मेषे सहस्ररश्मिः ३५-१२०
म्रियते पापैर्दृष्टे शशिनि ९-३८

य.

यज्ञाध्यापननिरतो २६-१८
यज्ञेन भङ्गमपरे सरोज० १२-११
यत्प्रोक्तांशादिफलं ५०-११०
यत्रस्थस्तत्रस्थः स्वपुत्र० १०-५४
यत्रस्थस्तत्रस्थो रुधिरा० १०-४४
यथा यथा लग्नगृहाश्रयाणां ४-३
यदा तूपचयः सर्वैः ३९-७
यदा होरा चतुर्थस्थः १०-८०
यदि पश्यति चन्द्रमसं ३५-६५
यदि पश्यति दानवार्चितं ३५-१०८
यदि होरागतः शुक्रः १०-९५
यद्वर्णेन वृतः स्यात् ५३-१६
यन्त्रज्ञो बहुविभवो १८-७
यन्त्रतृणकाष्ठगोमय० ४०-६५
यः प्राग्विलग्ने द्रेक्काणः १०-८६
यमभूमिजयोर्वर्गे ३४-५५
यमे विलग्ने मकर० ३५-१३७
यवनाचार्यैर्वृद्धैः १५-१
यवनाद्यैर्विस्तरतः ३१-१
यवनेन्द्रदर्शनाद्यैः ५१-१६
यस्मिन्द्वादशभागे ८-४८
यस्य ग्रहस्य भावो ७-५
यस्योत्तरस्यां भगवान् ३५-४६
यस्योदये जगदिदं १-१
याते भौमे कर्मस्थानं ३५-१५२
यादृक् पश्यति सौम्यः ९-४१
यावन्तो नव भागाः ३४-२२

अ० श्लो०
यावल्लग्नादुदितं ९-२५
युक्तः शुभफलदायिभिः ११-८
युक्तः सौभाग्ययोगैः २३-२३
युगपच्चन्द्रादित्यौ १०-५८
युद्धकुशलः समर्थः १८-५
युद्धे च विजयी तस्मिन् ४३-३
युवतिजनजनितसारं २९-३२
युवतिजनोपासनको २८-९
युवतिद्वेष्यं कान्तं २९-५४
युवतिभवनस्थितेषु ५-५२
युवतिविनाशितसारं २६-४४
युवतीनामतिसुभगः १३-१८
युवतीनां वशगः स्यात् १५-२
ये भुक्ताः शशिनोंशाः १०-११४
योगा ये बलयोगाः २०-८७
योगा विभक्ताश्चतुरादि० २०-१
योगे बलिनः स्थानं १०-६६
योद्धा प्राज्ञस्तीक्ष्णो १७-१३
यो बलयुक्तो निधनं ४६-२
यो यः पूर्णं शिशिरकिरणं ३५-४२
यो यत्र भवेदाद्यस्तस्याकृति ५३-३६
योषिद्गुरुमित्राणां २५-१४
योषित्पानप्रभवैः २८-८

र.

रक्तच्छविचरणोढः ५०-३०
रक्ताग्निपित्तदोषैः ३१-२६
रक्तान्तदृक् प्रगल्भो ४८-९
रक्तान्तदृष्टिरलसो ४८-२०
रक्तान्तपिङ्गदृष्टिः ४८-१५
रक्तान्तायतलोचनो ४-२४
रक्तावदातमतिमान् ५०-६२
रक्तासितवृत्ताक्षो ५०-८६
रक्तास्योन्नतनासिकः ३७-३७
रक्तोत्पलताम्रसुवर्णं० ७-९

अ० श्लो०
रजकं मालाकारं २६-४३
रजनिकरः षष्ठगतो १०-६२
रजनीकरेण दृष्टो २६-२६
रतिधर्मरतः प्राज्ञो २८-७
रमते सर्ववधूभिः ३१-८३
रविकिरणमुषितदीप्तैः ४१-५७
रविकुजबुधभानुसुताः ३३-५२
रविकुजशशिशुक्रैश्चन्द्र० २०-१६
रविगुरुबुधभूतनयाः ३२-९०
रविगुरुसितभार्गवशनयो ३३-१६
रविगुरुवक्रा नवमे ३२-५८
रविगुरुसितभानुसुताः ३२-९८
रविचन्द्रबुधा भाग्ये ३२-५१
रविचन्द्रभौमशशिजाः ३२-८३
रविचन्द्रभौमगुरुभिः १०-१००
रविचन्द्रभौमबुधजीव० ७-१
रविचन्द्रसिता नवमे ३२-५५
रविजबुधचन्द्रभौमाः ३२-१०१
रविजीवशुक्रसौम्याः ३३-५३
रविजीवसौम्यसौराः ३३-५४
रविजे जलजविलग्न ९-६
रविणा युक्तः शशिजः १०-१०१
रवितनयो जूकस्थः ६-२
रविदृष्टे प्राग्लग्ने ३४-१
रविदृष्टे युक्ते वा ३४-५८
रविदृष्टः शनिभवने २७-४३
रविबुधगुरवो दशमे ३३-३३
रविबुधगुरवो नवमे ३२-६१
रविबुधजोवसिताः ३२-९५
रविबुधशनयो दशमे ३३-३५
रविबुधशुक्रा भाग्ये ३२-६२
रविभागे रविदृष्टे २४-१३
रविभिर्जन्मशिष्टं हि ५१-१०
रविभृगुजदेवपूज्याः ३३-३६
रविभामचन्द्रपुत्राः ३३-२६

अ० श्लो०
रविभौमदेवपूज्याः ३३-३०
रविभौमबुधसुरेड्याः ३३-५०
रविभोमबुधा नवमे ३२-५७
रविभौमयोर्विलग्ने ३१-६
रविभौमौ धनसंस्थौ ३४-१६
रविरपि विधनं जनयति ३४-१७
रविरप्यधिमित्रस्थो ३५-११५
रविरविजभूमितनयाः ३४-१५
रविरुधिरौ भवनं ५२-१०
रविर्नभस्थः स्वत्रिकोणगो ३५-८१
रविर्यदा चन्द्रमसः १०-८१
रविशशिकुजैर्मेषे लग्ने ३५-१३३
रविशशिबुधशुक्रैः ३५-८३
रविशशिभवने शुक्रो १०-९
रविसहितः शशितनयो ३२-३२
रविसितबुधभानुसुताः ३३-५५
रविसुतसहितश्चन्द्रो ३२-४०
रविसौरिचान्द्रिभौमाः ३२-९२
रविस्तृतीये भृगुनन्दनः ३५-१६९
रवीन्दुभौमेन्दुजजीव २०-९
रवीन्दुवागीशशनैश्चरैश्च २०-१२
रवेर्द्वितीये बुधजीव० ३५-१२४
रवौ सरुधिरे द्यूने ४६-१८
रश्मिप्रधानमेतत् ३६-१
रहितो बुधगुरुशुक्रैः १०-४६
राजपुरुषं प्रकाशं २५-४०
राजयोगाः समाख्याताः ३८-३३
राजाधिनृपं स्वर्क्षे ४४-३५
राजा रविः शशधरः ४-७
राजा राजसमो वा २२-२८
राजोपयोगि शास्त्रं ३५-१
राजोपसेवकः स्यात् ४४-३७
राज्ञः संप्राप्तधनो ३१-६२
राज्ञः सुनीतिशिक्षा २७-२४
राज्यं ददाति विपुलं ४०-५४

अ० श्लो०
रात्रिदिवाबलपूर्णैः ५–४१
राभसिको दानरतः २५–२
राशिदशवर्गभूपति० १–३
राशिपतौ बलयुते २३–८६
राशिप्रभेदसंज्ञः कथितः ५–१
राशिप्रमितैर्वर्षैः १०–१८
राशिफलं यद्दृष्टं २४–२३
राशेस्तदीश्वरस्य च बलेन ५–१९
राशौ होरान्तरं प्राप्य १०–७१
राशौ कर्कटहोरायां १०–९६
राश्यधिपेन च दृष्टे जीवे ३२–२३
राश्यन्तगतैः पापैः १०–३३
राश्यन्तगतैर्लग्नात् २१–१६
राश्यादिफलविभागः ८–१
राश्यादौ लग्नपतिः ३५–१४७
रासभमुखोऽसिताक्षो ५०–४६
राहुश्चतुष्टयस्थो मरणाय १०–१५
राहुः सप्तमभवने १०–१०७
राहुस्त्रिषष्ठलाभे लग्नात् १२–४
रिक्तातिरिक्तनिम्ना० ४०–६९
रिक्ते बुधेन्दुभृगुजैः ४५–२६
रिक्तोत्कटदृक् क्रूरो ४८–१
रिपुबान्धवकृतपीडा २२–२०
रिपुभयकलहसमेतो २२–२१
रिपुभयकलहैर्मुक्तः ४१–३६
रिपुभयविदेशगमनं ४०–७३
रिपुभयविनाशदुःखैः ४१–४१
रिपुभावे क्षितिसूनुः ३४–४३
रिपुराशौ त्रिभागोनं ३९–१०
रिपुरोगपापमुक्तः ४१–३२
रिपुहन्ता क्रोधपरो २२–३४
रुधिरगृहे शनिदृष्टो २६–३०
रुधिरदशायां शुक्र० ४१–२८
रुधिरशनैश्चरदृष्टो १०–४५
रुधिरसहितस्तु सौरः १०–५३
अ० श्लो०
रुधिराङ्गसौरयुक्तः १०–६३
रुधिरे सुखेऽथवार्के ४६–९
रुधिरः सोमजसहितो ३२–४१
रूपान्वितमतिचतुरं २६–५०
रोगार्ताः कुकलत्रा मूर्खाः २१–३०
रोगार्तो मन्दसुतः २५–२३
रोगिणमरूपभार्यं २९–६१
रोमशगात्रो विकृतो २५–२२
रोमान्वितायतभुजः ५०–४०
रोमोपचितांसभुजो ५०–२०

ल.

लग्नं गणोत्तमोनं ३८–५
लग्नं मुक्त्वा विषमे ८–१७
लग्नं लग्नाधिपो १०–१४
लग्नं विहाय केन्द्रे ३५–१०७
लग्नगाः सितशशाङ्कज ३५–७२
लग्नगृहगस्य हि दशा ४०–६६
लग्नच्छिद्रत्रिकोणेषु ४६–१९
लग्नदायोंऽशतुल्यः स्यात् ३९–१७
लग्नदिवाकरचन्द्राः ३९–३
लग्ननवभागतुल्या मूर्तिः ९–४५
लग्नभागैः स्फुटरश्मेः ३५–१७४
लग्नभागैं क्रमेणैव ५१–६
लग्नव्ययदशमस्थैः ३४–५४
लग्नस्थःसुखसंस्थो ६–४
लग्नस्थे रावतनये ३४–५३
लग्नाच्छशी त्रिरिपुलाभ० ३५–५५
लग्नात् षष्ठमदाष्टमे ३४–१३
लग्नात्तक्षणमुदितं ४–४
लग्नादातनयाय रन्ध्रनवगः ५२–७
लग्नादिकण्टकेभ्यः २१–१२
लग्नादिकेन्द्रवेश्मानि ५१–११
लग्नादीनां लिप्ता ज्ञेयाः ३–१८
लग्नादुपचयसंस्थैः शुभैः १३–३२
लग्नाद्दशमे चन्द्रे ३४–४०
लग्नाद्दशमे राशौ ३३–१

अ० श्लो०
लग्नाद्भ्रातृदशायशत्रुषु ५२–३
लग्नाद्विषमर्क्षगतः ८–२८
लग्नाद्द्वादशधनगैः १०–२४
लग्नाद्व्ययरिपुगतयोः ३४–५२
लग्नाधिपजन्मपती १०–२५
लग्नाधिपतिः पापः १०–१०५
लग्नाधिपतिः स्वोच्चे ३५–११०
लग्नाधिपतेश्चन्द्रो १०–१०४
लग्नाधिपतेस्तुल्यः ४–१८
लग्नान्निशाकराद्वा ३२–२
लग्नान्त्यनवमनैधन० १०–४१
लग्नार्कजीवचन्द्रैः ५३–१९
लग्नार्कशीतरश्मीनां यो ४०–३
लग्नार्कशीतरश्मीनां यदि ४०–५
लग्नांशलिप्तिका हत्वा ३६–१८
लग्नास्तगतैः सौम्यैः २१–१४
लग्ने कर्कटके सशीत० ५३–२
लग्ने चन्द्रेऽर्के वा पापाः १०–४२
लग्ने जलजे बन्धौ ५३–१८
लग्ने जीवबुधौ दिवाकर० ४–३५
लग्ने जीवः सितबुधयुतः ४१–६०
लग्ने जीवार्कजयोः ३१–७९
लग्ने जावोऽथवा सौरः ५३–३९
लग्ने त्रयो विगतशोक० ३४–१२
लग्नेन्द्वोर्यो बलवान् ४५–५
लग्ने बुधद्रेक्काणे ३४–७१
लग्ने भौमो रविजसहितः ३५–१०५
लग्ने यद्द्रेक्काणा निगडा० १०–१४
लग्ने रविपुत्रसंयुते ३५–६९
लग्ने रविमन्दकुजैः १०–१०२
लग्ने रविसंयुक्ते क्षीणेन्दौ ८–४०
लग्नेऽर्केऽल्पकचः ३०–२
लग्ने शनैश्चरांशे ८–४९
लग्नेश्वरस्य चन्द्रः ११–१६
लग्ने समराशिगते ८–२१

अ० श्लो०
लग्ने सुरेज्यशशिनोः ३१–३४
लघुचिन्तो मृदुनिपुणः २८–११
लघुकीर्यो मकरस्थे २७–१९
लघुसत्वोऽसिततनयो ४७–३९
ललितः कान्तः सुभगो ३२–१०
ललितसरोगं सुभगं २३–४९
लाभधर्मस्थिताः सौम्याः ३५–९६
लाभे तृतीयषष्ठे ३५–१७५
लाभे मन्दो गुरुभृगु ३५–१८६
लाभो भवति नराणां ४०–४३
लावण्यवाही बहुभारवाही ३७–१३
लिपिकरतस्करमुखरो १७–१
लिपिकरपुस्तकवाचक० १६–२५
लिपिगणितकाव्यकुशलं २५–३९
लिपिपाठ्यपरोऽभिज्ञो २९–९
लिपिलेख्यकाव्यनिरतं १३–४६
लिपिलेख्यकाव्यपुस्तक० २२–१४
लुब्धः कविः प्रधानः १७–२०
लुब्धः कुस्त्रीसक्तः २२–५६
लुब्धः परस्वहरणे ४९–१५
लुब्धः समर्थमधुरो ४९–३२
लुब्धः स्वाद्वदनपरः ४९–११
लुब्धाः कुकर्मनिरताः ५–४६
लुब्धो वृत्तोरुजङ्घः २३–५१
लुब्धो व्याधिग्रस्तः २७–२३
लूतानां नकुलानां ५३–४५
लेखकमतिसुकुमारं २६–५६
लोकनमस्य सुभगं २५–५५
लोहितसितशुक्रहरिताः ३–४०

व.

वक्रदशायां च गुरोः ४१–२७
वक्रार्कशुक्रसौम्याः ३३–५१
वक्रार्कसोमात्मजदानवेड्याः २०–१३
वक्रिणस्तु महावीर्याः ५–३९
वक्री शनिर्भौमगृहं १०–५

अ० श्लो०
वक्रोऽगस्य हि दशा ४०-६८
वक्रोऽपि तस्करपति ४४-६
वक्रो वा सौरो वा द्वादश १०-५७
वक्रं त्रयोदशमितानि ३७-३०
वचसां पतिः सितयुतः ३३-२६
वचसामधिपः पूज्यं ४४-१४
वचसि निपुणो महार्थः १६-७
वणिक् कुलस्वभावः स्यात् १४-९
वणिगंशे नररूपाः ५३-३३
वदनाक्षिरोगतप्तः २२-१०
वधबन्धनकृन्मृत्युः ३१-१२
वधबन्धनरोगार्तो १८-१३
वनपर्वतेषु रमते २५-३१
वनवासिचतुश्चरणात् ४६-२८
वनितासदृशाचारः १७-१०
वयोनुमानाद्वर्षाणि ५१-५
वरयुवतिमाल्यवस्त्रैः २३-२१
वर्गे पञ्चमराशौ ३४-३१
वर्गे रविचन्द्रमसोः ३४-३६
वर्गोत्तमगते चन्द्रे ३५-११
वर्गोत्तमस्वभवनेषु ३५-३८
वर्गोत्तमा नवांशाः ३-१३
वर्गोत्तमे त्रिप्रभृतिग्रहेन्द्राः ३५-२९
वर्गोत्तमे स्वकीये २४-२२
वर्गोत्तमे स्वभवने ३९-६
वर्गोत्तमे हिमकरः ३५-६२
वर्णाकृतिप्रभेदात् ५३-६
वर्धयति मित्रपक्षं ४१-५४
वर्षान् मारयति शशी १०-२१
वसुसंचयवित्तसुहृत् १४-३
वस्त्रमणिरत्नभूषण ७-१२
वस्त्राणां स्थूलाहतशिखि ४-१६
वहति मृदुसमीरो ३५-१४३
वाकचपलमतिसुसौम्यं २६-६३
वाग्बुद्धिकर्मनिरताः २६-२१

अ० श्लो०
वाग्बुद्धियुतोदारः २८-२४
वाग्बुद्धिविक्रमगुणैः १३-६
वाग्बुद्धिविभवपुत्रैः २२-५०
वाग्मीन्द्रजालनिरतः १८-१०
वाग्मी प्रभुर्द्रविणवानगद; १३-५
वाचालः कलुषकृशो ४९-३०
वाजिखराश्वतराणां ५३-४६
वाणिज्यविपणिजीवाः ३३-७३
वातव्याधिगृहीत २९-५७
वादविवादे कलहे ३०-४३
वादिगुणैः संपन्नः २७-१
वादितगीतविधिज्ञः २५-३४
वानरमुखप्रवक्ता ५०-९
वामनको मकारान्त्ये लग्ने ८-५९
वारघ्नमनिहुताग्रं ५१-१८
वासगृहे द्यूनगतात् ९-१६
वाहनधनभृत्ययुतं २८-५३
वाहननाशोद्वेगः ४०-५०
वाहनबन्धुविहीनः ३०-५
विकलं कलहप्रायं २५-५६
विकलमहितं जनन्याः २३-८५
विकलनयनोऽष्टमस्थे ३०-९
विकलशरीरः काणः ३०-१३
विकलः पतितो मुखरो ३०-८५
विकलः सुभगो वाग्मी १७-६
विकलाङ्गः सुकलत्रः १७-२४
विकलाङ्गो धनरहितः १६-९
विकलो नीचाचारो १७-१६
विकलो रविलुप्तकरो ५-४
विकृतवदनोऽर्थभोक्ता ३०-७५
विक्रमवित्तप्रायो १३-१०
विक्रान्तो बलयुक्तो ३०-४
विक्षतगात्रं मलिनं २६-३९
विख्यातं गुरुराढ्यं ४८-३
विख्यातनामसारः ३०-४५

अ० श्लो०
विख्यातमल्लमोहित ३१-२९
विख्यातोदारगुणः २६-१७
विख्यातो नृपमन्त्री २५-४६
विचरति नरेन्द्रभवने २२-५३
विचरति सुरपूर्ज्यो ३५-१७६
विज्ञानकलाशास्त्रः २८-५
विदधाति सार्वभौमं ३५-१५०
विदित्वा त्रितयं ह्येतत् १०-१३
विद्याचार्यं ख्यात नृपतिं १३-१२
विद्यात्तृतीयभागे ४६-२६
विद्यादानधनौघैः ४४-३०
विद्याद्वितीयभागे ४६-२४
विद्याधनजनहीनान् ३३-४३
विद्याधनधर्मरतः १९-१
विद्याधनशौर्ययुतं २५-३७
विद्यामानयशोभिः २२-३०
विद्याशास्त्राज्ञानं ४०-१२
विद्याशास्त्राचार्यं २३-२०
विद्यासंस्कृतमतिरपि १६-२१
विद्रुमसुवर्णमणयः ४१-१३
विद्वान् वलिपिलेख्यकरः २२-३८
विद्वान् विमातृपितृकः १७-२७
विद्वान् सुरूपदेहः २७-७
विद्वांसं धनवन्तं ३३-१०
विद्वांसं धर्मरतं ३३-४८
विद्विष्टो बहुदुःखो २३-७
विद्वेषरतिनृशंसो २८-१५
विधात्रा लिखिता यासौ २-१
विनताङ्गः स्त्रीलोलः १६-१७
विन्ध्याचलसह्यगिरीन् ३७-३३
विपरीते स्थिते चन्द्रे ४०-१८
विपुलविमलमूर्तिः ९-५०
विपुलश्रमैश्च सुखितः २५-१८
विपुलाक्षिहृत्सुमेधाः ५०-९१
विफलारम्भो भृतको ३१-९

अ० श्लो०
विबुधगुरुर्यदि भौमनवांशे ३५-७३
विभ्रान्तदृक् प्रचण्डो ५०-५
विरलाग्ररदः श्यामः ५०-८३
विलग्नं कथयेत्प्राज्ञः ५१-९
विलग्ननाथः खलु लग्न ३५-५३
विलग्नादिकला भाज्या ३९-४
विलग्नाधिपतेः शत्रुः ४२-४
विविधधनागमलाभ ४१-२५
विविधव्ययदुःखभुजां ४४-४३
विविधस्त्रीभोगयुतः २५-५३
विविधोपभोगमाढ्यं २५-६५
विवृतोष्ठरदः कुष्ठी ४७-४७
विंशतिरंशाः सिंहे ५-२४
विंशतिरेकं द्वितयं ३९-२०
विश्वासहासवश्यः ४७-३२
विषमशरीरो ह्रस्वः १९-४
विषमाः क्रूरा निःस्वाः २१-४२
विषमे विषमांशगता ८-१४
विषशस्त्रयोगदोषैः ४६-३२
विस्तरकृतानि मुनिभिः १-२
विस्तरतो निर्दिष्टाः ३८-१
विस्तीर्णभुजो नेता १३-१९
विस्तीर्णोपचितायत ४८-१६
विहगोदितदृक्काणे ५३-१७
वीक्षन्ते यावन्तो ५३-१२
वृत्तानन उच्चनसस्त्वसिता० ४८-१३
वृत्तासितदृक् सुतनुः ५०-२८
वृद्धचरितं कुलाग्र्यं १३-२९
वृद्धश्रावकभस्मधूलि २०-३१
वृद्धस्त्रीभिः क्रीडा ४१-४८
वृद्धाकारो निस्वः २५-५४
वृद्धसभानां ज्येष्ठो २९-१४
वृश्चिककुलीरलग्ने ९-८
वृश्चिकलग्ने पुरुषः ४७-३०
वृश्चिकलग्ने भवने ५३-४२

अ० श्लो०
वृषभगणे दशमस्थे ३३–६७
वृषभविलग्ने शूरः ४७–७
वृषसिंहौ दशगुणितौ ५१–१३
वृषे शशी लग्नगतः ३५–८५
वेदाब्धिसंख्यैश्च मयूख ३६–२४
वेदार्थशास्त्रवेत्ता २७–२३
वेश्यामद्यद्यूतैः ४१–४२
वेश्यामद्यव्यसनैः ४१–३९
वेश्यारतिर्मृदुवचाः २२–१२
वेश्यास्त्रीकृतसौख्यः ३१–३८
वेश्यास्त्रीजनबहुलाः ३४–६
वेश्यास्त्रीसंयोगैः ३४–६३
वेसरमहीसुवर्णं ४०–३८
वैधव्यं निधने चिन्त्यं ४५–१
वैरप्रियोऽप्रहृष्टः ४७–४३
व्यजनातपत्रसुमनो ४०–४४
व्ययगेऽर्के शशिनि कृशे ८–३७
व्ययभयपरिसन्तप्तो २८–१९
व्ययभवनगतश्चन्द्रो ८–५५
व्ययाम्बुधनखायेषु ४–३०
व्ययाष्टषष्ठोदयगे १०–३०
व्यवहारबोध्यशिक्षा २९–१७
व्यसनपरिश्रमतप्तः २९–१
व्यसनानि व्यसनानां ४१–२९
व्यसृजज्जगत्समस्तं ३–२
व्याघ्राननः प्रगल्भः ५०–९७
व्याघ्रेक्षणः सुदशनः ५०–१८
व्याधिप्रायोऽल्पायुः ३०–३३
व्याधिभिररिभिर्ग्रस्तं २६–३३
व्याधिभिररिभिर्ग्रस्तः स्थान १८–१४
व्याधिभिररिभिर्ग्रस्तः पर २२–५१
व्याधिभिररिभिर्व्यसनैः ४१–१५
व्याधिविनाशं सौख्यं ४१–४०
व्याध्यार्तंश्रमबहुलः २७–१६
व्यापन्नमातृवंशं ३२–७०

अ० श्लो०
व्यापारश्रुतिसत्यश्चोर २५–१५
व्यामिश्रैःशुभभूमौ ५३–२३
व्यायतगात्रं रूक्षं २६–५४
व्यालमृगोरगहन्ता २५–१०
व्यालम्बभुजः श्यामः ४९–२८
व्यालः सुतुङ्गघोणो ५०–१५
व्यालुप्तकेशगौरो ५०–४
व्यूढोरस्कोऽतिदाता २३–८
व्योमलग्नप्रपन्नस्य ४१–५९
व्योमाम्बुवाताग्निमही ३७–११
व्योम्नि शङ्खधवलो ३५–१६६
व्रणिताङ्गमरूपं वा ३२–६९
व्रतनियममङ्गलपराः २१–२७

शा.

शक्तिधनपौरुषगृह ३–२७
शक्रेड्यः ससितः शुचिः ३५–१३०
शङ्खप्रवालमणिभिः २८–६९
शङ्खासिकुञ्जरगदा ३७–४१
शत्रुगृहेऽर्कदशायां ४०–५८
शत्रुनीचनवांशेषु ४०–१९
शत्रुभयात्सोद्वेगो १६–१५
शनिवर्गस्थे चन्द्रे ३४–३४
शनिशुक्रबुधशशाङ्काः ३२–१०७
शनिशुक्रामरगुरवो ३२–८२
शनैश्चरश्च होरायां १०–५८
शनैश्चरे लग्नगते ३५–१३९
शफरीयुगले चन्द्रः ३५–१८२
शब्दार्थविन्न्यायपटुः ३७–१२
शमयति रिपुप्रतापं ४१–१२
शयनोपचारकुशलं २३–७५
शरपञ्चाष्टमुनीन्द्रिय ३–१५
शशिगुरुसौरा नवमे ३२–७५
शशिजलनिधिसंख्यैः ३६–२३
शशिज्ञगुरुभिः सार्धं ५१–३
शशितनयोऽपि विधत्ते ४४–१०

अ० श्लो०
शशिनो दशमे शुक्रः ३३–१२
शशिनोऽन्त्ये वुधसितयोः ११–१५
शशिवुधरुधिराख्यैः ३५–१४४
शशिवुधरुधिराङ्गैः ३५–५८
शशिवुधसौरां नवमे ३२–७३
शशिवक्रार्किसुरेज्या ३२–१०३
शशिसुरगुरुवुधरवयो ३२–८७
शशिसहिते केन्द्रस्थे ३५–१५४
शशी दृगाणे रविजस्य २०–२२
शशीन्दुपुत्रक्षितिजार्कपुत्राः २०–१४
शशी पूर्णः स्वांशं ३५–४७
शस्त्रदहनप्रभेदैः ३३–७९
शस्त्रप्रहरणविद्याशक्ति १५–६
शस्त्राग्नियोनिपोषण ३३–६९
शस्त्रात्सलिलाद्योनि ३३–८०
शाकटिका मणिकाराः ३३–७१
शान्ते प्रशान्तचित्तः ५–८
शार्दूलप्रतिमाननो ३७–४०
शाश्वतसुलब्धविषयं २७–३९
शास्त्रकुशलो नरेन्द्रः १७–२१
शास्त्रार्थकाव्यबुद्धि २४–९
शास्त्रार्थकृतिकलाभिः २२–२
शास्त्रार्थतत्त्वबुद्धिः १६–२४
शास्त्रार्थवित्प्रवक्ता ४९–२६
शास्त्रार्थविद्धृतियुतः ३७–४२
शास्त्रार्थशिल्पकार्यैः २७–१२
शिक्षाशास्त्रमतिज्ञः ५०–७६
शिखिजलशस्त्रज्वर ४६–१
शिरसो रुक् गलरोगः ४१–१६
शिल्पज्ञोऽतिसुशीलो ३२–२०
शिल्पविवादाभिरतो २६–१३
शिल्पश्रुतिशास्त्रज्ञो १५–१४
शिल्पाचार्यं ख्यातं २३–३९
शिल्पादिकर्मनिरतः ४७–३७
शिल्पोत्पन्नधिकारो २३–७६

अ० श्लो०
शिशिरकिरणशत्रुः ३८–९
शिशिरकिरणे स्वोच्चे ३५–१२
शीतार्तो बहुभाषको ३७–२२
शीर्षादि संस्पृशन् ५१–७
शीर्षास्यबाहुहृदयं ३–५
शीर्षोदयर्क्षेषु गताः समस्ताः ३५–३१
शीर्षोदये विलग्ने मूर्धा ९–२
शीर्षोदयेषु राशिषु १२–५
शुक्रकुजयोर्विलग्ने ३१–५५
शुक्रः कुटुम्बभवने ३४–२०
शुक्रगुरुभौमरवयो ३२–९३
शुक्रगृहेऽथ नवांशे ४५–२२
शुक्रगृहेऽर्कजदृष्टः २६–३६
शुक्रज्ञभौमसूर्याः ३२–९१
शुक्रदशायां पुंसां ४१–४६
शुक्रदशायां विजयः ४०–४५
शुक्रनवांशे तस्मिन् ३४–३८
शुक्रवुधयोर्विलग्ने ४५–२६
शुक्रबुधौ रवितनयात् ३५–१७२
शुक्रबृहस्पतिसौम्याः ३३–४५
शुक्रभास्करेन्दवो ३५–७१
शुक्रवाक्पतिवुधैः ३५–१५५
शुक्रशनैश्चरशशिजाः ३२–८१
शुक्रसहायः सूर्यो ३२–३४
शुक्रः सुरगुरुसहितो ३२–४८
शुक्रः सौरसहायः ३३–२८
शुक्रस्याखिलभोगवस्त्र ५४–८
शुक्रारजीवरविशशि ८–३१
शुक्रार्कजौ चन्द्रमसान ४–२९
शुक्रार्कभौमशशिभिः ८–१२
शुक्रासितौ यदि परस्पर ४५–१४
शुक्रेण दृश्यमानः २५–४१
शुक्रेण दृष्टमूर्तिः २४–१५
शुक्रेण नृपतिसचिवं २४–३
शुक्रेन्दुजीवशशिजैः ३४–४५

अ० श्लो०
शुक्रेन्दुभौमरवयो ३२–८५
शुक्रेन्दुयमा नवमे ३२–७०
शुक्रो घटे कुजो मेषे ३५–१७
शुक्रो भौमो बुधो वाऽपि ५३–४०
शुक्रो रविशनिसहितो १०–४३
शुक्लप्रतिपद्दशके मध्यबलः ५–१६
शुभपणफरगाः शुभप्रदाः ३५–५२
शुभभवनसमेतैः ३५–५१
शुभमूर्तिः शुभशीलो ३१–६३
शुभवेषः प्रियभाषी २६–५
शुभस्य शुभदः पूर्णः ४१–३
शुभाधमदशा ज्ञेया ४०–२४
शुभे लग्नं याते ३५–१००
शून्येषु केन्द्रेषु शुभैः ३८–७
शून्येऽस्ते कापुरुषो ४५–१५
शूरं नरेन्द्रयोधं २७–६३
शूरं प्रमेहपीडितं २६–५५
शूरं विकलशरीरं २३–२५
शूरं कलाकाव्यनिधिः ३७–५
शूरः क्षुधार्तश्चपलो ३७–१५
शूरः षण्डप्रकृतिः २२–६०
शूरः संग्रामरुचिः २२–१३
शूरोऽथ सूत्रकारश्चक्रधरो १७–११
शूरो भवत्यधृष्यो ३०–२८
शूरो रणप्रतापी मल्लो १५–८
शूरो वित्तसमृद्धो नगरा १५–२१
शूरो विद्वान् वाग्मी १७–३२
शूरो विमातृपितृको १७–२३
शोभनकर्मा मतिमान् २२–६१
शोभनशिल्पाभिरतान् ३३–४०
शोषभगन्दररोगैः २०–२९
शौचाचारश्रुतिवाक् ४७–४८
श्यामः कलासु निपुणः ४९–३६
श्यामगुरुस्कन्धभुजो ५०–३
श्यामच्छविनंतभ्रूः ५०–३२

अ० श्लो०
श्यामः समग्रदशनो ५०–१००
श्यामः सुवाग्विनीतः ४९–१६
श्यामो गुरुर्मनस्वी ५०–२७
श्यामो मृगाक्षधन्यः ४८–१९
श्यामो मृदुः कृशाङ्गः ५०–९२
श्यामो मृदुर्मृगाक्षो ५०–७
श्यामो मृदुर्वचस्वी ५०–८०
श्यामोऽलसः सुभाषी ५०–८९
श्यामो विशालचक्षुः ४८–३
श्रमनिरतः परिदीनः ३०–४०
श्रमलब्धवित्तशूरो २८–१३
श्रमशोकानर्थपरः २६–१५
श्रीदेवकीर्तिराजा ३७–१
श्रीमान् श्लिष्टाङ्गसन्धिः ३७–२६
श्रीमान् स्वबाहुविभवो १३–४
श्रुतलिखितशिल्पचैत्य ९–१०
श्रुतवान् स्त्रीषु च रमते ५०–५०
श्रुतिकल्पकलाभिज्ञः २६–६
श्रुतिनीतिकाव्यनिरतं ३१–१५
श्रुतिशास्त्रगेयकुशलो १३–११
श्रेणीगणराष्ट्राणां २७–४२
श्रेणीभृतिनगराणां २६–५७
श्रेष्ठो राज्ञो मन्त्री २२–३१
श्वप्रभृतीनां प्रसवे ५३–३८

ष.

षट्कोनं रिपुभवनं ३–३१
षट्दशभवदुश्चिक्यानि ३–३३
षड् ग्रहाः स्वोच्चगाः ४४–२५
षड्भिः प्रवृद्धशब्दं ४४–३४
षण्डमुखकामसेवी ४१–३५
षण्डाकारोऽतिशठः २९–११
षष्टिर्होरात्रिंशच्चूडपदानां ३–१७
षष्ठं द्यूनमथाष्टमं ३५–२१
षष्ठे साधुत्वयुतः ४७–२२
षष्ठे कुजार्किरवयः ३५–१४२

अ० श्लो०

स.

सकलकरभारभारित ५-४४
सकलगगनगेहाः ३२-२९
सक्लेशो निर्द्रव्यः सुख ३१-२७
संख्या नवांशतुल्या ३४-२७
संग्रहनिरतं लुब्धं २८-५२
संग्रामकथाभिज्ञं २९-३३
संग्रामलब्धविजयो ३१-५९
संग्रामे लब्धयशाः २२-५१
संग्रामे विकृताङ्गं क्रूरः २७-५७
संग्रामोत्कटवीर्यः २२-५
सचराचरस्य जगतो २१-४
सचिवानुत्तमपुरुषान् ३३-४४
सचिवो दानवेन्द्रस्य ३८-२२
सञ्चयनिरतो बलवान् ३०-१२
संज्ञा वेश्माष्टमयोश्चतुरस्रं ३-२८
सततमनारोग्यतनुं ३०-८०
सततं मानार्थपरा २१-३२
सततोत्थितं विनीतं २६-४२
सत्यवचनं सुखाढ्यं २६-२५
सत्यं सतां गुरूणां २७-५१
सत्यसमाधिसुयुक्तः २७-८
सत्योक्तं तूच्यते कश्चित् ४१-४
सत्वेन वायोः पुरुषः ३७-१४
सत्सुतभृत्याप्तयशाः २२-६७
सद्यः प्रतिरणविजयी २५-२०
सद्धर्मकर्मधनजैः २८-१७
सद्वस्तुभूषणयुतो २७-४
सद्वित्तसारसुभगो २८-१८
सधनं नरेन्द्रपूज्यं ३३-२३
सनाहका मणीनां ३३-७०
सन्नोदराग्निपुंस्त्वः ३०-५५
संनिरीक्ष्य रवेर्वीर्यं ग्रहाणां १४-१०
संपश्यन्ति स्थानात्सदा ४-३२
सप्तमभवने भौमे ४६-१४

अ० श्लो०

सप्तमभवने सौम्याः ३५-८२
सप्तमभागे कौजे ३४-३०
सप्तमलग्ने जातो ४७-२६
सप्तर्क्षगैर्ग्रहेन्द्रैः २१-१३
सप्तारिभे ग्रहेन्द्राः ४४-४५
सप्तांशकबलसहितः ५-३२
सप्ताष्टमषष्ठस्थाः ११-७
संभूतारिष्टाख्या भङ्गः ११-१
समकृष्णतनुः स्तब्धः ५०-११
समभिव्यनक्ति होरा ५३-३
सममायततनुवित्तो ३०-७०
समराशौ शशिसितयोः ८-२२
समाः स्वरैः सिंहमृदङ्ग ३७-८
समुदितगुणं नरेन्द्रं २९-६५
सम्पूर्णमूर्तिर्भगवान् ३५-५४
सर्वग्रहकृते योगे ३५-६३
सर्वग्रहयुतदृष्टे ३४-६६
सर्वद्वन्द्वविमुक्तो ३१-८६
सर्वमपहाय चिन्त्यं ३२-१
सर्वमर्धं तृतीयांशः ३९-११
सर्वसहः सुभद्रः समकायः १४-११
सर्वस्य सर्वकालं २२-१
सर्वातिशाय्यतिबलः १२-१
सर्वे क्रूराः केन्द्रे ३८-४
सर्वे प्रणाममेते ३६-४
सर्वैर्गगनभ्रमणैर्दृष्टैः ११-३
सर्वैर्गगनभ्रमणैर्दृष्टैः ३४-११
सर्वैर्मित्रर्क्षगतैः ४४-३८
सलिलभवनं च चन्द्रो ९-६
सलिलमृगारण्यानां १७-८
सलिलविषपादरोगात् ४६-३१
सलिलाशयतो धनवान् २५-८
सलिलाशयेषु रमते ३७-३८
सलिलोपजीवविभवाः २१-२१
संवाहनादिकर्मसु दक्षः २२-४३

	अ० श्लो०
सविता दशाफलानां	४०–६
सवितुर्दशा च पुंसो	४०–५७
सवितुस्तृतीयपञ्चम	३५–१७३
सव्यापसव्यभागे	१०–७२
सव्यालौर्निकशैलस्वर्ण	७–७
सव्रणगात्रं रूक्षं	३२–५२
संसक्ततनुः प्रमदाप्रियश्च	५०–९४
संस्कारनाममात्रा द्विगुणा	५१–१२
सहितौ चन्द्रजामित्रे	१०–७६
साधुः कल्यशरीरो	१८–१८
साध्वीतनयः प्राज्ञः	१६–२३
साध्वीव्रतभङ्गकरः	२५–३
सामान्यतश्च षोढा	४०–६०
सामान्येनाभिहितो	५३–२९
सारङ्गाक्षो वक्ता	५०–४७
साहसकर्माभिरतः	२२–३
साहससङ्ग्रामरुचिः	३४–३
साहसिकमतिक्षुद्रं	३२–६०
सितगुरुशशिजशशाङ्काः	३२–१०५
सितदृष्टः शनिः कुम्भे	३५–१८३
सितभागे सितदृष्टे	२४–४
सितशशिकुजगुरुमन्दैः	२०–१७
सितशशिवर्गे धीस्थे	३४–३६
सितशशिसुतजीवैः	३५–१३४
सितारसूर्यात्मजजीवभास्करैः	२०–७
सितार्कभौमार्कसुताः	२०–५
सितेन्दुजीवार्कजसूर्य	२०–१०
सिद्धारम्भो मान्यः	३०–५९
सिंहवृषमेषकन्या	३–३४
सिंहमृगौ जघनस्थौ	५३–८
सिंहस्य समानमुखः	४७–१९
सिंहाजगोमिरुदये	६–४२
सिंहादिद्रेष्काणे दाता	४९–१३
सिंहे कमलिनीनाथः	३५–१८०
सिंहे दयितं ख्यातं	२७–४९

	अ० श्लो०
सिंहोदये तथाद्ये	५३–५५
सिंहोदये दिनकरो	३५–६९
सिंहोदये प्रसूतो	४७–१८
सुकलत्रो हतशत्रुः	३१–६५
सुकलाविदमत्याढ्यं	२८–४५
सुकविः क्षोणीनाथः	१६–२६
सुकुमारगौरदीर्घः	५०–५४
सुकुमारमतिप्राज्ञं	२६–५२
सुकुमारमूर्तिकान्तः	४८–११
सुखतनुमदगाः शुभाः	३५–९५
सुखधनमानाज्ञर्षि	४०–१३
सुखधनसहितं शुक्रो	३०–६४
सुखधनसौभाग्ययुतं	२९–२९
सुखधनहीनमनार्यं	२६–४९
सुखनयविज्ञानयुतः	१३–२८
सुखबुद्धिसत्वयुक्तः	३१–३०
सुखभाक् ख्यातो धनवान्	२५–३६
सुखरहितमथात्यन्तं	२९–३७
सुखसुतमित्रविहीनं	३०–७८
सुखसुतमित्रसमृद्धः	३०–५४
सुखसुतमित्रोपचितं	३०–६६
सुखसुतवित्तविहीनः	३०–६
सुखिनं कुजभे शशिजः	३६–२८
सुखिनं धनिनं प्राज्ञं	२७–५९
सुखिनमतीव हि ललितं	२३–६३
सुगृहीतवाक्यमलसं	३०–४६
सुतनुः शपितारिगणो	१६–३२
सुतभवने शशिदेवनमस्यौ	३५–७७
सुतभवनं शुभयुक्तं	३४–२५
सुतसुखदुश्चिक्यगताः	३५–१३
सुधामृणालोपमबिम्ब	३५–५७
सुनफाऽनफा दुरुधराः	१३–१
सुनभानभासरूपाः	१३–३
सुनयनमुदारदानं	२८–२९
सुनयनवदनशरीरं	३०–६२

सुहृस्तु पश्यति ३७–२७
सुप्रज्ञा च भवेत् शौक्रे ४५–१३
सुप्राज्ञोऽतिसुशील: ३२–१७
सुवहूनामुपयोज्या: २१–४९
सुबृहन्नसोजदृष्टि: ५०–७४
सुभगं ललितं सुखिनं २६–३५
सुभग: पूज्यो लोके १७–१४
सुभग: सुतधनयुक्तो २३–६
सुभग: सुरुचिरुदार: ३०–५६
सुभगा: सेनापतय: २१–२५
सुभगान्वितो दरिद्रो २८–७
सुभगो बहुभृत्यधनो १४–१२
सुभगो विद्वान् वक्ता ३२–२१
सुभ्रूललाटकामी ५०–२३
सुमधुरमतिवाचाटं २६–३८
सुमनस्क: सोन्मादो १८–२२
सुरगुरुसहित: सूर्यो ३२–३३
सुरगुरुसहिते चन्द्रे ३२–३८
सुरपतिगुरुर्बन्धुस्थाने ३५–१०१
सुरपतिगुरु: सेन्दुलंग्ने ३५–४०
सुरपूज्य: शशिशुक्रौ ४–२०
सुरराजगुरु: सार्कि: ३३–२७
सुरुचिरकारी दाता ४९–१४
सुविस्तरं नीचकुलोद्भवा: ३५–९८
सुशरीरं बलनाथं ३१–५
सुस्त्रीरत्नार्थयुत: ३१–७७
सुहृदां संग्रहशील: २२–६६
सूच्यादिकर्मकुशलो २६–२४
सूर्यजसहित: सौम्यो ३२–४७
सूर्यनिशाकरसौरा ३२–५६
सूर्यशशिभौमगुरव: ३२–८४
सूर्यश्चतुष्पदस्थ: शेषा ९–४४
सूर्यश्चन्द्रसहायो ३२–३०
सूर्यसहाय: शुक्रो ३३–१७
सूर्य: सौम्यसमेतो ३३–१५
सूर्य: सौरसहायो ३२–३५

अ० श्लो०
सूर्यस्याष्टसु बिन्दुषु ५४–३
सूर्य: स्वपुत्रसहितो ३३–१८
सूर्याङ्गारकयो: खबन्धुगतयो ४६–३
सूर्यात् केन्द्रादिगतो १३–३०
सूर्यादष्टमराशौ यदि १०–४८
सूर्यादीनामुच्चा: ३–३५
सूर्याद्द्वितीयराशौ ३४–७३
सूर्याद्व्ययगैर्वाशिर्द्वितोय १४–१
सूर्यारचन्द्ररवय: ३२–८६
सूर्यांशे यदि चन्द्र: ३४–७५
सूर्येक्षिते गोनृपदेववासे ९–११
सूर्येण चोरघातकमथवा २४–२
सूर्येण महामूर्खं २४–६
सूर्येन्दुशुक्रार्यमहीसुतेषु २०–२
सेनाचार्य: स्फीतो ३२–३१
सेनाधिपति: शूर: ३१–५०
सेनानाथो निखिलनिरतो ३७–३५
सेनापतिं प्रचण्डं २३–३२
सेनापतिं समृद्धं २३–६०
सेर्ष्यं कन्यादयितं कामार्तं २८–४९
सेवाकृदस्थिरधनो १५–४
सेव्यं दिनकरदृष्टो २६–४९
सोन्मादो गणमान्य: १७–१५
सौभाग्यसौख्यविजय ४१–५२
सौम्य: कान्तविलोचन: ४–२२
सौम्यक्षेत्रे चन्द्रो होरा ११–१०
सौम्यग्रहसंयुक्त: ३१–४६
सौम्यग्रहैरतिबलै: १२–२
सौम्यदशायां प्राप्ते ४०–३७
सौम्यवपुस्त्रीसुभगो ४९–५
सौम्य: शुक्रसहायो ३३–२४
सौम्य: सुरगुरुसहित: ३२–४५
सौम्य: सौरसहायो ३३–२५
सौम्यस्त्रीधनलाभ: ४०–११
सौम्यार्थपुत्रमित्रश्चलमति: ३०–३०
सौम्या: षष्ठाष्टमगा: १०–२३

अ० श्लो०
सौम्ये चार्धमितो याति ३९–१२
सौम्ये त्रिकोणसंस्थे ८–५८
सौम्येन धनी ज्ञेयः ३२–७
सौम्येन पापनिरतं २४–२१
सौम्ये पापफलं प्रोक्तं ४०–५२
सौम्यैर्लग्ने पूर्णे स्वगृह ९–७
सौम्यो धृष्टः सुखितः ३०–२०
सौम्यो भास्करदृष्टः ३४–२४
सौरगृहे शनिदृष्टः २८–६६
सौरर्क्षे शुभयोर्मध्ये ४६–६
सौरर्क्षे सौरगणो ३४–३८
सौरसहायः शुक्रो ३२–५०
सौरारगृहे तद्वत् ४५–१९
सौरांशेऽथ जलांशे ९–२७
सौरांशे शनिदृष्टः २४–१९
सौरिः शुभभागस्थः २०–२८
सौरिश्चतुर्थराशौ ३१–२३
सौरे ग्रामपुराधिवाद्य ५४–९
सौरेण दृष्टमूर्तिः २७–४८
सौरेणाकृत्यकरं २४–११
सौरेदंशां प्रपन्नः ४०–४८
सौरे वृषभ याते २९–४
सौरे व्याधिमवाप्नोति १०–९०
सौरो व्याधितदेहं ३३–१३
सौवर्णाङ्गः स्थिरस्वः २३–१
सौवर्णिकः प्लुताक्षः १७–५
स्त्रीकलहरुचिर्धनभाक् १७–३१
स्त्रीक्षेत्रवित्तविभवः १३–१३
स्त्रीचञ्चलोऽर्थभागी ४९–१२
स्त्रीचञ्चलो विहारी ४९–२
स्त्रीजनहस्तिप्रायं २४–५९
स्त्रीणां चन्द्रसितौ नपुंसक ४–१४
स्त्रीणां जन्मफलं तुल्यं ४५–१
स्त्रीणां वश्यः सुभगो ३४–२
स्त्रीतुल्यतनुर्ह्रीमान् २२–४२

अ० श्लो०
स्त्रीदुर्भगः स्वतन्त्रो २६–१०
स्त्रीदुर्भगोऽल्पवित्तः १५–१३
स्त्रीद्वेषणो वपुष्मान् ४९–९
स्त्रीनिर्जितं दरिद्रं २८–४८
स्त्रीपुंनपुंसकाख्याः क्षेत्रेषु ४–३८
स्त्रीभरणदुःखतप्तः ५–१३
स्त्रीभिः सम्परिभूतो ३१–२०
स्त्रीमण्डलेषु कुशलं २९–४२
स्त्रीमरणं हरणं वा ४१–५०
स्त्रीमानयशोभूतिः ४९–३१
स्त्रीमित्रभागरसवित् ४८–२१
स्त्रीमृष्टपानभोजन ४८–१०
स्त्रीरत्नानि सुखानि ३१–८५
स्त्रीलोलुपः कुचरितः ३१–५७
स्त्रीलोलो लम्बबाहुः २३–३७
स्त्रीवस्त्रमाल्यगन्धैः ५–९
स्त्रीविरहदुःखखिन्नः ३१–८
स्त्रीवैरान्नष्टधनः कुत्सित २६–८
स्त्रीवैरान्नष्टधनः शूरः ३१–८१
स्त्रीसङ्गादुद्विग्नः २५–४७
स्त्रीसत्वं स्त्रीललितं २३–३३
स्त्रीसम्पकंजविभवाः ३३–७५
स्त्रीसेवी युवतिधनः २२–३२
स्त्रीहेतोर्दुःखार्तं २८–२५
स्तिमितं वृषभं स्त्रीणां २८–६१
स्थलजलराशिविभागाः ५३–५३
स्थलजलखगौ विलग्नात् ५३–२४
स्थानधनैश्वर्ययुतं १६–३३
स्थानबलेन समेतः ५–३५
स्थितो भानोः पुत्रो ३५–३७
स्थिरपुत्रदारसुहृदं २३–१२
स्थिरभोदये तदंशे ५३–५६
स्थिरसत्वबुद्धिरतिमान् ५०–९९
स्थूलास्थिर्मन्दरोमा २३–३०
स्थूलोष्ठबाहुरुन्नततनुः ५०–५१

	अ० श्लो०
स्नानविभूषणनिरतः	२९–२०
स्नानोपभोगभूषण	२८–२२
स्निग्धच्छविः सुवाक्यः	५०–५२
स्निग्धच्छविः सुवेषः	५०–८८
स्निग्धमृदुपवनभाजो	१२–८
स्निग्धस्तेजोयुक्तः	३७–१०
स्निग्धासिता च हरिता	३७–१८
स्निग्धासितान्तपृथुदृक्	५०–७९
स्निग्धैर्भवन्ति भूपाः	३७–९
स्पष्टार्थवित्कलाज्ञः	५०–९६
स्फुटिकोपलसंकाशा	३७–१०
स्फीतधनस्त्रीसहितः	२४–४
स्फीतयशसो गुणाढ्याः	२१–२८
स्फुटनासिकास्फुटः स्यात्	५०–४९
स्फुटवाक्यं विगतधनं	२९–३१
स्फुटिताग्रनसः कालो	५०–७२
स्मृतिमतिकुलसंपन्नं	२६–५८
स्यातां यद्याधाने	८–५३
स्यान्मल्लः परपुष्टः	१७–३३
स्रग्धौताम्बरयुक्तः	१५–११
स्रस्ताल्परोममूर्तिः	५०–४३
स्वक्षः प्रसन्नगौरः	५०–६४
स्वक्षः स्थिरः सुकेशः	५०–१६
स्वक्षेत्रे च चतुष्टये	३७–२
स्वगृहनवांशे लग्ने	९–४
स्वगृहांशकसंयोगात्	५३–११
स्वगृहे तृतीयभागे	३५–६७
स्वगृहे मित्रभागेषु	३५–४४
स्वगृहेऽसृक्सितदृष्टः	२५–२९
स्वगृहोच्चसौम्यवर्गे	३४–१४
स्वजनपरिच्छदवाहन	३०–५३
स्वजनाया सवियोगं	४१–२३
स्वजनावमर्दनपरो	४७–९
स्वजनाश्रयो दयावान्	२१–२३
स्वतन्त्रः सर्वकार्येषु	३७–४३
स्वत्रिकोणगतैः सर्वैः	४४–३१
स्वत्रिकोणगृहं केचित्	३८–१७
स्वद्रेक्काणत्रलेनाहीनो	५–३१
स्वप्नेऽभिपश्यति सुवर्ण	३७–२५
स्वमित्रक्षेत्रसंस्थानां	५–४७
स्वराशौ स्वत्रिकोणे च	४०–२३
स्वर्क्षत्रिकोणतुङ्गस्थाः	६–१
स्वर्क्षबलेन च सहितः	५–२९
स्वर्क्षसुतनवममेशाद्रेक्काणानां	३–१४
स्वर्क्षात् केन्द्रेषु यातैः	३५–२६
स्वर्क्षे नक्षत्रनाथः	३५–१०
स्वर्क्षे शशी विपुलरश्मि	३५–८०
स्वर्भानुनोपसृष्टा यदि	१०–६०
स्वल्पश्रुतमतिमुखरं	२६–४५
स्वल्पसुखं स्वल्पधनं	२८–३६
स्वल्पाकुञ्चितमूर्धजः	४–२१
स्वस्थः करोति जन्मनि	५–६
स्वस्थशरीरसमागम	५–४०
स्वस्थानपरिभ्रष्टः क्लिष्टः	५–१२
स्वं स्वं पूर्वविलग्नं	५३–५१
स्वस्वामिदृष्टयुक्तं	३२–४
स्वात्केन्द्रायनवाष्टवित्तगृहगो	५२–२
स्वात्र्यायात्मजषट्त्रिकेषु	५२–८
स्वायुषो लग्नगे क्रूरे	३९–१९
स्वांशात्परस्य भागे यस्मिन्	५३–४१
स्वांशे दिनकरदृष्टः	२४–१०
स्वांशे दिवाकरो यस्य	३५–८
स्वांशेऽधिमित्रभावे	३५–११३
स्वांशे रवौ शीतकरे	३८–८
स्वांशे सौम्यैरबलैः	५३–२५
स्वे राशौ परभागे	५३–१४
स्वे स्वे भवने पुंसां	३२–२७
स्वोच्चत्रिकोणगृहगैः	३५–२
स्वोच्चनीचत्रिकोणर्क्ष	४०–१३
स्वोच्चप्राप्तस्य दशा	४०–५६

अ० श्लो०
स्वोच्चं याताः सर्वे ४४–४६
स्वोच्चसिद्धो ग्रहः शोभ्यः ३९–१५
स्वोच्चस्थस्वगृहेऽथवापि ११–१४
स्वोच्चस्थितः शुभफलं ५–२५
स्वोच्चस्थे दश सूर्ये ३६–२
स्वोच्चस्थैः रविभौमसौर ३५–५
स्वोच्चस्थो रवितनयो ४४–४
स्वोच्चस्वकालबलिनः ४०–२२
स्वोच्चः स्वकीयभवने ३०–७४
स्वोच्चस्वराशिनिजभाग ३८–६
स्वोच्चाश्रिता श्रेष्ठबलाः ५–१५
स्वोच्चे गुराववनिजे ३५–८
स्वोच्चे गुरुस्तनुगतः ३५–१२९
स्वोच्चे दशमे जीवे ९–१२
स्वोच्चे भवति च दीप्तः ५–३
स्वोच्चे भानुः प्रकटितबलो ३५–८४
स्वोच्चोदये कृतपदः ३५–१०२

ह.

हतपुत्रदारनिःखा २१–४०
हयनरविदेहलग्ने ५३–४४
हितसमरिपुसंज्ञा ये ४–३१
हिबुकगते धरणिसुते ८–३९
हिबुकास्तकर्मसहितै। ४६–१२
हिबुकेऽर्के वियति कुजे ४६–१०
हिमरश्मिरल्पपुण्यं ४४–१६
हिंस्रोऽग्निकर्मकुशलो [illegible]१–४७
हृद्रोगी बहुसत्वः सतां २२–६४
हेमप्रवालभूषण ३४–६०
हेलिर्भानुः शशी चन्द्रः ४–१०

अ० श्लो०
होरागतैर्धनगतैः ३३–८२
होराग्रहबलसाम्ये निसर्गजं ५–२०
होरा चतुर्थसप्तमदशमेषु ३१–१
होरा जन्माधिपतेः ४१–५८
होरातृष्णार्तानां शिष्याणां १–६
होरादिकण्टकेभ्यः २१–११
होरादिनेशशशिनां ४०–४
होराधिपतिर्द्यूने १०–२६
होरानिधनास्तगतैः १०–४०
होरामनीक्षमाणे शशिनि ९–२८
होरायां कण्टके चन्द्रो १०–८५
होरायां कण्टके भौमो १०–८३
होरालेखामुपेतः स्फुट ३५–१३२
होराशशिनोर्बलवान् ३३–६५
होराष्टमस्थितः सूर्यः १०–८२
होरा सर्वबलोपेता [illegible]९–५
होरासंस्थे जीवे सुशरीरः ३०–५०
होरास्तगतैः शकटं २१–१५
होरेन्दुयुतैः सौम्यैः ८–३४
होरेन्द्वोर्बलयोगाद्यो ३३–२
होरेश्वरस्तु मृत्यौ १०–२८
ह्रस्वः पिङ्गललोचनो ४–२३
ह्रस्वः पृथुचारुतनुः ४८–२३
ह्रस्ववदनोन्नतांसः ५०–५३
ह्रस्वाननस्वरूपः ४९–८
ह्रस्वास्तिमिगोजघटा ३–३७
ह्रस्वोदरः सुरोषो ५०–१४
ह्रस्वोन्नतोष्ठघोणः ५०–६५
ह्रस्वो मृदुः सुधीरो ५०–१०९
ह्रस्वो हठश्रुतार्थः ४८–१२

इति सारावलीस्थपद्यानामकारादिक्रमकोशः सम्पूर्णः ।

हमारे अन्य प्रका

1. अंकविद्या—गोपेशकुमार ओझा
2. अर्धमार्तण्ड—मुकुन्दवल्लभ (तेजी-मन्दी का
3. आप और आपकी राशि—केवलआनन्द जोशी
4. उडुदाय-प्रदीप-लघुपाराशरी भाष्य—भाष्यका
5. कालचक्र (फलित ज्योतिष)—दीवान राम
*6. कालचक्र की उत्पत्ति और विकास—राजेश्वर
*7. **Key to Astro-Palmistry & Ha**
—*K. C. Sen*
*8. **Khandakhadyaka of Brahmagu**
Comm. of Bhattotpala, Eng. Tra
and Notes—*Bina Chatterji*
9. गणितप्रवेशिका—केदारदत्त जोशी
10. ग्रहलाघवम्—गणेशदैवज्ञविरचितं, हिन्दी टी
11. चन्द्रहस्तविज्ञान—चन्ददत्त पन्त
12. चमत्कारचिन्तामणि—भट्टनारायणकृत—ब्रज
हिन्दी व्याख्या
13. ज्योतिषजगत्—दुर्गादत्त शर्मा
14. ज्योतिष तत्व प्रकाश—पं० लक्ष्मीकान्त कन्या
15. ज्योतिषशास्त्र में स्वरविज्ञान—केदारदत्त जो
16. ज्योतिषरहस्य—जगजीवनदास दास गुप्त

We intend to rec
and English languages
years. Further contin

Selected persons
official language is
Company.

JOB RE
who are sent abroad
and vice-versa. The jo
ments etc. from Arab

QUALIFICATION
possess Post-graduatio
sity. Persons having a
EXPERIENCE: 2

AGE: Preferably

ry

OF THIS ADVERTISEMENT.

PERSONS ALREADY EMPLOYED IN GOVT. DEPARTMENT/PUBLIC UNDERTAKING SHOULD APPLY THROUGH PROPER CHANNEL OTHERWISE THEIR APPLICATIONS SHALL NOT BE CONSIDERED. CANDIDATES CALLED FOR INTERVIEW SHALL BE PAID RAILWAY FARE AS PER RULES OF THE COMPANY.

HINDUSTAN STEELWORKS CONSTRUCTION LIMITED

(A Government of India Undertaking)

Interpreter having very sound knowledge of Arabic
appointment will be on a contract initially for two
of the contract would depend on the requirement.

be required to go to some of the countries where the
alongwith the team of Officers|Staff of the

Assisting the Officers|Employees of the Company
nmunication by interpreting from Arabic to English
ld also require translating correspondence, docu-
English and vice-versa.

e candidate should be at least Graduate and also
Arabic Language from a reputed Institution|Univer-
ee in Engineering will be preferred.
years in job of similar nature.

w 35 years.

erquisites will be commensurate with qualification

ly on plain paper giving detailed bio-data. Applica-
crossed postal order of Rs. 10|- (Rs. 2.50p in case of

Candidates
years of a
hard work
Degree wit
activities a
ten and s
and a pleas

We offer ou
tives a conso
month durin
riod.

On successfu
will be absor
Company, besi
amounts in Sa
fits like Provide
Rent Allowance
pany's rules.

Interested cand
cations within
background an

Personnel Dep

Sarabhai Che

Shahibag Hous
13 Walchand
Ballard Estate

(a) Senior
should
acader
duates
M.B.A.
loma
out ex
trainin
of a
divisio
abroad

(b) Junior
should
acader
duate
or wi
on tr
pects
Execu

Please appl
complete
photograph
tions shou